सोना माटी

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

सोना माटी

विवेकी राय

भइया

चतुरी चाचा

(स्व० डॉक्टर मुक्तेश्वर तिवारी 'बेसुध')

की स्मृति में

'अपना समाज' के सदस्यों—

स्व० श्री हरिहर प्रसाद वर्मा

डॉ० लक्ष्मीशंकर त्रिवेदी

श्री मुहम्मद इसराईल अंसारी

श्री रामवृक्ष राय 'विधुर'

के लिए

दो शब्द

'सोनामाटी' की पृष्ठभूमि में पूर्वी उत्तर प्रदेश के दो जिलों, गाजीपुर और बलिया, का मध्यवर्ती एक विशिष्ठ अंचल है करइल। इस अंचल का भूगोल तो सत्य है परन्तु इतिहास अर्थात् प्रस्तुत कहानी में प्रयुक्त करइल क्षेत्र के उन गांवों और पात्रों आदि के नाम सर्वथा कल्पित हैं जिनके माध्यम से यहां के समकालीन जीवन-संघर्ष को चित्रांकित किया गया है। यह संघर्ष किस सीमा तक एक अंचल का हैं और कहां तक वह व्यापक राष्ट्रीय जीवन के यथार्थ से जुड़ा है, इसका निर्णय तो पाठक ही कर सकता है। मैं अधिक क्या कहूं ?

—विवेकी राय

रामरूप ने चिट्ठी लिखना बंद कर कागज़-कलम को परे हटा दिया। उसके मन में एक विचित्र भाव आया। कोई मित्र आता और उससे एक पकड़ कुश्ती हो जाती अथवा कोई दुश्मन आता और अंधाधुंध लात-मुक्के चलते। वह बीस पड़ जाता तो भी भला। चढ़ी नसें कुछ ढीली होतीं। ऐसे तो लगता है सारा शरीर अकड़ गया है। पोर-पोर बथ रहा है, लेकिन मज़ा आ रहा है। इस मज़े को सब लोग नहीं समझ सकते। ज़रूरत भी नहीं है। एक मज़ा नरक का भी होता है न ? हां, ठीक वही मज़ा है।

क्या लिखे चिट्ठी में उस करइल को ? इस करइल ने तो कचूमर निकाल दिया। दुखदायी का नाम करइल। जिस किसीने उसके ससुर जी, श्रीमान् बाबू हनुमानप्रसाद के नाम पर पहले-पहल 'करइल' उपनाम सटाकर पुकारा होगा वह बहुत-बहुत धन्यवाद का पात्र है। इस कदर मार डाला दोनों ने कि हाथ-पैर तन कर जैसे लकड़ी हो गये हैं। पिंडलियां ऐंठ रही हैं। रामरूप यदि अमीर होता तो तगड़े-तगड़े सेवक कई दिन तक उसके शरीर की मालिश-मरम्मत करते। मगर अफसोस, उसे इसी प्रकार दो करइल के चक्कर में लगता है तन-मन धुनते-खपते जाना है। मूल्यहीनता की इस निरर्थक दौड़ का कहीं अन्त है ! किस अज्ञात भय और अपरिभाषित आशंका में वह रात-दिन सिकुड़ा-सिकुड़ा कभी इसकी ओर देखता है तो कभी उसकी ओर लपकता है ? और उसके ससुर करइल जी, हुंह ! काला दूध है। गले से उतार सकेगा रामरूप ? खबर भेज दी कि खोरा कवि की झोंपड़ी में रविवार को मुलाकात होगी और तीन कोस कीचड़-कांदो में लदर-फदर जान लड़ाते यहां पहुंचा तो जनाब खुद लापता। ससुरा चमर करइल।

रामरूप के पास एक बार एक बहुत बड़े आदमी का पत्र आया था जिसमें प्रसंगवशात् लिखा था कि 'गांव नरक है।' उसे तब बहुत बुरा लगा था पढ़कर। जहां हरे-हरे बाग हैं, लहलहाते खेत हैं, भोले-भाले आदमी हैं, उसे नरक कैसे कहा जा सकता है ? यही रामरूप का चालीस-पचास किलोमीटर के वृत्त में अपना करइल क्षेत्र है। धरती के बीच माटी है कि स्वर्ग का टुकड़ा है। अलंकार रूप में नहीं, यहां की माटी सचमुच सोना है। बिना खाद-पानी के कम-से-कम श्रम में उत्तमोत्तम फसल उमड़ती है तो माघ-फागुन में इस रास्ते निकलने वाले दूर-दराज़ के यात्री सिहक उठते हैं। दिन भर सूरज की चौड़ी किरणों के बीच नयनाभिराम हरियाली पर लक्ष्मी जी के पायल की रुनझुन झमक सुनते मन नहीं अघाता है। वही अनन्त शस्य-श्यामला प्रदेश इस पावस में ऐसा कुरूप-कुठौर बना है। खोरा कवि

की झोंपड़ी के आगे दूब पर टूटे-बिथके तन-मन पसर वह सोचता है कि उस भले आदमी का कहनाम कीमती था। नारकीयता मात्र इतनी ही नहीं कि आवागमन के साधनों की दीनता ने अपने ही गांव-घर के रास्तों को जानलेवा बना दिया, इससे बढ़कर नरक वह मनोभाव है जो करइल जैसे लोगों को भूखा भेड़िया बना देता है। ये मांस नहीं ज़मीन खाते हैं, भूमिखोर भेड़िये···

मगर वह इस समय ऐसा कुछ सोचना नहीं चाहता है। गहरी थकावट है कि कुछ करने की इच्छा नहीं, कोई विचार नहीं, कोई कार्यक्रम नहीं ! ऐसे ही चुपचाप शिथिल-सुस्थिर पड़े रहने की इच्छा है। मगर कब तक ? वह खोरा उधर से घास गढ़कर और गट्ठर अंकवार में दबाये मचकता-उचकता आ जाएगा तब तो उठना ही पड़ेगा ? तब तो फिर करइल-पुराण खोलना ही पड़ेगा ? बारम्बार खोरा जी एक कहावत कहते हैं—

सुखल करइला चलि ना जाय
ओद करइला धइ-धइ खाय।

कहते हैं, इस करइल क्षेत्र की ज़मीन ऐसी कि सूखी रहे तो गोड़ में चुभ-चुभ गड़ती है, और ओद माने गीली रहे तो चिपककर पकड़ती है कि चलना दुखदायी। फिर खोरा जी कहते हैं, आप कुआर की टटकी पनियारी के पांक में पड़ गये। आप लोग सुकुवार मनई हैं। इससे पांक लगता है। किसान इसी में जानवर की तरह खांचता रहता है। भला बताइये तो किस रास्ते आये ?

अब रामरूप उन्हें कौन-सा रास्ता बताये ? रास्ते क्या दो-चार हैं ? एक ही तो रास्ता है और जिसकी याद आते उसके रोयें खड़े हो जाते हैं। गांव के बाहर होते ही मोर्चाबंदी हो गयी। धोती खूंट कर अब रास्ते में धंस जा पट्ठा। खेत-ही-खेत में रास्ता। करइल की माटी, बरसाती पानी से फूली हुई। उस माटी पर कीचड़-पानी की डगर। डगर-डगर पर राहगीरों के पैरों से बने छोटे-छोटे गढ़े, गढ़ों में छिप-छिप पानी, छप्-छप् कीचड़। कीचड़ पैर पकड़-पकड़ कर रोता है। अभी क्या रोता है ? एक मील चले नहीं कि लाख कोस की थकावट घिर आयी। कितनी दूर पड़ेगा ऐसा कीचड़ ? जवाब नहीं। जितनी भी दूर जाना हो, जहां भी जाना हो, करइल में सब जगह ऐसे ही पांक का धरमधक्का मिलेगा। जिस भी दिशा में जाओ, इस मौसम में ऐसी ही छतियाकार डगर मिलेगी। अरे हां, रामरूप का तो सवाल और टेढ़ा है, जितने दिन भी जियेगा उसके सिर पर जिन्दा करइल उसके चारों ओर घिरा रहेगा। इस माटी वाले करइल से मोटा वह विष-धर करइत-सा करइल काला। उसकी उठती आयु में छल का वह महाजाल फेंका कि अब क्या जीवन भर उबर सकेगा ? नहीं, मृगतृष्णा की यह डहकन उसके जीवन को निचोड़ कर मूल्यहीन बना कहीं कूड़े पर डाल देगी।

पांच फुट छह इंच का तना हुआ अधेड़, रंग काला कोलतार, बाल बहुत कम

पके-झड़े, मोटे-मोटे सुअरबारा। होंठ और दांतों को भी शामिल कर लें तो उस साकार जानवर की ठीक एक शकल। अनगढ़ गठे बबूल के कुन्दे-से हाथ-पैर, भालू जैसे बालों वाले। बोलता है तो घोड़े की तरह हिनहिनाता है और घूरकर देखता है तो भूखे गिद्ध की तरह, दूरदृष्टि, पक्का इरादा···। अब जाकर निकल आयी है तोंद, देह-बही का श्रीरोकड़ बाकी। जूता चमरौधा एक साल का खरीदा, कई-कई सीज़न तक नया रहता है। एक थान दमगर मारकीन में धोती-दुपट्टे का जोड़ा बना जो धोबी का घर देखे बिना साल में बदल जाता है। मिरजई-बण्डी बस जाड़े में। बहुत गर्मी है भीतर शरीर में। मोटी दमदार मिर्जापुरी हाथ में लिये खेतों के बीच से बेरास्ते कहीं लपका हुआ जा रहा है तो भ्रम होता है वह करइल की करिआ माटी उठकर कहां चली ? ऐसा वह कृषकासुर, रामरूप का ससुर, करइल का दैत्य, सचमुच साक्षात् करइल। एक दम ठीक सटीक नाम, हनुमान प्रसाद, मगर उसके साथ लगा करइल···कहते हैं कि करइल की माटी तो बहुत भयानक होती है। ओद करइला···मगर, यह जिंदा करइल ? कहा है रंचमात्र भी इसके भीतर दया-माया ? वहां तो बस लोभ का अपार कीचड़-कांदो जमा है, बारहमासी। अब शायद खोरा कवि से तंत्र-मंत्र सीखेगा। शायद सोचता है कि बुढ़ापे में बाहुबल कम हो जायेगा तो इसी से कमजोरों का मति हरन कर उनकी जायदाद हड़पेगा और रामरूप को खोरा कवि से उसका परिचय कराने इस बीहड़ कुमारग में आना पड़ा। इस चिंतन के साथ खोरा-बाग में सोये-सोये रामरूप को अपने आज के ताज़े दुखदायी सफर की याद आ गयी।

एक तो यह परम अप्रिय कार्य दूसरे कुराह की मार, कुछ ही दूर चलकर रामरूप असमंजस में पड़ गया। आगे बढ़ें कि पीछे लौटें। यह कीचड़-कांदो ही क्यों, अभी आगे सरेहि में दो-तीन बरसाती नाले साक्षात् वैतरणी बने मिलेंगे। एक में तो नाव चलती है और यदि वह नाव दुर्योगवश न हो तब ? रामरूप सचमुच कांप गया। भाड़ में जाय वह तंत्र-मंत्र। छुट्टी में की यह बेगार। कभी मन इधर, कभी उधर। एक बार ज़ोर लगाता है, हे मन ! न सांप-बिच्छू है और न बाघ-भालू है। है तो महज़ पांक ही। तिस पर भी सोनवा यानी हथिया नक्षत्र के स्वर्ण-पाद के पानी का पांक। अरे, भाग्य से सोनवा में पानी पड़ता है। उसकी एक बूंद की माटी के लिए अमृत, फिर इतना पानी, इतना कि पांक-पांक। अरे, पांक नहीं यह किसान का सौभाग्य है रामरूप। इससे मत घबरा। इसी में जीना-मरना है। धीरे-धीरे आराम से चले चलो। नदी-नाले का खतरा भी क्या ? जिसकी मौत आ गयी उसे···। रामरूप के रोयें खड़े हो गये।

···यह पांक नहीं, पाप और पापी के संग का फल है। यह करइल का पांक है। करइल खुद पांक है। रामरूप की मजबूरी है कि उससे चिपटा रहे, उसमें सना रहे, धंसा रहे। अपार जायदाद और धन है बाबू हनुमानप्रसाद के पास।

क्या सचमुच उस जायदाद का एक लघुतम अंश कभी रामरूप से सटेगा ? अथवा मृगतृष्णा की भांति डहका-डहकाकर मार डालेगा ? सत्रह वर्ष तो प्रतीक्षा करते हो गये। आशा-तृष्णा मर नहीं रही है। लोभ छूट नहीं रहा है। बेशक उनकी निजी सम्पत्ति का नहीं, उनके द्वारा दिये दान का। जिसे देकर भी श्रीमान् जी ने नहीं दिया। उसके सांप की कुण्डली में उसका तन-मन चरमरा रहा है। कैसे भाग खड़ा हो वह इस 'लछिमी' जी के मोह से ? दुस्तर दुरन्त माया है। अप्रिय कीचड़ का महासागर झक मार कर हेलना है। अब कहां सुस्ताना है ? नहीं, अब चारों ओर कहीं खड़ा होने के लिए एक इंच भी सूखी ज़मीन नहीं। एक-एक बीघे पर दम फूल जाता है, फूलने दो। आगे बढ़ो। करइल के बीघों को बढ़ने दो। अदालत में गवाहियां देने चलो···गंगा-गोसैयां सच-सच कहता हूं। झगड़े खड़े हों तो गोहार जुटाओ, लाठी-बल्लम वालों से अब काम चलेगा। खालिस कट्टा-एलजी वालों का सौदा करो। फिर मरो अपनी अधोगति पर। मगर अब यह भी कहां ? अब तो उनके गरदिश के दिन बीत गये। अब तो उनकी आंच से भी दुश्मन भागता है।···पीछे लौट चलें। मगर इतनी दूर आकर अब क्या लौटना आसान है ? अब तो आगे-पीछे, दायें-बायें चारों ओर कीचड़ है। सरल नहीं इस करइल से उबार। एक बार उठ बैठकर रामरूप ने खोरा बाग में चारों ओर निगाह दौड़ाई। वह उधर घास गढ़ रहा है खोरा। कब आयेगा ? आता तो आगे का कार्यक्रम बनता। रामरूप फिर लेटकर अपनी पिछली यात्रा की कठिनाई में डूब गया। वास्तव में बीच रास्ते में आकर वह इतना पस्त हो गया था कि आगपाछ में पड़ गया था। वह परिदृश्य उसके मस्तिष्क में चक्कर काट रहा है।···वह रोमांचक यात्रा।

आगे बढ़ें···लौट चलें···लौटना कायरता है···आगे बढ़ना जड़मुठई है··· रास्ता ठीक होगा तो चलेंगे···नहीं चलेंगे तो वे क्या कहेंगे ?···रामरूप की हैरानी की सीमा नहीं। अब लाटरी के द्वारा तय होगा। पाकिट में हाथ डाला। एक अठन्नी निकली। अशोक छाप ऊपर होगा तो आगे बढ़ेंगे···फिर उछाल दिया। हां, ठीक वही छाप तो है ऊपर। अब चलो। ज़रा फाल कसकर चलो। कठिनाई से कैसे लड़ा जाता है, यह सीखो। मानो कि दुःख में कितना सुख है। चपर-चपर, कच्च-कच्च···छप्प्-छप्प्···बहुत मनसायन है। यह पानी-पांक का बाजा है। पैर बजा रहे हैं। छोटे-छोटे पानीदार गढ़े पैर पड़ते जैसे पिचकारी। ज़रा बचके। पिच्च्···यह मट्ठा उछला, सीधे सिर तक। बहुत तरह के रंग देखे, अब कपड़ों पर बरसाती होली का यह मटिहा रंग भी देखो। वाह रे करइल, बेमतलब बरसात में राहगीरों पर कीचड़ उछालता है। आगे बढ़ने नहीं देता। पैर पकड़कर खींचता है। एक-एक पैर में नौ-नौ मन माटी। नहीं, इस माटी को रामरूप आज सोना नहीं कह सकता। कहां लोटता है उसके पैरों पर इस प्रकार सोना ? उसकी अध्यापकी वाली आजीविका ऐसी दमदार नहीं है।

बहुत दिनों तक दो सौ से ऊपर पर हस्ताक्षर कर रामरूप मात्र सौ रुपया वेतन प्राप्त करता रहा है। गवैया और हुस्नी तबीयत के बूढ़े बाप के हाथों खेती बस होती भर रही है। किसी-किसी खेत से बीज नहीं लौटता। बाढ़ में घर ढह गया है। सम्प्रति लड़की की शादी सिर पर सवार। कर्ज़ का बोझ ऊपर से। गरीबी, बेहाली और चिंता की गरमी में सामने मृगमरीचिका-सी नाचने वाली ससुर जी की वह जायदाद। हां, ठीक जिस वर्ष शादी हुई उसके साल भर पहले रामरूप के गांव महुआरी मौजा में बाबू हनुमानप्रसाद ने इस गांव के एक अधमत निःसंतान गंजेड़ी खुबवा को कचहरी में फुसलाकर उससे उसकी कुल पांच बीघे की जायदाद रजिस्ट्री करा ली थी। शादी तय करने आये तो बोले, दहेज क्या देना है, उसका इन्तजाम तो मैंने पहले ही से कर दिया है। रुपया-पैसा तो हाथ का मैल है, आया और गया। पक्की चीज़ है ज़मीन, सो क्या मैं महुआरी में खेती करने आऊंगा?··· तब से कितनी मशक्कत से रामरूप हांफता-कांपता कलेज़े पर पत्थर रख इस कलुषित मृगजल में धंसता चला आ रहा है। लगता है, ऐसे ही जीवन बीत जायेगा। यही उसकी नियति है। कभी कदम मुक्त नहीं होंगे और न जीवन की राह निर्विघ्न होगी।

सामने से एक आदमी भारी गट्ठर लिये आ रहा था। रामरूप ने देखा, गोपी बनिया है। बाजार से आ रहा है। लगता है, रास्ता खराब होने के कारण कल वहीं रुक गया और आज सुबह चला है। इसे रामरूप जब देखता है क्षण-भर के लिए किशोरावस्था में लौट जाता है। इसकी लड़की थी रूपिया, साथ-साथ खेलने वाली, अति सुंदर, रेशमी रोयें वाली। बड़ी होकर साड़ी पहनने और शरमाने लगी। एक दिन सूनी गली में टकरा गयी और क्या हुआ कि रामरूप ने इधर-उधर देखकर बांहों में भर लिया। फिर बाद में ऐसा कभी नहीं हुआ। वह प्रथम यौनस्पर्शानुभव की सोने की रूपिया आज कहां होगी? गठरी में सौदा होगा, तमाखू, सुर्ती, बीड़ी, गुड़, आलू, नमक···। पसीने से तर। धूल, मिट्टी और तेल में चुपड़े उसके फटे-पुराने कपड़े···अरे इस बनिये से तो रामरूप फिर भी अच्छा है। चल आगे बढ़। उसे देख सचमुच कुछ फुर्ती आयी। संक्षिप्त दुआ-बंदगी के बाद गोपी बगल से निकलकर बहुत आगे बढ़ गया तो फिर उसे एक बार लगा, अरे इस कीचड़ में पैर जो धंसते हैं तो जल्दी निकलते ही नहीं हैं। कठिन है कांदो की कैद। पैर ऊपर उठते हैं, आगे झुकते हैं, धंसते हैं, फिर जमकर चिपक जाते हैं, खूंटे की तरह गड़ जाते हैं, रामरूप खड़ा हो गया। बोला—

'ओ हमारे देश के प्यारे प्रधानमंत्री जी, देखिये, मैं जनता हूं। किस प्रकार कीचड़ में फंसा हूं। आपकी गांव-गांव में सड़क की योजना क्या मेरे मर जाने के बाद आयेगी? हमारे ये मटिहा खेत सोना उगलते हैं। फागुन-चैत में छाती भर लगे गेहूं-चना के उस विस्तृत सुनहरे प्रसाद को काटने के लिए लोहे के हंसुए बहुत हीन

जैसे लगते हैं। तब किसान अघा-अघाकर होली गाता है। फिर यह खेत का सोना खलिहान के रास्ते आपकी मंडी में चला जाता है, किसान के हाथों से निकल जाता है। उस सोने से आपके लिए कार है, सड़कें हैं और मेरे लिए यह कांदो की कारागार है। आप ज़रूर हमें ठीक नहीं समझ पाये। हम चुपचाप मरते-जीते हैं। आपकी किताबों में 'नौ दिन चले अढ़ाई कोस' एक मुहावरा है और हमारे जीवन में वह एक सच्चाई है। अरे यह देखिये, ऐसे में चलना मेरी मजबूरी है। मैं हांफ-हांफकर कांप-कांप चल रहा हूं। जनतांत्रिक कीचड़ की मार से मर रहा हूं। यह गांव का जनम-करम कैसा पाप है? काटो यह क्लेश, है कोई मंत्री या प्रधान-मंत्री! मेरा नहीं तो कम-से-कम उन स्त्री-बच्चों का ख्याल करके भी तो…'

रामरूप ने देखा, सामने से कुछ लोग आ रहे हैं। खोई-खोई चुपचाप चली आ रही साधारण छींट में लिपटी एक कनिया है, और उसके पीछे पैदल चल रही है एक छह-सात बरस की लड़की। सबके पीछे एक अधेड़ है, सिर पर एक टीन का बक्स। जिसके ऊपर उसका टायर वाला चप्पल पड़ा है। स्त्री के आंचल में खोंइछा जैसा कुछ बंधा है। बिदा कराकर आ रही है। मगर क्या आजकल बिदा-बिदाई लायक शुभ दिन है? शायद छोटी जातियों में साइति न भी देखी जाती हो। जब सौहड़ बैठा, बिदा करा लाये।

उसी समय बादलों के हटते ही सिर पर लाल-लाल घाम चमकने लगा। शरीर में किरणों की महुराई जैसी सुइयां चुभने लगीं। ऊपर घाम, नीचे अपार दुख-दलदल, आगे-पीछे और चारों ओर विराट् करइल का सन्नाटा भरा सन-सनाता गीला मैदान, बाहर के जड़ करइल से ज़बरदस्त रामरूप के भीतर का एक अदद चेतन करइल, जिसकी याद से उसे पसीना छूट गया। घबराकर समीप आ गये उस दल की पहचान में वह जुट गया।

अरे, यह तो सुग्रीव है, गठिया गांव का, उसके ससुर जी का यार। रामरूप के भीतर कुछ धक्-से लगा। उसने गौर से पीछे वाली स्त्री को देखा।…नहीं, वैसा कोई मामला नहीं है। शायद यह अपनी पुत्र-वधू को बिदाई कराकर ले जा रहा है। करइल में सवारी कौन-सी जायेगी? पालकी भर हैसियत नहीं।…साला निस्सन्तान बूढ़ों के विवाह का ठीका लेता फिरता है। रामरूप को इससे भी कभी-न-कभी भिड़ना पड़ेगा। उसके ससुर जी का दिमाग इसी ने खराब किया है।… अरे, ये काम बनाम विवाह के कीड़े कितने खतरनाक हैं। एक बार बाबू बूढ़ों के मगज में यदि घुस गये, तो फिर निकलना कठिन। गठिया में रह-रहकर विस्फोट होता है। कुछ दिनों तक तो उस गांव में पैंसठ साला करइल महराज शायद एकमात्र दिखाऊ और दुलरुआ दुलहा रह गये थे—विवाह रोकने के लिए रामरूप को कितनी जान लड़ानी पड़ी थी। देखो, इस पैंसठ साला खूसट ससुर जी को। जवान लड़का यूनिवर्सिटी में दाढ़ी बढ़ा दादागिरी कर रहा है। उसकी शादी

की चिंता करनी चाहिए तो ये अपने ही चक्कर में पड़े हैं। बेहया। चर्चा मात्र से कमली की मां शर्म से लाल हो जाती है। यह सारा उपद्रव इसी खलनायक का है।···शायद इसी अघोषित विरोध के कारण दोनों में परस्पर बोलचाल नहीं है। पहचानते तो एक-दूसरे को हैं ही। अपरिचय के इसी नाटक में सुग्रीव का दल निकल गया।

अब रामरूप खोरा बाग में सोये-सोये और यात्रा को मन-ही-मन दुहराते-दुहराते ऊब गया। उठकर एक लोटा पानी लिया और मुंह पर चिल्लू लगा गट-गट पी गया। दूर से खोरा जी चिल्लाये, 'हैं-हैं···जरा रुक जाइए। खाली पानी कलेजे में लगता है।···गुड़ रखा है।'

खोरा कवि चादर में घास बांधे पास आ गये। रामरूप ने सोचा, वह जब से आया है एक बार भी पानी के लिए नहीं पूछा और जब पी लिया तो गुड़ दिखा रहे हैं और कहा, 'खाली गुड़ से काम चलने का नहीं। शाम हुई तो रात भी होगी। यहां बियाबान में कैसे कटेगी ? पास के किसी गांव में कोई ठिकाना पकड़ना होगा। यह चिट्ठी लिखकर छोड़ जाता हूं। आयें कभी ससुर जी तो दे दीजिएगा और जो पूछें वह बता दीजिएगा।'

'भला बाबू हनुमानप्रसाद जी को हम लंगड़ा आदमी क्या बतायेगा ? ऊ तो दस-बीस कोस के अवार-जवार में मशहूर आदमी हैं, धाकड़ हैं, तपे हुए हैं, लछिमीपात्र हैं। क्या कमी है जो खोरा के पास आयेंगे ?' खोरा ने कहा।

'आप उन्हें चेला मूंड़ लीजिए।'

रामरूप ने कहा और खोरा जी हंसने लगे। खूब खिलखिलाकर निकली वह निश्छल हंसी देर तक बगीचे में गूंजती रही। इस बीच चार सतर का एक संक्षिप्त पत्र उसने तैयार कर लिया। लिखा कि कवि जी आपसे बहुत प्रभावित हैं। आकर जो भी काम हो सीधे उनसे कहिये। पत्र में यह भी लिख दिया कि यहां आने में वह बेदम हो गया और शाम तक उन्हें खोजता रहा।

रामरूप रात्रि-विश्राम के लिए गांव की ओर बढ़ा तो उसके मन में आया कि यह खोरा एकदम असामाजिक है। सामाजिक शिष्टाचार की सामान्य औपचारिकतायें भी उसमें नहीं हैं। उसे एक बार कहना चाहिए था कि यहीं रुक जाइये। उठकर चलते समय भी एकदम निरपेक्ष रहा। इसे समझना होगा। इसकी रुखाई क्यों अच्छी लग रही है ? इसका अनाकर्षक परिवेश क्यों आकर्षित कर रहा है ? यहां यह उसकी तीसरी यात्रा है और इस बार भी यह आदमी एकदम अबूझ रह गया। रामरूप के भाग्य में सर्वत्र अबूझता ही पड़ती है। वास्तव में अबूझ तो उसके लिए दोनों ही करइल हो गये हैं। कहते हैं कि करइल की माटी एकदम सोना है और इस सोना ने उसे मार डाला। कार्तिक की बोआई के बाद इसके सपाट मैदान पर फसल का जो मनमोहक रूप चढ़ता है उसे देख दूसरे लोग तरसते

हैं। कहां उमड़ती फसलों का वह इन्द्र-धनुषी विस्तार और कहां यह बरसात की बजबजाती और काट-काट खाती मनहूसी, कहां है दोनों में तालमेल ? वह अतिसुन्दर, यह अतिकुरूप। फिर यह विरोधाभास उसके ससुर जी की 'करइल' संज्ञा में और साफ। कहते हैं लछिमी जी की महती कृपा है। दौलत छप्पर फाड़-कर बरसती है। साथ रहें तो बातें सुन अघा जायेंगे। उनके नियम, सिद्धान्त, व्यवहार और रूप में बाहर से बेहद दृढ़ता, असीम सफाई। मगर, भीतर ? शिव-शिव। मन घृणा से भर उठेगा और तब भी वह आकर्षित करता रहेगा। आश्चर्य ? रामरूप स्वयं प्रमाण है। चुम्बक की तरह वह कैसे खींच लेता है। यही लक्ष्मी की माया है क्या ? और इसीलिए बात-बात में 'पढ़े फारसी बेचे तेल' वाली कहावत उछाल-उछालकर वह पढ़ाई-लिखाई वाली सरस्वती का उपहास किया करता है क्या ?

२

थकावट पूरे सप्ताह भर बनी रही। रविवार आते-आते रामरूप पूरी तरह आराम के मूड में आ गया। जोतने के लिए खेत निखरा है या नहीं, देखने जाना था। उसने टाल दिया। पिछले सप्ताह बाजार से हरिस के लिए लकड़ी मंगाया था, उसे लोहार के यहां गढ़ने के लिए देना था। उसने उसकी भी उपेक्षा कर दी। तिमाही परीक्षा की कापियां जांचने के लिए लाया था, उसे झोले से बाहर निकाला ही नहीं। आज उसकी इच्छा है कि दिन-भर चारपाई छोड़ेगा नहीं। पिता जी को दीन-दुनिया की कोई खबर नहीं। माता जी को इन ज़रूरी कामों की जानकारी नहीं। और दूसरा कोई डांटने वाला नहीं है। बेहद मौज है, आज भर की।

सोये-सोये उसे खोरा कवि की याद आयी। पता नहीं कैसे उसके मन में बात बैठ गयी है कि करइल जी अवश्य ही तन्त्र-मन्त्र के चक्कर में खोरा के पीछे पड़े हैं। उसे गर्व रहता है कि अपने ससुर जी का संसार में सबसे अधिक अध्ययन उसने किया है और वह उनके मन की बात भी जान जाता है। मगर, इस सीधे-सादे जंगली कवि में कहां उसे दिखाई पड़ा ऐसा गुन ? उसे लगा, संभव है उसकी आंखें चूक गयी हैं। अभी तो एक-दो बार की ही जान-पहचान है तिस पर भी एक बार तो बात भी नहीं हो सकी थी। केवल दर्शन भर हुआ था, वह भी अनजाने। रामरूप को वह दिन और दर्शन का वह क्षण बराबर याद रहता है जब आकर्षण में खिचा वहां तक पहुंचा था।

एक दिन रामरूप को उधर के गांवों की ओर से पढ़ने आने वाले शिष्यों ने किसी प्रसंग में बताया था कि उनके गांव में एक कवि हैं। दिन-भर अपने बगीचे में पड़े रहते हैं। वहीं उनके थोड़े-से खेत भी हैं। जब देखो, क्या जाड़े की हाड़ गला

देने वाली ठंडक, क्या गर्मी की आग और क्या वर्षा की बौछार, अपने खेत में काम करते या बगीचे में गाय के लिए घास गढ़ते या वहीं अपनी छोटी-सी झोंपड़ी में लेटे-लेटे कवितायें, अपनी बनाई कवितायें अकेले उच्च स्वर में गाते रहते हैं। रामरूप ने कुछ कवितायें लिख मंगाईं। वे एक कागज पर पेंसिल से टूटे-फूटे वर्णों में लिखी थीं। उन्हें देख उसने सोचा, इन कविताओं की तुलना में नयनाभिराम सज्जा में प्रकाशित और ऊंचे दाम पर प्राप्त अनेक बहुप्रचारित काव्य कृतियां ऊंची दुकान के फीके पकवान से अधिक महत्त्व नहीं रखतीं।

आश्चर्य था कि कठिनाई से अक्षर सीखकर स्कूल छोड़ देने वाला और जीवन भर पेड़-पौधों की संगति में रहने वाला व्यक्ति कुछ सामान्य उपमा-उत्प्रेक्षाओं की कलाबाजी के साथ भावों के सागर में इस तरह गोते लगाता है। एक लड़के ने बताया कि वे अपनी कविताएं पेड़ों को, फूलों को, चिड़ियों को और आसमान के तारों को सुनाया करते हैं। आदमी उनकी कवितायें कम सुन पाते हैं पर जब कभी कानों में उनके स्वर उतरते हैं तो फड़का देते हैं। रामरूप सोचता है, कविता लिखना क्या स्कूल में सीखा जा सकता है? उसकी शिक्षा तो प्रकृति से प्राप्त होती है। उसके लिए कागज-कलम और स्याही भी आवश्यक नहीं। खुले हृदय-पट पर प्रभात की कोमल किरणें विहग-शावकों के अनमोल बोल लिख जाती हैं। झिलमिल तारिकाओं की मौन-माधुरी में सहस्र-सहस्र भाव-गीत गुंफित होकर विजन-वीणा पर झंकृत होते रहते हैं। पवन के इशारे पर धान की क्यारी सर-सर कर काव्य-पाठ करती है। अमराई से मर्मर-ध्वनि निकली है। इसमें क्या अनूठा काव्य-स्वाद नहीं है? यह मूल स्वाद छापे की पोथियों में कहां? फिर आज तो और हालत खस्ता है। कविता को मृत घोषित कर दिया गया। पुस्तकों में कला की ऊंची-ऊंची बातों की बहस का प्रयोग भरा है। दुनिया को जनाने और बाजार बनाने की बातें हैं। रस छलककर बहता नहीं। उपयोग के लिए विरस को इन किताबों की शीशियों में वादों के मजबूत कार्क लगाकर बन्द कर रखा जाता है। दिल सहज भाव से दिख नहीं जाता बल्कि उसे फाड़-फाड़कर दिखाया जाता है। पुराने संस्कारों का अभ्यासी रामरूप चक्कर में पड़ जाता है।

खोरा का असली नाम तो बहुत सुन्दर है, रामधीरज, परन्तु उसमें लगा उपनाम 'खोरा' काफी दिनों तक रामरूप को अटपटा लगता रहा। बाद में उसे लगा कि वास्तव में यह नाम स्वयं में उनके प्रति उठने वाले प्रश्नों का समाधान है। इसमें 'चतुरानन की चूक' की झलक है। खोरा जी अपंग हैं। कठिनाई से चल-फिर पाते हैं। अपनी एक कविता में खोरा शब्द के रहस्य का भी उद्घाटन किया है। गांव की भाषा में खोरा का अर्थ है वह बड़ा कटोरा (खास तौर से पीतल या फूल का) जिसकी पेंदी में गोड़ा नहीं होता है। उन्होंने लिखा कि चूंकि मेरे पैर नहीं हैं अतः मेरा नाम 'खोरा' है।

इसे पढ़कर खोरे का रूप और उसकी उपयोगिता सामने आ जाती है। खोरा बहुत ठोस है। वह मोड़रहित, सहज, चिकना और गोल है। वह बहुत काम का है। वह गृहस्थ-साधु है। वह धप्-धप् चमकता है। वह कवि वनवासी है। उसकी झनक में स्वर्गीय माधुरी है। वह शान्त, पवित्र, प्रसन्न और आत्मस्थ है। दुनिया के बाजार से दूर है। ख्याति से दूर है। उसके हाथों में खुरपी, कण्ठ में कविता, पास में खेत और बगल में झोंपड़ी है। वह अलेक्जेंडर पोप की कविता है, 'दस लेट मी लिव अनसीन, अननोन, दस अनलैमेन्टेड लेट मी डाई।' गाने की इच्छा होती है :

जीने दो मुझे अदृश्य और अज्ञात कहीं पर,
मरने पर मेरे लिए न कोई रोये।

इन्हीं सब प्रभावों में खिंचा एक दिन उधर जाते समय रामरूप खोरा के उस बगीचे में पहुंचा जिसकी पहचान लड़कों ने बताई थी। झोंपड़ी भी सही-सटीक दिख गयी। गृहस्थ-साधु और कवि के संयोग से पवित्र उस वाटिका को तीर्थराज का त्रिवेणी संगम मान रामरूप ने सिर झुकाया। सुबह का समय था। कहीं कोई आदमी नहीं दिखाई पड़ रहा था। रास्ता बगीचे के भीतर से होकर बाहर खींचे लिये जा रहा था। कान सावधान थे। पेड़ों पर चिड़ियां चहक रही थीं। उनकी चहक में एक विशेष आकर्षण था। कवि के सान्निध्य का प्रभाव स्पष्ट था। आदमी की कविता में पक्षियों की चहक की स्वाधीन दिव्यता तथा पक्षी के गीतों में आदमी की कविता का संयमन। अद्भुत अनुभव था। रामरूप को पत्ते-पत्ते पर कवि खोरा की कविताओं का पता मिल रहा था। दूब की फुनगी पर ओस की बूंदों के रूप में उनके गीतों का ठिकाना मिला। पगडंडी की मर्मस्पर्शी कोमलता में भावों का अन्तरस्पर्श मिला पर स्वयं खोरा कवि का दर्शन नहीं मिला। सर्वत्र विजनता का प्रसार था और वह खल रही थी। झोंपड़ी भी खाली थी। संभावित कवि-कंठ के एकान्त गीत-स्वरों से वाटिका रिक्त थी, उनकी गूंज से दिगन्त रहित था और यह सब अकल्पित था।

रामरूप को सन्देह हुआ कि रास्ता भूलकर कहीं और तो नहीं चला आया? फिर इस सन्देह के साथ रामरूप के पैर भी रास्ते पर बढ़ते गये। उसने देखा, झोंपड़ी में चारपाई नहीं है। जमीन सीलन से भरी है। आदमी के रहने के चिह्न तो हैं पर कोई कवि यहां रहता है, ऐसा नहीं लगा। उसने चारों ओर निगाह दौड़ाई। एक साधारण-सा घेरा है। घेरे में बगीचा है। बगल से रास्ता है। थोड़ी दूर पर ईख का खेत है। सर्वत्र सन्नाटा है, सुनसान है। हां, एक आदमी की शक्ल उधर रास्ते के मोड़ पर अवश्य उभरती दृष्टिगोचर होती है। वह जल्दी-जल्दी घास गढ़ रहा है। लेकिन यह तो कोई साधु है। निकट जाकर बहुत गौर करने पर भी रामरूप को उस व्यक्ति में अपंग होने के लक्षण नहीं मिले। फिर खोरा की

पहचान तो गूंजते गीतों के बीच घास गढ़ने-जैसी ज्ञात थी और यह आदमी एकदम मौन कर्मलीन है। फिर यह सिर का बिकट जटाजूट? कवि खोरा यह नहीं हो सकता।

वह कुछ सेकेंड का समय बहुत विचित्र था। खोरा कवि की खोज में रामरूप ने उस ओर देखा। उस प्राणी ने भी निरपेक्ष दृष्टि से इधर देखा। इधर से कुछ पूछने की इच्छा हुई। फिर लगा, नहीं यह खोरा नहीं हो सकता। इस असमंजस में पैर आगे बढ़ते गये। उसने फिर पीछे मुड़कर देखा। वह सन्देहपूर्ण निश्चय फिर प्रबल पड़ा। नहीं, खोरा कवि नहीं होगा। इतने में बगीचे की हद खतम हो गयी। द्विधा मिटी नहीं। कहीं ऐसा तो नहीं कि वही वह रहा हो। रास्ते भर मन ऊहापोह में पड़ा रहा। स्कूल आने पर रामरूप ने लड़कों से चर्चा की। ज्ञात हुआ कि कुछ दिनों से उन्होंने बाल बढ़ा लिये हैं। भारी पछतावा हुआ। एक अवसर हाथ से निकल गया।

तीसरे दिन स्कूल में जाते ही उसे फिर एक कागज का टुकड़ा मिला जिस पर एक कविता लिखी थी। लड़कों ने बताया कि खोरा जी ने लिखकर दिया है और एक दिन बुलाया है। आपके वहां जाने और न भेंट होने की बात उन्हें बता दी गयी है। रामरूप कविता पढ़ता है। फिर-फिर पढ़ता है। कविता क्या है, एक सम्पूर्ण परिवेश है, एक व्यक्ति के जीवन-संघर्ष का, सुख-दुख का आईना है। उसकी सजीवता में भला कौन नहीं तल्लीन हो जाएगा? कविता में खोरा जी क्या कहते हैं?—

मेरे बगीचे में आम का विटप एक,
जिसका विस्तार छाया बनी तीन मण्डा में।
तम्बू की तरह चारों ओर से तनी हैं तना
पत्ते सघन हवादार ज्यों बरण्डा में।
शीत घाम जाड़ा में जन की बचाने जान
कपड़े बचाता यह बरखा प्रचंडा में।
धीरज को चार मास चखने को देता यह
खाट पर अमावट औ अचार परे हण्डा में।
उसी पेड़ पास में पचास धूर गन्ना को
धूप में बचाय लिया कलश के पानी से।
फूस की झोंपड़ी बनी है एक छोटी-सी,
जान को बचाती है आंधी से पानी से।
बिच्छू और सांपों से भगवान बचाये जान,
लेकिन न बचे जान मच्छर की नानी से।

ऊमस में धीरज डोलावें जब गमछा को
आती है नींद तब तबियत सिरानी-सी।

कविता पढ़कर फिर एक बार मन खोरा-बाग में चला गया। कितना धोखा खाया उस दर्शन में जब कवि मौन था। उसका संगीत अन्तर्मुख था। तब हाथ में एक चमचमाता खुरपा था। मेड़ पर फहराई हुई हरी दूब कवि की मुट्ठी में आकर अपने को धन्य मानती। कवि उसकी सुन्दरता को उपयोगी बना रहा था। उस दूब में किसी जीव की तृप्ति निहित है। इसीलिए वह बार-बार उग आती है।

रामरूप को कवि का वह रूप याद आया, कितना भोला था। प्रसन्न आंखें, आर्द्र मुख-मुद्रा, दूर से भी आभास मिल जाता। मुखरित मौनता का पवित्र दर्शन क्या भूल सकता है? उस समय ओस से भीगी दुनिया को सोने के पानी से पखारने वाली किरणें ज्वार की लम्बी-लम्बी और चिकनी पत्तियों की शय्या पर विहार कर रही थीं और सबके बीच में अमृत की छाया जैसी पेड़ों की स्निग्ध शीतल छाया में दुनिया से दूर एकान्त में, एकाकी, भावमग्न कवि कलम नहीं खुरपा चला रहा है। कला नहीं, कर्म सामने है। कर्म ही कला है। जीवन सौन्दर्य का यहां एक और ही आयाम है।

रामरूप के मन में एक जबरदस्त तरंग उठी। अभी खोरा के पास चलें। अवकाश है ही। कुछ थकावट है तो क्या हुआ ? वहां पहुंचकर दूर हो जायेगी। कविता का क्या इतना प्रभाव भी नहीं पड़ेगा ? कवि का निमन्त्रण है, ठट्ठा नहीं। मगर, क्या रामरूप में अभी वास्तव में कविता के प्रति आकर्षण है ? अभाव, अध्यापकी, समय के दबाव और ससुर जी की काली साया ने मिलकर उसे जिस निर्दयता से निचोड़ा है उसे देखते क्या उसमें भावुकता का शेष रहना आश्चर्य नहीं है? खोरा का खेत और बगीचा देखने का निमन्त्रण उसे क्यों इतना उल्लसित करता है ? उसे लगता है, उसके भीतर कुछ है जो उसकी पकड़ में नहीं आ रहा है। पुराणों की पुरानी भाषा में इसे यों समझा जा सकेगा कि पूर्व जन्म का शायद कोई गहरा सम्बन्ध है जो उस एकाकी निरीह कवि के प्रति इतना खिंचाव पैदा कर रहा है।

उस दिन बावजूद मन के उकसने-हुमचने के रामरूप हिल नहीं सका परन्तु सप्ताह बीतते उससे रहा नहीं गया। वह खोरा बाग में पहुंच गया। बरसात की अभी शुरुआत थी और मार्ग अभी पंक-जटिल नहीं हुआ था। अभ्यासी लोग अभी साइकिल घसीट रहे थे। आम की अच्छी फसल नहीं आयी थी और अपने पेड़ पर दुर्लभ वस्तु की तरह अटके चार-छह पके आमों को कौओं से बचाने के लिए खोरा जी ताली पीट-पीटकर हांक लगा रहे थे। रामरूप ने अपना परिचय दिया तो बिना किसी स्वागत की औपचारिकता के बिठाकर कविता सुनाने लगे। झोंपड़ी के बाहर पेड़ के नीचे ज़मीन पर बैठकर कविता सुनने-सुनाने का वह विचित्र

अवसर था। कवितायें कहीं कागज पर नहीं लिखी थीं। सब कंठाग्र थीं और भर-भर-भरभर निकल रही थीं। गांधी, जवाहर, पटेल, सुभाष और तिलक आदि से संबंधित अधिकांश कविताओं में राष्ट्रीय भावों की उछाल थी।

रामरूप को आश्चर्य हो रहा था कि नगर की हलचल से दूर, खेतों की दुनिया के इस एकांत में, टूटी झोंपड़ी में यह कैसी भाव-संपदा बिखरी है? इस एकाकी अपंग आदमी में ऐसी देशभक्ति कहां से आयी? काव्यभावनाएं क्या सचमुच हवा की तरंगों में उमड़ती रहती हैं और पकड़ने वाली सजग चेतना उसे कहीं से भी पकड़ लेती है? रामरूप भीतर ही भीतर तौल रहा था, यह मामूली घसियारा कवि नहीं है। इसके खेत में जैसे गन्ना है, हंडा में जैसे अचार है और खाट पर जैसे अमावट है वैसे ही हृदय के भीतर गहरे भाव हैं।

उस दिन कविता के बाद कोई खास बात नहीं हुई। खोरा ने एक बार जीवजांगर का समाचार पूछा, बाल-बच्चों के बारे में पूछा और अंत में उनके काई खाये पुरातन घड़े का एक लोटा पानी पीकर रामरूप घर वापस आ गया। अनेक प्रकार के मिले-जुले भाव रास्ते भर उसे उलझाये रहे। वह खोरा के बारे में कुछ भी राय नहीं बना पाता था। सोचता है, वह अद्भुत है, विचित्र है, रहस्यमय बीहड़ता समेटे है और काफी दिलचस्प है। लेकिन ये बातें सांसारिक अर्थ में नहीं, इस अर्थ में तो वह कोरा जंगली है। यह भी तो नहीं कि उसकी रचनाओं में शुद्ध कवित्व की स्तरीय तथा युगीन गरिमा हो। सामान्य जीवन का ऊबड़-खाबड़ विवरण जो अति भावुक शिल्प की किंचित् भदेस परतों में लिपटा है क्या कहीं मंच पर रखा जाने लायक है? तो, यह भी एक रहस्य है कि हीनता ही आकर्षक हो गयी है। निःसंदेह, खोरा हीन है, मगर उसके भीतर की सरस्वती हीन नहीं है। यदि बचपन में उसका पारिवारिक परिवेश सुसंस्कृत और समृद्ध रहा होता तथा ऊंची शिक्षा-दीक्षा का अवसर मिला होता तब कोई उसकी अंतस्थ सरस्वती का चमत्कार देखता।

सोये-सोये दिन ढल गया तो चारपाई से उठकर रामरूप ने बैलों को नांद पर लगा दिया और एक खांची हरे चारे की कुट्टी उनके आगे चरन में डाल दी। अब उसे पानी भी डाल देना है। जिस रविवार को प्रातः-संध्या यह गो-सेवा का अवसर मिलता है उसको वह बहुत मूल्यवान् मानता है और अवसर हाथ से जाने नहीं देता। आज उसने नौकर को इसीलिए पटुआ उखाड़ने के लिए भेज दिया। बैलों को पानी डालते सोचता है, वह सरस्वती के आकर्षण में खोरा के निकट पहुंचा और लक्ष्मी के आकर्षण में पहले से ही ससुर जी से चिपका है। क्या गजब है? एक ओर सरस्वती लंगड़ी है और दूसरी ओर लक्ष्मी कलंकित। घी का लड्डू तो टेढ़ा भी भला होता परंतु कुनाइन की गोली अत्यंत सुघर चिकनी होने पर भी गले से उतारते रोमांच हो जाता है। क्या अनोखी भाग्य-क्रीड़ा नहीं है।

रामरूप लक्ष्मी और सरस्वती के कृपा-पात्रों का संयोग जुटाये। किसी असोची कलंक-कथा में एक पृष्ठ और जुड़े।

वास्तव में उसे बेहद उत्सुकता है कि क्या हुआ? पत्र पाकर बाबू हनुमान प्रसाद खोराबाग में गये या नहीं? गये तो क्या बात हुई? वह कौन-सा उनका काम है कि जिसमें खोरा जैसे नकुछ आदमी की ज़रूरत पड़ गयी? तंत्र-मंत्र की बात हो सकती है। वशीकरण भी सीख सकता है। क्या करेगा यह मंत्र लेकर? किसी कुमारी कन्या को मोहित कर विवाह करेगा? करइल कुछ भी कर सकता है। पता नहीं किस कुसाइत में यह विपत्ति का काला पहाड़ पहले-पहल उसके दरवाज़े पर तिलकहरू बन आया। उसे देख रामरूप धक् से हो गया था। सोचा था, इसके 'गैंग' वाले संभवतः आज रात को इस गांव के घरों में डाका डालेंगे। वैसा डाका तो नहीं पड़ा परंतु क्या रामरूप स्वयं लुट नहीं गया? करइल ने अकड़कर कहा, 'बोलिये, कितना तिलक लेंगे?' धाक वाला आदमी तो था ही। पिताजी चकमे में आ गये। वह मक्खीचूस भला कुछ देने वाला था? भयंकर कचकच के बीच शादी सम्पन्न हुई। अनेक बार उसकी श्रीमुखवाणी जो मुखरित हुई है, लगता है जैसे आवाज भी रामरूप के कानों में गूंज रही है—बेटा, एक बेटा भुवन और दूसरे तुम, मेरा और कौन तीसरा है?···महुआरी वाला चक जल्दी ही रजिस्ट्री कर देंगे। मगर वे एक बार भी यह नहीं कहते कि उसे जोत-बो लो। शादी के वर्ष पूरी उम्मीद थी कि कहेंगे परंतु असाढ़ लगते ही उनके हल-बैलों की सेना उस चक पर उतर आयी। और तब से आशा निरंतर लगी-लगी बुढ़ाने लगी। एकाध बार साहस कर कहलवाया भी गया तो वही उत्तर—अब इस साल रजिस्ट्री कर देंगे।···अब यह चक रखने का हमारा हक कहां है···अब हमारे दो बेटे हैं,···यही सब। गज़ब धाखड़ा से काम पड़ा है। बीहड़ मृगतृष्णा है। दौड़ लगाते चलो रामरूप। पत्नी श्रीमती रामकली देवी से कहो, लासा ज़रा तगड़ा बनावें। चिड़िया जबरदस्त है। बाप और व्यापारी में अंतर होता है। तुम उसकी लड़की ज़रूर हो मगर तुमसे भी प्यारे उसकी अगणित लड़कियां हैं, उसके लड़के हैं और उन्होंने ही द्रव्य रूप धारण कर उसकी हवेली को लक्ष्मीवान बनाया है। तुम्हारा क्या है? एक घाट लगा दिया। अब उसे अपनी उस संतानों की रक्षा करनी है। ज़मीन के नीचे, तिजोरी में, बैंक में, पोस्ट आफिस में, रेहन में—अरे बाप रे बाप, भला खिसकने देगा वह एक भी कानी चित्ती को? एक धूर भी ज़मीन को?

३

रात अभी कम-से-कम तीन घंटे बाकी है मगर सारा महुवारी गांव जगा हुआ

है। रामरूप भी जगा हुआ है। उसने चारपाई से उठकर देखा है, हां सुकवा नक्षत्र उग गया है और कचबचिया तारासमूह के पास उगे तिनडंडिया तारे सिर पर आने-आने को हैं। अचानक उसके शरीर में स्फूर्ति आ गयी। नहीं, नौकर को जगाने से बेहतर होगा—काम खुद अपने हाथ से कर दें। उसने अड़ार से बैलों को खोलकर नांद पर लगा दिया और उन्हें चारा डाल दिया। भूसे पर मुंह भांजते बैलों की टुनटुन-टुनटुन घंटी-ध्वनि उसे अच्छी लगी। जल्दी-जल्दी खिलाकर उन्हें खोल देना होगा। हांककर सूरज उगने से पहले खेत पर पहुंचाना है। अरे हां, जाने-जाने में एक-डेढ़ घंटा तो लगेगा ही। खेत दूर है। फिर लौट-कर जल्दी-जल्दी तैयार होकर स्कूल जाना है, ठीक साढ़े नौ बजे। एक मिनट भी विलंब हुआ तो प्रिंसिपल की लाल स्याही क्षमा नहीं करेगी। आजकल नाराज हैं। उस दिन उन्होंने प्रस्ताव किया कि महंगाई की बढ़ोतरी वाली प्राप्त पिछली धनराशि अध्यापकगण विद्यालय को दान कर दें तो उसने एतराज कर दिया। फिर साहस बढ़ा तो कुछ और लोग भी नाक मारने लगे। प्रस्ताव गिर गया। मुंह लंबा होकर लाल हो गया और कलम की राह कागज पर उतरने लगा।··· बैलों को पानी डालना है। अरे भगेलुआ, उठ-उठ, देख साफ होने-होने को है।

कार्तिक का सिहरावन और हलचल-भरा भिनसहरा पूरे जोम पर है। भगेलुआ ने भूसे में पानी डालकर खली और दाना चला दिया है। बैल नाक तक डुबाकर चभर-चभर खा रहे हैं। भोजन की भी ध्वनि होती है, चाहे आदमी हो या बैल। भोज-भात में पांति पर अंत में दही चलाकर ऊपर से चीनी दी जाती है तो सीकमभर खींचने वाले कैसे सड़र-फड़र सर्र-फर्र कर पत्तल तक चाट डालते हैं। मगर कार्तिक में बैलों द्वारा नांद साफ कर डालना तो भाग्य से ही संभव है। बोआई का दबाव ऐसा कि चार गाल खाकर मुंह हटा लिया। किसान ऐंठकर रह जाएगा।···ले ले, नमक छीट रहा हूं। तो, यह बैलों के खाने खिलाने की ध्वनि है और ठंडे अंधेरे के परदे को चीरती नाना प्रकार की और भी ध्वनियां आ रही हैं। कोई हलवाह को जगा रहा है तो कोई खाने में कसर करते बैल पर क्रुद्ध होकर उसे गालियां बकता है तथा चिल्ला रहा है—चल सारे, दिन भर मुंह पर जाबा लगाकर सूखा तावा तोड़, नस ढीली हो जायेगी और इस एकादशी भूखने का मजा मिलेगा। चारों ओर घंटियों की विरल टुन-टुन···खिला-पिलाकर खुलेंगे तो गले में लोग घुंघुरू बांध देंगे—झमर-झमर झांव-झांव।···गली से दीनदयाल गुजर रहा है। साथ में कोई और भी है। वह किसी खेत के डांड के बारे में जोर-जोर से बक-बक कर रहा है। इससे रामरूप को भी निबटना है। उसके एक खेत में डेढ़ लट्ठा घुसकर बो आया है। तनिक असावधानी हुई तो चैत में काटकर ले भागेगा। भगेलुआ जाबा खोल रहा है। जाबा लगाकर घुंघुरू बांधेगा। आज रामरूप बैलों के साथ स्वयं जायेगा। खेत

नाप कर बोना है।···कहां है लट्ठा ?

वह सोचता है, और कुछ नहीं तो बैलों के पीछे लाठी में लोटा-बाल्टी और खाना-दाना लटकाये इस प्रकार अपने खेत पर आराम ठाट चलने वाला जीवन का एक छोटा-सा सुख तो है। अंधेरे की कुहरीली झीनी चादर के भीतर बगीचे के बीच खिंची साफ लकीर-सी पगडंडी पर बैलों की कतार के साथ वह चल रहा है। घंटी-घुंघुरू की सम्मिलित उठती गिरती अविरल ध्वनि वातावरण को विचित्र मोहक बना रही है। पीछे से किसान टिटकारी मार बोलता जाता है, डहर··· डहर···डहर ! अनेक किसानों के बैल हैं, एक में मिल गये हैं। बगीचे के बाद चौड़ी छवर पर उधर से कुछ और बैल आयेंगे। मुंह अंधेरे मार्च करती बैलों की पैदल सेना के साथ होना इस सीज़न का कितना बड़ा सुख है। हां, खेतों में जो लड़ाई चल रही है, कातिक की लड़ाई, वह एक सुख है। लड़ाई और सुख ? एकदम सही। बैलों के पीछे कंधे पर हल लिये हलवाहों की कतार, कंधे पर टंगे हल, मय जुआठ के हवा में तैरते हवाई जहाज—जैसे, मन्दगति, पंक्तिबद्ध और खेतों में बीज की गोलियां बरसाने के लिए चुपचाप अग्रसर, वे विनाश नहीं, सृष्टि की गोलियां।

दोनों ओर खड़ी ज्वार की सघन ऊंची फसल, बीच में चौड़ी छवर, छवर पर टुनटुन-टुनटुन सरकते बैलों का झुंड, इस फसल के पहाड़ के बीच बने दर्रे से होकर जैसे गुज़रता काफिला, अंधेरे मार्ग में अजीब आकर्षक यह बैलों का उजाला, छिटफुट अगर-मगर, जैसे आसमान में शरद के चमकते डब-डब तारे। सब कुछ शांत, प्रशान्त शीतल छुअन, बगल से कोई बीज की गठरी लिये किकुरा-किकुरा तेजी से लपकता हुआ निकल जाता है तो लगता है कहीं कुछ काम होने जा रहा है। जब कोई सरहंग बैल शरीर की खुजली मिटाने के लिए बगल के किसी खेत में जाता है तो खड़-खड़, खड़-खड़···शांति भंग होती है और तब लगता है, रास्ता चलते बैलों, को अनुशासित रखने जैसा उत्तरदायित्व भी साथ लगा है। ज्वार जवानी पर है। सिर पर नवेली बालियों की सफेद गोल पगड़ी बंध गयी है। पौ फटने के साथ इस पर घोंसलों में चह-चह, चह-चह कर चोंच पर सान देती चिड़ियों का दल पंख पसारे उतर आये न आये, गोफन के साथ चहरा उड़ाने वाला कोई गोइयां भी पेड़ पर उतर आयेगा और तब···बइठऽ हो बइठऽ, चिरई··· बइठऽ हो मैनी···? ऐसा लगता है कि गोफन सनकारता कोई रामरूप के कानों में चिल्ला रहा है—

बइठऽ गुड्डी बइठऽ, पुरान चाउर खा,
रहरी की डाढ़ पर टिड़ुकल जा।

दीनदयाल तगड़ा घुंघुरू डाल बैलों को मकाता हुआ बगल से आ रहा है। नयी दमकस जोड़ी है, जना रहा है, मैं भी कुछ हूं। झम्म···झम्म···झम्म···झम्म ···झम्मर।

'आज डांड़ हो जाय चाचा···।' सामने पहुंचा तो रामरूप ने कहा।

'कैसा डांड़ ?' वह बिना रुके चिल्लाता निकल जाता है, 'हमने सही-सही नापकर अपना खेत बोया है। उधर मत आंख फेरना और न हराई घुमाकर हमारा खेत नुकसान करना। तुम अपना देखो···'

प्रकृति की सारी शोभा अकस्मात् लुप्त हो गयी। कोई मनोमय इन्द्रजाल है, बहुत क्रूर, कैसे आंखों को औंधा बना देता है। अब कहीं सुषमा, हर्ष-हिल्लोल, प्रभातमाधुरी और कलकल संगीत नहीं है। अब एक अदद रावण है। अरे, यही दीनदयाल प्रायः कहा करता है, गांव महुवारी अब लंका हो गया। सत्य वचन। खेत के इस माथ से उस माथ तक एक सौ बीस लट्ठा की लम्बाई में डेढ़ लट्ठा चौड़ाई दबा लिया और कहता है, उधर आंख मत फेरना। जानता है, मास्टर जाति का मनई क्या कर लेगा ? टें-टें कर रह जाएगा। नहीं, रामरूप उसके इस विस्तारवाद का विरोध करेगा। कम-से-कम अपने हद तक हराई तो घुमायेगा ही ताकि डांड़ करने का हकदार रहेगा और फिर पंचायत बुलायेगा। लेकिन पंचायत ?

रामरूप ने देखा, बैल अपने खेत को पहचानकर मेड़ पर खड़े हैं। चिन्तित प्रसंग से उसका ध्यान टूटा। अरे, इतने खूबसूरत खेतों की मुक्त दुनिया में खड़े होकर भी वह क्यों और कैसे इतनी देर तक गंदे प्रपंचों में डूबा रहा। क्षितिज-छोर पर आभा का वह जो झीना-कुहरीला परदा था, एक गोलाकार दमकते अरुण वृत्त से अब सुशोभित हो गया है। विशाल मैदान की यह टटकी जुड़ांसी मन-प्राण को मौन खिलखिलाहट से भर रही है। बीज धारण करने के लिए पूर्ण तैयार निखरी धरती का यह गुलगुल प्रसार, जिस पर चलते पैर ही नहीं मन भी किसी अचिन्त्य कोमलता में धंस-धंस जाता है, अपनी अव्यक्त-व्यक्त सुगन्ध से प्राण-धारा को सींच रहा है। सन्नाटे के सनन्-सनन् के बीच खेत-खेत में खड़े हल-बैलों का एक छिटपुट संसार सजीव फसली फूलों की भांति उग आया है। पूरा गांव पूरी शक्ति के साथ मैदान के पलिहर में उतर आया है। यह बोआई के मौसम की गुदगुदी क्या साधारण है ? देव वेला के इन मूक महादेवों का संग जीविका और जीवन के विराट् उद्घाटन की पृष्ठभूमि है। निरुद्वेग और निरालस भाव से सारा काम सम्पन्न हो रहा है। हलवाह बैलों को पल्ला चढ़ाकर नाध देता है, बीज की झोली कमर में बांध लेता है, पैना हाथ में आ जाता है, रामरूप झपटकर आगे आ जाता है, हल का फाल धरती में गड़ता है और हलवाह बैलों को टिटकारकर कासन देता है, चगोठ···चगोठ। 'बंसा बाजे बलाय भागे।' एक परंपरागत कथन याद आया। रामरूप मन-ही-मन मन्त्र की भांति उसे दुहराता है। बैल खेत चगोठ रहे हैं। हलवाहे का दाहिना हाथ हल की मूठ पर है और बायें हाथ की बीज-भरी मुट्ठी काठ की डोकी पर है जिसमें से होकर बंसा के रास्ते झर-झर, झर-झर स्पष्ट आवाज करते हुए बीज हलके-हलके नीचे गहराई में पड़ता जाता है। बोआई

का यह देशी यन्त्र जिसने आविष्कार किया वह कितना महान् था। हल के फाल से फटी जमीन के भीतर ठीक स्थान पर बीज बैठता जाता है। बांस का पोपला बंसा जब नहीं कजता है, हलवाह बैलों को रोक देगा। कोई गड़बड़ी है। तब वह देखेगा, कहां मूंदा लगा है, चिकनी मिट्टी ने सटकर नीचे का छेद बंद कर दिया है। बंसा झर-झर, झर-झर बज रहा है, बीज खेत में टाड़ से होकर ठीक गिर रहा है, बस किसान के लिए परमसुख है।

इसी परमसुख में डूबा रामरूप बैलों के आगे-आगे स्वयं भी खेत चगोठ रहा है। यह पहली हराई फेरने में सावधानी बरतनी पड़ती है। करइल क्षेत्र में डांड़ मेढ़ तो है नहीं, बस पिछली बोआई की बघार और सिंगानी देखकर तथा खेत को सामान्य रूप से नापकर जोतते-बोते हैं। कभी फरक नहीं पड़ता है। पड़ता भी है तो दीनदयाल जैसों की बदनीयती से। इस खेत के डांड़ के बारे में रामरूप आश्वस्त है। इसीलिए सुखपूर्वक चगोठ रहा है। सरसों के बीज की झोली कंधे पर लटकी है। वह बीज छींटता जाता है। पहले उसे सरसों के बीज नहीं छींटना आता था। बांह को झटकारकर जोर से दूर-दूर तक छींटने और पूरे खेत को इस तरह 'पाह' अर्थात् अनुमानित खानों में बांटकर छींटने की कला बाद में मालूम हुई।

खेत चगोठकर हराई से दो लट्ठा भीतर हट पहली 'पाह' में बीज छींटने के लिए वह बढ़ा और पहली मुट्ठी का बीज अभी समाप्त नहीं हुआ कि वह देखता है कि एक आदमी तिरछे भगा-भगा आकर अब उसके कोठे के भीतर आ गया और उसी की ओर लपकता चला आ रहा है। मुट्ठी रोककर वह खड़ा हो गया। अरे, यह तो सुग्रीव है।

'पा लागीं बाबू जी।' वह बोलता है।

'सुग्रीव नाम है न तुम्हारा ? खुश रहो। क्या समाचार है ?···बहुत सवेरे ?' रामरूप ने पूछा। वह अभी आधा सरसों मुट्ठी में ही बांधे है।

मगर, घबराये हुए सुग्रीव ने जो समाचार जल्दी-जल्दी संक्षेप में बताया उसे सुनकर मुट्ठी का सरसों रामरूप ने झोली में रख दिया। यह आफत भी इसी समय आयी। अब क्या हो ? क्या करने घर से निकले और अब इस समय यहीं से चलकर वह सब क्या करें ? मक्खियों जैसे भिनकते लोगों के बीच कचहरी का खाक छानें, जेल चलें और मुंह काला किये लोगों के बीच ससुर जी के पावन दर्शन करें, उन्हें जमानत पर मुक्त करायें।···बहुत गड़बड़ हो गया। स्कूल से छुट्टी नहीं ली। यहां सरसों भी नहीं छींट सका। घर से खाली हाथ चला। वापस जाकर स्कूल जाना था। घर जाकर स्टेशन जाने पर ट्रेन नहीं मिल पायेगी। फिर घर पर क्या रखा है ? इधर आज शनिवार है। समय से काम नहीं हुआ तो गजेन्द्र-मोक्ष संभव नहीं।···सुग्रीव खाली हाथ आया है या कुछ लिये है ? क्षण-भर में ही रामरूप के मन ने बावन कोठे की दौड़ लगा ली।

'और क्या कहा मालकिन ने सुग्रीव ?' रामरूप ने सिर नीचे किये बैठे सुग्रीव से पूछा। अनुमान से पूछा प्रश्न सटीक उत्तर पर बैठा। उसने सौ रुपये के दो नोट देकर कहा, और लगे तो लगा देंगे। किसी प्रकार कार्य हो जाना चाहिए।

कचहरी में पहुंचकर रामरूप को लगा कि उसके ससुर जी की जमानत में वही नहीं पहुंचा है, गठिया और आस-पास के गांवों के अनेक लोग मौजूद हैं। लक्ष्मीवान का तेज सर्वत्र अपना कार्य करता रहता है। हनुमानप्रसाद जी के वकील विद्याबाबू से मिलकर कार्यवाही शुरू हुई। सभी लोगों के साथ अपनी समझ और शक्ति भर दौड़-धूप करने के बावजूद उस दिन रामरूप अपने ससुर जी को सायंकाल तक नहीं छुड़ा सका और दूसरे दिन रविवार पड़ रहा था। कुछ संयोग की बात थीं और साथ ही कुछ उसकी अनुभवहीनता भी कि कुछ सामान्य टेकनिकल खानापूर्तियों की कमी के कारण बना-बनाया काम बिगड़ गया। वह जब करइल जी से मिलने पहुंचा तो लगा, रो देगा। किन्तु देखा, उधर चेहरे पर शिकन नहीं है। वे कह रहे थे, बस बेटा, 'यही एक भय वाली जगह थी जिसे नहीं देखा था। अब मैं पूर्ण निर्भय आदमी हो गया। यहां बहुत मनसायन है।···हां, अब आज तो पहुंचोगे नहीं, कल सुबह हमारे यहां समाचार भिजवा देना और रात को जाकर दरवाजे पर सो रहना, ज़रा खबरदारी से। कोई गड़बड़ी न हो। तुम अपने हो। अब सोमवार को आने की ज़रूरत नहीं। मैं खुद छूटकर आ जाऊंगा।' जेल से चलकर रामरूप ने एक बार स्टेशन पर झांक लेना उचित समझा। कार्तिक का दिन है। पहुंचना चाहिए। संयोग से गाड़ी लेट थी और खा-पीकर लोग सो रहे थे कि वह घर पहुंच गया।

'तुम अपने हो' पहली बार करइल जी ने इस प्रकार खुले रूप में मुंह नहीं खोला था। परन्तु गज़ब का नशा है इन शब्दों में। घर पहुंचने तक नहीं उतरा। उसकी खुमारी दूसरे दिन भी ज्यों-की-त्यों बनी रही। शनिवार को पूरी फुरसत से बोआई पर पहुंचा तो दिन-भर रामरूप झूमता रहा। सुबह खली के बाद बैलों को उसने एक-एक कटोरा सीरा चलाया। दोपहर को खेत में भोजन करते समय माठा वाला लोटा थोड़ा रखकर हलवाह रामलखन के आगे सरका दिया। समाचार पूछने वालों को खूब सुरती-बीड़ी बांटता रहा और लम्बी-चौड़ी हांकता रहा। 'क्या पूछना है ससुर जी का, खुद जेलर टेबल पर बुलाकर चाय पिलाता है। शनिवार को तो मुक्त ही थे। बस, दोस्ती में ही जेलर ने हंसते-हंसते एक नुक्स निकालकर रोक लिया। अरे, यार तुम अब फिर कहां मिलोगे ?'

सांझ हुई। कोठा बोकर लड़ाई का मैदान मार लिया गया। बघार फांद दी गयी। 'हरियर हरियर महादेव' का समवेत नारा लग गया। बैलों का नाधा पल्ले से छिटका दिया गया और वे घर की राह डहर चले तो अगली सुबह के लिए आवश्यक निर्देश देकर रामरूप गठिया जाने के लिए तैयार हुआ। ओह, आज

गठिया नहीं जाना होता तो वह बगल के गांव में रामलीला देखता। पुराने लोग अभी किसी प्रकार बाप-दादे की चलन निभा ले चल रहे हैं। कितना अच्छा लगता है अपढ़ गंवार लोगों का यह अनगढ़ लीला-नाट्य, रामायन-गायन…लेकिन अब रामलीला वाली परती में जाने के लिए समय कहां है ? सूरज का लाल गोला पश्चिम की ओर सामने के बबूल की एक बचकस छतरी में उलझा-उलझा नीचे खिसक गया। मगर गठिया ही जाना है तो रामरूप को कोई जल्दी नहीं। युद्ध-विजय की मुद्रा में हलवाहों के साथ बैठकर उन्हें एक-एक बीड़ी पिला देने में कोई हर्ज नहीं था। आजकल कार्तिक के दिनों में रास्ता तो देखा जाता नहीं। करइल क्षेत्र के विस्तृत सपाट पलिहर वाले मैदान में चतुर्दिक राह ही राह है। गांव की सीध में चल देना है। वह अध्यापक है तो क्या हुआ ? लाठी ले लेगा। कार्तिक में वह किसान जो है। फिर रात का वक्त है। वैसे करइल क्षेत्र बहुत सुरक्षित है। राहजनी के अपराध से लगभग शून्य। क्या इसकी माटी की खूबी है ?

रास्ते में रामरूप की वह सोयी वेदना जाग गयी। लोगों से क्या कहे कि किस-लिए उसके ससुर जी जेल गये ? इनकम टैक्स के बकाया वाली झूठी बहानेबाजी कब तक चलेगी ? कभी-न-कभी तो यह भेद खुल ही जाएगा कि यह गांजे की तस्करी का चक्कर रहा। किन्तु यह घटना कहां की है ? किस साधु की कुटिया की ? सुग्रीव ने बहुत गोलमोल बताया और जेल में उनसे पूछने का साहस नहीं हुआ। कहीं उस अज्ञात साधु में कवि खोरा तो नहीं छिपा है ? क्या दिन का घसियारा गंवार कवि रात में तस्करी करता है अथवा तस्करों को प्रश्रय देता है ? क्या उसकी एकान्त वाटिका में कोई अड्डा है ? हे प्रभु, किस चेहरे में तूने किस रूप को छिपा रखा है ?…ज़रा बच के बाबू जी !

उसका ध्यान टूटा तो देखता है कि पीछे कन्धे पर हल लिये हलवाहों की एक पूरी कतार है। बैल आगे चले गये हैं और ये लोग आराम से जा रहे हैं। उन लोगों को रास्ता देने के लिए वह बगल में एक ओर हट, खड़ा हो गया। हलवाह आगे निकल गये। उनकी संख्या पांच थी। जब छठा बिना हलवाला आदमी लाठी लिये सामने से गुज़रा तो धुंधलके में रामरूप ने उसे ज़रा गौर से देखा और चौंक-कर पूछा—

'अरे सुग्रीव, इधर कहां से ?'

'आपके सीवान में जो मालिक ने पांच बीघा खुबवा का कबाला कराया, उस पर आज चढ़ाई थी।'

'अच्छा ! उस दानवाले चक को कल तक तुम्हारे मालिक खाते रहेंगे ? तुम तो उनके दोस्त हो, समझाओ। रजिस्ट्री न सही, उसे छोड़ तो दें। तुम जानते हो न, शादी उसी चक पर…'

'हां, याद है।…आप बड़े लोगों की बात में मैं क्या पड़ूं ? फिर आपसे बढ़-

कर उनका कौन अपना संबंधी है?···हां, लाठी लेकर कुबेला में कहां चल रहे हैं?'

'तुम्हारे मालिक का हुक्म है, मैं रात को दरवाज़े पर सावधान सो रहूं। कोई गड़बड़ी न हो।···भला कहो! तुम सब इतने लोग हो, क्या गड़बड़ी हो सकती है?'

रामरूप को लगा, यह सुनकर सुग्रीव कुछ घबरा-सा गया। उसने कुछ उत्तर भी नहीं दिया। हलवाह कुछ आगे निकल गये थे। उनका साथ पकड़ने के बहाने वह अब तेज चलने लगा। यह सुग्रीव सचमुच बहुत रहस्यमय है। रामरूप ने उस दिन कीचड़-कांदो में एक औरत के साथ आने वाली घटना का स्मरण दिलाया तो लगा कि भीतर से तड़फड़ा गया है और पट्ठे ने कुछ आंय-बांय बोल, चट बात बदल दी है। काफी देर बाद फिर उसने बोआई के बारे में पूछा, माटी के इस साल कड़ी होने की चर्चा चली और जब हलवाहों में से एक जवान जीव कहरवा गाने लगा तो श्रोता बन शेष रास्ता कटने लगा।

रात को खा-पीकर वह ससुर जी के दरवाज़े पर सोया तो अत्यधिक थका होने पर भी निद्रादेवी को मनाने के लिए उसे लगभग आधी रात तक जगना पड़ा। मन कहां-कहां भटकता रहा। उसे आश्चर्य हो रहा था कि रात को दरवाज़े पर चौकसी के साथ सो रहने वाली बात सुनकर जैसे सुग्रीव सहम गया था उसी प्रकार मालकिन भी पहले-पहल विचित्र तरह चौंक गयीं। फिर बात बनाती हुई बोलीं, अभी बुढ़ौती तो दूर है, बाकी मतिहरन शुरू हो गया। ओह जनम का किया तो आदमी एह जनम में ऐसे भर रहा है फिर एह जनम के किये-कराये की कितनी लदनी लदेगी।···यह दर्शन रामरूप की समझ में कुछ नहीं आया और खबरदारी से दरवाज़े पर सो रहने और ससुर जी के मतिहरन में समीकरण बैठ नहीं रहा था। उसे लगा बाहर-भीतर अंधेरे में कोई रहस्य मंडरा रहा है।···यह सुग्रीव भी एक रहस्य है। शाम को जाने लगा तो कैसे दबे मन से कह रहा था, सोता तो मैं भी यहीं हूं परन्तु आज एक परोज में फंसा रहूंगा। परोज क्या है, बिरादरी की बटोर है। किसुना और टहला को भी जाना है। बतीसा और मनीजर द्वार पर रहेंगे। मालिक के परताप से यहां कोई गड़बड़ी नहीं है। आपको हुकुम है तो सुख से सोइये।···मगर सुख कहां है? करइल जी के घर के भीतर खाने का सुख तो बहुत है परन्तु दरवाज़े पर उसे कभी सोने का सुख नहीं मिला। विवाह की रात कोहबर में तो अपार आनंद था पर भिनसहरा लगते कुछ सो लेने के लिए बाहर यहां दरवाज़े पर आया तो चारपाई के नीचे एक बड़ा-सा बिच्छू डंक तरनाये चलता दृष्टिगोचर हुआ। वह तो मार डाला गया पर नींद जो उखड़ी-उड़ी सो फिर नहीं वापस आयी।···भला यह आदमी के सोने की जगह है? अड़ार पर गोबर उसी प्रकार पड़ा है। उधर कऊड़ की राख बिखरी है। इधर खली और बैलों को पिलाये जाने वाले जूठ के बर्तन पड़े हैं। भैंस के नांद की सानी महक रही है। सारा दरवाज़ा धूल-धक्कड़ भरा है। थके बैल बैठकर शांत पगुरी-लीन हैं

परंतु पूंछ उठाकर जब देह पर से मसक-दंश उड़ाते हैं तो धूल उड़-उड़ इधर तक आती है।···चमरचिट्ट है उसका ससुर। इतना पैसा बटोरकर रखे हैं और एक बैठने-सोने लायक आधुनिक किस्म का दरवाजा नहीं बन पा रहा है। वही बाप-दादे की बनवायी माटी की दीवार और काठ की खम्हिया। रात-दिन हाय पैसा, हाय ज़मीन···हां शौक बैलों का है। ससुर जी के पांच जोड़ी उम्दा नस्ल के बैल पूरी देहात में मशहूर हैं। कबूतर जैसे ताज़े-चिकने रोवें वाले खाये-खिले बैलों के झुंड पर एक बार नज़र फेंककर रामरूप को अद्‌भुद तृप्ति हुई पर तभी एक बिल्ली उस दरवाज़े के खपरैल से कूदकर गली फांदती हुई बगल की दूसरी हवेली के खपरैल पर कूद गयी और इस प्रकार कुछ खपरैल जो गली में गिरे तो कुल मिलाकर एक क्षण के लिए रोमांचक खड़-भड़ हो गयी।

रामरूप चारपाई पर उठ बैठा। चारों ओर निगाह दौड़ाई। कोई नहीं है? दो चरवाह तो बटोरू में गये। एक वह बत्तीसा नामक चरवाह कहां गया? याद आया, चार दिन बाद ही दीवाली है। मालिक के नहीं रहने से छुट्टा होकर कहीं जुए की फड़ पर बैठा होगा। उसने फिर एक बार चारों ओर देखा। उधर कोने में बूढ़ा मनीजर खर्राटे भर रहा है। रात में उसका होना-नहोना बराबर है। गांव का यह निराश्रित कहार करइल जी की कृपा से वृद्धावस्था की पेंशन पाने लगा, पैंतालीस रुपया महीना। हर तीसरे महीने मनीआर्डर आ जाता है। सब रुपया करइल जी के 'बैंक' में जमा होता जाता है और यह उनका 'मनीजर' बना भीतर से बहुत गौरवान्वित रहता, स्वामीभक्त द्वारपाल की भूमिका निभाने में कसर नहीं रखता है। उसका अपना डीह भी मठिया के पास है जो करइल जी के कब्जे में है। महंत जी उतने रकबे का खेत देकर बदलना चाहते हैं। करइल जी दूना मांग रहे हैं। उस मुर्दे की भांति सोये मनीजर को देखकर डर लगता है। फिर कोई और अज्ञात भय था जो भीतर से सिर उठा रहा था। कितना उदास और मनहूस लग रहा है यह बैठकखाना। आदमी नहीं, यहां बैल ही हैं, जो आनन्दमग्न हो पगुरी कर सकते हैं और सुख से सो सकते हैं। क्या होगा इतना प्रभूत धन? किस काम का? ···रामरूप, यह मृगतृष्णा है। बस, तू अपने परिश्रम की कमाई का भरोसा कर। ···तुम अपने हो, मुंह से कहा था ससुर जी ने। भीतर क्या है राम जाने। जो है बहुत गहन है। करइल जी के अन्तस की थाह पाना असम्भव है। संभव है बस यह सेवा। रामरूप, वे जेल जाएं तो तू उनकी हवेली अगोर। कोई गड़बड़ी न हो।··· गड़बड़ी क्या हो सकती है। कोई बैल खोलकर चुरा ले जा सकता है। डाका पड़ सकता है। सेंध लग सकती है। और···?···और?···अरे यह क्या?···यह तो सचमुच की गड़बड़ी।···वह बंड़ेरी पर साक्षात् कुबड़ी चुड़ैल, हाथों में लम्बाबांस, सिर के बाल खुले, परम कुवेश, जय बरम बाबा!

रामरूप ने आंखों को मलकर फिर-फिर देखा। हां, वह होश में है। अपनी

आंखों से यह देख रहा है।···मगर, अब नहीं देखेगा। सो जा चादर ओढ़कर मास्टर। ससुर जी के घर गड़बड़ी वाली प्रेतिनी खपड़ा-खपड़ा घूम रही है। सावधान, इसका रुख इधर ही है।···हां, चादर के कोने से जरा एक आंख के लिए फांक छोड़ दो। अरे राम, यह तो सचमुच इधर ही उतर रही है। तीन खण्ड की हवेली लांघ बंड़ेरी पर उगी भीतर की गड़बड़ी अब शायद घर-बाहर हो जायेगी। हो जाय, जाय, रामरूप को क्या? वह तो सोया हुआ है। मुर्दा है। वह क्या जाने!···लेकिन, लेकिन···उत्तरदायित्व···कैसा उत्तरदायित्व? नौकर साले कहां हैं?···वह देखो, उस ओर उसने बिना छिला हुआ वह गांठदार बांस का लम्बा टुकड़ा धीरे से ज़मीन पर उतार दिया।···गजब का साहस।···एकदम जवान प्रेतिनी, दम साध रही है, खड़बड़ न हो,···आहिस्ते-आहिस्ते ओरी पर बैठ गयी···नीचे बांस···एक बार चारों ओर देखा···सांस रोक···संतुलन ठीक कर···कितने सधे हुए हाथ-पैर हैं···कितनी हवेलियों की खपरैलों को लांघ चुकी हैं?···गुड···पक्की ट्रेनिंग है·· हां, वह रामरूप को सोया मुर्दा समझ रही है··· ऐसा तगड़ा शिकार हाथ से निकल जाएगा?

रामरूप की छाती धड़कने लगी। अब मिनट नहीं, कुछ सेकेंड का मामला है। ···बस, अब बांस की आख़िरी दो गिरह···वह ज़मीन पर आ गयी···धत्तेरे नामर्द की···एक तूफान उठा···

'कहां भाग कर जायेगी, रे चोरिन!' फुर्ती से झपटकर रामरूप ने पीछे से उसके बालों को मुट्ठी में जकड़ लिया। फिर पूछा, 'बता, तू कौन है?'

पत्थर-सी जड़ और मौन हो औरत ने आंखें बन्द कर लीं। रामरूप ने देखा, अद्भुत खूबसूरत है और थर-थर, थर-थर कांप रही है। पीठ पर कूबड़ नहीं गठरी है। शायद गहने-कपड़े हैं। क्षण-भर बाद अत्यन्त धीरतापूर्वक शब्दों में अपने कल-कंठ की सारी मिठास घोलकर शान्तभाव से वह बोली—

'आप की ही एक करमजली बेटी···'

और रामरूप के पैरों पर माथा पटक दिया।

४

और कोई दूसरा अवसर होता तो रामरूप को मां के उस आदेश पर प्रसन्नता होती परन्तु वर्तमान में वह जिन जटिल समस्यात्मक तनावों को जीने के लिए विवश हो गया है वे कहां मन को अवकाश देते हैं कि वह किसी पर्व या मेले के रोमांच का अनुभव करे? 'तेरह कातिक तीन असाढ़' का उत्तेजक नारा देकर कातिक की बोआई वाली जिस लड़ाई को अति गम्भीर भाव से लड़ते हैं वह जीती जा चुकी है। अब विश्राम का समय है और तिस पर भी कल अवकाश है परन्तु

रामरूप ऋषि विश्वामित्र के पौराणिक सिद्धाश्रम वाले तीर्थ-स्थल बक्सर जाने में बहुत अनुत्साह का अनुभव कर रहा है। मां गयी है वहां पांचों पचकोस करने। कल अंतिम दिन है। समापन में कल 'चरित्तर बन' में लिट्टी लगेगी। कह गयी है कि बचवा ऊपरी बेरा मेला में जहां इस गांव की लिट्टी लगती है, आयेगा। लिट्टी लगाकर वह उसे खोजेगी। अब चले रामरूप कोसों तक काले-काले मिट्टी के ढेलों वाले मैदान की बिनमंजी ऊबड़-खाबड़ कुराह में घसिटते पचकोस की लिट्टी खाने ? क्या सार्थकता है अब ऐसे पर्वों की ? धर्म नहीं, आदमी को आज अर्थ चाहिए। पैसा है तो पैंसठ का खूसट बूढ़ा पचीस की पानफूल-सी छोकरी उड़ा घर में कैद कर नया पचकोस लगा सकता है। याद आते ही अब भी रामरूप के भीतर धक्-धक् करने लगता है।

···आपकी करमजली बेटी फिर बेटी का वह इतिहास, वही तो थी उस दिन कीचड़ में···चार हज़ार में खरीदकर 'राज करने' के लिए पूरब से बहका लाया सुग्रीव ने। साला गरकट्ट। उसकी बच्ची को अपने घर रखा। हे प्रभु जी, पता नहीं उसे क्या करता ? इधर यह हवेली में दाखिल। कभी दिन में बच्ची आती तो घर की चांडालिनें भरमुंह बात भी नहीं करने देतीं। पता नहीं किस जाति की रही। किंतु आजकल जाति-कुजाति कौन खतियाता है ? किसके लिलार पर लिखा है कौन जाति ? खप जाती तो इस अगहन में भांवरें पड़ जातीं। कोई क्या कहता है, करइल जी को चिंता नहीं। मगर क्या खपी ? करइल जी की बूढ़ी फूआ उसे कोई चीज़ छूने नहीं देतीं। उसके बर्तन अलग, चौके के बाहर से ही दुलहिन मलिकाइन ज्वार की तीन लिट्टियां थाली में रख ऊपर से थोड़ा सीरा टपका देती हैं।···रंडी-पतुरिया के लिए यहां मोहन-भोग नहीं रखा है। रात-दिन किचकिच, सराप, ताने···राज करना खिलवाड़ नहीं। सहती चल, यह भी सह, वह भी सह। आरम्भ में भालू जैसे कटकटाकर सारे बदन को नोचने-खसोटने वाले और फिर तत्क्षण कांपकर कटे ठूंठ की तरह ढह जाने वाले एक भद्दे और पसीने की बदबू में डूबे बेहूदे काले मुर्दे की चट्टान को निष्काम रात-भर सूअर की तरह नाक घर्र-घर्र करते सह।···नहीं, कोइली नहीं सहेगी। सुख-सुविधाओं के लिए उसे उठाना-बिठाना नहीं पड़ेगा। उसका सुख बनेगी केवल एक बांस की सीढ़ी अथवा कोई गांठदार बांस,···जो मिलेगा ही। मौका···अब न चूक। रात-भर जकड़ रखने वाले उस मोटे, ठंडे और निर्विष अजगर से मुक्ति की वह एक रात···मुक्ति की अन्तिम रात···मगर यह जगा हुआ आदमी ? गिर पड़ पैरों पर और तब रामरूप क्या करता ?···बड़ा भारी जोखिम ! मगर, तू भाग जा। रात अधिक नहीं है। तुम्हारी बेटी कहे मुताबिक डीहबाबा के पास बाग में हाजिर होगी ? रास्ता ज्ञात है ? एक-दो दिन तू सुग्रीव के घर रह चुकी है ? जा, यह खोरि तो सीधे जायेगी। रामरूप को सोने दो। यानी वह तो बेचारा दिन-भर का थका बेहोश सोता है, क्या जाने क्या हुआ?

···मगर, अफसोस, एक छोटी-सी भूल, बांस को वहीं क्यों छोड़ दिया। दूसरे दिन उनके जेल से छूटकर वापस आने पर रामरूप की पेशी हुई तो कैसे कुरोख होकर तथा गरजकर बोला था करइलवा···तुम्हारे कपार पर खपरैल से बांस भिड़ता है, इतना बड़ा काण्ड हो जाता है, मेरा पचीस हजार का आसामी, घर की पचास हजार सम्पत्ति, गहना-नकदी हथिया भाग जाता है और तू नालायक सोया है, नहीं, तू जगा है। तू उसे जान-बूझकर भगाता है। मेरी महुवारी की ज़मीन का हकदार बनेगा? सच कहा है, पढ़े फारसी बेचे तेल।···भाग जा अब बेटा, फिर कभी सामने मत आना।

पिछले दिनों किस प्रकार कचोटती रही यह घटना। मूल्यहीनता की अन्धी दौड़ ने रामरूप को किस निर्ममता के साथ झकझोर दिया है। वह दबा-दबा इस बंजर समाज से कैसी आशायें रखता है? कुछ भी अर्थ नहीं रह गया जैसे उसकी शिक्षा-दीक्षा का। बल्कि सारे दंश इसी शिक्षा के चलते भीतर सालते हैं। धीरे-धीरे वह कैसा जड़ होता जा रहा है। जीवन का उल्लास उड़ता जा रहा है। दैनिक जीवन तो ऊब-उदासी के घाट पर रोज दफन हो ही रहा है, अब पर्वों-त्योहारों पर भी जकड़न नहीं टूट रही है। वह भागने लगता है कि इससे क्या लाभ? उससे क्या मिलेगा? मेले की दौड़ निरर्थक।

वह सोचता है, क्या युगीन आपाधापी और बुद्धिवाद ने सचमुच हमें वहां पहुंचा दिया है, जहां सोचना पड़ता है कि पर्व, त्योहार और मेलों की कोई सार्थकता भी है? किन्तु क्या सार्थकता बोध के रास्ते पर्वों की वास्तविकता की पकड़ सम्भव है? वास्तव में प्रापंचिक सार्थकता के विसर्जनपूर्वक मुक्तानंद की यह सांस्कृतिक प्रक्रिया वैज्ञानिक और राजनीतिक सभ्यता के क्रमिक धक्के से टूट रही है। ऐसी स्थिति में बौद्धिकता, सभ्यता और आधुनिकता के ज्ञात-अज्ञात प्रभावों में हमारे त्योहार क्यों न विकृति की रूढ़ संज्ञा बनकर शेष रह जाएं? भीतर से छलकते हुलास और जीवन सौंदर्य की हुमक, जो त्योहारों पर अपेक्षित है, अब कहां है? यह चतुर्मुखी उपरति और विमनता शायद उस विशाल प्रक्रिया का प्रभाव है जिसे नगरीकरण कहते हैं। गांवों और नगरों का अन्तराल अभी किसी सुदूर भविष्य में पटने वाला है किंतु वर्तमान में नगर प्रभावित मूल्यानु-संक्रमण की चपेट में सिकुड़ते गांव अपने सांस्कृतिक मेरुदंड तथा जीवन की आनंदधारा के सनातन स्रोत मेलों-पर्वों की बलि देकर नवविकास की गहरी कीमत चुका रहे हैं।···किंतु पचकोस के मेले में जाना रामरूप की विवशता थी। बक्सर के इस पार एक गांव में उसकी बैलगाड़ी एक लोहार के यहां बन रही थी। उसे भी देखना था। इसी कारण एक दिन पहले ही विद्यालय से लौटकर उसने प्रस्थान कर दिया। करइल क्षेत्र में चढ़ते हेमन्त की उतरती सांझ बहुत सुंदर-सलोनी होती है। उसे देख उसके भीतर की उदासी छंट गयी। बोए गये खेतों को देखकर

उसे विचित्र अनुभूति होती थी। खेत-खेत से बात करते वह काफी दूर निकल आया। अब सूरज पीठ पीछे पश्चिम ओर ससुर जी के गठिया गांव के बगीचे के कुछ ही ऊपर झुक आया था। सामने रास्ता सीधा तथा चौड़ा था। दक्षिण ओर एक-दो खेतों के बाद अगहनी-ज्वार वाले खेत थे। खेत मेहपुर के थे। बालों के सफेद-सफेद फूल खिले थे। एक खेत से खच्च-खच्च की ध्वनि आ रही थी। कोई किसान बाल समेत ढाठा काट रहा था। चारे का अभाव है, क्या करे? कच्ची बाल की 'चिउरी' बन जायेगी। उस एकान्तिक सन्नाटे में एकमात्र वही आवाज़ थी जो कानों से टकरा रही थी। लेकिन यह ध्वनि उस ध्वनि के आगे नगण्य हो गयी जो बीजगर्भित खेतों के झांवर सपाट सन्नाटे से फूट रही थी। कानों की नहीं, यह शून्य की, एकान्त की, मौन की सूक्ष्म और अविरल ध्वनि चेतना को गुदगुदा रही थी।

कहते हैं, झींगुर हैं जो इस प्रकार बोलते हैं। कितना हास्यास्पद है? बरसाती झींगुरों और इस खेतों के सन्नाटे वाले शून्य सीत्कार में बहुत अंतर है? यह अनहद नाद मनाकाश में सब समय नहीं उठता है। और इस समय जब उठ गया तो मन करता है, इस दूब चांचर छवर पर बैठकर उसमें डूब जाएं और निर्विकल्प देखें, इतने हरे-भरे खेत, ये गांव, गांवों से उठता धुआं, चमकते घर, शिवालय के कंगूरे, बाग, ईख के खेत, नलकूप की कोठरी, सब कितना आकर्षक।

रामरूप बैठने जा रहा था कि पीछे से आवाज़ आयी, 'हैं···हैं···हैं, ज़रा रुकिये, बिछा दूं' और उसके पीछे पलटकर देखते-न-देखते में उस एक अज्ञात अधेड़ किसान ने अपना गमछा बिछा दिया। अब बैठिये। उसने कहा भी। खेत से चारा काटना छोड़ वह आ गया था। अब रामरूप क्या करता? बिना लोहा-लड़ाई के किसान ने उसे जीत लिया था। कितनी प्रेमभरी बातें करता है। सारा प्रेम अकारण है, स्वार्थहीन है। कृतज्ञता से रामरूप दबता जाता है। किसान कहता जाता है, '···मैं देख रहा था। आप कहीं के कोई हैं। हमारे गांव से होकर जा रहे हैं। फिर बैठने की इच्छा कर रहे हैं। धूल-भरे रास्ते पर बैठकर आप भी क्या कहते कि इस गांव में कोई आदमी नहीं है।'

अब बैठकर प्रकृति के आनन्द की अनुभूति को आत्मसात् करने से अधिक मूल्यवान् एक और वस्तु उत्पन्न हो गयी थी और बैठने में कोई आकर्षण नहीं रह गया था। अतः क्षण-भर बैठकर उस किसान से समाचार आदि पूछकर पचकोस के लिट्टी-भंटा की चर्चा कर रामरूप आगे बढ़ा तो उसके मस्तिष्क में अति छोटे गांव के इस अपढ़ किसान ने एक तूफान पैदा कर दिया था। बारम्बार लहर उठ रही थी कि जीवन-मूल्य और मानवता अभी शेष है। इनके सर्वथा ध्वस्त हो जाने का प्रचार मिथ्या है। यह सुविधावादी मध्यमवर्गीय बुद्धिजीवियों का एक समुदाय है जो हल्ला करता है कि समाज-जीवन और साहित्य से जीवन-मूल्यों का मूलोच्छेद

हो गया। क्या ही उत्तम होता कि मूल्यहीनता की गाथा गाने की जगह लोग दबे-छिपे तथा अवशिष्ट मूल्यों का भी अन्वेषण करते और निरन्तर पतनशील स्थितियों से समझौता कर अंधे स्वार्थ की दौड़ में सम्मिलित होते जाते समाज को रोकते।···मगर, अब कितना कठिन हो गया है यह काम। समाज नहीं, हम जैसे जंगल में जी रहे हैं। आदमी नहीं, जैसे यहां अर्थ के चारे के लिए भाग-दौड़ करते जानवर-ही-जानवर हैं। कमली के विवाह के लिए रामरूप को कितना घुटना-घिसना पड़ रहा है।···बड़ारपुर के बाबू रघुनाथ सिंह को बीस हजार रुपया नकद चाहिए, तिलक चढ़ने के पन्द्रह दिन पूर्व। इसके पश्चात् दस हजार का सामान। फिर वे स्वयं कोई और व्यय नहीं करेंगे। सब भार रामरूप के सिर पर। कौन-सा पाप किया है उसने कि ऐसा विकट दंड कि एकदम उजड़ जाओ, बाल-बच्चे भूखों मरें, खेत बिक जायं।···अरे, कहां टिकता है कोई ऊंचा जीवन-मूल्य कहीं? रामरूप, बहुत धुंध है। साहस से आगे बढ़ते चलो। कुछ सोचो मत। बहुत सोचने पर तो बस एक ही मार्ग खुलता है, ज़हर की एक पुड़िया मुंह में डाल सो जायं। यह सारा उपद्रव तुम्हारे पढ़े-लिखे होने का है। तुम एक सीधे-सादे अपढ़ किसान होते तो शायद ऐसी कुछ मनोमय विक्षोभ-विस्फोट व्यथा नहीं व्यापती। तब तुम भी मस्ती में उस किसान जैसे चारा काटते, किसी अपरिचित राहगीर की सेवा में अकारण भी जुट जाते, बैल खिलाते और पचकोस की लिट्टी पर खुशी-खुशी मंडराते निर्द्वन्द्व जीते चलते।

दूसरे दिन रामरूप पचकोस के मेले में गंगा पारकर पहुंचा तो मन हलका हो गया था। उसने दूर से देखा, वह देशकाल का एक छोटा-सा टुकड़ा घनघोर धुएं से भरा है। दम घुट रहा है और लोग खुश हैं। नवलखा मंदिर की चर्चा कर रहे हैं। भारतीय संस्कृति लिट्टी पर उतर रही है। निस्संदेह ये झुंड-के-झुंड लोग पागल नहीं हैं किंतु इतना अवश्य है कि अपनी बुद्धि और ज्ञान को छोड़कर आये हैं। यहां ये किसी अचिन्त्य पवित्र भाव में डूबे हैं। इस भाव की पकड़ भाषा की शक्ति के परे है। यह भाव सम्पूर्ण परिवेश में सघन रूप से व्याप्त और स्पन्दित है। लाखों के इस एक भाव ने यहां के इस एक दिवसीय चहल-पहल को जीवन की स्वतन्त्र इकाई बना दिया है। मेला-क्षेत्र में प्रवेश करते ही रामरूप अनजाने उसमें डूब गया। अब वह घूम रहा है, क्यों घुमा रहा है, कौन घुमा रहा है?

निर्दिष्ट स्थान पर मां अथवा अपने गांव का कोई भी दल लिट्टी लगाता नहीं मिला तो रामरूप चक्कर लगाने लगा। वह देखता है, चवा-चवा ज़मीन पर गोल-के-गोल लोग, आग सुलग रही है, अहरा जोड़ दिया गया है, आटा गूंध-मांड-कर तैयार हो रहा है। क्या कहें इसे? यह न नगर है, न गांव। नाम है 'चरित्तर बन' और वन का कहीं पता नहीं। इतिहास है कि महर्षि विश्वामित्र के सिद्धाश्रम से रामचंद्र जी ने ताड़का आदि का संहार किया अर्थात् 'चरित्तर'

प्रदर्शित किया। पर वह सब समय के धुएं में फिर इस लिट्टी के धुएं में खो गया है। आज जो है सब धुआं है, केवल धुआं-धुआं है, कशमकश। उसके तरल छल्लों में उलझी आग है, औरतें हैं, भीड़ है, आलू-बैंगन हैं, धूल-धक्का है, सायकिल की टुनमुन-लालमुनी चिरैया, पैसे में एक।

ऊपर हेमन्त की रेशमी धूप, नीचे बक्सर (बिहार) के गंगा तटवर्ती किले की कठोर कंकरीली ज़मीन, बगल में नहर, नहर पार 'बन' और इन सब पर उतर आया खूबसूरत मूर्खताओं का एक भरा-पूरा संसार, यानी मेला, बीती सदियों के अतीत जीवियों का मेला, मेलों में मेला पचकोस, पांच कोस की पांच दिवसीय परिक्रमा और परिक्रमा क्या मात्र पांच गांवों के इर्द-गिर्द ? नहीं, गांवों के बहाने ठेठ भोजपुरी संस्कृति की परिक्रमा, किस गांव में दही-चिउड़ा, किस गांव में सत्तू का 'घोरघार', किस गांव में खिचड़ी और कहां उपसंहार की यह लिट्टी। एक सनातन स्वतः स्फूर्त कैलेंडर है। क्या कभी राई-रत्ती भर भी फर्क पड़ा ? गोहरे-उपले के साथ, सत्तू-आटा और तेल-मसाला गठियाये, चलता-फिरता चौका लिये बरिस दिन पर मेले की फसल उमड़ आयी। उमड़ आयीं मुमुक्षु मोटरियां, लुगरियां गती-भगती वाली, गंगा मइया के गीतों वाली, मनौती वाली, एक कहावत के मर्म में डूबी, कौन सी कहावत ?

माई बिसरी, बाबू बिसरी,
पचकोसवा के भंटा-लिट्टी ना बिसरो।

अरे वाह ? कैसा वह स्वाद ? बोलती है एक मतवा—अरे बचवा, यह भी क्या बताना पड़ेगा। अभी थोड़ी देर में सारा स्वाद आंखों के रास्ते झरने लगेगा। लेकिन रामरूप को भ्रम नहीं है। यह 'प्रसाद' की घनीभूत पीड़ा वाला दुर्दिनहा छायावादी आंसू नहीं, पचकोस की लिट्टी का यथार्थवादी आंसू है, सुदिन का स्वाद। लेकिन ये कैसे लोग हैं कि यहां झगड़ा का सारा मज़ा किरकिरा कर रहे हैं।

रामरूप, वह देखो झगड़े में कमजोर पड़कर दब गया आदमी घिघिया रहा है—'अच्छा, जा भइया। नियाव गंगाजी करेंगी। हमने झार-बहार पानी छिड़क जगह को चमन बनाया और आप लोग जगह छेंक धकियाकर बैठ गये। ऊपर से ताव दिखा रहे हैं···अच्छा, जा। बहुत जगह है। कहीं भी हम लिट्टी लगा लेंगे। आप लोग ही बड़े बने रहें।' ज़ोर-ज़बरदस्ती और पशुबल यहां भी बीस पड़ा। दीनदयाल सर्वत्र है। क्या रामरूप की भी यही स्थिति नहीं है ? चैत में यदि बिना डांड फरियाये काट कर ले भगा और बहकता रहा तो क्या इसी प्रकार रामरूप सन्तोष कर लेगा ? उस दिन अपने हद भर में वह हराई फेरने गया तो पता नहीं कैसे दीनदयाल ने देख लिया और दौड़ते हुए आकर पल्ला छटकाकर बैलों को खदेड़ दिया और लाठी टेक तनकर खड़ा हो गया, क्या इरादा है ?···इरादा ? अब वह क्या कहे ? काश कि वह अध्यापक न होकर एक शुद्ध किसान होता और उसके

हाथ में लाठी होती। फिर तड़ातड़ लाठी बज जाती। जो होता देखा जाता। दबने पर सारा संसार और दबाता जाता है।···हां, रामरूप दब गया। आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए बोल गया—शरीफ आदमी हूं चाचा, झगड़ा-फसाद नहीं करूंगा। अब अदालत में इसका न्याय होगा।···अदालत? कैसी अदालत? शायद वैसी ही जैसे इस मेला पचकोस में पराजित पक्ष की ओर वाली गंगा जी की अदालत। चैत की आशा में भीतर आग दबा वह बैठ गया किंतु उस उलझे मामले का धुआं भीतर बराबर भरा रहता है। दम घुटता रहता है। इस पचकोस के धुएं से भी वह तगड़ा धुआं है। नाहक याद आया। अब मेले में डूबकर उसे कुछ हलका करो रामरूप। धुएं से धुआं काटो और आंजी आंखों को फाड़-फाड़कर पढ़ते चलो, लोगों के बुझे अहरों पर पसरी हुई ढेर-ढेर तैयार लिट्टियों में से किस पर तुम्हारा नाम लिखा है? कहां तुम्हारी माता जी लिट्टी लगा तुम्हें खोज रही हैं? कहां भाव-भक्ति में डूबे उनके गोल के और लोग हैं? फिर तुम तो शायद आधुनिक आदमी।···अजीब विरोधाभास है।

रामरूप सोचता है, सच है कि पर्व और त्योहार भारत की पहचान हैं और हमारे जैसा आधुनिक आदमी पर्वों से जुड़ते समय ही भारतीय लगता है। भारतीय प्रकृति, विशेषकर उसके ऋतु-परिवर्तन की नैसर्गिक जीवन-छवियों पर सभ्यता, आधुनिकता और बुद्धिवाद का कोई प्रभाव नहीं है तथा उसके स्वतः स्फूर्त अंतरानुशासन पर जीवन में समय-समय पर पर्व छलक आते हैं तो आधुनिकता का दबाव ढीला पड़ जाता है। विवशता है कि हम भारतीय कपड़े से नहीं, रक्त से हैं। रक्त, जिसमें ऋतुओं की लाली है। वह लाली जीवन में छलकेगी ही। उपयोगितावादी आधुनिकता बरजेगी, तब भी शायद छलकेगी। ग्रामीण किसानों का कामकाजी मन इस मेले में कैसे मुक्त भाव से रम रहा है? वह हसरत-भरी निगाहों से दल को देखता है जो खा-पीकर हाथ झार चला जा रहा है। नयी ललक से उन लोगों को निहारता है जो अभी चले आ रहे हैं। बुझे अहरों पर नयी आग उपटती है। जगहें खाली होती हैं, भर जाती हैं। पता नहीं ये कहां-कहां के लोग हैं? किस सांस्कृतिक अजायबघर के बंद डिब्बों से छूट-छूटकर बिखरे हैं?

रामरूप को यह अजीब-सा लगता है कि मेले में जो पुरुष वर्ग आया है उसमें टाई-सूट वाले और महिलावर्ग में घड़ी और उल्टे पल्लेवालियां विरल हैं, नहीं के बराबर हैं। यह सारा बटोर धोती-कुर्त्ते का, साड़ी-झुल्ले का यानी पुरानी पीढ़ी का है। कहां है हमारी नयी पीढ़ी? रामरूप इस भीड़भाड़ में बेसब्री से उसे खोजता है। उसे लगता है, वह यहां नहीं आयी। फिर सोचता है, क्यों आये? इस मेले में चाय-चाट की दुकानें तो हैं नहीं। फिर आज ऐसी दुकानों पर कौन जायेगा? लिट्टी के 'महातिम' को कौन चुनौती देगा?···अरे हटाओ यह मूर्खतापूर्ण लफड़ा, कालेज में पढ़ने वाले लड़के और लड़कियां अर्थात् नयी पीढ़ी इसमें क्यों फंसे? उनके पास

बुद्धि है, ज्ञान है, विद्या है, डिग्री है, फिल्म है, राजनीति है, हुल्लड़ है, बेकारी है, आन्दोलन है और ऐसा बहुत कुछ है जो मेले से तगड़ा है। पिकनिक की बात हो तब भी ऐसा भोंडा मौका क्यों चुना जाय ? मुक्ति गंवारों को चाहिए, आधुनिक नागरिक-से बनते जाते हमारे गंवई युवा छात्रों को नहीं। फिर, इस गंदगी में, भेड़िया-धसान में, भद्दे-भदेस में छुट्टा जानवरों की तरह लिट्टी चरने से मुक्ति मिलेगी ?···वह देखो रामरूप हिप्पी-कट बाल और काले चश्मे वाले लौंडों का एक दल, लिट्टी नहीं लड़कियों के पीछे किसी ख्वाहमख्वाह में सीटी बजाते···अरे, इसमें तो उसके प्रिंसिपल साहब का लड़का दिलीप भी है। चोर का लड़का बदमाश। लगाओ लाल स्याही, काटो गला···

वह घटना बहुत बेवक्त मन पर उभर गयी। रामरूप कांप गया। याद आया, उस दिन शनिवार था और ससुर जी की जमानत के लिए अकस्मात् बिना अवकाश लिए चला जाना पड़ा था। तीसरे दिन सोमवार को विद्यालय पर उपस्थित हुआ तो उसके नाम के आगे शनि-रवि वाले खाने में लाल स्याही से अनुपस्थित लिख कर प्रिंसिपल ने हस्ताक्षर कर दिया था। अभी वह यह देख ही रहा था कि चपरासी उसे प्रिंसिपल साहब के कमरे में बुला ले गया। वहां उसे हस्ताक्षर कर नोटिस रिसीव करनी पड़ी।···बिना सूचना आप दो दिन अनुपस्थित रहे। इससे सिद्ध है कि विद्यालय की सेवा में आपकी कोई दिलचस्पी नहीं है। क्यों न आपको बरखास्त कर दिया जाय ?···क्यों प्रिंसिपल साहब, क्या हमारा यह जुर्म इतना संगीन है ?···'देखो भाई', राममनोहर सिंह नाक सुड़ककर बोले, 'मैं कुछ नहीं जानता। मैं तो मैनेजर का आज्ञाकारी सेवक हूं। आप उन्हीं से मिलिए।' मैनेजर साहब का बैठकखाना, बाहर बसखट डाल वे अखबार पढ़ रहे हैं। देखते ही कहते हैं, मास्टर साहब, कल इसी समय आइएगा। आज हमें फुरसत नहीं है। दूसरे दिन···एक चपरासी तेल मालिश कर रहा है। मास्टर साहब, अभी तो स्नान-पूजा सब बाकी है। कल आइये। तीसरे दिन···खड़ाऊं पहने, नंगे बदन धूप में एक क्लर्क को कुछ लिखा रहे हैं।···काम तो आपका आज भी नहीं हो सकेगा। कल आइये। चौथे दिन···बाहर नहीं दिखायी पड़े तो रामरूप बैठक के भीतर कोठरी में बने आफिस में पहुंचा।···आ जाओ। उसने देखा, कुर्ता-जाकेट, गांधी टोपी और धोती-जूता में सजा कुर्सी पर एक अदद मैनेजर शायद उसकी प्रतीक्षा में है।···सुना है तुम नेतागीरी और मुकदमेबाजी के चक्कर में पड़े रहते हो और विद्यालय के काम में तुम्हारी कोई दिलचस्पी नहीं रह गयी है ?···या तो रिश्तेदारों को संभालो या क्लास को, दोनों एक साथ कैसे होगा ? लगता है तुमने विद्यालय को धर्मशाला बना लिया है ? मनमाना-घरजाना वाली मटरगश्ती यहां पर नहीं चलेगी। अनुशासन के मामले में मैं बहुत सख़्त आदमी हूं।···जाओ, आइन्दा फिर ऐसी बदमिज़ाजी न हो। फिर वे बिना रामरूप के किसी उत्तर की

अपेक्षा किये और सफाई का मौका दिये उठकर चले गये। रामरूप ठक्, अवाक्। ब्रह्माण्ड में जैसे कुछ सनन्-सनन्-सन् कर रहा है। धरती घूम रही है···और तब से जब-जब याद आता है लगता है, धरती घूम रही है। एक खूंखार भेड़िया पीछा कर रहा है। उससे मुक्ति नहीं। मुक्ति ?···

अपनी-अपनी मुक्ति।

रामरूप भी इतने लोगों की राह लग अपनी अमूर्त्त मुक्ति को क्या मूर्त्त लिट्टी में खोजने यहां आया ? पता नहीं कहां है उसकी लिट्टी ? वह भटक रहा है मगर ऊब नहीं रहा है। बहुत कठिन लग रहा है इस भटकन से भी मुक्ति मिलना। उसे धुएं के बादल और बादलों में रंग-बिरंगे कपड़ों के इन्द्रधनुष भटका रहे हैं। ऐसा लगता है, मां को खोजने की जगह वह केवल भटक रहा है। देख रहा है, इतने लोग हैं, ऐसे-ऐसे लोग हैं। वह स्वयं को भूल-सा गया है। क्या यही मुक्ति है ? घूमो हे मन तब !

धूप अच्छी लग रही है। अच्छा लग रहा है लिट्टियों के मेले का यह हरिकीर्तन···हरे रामा हरे रामा। मण्डली के किनारे एक ईंट सरकाकर वह भी बैठ जाता है। सोचता है, मुक्ति है और अभी यहीं है। करइल जी से मुक्ति, मैनेजर विश्वनाथ से मुक्ति, दीनदयाल से मुक्ति, लुटेरे लड़के वालों से मुक्ति और लगान मांगने वाले अमीन-सिपाहियों से मुक्ति। लाखों लोगों से मन के तादात्म्य वाले इस वातावरण में एक सूक्ष्म स्फूर्तिदायी ऊर्जा भरी है। उसके प्रभाव में जन-जन खिंचा है। राग-द्वेष से ऊपर, प्रपंच से ऊपर, अति सीधा बन, अति सहज हो, कुछ मूर्खता की सीमा छूकर भी। तब क्या बुद्धिमान लोगों के पास लाखों-करोड़ों की ताज़गी के लिए ऐसा कोई सरल जनवादी कार्यक्रम है ?

हां, राजनीति में नहीं, रामरूप, देख असली जनवाद यहां है। पांच कोस का जुलूस, धुएं का झंडा, लिट्टी का नारा क्या पहचान है यहां धनी-गरीब की, ऊंच-नीच की ? पहचान केवल एक है, वह है हमारे देश की साधारण जनता की। अथाह खुशियों में भरा जनता का इतना विशाल समुदाय आकर इस महोत्सव को सालोसाल सफल बनाता है। कितनी गहरी है इस जलसे की जड़ ! मारा कि ढोल-झाल के झमाझम पर उठा कर फेंक दिया मन की सारी गिरावट को···अरे झपट-कर पकड़, रामरूप, देख वह गांव का मंगरुआ कहीं पानी लिये जा रहा है।

मंगरुआ के साथ दल में पहुंचकर रामरूप को आश्चर्य हुआ कि बगल में ही ये लोग लिट्टी लगा रहे हैं और वह यहीं भटक रहा है।

'अरे बचवा आ गया।···मेले में तो इस साल ऐसा धंकसा है कि पुरनकी जगह आते-आते छेंक गयी तो यहां जगह मिली···' मां एक सांस में ही सब सुना गयी। वह पत्तलों को धो रही थी। रामरूप को लगा, वह एकदम ठीक वक्त पर आया है। बलेसर और बलराम लिट्टी आग से बाहर निकालकर एक गमछे में

रख उसे दोनों ओर से झिंझोड़कर राख झाड़ रहे हैं। काकी चोखा मल रही है और गंगा मइया का गीत गुनगुना रही है।—'धनि मइया दिहलू दरसनवा'। वह अत्यन्त वृद्धा हो गयी है। यही हाल धुननी की माई वग़ैरह का है। रामरूप सोचता है, पर्व-त्योहारों के सूत्रधार इन बूढ़ी माताओं के कांपते हाथ कितने दिनों तक उन्हें संभाल पाएंगे ? उम्मीद नहीं कि अगली नयी पीढ़ी इन खूबसूरत मूर्खताओं की कीमत आंक सकेगी। लोग अब बुद्धिमान होने लगे हैं और जब वे बहुत अधिक बुद्धिमान हो जायेंगे तब क्या होगा ? शायद मेला नहीं लगेगा।

'मास्टर साहब को मालूम नहीं है न ?' रामरूप की मां की ओर मुखातिब होकर बलेसर ने किसी पूर्व प्रसंग की ओर संकेत कर पूछा। तब औरतों को छोड़कर सारा पुरुष-वर्ग पत्तल पर बैठ गया था। भोजन शुरू था। ऐसा लगा कि बलेसर के कथन की ओर मां का ध्यान नहीं आया। वह पूर्ववत् शीशी से अचार निकाल कर पांत पर परसती रहीं। क्षण-भर बाद बोलीं—

'कहां मालूम होगा ? बचवा तो कल बेर ढरते घर से निकल गया।···गांव में अब रोज कुछ-न-कुछ अन्हेर होने लगा है।'

रामरूप भीतर से एकदम हड़बड़ाकर हिल गया।

'क्या हुआ काका, ज़रा हम भी सुनें।' उसने पूछा।

'अरे वही गोंयड़ा में अगहनिया (ज्वार) थी न, सो सारी बाल रात में चोर टूंग ले गये।'

'सब ? पूरे खेत की ? एक बिगहा ?'

'हां, लगता है जैसे घर के आदमी ने इतमीनान से पाह धरकर टुंगनी की है।'

'अच्छा चलो, करम नहीं न टूंग ले गया ? जिनिगी में बहुत बाल आयेगी-जायेगी।' मां बोली।

मगर, रामरूप का उद्वेग शान्त नहीं हुआ। लिट्टी कड़वी हो गयी। हाय, उसका वैसा लगा हुआ खेत बे-माथ हो गया होगा।

५

आसमान में सुबह-सुबह बादल घिर आये हैं। लगता है, अब पानी बरसा, तब बरसा। किसान के लिए इस मुंहमांगी मुराद से बढ़कर मूल्यवान कुछ नहीं। कहते हैं, 'अगहन बरसे दूना।' किंतु हनुमानप्रसाद को कोई खुशी नहीं। आसमान की ओर इस प्रकार देख रहे हैं जैसे अगहन नहीं, फागुन के बादल हैं, 'घरहू का गंवाई···' गंवाने का कैसा विकट सिलसिला नधा है ? वह पचास-साठ हजार का माल गया, साख और इज़्ज़त गयी, आगे की रुकावट आयी और यह ससुरी घर के भीतर से बंडेरी फांदकर निकल गयी। चुल्लू-भर पानी में डूब मरने जैसी बात

हो गयी।...लेकिन हनुमानप्रसाद इस तरह सस्ते में डूबेगा नहीं। बन की गीदड़ी जाएगी कहां? धरती पर कौन जनमा है जो उसे पचायेगा? यदि ठिकाने पर पहुंची होगी तो झोंटा पकड़कर घसीट लाया जायगा। यदि बीच में कहीं अटकी होगी तो देख लिया जाएगा, कौन चार हाथ वाला आदमी धरती पर जनमा?... क्या पता था वैसी मीठी औरत में ऐसे माहुर गुन भरे हैं। इससे तो अच्छा था, साली कतल कर देती। इस तरह ऐंठ-ऐंठकर छटपटाना तो नहीं पड़ता। आदमी कौन अमर होकर आया है! चार दिन की जिंदगी है। बारम्बार कहा, सब कुछ तुम्हारा है। हनुमानप्रसाद तुम्हारा गुलाम है। यह धन-दौलत और सारी जमीन की मालकिन तुम हो। इस हवेली मे रहते जो भी तुम्हें अंडस है सब दूर कर दूं। लेकिन सब बेकार। दगा दे गयी हत्यारिन। नखरे में गिरई माछर जैसी बांहों के बीच से छटक-छटक जाने वाली अपनी कोइली क्यों पराई हो गयी?...तो यह भी कोई बड़ा नखरा है क्या? हो सकता है। मगर उसे अब तो आ जाना चाहिए। फिर बंडेरी कूदना तो कोई नखरा हुआ नहीं। नहीं, बात जरूर गड़बड़ है। लेकिन भगी है कि भगाई गयी है? ऐसा तो नहीं कि सुग्रीव की ही कोई फितरत है? बहिकट आदमी पता नहीं कब क्या करेगा? लेकिन ऐसा होगा तो बात पर कितने दिनों तक परदा पड़ा रहेगा? फिर जल में रहकर मगर से बैर का नतीजा क्या होगा?

पट्ट...पट्ट...पटर्-पटर्-पट्-पट्-पट्...

कुएं पर लगे केले की पत्तियों पर पानी की बूंदें बजने लगीं। धीरे-धीरे झिमझिम-झिमझिम पानी पड़ने लगा। हनुमानप्रसाद ने अपनी मिर्जापुरी उठाई और गमछा ओढ़कर दरवाज़े से उत्तर-पूरब ओर वाली गली पकड़ जल्दी-जल्दी फाल बढ़ाया। वे जल्दी ही सदर रास्ते पर आ गये और दक्खिन ओर चल पड़े। लोग करइल जी के इस स्वभाव से परिचित हैं। बरखा-बूनी में भींगते चलने को भला बदते हैं। डाकखाने पर कुछ लोग जुटे थे और बातें कर रहे थे। उन्हें जाते देख वे 'देखने' लगे। हनुमानप्रसाद ने कुछ ख्याल नहीं किया। पचकौड़ी सेठ की दुकान पर भी वही दृश्य। लम्बे-चौड़े बरामदे में थोक-थोक लोग किस गरम मसले पर इस तरह चर्चा कर रहे हैं? कोटवाले पाकड़ के पेड़ के नीचे भी लोग, शायद रास्ता पकड़कर आते-जाते भींगने लगे तो छाया में आ गये। आखिर मामला क्या है? सभापति रघुबीर के बैठकखाने के सामने पहुंचकर रहा नहीं गया तो खेतों की ओर जाने का विचार परे कर हनुमानप्रसाद मुड़ गये।

सभापति के निवास-स्थान पर मेला झूठ। आंखों में कुतूहल मिश्रित हर्ष भरे लोग चिहा-चिहा एक ही बात को अनेक तरह से कहते हैं।...धन्य हो परभू जी। खेत से अब अन्न की जगह लड़का पैदा होने लगा, एक औरत कहती है। उसकी आंखों में लोर आ गया है।...अरे सभापति, यह सब कैसा हल्ला है? देख रहा हूं तमाम गांव खड़भड़ हो गया है।...अब आप खुद अपने चश्मे से देख लीजिए।

हटो, हटो, छोड़ो रास्ता। आगे-आगे सभापति जी, पीछे हनुमानप्रसाद। जनाने खण्ड में बहुत मुश्किल से परदानशीन कनिया-बहुरिया को भीड़ चीरते, रास्ता बनाते लोग आंगन लांघकर बरामदे में पहुंचते हैं जहां करुण वात्सल्य का भाव-विह्वल भीषण सैलाब लहरा रहा है। कितनी कठिनाई से सभापति जी उन्हें चारपाई के पास तक पहुंचाते हैं।

चारपाई पर बिछौना पड़ा है जिस पर पड़ी एक छोटी लाल तौलिया पर एक बहुत तन्दुरुस्त नवजात शिशु, गोरे लाल गुलाबी और सुगढ़ सुचिक्कन मांस के लोथड़े की तरह पड़ा है। आंखों में काजल, ललाट पर उसी का चटक टीका, टकर-टकर ताकता, हाथ-पैर चलाता, पट्ठा खूब विह्वल है। उसे क्या पता कि कुछ ही देर पहले वह मौजा जलतरासी में राजकिशोर के धान के खेत में पड़ा था और उत्तरटोल के हरद्वार तिवारी उसे उठा सभापति के यहां लाये हैं। तिवारी जी की आदत है सुबह मुंह-अंधेरे लोटा उठाकर सीवान में बहुत दूर तक चले जाते हैं। आज कुछ और पहले उठ गये। राजकिशोर के खेत के कोने पर जनमतुआ लड़के की रुलाई सुनाई पड़ी तो उनके रोयें खड़े हो गए। मगर भूत-प्रेत की तो बेला रही नहीं। हिम्मत कर खेत में घुसे। देखा तौलिये पर वह पड़ा है। उन्हें देखते रुलाई बंद। होंठों पर मुसकान। अब कौन आगे जाता है? लोटे का पानी फेंक तिवारी बालक को छाती से चिपकाये सीधे यहां आ जाते हैं। तब पानी अभी नहीं पड़ रहा था।

ख़बर बिजली की तरह सारे गांव में फैल गयी। आश्चर्य कि हनुमानप्रसाद ने अचानक यहीं आकर जाना और उनकी मलिकाइन कभी की आकर बालक को चूम-चाट गयी हैं। उसके दर्शनार्थियों की भीड़ अभी भी बढ़ती पर है। उसे देख कितना प्यार उमड़ता है? हाय, किसके जिगर का टुकड़ा है और किस कठकरेजी कलंकिनी ने उसे ऐसे 'तियाग' दिया है? प्रिंसिपल राममनोहर सिंह के घर की नव-ब्याहतायें तक घूंघट में सज-धजकर आ गयीं। उत्तर की बभनटोली, दक्खिन की सोनारटोली उभड़ आयी। मठिया पर की बूढ़ी महंथाइन ढहते-गिरते पहुंची। जो जाता है, छाती से चिपका लेता है। नाना प्रकार की बातें होती हैं। अटकल लगाये जाते हैं। वह शिशुत्यागी पार्टी किस गांव की हो सकती है? लोग यह भी अनुमान लगाते कि दस-बारह दिन से अधिक आयु वाला बालक नहीं हो सकता। फिर ऐसे लोगों की भी कमी नहीं जिनमें कुछ अतिरिक्त माया उमड़-उमड़ पड़ती है। हमको दे दीजिए, हमको दे दीजिए, उम्मीदवारों की लम्बी कतार लग गयी। असामान्य स्थिति में पहुंचकर बालक कितना ध्यानाकर्षक हो गया? लोग बरामदे में अंट नहीं रहे हैं। आंगन में भींगते खड़े हैं। संयोग से पानी थमने लगा है। लेकिन बाहर से अधिक लोग भीतर से भींग गये हैं, अजस्र करुणा की बौछार से। निश्चय ही मनुष्य तब तक पूरा-पूरा मनुष्य है जब तक

उसकी चेतना पर करुणा की छाया रहती है। लगभग आधे घंटे तक अवाक् और निर्भाव रूप में उस अज्ञात शिशु की चारपाई के पास हनुमानप्रसाद को खड़े देखकर सभापति जी को आश्चर्य होने लगा।

'अब चलिये। लजारू औरतों को अंडस पड़ रहा है।' सभापति जी कहते हैं।

हनुमानप्रसाद जैसे सोते से जगते हैं और झपटकर शिशु को उठा गोद में भर चल देते हैं—'इस छोटे बादशाह को मैं ले जाऊंगा।'

'अरे भइया, थाना में रिपोर्ट चली गयी है। उसकी कार्रवाई···आते ही होंगे···'

'सब करा लीजिएगा।'

सभी ठक्। मेला खतम।

बिना पीछे मुड़कर कुछ देखे हनुमानप्रसाद लपके हुए सीधे हवेली में छोटे बादशाह के लिए बिस्तर लगाने का हल्ला करते पहुंचे। हड़बड़ी में मिर्जापुरी सभापति जी के घर पर ही छूट गयी। आ जायेगी। सभापति खुद लायेगा। किस प्रकार छटपटा कर रह गया। इतनी बड़ी दौलत सरे आम पचा जाता। उसकी समझ में यह नहीं आया कि गठिया में हनुमानप्रसाद भी रहता है। सभापति हो जाने से लाट साहेब नहीं हो गया। थाना दिखा रहा है। ऐसे-ऐसे थाने और थानेदार हनुमानप्रसाद ने बहुत देखे।···बस, उस बार ज़रा चूक हो गयी। माल के पीछे लगी गोरखपुर की पुलिस बीस पड़ गयी। अपना थाना मदद नहीं कर पाया। खोरा भी कम पागल नहीं। उसे यह कहने की क्या ज़रूरत थी कि 'माल तहखाना-तिजोरी में रखा जाता है न कि बगीचे में ?' कहीं ऐसा तो नहीं कि खोरा की कोई चाल हो ? ऐसे लोगों का क्या ठिकाना ? देखने में बउरहिया और आवे पांचो पीर। यदि ऐसा है तो हनुमानप्रसाद भला उसे बगीचे में बैठ बिरहा गाने देगा ? पहले एक दिन चलकर वह थाह लेगा। कहीं कुछ होगा तो छिपा नहीं रहेगा। आखिर पुलिस गांवों से दूर बगीचे में कैसे आ गयी और कैसे इतना जबरदस्त शक हो गया कि साले टार्च जलाकर एक-एक पेड़ की ऊंची-ऊंची डालों को छानने लगे और सत्यानास हो गया। बोरे-बोरियां कहां तक छिपते ? इस लाइन के माहिर वे दोनों पट्ठे घात लगा अंधेरे में हवा हो गये। सिपाहियों को कुछ थमा दिया क्या ? राम जाने इस माया को ! यह हनुमानप्रसाद कहां भागता ? अभी कच्चा था। अपनी पुलिस होने के कारण देह बच गयी। इस देह से अभी बहुत कुछ करना है। कुछ पाप तो कुछ पुण्य भी। अब यह एक पुण्य कार्य···'हेले हेले बबुआ' हनुमानप्रसाद सिर्फ बुदबुदाकर रह गये और बच्चे को चूमकर घर भर के भारी हर्षोल्लास के बीच बिस्तर पर डाल दिया।

बराबर द्वार पर बैठा रहने वाला बूढ़ा मनीजर बैठकखाने से लाठी टेकता कांपता पहुंचा। कहां एक बबुआ आ गया ? घर की अधेड़ दायी पिअरिया चहक

उठी। बाबू जी बधाई। अब नेग मिले। खुबवा दम लगाकर तुरंत उठा था। चौंक-चौंककर हल्ला करने लगा, मैंने तो सभापति के यहां देखा तभी कहा था कि हमारे मालिक इसे देखकर छोड़ेंगे नहीं। सबसे अधिक प्रसन्न हैं हनुमानप्रसाद की फूआ, नि:सन्तान विधवा हैं। शादी रामनगर हुई थी मगर हादसे के बाद यहीं रह गयीं। हनुमानप्रसाद के बहुत डांटने पर भी चारपाई से उठा-उठा छाती से चिपका लेती हैं। 'अरे हमार लाल! तू कहां रहल ह। अरे हमार पावल प्रसाद तू कहां भुलाइल रहल ह।' किसना फूआ को डांटता है, इसी तरह अण्डबण्ड नाम रहेगा? 'पावल प्रसाद' का क्या माने? बाबू हनुमानप्रसाद का बेटा भीमबहादुर। ऐसा नाम रहेगा। किसुना नौकर तो है मगर मालिक की तरह रहता है। हनुमानप्रसाद उसकी ओर देखते हैं, जिसका अर्थ है, बहुत बकबक नहीं करना चाहिए। उसी समय हंसी-खुशी में डूबी मलिकाइन एक कटोरे में दही-गुड़ लिये आयीं और एक पहथ भरपूर निकालकर मालिक के मुंह में ठूंसकर चटा दिया। कुछ भीतर जाता है, कुछ बाहर लिपट जाता है। बहुत हंसी होती है। मलिकाइन इसके बाद पिअरिया को हुक्म देती हैं, जा फूल की थाली लेकर जोर-जोर से बजा और नउनिया को बुला, सोहर गाने के लिए गोतिनों को नेवता दिलवा दे। देखते-देखते सभापति के घर का मेला हनुमानप्रसाद की हवेली में उतर आया और तभी समाचार मिला, दारोगा जी दरवाज़े पर आ गये हैं।

औपचारिकतायें पूरी कर दारोगाजी जल्दी ही चले गये। अचानक हनुमान-प्रसाद को ध्यान आया, सुग्रीव कहां है?—अरे भीमवा, कहीं सुग्रीवजी का चेहरा दिखाई पड़ा है?—मालिक, कई दिन से गायब है। लगता है पहिले वाला मर्ज़ उपट गया है। 'पहिले वाला मर्ज़?' बहुत मुंह-फट शरारती है यह भीम, बैल-चोर शराबी, करइल जी की चांडाल चौकड़ी की एक महत्त्वपूर्ण मज़बूत कड़ी, उनका एक अमोघ-अचूक सत्यानासी बाण, जिस पर भृकुटि टेढ़ी हुई, इसे तानकर छोड़ दिया।

मर्ज़ के बारे में हनुमानप्रसाद अनभिज्ञ नहीं हैं। वह साल में जब तक दो-चार बूढ़ों को विवाह का लालच दे मूंड नहीं लेगा, चैन की सांस नहीं लेगा। कभी-कभी वे सोचते हैं, कहीं सुग्रीव का उलटा उस्तरा उनकी खोपड़ी पर भी तो नहीं घूम रहा है? फिर सोचते हैं, नहीं, वह ऐसी हिम्मत नहीं कर सकता। एक घर डाइन भी तो बख़्श देती है। क्या है सुग्रीव में? वह हमुमानप्रसाद के सामने एक नाचीज़ चींटे-जैसा है। जब चाहे मसलकर फेंक दिया।···लेकिन कोइली के भगने के बाद वह कुछ उखड़ा-उखड़ा क्यों रहता है? क्या इस कार्य में मध्यस्थ होने के कारण अपनी असफलता से शर्मिन्दा हो मुंह चुराये रहता है?—लेकिन उसकी लड़की को अपने घर क्यों रखे था? जिस दिन भगी उस दिन यहां पर क्यों नहीं था? ऐसों का क्या ठिकाना? कहीं ऐसा तो नहीं कि इसी माल पर किसी और को

चूना लगा रहा हो और काफी कुछ ऐंठकर इसी रास्ते फिर उसे मेरी हवेली में दाखिल कर अहसान जताये कि मालिक आपका हुक्म सिर-आंखों पर धर आसमान-जमीन छान माल को निकाल लाया ? तब हनुमानप्रसाद कितना मूर्ख बन जायेगा ?···मगर ऐसा सम्भव नहीं। यह सब मन का भ्रम है। सुग्रीव बार-बार का आज़माया आदमी है।···देख भीमवा, बराबर ठिठोली नहीं की जाती। सुग्रीव को खोजकर खबर करो, भोज-भात का प्रबन्ध करना है। हनुमानप्रसाद की इस घोषणा से लोग चिहा उठते हैं। कौड़ी-कौड़ी के दांत गिनने वाला इतना उदार कैसे हो गया ?

मन नहीं माना तो मालिक तीसरी बार हवेली में पहुंचे और कहने लगे, 'बादलों के छंट जाने से जो घाम उगा है वह बहुत तीखा है। छोटे बादशाह को धूप में न सुलाया जाए।' फिर उन्होंने देखा, पलंग छाया में ही है। वे उसके पास पहुंचे। निद्रा-मग्न बालक के ऊपर झुककर एकटक देखने लगे।···ओह, यह मेरा बेटा !···किसका है ?···नहीं, किसी का नहीं, सिर्फ मेरा···कितना प्यारा, ओह कितना प्यारा। उन्होंने सोते हुए बालक को चूम लिया। तब इकट्ठी औरतें कानाफूसी कर रही थीं—बड़ी माया जगी है। हनुमानप्रसाद उमगते मन के साथ जैसे उछलते हुए बैठकखाने की ओर चले। उन्होंने उधर से ही देखा, चटाई-टोला के नवीन बाबू बैठे हुए हैं, अकेले, किंचित् चिन्तित। लगा, अब कुछ देर तक व्यर्थ बहस करनी होगी। बबुआ विवाह के लिए अभी राज़ी नहीं है तो क्या हो सकता है ? इनके मामा की कोई लड़की है। कहते हैं, बी० ए० पास है। तो, ऐसी लड़की घर लाकर हनुमानप्रसाद क्या करेगा ? फिर यह कि पढ़-लिखकर लड़का सर्विस करेगा और लड़की उसके साथ रहेगी। अतः पढ़ी-लिखी हो तो अच्छा, परन्तु इस बारे में लोग लड़के से ही क्यों नहीं मिलते ? अजब समय आ गया। लड़का अब अपनी पसन्द की शादी करे। करें, सुख भोगें। ढेला फोड़ने के लिए तो पुराने बाप लोग हैं ही। जब तक चलेगा, चलायेंगे। लेकिन अब चिन्ता की बात नहीं। जाएं शहर में, मकान बनाकर रहें। खेती के नये मालिक को भगवान् ने भेज दिया। जीता-जागता रहा तो दस-बारह बरस में झटपट होकर देखभाल में हाथ बंटाने लगेगा। हनुमानप्रसाद उसे स्कूल में भेजेगा ही नहीं और न पढ़ाई का रोग लगेगा। छोटेपन से ही खेती-बारी की पक्की ट्रेनिंग हो जायेगी। तन्दुरुस्त है, खूब डटेगा। लेकिन वह नाम—पावल प्रसाद ठीक नहीं। अरे कोई नाम हो, क्या कागज में चढ़ना है ? अथवा हक-हिस्सा का बखेड़ा है ? कितना अच्छा कि भुवनेश्वर दो भाई होकर भी अकेला मालिक। जिओ बादशाह···छोटे बादशाह।

'पालागीं बाबू जी।' नवीन बाबू खड़े हो गये।

'चिरंजी—चिरंजी—कहो भैया, क्या हाल है ?—अरे बैठो, बैठो।' हनुमान-

प्रसाद ने हाथ पकड़कर चारपाई पर बैठा दिया। फिर कहने लगे, 'अरे कौन है जी, बाबू साहेब के लिए नमकीन-चाय लाओ।'

हनुमानप्रसाद ने देखा, नवीन बाबू की ओर से चाय के लिए मनाही नहीं हो रही है। उस बार आये थे तो चाय रोकवा दिया। बोले, इसमें दूध पड़ता है। दूध मंगल कार्य में सामने पडना निषिद्ध है। और उनका आना विवाह संबंधी मांगलिक संदर्भ में हुआ है। इस बार जान-बूझकर हनुमानप्रसाद ने चाय का नाम लिया, कुछ शरारतवश, मगर उधर से अस्वीकार नहीं उभरा तो उनका माथा ठनका। कोई और मामला है क्या? बबुआ का मुंह उतरा हुआ है। क्या बात है?

जीव-जांगर के समाचार से लेकर खेती-बारी का समाचार, जाड़ा कम पड़ने की चिंता कि तेज़ घाम में डीभी उकसेगी नहीं, देश-दुनिया का हालचाल कि कपड़े, मशीन के पुरज़े और लोहा-सिमेंट वगैरह कितना तेज़ हो गया किंतु उसके मुकाबले अन्न का भाव कितना गिरा हुआ है, चाय पीते-पीते में यह सारा समाचार चर्चा संक्षेप में हो गयी तो एक बीड़ी जलाकर नवीन बाबू की ओर बढ़ाते हुए हनुमानप्रसाद ने पूछा—

'तुम तो भइया बेकाम कहीं आते-जाते नहीं हो। सो कहो, कैसे आना हुआ? कोई परेशानी तो नहीं है न? तुम्हारे लिए आधी रात को भी हनुमानप्रसाद तैयार मिलेगा। जब जिस काम के लिए खोजोगे, जी-जान से, धन-जन से तैयार मिलेगा। कोई आज का नहीं, तुम्हारे घरारे से हम लोगों का पुश्तैनी नाता है...'

अन्तिम बात कहते-कहते हनुमानप्रसाद कुछ ढीले पड़कर चुप हो गये। शायद गलत बात कह दी गयी थी। पुश्तैनी नाता तो प्रेम का नहीं घृणा और बैर का रहा है। करइल के बाबा तेजबहादुर को मिठाई खाने और बैलगाड़ी हांकने का शौक था। चटाईटोला मौजा के इसी नवीन के बाबा जमुनाप्रसाद ने उनकी कम-जोरी से बहुत फायदा उठाया। कुछ ही दिनों में अधिकांश ज़मीन मिठाई खाकर रेहन हो गयी। उसके बाद बैलगाड़ी शौक से जीविका का साधन हो गयी। मिठाई तो जमुनाप्रसाद ने खूब खिलाई पर घर पर भरपेट अन्न दुर्लभ था। उनके लड़के अर्थात् हनुमानप्रसाद के पिता ब्रह्मदेवनारायण बहुत तेजस्वी पुरुष थे। कहते हैं, अभी रेख नहीं उभरी थी कि पिता तेजबहादुर को डांटकर चटाईटोला जाने से रोक दिया और बैलगाड़ी बेच दी। बचे खेतों का पढ़ाई-लिखाई छोड़ पसीना से सींचने लगे। बाद में उनके छोटे भाई हर्षदेव नारायण पुलिस में भरती हो गये और कलकत्ते से अथाह धन आने लगा। वे नि:सन्तान थे और नौकरी करते में ही दिवंगत हो गये और उनके सामने ही ब्रह्मदेव नारायण ने चटाईटोला के बाबू साहब के चंगुल से न केवल अपनी ज़मीन निकाल ली थी बल्कि बहुत सारी नयी

ज़मीन खरीद गृहस्थी भरपूर रूप में बढ़ाकर संगठित कर ली थी। इस नये धनी को जमुनाप्रसाद सह नहीं पा रहे थे और मुकदमाबाजी भी शुरू हुई थी। बाद में उनके नौजवान लड़के विक्रमबहादुर अर्थात् नवीन बाबू के पिता ने उसे मारपीट-फौजदारी के रूप में आगे बढ़ाया। इस प्रकार दोनों घरानों में शत्रुता चरम सीमा पर पहुंच गयी थी। आना-जाना और भोज-भात छूट गया था। इधर कुछ वर्षों से शत्रुता ठंडी पड़ी थी और नवीन बाबू के द्वारा जब से गृहस्थी हाथ में ली गयी है, वातावरण एकदम बदल गया है। अपने लड़के की तेरही वाले उत्सव में नवीन बाबू ने स्वयं आकर हनुमानप्रसाद को निमंत्रित किया था और लिवा गये थे। तो, वही सब पुराना सोचकर अन्तिम बात कहते-कहते वे संकुचित हो गये। किंतु पुश्तैनी नाता केवल दो-तीन पीढ़ियों में थोड़े ही बंधा है। यह आसानी से सिद्ध किया जा सकता है, उसके पहले दांत काटी रोटी का संबध था और अब भी है। खैर, बात मुंह से निकल गयी थी। अब नवीन बाबू के मन्तव्य को जानना था। वास्तव में हनुमानप्रसाद को कहीं कुछ थाह नहीं मिल रहा था।

'आप जैसा सरपरस्त है' नवीन बाबू बीड़ी फेंककर कहने लगे, 'तो किसी बात की कमी नहीं। मुझे आपका बहुत भरोसा रहता है। कितना अच्छा है कि हम लोगों ने पुराने लोगों की उस बीती को बिसार कर भयबद्दी को सजोर कर लिया है। आपकी कृपा से किसी बात की कमी नहीं। बस, एक छोटी-सी दरख्वास्त थी, इसीलिए सोचा आपके दर्शन करूं।'

'तो कहो, मुझसे तुम्हारा कौन-सा कार सरेगा ?'

'क्या कहें, बहुत कुछ संकोच भी हो रहा है। कहीं आप मेरी बात सुनकर नाराज़ न हो जाएं।'

'अरे नहीं, खुशी से कहो।···कहो।'

'मेरी एक फूआ हैं, बालविधवा। सन्तान कोई नहीं। वे जीवन भर यहीं रह गयीं। हम लोगों को ही अपना···'

'ठीक इसी तरह मेरी भी एक फूआ हैं। यह तो भइया प्रेम है। जहां लग गया। बेचारी फूआ को अब याद भी नहीं कि उनका नैहर कहां है?'

'हां-हां, क्यों नहीं ?···तो कहा न, फूआ ने जब से सुना है कि खेत में पड़ा लड़का मिला है तब से पता नहीं क्यों एकदम भयातुर होकर छटपटा रही हैं। वे खुद आ रही थीं पर मैंने रोक दिया। कहा, बाबू साहेब से मैं ही जाकर प्रार्थना करूंगा···'

सुनते-सुनते सिर नीचे कर हनुमानप्रसाद अत्यन्त गम्भीर हो गये। क्षण-भर बाद उन्होंने नवीन बाबू की ओर बहुत रूखी दृष्टि से देखा और कहने लगे—

'विश्वामित्र जी जब राम-लक्ष्मण को मांगने गये तो वह वृत्तांत रामायण में पढ़ा है न ? दशरथ जी कांप गये। बोले, 'मांगहु भूमि धेनु धन कोसा, सबंस देउं

आज सहरोसा' लेकिन ? कहा राजा ने, 'राम देत नहिं बनइ गोसाईं।' सो वही हाल है बबुआ। छोटा बादशाह कहीं नहीं जायेगा।'

'लेकिन राम-लक्ष्मण तो मांगने पर मिल गये और इससे जगत का मंगल हुआ…'

'पढ़-लिखकर कड़ेर हो गये तब न मांगे गये थे। यह तो अभी अंखफोरू भी नहीं हुआ।…यह यहीं के लिए, हनुमानप्रसाद के लिए ही खेत में परगट हुआ है, ऐसा मानो बबुआ। यह मामूली लड़का नहीं। दूसरी चीज़ है। इसे मांगा नहीं जाता है।'

'आप तो बाबू साहेब एकदम रहस्यमय बातें बता रहे हैं। हमारी समझ में नहीं आ रही हैं।'

'नहीं समझ में आयेंगी' हनुमानप्रसाद कुछ और पास सरक स्वर को धीमा कर बोले, 'अवतारी पुरुष है भइया। क्या किसी मां के पेट से पैदा हुआ है ? नहीं, कहीं कोई सबूत नहीं है।—अजोनिजा महापुरुषों के बारे में जो तमाम पुराणों में आता है उसे हमने आंखों से देख लिया है। अब के पढ़े-लिखे लोग भला क्या विश्वास करेंगे ? कहा गया है, पढ़े फारसी बेचे तेल।' मैं तो पढ़ा-लिखा नहीं हूं। तुम हमसे ज्यादे जानकार हो। कुंभज ऋषि घड़े से पैदा हो गये। गणेश जी पार्वती की झिल्ली से पैदा हो गये। सीता जी हराई से उत्पन्न हो गयीं। कलिकाल में कबीर साहेब हाथ के फोड़ा से पैदा हो गये। उसी तरह यह बाल भगवान धान के खेत में प्रगट हो गये। मुझे देखते, तुम आश्चर्य करोगे, एकदम उछलकर छाती से चिपक गये। लगा, कानों में कोई कह रहा है, हमको पहचान रहे हो न ?…तो, थोर कहना अधिक समझना। फूआ जी को समझा देना।'

उस दिन रात में खुबवा, बतीसा, भीम और सुग्रीव की चांडाल चौकड़ी जुटी तो हनुमानप्रसाद के दरबार में प्रमुख चर्चा का विषय नवीन बाबू की मांग रही।

रहस्य से भरी काम की सूचना खुबवा ने दी। पहले तो लोगों ने समझा कि गांजे के दम का प्रभाव है कि इतने भेद में घुसकर हांक रहा है परन्तु धीरे-धीरे बात सटीक बैठ गयी तो सब लोग अवाक् हो गये; उसने जांघ पर हाथ मारकर कहा—

'एकदम पक्का प्रमाण है कि चटाईटोला के कलिकवा की ऊ छौंड़ी उसी दिन फजिर की बेरा में अपने किसी दूर के रिश्तेदार के साथ स्टेशन से उतर कर गांव पर गयी। दो-तीन महीने से टी० बी० के रोग के बहाने कहीं अस्पताल में कि राम जाने कहां रही। यही नवीन बाबू भर्ती करा आये थे।…का हो, टी० बी० में पेट फूल जाता है ? तो, अब नक्शा समझ आया ? स्टेशन से चटाईटोला जाने का रास्ता ठीक जलतराशी मौजा से जाता है। हरद्वार तिवरिया के उस धान के खेत

से होकर। उधर से तो ढोकर आ गया पर गांव पर यह पेट का कलंक कैसे जाता ? सो, खेत में डाल दिया और छौंड़ी पिरेमी जी अब उसके पीछे लगे कि काम भी बन जाय और जगहंसाई भी न हो।'

'धत्त बदमाश' हनुमानप्रसाद ने उसे इतने जोर से डांटा कि बैठे-बैठे उलट गया, 'भाग यहां से। उस शरीफ आदमी को बदनाम कर रहा है।'

लेकिन हनुमानप्रसाद का चेहरा उतर गया। वे भीतर से उखड़कर एकदम आकुल हो गये। कोई अदृश्य गंदगी जैसे पूरे शरीर पर लिपट गयी थी और उसकी अज्ञात दुर्गंध से तबीयत ऊब रही थी। उधर चौकड़ी की बोलती बन्द। कुछ देर बाद सुग्रीव ने विषय बदलकर मालिक को खुश करना चाहा। कहा—

'तो, मालिक भोज में पांचों गांव के भाइयों को न्योता होगा कि केवल अपने गांव को···

'अब खरमास हो जायेगा', अत्यंत गंभीरतापूर्वक हनुमानप्रसाद ने कहा, 'उसके बाद देखा जाएगा।···सुग्रीव तूने यह नहीं बताया कि इतने दिन तक कहां रहा ?'

'मालिक, मजिस्ट्रेट चेकिंग में पकड़ा गया। पैसा कहां था ? दो सौ रेलवे वाले जुरमाने के बदले लगभग महीना भर बलिया जेल में रहा।'

'तूने खबर नहीं दी।'

'खबर क्या देता ? ऊ चांडाली भाग गयी। हमारा मन बैठ गया था। शर्म के मारे आपके···'

'तुम्हें उसे खोजना होगा। शरमाने से काम नहीं चलेगा। खर्च चाहे जितना···।' कहते-कहते हनुमानप्रसाद रुक गये। सचमुच कहीं धन ऐंठने की चाल यही साला न चल रहा हो। फिर उन्होंने सुग्रीव से धीरे से कहा—

'हवेली में जाकर सोहर रोकवा दो। कहना, मालिक ने कहा है। दिन खराब है।'

'मैं एक बात कहूं, बतीसा बोला, 'चलकर छातापुर के सोखा से नाम निकलवाया जाय। कौन भगाया है ? कहां है ? ज़रा पैसा ठांठ लेता है, तब सही काम देता है। लेकिन अव्वल दर्जे का नामकढ़वा है।···तीन-चार साल हुए इसी नवीन बाबू की चार हजार की जोड़ी चोर खोल ले गये। कह रहे थे, छातापुर गया तो सोखा बोला एक बैल का दाम रख दो। दोनों को चलकर घर में से काढ़ देता हूं।··· चोर लोग चित हो गये और बैल जोड़ी आ गयी।'

'अरे चल, चल' भीम बीच में बात काट तड़प उठा, 'चोरों को क्या चित करेंगे ? खुद चित हो गये और नोट पानी की मोटरी के साथ पगरी गोड़ पर रख इज़्ज़त की दुहाई देने लगे तो किसी-किसी तरह माल वापस हुआ। अगर ऐसी हेकड़ी मारेंगे तो एक क्या दोनों जोड़ी खूंटे पर से छू-मंतर हो जायेगी।'

हनुमानप्रसाद ने मुस्कराकर भीम की पीठ पर एक धौल मारी और फिर हलके-हलके थपथपाया। भीम ने उनकी ओर देखा। एक क्षण में ही आंखों-आंखों में कुछ बात हुई। फिर बहुत गंभीरता से आंखें नीचे कर भीम कहने लगा—

'हां सोखा बहुत जाबिर है, इसमें शक नहीं।'

उस समय सुग्रीव और बतीसा दोनों मुस्करा रहे थे। बतीसा की आंखें भी चमक रही थीं। जैसे कह रहा था, 'माफ करना उस्ताद, हमें क्या पता था कि...'

'तो कल ही छातापुर चला जाय। देख बतीसा, अपना ट्रेक्टर गांव के बाहर ले चलकर दो घंटा रात रहते तुम तैयार रहना। सुग्रीव, तुम भी चलोगे।' हनुमानप्रसाद ने कहा।

रात में हनुमानप्रसाद सोने के लिए चारपाई पर पड़े तो ऐसा लगा कि शरीर और मन दोनों चकनाचूर हो गये हैं। रह-रह कर मरोड़-सी उठती, तो क्या वे उन पापियों के पाप को सिर का सेहरा बनाये हुए हैं? कुत्सित कलंक को चूम-चाट रहे हैं? इस समाज के कूड़े से क्या हवेली नहीं नसा गयी?...अच्छा हुआ होता, नवीनवा के आगे उसे फेंक दिया होता—ले जा, अपना पाप यहां से उठा ले जा।...मन करता है, चलकर उसकी गरदन मरोड़ दूं।...लेकिन उसका क्या दोष? वह तो एकदम निर्मल है, गुलाब की तरह पवित्र है, खेत के कूड़े की खाद से उसका क्या संबंध? कितना खूबसूरत है, कैसे हाथ पटक-पटक खेलता है?... कैसे भटर-भटर ताकता है, मुस्कराता है तो कैसे प्राण खींच लेता है।...हां, ठीक एकदम नवीन की मुखारी की गढ़न पाया है। तो, यह नवीन के पाप का बेटा हनुमानप्रसाद के कंधे पर घूमेगा?...वह साला नवीन नया धनी बनता है। बैलों की जोड़ी दिखाता है। अब दिखा।...आया था बच्चा मांगने। बैरी बेटी...। ऐसा लगा कि वह अपवित्र गन्दी चीज़ हनुमानप्रसाद के शरीर में अब भी चिपचिपा रही है।...अब उसे छुएंगे भी नहीं। ठीक है, पावलप्रसाद नाम। नहीं 'प्रसाद' लगाना ठीक नहीं।...पावल पांड़े? यह ठीक। जैसे स्टेशनों पर पानी पांड़े। अब वह छोटा बादशाह नहीं बड़का हरामी।...नहीं, हनुमानप्रसाद उसे हरगिज जाने नहीं देगा। उसे खूब खिला-पिलाकर तगड़ा बनायेगा। ज़माना बदल रहा है। थोड़े ही दिनों में हलवाह नहीं मिलेंगे। साले खानदानी दुश्मन का बेटा गुलाम बन हल जोते। अपने घर का मुफ्त का हलवाह...।

६

रामरूप अपने ज्वार के बाल की चोरी का नाम निकलवाने के लिए छातापुर सोखा के यहां पहुंचा तो उसने दूर से ही देखा, बाबू हनुमानप्रसाद का ट्रेक्टर

खड़ा है और वे स्वयं कुछ दूर हट सुग्रीव से कुछ बातें कर रहे हैं। अब रामरूप काहे को आगे बढ़े ? जल्दी-जल्दी भागकर बगल के मिडिल स्कूल में पहुंचा। बावजूद रविवार होने के स्कूल पर अध्यापक लोग मौजूद थे। कोई अधिकारी आने वाला था। खाने-पीने का इन्तजाम हो रहा था। रामरूप के उधर बढ़ने जिस व्यक्ति ने उसका आगे बढ़कर स्वागत किया वह उसका सहपाठी मित्र निकला।

'देखो विश्वनाथ भाई, मुझे यहां तब तक रहना है,' रामरूप ने कुछ देर बाद अपने मित्र से कहा, 'जब तक ब्रह्मस्थान पर खड़ा वह ट्रेक्टर चला जाता हुआ न दीख जाय। सोखा से मुझे भी कुछ काम है। इस बीच मेरी एक जासूसी कर दो या करा दो। मैं अब जानना चाहता हूं कि गठिया के हनुमानप्रसाद सोखा से क्या पूछने आये हैं तथा सोखा उनसे क्या बताता है ?'

'अरे यार, तुम भी क्या कहोगे, लो मैं स्वयं जा रहा हूं। डिप्टी साहब लगता एक बजे से पहले नहीं आयेंगे।···मगर तुम भी इस सोखा में विश्वास करते हो ? एकदम फ्राड है। कोई विद्या है जिससे सामने बैठे व्यक्ति के मन की बात को या उसके सन्देह को जान जाता है और वही सब बक देता है। भविष्य या कोई सही-सही अता-पता क्या खाकर बतायेगा ?···महाभ्रष्ट, लोभी, चांडाल।···खैर, वहां का मेला मज़ेदार होता है। तुम अखबार पढ़ो। मैं जा रहा हूं।'

रामरूप के मित्र विश्वनाथ तिवारी ने कहा और वह सोखा के ब्रह्मस्थान पर चला गया। वह अभी उधर ही था कि कुछ देर बाद ट्रेक्टर जाता हुआ दिखाई पड़ा। रामरूप खुश हुआ, काम जल्दी हो गया लेकिन ट्रेक्टर पर करइल महाराज क्यों नहीं दिखे ? भेद खुला विश्वनाथ के आने पर। हवेली से कोई औरत भगी है। सोखा कहता है, एक हजार रुपया रखो तब बतायेंगे। इतना रुपया बांधकर कहां कोई नाम निकलवाने आता है। इसीलिए ट्रेक्टर पर कोई कहीं से पैसा लाने गया है और मालिक वहीं जमे हैं।

रास्ते में कुछ बिगड़ जाने के कारण ट्रेक्टर लौटा तीन बजे। इस बीच रामरूप को एक क्षण के लिए भी चैन नहीं मिला। सोखा कहीं उसी पर न मामला घहरा दे।···और इसके बाद जाकर तिवारी जो लौटा और उसने जो सूचना दी उससे तो जैसे वह एकदम सूख गया। अब क्या होगा ?···औरत भगती है तो दरवाज़े पर सोया कोई आदमी उसे देखता है। दोनों में बात होती है। सोखा और भी कहता है···इसी आदमी की कारस्तानी लगती है। फिर कहता है, औरत किसी शहर में दीख रही है, तिमंजिले पर, वह ग्यारह दिन के भीतर तुम्हारे यहां खुद आ जायेगी।···साला झूठा। लोहा लगा दिया।

विश्वनाथ के बहुत आग्रह करने पर भी शाम की चाय के लिए रामरूप नहीं रुका। वह बदहवास-सा बस स्टेशन पर पहुंचा। उसका काम नहीं हुआ। चार

बजे उन लोगों के जाने के बाद सोखा के यहां पहुंचा तो वह स्थान से उठ चुका था। छातापुर से गठिया जाते कहीं बीच में महुआरी रुककर उसे उन लोगों के द्वारा तलब किया जाय। मगर वह तब तक पहुंचेगा कहां ?···वह आज गांव पर जायेगा ही नहीं। बलिया जाने वाली बस अभी मिल जायेगी।

'टिकट ?···कहां तक जाना है ?'

कण्डक्टर की आवाज़ सुनकर रामरूप चौंक गया। कहां चलना है ? कहीं भी···रात में बलिया ही ठीक रहेगा और उसने दस का एक नोट कण्डक्टर को थमाते हुए कहा—

'जहां तक बस जायेगी।'

टिकट के साथ कण्डक्टर ने कुछ नोट और फुटकर पैसे वापस किये। तब तक फिर अतीत के तनावों की गिरफ्त में रामरूप आ चुका था और उसने यंत्रवत् उसे पाकेट के हवाले कर, पैर फैला शरीर को सीट पर ढाल दिया। फिर डूबा सोखा के ब्रह्मस्थान से निकले नाम के प्रपंच में तो डूबता ही गया। कड़वाहट में मन क्षत-विक्षत था और बस के हिचकोलों की भांति बारम्बार उखड़-उखड़ गिर रहा था। ससुर जी का भयानक भूत बढ़ते अंधेरे में खिड़कियों के बाहर पेड़-पौधों और झुरमुटों के रूप में समानांतर दौड़ रहा था। कहां बच के जाओगे बच्चू ? 'पढ़े फारसी बेचे तेल' के महान् उद्घोषक करइल महाराज की कनक छरी-सी कामिनी को भगाना ठट्ठा नहीं। रात तो बलिया में कटेगी मगर अगला दिन ? गांव छोड़ कर कहां जाओगे ? एक अदद वह हिंसक काला दैत्य आंखें लाल-लाल कर कटकटा कर पूछेगा, 'बोल, कहां छिपा रखा है आसामी को ?' तो क्या जवाब दोगे ?

दुश्चिंताओं की जकड़न में बेहोश खोये से रामरूप को लगा, अब मस्तिष्क फट जायेगा। परंतु वह एक झटके में कुछ क्षण के लिए उस समय होश में आ गया जब कंडक्टर ने सभी यात्रियों के उतरकर चले जाने के बाद झकझोरकर कहा, 'ऐ जनाब, अब घर जाकर सुमिरन कीजिए।'

चारों ओर घुप अंधेरा। भयावने बाग-बगीचे और एक ओर माटी के कुछ खामोश घर। कहां है वह बलिया शहर ?

अब रामरूप को चिंता इस बात की नहीं थी कि दूसरे रूट की गलत बस पर चढ़ गया जो यहां मंगला घाट पर आकर रुक जाती है और फिर सुबह यहां से जाती है, चिन्ता यह थी कि इस अपरिचित स्थान पर ठंडी रात कैसे कटेगी ? अब वहां अपनी मूर्खता का बखान वह किससे करता ? भूख-प्यास के दबाव से आसपास चक्कर काटने लगा। कहीं कुछ जोड़ बैठता न देख मन बैठने लगा। एक ओर अंधेरे में बढ़ा। डर क्या है ? वह भी तो गांव का रहने वाला है। कोई गांव तो मिलेगा ? कोई दरवाज़ा दिखेगा ?

आधे घंटे तक ठंडी धूल फांकने के बाद एक जगह कुछ धुक-धुक रोशनी

दिखाई पड़ी। पहुंचने पर उसने जाना कि किसी कोल्हुआड़ पर पहुंच गया है। एक आम के पेड़ के नीचे कोल्हू चल रहा है। ईख पेरी जा रही है। एक ओर अंधेरी झोंपड़ी में कुछ लोग हैं जो खामोश हो गए हैं। कड़ाहे के चूल्हे में खोइया झोंकी जाती है तो हलकी रोशनी होती है, जिससे केवल उस झोंकने वाले की ही शकल देखी जा सकती है जो देखने पर रामरूप को अच्छी नहीं लगी। वह समझ नहीं पा रहा था कि लोग उसके आने से चुप्पी साध लिये हैं या पहले से ऐसे ही बैठे हैं।

कोल्हू की परिधि के बाहर वह ठिठककर खड़ा हो गया। इसी बीच बीड़ी जलाने के लिए एक व्यक्ति माचिस घिसता है। रोशनी हो जाती है।

'कोई कांग्रेसी मालूम होता है।' एक आदमी फुसफुसाया।

'ये अब अंधेरे में ही चलते हैं।' दूसरे ने उसी तरह समर्थन किया।

रामरूप इस टिप्पणी के लिए तैयार नहीं था। दो मिनट तक उसी तरह खड़ा रहा। उसे लगा, आदमी से कितने अच्छे बैल हैं जो चुपचाप आंख मूंद पगुरी करते चल रहे हैं। उसने हैरान होकर सोचा, ये ग्रामीण कैसे हैं? आदर से बुला नहीं रहे हैं, दुख-सुख पूछ नहीं रहे हैं। ऐसा तो नहीं कि उसे खबर नहीं और इधर गांव वालों की प्रकृति बदल गयी है? अथवा कोई रहस्य है? यह कैसा मौन विद्रोह है? और क्यों है?

'बंदगी भाइयो!' सधी और सीधी आवाज़ में बोलकर रामरूप आगे बढ़ा।

'का बरबर किये हो, आकर बइठो,' एक ने उत्तर में कहा और रामरूप को फिर धक्का लगा। बंदगी के इस ठर्रे जवाब से उसकी समझ बैठने लगी। अचानक वह अत्यंत हीन हो गया। उसका यह गर्व कि गांव और गंवारों को वह भलीभांति पहचानता है, चकनाचूर हो गया। बदले या पूर्ण अपरिचित गांव के इस आदिम जैसे तेवर का सामना बहुत बीहड़ लगा। परिचय-अपरिचय और अतिथि-गृहपति के भाव गल-पचकर कठिन काल में कब विलीन हो गये? पहचाना-अपहचाना सब बराबर? यह कैसी जड़ कुंठा है? उदासीनता और उपेक्षा मिश्रित अहिंसक तिरस्कार भाव इस सीमा तक पहुंचा कि किसी का परिचय पूछने की भी ज़रूरत नहीं रह गयी? अवश्य ही कोई अनजानी तल्खी है, कोई रिसती पीड़ा है जिसने यहां ऐसी खामोशी भर दी है और लोगों की मुद्राओं में ऐसी कुटिलता आ गयी है कि उन्हें पहचानना कठिन हो गया है।

धीरे-धीरे किसी अज्ञात अपराध-भाव से जड़ हुए पैरों को बढ़ाता हुआ उस दबे-घुटे माहौल को और भारी बनाता वह उस झोंपड़ी में पहुंचा। फर्श पर ईख की पत्तियां बिछी हुई थीं। वह एक ओर चुपचाप बैठ गया। कुछ बोलने का गौं नहीं बैठ रहा था। हिम्मत भी नहीं थी। बंदगी के जवाब से मन भर गया था। इन निपट गंवारों के बीच जो सामान्य शिष्टाचार भी नहीं जानते हैं, अब स्वयं ही

अपने को प्रस्तुत करना होगा।

'किसी तरह सुख-दुख में रात गुज़ारनी है भाइयो। गलत बस पकड़ गयी और मैं यहां अनजानी जगह पर भटक रहा हूं। यह कौन गांव कहलाता है ?' रामरूप ने कहा।

कोई उत्तर नहीं। जैसे किसी ने सुना नहीं। एक मिनट, दो मिनट, पांच मिनट और अब उसकी सांस फूलने लगी, गलत यात्रा, गलत बस और अब शायद यह गलत ठिकाना।

'अच्छा त भइया अब इनहूके सतकार हो जाव।'

काफी देर बाद एक आदमी चौंकाने वाली ठनकती आवाज़ में इस प्रकार बोला कि रामरूप के रोंगटे खड़े हो गये। उसने देखा सतकार के प्रस्ताव के साथ बैठे हुए आदमियों में से दो चुपचाप उठकर चले गए। क्या मतलब 'सतकार' का ? हिसाब लगाया, अधिक तो नहीं, थैली में पंद्रह-बीस रुपये होंगे। अच्छे फंसे। धोती-कुर्ता और जाकेट भी अब महंगे पड़ रहे हैं। नाम निकला नहीं, अब यहां कचूमर न निकल जाय। ये सोखा के भूत यहां आगे-आगे जमे हैं।

इसी बीच पत्ती चुरमुर कर खरखरा उठी और बैठे लोगों के बीच अंधेरे में एक आदमी की तगड़ी आकृति दानवी अंगड़ाई के साथ खड़ी होती दृष्टिगोचर हुई। रामरूप की छाती धड़कने लगी। अरे, भाग चल। मगर अब कहां ? उस निःस्तब्धता में उसे अपनी छाती की धड़कन साफ-साफ सुनायी पड़ रही थी। गाढ़े में धड़ाधड़ कई देवता याद आये। कुछ की मनौतियां भी मन-ही-मन मान दी गयीं।

वह आदमी झोंपड़ी से बाहर निकला। इधर-उधर देखने लगा। कुछ खोज रहा था। क्या चीज़ खोज रहा है ? रामरूप की धड़कन और तेज़ हो गयी। उसने अब आंखें बंद कर लीं। आहट से लगा, आदमी उधर वाली दूसरी झोंपड़ी में गया है। शायद वहां से लौटेगा तो उसके हाथ में कुछ होगा। जी कड़ा कर आंखें खोल रामरूप। भागने का विचार छोड़।

'आज सवेरे से सतकारे होत बा। आखिर में आपो आ गइलीं। कहां घर परिहैं ?' पास बैठे एक आदमी ने पूछा।

'गठिया।'

रामरूप ने जान-बूझकर अपना घर गठिया बताया। दबंग आदमी के गांव भी एक धाक होती है। शायद यह पूछे जाने पर कि किसके घर के हैं, वह हनुमान-प्रसाद का नाम बताता। मगर इसकी नौबत नहीं आयी।

'गठिया में हनुमानप्रसाद के घरे से भागी कनिया अबहिन मिली कि नहीं ?' एक दूसरे आदमी ने अंधेरे में सवाल उछाला और इस उद्वेगमूलक तथा अप्रत्याशित सवाल ने रामरूप को स्तब्ध कर दिया।

वह जवाब देने जा रहा था कि झोंपड़ी के पिछले द्वार की पत्ती तेज़ी से खर-खरा उठी। दो आदमी कड़ाहे की मद्धिम रोशनी में आते लगे। एक के हाथों में जो था साफ दिखाई नहीं पड़ रहा था। दूसरे के हाथ में दो लाठियां थीं। रामरूप सन्न। उसने कांपते हुए प्रभु का मन-ही-मन नाम लिया। आंखें बंद कर धनुर्धर-राम का ध्यान किया। नहीं, वह हर्गिज गिड़गिड़ायेगा नहीं। लगा, अब गरदन के दोनों ओर लाठियां रखकर दबा दी जाएंगी। 'ढाठी' देना सुना था, अब आज अपने ही सिर घहरायी। लेकिन, जो कड़ा कर एक बार पूछेगा, ऐसा क्यों ? किस लिए ?

किंतु इसकी जरूरत नहीं पड़ी। आगे-पीछे और सामने की आहट पर आंखें खोलीं तो देखा, सामने लाठी नहीं ईख रखी है। साथ ही पानी, शर्बत और गुड़-महिया भी है। एक आदमी कह रहा है, 'सरकार, कोल्हुआड़ के सतकार के कबूलल जाव।'

त्रासदी का चरमबिंदु चट बदल गया और रामरूप कोलगा, झोंपड़ी में बिना दिया-बाती के अंजोर हो गया है। और समय होता तो वह शिशिर की रात में ईख का रस चढ़ाते हिचकता पर उस दिन रस ही क्यों गुड़-महिया सब चाट-पोंछ-कर ईख को भी उसने बत्तीस दांत वाली मशीन में लगा दिया। मारे खुशी के वह कैसे बड़बड़-बड़बड़ बोल रहा है और स्वागत को सराह रहा है, उसे पता नहीं चल पाया। काल्पनिक संकट से मुक्ति में भी कितना सुख है ? दूसरी ईख को हाथ में लेते हुए उसने पूछा—

'गठिया वाली भगी हुई कनिया के बारे में आप लोग क्यों पूछ रहे थे ?

'हमरे गांव में भी एक जने के कपार पर बुढ़ौती में सनक सवार भइल बा। भर महीना भइल होई कि कनिया कीनि के आइलि।'

'यह कौन-सा गांव है ?'

'गांव ना ह, छावनी ह, बड़ारपुर का बाबू रघुनाथसिंह के, ई ऊख उनहीं के कटलि ह।...औरो चाहीं ?'

'अरे नहीं—कितनी दूर है बड़ारपुर ?'

'निगिचे ह, यही कोस भर के करीब।'

रामरूप को प्रसन्नता थी कि भूल-भटककर वह जहां पहुंचा, वहां उसे एक न एक दिन यत्न करके पहुंचना ही था। कितने नाटकीय ढंग से उसका यहां स्वागत हो गया। साइति अच्छी है। छावनी देखकर रघुनाथसिंह की एक अज्ञात धाक उसके भीतर जमने लगी थी। वह सोच रहा था, ऐसी लम्बी-चौड़ी खेती-बारी है तो तिलक दहेज में बीस-तीस हजार की मांग अनुचित नहीं है। मगर रामरूप इसमें जुटेगा कैसे ? वह अब कल सुबह ही बड़ारपुर पहुंच जायेगा और विवाह की बात करेगा। अकेला है तो क्या हुआ ? पुराना ज़माना गया कि दल बांधकर भय-

बट्टी का जोर दबाव डाला जाता था और शादियां तय हुआ करती थीं। अब शादी का अर्थ व्यापार है, जिसके लिए बातचीत अकेले-अकेले ठीक है। कल का दिन भी कट जायेगा।

रघुनाथसिंह के आदमियों ने बाटी-दाल तैयार किया था और खा-पीकर रामरूप सोया तो उसे लगा, निश्चित रूप से यहां वही कोइली नई कनिया बनकर आई है। आज रविवार का अवकाश है तो कल संयोग से सोमवती अमावस्या की छुट्टी है। अमावस्या का सांस्कृतिक रोमांच तो सैकड़ों वर्ष पीछे छूट गया पर अध्यापक जीवन में सामाजिक कार्यों और व्यावहारिक जीवन के मोर्चे पर ये छुट्टियां कितनी कीमती सिद्ध होती हैं। वहां चलकर वह कोइली का भी सुराग लेगा, हनुमानप्रसाद के लिए नहीं, आत्मसंतोष के लिए। ओफ्, कितनी सुन्दर और कइनि की तरह कसी थी वह कोइली।

७

आदर्श विद्यालय के कारखाने की मशीन ठीक दस बजे स्टार्ट हो जाती है। मूखाराम चपरासी को इस बात का गर्व हो सकता है कि इतनी बड़ी मशीन की कुंजी उसी के हाथ में रहती है। वह उस काठ की कुंजी को लेकर नौ बजकर तीस मिनट पर विद्यालय प्रांगण में टंगे घंटे पर भिड़ा देता है और उसकी अविरल टन्-टन्-टन्-टन् ध्वनि दूर तक सुनाई पड़ती है। एक तो आदर्श विद्यालय की इमारत के कोट पर स्थित होने के कारण घंटा-ध्वनि दूर-दूर तक सुनायी पड़ती है दूसरे रामरूप की पट्टी मालिकान वाली पूरी बखरी के भी गांव में सबसे ऊंचे डीह पर आबाद होने के कारण यह ध्वनि गांव के पूरबी छोर से सारे गांव को लांघ कर सीधे रामरूप के सधे कानों से नित्य टकरा-टकरा जाती है। तब वह पट्टी मालिकान के सदर रास्ते से उतरकर शनिवारी बाजार में आकर रहता है। तब उसके पिता सुखविलास राय मंदिर में ताली बजा-बजाकर खूब ज़ोर-ज़ोर से 'तन छन ढरत तनक अरचल जन···।'-वाली अथवा ऐसी ही कोई स्तुति करते रहते हैं। किसी दिन देर हुई तो स्वयं तैयार होकर अरविन्द के लिए हल्ला करता रहता है। प्राइमरी स्कूल रास्ते में ही पड़ता है और इस प्रकार पिता-पुत्र की सात मिनट की एक संक्षिप्त यात्रा नित्य साथ संपन्न हो जाती है। उसे एक-एक मिनट का हिसाब मालूम है। प्राइमरी स्कूल से ५ मिनट दीनदयाल के नलकूप तक जाते लगेगा और वहां से ३ मिनट में अपना विद्यालय आ जायेगा। ऐसा प्रायः कभी नहीं होता कि रामरूप प्रार्थना की घंटी के एक-दो मिनट पहले उपस्थित न हो जाय। हां, यह सारी व्यवस्था उस दिन ज़रूर अस्तव्यस्त हो जाती है जिस दिन खेती के काम से सुबह उसे निकल जाना होता है और बाहर-बाहर

ही विद्यालय जाना होता है। तब दोपहर में भोजन वह वहीं मंगा लेता है। यदि किसी दिन विलम्ब होता तो वह अरविन्द जी के कारण। सुबह से ही एक अरविंद जी की तैयारी में तीन-तीन लोग भिड़े होते हैं। पूजा-पाठ के बाद रामरूप की बूढ़ी मां के हाथों बिना तुलसीदल और प्रसाद लिये अरविंद जी स्कूल नहीं जा सकते। इस पूजा-पाठ की सामग्री जुटाने और यथास्थान रखने में कमली को सुबह से ही सावधानी रखनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त वह यूनीफार्म के विषय में अत्यधिक सजग रहती है। जूता, मोजा, पैंट-शर्ट सब दुरुस्त। फिर काजल-विभाग भी उसी के पास है। नाना प्रकार की मीठी बातों, कहानियों, प्रलोभनों के बाद अरविंद जी का भोजन सम्पन्न होता है तो कमली उन्हें पोशाक और काजल के लिए झपट लेती है। पोशाक की नफासत तो ठीक है पर काजल को लेकर मां-बेटी में कभी-कभी एक हल्का कांव-कांव हो जाता है। अरे, कितनी बार मुंह पोंछेगी? काजल का टीका ठीक गोल नहीं हुआ तो क्या बिगड़ा? टीका कभी बीच में, कभी दायें, कभी बायें, बिटिया का तमाशा बनवले बाड़ू?

स्वयं अपने तैयार होने में रामरूप किसी की मदद नहीं चाहता। अधिक से अधिक इतना ही कि चौके में घुसे तो 'ठहर' पर पीढ़ा-पानी पहले से रखा मिले और बैठने के एक मिनट के बाद चूड़ियों की एक सनातन मीठी खनक के साथ थाली सामने आ जाय। अरविंद को प्रसाद खिलाकर मां जब इसी समय पंखा और अपनी बातों को लेकर बैठ जाती है तो कभी-कभी अपनी ही आन्तरिक उलझनों में डूबे होने के कारण वह उनकी ओर पूरा ध्यान नहीं दे पाता है और मां-बेटे में एक-एक झोंक हो जाती है—

'तो तू बता न कि कब मैं तुमसे कुछ कहूं, बोलूं? दिनभर अपने काम से कहां-कहां उड़ा रहता है और घर आने पर देखती हूं कि हर घड़ी तो न जाने किस सोच में डूबा रहता है।···गाल पिचक गये, मुंह सूख गया। क्या चिन्ता है? हम से कहो न?'

'चिंता तो यही है कि तुम्हारे साथ बहस करने में दो मिनट लेट हो गया। अब बताओ, इसे पूरा करने के लिए क्या खा-पीकर दौड़ लगाऊं?'

'बस? यही चिंता है?—तो इसमें क्या रखा है? सायकिल से चले जाओ।'

'अरे हां, यह बात तो मेरी समझ में नहीं आयी थी। इसीलिए न कहा जाता है कि अकिल सीखना हो तो बूढ़ों के पास जाओ।' रामरूप कहता है और उसका ध्यान इधर-उधर अंचवने वाली जगह पर जाता है जहां दांत खोदने वाला नीम का खरिका लेकर चुपचाप कमली ओसारे में खड़ी रहती है। उसका खरिका घड़ी की सुई की तरह चूकता नहीं और यह क्षण होता है कि बाहर निकलते-निकलते प्रायः रामरूप सोचता है, चली जायेगी तो कौन ऐसे खरिका देगा? और भीतर से वह अत्यन्त आर्द्र हो उठता है।

किंतु कभी ऐसा नहीं हुआ कि रामरूप विद्यालय सायकिल से गया हो। उस दिन मंगलवार को भी नहीं, हालांकि बाल की चोरी के बारे में सोखा के यहां वाली नामकढ़ाई की कुछ आंय-बांय कैफियत मां के सामने पेश करने में उसे दो मिनट विलम्ब हो गया था। उसने बड़ारपुर जाने और विवाह के विषय में बात चलाने वाला कड़वा प्रसंग जान-बूझकर नहीं उठाया। उसकी कसक वह भीतर ही झेल ले तो अच्छा। फिर लौटने पर सोमवार को ससुरजी का सिपाही हाजिर।···सब तज हरि भज रामरूप। चल अपनी ड्यूटी पर। सुबह के गुलाबी जाड़े में तेज़ चलकर विलंब की क्षतिपूर्ति सुखकर ही रही।

वह रजिस्टर लेकर रूम नंबर बारह की ओर चला तो गठिया गांव निवासी संस्कृत अध्यापक भगवान द्विवेदी साथ हो लिया और बोला—

'अरे रामरूप जी, आपको मालूम है, आपके ससुर जी आप पर कितने नाराज़ हैं? समझे···एकदम पाजामे से बाहर। क्या सही है कि कल बुलावा आने पर उनके आदमियों के सामने आपने उन्हें रावण कह दिया था?'

'नहीं तो। मैं तो उनका बड़ा आदर करता हूं। मैंने कहा कि जल्दी ही उनकी सेवा में हाज़िर होऊंगा।···आपसे यह सब किसने कहा?' रामरूप ने अपने भीतर के भावों को दबाकर कहा।

'कहा किसी ने नहीं। हमने खुद उनके मुंह से सुना। खैर, अब सावधान रहें। वह सचमुच रावण है। पता नहीं, आपका कितना सत्यानाश कर दे।'

'अरे पंडित जी, आप भी बाबूजी के नाटक के चक्कर में पड़ गये।' रामरूप एक खोखली हंसी के साथ कहने लगा, 'उनका कितना हम पर स्नेह है आप नहीं जानते। गांव में रहकर आदमी हसब-हैसियत वाला है तो उसे कुछ चौकस-चांड़ रहना ही पड़ता है, लेकिन भीतर से वे कितने सरल हैं, यह मैं जानता हूं। मुझपर तो उनकी बड़ी कृपा रहती है।'

'अच्छा, अब तो कृपा सामने आयेगी।' कहता हुआ द्विवेदी कमरा नम्बर आठ की ओर मुड़ गया।

कक्षा में कुछ काम नहीं हो सका। बहुत भारी मन से घंटी बजने पर रामरूप निकला। उसके मस्तिष्क में कोई हथौड़े से चोट कर रहा था। हंसी-हंसी में निकला शब्द उनके कानों में भुनक यह सुग्रीव ऐसा ज़हर बोयेगा, उसे विश्वास नहीं था। दो दिनों की पिछली दो यात्राओं की शत प्रतिशत विफलता से एक तो स्वयं ही भीतर से वह उखड़ा हुआ था, दूसरे सुग्रीव आकर बकने लगा, 'अरे बाबू साहेब, दो दिन से आप भागे-भागे फिर रहे हैं और मैं आपके ससुर जी का बुलावा लेकर हैरान हो रहा हूं, क्या मरजी है?'

'किसलिए बुलाया है, सुग्रीव?' उसने धैर्यपूर्वक पूछा।

'नाम निकलवाने पर कुछ शक हुआ है।' उसने कहा।

'सीता का हरण कोई रावण ही कर सकता है सुग्रीव, मैं अत्यन्त मामूली आदमी हूं और इस काण्ड में कहीं नहीं हूं। जाकर मेरा निवेदन कह देना। समय निकाल कर यथासमय उपस्थित हूंगा।' उसके धैर्य का बांध टूट चुका था। उसे उसी समय लगा था, उत्तर कुछ ऊटपटांग हो गया पर अब क्या हो सकता था ?

दूसरे पीरियड में भी दसवीं कक्षा के छात्रों को घेरकर वह मात्र समय काटता रहा। तीसरी खाली थी। स्टाफ रूम में बड़ारपुर के गणित अध्यापक बीर बहादुर राय पहले से बैठे थे। देखकर खुशी हुई। दो चाय के लिए चपरासी को आदेश देकर रामरूप उनसे सटकर बैठ गया। सलाह की गोपनीयता वाली मुद्रा बनाकर बोला—

'आपके गांव में किसी बूढ़े ने कनिया खरीद कर मंगायी है ?'

'हां, एक आयी तो है। रघुनाथसिंह के सगे पट्टीदार सुमेर बुढ़वा के यहां। खूंट टूट रहा था…।'

'कितने दिन हुए ?'

'लगभग एक मास।'

सुनकर रामरूप हिसाब बैठाने लगा। बोआई खत्म होने को थी अर्थात् अक्तूबर के अन्त में वह भगी और यह नवम्बर का अन्त चल रहा है…।

'किस सोच में आप पड़ गये ?' बीरबहादुर ने कहा।

'देखो भाई, वह मेरे जिगरी दोस्त की लड़की है और भगायी गयी है। किसी तरह मुझसे उसकी मुलाकात करा दो। बोलो, संभव है ?'

'असंभव तो दुनिया में कुछ नहीं है…।'

खट्-खट्। दो चाय चपरासी टेबुल पर रख गया। किंतु तभी कमरे के बाहर से अनेक जूतों-चप्पलों की खरखराहट के साथ प्रिंसिपल साहब की सुपरिचित नकसुड़की की ध्वनि आयी और पल भर में कई लोगों के साथ वे स्टाफ रूम में आ गये। उनके पीछे वाले व्यक्ति को देखते ही रामरूप चौंककर खड़ा हो गया—

'अरे भारतेन्दु तुम ?…यहां कैसे…?'

'अच्छा तो आप लोग पूर्व परिचित हैं। बाकी लोगों से परिचय कराऊं?' प्रिंसिपल साहब ने नाक सुड़ककर कहा, 'ये हमारे नये हिंदी अध्यापक भारतेन्दु वर्मा हैं। और आप हैं…।'

वर्मा ने अपनी प्रसन्न मुस्कान के साथ सबसे पहले रामरूप से हाथ मिलाया और फिर बारी-बारी से दो मिनट के भीतर उपस्थित लोगों के बीच परिचय संपन्न हो गया तो प्रिंसिपल साहब बोले—

'मात्र दो अधूरी चाय से काम नहीं चलने वाला है रामरूप जी…।'

'हक भी मेरा ही है।'

रामरूप चाय, मिठाई और समोसा के लिए आर्डर करने जा रहा था कि

प्रिंसिपल साहब ने नाक बजाकर चपरासी से कहा, 'और घंटी अवकाश वाली बजा दो कि सब लोग आ जायं और यह दोनों ठंडी चाय उठाकर लेते जाओ।'

रामरूप को आर्डर में बढ़ोतरी करनी पड़ी। शेष परिचय का कार्यक्रम और अध्यापकों के आते-आते चल पड़ा।

'तुम शुद्ध बनारसी होकर इस करइल के इंटीरियर में कैसे आ धंसे वर्मा ?' चलती चाय के बीच रामरूप बोला।

'रहीम का वह दोहा पढ़ा है न ? वही हाल समझो कि 'ठाढ़े हूजत घूर पर जब घर लागति आग'। बेकारी में जलने से अच्छा है सिर छिपाने के लिए···' भारतेन्दु वर्मा ने बहुत मीठे ढंग से उत्तर दिया।

'मगर दोस्त, इंटीरियर का यह मतलब नहीं कि तुम सचमुच घूर पर आ गिरे हो। यह करइल तो स्वर्ण-भूमि है, भूमियों का राजा। 'सुजलां सुफलां शस्य-श्यामलां' वाली यह अन्न ब्रह्म की साकार धरती···।

'वन्दे मातरम्।' दोनों हाथ जोड़कर भारतेन्दु वर्मा ने बीच में गंभीरता के साथ सहास कहा, 'धन्य भाग्य मेरा। पर देखता हूं, यूनिवर्सिटी वाली भावात्मकता अभी भी तुममें बनी हुई है। यूनिवर्सिटी के सहपाठी और सहकक्षी ही नहीं, यह देखो हम लोग सहकर्मी भी हो गये।···प्रिंसिपल साहब, आपका विद्यालय तो स्वर्ग है। लगता है मेरा पुनर्जन्म हो गया।' प्रिंसिपल साहब ने प्रशंसा के उत्तर में जोर से नाक सुड़क दी।

प्रथम परिचय और चाय-पानी के इस थोड़े ही समय में वर्मा ने अपने खुले और सरस व्यक्तित्व, मुक्त हास और वाक्पटुत्व से सबके मन को जीत लिया। रामरूप को अच्छी तरह ज्ञात है, जिसे 'टेबुल टाक' कहा जाता है वह कला वर्मा में अपने चरम निखार पर विद्यमान है। वह प्रत्येक विषय पर नवीनतम ज्ञान के आधार पर साधिकार बात कर सहज ही जहां बैठता है, छा जाता है। खेल-खिलाड़ी से लेकर फिल्म तक, रामचरितमानस से लेकर आधुनिक राजनीति तक और प्रेम से लेकर चिकित्सा विज्ञान की नवीन उपलब्धियों तक तथा समकालीन जीवन के अन्यान्य विविध छोरों पर वह असामान्य सहजता से जब तैरता रहता है, उसके दोस्त स्तब्ध श्रोता बन कभी-कभी मारे ईर्ष्या के जलने लगते हैं। लंबा-गोरा भरा-भरा चेहरा, पैंट-बुशर्ट में भभकता एक अदद आकर्षक हीरो, रामरूप का अभिन्न मित्र, अब साथ रहेगा, इस प्रसन्नता से वह भीतर-ही-भीतर जैसे नाच रहा था। कुछ समय के लिए वह यूनिवर्सिटी वाले पुराने छात्र-जीवन में प्रवेश कर गया था और सोच रहा था कि यह दुष्ट वर्मा किस प्रकार प्रेम का नाटक कर डेढ़ साल तक एक लड़की को भटकाता रहा। रामरूप का ध्यान टूटा तो उसने देखा, न जाने कहां-कहां से बात कर अब महंगाई पर आया है और वर्मा हाथ नचा-नचाकर झाड़ रहा है···

'...मैं कहता हूं, महंगाई से सीधे नहीं, उसके आन्तरिक मनोवैज्ञानिक प्रभाव से लोग त्रस्त होकर टूट रहे हैं। सभ्यता और युद्ध के साथ महंगाई तो बढ़ेगी ही और यह बाढ़ क्या आज की है ? गुप्त काल में चार आना मन चावल और बारह आना मन घी बिकता था। एक रुपया में बीस थान कपड़ा मिलता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से यह सिद्ध है। तब से भाव निरंतर चढ़ता गया है। सोलहवीं, सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में चावल एक रुपया मन के इर्द-गिर्द रहा और दूसरे महायुद्ध काल में अचानक पांच गुना तेज़ हो गया। लड़ाई खत्म होते-होते भाव आसमान छूने लगा। चावल पैंतीस रुपया मन हो गया और घी एक सौ चालीस रुपया मन। लड़ाई शुरू हुई तो कोयला दो आना में एक मन मिलता था। लड़ाई खत्म हुई तो वह दो रुपये मन हो गया। श्रीमती इन्दिरा गांधी के पहले शासन काल में...।'

टन्न्-टन्न्-टन्न्-टन्न्।

घंटा बजा तो रामरूप चाहता था कि प्रिंसिपल साहब उसके क्लास की कोई व्यवस्था कर दें और वह वर्मा के साथ बैठकर बातें करे परंतु ऐसा नहीं हो सका। प्रिंसिपल साहब वर्मा को लेकर कालेज और पुस्तकालय घुमाने के बहाने चले और आफिस में जाकर जम गये तो वह झख मारकर अपने क्लास की ओर बढ़ा। चलो, आज इस कक्षा में महंगाई पर ही मेरा प्रवचन हो।

शाम को छुट्टी हुई और दो गिलास पानी पीकर रामरूप आफिस की ओर बढ़ा तो देखता है कि चपरासी कपिलदेव अटैची और बेडिंग संभाल रहा है और रामरूप के साथ उसके घर चलने के लिए वर्मा तैयार है तथा उसके वहां पहुंचने के साथ ही प्रिंसिपल को एक मोहक मुसकान भरा करबद्ध प्रणाम अर्पित कर वह चल पड़ा।

'यह प्रिंसिपल तो जोंक की तरह चिपक गया था।...कहता था, किसी स्थानीय आदमी के घर रहना ठीक नहीं। कालेज पर रुकें। एक कोठरी दे देंगे। चपरासी रहेगा। कोई असुविधा नहीं होगी।...खैर, मुझे जानते ही हो, एक हाथ मारा और फिर मुक्ति। खैर, चलो अब नाना प्रकार की बातें होंगी।' वर्मा ने छूटते ही धीरे से कहा।

'अरे यार, तुमने तो आकर मुझे जिन्दा कर दिया। यहां गांव के सड़े जड़ मूल्यों के कीचड़ में धंसा मैं मर रहा हूं। तुम्हें देखकर...।' कहते-कहते रामरूप रुक गया।

आवाज़ सुनकर पीछे मुड़कर देखा, भूखा है, दौड़ा आ रहा है...प्रिंसिपल साहब ने दो मिनट के लिए बुलाया है ? कौन-सा ऐसा ज़रूरी काम है ?

'देखा यह नाटक ?...बुरा मत मानना यार, तुम कपिलदेव के साथ चलो तब तक मैं चट आ गया।'

दो मिनट के काम ने घंटा भर वक्त लिया। आधा घंटा साहब की प्रतीक्षा करनी पड़ी। शौच होने चले गये थे। पंद्रह मिनट तक वर्मा के बारे में पूछा और उसकी प्रशंसा की। पंद्रह मिनट में उन्होंने घुमा-फिराकर मात्र इतना ही जानना चाहा कि इस गांव में बांस क्या भाव बिकता है? उन्हें अपने घर पर एक छप्पर डलवाना है।

रामरूप घर की ओर चला तो सूरज डूब रहा था। उसने दांत पीसकर पीछे की ओर देखा, साला अभी तक खड़ा है। नरक का मोटा कीड़ा अंधेरा होते-होते सायकिल पर लदकर अपने गांव गठिया की ओर सरकेगा।...लेकिन ऐसे भद्दे और गलीज़ जैसे आदमी के बारे में मैं कुछ सोचूं क्यों? क्यों अपना मन मैला करूं? वह जैसा है, है।

उसे एक झटका लगा, रामरूप, तू सचमुच गांव के गंदे प्रभावों को आत्मसात् कर टूटने लगा है। छोटी-छोटी चीजें तुम्हें विकल करने लगी हैं। ऊपर उठो। आदर्श विद्यालय और प्रिंसिपल की गंदी राजनीति से ऊपर उठो। ससुर जी और दीनदयाल से ऊपर उठो। वह दूर की कोइली तुम्हें किसी स्तर पर क्यों कचोटे? रघुनाथसिंह की चुभन से तुम क्यों छटपटाओ? विवाह, चोरी और ऋण के बोझ को चौबीस घंटा सिर पर क्यों ओढ़े रहो?—सबसे ऊपर उठो। चील-कौवों की तरह छोटी-छोटी समस्यायें तुम्हारा मांस नोच रही हैं। किसी बड़े उद्देश्य के लिए समर्पित हो जाओ।...विश्वविद्यालय में रहकर तुम क्या-क्या सपने देखा करते थे। पूर्वी उत्तर प्रदेश के पिछड़ेपन को लेकर तुम्हारे भीतर कैसी पीड़ा थी? वह सब क्या हो गया?...तुम्हें क्या हो गया?...तुम कहां खो गये? पूर्वांचल विकास मंच का तुम्हारा सपना कहां छूट गया?...फिर से जीवन को जीना होगा। सड़े जड़ मूल्यों और मूल्यहीनता से उबरना होगा। यही नहीं, साहस के साथ अपने को गलत मूल्यों के चरणों में समर्पित न करके उनसे लोहा लेना होगा। अकेले अपने लिए ही नहीं, समूह के लिए जीना होगा। तभी सुख है, तभी तनावों से मुक्ति है।...कितना सुखद संयोग है, यह तुम्हारा दाहिना हाथ आ गया...।

रामरूप चिंतन में बहता-उमगता तीर की तरह दरवाजे पर खटाक्-से पहुंच गया। उसे अच्छा लगा कि कपिलदेव मौजूद है और सहज भाव से चाय-पकौड़ी कट रही है। एक क्षण के लिए लगा, आते ही वर्मा गृहपति हो गया है और वह स्वयं अतिथि जैसा हो गया है। कोठरी में जूता उतारते-उतारते भगेलुआ कुछ कहने की मुद्रा में सामने खड़ा हो गया।

'क्या है?' कुछ झल्लाकर उसने पूछा।

'मालिक, भूसा खत्म हो गया है।'

'धत्तेरे की।' रामरूप एकदम बौखलाकर कसमसा गया। बोलता तो शायद पागल की तरह फट पड़ता। इशारे से नौकर को जाने को आदेश कर और किसी

प्रकार मन को संयत कर बाहर आया। बड़ी मुश्किल से मुसकराकर उसने वर्मा से पूछा—

'अरे यार, अब ज़रा हमें यह बताओ कि रामराज्य में भूसा क्या भाव था ?'

८

'मैं रावण हूं और मैंने सीता को चुराया था।'—हनुमानप्रसाद ने मन-ही-मन दुहराया और पूछा, 'क्या कहा सुग्रीव उसने ?' और सुग्रीव के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना फिर कहा, 'उसने मुझे रावण बनाया तो अब देख ले यह नयी रामलीला। कैसे बानर-भालू नाचते हैं।···पढ़े फारसी बेचे तेल, देख भाई कुदरत का खेल !'

'आज अतवार है मालिक।' सुग्रीव ने इस प्रकार कहा जैसे किसी विशेष कार्य की ओर ध्यान मोड़ रहा है।

'हां, अतवार है।' हनुमानप्रसाद ने अपने विचारों में खोये-खोये दुहरा दिया।

'वह आज आएगा।'

'अरे हां, आज वह आएगा। मैं तो भूल ही गया था। तो ?' हनुमानप्रसाद ने मुसकराकर पूछा।

'तो ?···उस दिन जो राय हुई···।'

'अंधेरा कुछ-कुछ हो गया रहता होगा ?'

'हां।'

'तब ठीक है।···ठिकाने से ठिकाना धरा दिया जाय। कोई गड़बड़ी हुई तो तुम जानो। मैं चला।'

हनुमानप्रसाद ने चारपाई से उठकर कोने में पड़ी मिर्जापुरी उठाई, इस साल कार्तिक पूर्णिमा के मेले में गांधी आश्रम से खरीदी ऊनी लोई कंधे पर डाल ली और सोचा, अभी तो काफी समय है, ज़रा धान देखने चलें। दरवाज़े के बाद छवर और फिर उससे सटा नलकूप, पहुंचते कितनी देर लगी ? देखा, किसुना इंजन साफ कर रहा है। बहुत सच्चा नौकर है। अपना काम समझ चुपचाप जुटा रहता है। मालिक के पहुंचते ही बाहर आ गया। दोनों धान के खेत की मेड़ पर पहुंचे। मसूरी धान है। सूखा में पड़ गया। ऊपर वाले पानी का कुछ और रंग होता है। नीचे से नलकूप का पानी तो बस जिन्दा रखता है। बरसात में वही एक पानी शुरू में पड़ा कि ताल-खाल भर गया और फिर पानी की जगह ऊपर से माहुर घाम, घाम और घाम। यह तो कहो कि रोहिनी नक्षत्र का बीआ पड़ा था, अपने प्रभाव से लहराता रहा।

'अब तो इसमें पानी दिया जाना चाहिए ?'

'कल डीज़ल के लिए जाकर पैट्रोल पम्प पर से हम लोग वापस आ गये। कहते हैं, अब कार्ड पर मिलेगा।···भाव बढ़ गया। कैसे पानी दिया जाय ?'

'खा-पीकर रात में ट्रेक्टर ठीक रखना। मैं खुद चलूंगा।'

हनुमानप्रसाद ने कहा और अपने दस बीघे के उस विशाल चक की नलकूप वाली नाली पकड़े-पकड़े पश्चिमी माथ पर आकर दक्षिण ओर मुड़ गए। थोड़ी दूर जाकर सदर छवर मिल गयी। यह छवर अब सड़क का रूप ले रही है। आगे इस पर सरकारी नलकूप है। बिजली यहां तक आ गयी तो कुछ लोगों ने अपने नलकूप के डीज़ल वाले इंजन की जगह बिजली वाला कराकर कनेक्शन ले लिया। हनुमानप्रसाद ने भी ऐसा ही किया। किंतु ऐन सिंचाई के मौकों पर बिजली दगा देने लगी और फसलों की कई साली मारी गयी तो हनुमानप्रसाद ने फिर डीज़ल वाला इंजन बैठा दिया। इस हेरफेर में काफी बरबादी हुई परंतु करें क्या ? नयी खेती बरबादी का रोजगार हो गयी है। अब डीजल पर आफत आयी। बाजार से गुम हो गया। चोर बाजार का चौड़ा मुंह खुल गया। किसान मुंह बाये दौड़ रहे हैं। हाय डीज़ल, डीजल। उनका ड्रम तो स्वयं जाने पर रात में भर जाएगा पर औरों का क्या होगा ? लोग मारे-मारे फिरेंगे। नयी खेती का सारा तामझाम गले पड़ गया। कहते हैं, धीरे-धीरे दरिद्र होना हो तो पंपिंग सेट या निजी नलकूप लगवाओ और जल्दी उजड़ जाना हो तो ट्रेक्टर खरीद लो। तब जिसके पास दोनों हैं उसकी क्या स्थिति है ? यह रहस्य समझ में ही नहीं आ रहा है कि जब तक नयी खेती नहीं आयी थी हमारा गांव साहूकार था और इसके आते ही सबके सब लोग कर्जदार हैं। सरकारी ऋण की चक्की सिर पर पड़ी है। उसकी सूद सालोसाल भरते नाकों दम। खाद, तेल, इंजन के पुरजे और टैक्स। सब जोड़-घटाकर बस इज्जत भर बची है। सोचते हैं, अच्छा, चलो यही क्या कम है ? हां भाई, अपढ़-गंवारों के बूते की नहीं है यह मशीनी खेती।

आगे राममनोहर सिंह प्रिंसिपल के नलकूप पर सभापति रघुवीर को बैठे देखकर हनुमानप्रसाद को अच्छा नहीं लगा। यह आदमी उस बारे में बेमतलब एहसान जताता रहता है। वह पावल पांडे वाली बात न उठे, अतः उन्होंने पहले ही एक दूर का प्रसंग उठा दिया—

'कहो सभापति, सुना है इस साल सभापति लोगों का चुनाव होने वाला है !'

'होगा तो निश्चिन्त रहिए,' सभापति ने हंसकर कहा, 'मैं अबकी बार कुर्सी आपको सौंप दूंगा।···उसी तरह जिस तरह आपके छोटे बादशाह को···'

'धत्त मरदे आदमी।···अरे वह लड़का साला···मतलब कि मिल गया है ···तो पड़ा है।···कुछ देश दुनिया की और बात सुनाओ सभापति···।'

किन्तु वास्तव में हनुमानप्रसाद के पास देश-दुनिया की बातें सुनने का

अवकाश कहां था ? उनके मन में तो अंधेरे का एक अंधेर-चक्र नाच रहा था। और बड़की पट्टी पहुंचने की हड़बड़ी मची हुई थी। चलते-चलते पता नहीं कैसे अचानक उनके भीतर कोइली की याद जग गयी। भीतर कहीं धक्क से चोट लगी। क्यों वे लोग नाम निकलवाकर लौटे तो रामस्वरूप घर पर नहीं मिला ? कई दिन गायब रहा। क्यों उससे पुछवाया गया तो मुंह उतर गया ? ओह, यही बैरी है।···अच्छा बच्चू, अब इस जाल से उबरो। हनुमानप्रसाद से भिड़ने का मजा चखो। सूरज का लाल गोला अब तमतमाकर दाहिने ओर आधा कोस भर की दूरी पर पड़ने वाले बीरपुर गांव की घनी बंसवारियों में गिरकर उलझ गया है। गोइयां अड्डे पर पहुंच गए होंगे। कुछ इधर-उधर की चलती बातें चलते-चलते सभापति की ओर फेंक वे आगे बढ़ गए। आगे कुछ दूर तक छवर का दृश्य बहुत सुहावना हो गया है। दोनों ओर ज्वार की फसल खड़ी है। फसल में खिली बालों की शोभा संध्या के उतरने के साथ बढ़ गयी है। झुंड के झुंड चिड़ियां सांझ के बरजने की परवा न कर खेतों में उतर जाती हैं और अपने भार से दबे पौदे जब उनके फूल-से हलके भार से लचक-लचक जाते हैं तो कितना अच्छा लगता है। लेकिन हनुमानप्रसाद को यह सब आज अच्छा नहीं लग रहा है। वास्तव में उनको कभी यह अच्छा नहीं लगता। उन्हें आकर्षित करने वाली और चीजें हैं। उदाहरण के लिए छवर पकड़कर अकेले चलते में अचानक एक खेत के पास खड़े होकर वे बहुत आह्लादित हो उठते हैं। बात सिर्फ इतनी-सी है कि पूरे खेत में ज्वार के पौदों के बीच-बीच में खुरपी से गोड़-गोड़कर अत्यन्त सावधानी और श्रम से चने के बीच बो दिये गए थे। जिसकी डीभी जमकर अब चार-चार अंगुल की हो गयी थी। ज्वार के कट जाने पर चने की बन आएगी। अरहर के नष्ट हो जाने की कसर पूरी हो जाएगी।

बड़की पट्टी अपने खेत की झोंपड़ी के पास पहुंच बीरपुर के सालिका को देखकर दूसरी बार हनुमान बाबू खिल उठे। पक्का और आजमाया हुआ गोइयां है। वह सुग्रीव और भीम से खुसुर-पुसुर बातें कर रहा था। उनके आते ही तीनों खड़े हो गए। सालिका ने सलामी ठोकी। दोनों ने एक-दूसरे को देखा। तब तक 'अच्छा चला जाय' कहकर सुग्रीव दोनों को लेकर गांव की ओर उत्तर दिशा में बढ़ चला। वे लोग आस-पास के खेत वालों को दिखा रहे हैं कि गांव की ओर गए। आगे जाकर कहीं से निचला एकान्त वाला रास्ता पकड़ अंधेरे में ये फिर बहुत आगे बढ़कर वापस हो इस छवर पर इधर आ जायेंगे। बड़की पट्टी मौजा के और दक्षिण और जिधर शाम को कोई नहीं रहता उस ओर जमेंगे और किसी खेत में बैठ 'उसकी' प्रतीक्षा करेंगे।

हनुमानप्रसाद जब हुंकड़कर खोंखते हैं तो दूर-दूर तक के लोग उनकी उपस्थिति से अवगत हो जाते हैं। करइलवा आ गया है। हां, अपनी झोंपड़ी के

आगे घास पर लोई ओढ़कर जम गया है। झोंपड़ी क्या है, ज्वार के ढाठा की टट्टी बनाकर तिरछे खड़ी कर दी गयी है और पुवाल फेंक दिया गया है। यहां पुवाल दोहरा काम करता है। सोने के अतिरिक्त इसी की आंच पर रोज उम्मी भूनने का कार्य सम्पन्न होता है। यह झोंपड़ी वास्तव में अगोरिया का प्रतीक है। वास्तविकता यह है कि रात में कोई नियमित रूप से यहां सोने नहीं आता। सारा कार्य धाक से सम्पन्न होता है। झोंपड़ी है, पुवाल है, इसमें बैठकर खेत अगोरा जा रहा है। बस, इतना पर्याप्त है। रात में कभी-कभी टहल आकर सोता है। यहां हनुमानप्रसाद का सात बीघे का चक है और अरहर-ज्वार की फसल ख़ूब लगी है। उसे देखते ही वह हंकड़ने-खोंखने लगते हैं। लेकिन आज का आह्लाद किसी और कारण से है और आह्लाद है कि भीतर से फटा पड़ रहा है। आज उनकी इच्छा है कि बहुत से लोग यहां जुटें और अपने खेत से बाल टुंगवाकर उम्मी भुनवायें, सब लोग खायें, खूब जमकर बतकही हो। उन्हें इसके लिए बहुत इन्तजार नहीं करना पड़ा। इन्तज़ार तो लोग स्वयं ही कर रहे थे। खोंखी सुन इधर की ओर टघर आए। इस उम्मी-भोज के स्थायी सदस्यों में से बालदेव, दीनानाथ सिंह और हरद्वार तिवारी तो इकट्ठे एक तरफ से आ गए। देवमुनिया, हनुमानप्रसाद का अगला हलवाह बक्सर से बाजार कर लौट रहा था। उसे भी रोक लिया। तभी एक तरफ से महुवारी के दीनदयाल को आते देख उन्होंने हल्ला किया—

'अरे देखो भाई, सिवान का भी एक भयवद आ गया। ज़रा बढ़िया उम्मी कूटो···देख देवमुनिया अपने खेत से बीछ-बीछकर बढ़िया-बढ़िया बाल टूंग ला और काम शुरू हो। हां, भइया, कहो अपने गांव-घर का समाचार। सुना है इस साल खेसारी में चूहे बहुत लगे हैं।'

'हां, बहुत लगे हैं। बिल खोज-खोजकर ऊंचे ढेले रखे जा रहे हैं ताकि रात में उस पर मुसकुड़ुर चिड़िया बैठे और चूहों को साफ करे। परंतु अभी उपद्रव रुका नहीं है।' दीनदयाल ने पास में अपनी लोहामढ़ी मिर्जापुरी रखकर उसी पर बैठते हुए कहा। उसने भी हनुमानप्रसाद की देखा-देखी पिछले नवरात्र में मिर्जापुर से एक दमदार सोटा खरीद लिया।

'रुकेगा। मुसकुड़ुरी चूहों को छोड़ेगी नहीं।···अच्छा उस मामले का क्या हुआ?' हनुमानप्रसाद ने बहुत धीमे से पूछा।

'किसका?···सिरिया वाली परिया का?···ठेंगा के बल पर उसे असाढ़ में जोत लिया। कोई नहीं आया। कातिक में गेहूं-चना बो दिया है। खूब आया है।···बस जिमदार तुम्हारा पीठ पर हाथ बना रहे।' उसी तरह धीमे से दीनदयाल ने भी कहा। हालांकि वहां उपस्थित लोग सुन रहे थे।

'मर्द का काम किया। जो जमीन नोट मांगेगी, उसे नोट दिया जाएगा और

जो चोट मागेंगी उसे वह भी दिया जाएगा। किसी बात की फिकिर मत करना। अदालत में मामला जाएगा तो पौ बारह।···लेकिन सिरिया तो एकदम पड़या है, रांड जैसा, अदालत में कहां जाएगा?' हनुमानप्रसाद ने कहा और अनुभव किया कि दीनदयाल को जो देहात में 'पठान' कहा जाने लगा है उसमें पट्ठे की जवांमर्दी छिपी हुई है।

'माना कि वह नहीं जाएगा लेकिन ले जाने वाले लोग चाहेंगे तो ले जाएंगे न? आपके दामाद साहब भी तो उसके यहां उठते-बैठते हैं।'

'इसी को कहते हैं दीनदयाल भाई कि 'पढ़े फारसी बेचे तेल।' फिर टटके देख लो, तेल बेचने का क्या फल मिलता है।' हनुमानप्रसाद ने कहा और एक बार क्षण भर के लिए मन उचटकर वहां से कुछ दूर दक्षिण ओर छवर पर चला गया जहां कुछ होने-होने जैसा है। उन्होंने इधर-उधर देखा। नहीं, अभी अंधेरा हुआ कहां है? उन्हें आश्चर्य हुआ कि सूरज काफी पहले डूब गया। अंधेरा जल्दी क्यों नहीं हो रहा है?···लेकिन वह इस सांझ के धुंधलके में ही आए तो? ···तो?···तो?···कुछ तब भी होगा।···'अरे भाई क्या देर है?' उन्होंने सिर घुमाकर उधर देखा जिधर 'उम्मी' के उम्मीदवार जुटे थे और तैयार कर रहे थे।

'बस आप लोग आ जाइए।' बालदेव ने कहा।

लकड़ी और पुवाल की आंच पर ऊपर-ऊपर से ही ज्वार की बाल को खूब भूनकर और फिर उस गरम-गरम बाल को एक गमछे में लपेट जमीन पर रखकर ऊपर से मुक्कों द्वारा कुटाई शुरू हुई। हरद्वार तिवारी कसरती आदमी हैं। उनके वज़नी मुक्कों से काम चटपट हो जाता है और भुनी हुई बाल से दाना छूट जाने के बाद तिवारी बलुरी को साफ करने में कुशल हैं। बालदेव तो छटपटाने लगता है, चार परत कपड़ा है तब भी हाथ जल जाता है।

कूटकाटकर मिनटों में उम्मी तैयार। उसी गमछे पर इकट्ठे पसार दी गयी। पलानी में कहीं कागज में नमक खोंसा हुआ था, उसे निकालकर एक जगह रख दिया गया। देवमुनिया को अलग दे दिया गया। उम्मी की गरम ढेरी से एक पसर हथेली पर निकाल कर उसे साफ करने के लिए पहला फूंक मारते हुए हनुमानप्रसाद की ओर देखकर दीनदयाल ने कहा—

'आपका ट्यूबवेल पर वाला धान कैसा है?'

'वह?' हनुमानप्रसाद ने भी एक पसर भरपूर उम्मी लेकर जमाते हुआ कहा, 'रोहिणी का डाला हुआ बीज है, दीनदयाल भाई! करम टरे तो टरे कि पारी न टरे। सो, वही हाल है। वह किस्सा जानते हो?···'

उम्मी का रस लेते बहुत मौज के साथ किस्सा उछल आया कि रोहिणी और रोहा, पति-पत्नी जेल में थे। कोई जुर्म रहा होगा। तभी रोहिणी नक्षत्र का पानी पड़ा। उसे देख पत्नी झंख रही थी, 'आज घर रोहा नहीं।' जेल अधिकारी ने सुन

लिया। पूछा, क्या मतलब ? स्त्री ने समझाया। उसका पति रोहा यदि घर होता तो इस पानी के सुयोग पर बीज डालता। फिर तो वह वज्र पड़ने पर भी नहीं विफल होता। अधिकारी को आश्चर्य हुआ, ऐसा ? उसने अविश्वास के साथ रोहा को धान छींटने का मौका दिया। धान छींटा गया। धान के अंकुर फूटे। पत्तियां निकलीं। अधिकारी ने पशुओं से खनवाकर नष्ट करा दिया। किंतु कुछ दिनों बाद फिर अंखुए निकल आये। बड़े हुए। फिर बाल लगी और फिर अधिकारी ने पशुओं को उस खेत में छोड़वाकर नष्ट करा दिया। अब देखें रोहिणी का छींटा बीज कैसे विफल नहीं होता है। आगे देखो मरजी गोबिन्द की। नष्ट पौधों से पचखी निकल आयी और फिर डंठल बना और बित्ते-बित्ते भर की बाल से भर गया। फिर तो अधिकारी हैरान होने के साथ इतना खुश हुआ कि उसने रोहिणी और रोहा को जेल से मुक्त कर दिया।

कहानी समाप्त कर हनुमानप्रसाद ने कहा, 'सो वही हाल हमारे उस खेत का रहा। मार सूखा, मार सूखा, लगा कि बीज भी वापस नहीं आएगा। लेकिन जाकर कोई देखे रोहिणी की खेती का कमाल। दीनदयाल भाई, मन खुश हो जाता है।'

उस समय दीनदयाल उम्मी के आखिरी पसर को फूंक-फूंककर साफ कर रहा था। उसे फांकते हुए उसने कहा, 'आकर किसी दिन देखूंगा। अब आज तो अबेर हो गयी, चलें।'

'अरे बैठो। अभी क्या अबेर हुई···।'

वास्तव में हनुमानप्रसाद की इच्छा थी कि यह बैठकी तब तक यहां इसी प्रकार जमी रहे जब तक कि हल्ला-गुल्ला के साथ वह सब घट कर सामने नहीं आ जाता। ताकि वे बहुत नाटकीयता पूर्ण सफाई से कह सकें, भला कहो, मैं यहीं सबके लोगों के साथ बैठा हूं और थोड़ी ही दूर पर ऐसा गजब हो गया ? देख लूंगा बदमाशों को···।'

किंतु इसका मौका ही नहीं आया। सामने जो दृश्य था वह अत्यन्त अकल्पित था। हनुमानप्रसाद आंखें फाड़-फाड़कर देख रहे हैं। हां, वही है, सुक्खू कहार। हड्डी-पसली कहां टूटी ? वह तो ठाट से रिक्शे पर बैठा चला आ रहा है। रिक्शा एकदम नया है। कौन चला रहा है सिटहला ? हद हो गयी। अभी तो रास्ता भी पूरी तरह मंजा नहीं है और ये दोनों इस प्रकार हनुमानप्रसाद की छाती पर कोदो दलते, उनके जाल को काटकर शान से नवाबी झाड़ते चले आ रहे हैं। जा, साले हाथ से निकल गए। उन्होंने हाथों को परस्पर रगड़कर साफ करते हुए ऐसी मुद्रा बनाई जैसे इन्हें देख ही नहीं रहे हैं। किंतु बालदेव ने पीठ में खोदकर इस अदेख ध्यान को भंग कर दिया—

'देख रहे हैं···?'

'सुखुआ सिटहला की जोड़ी है।' तिवारी ने चौंककर कहा।

हनुमानप्रसाद चुप ही रह गये। इसी समय खड़खड़-खड़खड़ करता रिक्शा इस दल के पास आकर खड़ा हो गया।

'जयहिन्द, मालिक लोगो।' रिक्शे पर बैठे-बैठे सुखुआ बोला। सिटहला रिक्शा रोक सिर्फ मुस्कराता हुआ खड़ा था।

उस समय हलका अंधेरा उतर आया था। सिहरावन बढ़ गयी थी। खेतों पर सन्नाटा छा गया था। कुछ भूली-भटकी चिड़ियों की चहक कभी-कभी इस सन्नाटे को भंग करती थी। वातावरण गंभीर था। योजना विफल हो चुकी थी। शायद इन दोनों को साथ देखकर वे लोग सहम गए। हनुमानप्रसाद के भीतर एक शूल जैसा उठा। बैरी चुनौती जैसे सामने खड़ा है। और समय होता तो मार जूतों भंगी बना देते। दो साल पहले यह सुखुआ उनका पानी भरता था। एक बार 'भंडा' अर्थात् मजदूरी बढ़ाने के लिए हड़ताल किया तो इतनी मार पड़ी कि बक्सर भाग गया। वहां कचहरी में पान की दुकान कर ली। अब ठाट से रहता है। बढ़िया-बढ़िया पहन-ओढ़कर पान कचरते और सिगरेट फूंकते हपते-हपते आता है। पार साल हनुमानप्रसाद के अगले हरिजन हलवाह सिटहला को बहका ले गया। वह वहां रिक्शा चलाने लगा। साल भर में ही अपना रिक्शा खरीद लिया। एक बार सुखुआ ने सिटहला से थाने में रिपोर्ट करवा दिया था कि उसकी औरत को हनुमानप्रसाद ने मारा। वास्तविकता यह थी कि मारा नहीं सिर्फ काम में ढिलाई करने पर सामान्य रूप से गाली दी थी और मच गया था हाहाकार। गिरफ्तारी से बचने, जमानत कराने और मामला रफा-दफा कराने में कितना भार पड़ा था, सोचकर हनुमानप्रसाद सिहर जाते हैं। इस मामले को लेकर पहली बार उनकी समझ में आया था कि ज़माना बदल गया। ये फटेहाल दरिद्र और मुट्ठी भर अन्न के लिए नित्य गिड़गिड़ाने वाले अब कैसे बगावत में तने रहते हैं। उन्हें लगता है, ये शहर में जाकर अब किसी भी किसान से अधिक सुखी और निश्चिन्त हैं। शहर में भगने की आग फैलती गयी तो यह गांव की खेती तो खाक बन जाएगी। काम करने के लिए आदमी नहीं मिलेंगे। सारी बदमाशी सुखुआ की है। इसका गांव में आना खतरनाक है। आज इन्तजाम तो पक्का था मगर तकदीर का चांड है। बच गया। सिटहला ने बचा दिया। अब एक नहीं दोनों से निपटना है। लेकिन जल्दी नहीं। अचानक हनुमानप्रसाद की व्यवहारकुशलता जग गयी। सहज भाव से हंसकर बोले—

'अरे सुखुआ, लाटसाहब के घोड़े पर से उतरेगा कि उसी पर से तुम्हारा समाचार पूछा जाए?'

सुखुआ ने चट रिक्शे से कूदकर बारी-बारी से सबके पैर छुए। कहा, 'आप लोगों की दुआ से नून-रोटी चल जाता है, मालिक। एक गाय खरीद ली है।

सो, उसके लिए कुछ भूसे का जोगाड़ करने चला आया।

'तो जोगाड़ क्या करना है? बैल-गाड़ी हांकता है न? अपने भुसहुल से एक गाड़ी कसकर लाद ले जा। तू क्या कोई गैर है? जा, सुबह ही आकर···।'

'इसी प्रेम से तो सुखुआ जिन्दा है मालिक। उसने एक बार फिर हनुमान-प्रसाद के पैर छुए।

रिक्शा आगे बढ़ गया तो हनुमानप्रसाद ने बहुत ऐंठी शब्दावली में उसे लक्ष्य कर कहा—

'नक्सलवाद गांव में घुसता जा रहा है।'

९

कोई अधिकारी पेट्रोल पम्प का निरीक्षण करने आ गया था। अतः हनुमान-प्रसाद को रात में रुकना पड़ा। सुबह चार बजे जब वह चला गया तब कहीं जाकर गौं-घात से कर्मचारियों ने उनका ड्रम डीजल से भर दिया। बतीसा ने बताया कि रास्ते में जो एक जगह गेहूं सींचने के लिए बीस छवर से नाली बनाकर पानी ले जाया गया है। वहां भरे ड्रम के साथ ट्रेक्टर फंसेगा। अतः विवश होकर पक्की सड़क से तीन-चार मील और दक्षिण ओर बढ़कर एक दूसरी छवर पकड़नी पड़ी। पूस का जाड़ा भोर में बहुत बढ़ गया था। तिस पर भी ट्रेक्टर खोरा बाग के पास पहुंचा तो हनुमानप्रसाद ने कुछ सोचकर उसे रोकवा दिया। बोले, 'तुम बगीचे के बाहर वाले कुएं पर चलकर कुल्ला-दातून करो तब तक मैं एक साधु से मुलाकात कर आ रहा हूं।'

साधु कवि खोरा!

उत्तर प्रदेश के बलिया-गाजीपुर की जहां सीमा मिलती है और जहां से गंगापार वाला भोजपुर जनपद दिखायी पड़ता है उस राष्ट्रीय राजमार्ग से कुछ उत्तर हटकर एक बाग, बाग में एक छोटी झोंपड़ी में साधुकवि खोरा, साहित्य की साधना को जीवन की साधना से जोड़ते हुए। इस साधना का साक्षी है वह आम का एक पेड़, एकाकी पेड़, बहुत विशाल, पूरा घनघोर, साक्षी ही क्यों, वह खोरा की सम्पूर्ण साधना का अडिग नित्य प्रहरी भी है।

हनुमानप्रसाद जब पहुंचे तो सूरज अभी उगा नहीं था और कम्बल का कुर्त्ता शरीर पर डाले खोरा जी पत्थर के एक टुकड़े पर अपना खुरपा रगड़ रहे थे। अचानक उन्हें देखते ही हनुमानप्रसाद क्रुद्ध हो प्रहारक मुद्रा में आ गये। बोले—

'तू साधु है कि बगुला-भगत चोर है?'

सवाल कितना विकट!

खांची में घास के साहित्य और ज़मीन पर खुरपे के संगीत के साथ करइल

जी के इस सवाल की संगति बैठाने में खोरा अवाक् हो गया। साधु, बगुला भगत और चोर के बारे में नहीं, उससे फिलहाल सवाल खुरपा और घास के बारे में नहीं किया जाता तो अच्छा था। अर्थात् हनुमानप्रसाद जी को पूछना चाहिए था कि तू खुरपा है, कि घास है कि माटी का ढेला है? मगर ऐसा नहीं हुआ।

अवांछित प्रश्न सामने आंखें तरेरकर खड़ा है। हाय खोरा, उत्तर दे। क्या कठिनाई है? तूने तो ब्रह्मताल, रुद्रताल से लेकर गीत, कथा, बिरहा और झूमर सभी ओर की झांकी लिया है। कुत्ते, स्यार और सिंह की बोलियों में भी तुम्हारी घुसपैठ है। मुंह से ही वीणा, सितार और जलतरंग से लेकर मृदंग तक के बोल काढ़ देते हो। तो, काढ़ो कोई उत्तर का जीव-जंतु। संतुष्ट करो एक प्रश्न-पिशाच को। निरीह की तरह निछक दांत चिआरने से काम नहीं चलेगा। यह तुम्हारी परीक्षा ही घड़ी है। ऐसे कठिन सवाल से शायद कभी पाला नहीं पड़ा था।

'पुलिस की दलाली करता है?' तभी दूसरा आक्रमण। आक्रामक का तना चेहरा अभी ढीला नहीं पड़ा था। वह केवल प्रश्नों का प्रहार चाहता है या उत्तर भी, यह स्पष्ट नहीं होता है।

अब क्या कहे खोरा?

दलाली, वकालत, पढ़ाई, और काटछांट से कितनी दूर पड़ जाता है खोरा, यह हनुमानप्रसाद को मालूम नहीं। खोरा के विषय में उन्होंने जितना जाना है वह शायद बहुत अधूरा है। वह तो आईने की भांति एकदम साफ है। यह उसका अपराध नहीं कि किसी को अपना ही चेहरा उसमें दिख जाता है। लोग उसे करइल क्षेत्र का कबीर कहते हैं और करइल जी की दृष्टि में वह चोर है, दलाल है। अब संगति बैठ नहीं रही है। बैठ रहा है खोरा, करइल जी के कुछ और निकट आकर एक मेड़ पर और मुखातिब होकर कुछ कहना चाहता है।

'मैं उड़ती चिड़िया को हल्दी लगाता हूं, हां।' तभी हंकड़कर खोंखते हुए कहते हैं बाबू साहब जी।

तीसरा प्रहार। सम्हालो इसको भी। आंखें सहमकर झुक न जायं। जटा-जूट सिहरकर खिसक न जाय। मुंह का सहज भोलापन उड़ न जाय। अरे हां, खोरा जी सावधान, प्रश्न के शब्द तुमसे कहीं सट न जायं। अर्थ के तीर तुम्हारे भीतर कहीं धंस न जायं। देखो, हमलावर हैरान हो रहा है। उसमें एक और आदमी पैदा हो रहा है जो अब तुम्हारे मौन से लड़ेगा। बस वह एक बार तुम्हें पराजित कर देना चाहता है क्योंकि उसे एक बार तुम्हारे इस बाग में गहरी पराजय मिली है। वह बाग में और खोरा में कोई अन्तर नहीं कर पाता है। बाग के धोखे को उसने तुम्हारा धोखा मान लिया। सचमुच उसे धोखा हुआ। सोचा था, 'साधु ते होइ न कारज हानी।' लेकिन हानि हो गयी। अब वह साधु के भीतर बगुला भगत, चोर और दलाल देख रहा है। साधु के मत्थे अपनी चोरी और

काली कमाई का खेल सकुशल खेलकर निकल जाने का महत्वाकांक्षी जब बीच में ही फंसकर चूर हो गया तो उसके भीतर की खिसिआनी बिल्ली के नाख़ूनों को किसी-न-किसी को तो झेलना ही है। लेकिन खम्भे की भांति अचल-अडिग मौन खोरा भी कमाल है। यद्यपि वह शेर नहीं है पर उसकी बोली बोलकर कम-से-कम उस बिल्ली को चौंका तो सकता था मगर वह तो जैसे प्रस्तर-प्रतिमा बन गया। बस टुकुर-टुकुर ताक रहा है।

'हमें पहचान रहे हो या नहीं?' फिर प्रश्न। मगर, इस बार लगता है मामला उतार पर है।

'ना।' खोरा का उत्तर।

'इतनी जल्दी भूल गया?'

'वजह है' खोरा कुछ रुक-रुक जैसे पूरी तरह थाह ले-लेकर बोलता है, 'पहिले सुना था, बाबू हनुमानप्रसाद एक ठो जमींदार हैं। फिर जाना कि वह रामरूप जी का ससुर है। फिर जाना कि वह गांजा का चोरबजरिया है। फिर आजु ई चउथका कौन सामने ठाढ़ है, अबहीं तलक पहचान में नहीं उतर रहा है।'

'ई चउथका तुम्हारा दामाद है…' क्रुद्ध हनुमानप्रसाद ने खोरा की दाढ़ी पकड़ ली।—'अब बोल? बहुत बकता बना है। मारकर दूसरी टांग तोड़ आज असली खोरा बना देता हूं। तू कपटी मुनी बन बगीचे में बहुत राज कर चुका। बोल, फिर गाली देगा?'

एक बार झकझोरकर हनुमानप्रसाद ने खोरा की दाढ़ी छोड़ दी। खोरा हंसने लगा।

'जै हनुमान ज्ञान गुण सागर…भला। जनम-जनम के पापी इस कपटी मुनि खोरा के तरन-तारन खातिर आप आज पधारे।…दामाद जी को कहां बैठायें, कहां उठायें? कौने लोढ़ा से परिछें—अरे गाली तो सगुन है दामाद जी। गाली में भी कवन गाली? चोरबजरिया कहने पर आप खिसिया गये?…अन्हरिया रात में डीजल का डराम भरकर सरकार जो अकेले उड़ाये जा रहे हैं सो कितनों का पेट काट कर?…हूं, दामाद जी, इस बार हमारी दाढ़ी पकड़कर नोच दीजिए। हमारी टांग तोड़ दीजिए।…हमारा भी डीजल बिना गेहूं का खेत सूख रहा है। कवनो ठिकाना ना बा। अब जल्दी से हमारा परान काढ़ दीजिए।'

'मजाक करता है तू?…और डीजल क्या मुफ्त मिला है? या कि तुम्हारे बाप की उसमें कोई हिस्सेदारी है कि जहर उगिल रहा है?' हनुमानप्रसाद की बोलते-बोलते भौंहें तन गयीं। लगा अब कुछ होगा। लेकिन बढ़ता हुआ हाथ अचानक रुक गया। हंसी-हंसी के बीच खोरा इतना गम्भीर बन जाएगा, सोचा नहीं जा सकता। उसी गम्भीरता के बीच हाथ उठाकर जैसे उसने आदेश दिया—

'बैठ जाइओ। बस, मेरी दो बात अब बैठकर सुन लीजिओ। सुनी हुई बात

वक्त पर काम करती है।'

'अच्छा कहो।' सचमुच हनुमानप्रसाद वहीं खोरा के आगे घास पर बैठ गये। खोरा ने कहना शुरू किया।

'पहिले जब विक्टोरिया का राज था तब रुपया चांदी का होता था। चांदी उज्जर-उज्जर ठण्डी होती है। मगर विक्टोरिया का जो उस पर फोटो था सो उसमें बहुत गर्मी होती थी। तब जमींदारी का बहुत रुतबा था। जमींदार लोगों की तपती थी। अब बाबू साहेब, जमाना बदला। अंगरेजी राज गया। जमींदारी परथा गयी। चांदी गयी। कागज का नोट आ गया। उस पर नरसिंह भगवान का फोटो छपने लगा। नोट के साथ वोट आया। वोट माने सुराज। सब लोग बराबर हो गये। तब कहां से गर्मी आयी? ई आपकी गर्मी असली है कि नकली?'

अब हनुमानप्रसाद के आगे एक सवाल खड़ा हो गया था। उनके चेहरे के बनते-बिगड़ते रंग को देख लग रहा था कि यह 'बहै न हाथ दहै रिस छाती' वाली स्थिति है। यह घास-भूसा जैसा आदमी कितनी चुनौती भरी बात बोल गया। इसे हनुमानप्रसाद दिन-दहाड़े बोरे में कसवाकर गंगा जी में फेंकवा दें तो कोई पूछने नहीं आयेगा। किस बल पर यह नंगा इतने उखाड़ ढंग की बात करता है? जरूर इसके पीछे कोई है?

हनुमानप्रसाद ने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। हेमन्त का वैभव हवा में सूरज की सुनहरी किरणों में और चिड़ियों की चहक में बिखरा हुआ था। मगर उन्हें इससे क्या लेना-देना था? उनके मन पर बगीचे का सन्नाटा चढ़ा हुआ था। एकदम सुनसान है। कहीं कोई नहीं। इतने अकेले में रहकर यह जटहवा कैसे इतना बेपरवाह है? जरूर कोई रहस्य है? एक हलका अज्ञात भय मन में उत्पन्न हुआ। सचमुच कहीं कोई सिद्धि या तंत्र-मंत्र तो नहीं जानता है? मगर उस बार इसके साथ रहकर ऐसा तो कुछ नहीं लगा। बिरहा-कजरी बनाकर गाने वाले इस घसगढ़े से क्यों हनुमानप्रसाद दबे? नहीं, दबने की कोई जरूरत नहीं।

'मैं तुम्हें एक मिनट में ठीक कर सकता हूं।'

हनुमानप्रसाद ने कहा किंतु चाह कर भी वे खड़े नहीं हो सके और न आंखें लाल कर स्वर में तीखापन ला सके।

'किसको-किसको ठीक करेगा बच्चा?' खोरा अचानक साधुता की अप्रत्याशित ऊंचाई से बोल उठा। आंखें बंद कर उसने अपनी बात को आगे खिसकाया, 'आम खाया जाता है किन्तु कोइली नहीं। कोइली से प्रेम...।'

'तुम कोइली को जानते हो?' हनुमानप्रसाद उत्तेजित हो उठे।

'हां।'

'उसे देखा है?'

'हां, तुम भी देखो। देखो, वह परतच्छ है।'

खोरा ने अपने आम के पेड़ की ओर संकेत किया। छोटी-सी कोइली का इतना बड़ा पेड़ !

'मगर महाराज, मैं लैला-मजनूं की कहानी वाला पागल नहीं हूं कि पेड़-पौधे और पत्थरों में अपनी कोइली को देखता फिरूं। मैं तो व्यावहारिक आदमी हूं। वह भगी है। उसे खोजूंगा और जब तक उससे ब्याह नहीं कर लूंगा तब तक जी का कांटा नहीं निकलेगा। क्या आप हमारी मदद कर सकते हैं ?'

खोरा हैरान। मामला कहीं और फंसा है।

'आप बिआह करेंगे ?'

'मेरी उमर अब इस लायक कहां रह गयी किन्तु यह मामला कुछ ऐसा है कि मैं बेबस हो गया हूं।···बहुत पैसा बरबाद हो गया है।'

'असली बिआह होगा कि नकली ?'

'असली।'

'अच्छा, तब अपने चित्त को स्थिर कर सुनिये। मैं आपको एक मंगल गीत सुनाऊंगा।'

खोरा ने मगन मन सस्वर उठाया—

बाबा हो, मोर ब्याह करा द,
तोरा से न होइहें निबाह हो।
अरई (ल) बन के खरइल कटइह,
बृन्दाबन के बांस हो।
ऊंचहि मंड़वा छवइह ए बाबा,
निहुके न कंत हमार हो।
सुखसागर से सेनुरा मंगइह,
अमरपुरवा के बर हो।
पसरन मंगिया भरइह ए बाबा,
झमकत जइबो ससुरार हो।
धरमदास मुख मंगल गावे,
संत सब लेहु बिचार हो।

जब तक मंगल चलता रहा हनुमानप्रसाद की छाती किसी अज्ञात कारण से धड़कती रही। मन घबराता रहा और गीत लगता जैसे कलेजे को कूट रहा है। क्या मतलब ? वे छटपटाकर रह जाते। कुछ अर्थ नहीं बैठ रहा था और जो बैठ रहा था वह बहुत अटपटा लग रहा था। इसीलिए जब गीत की अंतिम कड़ी गुजर गयी तो उन्हें बहुत राहत महसूस हुई। अत्यन्त आकुल भाव से बोले--

'आपका गाना समझ में नहीं आया।'

'जब कछु काल करिय सतसंगा···फिर बिआह तैयारी···कोई ठगवा

नगरिया लूटल रे···बाबू हनुमानप्रसाद जी, गठरिया में चोर लागल बा। बुझलीं ?'

खोरा खुलकर हंसने लगा।

'कोइली कहां है? शोध करके बता दीजिए महाराज, जनम भर सेवा करूंगा।' झटके से हनुमानप्रसाद गिड़गिड़ाते जैसे हाथ जोड़कर खड़े हो गये। वे एकदम भूल गये कि अभी-अभी खोरा को दुर्वचनों से वे बींध रहे थे। फिर उन्हें यह याद आया तो भीतर का भयग्रस्त पश्चात्ताप बाहर फूट पड़ा, 'और आज जो भी गलती हुई उसे माफ कीजिए। उस दिन के चक्कर से मन में पाप बैठ गया था।'

'अब पाप निकल गया ?'

'हां, लेकिन एक शंका है। बगीचे में उस दिन पुलिस कैसे आ गयी ?'

'भेदिया रूपी तीसरी आंख से उसने देख लिया था। आपके गोइयों की चूक का फल आपको मिला।'

'एक शंका और है।···सिपाहियों से आपने यह क्यों कहा कि माल तहखाने में होता है कि बगीचे में? फिर इस बात पर कैसे वे टार्च जला-जला पेड़ों की डालियां छानने लगे।'

'यानी सरकार को शक है कि ऊ भेदिया ई खोरा था ?'

'नाहीं···नाहीं···ऐसी बात नहीं।···हां, एक बात और। आपको काफी तकलीफ दिया। अब चलूंगा।···क्या रामरूप इधर आया था? क्या वह हमारी कोई शिकायत कर रहा था ?'

'नहीं, इधर अरसे से रामरूप जी का दर्शन नहीं मिला। आपका दामाद तो हीरा है।'

'नहीं। आप साधू आदमी क्या जानें? वह तो एक नम्बर का लुच्चा और बदमाश निकला। मेरे यहां एक रात सोया तो उस छोकरी को भगाकर लापता कर दिया।'

'आपको खाली सक है। ऐसा नहीं हो सकता।'

'सक नहीं पक्का प्रमाण है। एक नहीं, कई-कई पक्के प्रमाण। छातापुर के सोखा ने साफ-साफ बता दिया।'

'क्या बता दिया ?'

'बताया कि जो नया आदमी उस दिन दरवाज़े पर सोया था, उसी की कारस्तानी है।'

'औरो कुछ बताया ?'

'हां, बताया कि ग्यारह दिन में लौट आयेगी।'

'तो, लौटी ? कितने दिन हो गये।'

'महीने भर से ऊपर। महाराज, नहीं लौटी।'

'बस, इसी बात से दहला लो बाबू साहेब। जैसे दूसरी बात झूठी, वैसे ही पहली बात भी झूठी। रामरूप जी तो खरे सोने की भांति हैं।'

'कबी जी, और सब कहिए···सब ठीक। बस उस दुष्ट रामरूप का नाम हमारे सामने मत लीजिए। लुटेरा दगाबाज।'

'राम राम। अपने पावपूज-जन पर ऐसा इल्जाम मत लगाओ राजा।'

'मैं क्या लगा रहा हूं, सरकार की नीलामी वाली नोटिस पहुंचती होगी। पांच हजार का मामला है।' झटके में हनुमानप्रसाद कह तो गये किंतु तुरंत ही गहरा पश्चात्ताप हुआ। नहीं कहना चाहिए था। किन्तु अब क्या हो सकता था। तीर निकल चुका था। कहीं यह खोरा उसे खबर कर मुझे बदनाम न करा दे। बहुत गड़बड़ हुआ।

'झूठा अछरंग। बाबू साहेब, छातापुर के सोखा से मुझे जब्बर सोखा मान, मेरी बात मानो। सारा सक भीतर से निकाल दो।'

हनुमानप्रसाद ने दोनों हाथ जोड़कर खोरा के पांव छू लिये। कहा—

'मान गया। मन साफ हो गया।···वह नोटिस वाली बात गलत है। यों ही कह गया। मेरा वह बेटा, बेटा ही रहेगा।' हनुमानप्रसाद ने फिर एक बार खोरा के पैरों को छू लिया।

खोराबाग से बाहर होते-होते हनुमानप्रसाद के मन में एक बात अच्छी तरह बैठ गयी, यह खोरा कबी रामरूप की पार्टी का पक्का आदमी है। उन्हें शूल की तरह चुभ रहा था कि गोपनीय बात खुल गयी। हनुमानप्रसाद तो उस मामले में अपने को एकदम अनजान, निरपेक्ष और असंबद्ध प्रदर्शित करने का प्रयत्न करेगा। लेकिन इस लंगड़े के आगे झटके से निकले वे शब्द क्या सूचित करते हैं? व्यर्थ हुआ यहां आना। इतना दिन चढ़ आया। कबी बनता है। एक लोटा जल का ठिकाना नहीं। बहुत खतरनाक आदमी है। इसे सभी बात की खबर है। ट्रेक्टर के पास पहुंचकर हनुमानप्रसाद के भीतर धक् से हुआ। मन में उठा, अरे, कोइली कैसे वापस आयेगी, यह तो उससे पूछते-पूछते रह गया। दूसरी-दूसरी बातों में भरमा दिया।' और वे खड़े होकर सोचने लगे कि वापसचल कर पूछें। किंतु पैर पीछे नहीं मुड़े। बहुत अनमने ढंग से कुएं पर आकर हाथ-मुंह धोया। ट्रेक्टर स्टार्ट हुआ। घर पहुंचकर हनुमानप्रसाद की खिन्नता और गहरी हो गयी क्योंकि पहला समाचार मिला कि सुखुआ को जो एक गाड़ी भूसा दिया गया उसमें एक बड़ी दुर्घटना होते-होते बच गयी। भुसहुल में वह स्वयं खड़ा रहकर भूसा कसवाता रहा। भूसा कसना समाप्त हुआ। गाड़ी तैयार हुई। हांककर गांव के बाहर हुई, तब तक भुसहुल में आग लग गयी।

१०

सांझ हुई तो उस दिन सबसे पहले सीरी भाई के कऊड़ पर रामरूप पहुंचा। आग सुलग रही थी। धुआं निकल रहा था और महुआरी गांव का धुआंसा आसमान और गाढ़ा होता जा रहा था।

बैलों को हटाकर राम-राम करते सीरी भाई आकर बैठ गए। चुपचाप हुक्के को ईंट पर टिका उन्होंने चिलम हाथ में ले ली, गमछे की खूंट से तमाखू की ढेली खोली और हाथ में ले उसे भुरभुरा कर चिलम पर बोझने लगे। रामरूप उनकी घनी-घनी मूंछों को देख रहा था। उसे लगा, मूंछों में भी खामोशी होती है और मूंछें भी बोलती हैं। सीरी भाई की मूंछों की खामोशी उस दिन बहुत गाढ़ी लग रही थी। धीरे-धीरे उस खामोशी को चीरते हुए हुक्का बोलने लगा, पुड़-पुड़-पुड़-पुड़-पुड़।

हां, और कोई कुछ नहीं बोल रहा है। बोल रहा है केवल वही हुक्का, आग-पानी की आकुल ध्वनि। सीरी भाई तन्मय होकर इस प्रकार हुक्के से चिपट, धुआं खींचने और छोड़ने में जुटे हैं जैसे वे अकेले बैठे हैं। लगता है, जैसे रामरूप की उपस्थिति का उन्हें ज्ञान नहीं है। रामरूप हैरान होकर इस स्थिति को समझना चाहता है। वह समझना चाहता है कि कब और क्यों आदमी को इस प्रकार चुप हो जाना पड़ता है। शायद ऐसा तब घटता है जब उसके भीतर तेजी से कोई कुछ बोलता है और कोई बहस, कोई विवाद या कोई हल्ला-गुल्ला भीतर चलता रहता है। बाहरी मौन शांति की आड़ में भीतरी चीख-पुकार अनसुनी रहती है। हां, उसके कुछ सूक्ष्म परमाणु अज्ञात रूप से परिवेश को प्रभावित करते रहते हैं, चेतना को छूते रहते हैं और असाधारणता का निर्विकल्प आभास होता रहता है।

कुछ आभास रामरूप को पहले मिला था। अब तो मामला साफ है। कुछ और उड़ती बातें उसके कानों में इधर पड़ी हैं। महुआरी गांव ऐसा है कि वहां की हवा में ऐसी बेबात की बातें भी उड़ती रहती हैं जिनकी कहीं जड़ नहीं होती। किंतु यह बात जो सीरी भाई के संबंध में है यदि सत्य है तो वह महासत्यानाशी है। गांव की राजनीति में, यहां के गंवार सामंतों के अनीति चक्र में यह सीधा-सादा भलमनई किसान पिस जायगा। कोई कुछ नहीं बोलेगा। असल में पता नहीं क्या हो गया है कि सब लोग अपने-अपने मौन के घेरे में कैद हो गये हैं। गांव में कहीं कुछ ऐसा हो रहा है जो बहुत अनुचित और शर्मनाक है तो उसके खिलाफ जबान खोलने के लिए कोई तैयार नहीं। लोग सोचते हैं हमसे क्या मतलब? अपने सिर आयेगा तो देख लेंगे।

तो, सीरी भाई के कपार पर टूटे इस पहाड़ को उन्हें ही अंगेजना है। उनकी पूरब पट्टी में कोई धाकड़ आदमी नहीं जो उस 'पठान' के आगे खड़ा हो।

रामरूप की पश्चिमी पट्टी में ले-देकर वही उनका मित्र है। पट्टी मालिकान से गड़ही पर वाले उस घराने से खानदानी बनाव है। छुट्टियों के दिन रामरूप घूमते-घामते उनके यहां पहुंच जाता है। घर दूर-दूर होने पर भी मन का रिश्ता उसे निकट कर देता है। सोनारटोला की खोर पकड़कर ज्यों ही रामरूप पूरब ओर मुंह कर बढ़ता है, पैर अपने आप पिरथी नारायण की बखरी, कन्या-पाठशाला मठिया और हुसेनी की दुकान होते सीरी भाई की खम्हिया में पहुंचा देते हैं। आजकल उनके द्वार के आगे की उत्तर वाली गड़ही में जलकुम्भी भरकर सकस गयी है। रामरूप जब शाम को पहुंचता है, बनमुर्गियों की आवाजें उसका ध्यान खींच लेती हैं। आज भी वे बोल रही थीं और उनकी कुड़कुड़ाहट में उसे 'का कइल जाव', 'का कइल जाव ?' की ध्वनि आ रही थी। सीरी भाई की समस्या से ये भी व्यथित हैं क्या ? क्या कहा जाय ?

सीरी भाई कुल दस बीघे का काश्तकार है। ऐसे छोटे किसान की ज़िंदगी तो फटी लुगड़ी जैसी होती है। किसी प्रकार गांथकर, सी-बटोर कर, कतर-ब्यौंत के साथ गुज़र होता है। वे इतना ही चाहते हैं, लड़कों के मुंह में आहार जाय और इज़्ज़त बची रहे। फिर जब यह आहार और इज़्ज़त किसी अजगर के मुंह में ग़र्क होने लगती है तो कैसा लगता है ? महुआरी का यह पठान (हाल में ही प्रचलित उपनाम) अर्थात् दीनदयाल क्या किसी अजगर से कम है ? ऊंचाई सात फीट, सीना अड़तीस इंच, रंग गोरा, हाथ में लोहा-मढ़ी मिर्जापुरी, आंखों में शैतान और ऐसा वह पठान, जिसके खेत पर ताक दे, वह उसका हो जाय, जिस गुरु की पीठ पर हाथ रख दे, वह चेला हो जाय ! धाक के हाथ, आतंक के पैर, सिकन्दरी तकदीर और पूरा गांव जैसे उसकी अपनी जागीर।

रामरूप ठीक से जानता नहीं है वास्तव में यही जानने के लिए उनके पास आया है कि गांव में यह कैसी-कैसी अफवाहें उड़ी हैं? नया मामला साफ-साफ सामने आया भी नहीं है। इधर के लोग पता लगाने जिला पर गये हैं। कैसे ऐसा हुआ, सबको आश्चर्य है। कोई फर्जी आदमी सीरी भाई के नाम से अदालत में खड़ा हो उनकी वह तीन बीघे वाली परिया दीनदयाल को रजिस्ट्री कर देता है। शायद बात महीनों पहले की है। पैसे के बल पर चुपके-चुपके कागज दुरुस्त हो गये, दाखिल खारिज हो गया। अर्थात् सब खत्म हो गया। अब पठान मिर्जापुरी भांजता रोज उस परिया का चक्कर लगाया करता है। खेत पर तनाजा उसने असाढ़ से ही शुरू कर दिया। फिर कातिक में चना-गेहूं बो दिया। कहा, बएवज़ सूद जोत-बो रहा है। लेकिन सीरी भाई पर उसका ऋण तो बहुत थोड़ा था, महज दो साल पहले का ढाई सौ का हथफेर। सीरी भाई ने पूछा तो कह दिया, इस साल फसल काट कर अपना रुपया मय सूद के मिनहा कर बाकी शिकमी की दर से उसे अदा कर देंगे। सीरी भाई सीधे आदमी मान गये। गांव ने समझा,

यह साहु-खद्धुक का निजी मामला है। मगर इधर भेद खुला तो सब लोग अवाक्।

परिया में छाती भर गेहूं-चना लगा है। लोग देखकर हाय-हाय कर उठते हैं। अब पठनवा ले लेगा, छोड़ेगा नहीं। कौन उसके खिलाफ जायेगा? सभी उससे बचते हैं। सीरी भाई तो उससे इस प्रकार कतराते रहे जैसे बाघ से बकरी। लेकिन वह किस्सा आखिर इस गांव में सही हो गया। बाघ ने नदी के किनारे एक दिन बकरी को भेंट लिया। पानी गंदा न करने का नहीं तो गाली देने का इल्जाम से सही—देख बकरी, तुमने गाली नहीं दी तो तुम्हारे बाप-दादों ने कभी दी हो सही। बाघ बकरी को खाएगा। यही हाल गांव का। यहां नियम-कानून, कचहरी-अदालत, थाना-पुलिस और रईस-सरदारों का शासन-अनुशासन है भी और नहीं भी है। यहां न्याय का हर सिक्का दो पहलू वाला है। अंधेरे में चित-पट की अंधेरगर्दी चलती है। जुए में जान जाती है गरीब की। जो पुलिस साहु की रक्षा के लिए चोर पकड़ती है वही चोर की रक्षा के उपाय गढ़ देती है। हर टेबुल-मुनि नौकर है न कि समाज-सेवक? जहां कागज की आंखें और नोटों के दिल हैं, ऐसी जंगल की जैसी अदालतों में बकरियों की रक्षा की क्या संभावना हो सकती है? वहां तो बाघ ही सरकस होंगे। फिर गांव की बेचारी वे बकरियां जिसके लिए माहुर हो जाती है कभी-कभी कागज की छोटी-सी 'पाती', सम्मन! नोटिस!!

कहता है सीना ठोककर खुल्लमखुल्ला दीनदयाल, जो भी गांव में सीनियर बन उसके सामने सिर उठाता है उसके लिए अदालत से प्रेमपूर्वक भेजवाई एक 'पाती' काफी होगी। अब चलो बच्चू चक्कर काटो। कचहरी कच-हरी है। सिर पर एक बाल साबित नहीं बचेगा। अब सवाल शेष रहा उसके जो गंवार सदा सिर झुका शांत रहता है। तो, ऐसा आदमी अपने को परमार्थ भाव से उसका कोमल आहार बन जाने दे, कोई गांव का बड़ा आदमी उसकी क्यों रक्षा करेगा? वह तो अत्यंत निरपेक्ष भाव से कहेगा, मैं क्या जानूं? मामला जिन लोगों के बीच है, वे जानें। बड़ा आदमी छोटे पचड़ों में क्यों फंसेगा? वह बड़ी-बड़ी बातें सोचेगा, जैसे भारतीय प्रजातंत्र की बात, वोट और चुनाव की बात, रईसी और बड़प्पन की बात, अपने ट्रेक्टर और डीजल की बात। उसकी दृष्टि में भेड़ों से अधिक महत्त्वपूर्ण गड़रिये हैं और गड़रिया से महान् भेड़िया है।

गांव में पठान का मुंहलगा दोस्त झगड़ुआ कहार है। एक दिन हंसी-हंसी में उसने उनसे कहा, 'क्यों सड़े केले पर कटारी भांज रहे हो दयालू', तो उसने उसके कंधे पर हाथ रख दिया। उसकी यही शैली है। जिसे राय में लेना होता है उसके कंधे पर हाथ रख प्रेम से बतियाता है। उस दिन बोला, 'झगड़ू भाई, मैं गांव-गंवई के मल्लू मनई को कुछ नहीं खतियाता हूं। हमारे आदर्श नेता दिल्ली, लखनऊ और पटना में बैठे हैं। गाय को खिलाने, दूहने और दूध को आग पर रख औंटने वाले और हैं। मैं तो सिर्फ मलाई का शौकीन हूं। ढाई छटांक

रोज मिलनी चाहिए।···कुछ लोगों से कुर्सी सट जाती है, कुछ लोगों से नौकरी चिपक जाती है और मेरी कुण्डली में ज़मीन है कि अनचाहे जोत में समा जाती है। मैं क्या करूं ?'

एक ग्रामीण कला, ज़मीन साटो कला। कला में तीन रंगों का संतुलित प्रयोग, ग्राम राजनीति-बल, बाहुबल और अदालत बल। धन्य-धन्य तुम धन्य किसान, धन्य-धन्य तिनबली पठान।

रामरूप सोचता है।

फिर याद करता है, गांव में चर्चा होती है। तरह-तरह की अटकलें लगाई जाती हैं। कुछ पहले की अथवा इसी के समानांतर चलती अन्य घटनाओं के आधार पर भविष्यवाणियां की जाती हैं। गांव-जवार के अन्यान्य 'खेत हड़पो सम्प्रदाय' के नये-पुराने मठाधीशों से पठान की तुलना की जाती है। गहरे चटखारे स्वाद के साथ चर्चाओं में इन लोगों की सफलताओं की कहानियां सुलताना डाकू अथवा मानसिंह की कहानियों की भांति बहुत उत्साह के साथ आती रहती हैं। आश्चर्य है, गांव वाले इस अन्याय-अत्याचार के प्रति हथियार रखकर और एकदम निरपेक्ष होकर बातें करते हैं। अधिकांश कहते हैं,···अब ले लेगा, छोड़ेगा नहीं। गलत मूल्यों के आगे ऐसा आत्मसमर्पण ? क्या हो गया गांव को ? कुछ लोग अहिंसक भाव से तरस खाते हैं,···सीरी भाई तो एकदम पइया है। क्या कर सकते हैं भला ? उसके आगे जुट नहीं सकते। कुछ लोग प्रतिपक्ष के आतंक का गुणानुवाद करते हैं,···वोट के लिए एम० एल० ए०, एम० पी० आते हैं तो दीनदयाल के द्वार पर नाश्ता करते हैं। बी० डी० ओ० और थानेदार वहीं चाय पीते हैं।···अरे हां, और कहां मिलेगी वैसी मोटी साढ़ी वाली दही ? कहां मिलेंगे वैसे मोटे-मोटे बकरे-मुर्गे ?···सीरी भाई खेत पर जायेंगे तो पिट जायेंगे। फिर फौजदारी होगी। अदालत में पहले यही जायेंगे। तब उसका कानूनी पाइंट तगड़ा हो जायगा, मुकदमा दूह देगी। नाव सीरी भाई से नहीं पार लगेगी।

कहते हैं सभापति जी, तूलनारायण—'सीरी भाई, बुद्धिमानी से काम लें और कुछ तगड़ा पड़ें तो सुलह हो सकती है। मगर तब भी दयलुआ दो बीघे से कम पर नहीं मानेगा।'

मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय का छोटा भाई दयानाथ पाण्डेय गांव का सबसे बड़ा मामलागीर, दुबला-पतला एकहरे बदन का चिड़ीमार मुकदमाखोर, एक बीड़ी फेंक लाइटर से चट दूसरी जला सभापति के विचार पर प्रामाणिकता की मोहर लगाता है, 'सभापति जी वाजिब बात कह रहे हैं। अदालत की राह और कानून की रूह से खेत पाना मुश्किल है। मुकद्दमात पुश्त-दर-पुश्त लड़े जाते हैं और जजमेंट नहीं हो पाता। आजकल की अदालतें भठियारखाना हैं। इस कोर्ट से उस कोर्ट तक, सरपंची से लेकर सुप्रीम कोर्ट तक—सीरी भाई के लिए महंगा

पड़ेगा। वह ठेंगा भांज फसल काट लेगा। उसी आमदनी से लड़ता जायेगा। इनका डीह छूट जायगा।···दीनदयाल खेत का प्रेत है। ये कुछ ले-देकर पिंड छुड़ा लें तो भला।'

रामरूप सोच-सोचकर आन्तरिक व्यथा से मथ उठा। उसने देखा, सीरी भाई हुक्के को हाथ में ले फूंक पर फूंक मारते चले जा रहे हैं, एकदम चुप, शांत, स्थिर। धुएं की गंध से लगा, तम्बाकू जल गया है। अब उसके कोयले की सूखी गंध आ रही है। किंतु सीरी भाई को कुछ पता नहीं। वे कहां डूबे हैं? हुक्के में या किसी अनागत के अंधकार में या तनावों की जड़ता में? भविष्य के काले सागर में यह हुक्के की पुड़पुड़ ध्वनि तिनके का सहारा बनी है मगर कितने क्षणों तक?

रामरूप सोचता है, ऐसी स्थिति में कौन नहीं डूब जायेगा? बेटे-बेटी जैसी प्यारी ज़मीन खिसक रही है। बच्चे रोटी के लिए तरसेंगे। बैल-बछिया किस बूते खूंटे पर सही-सलामत रहेंगे। कपड़ा-लत्ता और मालगुजारी चुकाने के लिए कर्ज भी नहीं मिलेगा। ढहते घर और ढहें तो फिर उठने के नहीं। आशा की शादी और अविनाश की पढ़ाई रुक जायेगी। डीह छूट जाने की नौबत आ जायेगी। फिर इज्ज़त चली गयी तो रह क्या जायेगा? देखते-देखते नध जाना पड़ा अनचाहे-अनजाने इस उजड़ जाने के चक्र में।

रामरूप अपने को तौल रहा है। क्या वह सीरी भाई की ओर से दीनदयाल के खिलाफ खुले रूप में खड़ा हो सकेगा?···उसके भीतर से उठ रहा है, खड़ा होना है। खड़ा होना पड़ेगा ही। वह स्वयं भी कहां तक भागकर जान बचायेगा? ···गलत मूल्यों से संघर्ष करना ही पड़ेगा।

'तमाखू तो जल गया है।'

वह उनका मौन भंग करने की चेष्टा करता है। वास्तव में वह सीधे उस विषय में कुछ बात करना चाहता है परंतु एक शब्द भी कहने का मौका ही नहीं मिल रहा है। समय बीत रहा है और प्रतिक्षण रामरूप को आशंका होती है कि कऊड़ पर अब कोई और आया और बात टली।

तमाखू जलने की बात से सीरी भाई अकबकाकर उसकी ओर देखते हैं। हुक्का पीना बंद कर चुपचाप चिलम हुक्के से उतारते हैं, उससे राख गिराते हैं, उसे उलटकर बगल में रखते हैं और उस पर हुक्के को टिकाकर टुकुर-टुकुर रामरूप की ओर देखने लगते हैं। जैसे क्या कहना है? कितना अथाह शून्य भरा है उन आंखों में?

'क्या हुआ वह परिया वाला मामला?' रामरूप ने पूछा।

सीरी भाई बहरे नहीं हैं परन्तु उन्हें देखते ऐसा नहीं लगता है कि बात उन्हें सुनाई पड़ी है। चेहरे पर प्रश्न की कोई प्रतिक्रिया नहीं। वे यथावत् बैठे रहे, अथाह चुप्पी भरी उदासी में डूबे। पांच-सात मिनट बीत गये। बहुत भारी पड़

रहे थे ये मिनट। रामरूप में साहस कहां रहा कि फिर पूछे। दम घुट रहा था। ऊब मिटाने के लिए इधर-उधर देखने लगा।

अंधेरा उतर कर पसर गया था। लोग उत्तर के सीवान से घरों की ओर लौटते दिखाई पड़ रहे थे। गड़ही के किनारे वाली बंसवारी पर जमी कौओं की पंचायत उठ गयी थी। अब छिटपुट कांव-कांव की स्थिति थी। नाले के पार वाले बगीचे क्षण भर में ही स्याही के धब्बे जैसा दिखायी पड़ने लगे थे। हुसेनी वाली गली की ओर कुत्ते भूंकने लगे थे। मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय के नलकूप पर करताल खनक रहा था और ढोल भी बेताल ढमढमा रहा था। शायद आज बिरहा जमेगा। इधर यहां अभी भी कऊड़ पर भी मौन-शून्य-मुद्रा अविचल थी।

थोड़ी देर में सीरी भाई हिले-डुले। रामरूप खुश हुआ। उन्होंने खांस कर गला साफ किया। मुंह पर हाथ फेरा। अब उनके कुछ कहने का स्पष्ट संकेत था। दाहिने हाथ से कऊड़ की आग को चलाकर कुछ तेज़ करते हुए उन्होंने कहा—

'कहो रामरूप, तू तो भइया मास्टर मनई सब देश-दुनिया की बात जानते हो, यह क्या सही है कि रूस-अमेरिका के आदमी चन्द्रलोक घूमकर फिर यहां वापस आ गये ?'

एकदम अप्रत्याशित सवाल। यह आदमी कहां बोल रहा है? कहां गयी परिया ? उसका मामला ? रामरूप को लगा, इतनी बुलंदी से बोलकर इस बूढ़े किसान ने उसे बौना बना दिया। वैज्ञानिक विकास के भौतिकी चरमोत्कर्ष पर पहुंची मनुष्यता के युग में कहां छूट गयी परिया ? गजब आदमी है। विस्मित रामरूप ने सोत्साह कहा—

'हां सीरी भाई, चन्द्रमा पर आदमी का चरण पड़ गया। वहां की मिट्टी धरती पर आ गयी। उसकी जांच हो रही है। चन्द्रलोक अब अगम नहीं रहा।'

'तब तो अब आदमी वहीं चलकर रहे।'

'हां, अब वहीं रहे। इस धरती पर बहुत दुख है।'

'कितनी दूर है चन्द्रमा ?'

'ढाई लाख मील।'

'कहो न कितनी तपस्या करके ऋषि लोगों को चन्द्रलोक प्राप्त होता था और अब आदमी सहज में जहाज पर बैठकर चला जायगा।'

'विज्ञान की महिमा है सीरी भाई।'

'विज्ञान की महिमा ?' सीरी भाई ने सिर हिलाकर बहुत गंभीरता के साथ दुहराया और पुनः पूर्ववत् चुप हो गये। अबकी बार का उनका मौन असाधारण दबावों वाला था। इस मौन के विकट कपाट को तोड़ रामरूप ने उनके भीतर घुसने की एक कोशिश और की और हिम्मत करके बोला—

'कुछ सुनाओ हालचाल सीरी भाई।'

'एक बार का किस्सा है भाइयो,' सीरी भाई ने चट शुरू किया, जैसे वे इसके लिए तैयार थे, 'और किस्सा क्या, हाल साल का वाकिया है। दिल्ली में देश भर के नेता बटुर गये थे और उनकी रोटी चालीस मन वज़न के तवे पर बन रही थी।'

'आपको तवे का कैसे पता चला।'

'मैं क्या जानूं, लोग कह रहे थे कि वह डेढ़-दो लट्ठा लंबा-चौड़ा था। हथेली से तिगुना मोटा। सैकड़ों लोग मिलकर रोटी सेंक रहे थे। हज़ारों खा रहे थे…'

'और लाखों-करोड़ों मोटा रहे थे।' रामरूप बोला। वह भी अब मनोरंजन के मूड में आ गया था। उसने फिर कहा—

'वह समाजवादी तवा कहां से आया सीरी भाई।'

'सुना कि रावण की हवेली खोदने पर उसी के भीतर से निकला था।'

'तब तो उसकी रोटी भी खूब मीठी होती होगी।'

हां, खूब मी…ई…ई…ठ्ठ…ठ्य…ई-ई…!'

'मीठी' शब्द का उच्चारण गजब का मार्मिक था। अब रामरूप आगे क्या पूछे? देखा हुक्के के दो उम्मीदवार चादर सम्हालते ठंडक से आहत-जैसे लपके चले आ रहे हैं। सीरी भाई को वैसे ही छोड़कर वह घर आ गया।

११

घर आकर रामरूप ने देखा कि कोदो का पुवाल झाड़कर बरामदे में एक ओर डाल दिया गया है। अर्थात् 'पहल' पड़ गयी है। पुवाल अभी उठा हुआ है और ऊबड़-खाबड़ खड़बड़ है पर लोग उस पर डट गये हैं। पूरा बरामदा पुवाल की खरी-भारी और हलकी गुमसायन गंध से भरा हुआ है। बिना बिस्तर डाले भारतेन्दु दीवार के सहारे महंथ की तरह पालथी मारे बैठा प्रवचन कर रहा है। उसके सिर और बुशर्ट पर पुवाल के कुछ तिनके अटके हैं। रामरूप ने अनुमान किया, वर्मा ने स्वयं पर यह पहल डाल दी है। शहरी है तो क्या बहुत तेज और अनुभवी है। इतना बराबर पुवाल तो वह स्वयं नहीं डाल पाता। रामरूप कई दिन से यह कार्य संपन्न करने के लिए हुमाच बांध रहा था तथा वर्मा को जाड़े की पहल की रूपरेखा और उस पर सोने का सुख समझा रहा था। उसकी अनुपस्थिति में उसने यह अकेले कर डाला। रामरूप के पहुंचते ही उसने प्रवचन रोककर कहा, 'शिरीमानजी की बहुत जबरदस्त खोजाहट थी।…बस एक मिनट…।' और फिर बात आगे बढ़ा दी। रामरूप ने एक उड़ती नजर श्रोताओं पर डाल ली। उसे आश्चर्य हुआ कि उसके पिता जी, बिलास बाबा भी एक कोने में ओठंघे हुए हैं।

अरविंद जी बहुत दिलचस्पी से सुन रहे हैं। बातें शायद बलराम काका को संबोधित कर कही जा रही हैं। वर्मा कहता है, 'आप लोगों को रामायण की कहानी को नये ढंग से सोचना चाहिए। आजकल जैसी राजनीति तब भी थी। तब मुनियों में दो पार्टी थी। एक वशिष्ठ जी की परंपरावादी और दूसरी विश्वामित्र की प्रगतिशील। वशिष्ठ ने देखा कि राम-लक्ष्मण पर विरोधियों का क्रांतिकारी रंग चढ़ गया है तो उन्हें चिंता हुई। राम-बनवास के षड्यन्त्र में वे अवश्य सम्मिलित थे। नहीं तो ऐसा कैसे होता कि दशरथ के परिवार में इतना बड़ा विस्फोट हो जाता और वे उसके सूत्रधार अभिभावक होकर भी झांकने तक नहीं आते ? पढ़ा है न रामायण, राम-लक्ष्मण और सीता बन को जा रहे हैं और रास्ते में उनके घर के सामने से निकले तो 'निकरि वशिष्ठ द्वार भये ठाढ़े।' जैसे भीतर-ही-भीतर खुश हैं, राज के कांटे निकल गये।···अच्छा भाई अरविंद जी, अब देखिये लाइए, क्या-क्या बना है ?'

रामरूप ने जाना कि उसके कारण जलपान प्रकरण स्थगित रहा है। शायद कुछ चीज़ बनी है। वह भी पहल पर एक ओर बैठ गया। उसके बैठते ही पुवाल चुरमुर-चुरमुर करने लगा। खर-पात के इस उपडासन का संगीत उसे बहुत अच्छा लगा।

अरविंद जी ने बारी-बारी से एक-एक थाली सबके सामने हाजिर कर दी। थाली में एक ओर बेसन का मोहन-भोग दूसरी ओर खंडवरा, पीला-पीला बहुत कायदे से, बड़ी-बड़ी बरफी की भांति तिरछे आयताकार कटा, चने की भींगी दाल पीसकर तैयार, तेल में छना स्वादिष्ट नमकीन, सारी वस्तुएं बहुत भरपूर-भरपूर, चटनी-अचार सहित। सामान आते-आते सभापति तूलप्रसाद जी भी आ गये।

'आइये सभापति जी, कथा-समाप्ति के बाद ऐन प्रसाद वितरण के मौके पर आप जुट गये, वर्मा ने कहा और अरविंद भीतर दौड़ा। वर्मा ने पुनः रामरूप से कहा—

'मास्टर साहब, लालटेन की बत्ती ज़रा तेज कर दीजिए। सभापति जी ने देख लिया कि तेल के अभाव में आप बस संझवत की खानापूर्ति कर रहे हैं।'

'वर्मा मास्टर जी, हम पर काहे नाराज़ हैं,' सभापति जी ने पुवाल पर एक ओर आसन जमाते हुए कहा, 'हमारे दरवाज़े पर तो इसका भी ठिकाना नहीं। सरकार स्वराज हुआ तभी से बिजली भेज रही है।'

'देखिए सभापति जी, मारिये गोली साली बिजली को, अब देखिये आपके सामने क्या आ गया। इतना अधिक और इतना तर माल जो गांव काटता है, रोशनी में कैसे चलेगा ? अंधेरे में ही यह सब चलेगा।'

'गांव वाले बेचारे क्या माल काटेंगे ? शहर के लोग गांव को जिन्दा छोड़ दें, यही बहुत है।'

'आप क्या कहते हैं प्रधान जी, निखहरे पुवाल पर बैठ ऐसे और इतने सामान की बात शहर वाला सोच भी नहीं सकता। एक थाली में एक आदमी के लिए जितना है उतने में तो वहां दस आदमी पंघ जाएंगे।'

'इसी मूर्खता के कारण तो गांव गरीब है। यहां एक कहावत चलती है कि 'कभी घना-घना, कभी मुट्ठी भर चना और कभी वह भी मना।' तो, आप आज एक दिन के इस 'घना-घना' पर सब दिन का अनुमान मत लगा लें।...हां, अब लक्ष्मीनारायण हो।'

सभापति जी की इस अंतिम बात पर वर्मा खूब जोर से हंस पड़ा और उसी हंसते-हंसते में उसने तीन चौथाई से अधिक निकालकर उस अतिरिक्त थाली में रख दिया जिसमें दुबारा देने के लिए सामग्री आकर रखी थी। बिलास बाबा के अतिरिक्त थोड़ा-बहुत सबने निकाल दिया। वे कोने में अत्यन्त शांत भाव से दीवार के सहारे बैठे गोद में थाली ले स्वाद में डूबे रहे। जहां रामरूप रहता है वहां वे कम-से-कम बैठते हैं और बैठते भी हैं तो कुछ बोलते नहीं। किंतु यह सब किसी तनाव के कारण नहीं, प्रगाढ़ प्रेमवश चलता है। सारा भार पुत्र पर, पिता एकदम निश्चिंत और सुखी हैं। ऐसा लगता है, किसी चीज़ से उन्हें अब कोई मतलब नहीं किंतु वास्तविकता यह है कि घर-गृहस्थी के कठिन-से-कठिन कार्य में वे चुपचाप परम उत्तरदायी की भांति नधते-खटते रहते हैं। इतने पर भी ऐसा अवसर कभी नहीं आता कि रामरूप कोई कार्य उन्हें सौंपे अथवा वे किसी कार्य के लिए उससे परामर्श करें। इस प्रकार दोनों में असम्वाद की स्थिति होते हुए भी बहुत समरस अंतरसंवाद की स्थिति रहती है और कभी अंतर रहीं पड़ता। पिछले जीवन की गाने-बजाने वाली रंग-तरंग अब एकदम शांत हो गयी है मगर गांव-देहात में धाक और मान वही है। बहुत आग्रह पर किसी खास मौके पर हारमोनियम लेकर बैठ गये तो अब भी समां बंध जाता है। बहुत दिनों से पहल पड़ने वाला कार्य स्थगित होते देख आज अकेले भिड़ गये। बाद में वर्मा ने मारे आदर के उन्हें बैठा दिया और करीने से पुवाल बिछा दिया।

अन्त में चाय आयी किंतु उसके पूर्व रामरूप की बुढ़िया मां ने आकर अपने हाथ से सबकी थाली में ना-ना करते-करते भी कुछ-न-कुछ सुरक्षित थाली से निकाल-निकालकर डाल दिया, 'का खइल जा पूता, अतना त खइला का बादो चलि जाला।' फिर भरपूर हाथ लगाकर बिलास बाबा की थाली में मोहन-भोग डालते हुए कहा, 'लेईं सभे, अब राति में ना खाये के मिली।' और अन्त में बहुत संतोष के साथ पहल के एक किनारे खड़ी होकर कहा, 'ई कुल्हि जिनिस कमली का हाथ के बनलि ह। कइसनि बनलि बा?'

'क्या पूछना है काकी,' सभापति जी बोले, 'ऐसा बढ़िया जलपान तो मुझे इधर जब से गुड़-घी और तेल के भाव पर वज्र गिर गया कभी मिला नहीं।

कमली के हाथ में बहुत गुन और सफाई है।'

'अच्छा ल, अब ई पेटदगुई आ गइलि।' मां ने कहा और वे भीतर चली गयीं। चाय लाने और पिलाने का कार्य अरविंद और भगेलुआ ने मिलकर संपन्न किया।

कमली का संदर्भ उठते ही रामरूप के मुंह का स्वाद बिगड़ गया। वह अकस्मात् सात कोस दूर बड़ारपुर में फिर गया और किसी घड़ियाल जैसे रघुनाथ बाबू के खूंखार जबड़े में छटपटाने लगा। उसे पता नहीं चला कि कब उसके पिताजी यहां से उठकर गये, कब सभापति जी और बलराम काका गये। कब प्याला-प्लेट वगैरह गया और कब वर्मा उसके अज्ञात उदास और अलसभाव के प्रति उसे कोसता अकेले-अकेले मंदिर की ओर चला गया। वहां उस दिन भंडारा था। जाना रामरूप को भी था परंतु दिनभर का विद्यालयीय तनाव, शाम वाला सीरी भाई का तनाव और फिर यह मधुर स्वाद के साथ उभार पर आ गया कमली के विवाह का तनाव, सबने मिलकर अंत में उसे पछाड़ दिया। गर्दीले पुवाल में बस डूबे-डूबे वह नींद में डूब जाय तो अच्छा। लेकिन, चिंतित पलकों में नींद कहां? वह उठ कर हवेली में चला गया।

भीतर बरामदे में चारपाई के बीच में रखी लालटेन के दोनों ओर बैठे कमली और अरविंद कुछ पढ़ रहे थे। उसके जाते पढ़ाई रुक गयी और 'तुम लोग उधर घर में जाकर पढ़ो' के आदेश से लालटेन और पोथी-पत्रा लिये दोनों के उधर जाते-जाते में पत्नी रामकली ने जान लिया कि कोई खास बात है। वह बरामदे में आ गयी और बिना कहे कमली चौके में चली गयी तो अरविंद जी भी उसके पीछे-पीछे वहां पहुंचे। मां को आवाज देकर रामरूप चारपाई पर बैठ गया। एक मचिया मां के लिए खींच रामकली ज़मीन पर बैठ गयी।

'बड़ारपुर वाले कहते हैं कि शादी फागुन में हो जाय।' रामरूप ने चर्चा बिना भूमिका के छेड़ दी।

'अरे हम लोग भी क्या बनिया-महाजन हैं कि फागुन में शादी होगी? सालमाथ में फसल भेंटा जाने पर ही तो गांव में विवाह-शादी ठानते हैं! उनको क्या है? पहले ही रुपया ऐंठ लेंगे और फिर कूद-कूद खरचेंगे···कितना मांग रहे हैं?' रामकली ने कहा।

'बीस हजार नकद कैस, तिलक चढ़ने से पद्रन्ह दिन पूर्व, दस हजार का खिचड़ी आदि पर का सामान जिसे वे स्वयं अपनी इज़्ज़त के अनुरूप चलकर खरीदवायेंगे और वे फिर कोई व्यय नहीं करेंगे। अर्थात् नाच, बाजा, बत्ती, सवारी, तम्बू, बिछौना और पहले दिन दोपहर का भी भोजन हमारे जिम्मे। बरात दो दिन रहेगी, मरजाद।' कहते-कहते रामरूप जैसे एकदम सिकुड़ गया।

'इतना कहां से कैसे जुटेगा?' रामकली ने कहा और वह रामरूप की ओर

अत्यन्त कातर और दयनीय दृष्टि से देखने लगी। रामरूप के पास वास्तव में इसका कोई जवाब नहीं था इसलिए जवाब में वह और अधिक सिकुड़ कर बेचारा बन पत्नी की ओर देखने लगा। क्षण पर क्षण बीतने लगे। संवाद को लकवा मार गया। रामरूप क्या कहे कि वह कैसे जुटेगा? विवाह के नाम पर संचित राशि के रूप में तो कानी कौड़ी नहीं। आसरा ऋण का है। दुबरी देवता का वही चार हजार का कर्ज़ जो आदर्श विद्यालय में नौकरी के लिए डोनेशन देना पड़ा, फंसा हुआ है और फंसा है घूसिया पर के खेत का एक भाग, बएवज़ सूद? बिना खेत रेहन रखे फिर कौन देगा? फिर खेत फंसते जाएंगे तो खायेंगे क्या। नौकरी में दम नहीं। महंगाई की मार असह्य। मार डाला खाते-कमाते की सफेदपोशी ने। रामरूप यदि पढ़ा-लिखा रुतबेदार अध्यापक नहीं होता तो कितना अच्छा। किसी साधारण खेतिहर परिवार में हाड़-काठ देख कन्या डाल देता। बिना हांव-हांव पट-पट के निबुक जाता। मगर अब यह जो हाथी का दांत निकल गया उसे कैसे अन्दर किया जाय? चालीस-पैंतालीस हजार के कुल व्यय की व्यवस्था कैसे की जाय? अथवा पीछे कैसे लौटा जाय?···कैसे रामकली के गहने उतरवा कर बेचने का प्रस्ताव रखा जाय? हाय रामरूप, जितने रुपये तिलक-दहेज में खरचने हैं उतने रुपये तू जीवन भर में भी कमा सकेगा कि नहीं?···घूसिया पर वाले चक का बाकी बचा खेत भी यदि दुबरी देवता को रेहन के रूप में दे दिया तो वह बारह हजार दे सकते हैं। पांच-छः हजार का अनाज निकाल दिया जायगा। नाच का आइटम काट दिया जा सकता है। हमारा गांव नचदेखवा नहीं है। बरात संक्षिप्त रहे कि द्वार पर ठहराई जाय? तम्बू की ज़रूरत नहीं।···खिलाने-पिलाने में फिर भी दो-तीन हजार बैठेगा। कपड़े-लत्ते और अन्य खर्च···खुचुर-खुचुर दो-तीन हजार तक तो पहुंच ही जायगा। यह कहां से आयगा?···फिर अभी 'वह' बाकी कहां से आयगा?···हनुमानप्रसाद?···कोई आशा नहीं। क्यों न रामकली कुछ करे? कहे कि उसके बाबू जी इस गाढ़े में काम आयें। कम-से-कम वह पुराना वादा ही पूरा कर दें। पांच बीघे में तो बेड़ा पार हो जायगा।···तो, ठीक है। रामकली गठिया जाय। मगर बिना बुलाये कैसे जाय?···खैर, जाय।

एक क्षण में ही दुश्चिन्ताओं के बीहड़ में मनोरथ दौड़ा तो हारा-थका रामरूप पत्नी-शरणता तक पहुंचा। उसने सिर उठाकर पत्नी से कहा, 'अपने बाबूजी से क्यों न एक बार कहो···कहो कि···'

'···हम लोग अब दीन-दुखी कंगले-भिखमंगे हो कन्यादान के लिए बेटी ले तुम्हारी शरण में आये हैं।···क्यों, यही न आप चाहते हैं?' अत्यन्त व्यथित होकर रामकली ने कहा। वास्तव में रामरूप के प्रस्ताव से उसे गहरी ठेस लगी थी। विवाह के भावी धक्के में वह अपने निजी बल की थाह लेने में डूबी हुई थी। थाह मिल नहीं रही थी और वह भीतर-ही-भीतर बेचैन होकर हाथ-

पैर पीट रही थी। एक अध्यापक-पत्नी का बल ही कितना ? कुल छोटे-बड़े दस-बारह थान जेवर के थे, कुछ सोने के, बाकी चांदी के। अब शौक क्या रहा ? सब पूरा हो गया। मौके पर ये गहने ही काम आयें।···लेकिन सब निकल जायेंगे तो फिर इज़्ज़त कैसे बचेगी ? सूनी देह देख लोग क्या सोचेंगे ? कुछ धराऊं गहने ही बेचे जायं तो क्या पूरा पड़ेगा ?···पूरा तो वैसे भी नहीं पड़ता है। कर्ज़ के नाम पर करेजा कांप जाता है। हाय साक्षात् लक्ष्मी जैसी प्यारी बेटी, तू ऐसी करमजली कोख में आयी ? खाली हाथ कहीं किसी गड्ढे में भठ गयी तो जनम भर का पछतावा। जुलाहा का बुना उभारता नहीं है।···नहीं, गिरता-परता विवाह नहीं होगा। देख-सुनकर ठाट से होगा। नहीं पहनूंगी गहना।··· अरविन्द के लिए भगवान हैं। बहुत गहना आयेगा, जायेगा।···लोग सनक गये हैं तो क्या किया जाय। हमारा विवाह हुआ। बाबूजी (रामरूप के पिता) ने एक अक्षर मुंह से नहीं कढ़ाया। इज़्ज़त मुताबिक आप जो दे दें।···बेटी के विवाह में झूठ बोलना पाप नहीं है। लोट-पोटकर और झुककर काम निकाला जाता है। सतवादी हरिश्चन्द्र बनने से काम नहीं बनता।···कहां किसी के चौके पर तीस-चालीस हजार चढ़ता है ? कहां रुपया कम पड़ने पर किसी की बेटी का विवाह रुकता है ?···मगर यह जालिम कहता है कि तिलक चढ़ने के पहले ही सारा पाई-पाई भरपाई हो।···तब इतना रुपया इनको संकारना नहीं चाहिए था। ई मास्टर साहब सीधे-सादे गऊ आदमी ठहरे। सो, मूंड़ लिया। अब जुटाओ बीस हजार-तीस हजार। काढ़ो कर्ज, लादो भार, बना दो अरविन्द को दर-दर का भिखारी···रामकली का सोच इस छटपटाहट की चरम सीमा पर पहुंचा ही था कि रामरूप के प्रस्ताव को ठोकर लगी।

'नहीं, हमारा यह मतलब नहीं है। किंतु रुपयों का जोगाड़ तो करना ही पड़ेगा'। वह बोला।

'इतने महंगे सौदे पर सरकार ने हामी कैसे भर दी ? क्या हैसियत है उनकी ? किस बात पर वे इतनी मोलाई ठान रहे हैं ? किस चीज़ का दाम वे इतना अधिक मांग रहे हैं ?'

'हम लोगों की पसन्द का।'

'तो क्यों हम लोग ऐसी चीज़ पसन्द करें जिसका एक तो दाम नाजायज़ है और दूसरे हम दे न सकें। किस्सा है कि वही पेड़ अंकवार में पकड़ा जाता है जो उसमें अंटता है।···मुंह मारिए बड़ारपुर का। बर-कन्या अनेक जग माहीं।'

'तीन-चार वर्षों की दौड़धूप में कई जोड़ी जूतों के फट जाने के बाद यही तो एक जगह मिली कि घर-वर पसंद आया। किसी तरह दोस्त-मित्रों के साथ दबाव डालकर और नाक घिसते-घिसते शादी तय हुई। सोचो, अब भाग खड़ा होना कितनी भारी बेवकूफी होगी। कठिनाई आयी है तो उसका रास्ता खोजना होगा।'

'तब क्या यही रास्ता है कि मैं नैहर जाकर भीख मांगूं ?'

'भीख क्यों ?···वे बेटी के विवाह का वादा नतिनी के विवाह के मौके पर तो पूरा करें।'

'मुझे किसी वादे की जानकारी नहीं। मेरे पिताजी ने किये हुए वादों को पूरा कर दिया। जो नहीं पूरा हुआ जैसा लगता है वह आपका भ्रम है।'

'माफ करो, मैं भूल गया कि तुम अपने बापजान की रंचमात्र भी निन्दा नहीं सुन सकती हो।'

'तो क्या हमारे पिताजी निन्दनीय हैं ?'

'नहीं, कौन कहता है ? वे अत्यंत आदरणीय, पूजनीय और प्रशंसनीय हैं।'

'तब मूल बात यानी विवाह वाली बात की जाय।'

अब रामरूप मां की ओर मुखातिब हुआ।

'मां, घर में सबसे अधिक अनुभव तुमको है और तुम कुछ बोल ही नहीं रही हो।'

'हम का बोलीं बचवा ?'

'कुछ तो बोलो। तुम्हारा अनुभव हम लोगों से अधिक गहरा है। बहुत दुनिया तुमने देखी है।'

'हमार ज़माना अब गइल। अतना रुपया त देखल का, तब कानों से ना सुनलीं। कुल्हि गइल, अब रुपये के बजारि बा।' मां ने कहा।

'तब कैसे काम चलेगा ? कहां से आयेगा ? कितना खेत फंसाया जाय ? कुछ समझ में नहीं आ रहा है।'

'भगवान् बेड़ा पार लगइहें। घबराये के ना चाही बचवा।'

'दो महीने में कहां से भगवान क्या दे देंगे ? बेटी का विवाह भगवान् भरोसे छोड़ दें तब तो खूब बनेगा।'

'ना, अइसे ना कहल जाला। बेटी के बिआह में भगवाने का खेवले नाइ खेवाले। अदिमी का बस में कुछु नइखे।'

'तुम्हारी बात समझ में नहीं आ रही है।'

'मौका आई त समुझ में आ जाई।···तनी पंडी जी से पतरा खोलवा के देख ल कि बिरहपति (बृहस्पति) बनत बा कि ना।'

'वह सब काम हो गया है। माघ के बाद बृहस्पति बन रहा है। वे लोग कहते हैं फागुन में शादी हो जाय। हम लोगों की राय है, जेठ-वैशाख में हो।'

'नहीं', अचानक कुछ सोचकर रामकली ने कहा, 'अब हमारी भी राय है कि फागुन में ही हो जाय।'

'क्यों ? कैसे विचार बदल गया ?'

'जेठ तक···शायद मैं [illegible]···' बात अधूरी छोड़

कर रामकली सिर झुका मुसकरा उठी और फिर गंभीर हो गयी।

रामरूप सन्न। इतनी सावधानी के बावजूद भी यह क्या हुआ ?…और फिर एक कन्यारत्न का आगमन हो गया तो ?

—और वह उठकर बैठक में आ गया।

१२

गठिया गांव में बैठकखाने तो बहुतेरे किसानों के पास हैं परंतु जाड़े के सुनहरे प्रभात की जैसी बैठकी हनुमानप्रसाद के द्वार पर जमती है वैसी और कहीं नहीं। आज भी जमी है, हालांकि परसों रात की दुर्घटना के कारण यह अनुमान किया जा सकता था कि रोज की तरह कऊड़ के पास पलंग डसा कर और एक लाल रंग का धूस शरीर पर डालकर बाबू साहब आज गलचौरन नहीं करेंगे। किंतु गांव का आदमी क्या उनके बारे में कभी कोई सटीक अनुमान कर सकता है ? जबरदस्त जिन्न है यह करइल। उससे टकराकर सारे अनुमान चकनाचूर हो जाते हैं। वह आज भी वैसे ही बैठा है जैसे रोज बैठता है। चेहरे पर कहीं कोई शिकन नहीं। कल सुबह तो यहां बड़ी भीड़ हो गयी थी। सारा गांव पुछार करने जुटा, कैसे वैसा हुआ ? कब हुआ ? कहां हुआ ? कुछ पता लगा ? हनुमानप्रसाद काफी दिन चढ़े तक उत्तर की औपचारिकता निभाते रहे। फिर उठकर कहीं चले गये। लोगों का अनुमान था कि थाने पर गये हैं परंतु वास्तव में वे अपने नलकूप पर जाकर एकान्त में सोये थे। पुछार करने वाले रात में भी आये। आज शांति है और मालिक का दरबार पूर्ववत् लगा है। कोई बहस छिड़ी है और कऊड़ के पास एक ऊंचे मोढ़े पर बैठा सहकारी समिति का नया सुपरवाइजर विजाधर सहाय कह रहा है—

'मैं यह बात किताब में पढ़कर या किसी से सुन-सीखकर नहीं कह रहा हूं। एकदम मेरे जीवन का अनुभव है। अनगिन सत्य घटनाओं का निचोड़ है, जिसे सुना रहा हूं।'

हनुमानप्रसाद अपने भीतर उलझे थे और सुपरवाइजर की बातें उन्हें अत्यंत अप्रिय लग रही थीं किंतु एक तो वह स्थिति से अनभिज्ञ एकदम नया आदमी था और दूसरे बात उन्हीं को सम्बोधित करके कही गयी थी अतः उत्तर देना ही था। अत्यन्त अन्यमनस्कता के साथ उन्होंने उत्तर दिया—

'तुम्हारी बात ठीक भी हो सकती है परंतु आज की दुनिया को देखते हुए इसे नियम के रूप में मान लेना कठिन है।…देखते हैं कि चोरी, धोखेबाजी, जालसाजी, चार सौ बीस, घूस और तिकड़म वालों की कोठियां आकाश चूमने चली जा रही हैं और पसीने की कमाई खाने वाले अथवा सचाई-ईमानदारी वाले दाने-दाने के मुहताज हैं।'

'बाबू जी, गलती माफ हो,' सुपरवाइजर बोला, 'ज़रूर देखने में कहीं-न-कहीं भूल है। मैं दावे के साथ कहता हूं कि ऐसा नहीं हो सकता। हो भी सकता है तो चन्द दिनों के लिए। वास्तव में कमाई का उतना ही अंश अपने से सुखपूर्वक सटता है जितना उचित होता है। शेष तो मोरी के पानी की भांति निकल जाता है अथवा रुककर सड़ते हुए दुख देता है।'

हनुमानप्रसाद ने कोई उत्तर नहीं दिया। स्पष्ट था कि उन्हें यह दर्शन एकदम नहीं सुहाता था। वे सोच रहे थे कि यहां की कोआपरेटिव सोसाइटी में यह कहां का निकम्मा सुपरवाइजर आया। वह पहले वाला कितना अच्छा था। उस साल सुग्रीव का काम फंसा तो रामरूप के नाम शेयर जमा कर दो हजार ऋण दिखा रुपये चुपके से पहुंचा गया। जब तक रहा, वसूली टरकती गयी। अच्छे मौके पर 'बेटे' ने दुश्मनी मोल ली। मामला मय सूद के पांच हजार कई सौ तक पहुंचा। ज़रा-सा कहा और कितनी मुस्तैदी से उसने कागज ठीक-ठाक कर केस तैयार किया और ऊपर दे दिया। अब आये कुर्की-वसूली तब मज़ा आये।...इधर यह एक है कि युधिष्ठर का जामा पहन सबेरे-ही-सबेरे दिमाग खराब कर रहा है। उन्होंने एक नजर चरन की ओर फेंक कऊड़ पर बैठे टहला को डांटना शुरू किया—

'खूंटे पर बैल खड़े दंवरी कर रहे हैं और यह टहला साला है कि इतने दिन चढ़े तक कऊड़ से चिपका है।'

हां, बात ठीक थी। अब तक बैल हटा दिये जाने चाहिए। टहला फुर्ती से उठा और खूंटे से खोल-खोलकर क्रम से सभी बैलों के पगहे उनकी पीठ पर फेंक दिये। बैल धीरे-धीरे चरन के बगल वाले मैदान में अपने-अपने खूंटे पर जहां वे रोज बांधे जाते हैं जाकर खड़े हो गये और बांध दिये गये। टहला फिर उन्हें ढरकी से खली पिलाने के प्रबंध में जुटा।

इधर कऊड़ पर बात अपनी गति से आगे बढ़ती रही। सुपरवाइजर के पास बैठे रामसनेही ने कहा—

'सुपरवाइजर साहब ठीक कह रहे हैं। मैं जिस महकमे में था, वेतन तो कुछ नहीं था परंतु ऊपर से सोना बरसता था। एक ओर हिसाब होता कि इतने सौ रुपये पर आज हाथ साफ किये और दूसरी ओर घर से अमंगल और अनिष्ट से भरे पत्र आ धमकते, बैल मर गया, खलिहान जल गया, भइया की टांग टूट गयी—नाना प्रकार की हैरानी-परेशानी और नुकसानी।'

सुर्ती ठोंककर बांटते-बांटते मंगल चौधरी का ज्ञान फट पड़ा। बोले—

'अरे साहब, दूर की बात छोड़िये। यही अपने पहलवान साहब को देखिये। ठीका के लूटपाट का धन दीमक चाट गये। साक्षात् भगवान् का चक्र छूटा है। दीमक नोट चाट कर हवेली पर जुटे हैं। चार खंड की हवेली, काठ-बांस सब दुरुस्त। लग गए दीमक तो छप्पर जैसे लाह की तरह गल-गलकर खरक रहा

है। धरन, बंडेरा, तड़क, कोरो, निगहृता और सारे लकड़ी के सामान पर माटी की मोटी-मोटी लकीर खिच गयी। फाटक और जंगले तक नहीं बचे। आलमारी, कुर्सी, टेबुल, सन्दूक और पलंग वगैरह माटी में मिल गये। ज़मीन पर पड़े कपड़े-लत्ते का ही नहीं सत्यानाश हुआ, बक्स के भीतर भी आग लग गयी। लाख जतन हुआ, दीमक नहीं रुके···रुके कब ? जब सब स्वाहा हो गया।'

मंगल चौधरी द्वारा प्रस्तुत प्रत्यक्ष प्रमाण को सुनकर सुपरवाइजर चहक उठा—

'यही तो बात है। मैं दूसरों की बात क्या कहूं, स्वयं मेरे जीवन में अनेक ऐसी घटनायें घट चुकी हैं और इसीलिए कहता हूं कि पसीने की कमाई ही काम आती है। भूल, लोभ या आलस्यवश भी यदि कुछ नाजायज़ पैसा पाकिट में पड़ जाता है तो सांस रोककर प्रतीक्षा करता हूं कि अब किधर से कौन हवा मेरी कुछ हानि करने के लिए आ रही है।···क्या बताऊं, इस आसमानी न्याय में कभी नागा नहीं पड़ा और गड़बड़ करने पर मेरी हानि होकर ही रही।'

जब तक टहला बैलों को खली पिलाता रहा, हनुमानप्रसाद ने उसे देखने और विविध निर्देश देने में अपने को बझाये रखा परंतु उस कार्य की समाप्ति के बाद यह ज़रूरी हो गया कि चलती बात में हस्तक्षेप करें।

'हे सुपरवाइजर, तू तो पढ़ा-लिखा होकर भी जाहिल गंवारों की तरह एकदम पोंगापंथी झाड़ रहा है।···'पढ़े फारसी बेचे तेल' वाला हाल है। तू कहता है, अनुचित कमाई की कीमत चुकानी पड़ती है और यहां तक कि अधिक खा लेने पर भूखों रहने की नौबत आ जाती है तथा अधिक ख़ुशी मना लेने पर रोना पड़ता है।···तो सुन, यह सब कमजोर लोगों के लिए है। 'समरथ के नहिं दोषु गोसाईं।' गांव-देहात में क्या देखते हो ? देखो, कलकत्ता, बम्बई और दिल्ली में। लूट मची है। हर लुटेरा चाहे वह नेता है, मंत्री है, उच्च अधिकारी है, उद्योगपति-व्यवसायी है या स्मगलिंग वाला है, कितनी चांदी काट रहा है। धनी का बेटा धनी होता है। बैरिस्टर का बेटा कलक्टर होता है। मंत्री का दामाद कमिश्नर होता है। क्या दरिद्र हरिश्चन्द्रों के कफन खसोट बेटे कोठी-कार वाले हो जाते हैं ? नहीं, कोठी-कार वाले ही कोठी-कार वाले होंगे। जमीन वाले ही ट्रेक्टर-ट्यूबवेल वाले होंगे, बड़े-बड़े चक और बिगहा-बिस्वा वाले होंगे, और अपनी कूबत से होंगे। उस करेजे की कूबत को तुम्हारे जैसे कमजोर लोग चोरी-बेईमानी कहते हैं तो कहा करें, उससे क्या फरक़ पड़ता है ?'

इस भाषण के तेज झपाटे से सुपरवाइजर सहमकर चुप हो गया। बैठे लोग चौंक गये। मालिक क्यों इतने गरम हैं ? परसों रात वाली घटना का असर है क्या ? होगा ही। आज सुबह से तो कोई आदमी मारे संकोच और भय के उसके बारे में कुछ पूछ ही नहीं रहा है। वास्तव में कितनी शर्मनाक बात है। वह एक

लड़की उस प्रकार बंड़ेरी फांदकर उड़ गयी और यह एक लड़का इस प्रकार हवेली में से गुम हो गया। कल सुबह मालिक दिनभर भरी बन्दूक की भांति भरे-भरे पुछार करने वालों को संक्षेप में जवाब देते रहे। आज उसकी चर्चा करने की भी किसी की हिम्मत नहीं और ये सुपरवाइजर की नैतिक चर्चा पर इस तरह उखड़कर फायर करने लगे।

अंतस्तल की कितनी भी गहराई में बात छिपी हो उसके अव्यक्त आभास की पकड़ सूक्ष्म परिवेश को चीरकर संबंधित वृत्त के भीतर स्पन्दित हो जाती है। हनुमानप्रसाद का आंतरिक संघर्ष लोगों पर खुल गया। उसे खुलना ही था। क्योंकि घटना क्रम अत्यन्त स्पष्ट है। डेढ़ महीना हुआ चटाईटोला के नवीन बाबू यहां पावल पांडेय को मांगने आये। मालिक ने इनकार कर दिया। ऊपर से उनकी मांग से चिढ़ भी गये। उसके बाद एक महीना हुआ कि नवीन बाबू के दो बैल सेंध काटकर चुरा लिये गए। किसी ने किसी से कुछ कहा नहीं परंतु सब लोग सब कुछ जान गये। जान गयें कि मालिक के इशारे पर वह भीमवा की कारस्तानी थी और अब यह भी जान गये कि परसों रात की घटना उसी का बदला है। नवीन के गोइयों ने लड़का गायब कर दिया। कितना कमाल है। घर के बीच से माल अतरिच्छ। शाम को लड़का सही-सलामत था। उसे खिला-पिला कर गोंइठा घर की ओसारी में सुला दिया गया। ओसारी मुख्य हवेली के बाहर दूसरे खण्ड में पड़ती है। यहां वह मालिक की राय से ही बहिष्कृत हुआ। लोगों को आश्चर्य है कि मालिक ने पावल पांडे को इधर एकदम अनगराहित कर दिया है। कभी सामने लाया जाता है तो···ले जाओ, ले जाओ, दाई को दे दो। ओसारी में वह रात को दाई के साथ ही सोता है। उस दिन घर का चौका-बर्तन कर दाई सोने आई तो धक् से रह गयी। लड़का क्या हुआ ? जनमतुआ लड़का अभी कहीं आने-जाने लायक भी तो नहीं। हल्ला हुआ। इधर-उधर टार्च लेकर आदमी दौड़े। सब बेकार। कितनी हिम्मत वाले थे, कैसे आये ? ऐसे सवालों के साथ लोग फिर सो गये। संभव है किसी ने सपना देखा हो कि शाम के अंधेरे में एक मैला-कुचैला हीन लड़का सहज घरेलू भाव से भीतर जाता है। जैसे घर अनेक बार का उसका देखा भाला है। किसे फिर शक हो सकता है ? तमाम परजा-पौनी के लड़के ऐसे आते-जाते रहते ही हैं। लड़का गोंइठे वाले घर में छिप जाता है। हवेली में खाना-पीना चलता रहता है। कऊड़ पर से उठकर आखिर में नौकरों का दल भीतर खाने आता है। बाहर सन्नाटा। मालिक दरभंगा वाली रामलीला-मण्डली में। लड़का इतमीनान से लड़के को उठाकर गोद में लेकर उसी सहज घरेलू भाव से धीरे-धीरे चलता है। तीसरे खण्ड का फाटक पार कर जाता है। दरवाजे पर भी कोई टोकने वाला नहीं। सदा टोकने वाले कहां बैठे रहते हैं ? बस तनिक साहस की तो बात है। फिर बेड़ा पार। हां, दरवाज़े के बेड़े

के पार गली में आते-आते उस छोटे बालक का बेड़ा खेने वाले बड़े-बड़े गुनी तैयार हैं। छन भर का मामला और सब आया-गया।

काफी देर तक कऊड़ पर खामोशी छायी रही। अब कौन क्या बोले ? बात बदल दी जाय—किंतु खुबवा का तो जैसे मौके-बेमौके मुंह खुजलाता रहता है। मालिक ने मुंहलग्गू जो बना दिया है। तो अपना दर्शन लाद बात की गाड़ी हांक ही तो देता है और जांघ पर हाथ मारकर कहता है —

'एक तजरबा हमारा भी है—नाजायज पैसा से काम रद्द-बद्द हो जाता है। बेईमानी कभी नहीं फलती है।···इलाहाबाद कुंभ नहाने गया था। बबुआजी के यहां टिका था। वहां पोथी-रामायन की भरमार थी। चलते समय मन में ऐसा पाप समाया कि आंख बचाकर एक गुटका वाला रामायन झोले में रख लिया। स्टेशन आया तो बड़ी भीड़ थी। लाइन लगाकर खड़ा हुआ। फिर सरकते-सरकते खिड़की पर पहुंचा। टिकट के लिए पैसा निकालने के लिए पाकिट में हाथ डाला। अरे, यह क्या ? सब मामिला साफ था। उस दिन कान पकड़ लिया, अब चोरी-चमारी के नजदीक नहीं जाऊंगा।'

'और फिर एक चिलम गांजा खींचा कि सब बिसर गया।' हनुमानप्रसाद ने सक्षुब्ध हास के साथ कहा, 'साला मुहावरा दुहराया करता है कि 'आन का धन पाऊं तो नाना-नानी का काम करूं' और आज ऐसा ज्ञान बघार रहा है।···चोरी तो इसके खून में घुली-मिली है। इसका दादा इमिरितवा चोर, इसका बाप ठगवा चोर और यह पक्का हरामी चोर, चुगलखोर।···अभी आज सुबह-सुबह कहां-कहां से घूमकर यहां चला आया। लगता है कहीं दम लगाने का जुगाड़ नहीं बैठा है।···जा साला मनीजर से एक चिलम गांजा मांग ले और तबीयत भर जाय तो ठेंगा लेकर गठिया में गली-गली चक्कर मार कि किसी भी गरीब की चरती हुई बकरी कहीं घात पर चढ़ जाय।···बड़े-बड़े ज्ञानियों को हनुमानप्रसाद ने देखा। अब खूबराम जी ध्यानी सामने आये।···पढ़े फारसी बेचे तेल, देख भाई कुदरत का खेल।'

लगा, आदेश होने भर की देर थी। खुबवा किलकता हुआ सरपट भगा बूढ़े मनीजर की ओर। हनुमानप्रसाद के द्वार पर सुर्ती, बीड़ी, तमाखू और गांजा का भंडारी यह मनीजर बैठक के एक कोने में रात-दिन पड़ा रहता है। गांव का अति बूढ़ा निराश्रित कहार अब कहां जाय ? वृद्धावस्था पेंशन योजना का जिस दिन सरकारी मनीआर्डर आता है उस दिन कुछ देर के लिए द्वार छोड़ता है और हनुमानजी के मंदिर तक किसी तरह जाता है। अब मुश्किल यह है कि रात में इसे दिखाई नहीं पड़ता है। दाई इसे यहीं दिन का भी खाना दे जाती है। रुपया हनुमानप्रसाद की तिजोरी में जमा होता जाता है। मनीजर मनाता है, शिवजी उसे और जिलायें कि मंदिर भर रुपया एकत्र हो जाय। मालिक ने कहा है, मंदिर

बनवाकर उस पर संगमरमर लगा फूलराम उर्फ मनीजर का नाम खोदवा देंगे।

हनुमानप्रसाद को लगा कि कुछ अति हो गयी। भ्रष्टाचार-दुराचार के समर्थन में इतने जोर से नहीं जुट जाना चाहिए। कहीं बहुत भीतर से मन कितना डांटता-फटकारता है। लगता है, बेईमानी-शैतानी का चक्कर पाप है, बुरा है। लेकिन यह क्या है कि उसी में मज़ा आता है। यही ईश्वर की लीला है क्या? ईमानदार और बेईमान आदमी दुनिया में रचकर वह अच्छी लीला कर रहा है? फिर एक ही आदमी को सुकर्मी-कुकर्मी दोनों बनाकर वह और तमाशा करता है। शायद इसीलिए ऋषि-मुनि कहते हैं, दुनिया माया है। यह सुपरवाइजर भी माया में पड़ा है और हनुमानप्रसाद भी। मगर हनुमानप्रसाद को कोई पछतावा नहीं है। जब सब कुछ भगवान् करता है तो वह भी जो कुछ करता है भगवान् के हुक्म से करता है। तो क्या भगवान् के हुक्म से ही आज सुबह-सुबह यह सुपरवाइजर मेरे द्वार पर ज्ञान कथने के लिए आया है? फिर आया है तो और कोई बात न करके कर्मफल की बात ही क्यों उठा दिया? उसे यह ज्ञात होगा ही कि परसों की घटना से मेरी सारी धाक और प्रतिष्ठा धूल में मिल गयी है। तो क्या वह यह कहना चाहता था कि यह सब मेरे किसी पाप का फल है? मैं पापी हूं? मैंने कौन-सा पाप किया है? गांजे की स्मगलिंग से भी तो हाथ खींच लिया। अरे, वह काम क्या किसी किसान के वश का है? उसमें शुद्ध बनिया चाहिए, गुंडा।…बेशक हनुमानप्रसाद और चाहे जो है, गुंडा नहीं है, बदमाश नहीं है।… तब यह सुपरवाइजर ऐसी बदतमीजी की बात द्वार पर क्यों कर रहा है। इसको यहीं पर चार झापड़ लगाकर दुरुस्त किया जा सकता है। ट्रांस्फर तो इसका हो ही जाना चाहिए। इसके रहते एक काम नहीं होगा। सम्भव है यह दुश्मनों से मिला हो और सबेरे ही उल्लू बनाने पहुंच गया। दामाद तो मेरी जड़ खोद ही रहा है, यह साला बिकरमवा का आवारा लड़का नवीनवा खान्दानी बैर की बुझी आग को धधका रहा है। एक बैल-जोड़ी की चोरी पर इतना ताव खा गया? फिर उसे पावल पांडे प्रिय था तो दुबारा मांगने के लिए क्यों नहीं आया? कितनी खुशी से हनुमानप्रसाद उसे दे देता। वह कुलच्छनी पाप जब से हवेली में आया चिंता और आशंका की काली छाया बराबर मन पर घिरी रही। गया, बला गयी मगर जाते-जाते करइल के मुंह पर कालिख पोत गया। सजग रहो हनुमान बाबू, यह नवीन नहीं विषधर नाग है। हनुमानप्रसाद इसका दांत तोड़कर रहेगा।

'अच्छा, मालिक अब आज्ञा दें, चलूं।' सुपरवाइजर विजाधर सहाय के हाथ जोड़ सामने खड़े होने से हनुमानप्रसाद का ध्यान भंग हुआ।

'अभी चाय नहीं आयी?…टहला क्या करता है?…देखो।' हनुमानप्रसाद चिल्ला उठे और फिर सुपरवाइज़र की ओर मुखातिब होकर बोले, 'क्या जल्दी है, बैठो। चाय पीकर जाना होगा। इतनी अच्छी-अच्छी बातें गूढ़ ज्ञान की कर

रहे हो तो इसके फलस्वरूप कम-से-कम गाढ़े दूध की मीठी चाय तो मिलनी ही चाहिए।'

कऊड़ पर बैठे सब लोग हंस पड़े। उस हंसी में भावी चाय के स्वाद का आह्लाद भी सम्मिलित था। क्योंकि शुद्ध दूध को जो एक केटली चाय नित्य सुबह बनकर आती है, एक गिलास मालिक को मिलने के बाद स्तर के अनुसार क्रम से जितने लोग उपस्थित होते हैं सबको एक-एक प्याला मिलती है। अधिक लोगों के रहते कुछ अभागे छूट जाते हैं और वे तब खिली हुई धूप में खुले दरबार की इस चलती चाय को देख-देखकर ही सुखी हो लेते हैं।

१३

भुवनेश्वर प्रसाद उर्फ मगनचोला, हनुमानप्रसाद की एकमात्र संतान जिसने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में समाजशास्त्र विषय से गत पांच वर्षों से एम० ए० करते रहने का रेकार्ड बनाया है, आजकल गांव पर आया है। वह आया तो बड़े दिन के अवकाश में और लगता था कि उसे चले जाने की जल्दी है परन्तु इधर गांव की गुनगुनी धूप उसे बेहद सूट कर रही है और वह जम गया है। पहले उसकी बैठक-बाजी दरवाज़े के पीछे दूसरे खण्ड में जमती थी परंतु एक दिन सुबह आदर्श विद्यालय महुआरी के अध्यापक भारतेन्दु वर्मा ने दरवाज़े पर आकर अपना परिचय देते हुए पैर छूकर हनुमानप्रसाद को प्रणाम किया और इच्छा जाहिर की कि वह बबुआ (मगनचोला) से मिलना चाहता है। हनुमानप्रसाद ने पास ही कुर्सी पर बिठाकर अत्यंत आदर के साथ मिठाई और चाय से उसका स्वागत किया, विद्यालय का समाचार पूछा और तब भीतर खबर की। बबुआ को कऊड़ की ओर आते देख 'अब आप लोग बात करें' कहकर हनुमानप्रसाद उठ गये। लोगों ने समझ लिया अब ये सीधे नलकूप पर चले जायेंगे। पिता-पुत्र का पास-पास बैठना तो क्या उनके बीच संवाद भी अत्यंत कम, कभी-कभी और अत्यंत संक्षिप्त होता है। उस दिन भारतेन्दु वर्मा से बात तो चंद मिनटों में हो गयी। अर्थात् वर्मा सिर्फ अपने छोटे भाई सुबोध के बारे में जो बबुआ का क्लासफेलो है, यह जानने आया था कि बड़े दिन के अवकाश में वह घर क्यों नहीं गया? किंतु मगनचोला की बैठकी जो जमी तो भारतेन्दु वर्मा के चले जाने के बाद ग्यारह बजे तक जमी रही। बीच-बीच में चाय और पापड़-पराठे का दौर चलता रहा। दोस्तों की संख्या भी बढ़ती गयी। एक पलंग नाकाफी सिद्ध हुआ तो एक और आया। उस दिन कऊड़ के बैठकबाज अपने केन्द्रीय व्यक्तित्व वाले मालिक से कटकर बहुत उदास हो गये और जल्दी ही इधर-उधर सरक गये।

दूसरे दिन बहुत सवेरे हनुमानप्रसाद के आने के पूर्व लोगों ने देखा कऊड़ के

पास वाले पलंग पर चाय की प्याली लिये और उसके ऊपर उठती भाप से सिगरेट के धुएं को जोड़ते तथा किसी रंगीन फिल्मी पत्रिका पर आखें गड़ाये भुवनेश्वर बबुआ जमे हैं। स्पष्ट था कि अब आज हनुमानप्रसाद कऊड़ पर नहीं आएंगे और कल की भांति आज भी यहां फिल्मी हाहा-हीही, बेलाग ठहाकों और नये तर्ज के संवादों का बाजार ऐसा गर्म रहेगा कि रोज-रोज वाले पुराने बैंठकबाज ठण्डे पड़ जायेंगे।

हनुमानप्रसाद के दरवाजे पर जाड़े की धूप पिछवारे से आती है और इसीलिए कुछ देर से आती है। किंतु आ जाने के बाद पूरी लम्बाई-चौड़ाई में जम जाती है। बहुत अच्छा लगता है। सुनहरी धूप की दनाउर छुअन वाली गुदगुदी की यहां किफायत नहीं होती है। कुएं पर, कऊड़ के पास, खम्हिया के आगे वाले सहन में, बैलों के अडार की ओर, चरन पर, हरसिंगार के पास—जहां चाहे बैठकर घमउरी लो। वैसे केंद्रीय स्थान कऊड़ ही है और उस पर इतनी आसानी से लड़कों का कब्जा हो जायेगा, किसी को इसकी तनिक कल्पना नहीं थी। दूसरे ही दिन क्यों? तीसरे-चौथे और फिर आगे रोज सुबह नाना भांति के तिलंगे वहां जुटने लगे। निस्संदेह हनुमानप्रसाद के लिए ये कुछ बहुत अंडस वाले दिन थे। ट्यूबवेल पर उन्हें नया कऊड़ जगाना पड़ा। पता नहीं यह नालायक कब इलाहाबाद जायेगा।

फिर एक दिन वह आया कि मगनचोला की बैठकी और उसमें चलती बेलाग धक्कामार बातों से कऊड़ वाले पुराने लोग फिक गये और वे लोग लगभग त्राहिमाम्···की स्थिति में भागते हुए हनुमानप्रसाद के पास नलकूप पर पहुंचे।···अरे इतने और ऐसे-ऐसे लुंगियाये झोंटइल···क्या कहते हैं, हिप्पीकट वाले रंगरूट गांव में कहां-कहां से आ गये? और उनकी वे बातें? मालिक, क्या बतायें, सुनने पर····।

'सुन चुका हूं' अत्यंत गंभीर और मर्माहत होकर हनुमानप्रसाद बोले, 'मत सुनाओ। तुम लोग बैठो, तमाखू पीओ।'

हां, सचमुच वे बातें क्या बारम्बार सुनने लायक हैं? हाथ भांजकर और स्वर ऊंचा कर पूरे आक्रोश के साथ भुवनेश्वर ने उस दिन घोषणा की—

'इस देहात का सबसे बड़ा गुंडा मेरा बाप हनुमानप्रसाद है। उसके साथ सीधी लड़ाई छेड़नी पड़ेगी। मैं डंके की चोट पर बोलूंगा—गुंडागर्दी नहीं चलेगी, नहीं चलेगी।'

'क्या सबूत है इसका तुम्हारे पास।' प्रिंसिपल राममनोहर सिंह के लड़के दिलीप ने आंखों में भरपूर आह्लादपूर्ण चमक भर गहरी दिलचस्पी के साथ पूछा।

'सबूत? क्या दो-चार हैं कि गिना दिये जायं? ये जनाब सिक्सटीन की लौंडिया से मुहब्बत करते हैं, उसके भगने पर फिल्मी हीरो की भांति पीछे पड़े हैं,

स्मगलिंग करते हैं, मकान को अवैध सन्तानों का मार्केट बनाये हैं, फसलचोर और बैलचोर क्रिमिनल्स के गैंगमैन बने हैं, चटाईटोला की गुमशुदा बैलजोड़ी वाला केस है, हू डज़ नाट नो द रिअलिटी ? और तो और, अपने खास रिश्तेदार आई मीन सन-इन-ला को नहीं बख्शा, कल रात सिस्टर रोती हुई आई, कोई सीरिअस धोखाधड़ी है, करइल जी के करते फाइव थाउज़ैंड की कुर्की कोआपरेटिव की ओर से धमकी है....।'

'यह तो बड़ी शर्मनाक बात है यार।' सभापति रघुवीर के पुत्र बनारसी ने कहा।

'कहां है सेक्रेटरी, हम लोग एक रेजुल्यूशन करेंगे।'

'हां, हां, कहां है युवा मोर्चा का सेक्रेटरी अच्छे ?' मगनचोला ने कहा और सब लोग इधर-उधर देखने लगे। अच्छे का अर्थ था अच्छेलाल अर्थात् चटाईटोला के नवीन बाबू का पुत्र।

'आज वह अपसेंट है।' जूनियर छात्र नेता विजय, हनुमानप्रसाद के दमाद तुलसी का लड़का बोला।

'क्यों अपसेंट है ? चोला गरज उठा, 'चलो अभी हम सब लोग वहीं चलेंगे। मीटिंग होगी, उस पर फाइन करेंगे, साले मुर्ग का अरेंजमेंट करो और कल मार्निंग में वहीं से जुलूस निकलेगा। जुलूस महुआरी बीरपुर और दानी का पूरा होते हुए गठिया में चौंहद कर पब्लिक मीटिंग के रूप में बदल जायगा। मैं खुद उसे संबोधित करूंगा।....लेट अस गो। अभी....।'

कुछ चारपाइयां मचमचाईं, कुछ चप्पल और साल सरसराये, कुछ बेलबाटम फदफदाये और छींट की रंगबिरंगी चमकती लुंगियां हनुमानप्रसाद का द्वार बुहारतीं किसी अज्ञात उमंग में बहकती-चहकती छवर पर उतर गयीं। मगनचोला ने स्वेटर कन्धे पर रख लिया था। हनुमानप्रसाद ने नलकूप पर से देखा, तूफान इधर से टल गया और वह छवर पकड़कर पूरब ओर मंदिर की ओर बढ़ चला। क्या माजरा है ? उन्होंने किसुना को भेजा, पता करो।

सारा हाल जानकर हनुमानप्रसाद का खून खौल उठा। वे दांत पीसकर कहना चाहते थे कि दस लठैतों को भेजकर चटाईटोला पहुंचने के पूर्व जल-तराशी के ताल में हरामजादों की हड्डी-पसली भुस करा दी जाय परन्तु कुछ सोच-समझकर खून का घूंट पीकर खामोश रह गये। वे कल्पना नहीं कर सकते थे कि उनका अपना रक्त इस प्रकार विरुद्ध होकर विद्रोह कर बैठेगा। उनके सारे बैरी उसके सलाहकार हो जायेंगे और वह उनका बैरी हो जायगा ? क्या हो गया ज़माने को ? यही विश्वविद्यालय की शिक्षा है ? इससे तो अच्छा था बहुत पहले शादी की नकेल गले में डाल खेती-गृहस्थी के खूंटे में बांध दिया होता। मगर अब क्या हो सकता है ? अफसोस, काफी देर हो गयी है। बात बिगड़ गयी है। लड़का

बिगड़ गया है। अब क्या होगा?…अब तो इसका यहां से टलना ही हितकर है। जाकर वहीं इलाहाबाद में यह सब गुंडई-नंगई नाधे। मगर कब तक?…कब तक? हां, अब शादी कर दी जाय। तिलक के लालच में रोके-रोके लड़का लुहेंड़ा हो गया। पुराने लोग ठीक कहा करते थे, बचपन में विवाह कर एक मेहरी घर में बैठा दो। बबुआ ठंडे रहेंगे। मद झड़ जायेगा। छुट्टा छोड़ने पर तो सांड की दशा हो गयी। यह देखो, हमारे ऊपर सींग भांजने लगा। इज्जत धूल में मिलाकर रख दी। ओह, हनुमानप्रसाद को अब यह दिन भी देखना पड़ा। लायक बेटा जिन्दा रहा तो अभी और न जाने क्या-क्या देखना पड़े। ऐसे वंश से तो निरवंशी होना अच्छा। अरे यह वंश नहीं कुलबोरन शत्रु है। शत्रु से लड़ना हनुमानप्रसाद जानता है। शादी करके देख लें, रास्ते पर आता है तो ठीक, नहीं तो उसे रास्ते पर लाना होगा। हनुमानप्रसाद मर नहीं गया है। वह अभी सिर्फ अधेड़ है, पूरा बूढ़ा भी नहीं हुआ है। इस मनसोख चींटे को वह चुटकियों से मसल सकता है। बस यह आजकल वाली बिपति टले। हां, कोई उपाय करना होगा।…कोई उपाय करना होगा। क्या उपाय है? हां उपाय है।

हनुमानप्रसाद उठकर टहलने लगे। वे साकेत नामक धान की उस क्यारी की मेंड़ पर पहुंचे जिसे इस वर्ष सरकारी ग्राम सेवक अपनी देखरेख में आदर्श खेती के रूप में तैयार करा रहा है। अब तो इसकी कटिया होगी। खूब गोटाकर पक गया है। पिछले दिनों इस पर किसी दवा का छिड़काव हुआ था। तब उन्हें ऐसा लगा था कि रातों-रात पौधों में बदलाव आ गया। कुछ पीली पड़ती पत्तियों में कालिमा की रोशनी दौड़ने लगी। यह शुभ लक्षण था। दुनिया में हर रोग की दवा है। धान के रोगी पौधों के लिए दवा है तो आदमी की गुंडई की भी दवा है। रोग की अभी शुरुआत है अतः तेज़ दवा नहीं, मुलायम उपचार किया जाय। गांव में रहने से क्या हुआ? हनुमानप्रसाद को इस शहरी रोग की दवा का पूरा-पूरा अनुभव है। मगर, सवाल यह है कि यह यहां अपने घर में उमड़ा क्यों?

क्यारी के मेंड़ पर टहलते और इस 'क्यों' के इर्दगिर्द मन-ही-मन चक्कर काटते अचानक हनुमानप्रसाद एक जगह रुक गये। 'बस यही बात है।' उन्होंने ताली पीटकर कहा। चुम्बक की सूई जैसे इधर-उधर हिल-डुलकर चाहे कितना ही थरथराये अन्ततः वह घूम-फिरकर एक उत्तर के केन्द्र पर स्थिर हो जाती है वैसे ही कुछ दिनों से हनुमानप्रसाद के मन का कांटा समस्याओं के संदर्भ में सोच-विचारों के विभिन्न बिंदुओं पर मंडराते-मंडराते किसी सशक्त चुम्बकीय अंतर-ग्रंथि से टकराकर खट्ट से रामरूप पर अटक जाता है।…हां, उस सारे उपद्रव की जड़ में रामरूप है। यदि ऐसा नहीं होता तो पांच हजार की कुर्की वाली बात को वह कुलबोरन लड़का हनुमामप्रसाद से क्यों जोड़ता? हनुमानप्रसाद से क्या मतलब? वह कोआपरेटिव सोसाइटी का न तो डायरेक्टर है, और न अध्यक्ष-

सेक्रेटरी या सुपरवाइजर है। उससे क्या मतलब ? कर्ज़ अदा नहीं हुआ तो पुराने सुपरवाइजर ने मामला ऊपर बढ़ा दिया और तहसील से कुर्की आ गयी। इस केस में हनुमानप्रसाद कहां आता है ? और जहां आता है उसे रामरूप को छोड़ और कौन जानता है? अवश्य ही उसने लड़के को उभाड़ा है या कलिया(रामकली) को यहां भेजकर उभड़वाया है।

रामकली की याद आते ही हनुमानप्रसाद का मन कड़वाहट से भर गया। साकेत वाली क्यारी से आगे बढ़कर वे मंसूरी वाली क्यारी की मेंड़ पर बैठ पकी सुनहरी बालियों को हाथ से सहला रहे थे। एक पौधे से सटा बड़ा-सा मोथा देख वे चौंके थे। यह फालतू घास कैसे निराई से बच गयी ? झटके से उसे नोच-कर फेंकने के क्रम में धान का एक पौधा भी नुच गया। मगर बेकार। अब तो फसल पक गयी है। कटिया लगने वाली है। क्या मोथे का क्यारी में रह जाना और क्या नुचकर फिक जाना।···वह साली आयी है हनुमानप्रसाद से लड़ने। रोधना पसारकर नखरा कर रही है। इसी महीने तिलक जाना है। बेटी कमली का ब्याह है। सूत-सूत गहना बेच जोगाड़ हो रहा है। परान अतरास में टंगा है। पुराने कर्ज के भार से कमर टूटी है। अब यह कुर्की का बज्र गिरा। घर में चूल्हा नहीं जला।···कुछ उपाय करो बाबू जी। लड़के भूखों मर जाएंगे। कवनी गलती से आप इतने नाराज हैं ? मेरा नहीं तो अपने छोटे-छोटे नातियों का मुंह देखो। उजड़ कर ये किस घाट लगेंगे। लोग कहेंगे, गठिया के बड़के बाबू साहब के नाती हैं, गली-गली भीख मांग रहे हैं। सारी दुनिया जानती है कि सोसाइटी से उन्होंने रुपया नहीं लिया। यह गले का फांस जाली है। यह फांस काटो ए बाबू जी।··· धत्तेरे की, जैसे हनुमानप्रसाद ही ने उसे फांसा है। हनुमानप्रसाद क्या करे ? जैसी करनी वैसी भरनी। अब देखो और चखो मज़ा लड़की भगाने का, लड़का चोरी कराने का, दुश्मनों से सांठगांठ कर गोल बनाने का, लड़के को बहकाकर बेइज़्ज़त कराने का।···ना, हनुमानप्रसाद कुछ नहीं कर सकता। कलिया, आ गयी तो रह। जाते समय साड़ी-ब्लाउज आदि के साथ सिरनी-बताशा भरपूर देकर तुम्हें आदर के साथ बिदा कर दिया जायेगा। मगर, रामरूप और हनुमानप्रसाद की राजनीति के बीच में तू मत पड़।···जा, बेटी के तिलक की तैयारी कर। कुर्की रुकी रहेगी। हनुमानप्रसाद इतना ही कर सकता है। उसे खत्म करना उसके बूते से बाहर है। रामरूप का दिमाग ठंडा कर ही वह खत्म होगी।···हां, रो मत। बुलका मत चूआ।···जा, विवाह में कम पड़े तो हजार-दो हजार के लिए हनुमानप्रसाद हाथ नहीं सिकोड़ेगा।···उसकी लड़ाई कमली की मां से नहीं, कोइली को भगाने वाले से है। बहुत विद्वान् बनता है। पढ़े फारसी बेचे तेल। बहुत मर्माहत हो वे घर की ओर लौटे।

हनुमानप्रसाद ने सुग्रीव को बुलवाया। संयोग से वह गठिया में मौजूद था।

इधर पता नहीं कहां डूबा रहता है और कुछ उदास रहता है। उसे साथ लेकर मालिक दरवाज़े पर आये। हनुमानप्रसाद और सुग्रीव की गुप्त मंत्रणायें प्रायः खम्हिया में पड़ी चौकी पर बैठकर होती हैं परन्तु इस बार उसे लेकर वे दरवाज़े से भीतर हेल गये और बीच वाले खण्ड में चारपाई मंगा ली। सुग्रीव पत्थर का एक टुकड़ा पास खींचकर बैठ गया। बातें होने लगीं। कुछ देर बाद लगा, दोनों एक निष्कर्ष पर पहुंच गये। हनुमानप्रसाद के चेहरे पर प्रसन्नता की एक गर्वीली चमक चस्पा जैसी लगने लगी। वे उठकर भीतर हवेली में गये। लगभग बीस मिनट बाद लौटे तो उनके हाथ में प्लास्टिक का एक झोला था। झोला सुग्रीव के हाथों में थमाते हुए उन्होंने कहा, 'लो, इसी में सब है।' झोला हाथ में लेकर सुग्रीव बहुत गम्भीर हो गया।

'तो मैं जाऊं ?' उसने खड़े होकर पूछा।

'हां, जाओ !' हनुमानप्रसाद ने कहा।

जिस समय सुग्रीव चटाईटोला पहुंचा उस समय दिन ढल रहा था। नवीन का बैठकखाना एक लम्बे-चौड़े घेरे में है। जिसके प्रवेश द्वार पर लोहे का फाटक है। बैठकखाना आधुनिक ढंग का है मगर सोफासेट के साथ पलंग भी लगे हुए रहते हैं। वह उत्तर मुंह खुलता है। उसके सामने दूर बैलों के खाने की चरन और बगल में लंबी-चौड़ी बरदौल है। उधर ही चारा आदि काटने की व्यवस्था है। बैठकखाने के आगे सहन में दूर तक खड़ंजा है। द्वार पर कऊड़ नहीं है। लड़के नवीन बाबू के द्वार पर ताश खेल रहे थे। सुग्रीव की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। उसने देखा, भुवनेश्वर बबुआ ताश न खेल कर पास ही एक चारपाई पर सोया है। सोचा, लगता है आज भी इसने वह गोली ज्यादे खा ली है। शहरों की पढ़ाई से गांव के लड़कों को नौकरी तो नहीं परंतु तीन-चार चीजें आसानी से मिल जाती हैं। झबर-झबर बाल, अंडबंड बोली, गांव-घर से फिरंट और बाकी कसर पूरी होने के लिए नसा-पानी। हे भगवान्, इन लड़कों से किसानी होगी ? मोटे-मोटे मुलायम चप्पलों को घिसने वाले इनके चिकने-चिकने गोड़ माटी का ढेला बरदाश्त करेंगे ? सिगरेट और ताश की चिकनाई पर फिसलने वाली उंगलियों वाले हाथ गोबर उठा सकेंगे ?···गया ज़माना नौकर का। अपने हाथ से सब करना होगा। बड़े लोगों के दुलरुआ लोगों को या तो हल की मूठ पर हाथ लगाना होगा अथवा जगह-जगह ज़मीन बेचकर शहरों में भागना होगा। मगर ज़मीन खरीदेगा कौन ?···अरे ये तमाम-तमाम किसानों के लड़के कितने भारी पागलपन में फंसे हैं ? यूनिवर्सिटियों की पढ़ाई इनको क्या देगी ?

सुग्रीव ने देखा, भुवनेश्वर करवट बदलता है और फिर उठने-उठने जैसा होता है किंतु फिर ढहकर विचित्र ढंग से उंगलियां नचाने लगता है। लगता है उंगलियां बेदम होकर टेढ़ आती जा रही हैं। मुंह सूखकर लम्बा हो गया है। आंखें धंस गयी

हैं। उनके नीचे वाले भागपर स्याही पुत गयी है। गाल की हड्डियां उभर आई हैं। दाढ़ी के बढ़े हुए बाल उसे कैसे छिपाएंगे? लगता है जैसे अन्न के दानों से महीनों से भेंट नहीं हुई। महंगी शर्ट के भीतर क्षीण हड्डियों का ढांचा भी क्या छिपा है? सूखी लकड़ी की तरह लम्बी-लम्बी सारस की टांगों वाला और धूहे पर टंगे खोखले शरीर वाला यह कैसा गांव का जवान है जो बाप की बखिया उघाड़ने पर तुला है? क्या इससे हनुमानप्रसाद की खेती-गृहस्थी संभलेगी? यह कहीं से जब गांव की माटी, गांव के लोगबाग और यहां की जिन्दगी से सट नहीं पाता है तो आगे की क्या उम्मीद की जाए? गांव में आया तो बाप के लिए ऐसा कांटा हुआ कि खजाना से ठेलकर भगाना पड़ रहा है। इसका बाप तमाम लूटखसोट और तिकड़म करके, खेती में रात-दिन जुटकर इतना सब क्या इसी के फूंकने के लिए कमाता है?…सच है, बदनीयत की कमाई का यही हाल होता है। एक ही आंख की तरई जैसे बबुआ का यह हाल है। लोग ठीक कहते हैं, 'बाढ़े पूत पिता के धर्मे, खेती उपजे अपने कर्मे।'—पैसे वालों के लड़के पैसे के बल पर गा-बजाकर दिन-दहाड़े गुंडा हो गये। अरे हां, ये सब गुंडा नहीं तो क्या हैं? यह नवीन बाबू का लड़का अच्छे लाल है। हाई स्कूल में कई साल से फेल हो रहा है। जिस दिन बाबू साहेब गांव पर नहीं रहते हैं, मोटर साइकिल लेकर महुवारी चमटोल में चला जाता है और रातभर नचनियों का रियाज देखता है या भगवान् जाने क्या करता है। एकाध दिन मार भी खा चुका है।

बहुत खिन्न होकर सुग्रीव उधर चला गया जिधर नौकर चारा काट रहे थे। नौकरों से कई बातों का पता चल गया। जलूस प्राइमरी स्कूल पर से कल नव बजे दिन से निकलेगा। बाबू हनुमानप्रसाद के खिलाफ भाषण होगा। लड़कियों का हाईस्कूल खोला जायगा। गांव की गलियां साफ की जायेंगी। कच्ची फसल उखाड़ने वाले चोरों को रोकने के लिए पहरे का इन्तजाम होगा। नेताजी (मगन-चोला) अगले चुनाव में एम० एल० ए० के लिए खड़े होंगे। ग्राम सुधार होगा। गरीबों को खेत मिलेगा, आदि-आदि।

भुवनेश्वर के जगने की प्रतीक्षा में सुग्रीव को बहुत तपस्या करनी पड़ी। शाम को उसके उठने और हाथ-मुंह धोकर चाय पीने के बाद सुग्रीव उसके सामने हाजिर हुआ। हाथ जोड़कर बोला, 'बबुआ जी, एक काम है। ज़रा उधर चले चलें।'

'क्या है?' एकान्त कोठरी में कुर्सी पर बैठकर भुवनेश्वर ने कहा। उसके मुंह की आवाज़ अभी लड़खड़ा रही थी।

'हाई कोर्ट में मालिक का कल कोई काम है। यह झोला संभालिये। इसमें आवश्यक ब्यौरा और खर्च के लिए रखा है।'

'कितना है?' भुवनेश्वर झटके से बोला।

'चार हजार।'

'राइट। जाओ—कह देना, काम हो जाएगा। ज़रा कायदे से रहें।'

१४

हनुमानप्रसाद को रातभर नींद नहीं आयी। सुग्रीव के द्वारा कहे गये वाक्य कानों में गूंजते रहे।...जाओ, कह देना, काम हो जायेगा। ज़रा कायदे से रहें।...क्या मतलब इन शब्दों का? लड़का मुझे कायदा सिखाने लगा? अरे नालायक, असली बात तो यह कि तू कल जलूस निकाल रहा है कि नहीं? सभा कर रहा है कि नहीं? सभा में हनुमानप्रसाद को गालियां दे रहा है कि नहीं? यह सब तो साफ-साफ तूने बताया नहीं। रातभर दांत पीस-पीसकर वे चारपाई पर ओठंघते-बैठते रहे। सुबह जी धक्धक् करने लगा। मन नहीं माना तो खेत घूमने के बहाने दिन चढ़ते-चढ़ते वे चटाईटोला के रास्ते पर आ गए। मैं खुद चलकर देखूं।

चटाईटोला का प्राइमरी स्कूल जब थोड़ी दूर रह गया तो अचानक पीछे सायकिल की घंटी टुनटुन-टुनटुन बजी। हनुमानप्रसाद ने बगल में हटने के साथ पीछे मुड़कर देखा कि सायकिल सवार उन्हें देख ऐसा हड़बड़ा उठा कि संभल नहीं सका। पास पहुंचकर बोले—

'उठिए, उठिए रामरूप मास्टर जी, कुछ झंडा-वंडा साथ नहीं लाये हैं?'

व्यंग्य रामरूप के कलेजे में गहराई तक चुभ गया। वह तिलमिला उठा। धूल झाड़कर बाबू जी का पैर छूते वह पछतावे में छटपटा रहा था कि क्यों वह दुश्चिन्ताओं में इतना खो गया कि आगे चलते व्यक्ति पर ध्यान नहीं गया और वह पीछे मुड़कर चुपचाप भाग नहीं गया? खैर, होनी को कौन टाल सकता है? सायकिल उठाकर रास्ते पर लगाते उसने सफाई दी—

'इस सायकिल का हैंडिल खराब हो गया है।'

कल शाम को पत्नी रामकली गठिया से लौटी तो उसी के द्वारा रामरूप को ज्ञात हुआ कि भुवनेश्वर आज जलूस निकाल रहा है और बाप के विरोध के मुद्दों में उसको भी घसीट रहा है। बहुत बुरा लगा। करइल जी से उसकी कैसी लड़ाई? आज वे नाराज हैं, कल खुश होंगे। सही-गलत जो है वह है। उसे पतंग की तरह ऐसा उड़ाया जाना कितना शर्मनाक है। उसने कब किससे कहा है कि कुर्की और ऋण की जालसाजी की जड़ वे ही हैं? यह लौंडा क्यों नाहक उसे बदनाम कर शर्म से गाड़ रहा है? क्यों दोनों के बीच की दरार को और चौड़ी बना रहा है? रामरूप चलकर उसे झिड़केगा। नहीं मानेगा तो वह उसका विरोध करेगा। वह साहस के साथ सभा में माइक छीनकर जनता के सामने उसकी भर्त्सना करेगा। यह राजनीतिक लफंगेबाजी गांव में नहीं चलेगी। बेटी के तिलक की तैयारी के तनाव और कुर्की की विपत्ति के साथ यह कैसा तूफान आया? वह

एक दिन का अवकाश लेकर नव बजने से पूर्व ही चटाईटोला स्कूल पर हाजिर हो जाएगा। जलूस नहीं निकलने देगा।···लेकिन उसे क्या पता था कि रास्ते में वह इस प्रकार सहज ही सन्देह-पात्र बन जाएगा।

'तो आप जलूस के आगे-आगे चलने वालों में हैं कि लेक्चर देने के लिए बुलाये गए हैं ?' हनुमानप्रसाद ने फिर दूसरा तीर छोड़ा।

'आप हम पर नाहक नाराज़ हैं,' रामरूप ने रुआंसा होकर कहा, 'कैसा झंडा, कैसा जलूस और कैसी सभा, मुझे तो कुछ पता नहीं।'

बोलने को तो वह झूठ बोल गया और पता नहीं किस आतंक के दबाव में एकदम हड़बड़ा गया परन्तु पुनः पछताने लगा। उसे सही-सही बात कहनी चाहिए थी। इस प्रकार तो उनका सन्देह पुष्ट हो जायगा।

'तो आज ही सुबह आपकी कौन-सी जरूरत चटाईटोला प्राइमरी स्कूल पर आ अटकी ? भला सुनूं तो।'

'बात यह है···बात यह···' रामरूप की ज़बान लड़खड़ाने लगी। क्या कहे ? अब एक झूठ की रक्षा के लिए कौन-सा झूठ गढ़े ?

'हां, हां कहिए। क्यों शर्मा रहे हैं ? गोल पार्टी बनाने पर तो सब कर्म-कुकर्म करना ही पड़ता है।

'नहीं, नहीं बाबू जी, बात यह है कि मुझे एक सरकारी अखबार के लिए किसी साधारण गांव को चुनकर वहां के भूमिहीनों की स्थिति के लिए रिपोर्ट लिखनी है। मैंने गवर्नमेंट को चटाईटोला के बारे में सूचना दे दी है और आज एक दिन की छुट्टी लेकर उसी काम को पूरा करने···।'

'अच्छा, चलिए। मैं भी देखूं आप कैसी-कैसी लिखनी कर रहे हैं। हनुमानप्रसाद ने कहा और वे स्कूल की ओर बढ़े।

अब मजबूरी थी कि पीछे-पीछे रामरूप भी चले। झूठ की फांस अब कितनी उलझ गयी। पूरा नाटक करना पड़ेगा। रामरूप को आश्चर्य था, कैसे ऐसा अप्रत्याशित और अकल्पित बहाना मुंह से निकल गया ? खैर, अब तो इसे पूरी निष्ठा से निबाह कर बाबूजी के मन के सन्देह को दूर करना है।···वह जलूस निकलेगा तो रामरूप उसे भी देख लेगा। बाबू जी के सामने ही जमकर विरोध में लड़ेगा। किन्तु इसकी नौबत नहीं आयी। स्कूल पर पहुंचने के साथ तत्काल ही हवा में उड़ती खबरों से ज्ञात हुआ कि जलूस नहीं निकलेगा। मगनचोला पहर रात रहते मेल ट्रेन पकड़ने के लिए स्टेशन चला गया। शायद इलाहाबाद से कल कोई 'तार' वाइस चांसलर का उसके नाम आया था कि तुरन्त आकर यहां के स्टूडेंट मूवमेंट को कन्ट्रोल करो। 'तार' घर पर आया था जिसे कल शाम को सुग्रीव गठिया से आकर उसे दे गया और जलूस स्थगित हो गया। तिलंगे कल ही तीन-तेरह हो गये।

खबर पाकर हनुमानप्रसाद और रामरूप दोनों ने अपने-अपने ढंग से राहत की सांस ली परंतु रामरूप एक चैन के आते अनेक बेचैनियों में उलझ गया। माटी में मिल गया उसका एक दिन का मूल्यवान आकस्मिक अवकाश। ये करइल महाराज नहीं होते तो और झूठ बोलकर ऐसा उलझा नहीं होता तो अभी कुछ खास देर नहीं हुई थी। मगर ये श्रीमानजी तो बस खाट लेकर पसर गए। पता नहीं इनके पास कभी-कभी कहां से इतना इफरात वक्त हो जाता है कि जहां पड़े वहां पड़े रह गये। दीन-दुनिया की अब कोई खबर नहीं। उस दिन अध्यापकों को किसी ने ईख का ताजा रस भेजवाया था। सात गिलास चढ़ाकर हनुमानप्रसाद ने कहा, अब बस। और चारपाई को धूप में चलती कक्षाओं से दूर खींचकर फिर चुप-चाप पड़ रहे। शर्बत पीकर नये नाटक के लिए रामरूप ने भी उधर ही चारपाई खींच ली। उसके मित्र अध्यापकों ने उसके लिए कागज-कलम जुटाने के साथ-साथ कुछ गरीब मजदूरों को बुलवाने की व्यवस्था चटपट कर दी और अत्यंत अनमने मन से उस नितांत आवश्यक कार्य का श्रीगणेश हुआ। उत्सुकतावश बुलाये गए लोगों के साथ पुरवे के कुछ और लोग भी आ गये। अध्यापक और कुछ छात्र भी कक्षाओं को छोड़-छोड़ इन्टरव्यू का जायजा लेने लगे। जैसे-जैसे और लोग इसमें दिलचस्पी लेने लगे, रामरूप की कुढ़नपूर्ण अन्यमनस्कता बढ़ती गयी। मगर, इस गले पड़ी ढोल को अब उसे झख मारकर बजाना ही था। हे मन, चलो नकली मन से इस असली नाटक को संपन्न करें।

'अच्छा, रामनंदन कुम्हार, तुम्हारे पास घर का खेत मात्र डेढ़ बीघा है और खाने वाले प्राणी छह हैं जिनमें काम करने वाले सिर्फ तुम और तुम्हारा चौदह वर्षीय पुत्र है तो तुम्हारा आजकल कैसे गुज़र-बसर हो रहा है?' रामरूप ने पूछा।

'मैं नहीं जानता कि किस प्रकार हो रहा है। या कि गोसैयां जानते हैं या ई काली जी जानती हैं।' रामनंदन ने अपने सूखे काठ जैसे हाथों से काली थान की ओर संकेत किया और फिर कहने लगा, 'आठ दिन पर दो रुपये का राशन मिलता था। आजकल वह भी नहीं। रिन काढ़कर परसों एक रुपये का जौ लाया। आज काम चल जायगा। दिन में नहीं बनाया। रात में लिट्टी लगेगी। नमक से खायेंगे।'

'फिर बाद में कैसे काम चलेगा?'

'मालिक जैसे चलावें। रो-गाकर नकद-उधार लेंगे। मजूरी करके मरेंगे। परान कठिन है बाबू।'

रामरूप की कलम दौड़ने लगती है। रामनंदन के बयान से अधिक वह अपने मन की भड़ास निकाल रहा है।...यह एक। चारपाई पर पसरा घड़ियाल क्या सारे दिन के लिए बुक हो गया है? ओह, इंटरव्यू के लिए बेकारों की भीड़ की दिलचस्पी सिर्फ नौकरियों में ही है।...क्यों डर रहा हूं? क्या फायदा इस नाटक से? मूर्ख अध्यापकों ने यह फालतू लोगों की लिस्ट सामने पटक दी। दूसरे नंबर

पर भूमिहीन नरायन बीन है। उमर सत्तर। बूढ़ा, बूढ़ी का परिवार, साथ में एक लड़की और उसका छोटा बच्चा। जीविका का साधन सरेहि में से चरने के लिए छूटने वाले पशुओं के गोबर-कण्डे, बटोरना, उसके उपले बनाकर बेचना। पेड़ों से लकड़ियां तोड़कर बेचना।…मगर कौन बगीचे वाला लकड़ी तोड़ने देगा ?

'तुम्हारा काम कैसे चलता है ?'

'कार्ड बना है बाबू ! आठ दिन पर तीन किलो राशन मिलता है।…हां बाबू, ओखध की तरह खा कर गुजर-सफर होता है। दाल तो सपना है। मांड़-भात या नून-लिट्टी बहुत है। मार डालता है यह देह का बस्तरवा बाबू। ई धोती फट गयी है सो झंखन है कि यह कैसे खरीदी जायेगी ?'

—अब रामरूप क्या पूछे ? यह बगल की खटिया तो खर्र-खर्र नाक बजाने लगी। फिर ये तमाशबीन जन ? लगता है, जैसे कुछ मिलने वाला है, कुछ बटने वाला है।…सांय-फुस बात हो रही है कि सरकार को लिख भेजा जा रहा है कि चटाईटोला को जल्दी गल्ला भेजो। मुफ्त गल्ला मिलेगा। अब समझ मे आया, क्यों इतने लोग काम-धाम छोड़ जुट आये ? हाय रे ! हमारे टूटे गांव, स्वराज्य के इतने वर्षों बाद नहीं जुटे तो अब क्या आशा की जाय ? पूछो रामरूप कुछ और।

'आज दिन में क्या खाये हो नरायन ?'

'बाबू, खरमेटाव समझें या कलेवा, एक रोटी रात की बची थी।'

'कितने दिन भर का राशन घर में है ?'

'कल भर…सिर्फ एक जून के हिसाब से।'

'फिर राशन किस दिन मिलेगा ?'

'अभी चार दिन है।'

'तब बीच में काम कैसे चलेगा ?'

'किसी के घट में भगवान् पैठकर कुछ उधार दिला देंगे। नहीं तो उपास है, फाका है, गंगाजल है, लोटा-थाली है, गिरों रखेंगे—अब सरेहि में साग का आसरा भी हो गया।'

'वोट मांगने जो लोग आते हैं उनसे तुम लोग क्यों नहीं कहते हो कि रोजी का साधन दिलवायें ?'

'वोट के बाद एमेले साहब कहां झांकते हैं ? अबकी उनको वोट नहीं दिया जायेगा।'

'उनको वोट नहीं दोगे तो किसको दोगे ?' बाबू हनुमानप्रसाद बोले। वे अब जग गये थे और इस प्रश्न के साथ चारपाई पर बैठ गये।

'मालिक जी, किसी नये गांव-जवार के आदमी को हम लोग चुनेंगे जो अपने बीच का हो और अपना दुख-दर्द मन से बूझता हो।'

नरायन के इस उत्तर ने पता नहीं भीतर के किस तार को छू दिया कि हनुमानप्रसाद एक क्षण के लिए भीड़ भरे उस वर्तमान से बेखबर हो अपने में खो गये।...तो क्या सचमुच उनका बेटा अगले चुनाव में एम० एल० ए० के लिए इस क्षेत्र से खड़े होने की भूमिका बांध रहा है? लगता है लोगों के बीच चलती चर्चायें सही हैं। यदि ऐसा है तो मानना पड़ेगा, वह उनके जैसे बाप से अधिक चालाक है। वोट की राजनीति के लिए अपने लोगों से अधिक विरोधियों को मिलाने की चिंता की जाती है।...तो, यह बात है? वह मुझे गाली देकर मेरे विरोधियों को सहेज रहा है। गोल बांध रहा है। जलूस निकाल रहा है। सभा कर रहा है। दिखा रहा है, एकदम सत्यवादी हरिश्चन्द्र है। अनीति के लिए अपने बाप तक को नहीं बख्शता है।...एक बार हवा बन गयी तो बन गयी। आवारागर्दी में भी कम लाभ नहीं। नेता वाला गुन लड़के में आ रहा है। खेती-बारी में नहीं अब इसी में इज़्ज़त है।...नाहक मैं परेशान हूं। बेटा फारसी पढ़कर तेल का नहीं, यह छिपे-छिपे राजनीति का खरा धंधा नाधे है। ठीक कहते हैं, 'ना हल चले न चले कुदारी, ऊपर से धन बरसे मुरारी।'

चिंतन के इस उत्साहवर्धक झोंक में हनुमानप्रसाद उठे और बिना रामरूप अथवा उपस्थित अन्य लोगों की ओर देखे झटके से एक ओर चल दिये। उनके अकस्मात् इस प्रकार उठकर चले जाने पर लोगों ने अनुमान लगाया, कोई बहुत जरूरी काम शायद स्मरण आ गया। रामरूप ने राहत की गहरी सांस ली। लगा, एक बोझ उतर गया। अब वह मुक्त है। किंतु चलता हुआ कार्यक्रम उसे बीच में रोकना नहीं है। इस व्यर्थ की घूर उकटेरन में लगा, कुछ मूल्यवान चीजें हाथ लगने लगी हैं। गांव के लोगों को वह जानता है, इस बोध की इस इंटरव्यू के चलते धज्जी-धज्जी उड़ गयी। गरीबी की गहरी तहों में मध्यम वर्ग का यंत्रगतिक जीवनयापन करने वाला सफेदपोश व्यक्ति कहां पैठ पाता है? जहां गांव में ऐसा कल्पनातीत पिछड़ापन है वहां फैशनेबुल अन्दाज़ में राष्ट्र-निर्माण की ऊंची-ऊंची बातें करना पाप है। लाभ-लोभ और पद-प्रतिष्ठा के लिए गरीबों का इस्तेमाल बंद होना चाहिए और ईमानदारी से कुछ होना चाहिए।

'बाबू, हम तो भूमिहीन छोट भइयन से भी अधिक तबाह है। कुछ हमारा भी लिख लीजिए।' अचानक भीड़ के आगे बढ़कर एक आदमी ने हाथ जोड़कर कहा।

रामरूप ने देखा, यह तो धर्मदेव यादव है। एक साल उसका शिकमीदार था। पांच-छह बीघा खेत अपना है। दो बैल और भैंस रखता है। परिवार में कुल बीस-पचीस व्यक्ति हैं। दो आदमी नौकरी पर बाहर रहते हैं। खेती में खटने वाले तीन व्यक्ति हैं।'

'अरे धर्मदेव, तुम्हारा क्या लिखें, तुम तो ठोस गृहस्थ हो। घर की पैदावार

से ही खर्ची चल जाती होगी।'

'काम चलने का हाल क्या बतावें', अत्यन्त लजाते हुए धर्मदेव बोला, 'उधर बाढ़ आयी तो सांवा-साठी सब दह गया और इधर अगम दिन अभी आगे पड़ा है। भैंस भी है तो ठठरा।'

'बाहर से भी तो ऐसा पैसा आता है। मैं तो समझता था तुम खाते-कमाते साधारणतः खुशहाल किसान हो। तुम्हें तकलीफ नहीं होगी।'

'खूब तकलीफ है बाबू! बाहर की सारी कमीनी खुराकी में भस जाती है। वह भी पूरी नहीं पड़ती। दिन पर दिन हाथ सिकोड़ना पड़ रहा है। बहुत झंखन है। कैसे इज्जत बचेगी? कितना कर्जा काढ़ा जायगा?'

'खेत में कोई फसल खाने लायक खड़ी है?'

'कोई नहीं। एक फसल रबी है मगर चैत अभी दूर है। हवा-पानी, पत्थर-पाला और मूस-मुसरी से बची तब न घर आयेगी?'

'बाहर के पैसे से खरीदकर ही सही, तुम्हारा काम तो चल रहा है।'

'काम चलने का हाल तो बस भगवान् जी जानते होंगे। जितना घर का अनाज खायेंगे उतना खरीदा हुआ चाहे राशन वाला नहीं खायेंगे। अब आप समझिये कि अनाज दवाई हो गया है। भूख भी सटक जाती है। शरीर में खून का पता नहीं। प्रेत की तरह हम लोग सिर्फ टहल-घूम रहे हैं।'

'क्या तुम्हारे पुरवे में सबकी यही गति है? कुछ लोग तो खाते-पीते सुखी होंगे?'

'हां हैं, जिन्हें गोसैयां ने दिया।' यह कहते हुए धर्मदेव ने हाथों को फैलाकर ऐसे भाव संकेत किए जिनमें बायीं ओर बंसवरियों के ऊपर-ऊपर नवीन बाबू का धपधप चमकता तिनतल्ला स्पष्ट हो गया। उसने आगे कहा—

'एक-दो को छोड़ यहां सभी दुखी हैं। सब पर त्रास छाया रहता है। फसल खराब होने पर हालत और बिगड़ जाती है। मगर, बाहर से देखकर आप कुछ अनुमान नहीं लगा सकते। गांव-गंवई का मनई सब सहते-सहते इतना पक गया है कि बाहर से ठनठन बजता रहता है। भूखों रहकर भी काम-धाम में जुटा रहता है।'

'स्वराज्य के बाद इतना विकास-कार्य हो रहा है और तुम लोग अभी वही पुराना रोना रो रहे हो।'

'बाबू, विकास बड़े-बड़े गांवों का और बड़े-बड़े लोगों का हुआ है। छोटे गांवों के छोटे लोगों की पहुंच के बाहर वह सब है।'

'क्या तुम नयी खेती नहीं करते।'

'नहीं। हमारे खेतों के पास पानी का कोई साधन नहीं है। एक खेत में बाबू साहब के नलकूप से एक साल पानी लिया पर खाद-पानी वगैरह इतना महंगा

पड़ा कि हिसाब जोड़ने पर घाटा लग गया।'

'तब लगता है कि तुमको विकासी खेती के लाभ का कोई तजरबा नहीं है।'

'हो सकता है। कौन बताने वाला है? यहां कोई आता नहीं। जीप-कार वाले आये भी तो छोटभइयन के पास खाली वोट खातिर। विकास सड़क पर वाले गांवों का होता है। यहा ऊबड़-खाबड़ में या टोला-टाली भूतानां में कौन आता है?'

'अब लगता है तुम लोगों के लिए कुछ करना होगा। सच मानना, धर्मदेव यह नाटक तो झूठा है, बेकार है। मगर, इससे हम को एक सच्चा चटकन लगा है। जल्दी ही कुछ किया जायगा।'

१५

रामरूप को स्वप्न में भी आशंका नहीं थी कि 'पूर्वांचल विकास संघ' के उद्घाटन समारोह में ही ऐसी विरोधपूर्ण हुल्लड़बाजी का सामना करना पड़ेगा। मात्र पंद्रह दिनों के भीतर जिस उत्साह से गांव वालों ने हार्दिक सहयोग कर इसकी सारी तैयारी को पूर्ण करा दिया उसे देखते आज की अचानक बदली हवा से उसे वास्तव में गंभीर हैरानी थी। आदर्श विद्यालय के प्रांगण में बना भव्य पंडाल, सुसज्जित मंच, बैठे हुए शांत किसान लोग, करइल क्षेत्र के इतिहास में पहली बार ऐसा शानदार आयोजन, बालकों का रोमांचक स्वागत गान, भारतेन्दु वर्मा का आकर्षक और ओजस्वी स्वागत भाषण, और फिर हिंदी के यशस्वी पत्रकार श्री ईश्वरचन्द्र सिनहा का मर्मस्पर्शी उद्घाटन भाषण, आरंभ में ही जैसे मूल रोग पिछड़ेपन की नस पकड़ ली गयी—

'माफ कीजिएगा, कहने पर आप लोग नाराज़ भी हो सकते हैं, पर जो तथ्य है, स्पष्ट है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश पंजाब से सटा है, उस पर उसका प्रभाव है। आगे बढ़ने, श्रम करने, जोखिम उठाने की उनमें ललक है, महत्त्वाकांक्षा और प्रतिस्पर्धा की भावना है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोगों की सायकालोजी में यथा-स्थिति की बिना हाथ-पैर हिलाए दो रोटियां मिल जाना ही बस पर्याप्त है। इसके पड़ोसी बिहार के चम्पारन, छपरा क्षेत्र की हालत और गयी-बीती है। आवागमन के साधनों से हीन, गरीब, उजाड़, गांजा-भांग की तस्करी में लिप्त। पूर्वी उत्तर प्रदेश के काहिल गंजेड़ियों के लिए शंकर बूटी वे खूब सप्लाई करते हैं। पी-पीकर पूरा पूर्वी उत्तर प्रदेश सन्त बना चला जा रहा है। काहिलों की जमात में संत-खूब फलते-फूलते हैं। हिंदी के प्रायः सभी संत कवि इसी क्षेत्र के हुए। काशी सबका सेंटर है जहां का आदर्श ही है चना-चबेना, गंगा-जल। इस निराले संतोषवृत्ति प्रधान चना-चबेना वाले आदर्श और मिल-कारखाना लगाने में बहुत अंतर है।'

सिनहा जी इतना ही बोल पाये थे कि सामने की ओर से कुछ लोग खड़े होकर 'इन्कलाब जिंदाबाद' का हड़कम्प मचाने लगे। उन्होंने पुनः एक नारा लगाना शुरू किया, 'रोजी रोटी की दरकार, भाषणबाजी है बेकार'! इस नारे के बाद 'देश के गद्दारों को एक धक्का और दो', 'लोकनायक जिन्दाबाद' आदि का भी हल्ला काफी देर तक चला। संयोजक वर्मा हैरान। लोगों से शांत रहने की अपील पर अपील करता। रामरूप परेशान। यह क्या हो रहा है। उसने देखा आगे-आगे गला फाड़कर चिल्लाने वालों में दीनदयाल के खानदान के लड़के हैं। उनके पीछे गठिया के सुखुआ और सिटहला भी हैं। तो, ये भी हुंडभंड करने के लिए आ गये हैं। मगर, असली मंत्रदाता कौन है? सुखुआ और सिटहला स्वयं इस तरह अव्यवस्था फैलाने की पहल नहीं करते। उनकी शैली कुछ और तरह की होती है। यहां तो बस तमाशे में थोड़ा हाथ लगा दिया है। दीनदयाल के लड़कों की तो बात समझ में आती है परंतु ये उसके महल्ले के आवारे भी इसी हल्ले में शामिल हो गये हैं। इस खोखली और बहन्तू नयी पीढ़ी की क्या सिर्फ हल्ले-हड़कम्प से दिलचस्पी रह गयी है? तो, यदि ऐसा था तो अभी आज सुबह तक मंच-सज्जा में ये लड़के क्यों उस तरह खुले मन से जुटे थे और आयोजन को सफल बनाने में सहयोग कर रहे थे? यह अचानक असहयोग कहां से फूटा? इस मानसिक ऊहापोह के बीच रामरूप का ध्यान अपने ससुर जी की ओर गया। देखा, एक ओर वे शांत-प्रशांत मुद्रा में पालथी मारे निरपेक्ष मंच पर विराजमान हैं। ऐसा लगता है कि नारेबाजी के इस व्यवधान के बारे में उन्हें कोई जानकारी नहीं है। जैसे वे बहरे बन गये हैं और अविचलित समाधिस्थ पड़े हैं।

सभा का आयोजन दो बजे से था। परंतु गठिया के आमंत्रित लोगों के साथ हनुमानप्रसाद विद्यालय पर डेढ़-दो घंटा पहले ही चले आये थे। उन्होंने वर्मा को पचीस रुपये की सहायता भी प्रदान की। काफी दिलचस्पी के साथ आयोजन के बारे में पूछते रहे। उनकी इस प्रकार की दिलचस्पी सर्वथा नयी और अप्रत्याशित थी। सभा-सम्मेलन, मंच, चन्दा और इस प्रकार के सार्वजनिक कार्यक्रम से वे प्रायः बहुत दूर रहने वाले जीव हैं। जन-सेवा को वे आवारों का व्यापार कहते हैं। उनका विचार है कि लोगों को देश की चिन्ता न करके सिर्फ अपने कामधाम की चिन्ता करनी चाहिए। जब सब लोग अपने कामधाम में तन-मन से जुट जायेंगे तो धनी हो जायेंगे। धनी हो जाने का ही अर्थ विकास है। इसलिए लोग अपना-अपना विकास करें तो देश का विकास स्वयं हो जायगा। इसके लिए सभा करने, भाषण करने और इधर-उधर दौड़धूप की क्या जरूरत है? किंतु हनुमानप्रसाद ने इस बार कोई विरोध न जताकर सहयोगात्मक रुख प्रदर्शित किया तो सबको चकित-कारी हर्ष हुआ। भेंट होने पर रामरूप से तो सिर्फ कुशल-समाचार हुआ परंतु वर्मा से एक बार उन्होंने यह भी कहा कि रुपयों की कमी महसूस हो तो निःसंकोच

उनसे कहा जाए। इसके साथ ही उससे उन्होंने बहुत गंभीरता के साथ कई बार कई तरह से पूछा था कि इस सभा का सभापति कौन बनाया जायगा ? उन्हें जब ज्ञात हुआ कि स्वागत समिति ने इस पद के लिए कवि खोरा के नाम का अनुमोदन किया है तो शायद उन्हें जबरदस्त धक्का लगा था। इसके बाद और कुछ न पूछ कर साले 'सभी नेता ही बन जाना चाहते हैं', मन-ही-मन बड़बड़ाते हुए वे प्रिंसिपल राममनोहर सिंह के आफिस में चले गए थे। गठिया गांव की राजनीति में दोनों दो विरोधी खेमे का प्रतिनिधित्व करते हैं और परस्पर बहुत खिचाव रहता है। कालेज में रामरूप के विरोध के कारण भी उसके ससुर हनुमानप्रसाद से प्रिंसिपल साहब विरोध मानते हैं। इसलिए इसे भी लोगों ने नयी बात के रूप में लिया। शायद विद्यालय के जीवन में पहली बार हनुमानप्रसाद प्रिंसिपल के कमरे में बैठे थे।

जिस समय हनुमानप्रसाद कमरे में पहुंचे प्रिंसिपल साहब अत्यंत कटु शब्दों में सभापति के चुनाव पर आपत्ति कर रहे थे। बाबू साहब को देखकर वे हड़बड़ा कर उठे और आदर के साथ बैठाते हुए तथा भरपूर जोर लगाकर नाक सुड़कते हुए बोले—

'कितना अच्छा होता कि हमारे बाबू साहब को सभापति बनाया गया होता। जनसेवा क्या किसी की बपौती है ?···उस लंगड़े घसगढ़े कवि को सभापति बना दिया। पहले ही साइति बिगड़ी। विकास क्या खाक होगा ?···बाबू साहब, आपने उस लंगड़े को देखा है ? भला बताइए तो उसमें क्या ऐसी खासियत है कि इतनी बड़ी सभा का उसे सभापति बना दिया गया ?' राममनोहर सिंह अब बाबू साहब की ओर मुखातिब थे।

'प्रिंसिपल साहब', हनुमानप्रसाद बोले, 'लिखा है कि पढ़े फारसी बेचे···।' वे अभी इतना ही कह पाये थे कि भारतेंदु वर्मा चाय की ट्रे लिये आ गया।··· बस अब सभा के आरंभ में अधिक बिलंब नहीं है। तब तक बाबू साहब, आप प्रिंसिपल साहब के साथ चाय पीजिए।'

'बहुत दौड़धूप कर रहे हो। बैठो तुम भी साथ चाय पिओ।' प्रिंसिपल साहब ने आग्रह किया।

वर्मा आग्रह टाल नहीं सका। फिर अतिथियों को स्टेशन से लाने के विषय में बात होने लगी। वह पहली चलती वार्ता कट गयी। चाय पीते-पीते एक चपरासी को बुलाकर हनुमानप्रसाद ने आदेश दिया, कहीं दीनदयाल यदि दिखाई पड़ें तो वह उन्हें बुला लाये। पुन: दीनदयाल से तुरंत की मुलाकात उन्हें ऐसी आवश्यक लगी कि चपरासी की प्रतीक्षा न कर चाय समाप्त होते-होते स्वयं उठकर चले गये। पंडाल में धीरे-धीरे लोग बैठने लगे थे। बाहर धूप में भी थोक-थोक लोग बैठे थे। लड़के भाग-दौड़ कर रहे थे। रेकार्डिंग हो रही थी। लोग खुश थे।

औरतें दूर-दूर से तमाशा देख रही थीं। गांव जगा था, महुवारी का डीह जगा था और भारी खुशियाली उतर आयी थी। पूरी फुरसत का मौसम था और आस-पास के गांव वाले भी भारी संख्या में आ जुटे थे। लेकिन इस भीड़ में लगता था बाबू हनुमानप्रसाद अकेले थे और साथी की खोज में बेचैन थे। अन्ततः उन्होंने देखा, दीनदयाल तो मंच पर एक कोने में विराजमान हैं। लपककर पहुंचे। कई लोगों ने उठकर आगे बैठने के लिए आग्रह किया परंतु बाबू साहब को यह कोना ही पसंद आया। दीनदयाल ने उठकर जैसे गांव की ओर से उनका स्वागत किया। फिर दोनों व्यक्ति पास-पास बैठे। कुशल-क्षेम हुआ। इधर-उधर की बातें हुईं। बातें सभा की कार्यवाही शुरू होने तक सांय-फुस चलती रहीं। मगर, उसके शुरू होते ही दीनदयाल वहां से नीचे उतरकर पंडाल के बाहर चला गया। हनुमान प्रसाद कुछ और आगे सरककर अति गंभीर किंतु प्रफुल्ल चित्त बैठ गये।

अब रामरूप को यही हैरानी थी कि सबके अस्तव्यस्त हो जाने के बाद भी ये करइल महाराज कैसे अप्रभावित बैठे हैं? लेकिन उसने देखा, अप्रभावित सिर्फ वे ही नहीं हैं। एक व्यक्ति और है जिस पर इस हुल्लड़ का कोई प्रभाव नहीं है और वह व्यक्ति स्वयं सिनहा जी हैं। हल्ला-गुल्ला बन्द होने की प्रतीक्षा में वे अत्यन्त शांत भाव से खड़े हैं। उधर उपद्रवियों पर अधिकार करने में वर्मा को पांच-सात मिनट लग गये। सभा में कुछ शांति हुई तो उसने माइक सिनहा जी के आगे कर दिया। तभी फिर गड़बड़ी हुई। भारतेन्दु वर्मा शांत करने के लिए उठने लगे तो सिनहा जी ने उसे रोक दिया। उन्होंने स्वयं शांत हो जाने की अपील करते हुए कहा—

'मुझे खुशी है कि पूर्वी उत्तर प्रदेश के और गांव की भांति महुवारी में मुर्दे लड़के नहीं हैं। यहां के जिन्दे लड़कों में बड़ी जान है, उत्साह है, क्षमता है, वे मौका मिले तो विरोध भी कर सकते हैं, लड़ सकते हैं, संघर्ष कर सकते हैं। देश को ऐसे ही जिन्दा युवकों की आवश्यकता है। इस नारेबाजी से मुझे बहुत खुशी हुई है…।'

तीर निशाने पर बैठा और धीरे-धीरे सभा में शांति होने लगी। नारा लगाने वाले लड़के खड़े लोगों को बैठाने लगे और वक्ता ने एक चूड़ी और कसते हुए कहना शुरू किया—

'नया खून अब यह देखे कि उसकी बेकारी, बेरोजगारी और पिछड़ेपन का मूल कारण क्या है? ऐसा लगता है कि आवागमन के साधनों के न होने से स्वराज इन गांवों में आया ही नहीं। आपके स्टेशन से कलकत्ते जाना अति आसान है परंतु महुवारी से उस स्टेशन तक जाना बहुत कठिन है। यहां के लोग कैसे इतना पिछड़ापन बर्दाश्त करते हैं? पूरा पूर्वी उत्तर प्रदेश इस आवागमन के साधनों की हीनता के विषम रोग से जर्जर हो गया है। राप्ती-घाघरा के घेरे में गोरखपुर

की बांसगांव तहसील ऐसी है जहां कोई रेलवे लाइन नहीं। बनारस के चकिया क्षेत्र की भी यही हालत है। अनेक विकास क्षेत्र हैं जहां सड़कें नहीं। इस करइल जैसा विशाल क्षेत्र बाढ़-बरसात में सारे सभ्य संसार से पृथक् होकर ईश्वर और भाग्य के नाम पर जीता-मरता रहता है। सूखे के दिनों में बाबा आदम के ज़माने की बैलगाड़ियां धूल उड़ाती और हचक-मचक करती कच्चे रास्तों पर आती-जाती हैं। पूरे बस्ती जिले में चारों ओर से रेलवे लाइन का घेरा तो है पर बीच में निल। सड़कें भी तेरह-बाईस। लोग कैसे आते-जाते हैं, राम जाने। अभी हाल तक मिर्जापुर का राबर्ट्सगंज इलाका बीहड़ रहा है कि वहां से लौटे व्यक्ति का सहज यात्रा-वर्णन जीवंत रोमांचकारी साहित्य हो जाता। यह आपका गाजीपुर जिला बरसात शुरू होते ही दो भागों में बंट जाता है। एक तहसील जमानिया पूर्ण रूप से कट जाती है। कभी-कभी वहां के लोग जिले के सेंटर पर आने के लिए बनारस से घूमकर आते हैं। बनारस से यदि बेतिया जाना हो तो पूरा द्रविड़ी प्राणायाम करना पड़ जाता है। पूरब सोनपुर, फिर उत्तर मुजफ्फरपुर, फिर पश्चिमी मोतिहारी, तब चक्करघिन्नी काटकर बेतिया। गंडक पर पुल नहीं। यदि होता तो गोरखपुर से सीधा आवागमन हो जाता। देवरिया में छितौनी, गंडक की कटान सिर दर्द। एक बिदरीबाघा पुल के अभाव में लाखों आदमी परेशान। और तो और, बनारस से गोरखपुर जाना कितना कठिन। भटनी में रेल इंजन का आगे-पीछे हो जाना मशहूर। चंदवक, दोहरी घाट और बर्ड घाट के पुल की समस्याएं। आजमगढ़ जिला कहीं से सीधा जुड़ा नहीं। एक बार सोचना पड़ता है कि उत्तर प्रदेश के नक्शे में आजमगढ़ कहां है? मेन लाइन पर होने के कारण उसका एक कस्बा मऊ उससे विकसित है।'

'ई कुल्हि पंवारा बंद कइ के ई बताव कि महुवारी में खड़ंजा कब लगी?' बगल से खुबवा खड़ा होकर खूब जोर से चिल्लाकर कहता है।

हां, खुबवा गंजेड़ी पांच बीघा बेची करने साथ-साथ रहता ज़रूर गठिया में बाबू हनुमानप्रसाद के यहां है पर वह है तो महुवारी का। उसके मन का दर्द भला ऐसे मौके पर इस प्रकार क्यों न उमड़ पड़े? लोगों की निगाहें खुबवा से टकराकर मंच पर वहां पड़ती हैं जहां करइल महाराज की ध्यानस्थ मूर्ति अब तक विराजमान थी। अरे सरकार, रोकिये अपने इस बकवासी दरबारी को। मगर अब सरकार जी वहां कहां हैं? फिर संभाला मौके को सिनहा जी ने।

'इनाम देने का काम किया तुमने भइया। मालूम तो हुआ कि महुवारी की गलियों में खड़ंजा नहीं लगा है। अब लग जायेगा। इतने वर्षों बाद आपको होश तो आया।'

लोगों ने मार-मार किया और खुबवा भगा तो सिनहा जी ने आगे कहा, ''बेशक आवागमन के साधनों का अभाव हमें मार रहा है। चाहे वह गांव के भीतर

जाने के लिए खड़ंजा हो चाहे एक गांव से दूसरे गांव तक जाने के लिए सड़क। गाजीपुर के संतों की प्रसिद्ध साधना-भूमि भुड़कुड़ा जाना चाहें तो सड़क नहीं। बलिया अपने पड़ोसी छपरा से 'बाई रोड' नहीं जा पाता। बनारस से यदि 'बाई रोड' देवरिया जाना हो तो बिना गोरखपुर गये नहीं जा सकते। पूरे पूर्वांचल क्षेत्र में विचित्र स्थिति है। नदी पड़ गयी, बस पुल के अभाव में सड़क खतम। ब्रांच लाइन और मेन लाइन के झमेले से मन ऊब जाता है। एक ओर बड़े-बड़े रेल-रोड मार्गों का ऐसा हाल है तो दूसरी ओर गर्मी में सूख जाने के बाद बरसात में उमड़ने वाली नदियों का प्रलयकारी महाजाल है। ताल-खाल और बड़े दीअर-दीअरी हैं। क्या इस मंच से इस आवागमन के साधनों की हीनता के संदर्भ में असरदार आवाज उठाई जायेगी ?'

इसके पश्चात् सिनहा जी ने इस पूर्वांचल की गरीबी, अशिक्षा, कृषि की हीन स्थिति और रोग-ऋण आदि की समस्याओं की ओर ओजस्वी और मार्मिक शब्दों में ध्यान आकृष्ट कराते हुए श्रोताओं को कंटकित कर दिया। तीन-चार वक्ताओं के और भाषण हुए। रामरूप ने न्यूनतम कार्यक्रम को हाथों में लेने के संकल्प के रूप में महुवारी से स्टेशन तक सड़क-निर्माण के लिए प्रयत्नशील होने की घोषणा की जो बाद में विकास मंच के प्रथम उद्देश्य के प्रस्ताव के रूप में सर्वसम्मत से पारित हो गया। मंच के संयोजक और परामर्शदात्री समिति आदि के नामों की घोषणा भी सभा में हुई। परंतु सबसे मनोरंजक रहा सभापति का भाषण।

कवि खोरा को सभापति बनाने का प्रस्ताव रामरूप ने ही प्रस्तुत किया था और इस दृष्टि से झट स्वीकार कर लिया गया कि प्रत्यक्ष या प्रच्छन्न रूप से कुत्सित राजनीति-कर्म में लिप्त शहरी बुद्धिजीवियों या मूर्ख किंतु धनीधाकड़ स्वार्थी ग्राम-सरदारों अथवा अधकचरे दलाल ग्राम-राजनीतिज्ञों से खोरा लाख दर्जे अच्छा है। एकदम पवित्र, निर्लिप्त और सच्ची ग्राम-प्रतिभा का प्रतीक। एक प्रकार से खोरा के कारण सभा का आकर्षण भी बढ़ गया। लोग अंत तक बैठे रहे। यह लंगड़ा कवि क्या भाषण करेगा ?···अरे पोथी-रामायन सब कंठायन है।···सारे महाभारत को बिरहा बनाकर गा देता है।···देखना भाषण भी कविता में ही करेगा।···और सचमुच ही बिना अध्यक्षीय भाषण और सभा की किसी औपचारिकता को पूरा किए खोरा सभापति अन्त में अपनी भोजपुरी कविता पढ़ने लगा तो विचित्र प्रकार की हर्ष की एक हिलोर इस छोर से उस छोर तक व्याप्त हो गयी। उसने सुनाया—

'जुटलि महुआरी में सभा बहुत लमहर,
पास भइल बने अब गंवई के डहर।
जुलुमी न होइहें स्टेशन के फेरा,
बाढ़ि-बरसाति में आ बेरा-कुबेरा।'

स्पष्ट था कि खोरा अपनी आशु कवित्त की शक्ति का प्रयोग कर रहा था और गांव-देहात की बीहड़ता और कूपमंडूकता को बहुत द्रावक ढंग से प्रस्तुत कर रहा था—

'हमनी का बानी गूलरि के किरौना,
ऊपर से घहरे अभाव मरकीलौना।
सिनहाजी खोलि दीहलें आंखी के पट्टर,
होखो विकास गांव-गांव में सभत्तर।'

अपनी लंबी कविता में खोरा ने पिछड़ेपन को दस मुखों वाला रावण सिद्ध करते हुए विकास-मंच के इस उत्सव को रामजन्म के उत्सव के रूप में चित्रित करते हुए आशा प्रकट की कि गांव के बड़े-बड़े बाबू साहब लोग इसमें खुलकर मदद करेंगे।

तूलप्रसाद ग्राम सभापति ने चाय-पकौड़ी और मिठाई का अच्छा इन्तजाम किया था। एक बड़े हंडे में चाय और नयी खांची में भरकर पकौड़ी पुरवा-दोनों के साथ आयी तो अतिथिगण चिहा उठे। पूरी भीड़ के लिए चाय-पकौड़ी पूरे गांव में चर्चा थी। मौके पर सभपतिया खूब काम करता है। मज़ा आ गया। तभी हनुमानप्रसाद ने टिप्पणी की, 'महुवारी में तश्तरी-थाली और प्याला-प्लेट नहीं था तो पड़ोस में चालकर देना चाहिए था।' किंतु उनकी टिप्पणी सभा की सफलता की लहरों में बह गयी। असफलता हुई तो बस एक ही। फोटोग्राफर जो स्टेशन से चला तो गाड़ी कुछ लेट होने, सवारी का कोई साधन न होने और पैदल चलने का अनभ्यासी होने के कारण बहुत बिलंब से पहुंचा। सभा के चित्र नहीं लिये जा सके। खोरा की घोड़ी भी कहां जा चुकी थी। जा, फोटो तो नहीं खिचा।

१६

भारतेन्दु वर्मा जिद्द पर अड़ गया कि बिना फोटो के समाचार अखबारों में नहीं जायेगा। कम-से-कम उस दिन के सभापति खोरा जी का तो चित्र चाहिए ही।

'तो वक्त कहां है जनाब? परसों तिलक जायगा। उसकी सारी तैयारी करनी है।'

'उस दिन कह रहे थे—क्या रुपया जुट गया?'

'हां, मां की कृपा से संकट टल गया।'

'कौन मां, दुर्गा?'

'नहीं, अपनी भौतिक मां और धरती मां!'

'समझा नहीं।'

'फिर कभी विस्तार से बताऊंगा।'

'तो सारा-सारा रूई-सूत जुट गया होगा।'

'यह ऐसा प्रपंच है कि अन्त तक कुछ-न-कुछ कमी रह जायगी।···यह देखो, याद आया, लिस्ट का सारा सामान आया परंतु माला लाना भूल गया है। फल और कपड़ों की खरीदारी भी कल ही होगी।'

'तो क्यों न बक्सर बाजार से सामान खरीद कर खोरा बाग की ओर से लौटो ?···बस, आधा कोस का फेर पड़ेगा···मेरा कैमरा ले लो। बक्सर में रील लगवा लेना। रोशनी रहते उनका फोटो ले लो।'

'मेरा हाथ सधा हुआ नहीं है।'

'मेरा भी वही हाल है। फिर काम तो चल ही जायेगा।···जानते हो, उस दिन 'पूर्वांचल विकास मंच' की परामर्शदात्री समिति में जो तुम्हारे ससुर जी का नाम नहीं आया, बहुत बिगड़े हुए हैं। पता नहीं कैसे नाम छूट गया।'

'मुझे भी एकदम स्मरण नहीं रहा।' रामरूप ने कहा और चिंता की एक हल्की रेखा उसके मुंह पर उभर आयी।

'फिर से गलती सुधारी जा सकती है।'

'जैसा सोचो।···तिलक पर जाने वाले लोगों को ले जाने के लिए ससुर जी ने ट्रेक्टर भेजवाने की खबर दी है। तुम्हें भी चलना है। ट्रेक्टर की ग्रामीण सवारी कैसी रहेगी ?'

'अभूतपूर्व।' वर्मा ने मुसकरा कर कहा और आसमान की ओर देखने लगा। कुछ बादल मंडरा रहे थे।

'इसी का खतरा है। जाड़े की मघबदरिया बहुत ज़ालिम होती है।···अच्छा, फट जायेगी।'

मगर, वह फटी कहां ? रात में जमकर पानी पड़ा। खैरियत हुई कि सुबह पानी खुल गया। तो भी सायकिल निकालना असम्भव था। दो आदमियों के साथ रामरूप को पैदल ही बक्सर जाना पड़ा। सामान के साथ दोनों आदमियों को गांव पर रवाना करने के बाद रामरूप सड़क की ओर से होते खोरा बाग की ओर अकेले चला। महंगाई की मार बाजार में पड़ी थी कि उसके प्रभाव से अब भी पैर जल्दी-जल्दी नहीं उठ रहे थे। ठंडक बढ़ गयी थी। विचार कठुआ गये थे।··· विचारों में हम लोग बड़ी-बड़ी बातें उठाते हैं, प्रगतिशील बहस करते हैं, गरम भाषण करते हैं और वक्त पड़ने पर वही दकियानूस परंपराओं की पूजा।··· तिलक, चढ़ावा, दिखावा, शो, शान—मरो खपो। इस मांगलिक ठाट-बाट के पीछे क्या सचमुच हार्दिक उल्लास शेष रह गया है ? रामरूप का अन्तस कड़वाहट से भर उठा।

खोरा बाग के समीप पहुंच रामरूप का मन कुछ शांत हुआ। उसकी दृष्टि दूर से ही कवि के प्रसिद्ध आम वाले पेड़ पर अटक गयी। खूब ऊंचा है और चारों

ओर गोल घेरे में दो-तीन बिस्वा ज़मीन पर छाया हुआ है। कवि खोरा की तरह ही एकान्त का बूढ़ा तपस्वी है। उसे याद आया, पिछली बार देखा था, उसके नीचे ही कवि की झोंपड़ी है। झोंपड़ी बहुत विचित्र है। उसके दोनों खंभे जिन पर झोंपड़ी का बल्ला टिका है, मात्र डेढ़-डेढ़ हाथ लंबे हैं और उसी अनुपात में आम की पतली सूखी लकड़ियों की चार थेगुनी, जो चारों कोनों पर लगी है, लंबाई में लगभग डेढ़-डेढ़ बित्ते की है। अरे, कैसे इस झोंपड़ी की मांद में खोरा घुसता है? खंभे की ओर से मुश्किल से आदमी रेंगकर उसमें घुस तो सकता है मगर सीधे बैठ भी नहीं सकता है। हां, खरगोश आसानी से घुस सकता है। बड़ी बकरी कठिनाई से घुस पायेगी। सियार आनंद उठा सकते हैं। मच्छरों की सुरक्षित हवेली वह हो सकती है और मकड़ियों के ताने-बाने भी स्वच्छन्दता से तन जाएंगे। उसकी ज़मीन चतुर्मासा में केंचुओं का क्रीड़ागार भी संभव है रही हो। निश्चित रूप से चूहे भी उसके अन्तरप्रदेश का सर्वे कर अपने काम लायक स्थान बना सकते हैं। अन्य अनेक जीव जो खोरा के सहज संगी हैं, झोंपड़ी का सुख लूट सकते हैं। मगर मनुष्य?

रामरूप ने सोचा, ठीक ऐसे ही स्थान पर कवि का चित्र लिया जाय। कई चित्र कई मुद्रा में लिये जाएं। बारह चित्र आ सकते हैं। मगर इतने क्या होंगे? समाचार पत्र के लिए एक सामान्य चित्र पर्याप्त है। हां, एकाध चित्र और ले लिया जाय जिसमें कवि, उसका खेत, उसकी झोंपड़ी और उसका प्रिय आम का विशाल पेड़, सब हों। गेहूं लहरा रहे हों। पेड़ मुसकरा रहा हो और झोंपड़ी गुमसुम कुछ सोच रही हो। सबके केंद्र में प्राणतत्त्व की भांति खोरा खड़ा हो। खुरपी उसके हाथ में हो। जटाजुट लहरा रहा हो। सामने गढ़ गयी घास की ढेरी हो। ऊपर आसमान में एक दो उड़ती हुई चिड़ियां हों। किरणें हंस रही हों। चित्र में सारा वातावरण अत्यन्त मौन-मुखर सजीव हो। शेष चित्र बड़ारपुर में मांगलिक अवसर के लिए जाएंगे।···अरे कल परंपरागत रूप से भाई-भयवद लोगों को तिलक का सामान दिखाने की व्यवस्था भी सबेरे-सबेरे ही सम्पन्न करनी होगी। दोपहर बाद तो ट्रेक्टर खुल ही जाना चाहिए। वहां रिश्तेदार के द्वार पर दिन अछत पहुंचने में ही शोभा है।···जल्दी यह फोटो वाला काम हो जाय।

परंतु यह बात प्रभु को शायद मंजूर नहीं थी। जो बादल कल से ही आसमान पर छाये थे वे तड़तड़ाहट के साथ अचानक बरसने लगे। एक हल्की चिंता गांव पर भेजे गये सामानों की हुई परंतु सावधानी के लिए प्लास्टिक के कागज की जो दो छोटी-छोटी तिरपाल ले ली गयी थी वह सामान को बचाने के लिए साथ गयी थी। रामरूप ने अपना छाता खोल लिया। इस दुर्दिन के लिए वह तैयार था। मगर बादल नहीं छंटे तो? कैमरे में फ्लैसगन तो है नहीं? वर्मा के प्रति मन में

खिजलाहट पैदा हुई। नाहक फंसा दिया। अब तो सारा आसमान पनियारे काजल-से लिप गया। उसने घड़ी देखी, ढाई बज रहा था। सत्त का खोरा कवि, बना दे तो बादलों के बीच सूरज के झांकने भर का झरोखा, दो-चार मिनट में काम हो जाय। रामरूप को याद आया, लोग कहते हैं, सांझ के आये देव (वर्षा) और पाहुन टलने का नाम नहीं लेते। मगर, अभी सांझ हुई कहां? इस पनीली माघ की तिजहरिया में पता नहीं खोरा क्या कर रहा होगा? शायद झोंपड़ी में ठिठुर कर झख मार रहा होगा। उससे चलकर कहें, मंत्र के जोर से घाम का टुकड़ा मंगा दो। इन विचारों के साथ रामरूप को आश्चर्य हुआ कि जैसे-जैसे झोंपड़ी निकट आती जा रही है, वर्षा क्रमशः कम होती प्रतीत होती है। यहां तक कि कुछ आगे सूखी धरती मिल गयी। हे भगवान्, क्या यह सही है कि अब कलियुग की वर्षा ऐसी ही होगी कि आधे खेत में पानी पड़ता रहेगा और आधे में हल चलता रहेगा? कवि की ठीक झोंपड़ी के पास वर्षा का कोई चिह्न नहीं। लो, ऊपर सूरज बादलों के हट जाने से चमक रहा है।

खोरा जी उस समय गेहूं के खेत की मेड़ में बनी चूहों के बिल को खोद रहे थे। शायद चूहे पौदों को काट-काटकर गिरा रहे थे। एक से एक आफत है खेती पर। मगर ये मूसकासुर क्या खोद-खाद से मानेंगे? पौधों को हाथ से सहलाते हुए प्रणाम करके रामरूप खेत के पास खुरखुरी ज़मीन पर कैमरा ठीक करने के लिए बैठ गया। बहुत अच्छा लगा। धरती का स्पर्श कितना सुखद और आह्लादक होता है? एक अनजानी अमृतगंध से उसका अन्तस्तल परिपूर्ण हो गया और किसी अपरिचित सुख से प्राण जुड़ा गया। क्षण भर के लिए उसे लगा, वह भी खोरा के खेत का एक गेहूं का पौधा है। सूक्ष्म चैतन्य में सत्ता मात्र होकर निर्द्वन्द्व लहरा रहा है। परंतु दूसरे ही क्षण उसका अपना यह संसार वाला रंग प्रबल होकर छा गया। अच्छा हुआ होता, कुछ देर तक और खोरा ने उसे वैसे अकेले रहने दिया होता। वह क्यों एकान्त में इस आदमी के पास आते ही इस प्रकार भावलीन हो जाता है? रामरूप समझ नहीं पाता।

'यह हाथ में कौन-सा बाजा है?' अपने पौधे-पुत्रों के बीच हंसते हुए खोरा ने रामरूप से पूछा।

'यह फोटो खींचने की मशीन है, बाजा नहीं।'

'इसी में फोटो बन जायगा?'

'हां, इसी से फोटो बनेगा।'

'इसमें इतना गुन है?'

'हां है।'

'तब इसमें सांस होगी?'

नहीं, यह निर्जीव लोहा है।'

'आप नहीं जानते हैं। इसमें सांस जरूर है। सांस से ही संसार चलता है।'

'आप 'मशीन की सांस' पर एक कविता लिख दीजिए।'

'और जब आपके ससुर जी आवें तब उनके आगे उसको बांचा जाय।···अपने को मालूम नहीं होगा। एक दिन वे खूब गरम हो कर आये थे। कह रहे थे, खोरा तुमको हम ठीक कर देगा। फिर बोले, हमारी कोइली को मिला दे। उसको रामरूप भगाया है।···काहे पर अनराज हैं?'

रामरूप स्तब्ध। बोला···

'ऐसा है? आप उनको नहीं जानते हैं। बाबा कीनाराम के मठ के शिष्य हैं। कुछ अटपटा प्रभाव बराबर ऊपर छाया रहता है। जिस पर अतिप्रसन्न रहते हैं उसकी कटकटाकर निन्दा करते हैं, उसे गाली तक बक जाते हैं। हम से भला वे क्यों नाराज होंगे?·· हां, आपका एक चित्र बन जाय। उस दिन होते-होते यह काम रह गया। सूरज भगवान् का कोई ठिकाना नहीं।'

उस समय पश्चिम ओर बादल कुछ फटा था और कज्जलगिरि शिखरों पर प्रकाशपुंज छिटकने लगता था। कवि खोरा ने नाक के पास हाथ ले जा कर पहचान की, कौन-सा 'स्वर' चल रहा है। बोले, 'धूप जो निकली है, देर तक रहेगी। घबराने की बात नहीं।' इस बीच उन्होंने ब्रह्मताल पर किये अपने प्रयोग का प्रदर्शन किया। एक कविता स्वरचित ऐसी पढ़ी जिसमें समस्त वर्ण आकारान्त रहे। उन्होंने उस कविता की व्याख्या भी की। इसी बीच एक-दो लड़के आ गये जिनके आग्रह पर उन्होंने मुख और नासिका के सहयोग से सितार और जलतरंग आदि व वाद्य-यन्त्रों की ध्वनि बजायी। अपनी प्रसिद्ध कविता का पाठ किया जिसमें यह भाव दर्शाया गया था कि अपनी झोंपड़ी में उमस के समय वे गमछा डुलाकर जब हवा करते हैं तो कैसा मजा आता है? इसी समय उनसे रामरूप ने पूछा कि यह झोंपड़ी इतनी निचाई पर क्यों है तो उन्होंने बताया कि एक भैंसे की लागि (झगड़े की प्रवृत्ति) के कारण उसकी यह अधोगति है। वह नित्य आकर उनका खेत चर जाने का प्रयत्न करता था और उनकी उपस्थिति के कारण विफल हो जाता था। सो उसने धक्के देकर झोंपड़ी को धराशायी कर दिया। तब खोरा ने कहा कि मेरी इस झोंपड़ी पर तो तुमने यह जोम दिखाया परंतु अब तुम्हारी बहादुरी का बखान तब करूंगा जब मेरे विशाल झोंपड़े (आम के पेड़) से आकर टकराओ। और उन्होंने उसके नीचे अपना डेरा गिरा दिया। गिरी हुई झोंपड़ी को जमीन से कुछ ऊंचा कर देने के लिए इस प्रकार नन्ही-नन्ही थेगुनी लगा दी। सत्य स्वप्न हो गया और जीवन कविता। रामरूप को अजब लगा कि वर्तमान झोंपड़ी मात्र प्रतीक है। रहने के लिए नहीं। रहने के लिए वह 'झोंपड़ा' काफी है। पूरा जाड़ा इसी के नीचे कटेगा? या झोंपड़ी ऊंची की जायेगी?

ये सब बातें थीं परंतु रामरूप का ध्यान चित्र खींचने की समस्या पर अटका

था। पता नहीं कब ये नयनाभिराम सजल गजयूथ की तरह पश्चिम में विचरने वाले बादल दानवाकार हो प्रकाश को आक्रान्त कर दें, सारी योजना धरी रह जाय। अतः उसने खोरा जी से प्रार्थना किया कि वे फोटो के लिए झटपट तैयार हो जाएं। उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली गयी। कवि ने मुंह पर हाथ फेरा और जटाजूट को दुरुस्त किया। बोले, 'लेकिन ऐसे ही बनइले बनिहार की तरह हम सभापति बनेगा? ज़रा भेख बना लूं।'

'भेख' बनाने अर्थात् हाथ-मुंह धोकर चादर ओढ़कर तैयार होने में विलम्ब तो कुछ अधिक नहीं हुआ परंतु इसी बीच क्या हुआ कि फिर सूरज को बादलों ने ढक लिया। अब क्या हो? बड़ी निराशा हुई। खोरा ने कहा—

'रामजी समर्थ की बदरिया यह चेरी है।
खोरा के कारज में कैसी यह देरी है?'

देरी के लिए रामरूप एकदम तैयार नहीं था। किसी भी स्थिति में उसे गांव पर पहुंच जाना था। वास्तव में भीतर से वह बहुत बेचैन था। क्यों बेचैन था, इसका कोई खास उत्तर नहीं था। बस, बेचैन था। उसे लग रहा था, उसे प्रसन्न होना चाहिए कि सब काम यथावत् हो रहा है। बीस हजार लड़के-लड़की के नाम स्टेट बैंक में जमा हो गया। तिलक की तैयारी पूरी हा गयी। विवाह की तैयारी भी थाह में है। ऋण लेने की स्थिति नहीं आई। तब कैसी बेचैनी? कैसी उदासी? कैसी अवसन्नता? उसे बारम्बार आश्चर्य होता कि मां से जो अकस्मात् अकल्पित धन प्राप्त हो गया, उसे लेकर उसके भीतर प्रसन्नता की हिलोर क्यों नहीं उठती है? गहरे, बहुत गहरे में ऐन मौके पर हुए इस द्रव्य-लाभ के प्रति उसमें क्षोभ क्यों है? रसोई घर की चुहानी की ज़मीन खोद मां ने काई लगकर काली पड़ी फूल की सनातन बटुली निकाली और उसका मुंह खोला तो वह मारे खुशी की खनक के नाच उठा। अन्तस्तल उछलने लगा। सारा घर चांद-सितारों के खुशनुमा फूलों से भरा-भरा प्रतीत होने लगा। लगा, पुनर्जन्म हो गया, बड़ारपुर का अक्षत सह गया और अब विवाह की धूमधाम में कोई कसर क्यों रह जायेगी? मगर, घंटे भर बाद जब वह खा-पीकर सोया तो फिर क्या हो गया? वह कैसा उलटा-सीधा सोच उभरा कि उसने उसे फिर कड़वाहट की यथास्थिति में, बल्कि उससे भी अधिक आहत-आकुल और गलती मनोभूमि की ज़मीन पर डाल दिया? रामरूप उस सोच को गहराई से समझना चाहता है।

दिन अब एक डेढ़ घंटा शेष था। ठंडक बढ़ती जा रही थी। पश्चिम के बादल एकदम मज़ाक से भरे नाटक पर जैसे उतर आये थे। लगता था, खुला-खुला कि जा। फिर घिर गया। इसी बीच रामरूप की दृष्टि पश्चिम ओर वाले गांव पर गयी। देखा, एकदम साफ झक्-झक् शाम की धूप निकलकर खपरैलों पर, मुंडेरों पर, पेड़ों पर, दीवारों पर और मवेशियों के शरीर पर खिल गयी है।···मिनट

भर में शायद यहां भी सरक आयेगी। उसने कैमरा ठीक किया।

'खोरा जी, गांव की ओर से धूप चली आ रही है, रेडी।'

लेकिन गांव की ओर से धूप ही क्यों, खोरा की फोटो-खिचाई का समाचार पाकर बहुत से लड़के भी दौड़े चले आ रहे थे। खोरा के मना करते कुछ उत्साही पांक में लदर-फदर पांव घसीटते उनके खेते के बीच से ही हेल आये। खोरा के अगणित पौधे-पुत्र कुचलकर धराशायी हो गये। मगर, फोटो-खिंचाई के उमंग में वे इसे सह गये। उन्होंने फिर से जल्दी-जल्दी और कुछ और अधिक रुचिकर 'भेख' बनाया। एक संक्षिप्त-सी स्नान-क्रिया को पूर्ण कर उन्होंने शरीर पर जहां-तहां चंदन लगाया। जटाजूट को सुव्यवस्थित किया। कुछ साफ धोती की कछनी काछ ली और कम्बल बिछाकर ठाट से पश्चिमाभिमुख बैठ गये।···जब फोटो राज-दरबार में जायगा तो वह ठाट-बाट से उतरे। यह शायद भगवान् की ओर से उन्हें इशारा था।

फिर फोटो खिंचने में कितनी देर लगती ?

खोराबाग से रामरूप चला तो सूरज की सुनहरी रोशनी जो मघबदरिया की मारी गीली छवर पर बहुत चौड़ाई में बिछकर चमक रही थी, बहुत भली लगी। किंतु इस रोशनी आ आनंद टिकाऊ नहीं था। वह जल्दी ही भीतर के अंधेरे में खो गया। खैरियत थी कि रास्ता गीला भर हुआ था। पैर पकड़ने वाला कीचड़ नहीं उठा था। तेजी से कदम बढ़ाते वह तिलक की तैयारियों में चक्कर काट रहा था। अब आज कहां वक्त रहेगा ? कल बहुत तड़के ही तिलक देखने के लिए 'बुलावा' घुमाना होगा।···दीनदयाल को वह नहीं बुलायेगा। अब क्या रह गया है कि बुलावें ? इस तरह हाथ धोकर शत्रुता पर उतर आया है तो फिर कैसी भयवद्दी ? कैसा भाईचारा ? पीठ पीछे गरदन रेतते रहो और खेंखर की तरह हें-हें-हें-हें कर भाई बने रहो। नहीं, रामरूप से ऐसा पाखंड नहीं रचा जायगा। पुराने लोग बहुत समर्थ थे जो बाहर आपस में मार-काट करते थे और गांव के भीतर पंगत पर एक पत्तल में खाते थे। आज का यह ग्रामीण—रामरूप—वैसा महान् नहीं है। वह मामूली आदमी है। दोहरे व्यक्तित्व का यह बोझ उससे नहीं ढोया जायेगा।

थोड़ी देर में मानसिक तनाव कुछ ढीला हुआ तो रामरूप चौंक उठा, अरे रामरूप में यह कौन बोल रहा है ? किसान या बुद्धिजीवी अध्यापक ? छिः ! पढ़ा-लिखा आदमी यदि ऐसा सोचेगा तो गांव का क्या होगा ? पतन के किस भयानक खोह में वह ग़र्क हो जायगा ? ऐसे बुद्धिजीवी अध्यापक होने से तो अच्छा होता यदि रामरूप मात्र किसान होता और गांव में रहकर उसे जोड़ने वाला अर्थात् गांव का आदमी होता ! अपने झगड़े से नहीं गांव से, गांव की एकता से, आपसी भाईचारा और भयवद्दी से प्रेम होता ! आज झगड़ा है, कल नहीं रहेगा। मगर

भयवद्दी टूट गयी, गांव टूट गया और आपस की राह-रस्म टूट गयी तो क्या वह कभी जुटेगी ? और उस टूटन का क्या अन्त होगा ? खेत-बारी के झगड़ों की बात अपनी जगह पर, भयवद्दी अपनी जगह पर।...नहीं, रामरूप दीनदयाल को तिलक देखने के लिए न्योतेगा। द्वार पर आने पर प्रसन्नता के साथ उसका स्वागत करेगा। इस मांगलिक अवसर पर वह सारे झगड़े भुलाकर सबका आशीर्वाद और सद्भाव प्राप्त करेगा।...मन में उल्लास आता है तो रास्ता कितनी जल्दी-जल्दी कटता है।

१७

रामरूप को स्वप्न में भी विश्वास नहीं था कि प्रिंसिपल राममनोहर सिंह इतनी उदारता से उसे और वर्मा को छोड़ देंगे। छब्बीस जनवरी को ही जब तिलक का दिन पड़ गया तो मन-ही-मन वह बहुत खिन्न हुआ था और सोच रहा था कि छुट्टी देने में प्रिंसिपल कितना रुआब लेगा और परेशान करेगा। इतना ही क्यों, अन्य वर्षों में भले ही खानापूर्ति की तरह झंडा उड़ाकर और कुछ आंय-बांय कर नव-दस बजे तक छुट्टी हो जाती रही है, इस वर्ष वह जानता है कि इसी दिन तिलक जाना है तो शायद बारह-एक तक अंटसंट कार्यक्रम रख घसीटेगा। छुट्टी मांगने पर नाक सुड़ककर सिर भांजने लगेगा, राष्ट्रीय त्यौहार है, आप ही लोग चले जायेंगे तो कौन दिलचस्पी लेगा, वगैरह-वगैरह।

मगर, ऐसा कुछ नहीं हुआ। राममनोहर सिंह ने मुक्त भाव से कहा, 'अरे जाइये साहब, इस मंगल-कार्य में मेरी ओर से कोई बाधा नहीं। जैसी आपकी कन्या वैसी मेरी...भला इसमें क्या पूछना है ? यहां राष्ट्रीय ध्वज फहराने के लिए हम लोग पर्याप्त हैं। दिन छोटा हो रहा है। रिश्तेदार के द्वार पर वक्त से पहुंचना चाहिए।...और जो मेरी सेवा हो आप बेहिचक कहेंगे।' गद्गद हो गया रामरूप। उसने सोचा, बहुत जल्दी घर चलकर भी क्या होगा ? झंडा फहर जाने पर चलें। बुलावा घूम गया है। लोग तिलक का सामान देखने एक-एक कर आते होंगे। मां दिखा रही होगी। पान-सुपारी के स्वागत का प्रबन्ध हो ही गया है। पिता जी को मौका मिलेगा। सबसे कहेंगे—बीस हजार बैंक में जमा है। पांच हजार का सामान तिलक पर जा रहा है। पांच हजार का विवाह के समय।... मगर साहब, पांच हजार ही कैसे ? इस महंगी में हिसाब जोड़िये न, बर्तन-कपड़ा और फल आदि सब कितना हो जाता है ? फिर कहेंगे, हजार से ऊपर तो दुलहे के सूट में लग गया। एक हम लोगों का जमाना था कि गुलाबी या पियरी में रंगा जोरा-जामा और लाल नगौरी, बस। यह टीमटाम है कि उजार-बसाव है ?

विद्यालय से घर जाते समय रामरूप बहुत प्रसन्न था। उसे लगने लगा, ये मांगलिक और सांस्कृतिक अवसर भीतर से गांव को जोड़ रहे हैं। इसी समय

गांव के व्यक्ति के भीतर का वह सब उभरकर ऊपर आता है जो बहुत उदात्त है, बहुत सहयोगवर्धक और उल्लासप्रद है। उसे अपने ऊपर खीझ हुई कि कल दीनदयाल चाचा को न बुलाने की बात मन में लाते समय वह कितनी संकुचित और हीन मनोवृत्तियों की गिरफ्त में आ गया था? भला ऐसे शुभ मौकों पर अपने-पराये और शत्रु-मित्र का भाव मन में आता है? उसने सोचा, चाचा यदि संयोगवश उसके जाते-जाते में तिलक का सामान देखते हुए घर पर मिल जाते हैं तो वह एकदम झुककर पैर छू लेगा।···आशीर्वाद दो चाचा, कि इस मंगल कार्य का बोझ कपार पर लेकर निबाह ले जाऊं···मारे उछाह के भीतर से अयार आ गयी, रामरूप की आंखें गीली हो गयीं।

घर पहुंचकर सबसे पहले उसने यह जानना चाहा कि दीनदयाल चाचा आये थे न? मां ने झनककर कहा, 'ऊ पपिया आई? रार बेसहले बा कि भगेलुआ झंखत बा। ट्रेक्टर कवना राहे जाई? सगरे छवरि गेहूं में पानी चला के आजु नासि रहल बा। ओकर ढेर दिन के गुनावनि रहलि ह कि मोका का दीने साइति बिगारबि। ओकरा बस आजुए भा एही पहरा पानी के चलावे के रहल ह? केहू पूछे वाला नइखे।'

रामरूप को काठ मार गया। अरे, ऐसा? वह इतना मूर्ख है कि नरक के कबाड़े में स्वर्ग के फूलों को टटोल रहा है।···क्या सचमुच जान-बूझकर आज सुबह पानी चलाकर छवर खराब की गयी है? पानी तो अभी-अभी बरसा है कि खेत गीले थे। तुरन्त पानी चलाने की क्या जरूरत थी? जरूर यह द्वेष-दाह है। और वह छवर खराब होती है तो कितनी भयानक हो जाती है? सचमुच, यदि ट्रेक्टर फंस गया तो क्या होगा? नहीं, खतरा मोल लेना ठीक नहीं। तब किस ओर से निकलेगा? बाजार से निकाला जाय तो फिर दक्षिण ओर दो कोस बबुनी बाजार जाकर तो फिर पूरब ओर जाने का एक चकरोड मिलेगा जो मेहपुर होते चार-पांच कोस के फेर से अपने मुख्य मार्ग पर आयेगा।···जा चाचा, तूने अच्छा नहीं किया। लेकिन यह भी तो सम्भव है कि भूल से ऐसा हुआ हो। नयी खेती आयी तो गांव के रास्ते बिगड़ गये। सार्वजनिक रास्तों को नाली बनाकर लोग अपने निजी नलकूपों का पानी इधर-उधर ले जाने लगे। पक्की नालियां कहां बनती हैं? जो जैसे है चल रहा है। राह-घाट रुके···कीचड़-कांदो बारहमासी हो जाय, खेती का काम न रुके।···ओह, रास्तों के लिए हमारे ये गांव कितने दरिद्र हैं? आज अपने कपार पर पड़ा तो गहराई से सूझ रहा है। अब निर्धारित समय से एक-दो घंटा पहले प्रस्थान करना होगा।

लेकिन प्रस्थान के लिए जल्दी-जल्दी तैयार होते-होते और सब लोगों को बटोरते-सहेजते काफी विलम्ब हो गया। पुरोहित भगवत पांडे को कहीं जाना होता है तो कपड़े-लत्ते का ऐसा सार-भार करने लगेंगे कि बस एक आदमी उनके

सिर पर सवार रहना चाहिए जल्दियाने के लिए। दमरी नाई ने लाल कपड़े में बांधकर नारियल वगैरह के साथ बड़ा थाल ट्रेक्टर की ट्राली में रख दिया। भगेलुआ ने फलों की झंपोलियों आदि को पहले ही रख दिया था। तिलक पर वह भी चल रहा है, घर के 'मालिक' के मूड में। आज दरवाज़े पर रहने और बैल खिलाने का काम हलवाह जालिमा को सौंपा गया है। रामरूप बारम्बार जल्दी करने के लिए चिल्ला रहा है। अरे, सभापति और वर्मा कहां रह गये ?··· चलो भाई जल्दी। रामरूप ने अपने सगे लोगों में पट्टी मालिकान के नगीना, बलेसर और तिकल चढ़ाने का कार्य सम्पन्न करने के लिए अरविन्द जी···ट्रेक्टर घड़घड़ाने लगा तो लोगों ने देखा, बगेदन बारी दौड़ा आ रहा है। अरे, तू अभी पीछे ही था ?

'झंडा उड़ा रहा था', आगे मडगाड पर बैठे भारतेन्दु वर्मा ने हंसकर कहा।

पता नहीं कैसे वर्मा के इस हंसी-हंसी में कहे गये सामान्य वाक्य ने रामरूप को असामान्य रूप से उद्वेलित कर दिया। बगेदन जैसे कोटि-कोटि लोग अब क्या होंगे झंडा उड़ाने लायक ? फिर क्या हुआ एक युग से झंडा उड़ाकर ? गांव का नरक बढ़ गया कि निकलने के लिए रास्ता नहीं रह गया। भाईचारा और राह-रस्म खत्म ! देश की ग्रामात्मा टुकड़े-टुकड़े हो गयी। विशाल प्रभुसत्ता-सम्पन्न लोकतन्त्रीय गणराज्य की अब तक की प्रगति की यही कुल उपलब्धि है ? झंडा फहराने के बाद भाषण में आज भी मूर्ख प्रिंसिपल भारत की स्वतन्त्रता की शैशवावस्था का राग अलाप रहा था। वास्तव में भारत को विकासशील शिशु की संज्ञा प्रदान कर लोग पिछले वर्षों से ही सचाइयों को झुठलाते आ रहे हैं। हम लोग छब्बीस जनवरी जैसे हर साल आते आत्म-निरीक्षण वाले राष्ट्रीय पर्वों पर आदर्शों और भारी-भरकम लक्ष्यों की आड़ में आत्म-छल का प्रपंच रचते हैं और छलपूर्ण मिथ्या आशावादिता की व्यापक मोहग्रस्त आत्मघाती स्थितियों में उत्तरदायित्वों को एक-दूसरे पर फेंकते आ रहे हैं।

ट्रेक्टर धड़-धड़-भड़-भड़ करता करइल की उमड़-सी आई फसल के बीच चल रहा है। सरसों फूल गयी है। दूर-दूर तक उसका पीतसागर फैला है। ट्रेक्टर पर उसके बीच से गुजरना एक विचित्र अनुभव है। उसकी पूरी बाडी फसल की ऊंचाई में डूब गयी है। दूर से देखने वालों को लगता होगा, सरसों की छब्बेदार फुनगियों पर बैठे लोग उड़ते जा रहे हैं। इधर रामरूप की उड़ान भी अपनी लाइन पर बनी है।···बेशक देश भौतिक समृद्धि की ओर अग्रसर है। वह औद्योगीकरण और कथित हरी-श्वेत क्रान्तियों के द्वार पर खड़ा है। बड़े-बड़े प्लांट-प्रोजेक्ट, योजनाएं और शोध-संस्थान आदि उसे आत्मनिर्भरता की ओर ले जाते प्रतीत होते हैं। परन्तु इस भौतिक समृद्धि के भीतर वाली आन्तरिक असलियत क्या है ? भीतर से टूटकर देश जर्जर हो गया है। हम सब लोग

अन्तरैक्य के दयनीय सर्वहारा बन गये हैं। दिल्ली से लेकर महुवारी तक में निर्लज्ज स्वार्थपरता जन-गण-मंगल की मंज़िल को कीचड़-कांदोमय बना रही है। ···फिर हमारे जैसे बुद्धिजीवी का सोच भी दीनदयाल से आगे कहां पहुंचता है? सबको अपनी-अपनी लगी है। देश की चिन्ता तो बस थैलीशाह और कुर्सीशाह लोगों को है। अरे, यह देश क्या इन्हीं लोगों का है? वे मुट्ठी-भर महाजन अथवा सामन्त-से प्रशासक या मोटे नेता जो देश के भाग्य से खिलवाड़ कर रहे हैं, जिनके पास मुट्ठी-भर अन्न और गज-भर वस्त्र के लिए बिलबिलाते फुटपाथी जीवों के लिए बड़े बड़े आदर्श और लम्बी-चौड़ी भाषणमाला है, जो अपने स्वार्थ के लिए साम्प्रदायिकता, क्षेत्रीयता, भाषावाद और जातिवाद का मर्मघाती ज़हर फैलाते शर्म का अनुभव नहीं करते वे क्या कुर्सी के लिए देश को बेच नहीं देंगे?

'तुम बहुत खुश हुए थे', ट्रेक्टर जब तीन-चार कोस की चौड़ाई-लंबाई वाले और सर्वोत्तम रबी की पैदावार के लिए प्रख्यात शैलाताल के बीच से जा रहा था तो भारतेन्दु वर्मा ने ध्यान भंग किया, 'कि प्रिंसिपल उदारतापूर्वक तुम्हारे मंगल कार्य के लिए सुविधा दे रहा है और उधर राज़ की बात कुछ और रही।

'ऐं?···अच्छा!' रामरूप को झटका लगा।

'आज उसके गांव गठिया में बी० डी० ओ० आने वाला है। युवक मंगल दल का कोई समारोह है, उसमें यह हमारा साहब गांव की उभरती नयी पीढ़ी को आज संबोधित करेगा। तुम चले आये तो जल्दी-जल्दी जलसा खतम कर घरमुंह भगा।'

रामरूप को सुनकर बहुत धक्का लगा। फिर कहे क्या? प्रिंसिपल साहब जैसा लिजलिजा कीड़ा युवा पीढ़ी को संबोधित करेगा? उसके भीतर का विचार-प्रवाह बहुत कड़वाहट के साथ आगे बढ़ा—'नयी पीढ़ी को संबोधित करने लायक इसके पास क्या है? गत दो दशक की शिक्षा-दीक्षा और गलाजत भरे जड़, दकिया-नूस और बेहया नेतृत्व के आदर्शों ने यद्यपि इस पीढ़ी को खोखला बना देने में कोई कोर-कसर उठा नहीं रखा है तथापि अपने भीतर बचे-खुचे स्वाभिमान का संबल लेकर इसे अपनी विशेषताओं को झाड़-फटकार कर नये दर्द और नयी दीप्ति के साथ खुद ही उठना पड़ेगा।'

भारतेन्दु वर्मा ने भी बात को आगे नहीं बढ़ाया। कैसे बढ़ाता? ट्राली सहित ट्रेक्टर की सवारी ऐसी होती है कि आगे-पीछे की नाना प्रकार की हाहाकारी लौह-ध्वनियों के बीच सवार का तन-मन अनवरत अंतड़ी-उखाड़ झकझोरों सहित इस प्रकार धंसा रहता है कि मानवीय मुख-ध्वनि एक पुराने मुहावरे के अनुसार नक्कारखाने में तूती की आवाज़ हो जाती है। तिस पर भी करइल का खेतों के बीच वाला ऊबड़-खाबड़ मार्ग। फिर सवारों में यदि कोई शहर का है तो और भी अनेक कारणों से वह चुपचाप चलना ही अधिक पसन्द करेगा। मनुष्य से बात करने की अपेक्षा आंखों-आंखों में गुनगुनी धूप के बीच गांव की सौन्दर्य-वैभव की

खुली पुस्तक-सी प्रकृति से बात करने में अधिक उल्लास का अनुभव करेगा। वर्मा वास्तव में स्तब्ध था। फूली सरसों के ऐसे कोसों विस्तीर्ण सौंदर्य-सागर में अवगाहन करने का यह पहला अवसर था। ऐसे सुखभोग के बीच निरंतर बास करने वालों के प्रति उसके मन में गहरी ईर्ष्या उत्पन्न हो रही थी। उसने लक्ष्य किया कि इस विस्तृत ताल में कोई पेड़, यहां तक कि बबूल का पेड़ भी नहीं है। क्यों? क्या पीत सागर में छिपी अकूत रत्नागार-सी फसल, फसल और फसल है, इसीलिए? मन में प्रश्न उठा और मन ने ही उत्तर दे दिया। यह बाढ़ग्रस्त क्षेत्र है। बाढ़ के दिनों में यहां फसली नहीं असली सागर का दृश्य होता होगा। ट्रेक्टर डूब जाने भर सरसों की जगह लहराता गंगाजल। उसे ध्यान आया, समाचार-पत्रों में बरसात के दिनों में बाढ़ की प्रलयंकरी विनाश-लीला की खबरें जो इस करइल इलाके से जुड़ी होती हैं, छपती हैं और तब कल्पना में कैसा रोमांचक अहसास होता है? तब का वह कल्पना में उभड़ने वाला सत्यानाशी सत्य आज फिर स्वप्न जैसा कुतूहलवर्धक लगता है। समय का फेर है।

बबुनी बाजार से ट्रेक्टर आगे मेहपुर के रास्ते पर बढ़ा तो उधर से औरतों का एक दल आता दिखायी पड़ा। कीमती रंगीन कपड़ों में वे सरसों, तीसी, मटर और बर्रे आदि के रंग-बिरंगे फूलों वाले चौड़े रास्ते में बहुत भली लगती थीं। दूर से ट्रेक्टर देख एक ने घूंघट संभाला। कोई लजारू कनिया थी वह। बूढ़ी माताओं के हाथ में पूजा की डोलची देख वर्मा ने अनुमान किया ये गंगाजी की पूजा कर लौट रही हैं। कनिया की बगल में एक लड़की चल रही थी। उसे देख वर्मा को लगा, कमली है क्या? हां, वही तो है। मगर वह इधर से क्यों आयेगी? फिर उन लोगों को तो घर छोड़कर आ रहे हैं।···अरे, यह देखो, वह नहीं है। हां, वैसी ही है। खरे सोने के टटके पानी से संवारे सुघड़ गोल मुख-मण्डल पर वैसी ही सौम्य पवित्रता, किशोरावस्था की देहली लांघ विकासमान भरे-उभरे सुपुष्ट अंगों में वैसी ही सहमी, सकुची और सहज़ सुन्दरता और उस सुन्दरता की निर्विकार भभकन लिये गांव की क्यारी में उगी एक यह विनम्र कुसुमाभा, अति दिव्य, अति आर्द्र। अनन्त विस्तारी ग्राम-श्री के बीच उसकी समस्त मार्दव-माधुरी समेटे सरल भोली निसर्ग-कन्या।

भारतेन्दु वर्मा को ट्रेक्टर की दुखद सवारी का यह पहला अनुभव था और वास्तव में उसे बहुत असुविधापूर्ण उक्ताहट महसूस हो रही थी किंतु एक तो यह करइल की फसली सौंदर्य-विभूति और दूसरे अब यह मित्र-कन्या कमली की याद, वह खो गया और फिर खो गया हड़हड़-भड़भड़पूर्ण हिचकोलों का दुख।

भारतेन्दु वर्मा को आश्चर्य हुआ, उसके जैसे बहेतू शहरी मछेरे के मन में यहां गांव में आकर यह किसी नारी—नारी नहीं, कन्या—के प्रति कैसा हार्दिक श्रद्धा जैसा पावन उदात्त भाव उत्पन्न हुआ है? पहले-पहल रामरूप के घर आकर

जब उसने जाना कि परिवार में विवाह योग्य कन्या है तब उसे डर लगा था। अपनी समस्त दुर्बलताओं के साथ वह यहां अधिक दिन तक टिक सकता है? बोध बढ़ने के साथ भीतर-ही-भीतर इधर वह अपनी स्वयं आलोचना करने लगा है। यूनिवर्सिटी की चक्करबाजियों और अपने व्यक्तित्व के जादुई प्रेम-प्रयोगों से बचने का प्रयत्न करने लगा है। परंतु प्रयत्न करने से क्या होता है? जो अपने से हो जाता है उस पर उसका क्या वश है? तिस पर भी गांव की लड़कियों की सस्ती प्रेम-लीलाओं के बारे में जो सुना-पढ़ा था और जैसा उनके बारे में अनुमान था उसे देखते उसका डर और बढ़ गया था। किंतु दस-पंद्रह दिनों बाद उसकी सारी पूर्वधारणा पर पानी फिर गया। वास्तव में यहां आने के साथ ही एक ओर वह पूरे परिवार से हिलमिलकर घर का ही एक सदस्य तो बन गया परंतु दूसरी ओर घर रहकर भी कभी कमली उसे दिखायी कम पड़ती थी। गांव की रहाइस में वर्मा धीमे-धीमे प्रवेश कर रहा था इसीलिए उसे बुलाने में हिचक होती थी और उधर वह कैसी लड़की है जो प्रायः अदृश्य रहती है। नाना प्रकार की कल्पनाओं में उलझी उसकी जिज्ञासा बढ़ती गयी और विद्यालय से घर वापस आने पर लगभग नित्य की यह एक मानसिक उलझन बढ़ गयी कि रामरूप की वह कन्या कहां रहती है? क्यों छिपी रहती है? कैसी है? अंधी-लंगड़ी तो नहीं है?

इसी बीच अचानक एक दिन वह दिखायी पड़ी। बीच वाले आंगन में तुलसी के चौरे को गोबर से लीप रही थी। कमल की ताज़ी पंखुड़ियों जैसे उसके गोबर-सने हाथ मंद-मंद तुलसी-चौरे पर सरक रहे थे। स्वयं कन्या ऐसी भावमग्न थी जैसे पूजालीन है। तुलसी के परिवेश की सारी सूक्ष्म, अतीन्द्रिय और विश्वासों में वास करने वाली पवित्रता ने मानो आकार ग्रहण कर लिया था। मिट्टी के टूटे-फूटे कच्चे घर में ऐसा यह कन्या-रत्न? सचमुच वर्मा उसे देख चौंक गया। उसे लगा, ऐसे निर्विकार सौंदर्य की दमक को ऐसे सहज मानसिक परिवेश में उसने कभी नहीं देखा है। उसने लक्ष्य किया, लड़की सलवार-बुशर्ट में है। वह केवल उसके हाथ-पैर और सौम्य, स्निग्ध खिले मुख-मण्डल को देख रहा है। उसे पहली बार बोध हुआ, वह कोई पोशाक नहीं होती है जो वासना को भड़काती है। यह शहर की पोशाक यहां ठेठ गांव की हवेली में घुस तो गयी है मगर इसने यहां कुछ अधिक नहीं किया। यहां की माटी में खप गयी। धन्य है यह सोनामाटी। वर्मा को याद है, उसे देख कमली तनिक भी असहज नहीं हुई। उसने उसे ऐसे देखा जैसे रामरूप ही है और साइकिल आंगन की दीवार से टिकाकर जा रहा है।···झटके से वर्मा ने तब ट्रेक्टर के मडगाड पर सामने बैठे रामरूप को देखा। अरे, यह मुंह उधर किये कहां डूबा है? चेहरे का खिचाव बता रहा है, कहीं गहरे में डूबा है। कितने गहरे?

सचमुख रामरूप बहुत गहरे में डूबा था। मां ने उसके हाथों में युग-युग की संचित थाती सौंप दी। सारा काम खुशी-खुशी हो रहा है। मगर, उसके भीतर खुशी की लहर उठते-उठते बारम्बार क्यों ऐंठ जाती है? वह क्यों उलटा-पुलटा सोच रहा है? क्यों वह ऐसे सोचने के लिए विवश हो जाता है? वास्तव में धन-प्राप्ति की प्रसन्नता की जो पहली लहर आयी वह थोड़ी ही देर में मिट गयी।··· यदि यह गड़ा धन नहीं मिला होता तो? एकदम उजड़ जाने का दुर्योग जुटा था। ओह! गड़े धन से कितने का कब-कब क्या-क्या होगा?···अपनी पूरी पीढ़ी के पुरुषार्थ को यह कैसा जंग लग गया? वह अपने ही बनाये परंपराओं के सांस्कृतिक जाल में छटपटा कर मर-खप रही है। इस गड़े धन के सहारे ने हमारी नपुंसकता पर मुहर लगा दी।···यह देखो भयानक मूर्खता। इतना धन घर की धरती में गड़ा रहा और रामरूप पूरी जिन्दगी कर्ज और गरीबी में बिलबिलाता रहा। मां ने चाहा होता तो आज वह आदमी की तरह रहता होता।···मौके पर काम आया? धत्तेरे मौके की। यह मृत रूढ़ियों का शोषक पाखण्ड है कि कोई 'मौका' है? इतना धन बीस-तीस वर्ष पहले बैंक में जमा हुआ होता तो आज मैं कई लाख का स्वामी होता।···अब भी जमा हो जाता तो···। मगर यह प्रपंच···कमली का ब्याह, वह मेरी फूल-सी इकलौती बेटी।···अरे रामरूप, तुम्हारा दिमाग पोथी पढ़-पढ़ सड़ गया है। इस समय तुम केवल खुशी मना सकते हो, केवल खुशी और कुछ नहीं। यह देखो, मंगला घाट निकट आ गया। ट्रेक्टर रोककर ज़रा सबको चाय-पानी करा दो। यहां से बड़ारपुर दूर नहीं। लोग करइल की धूल झाड़कर कपड़े बदल लें। हाथ-मुंह धोकर ताज़े हो लें।

१८

रामसुमेर का घर बड़ारपुर के उत्तरी सिरे पर गांव से कुछ हटकर पड़ता है। वहां जाकर कोइली से भेंट करने में रामरूप को कोई कठिनाई नहीं हुई। उसके मित्र गणित के अध्यापक बीरबहादुर राय ने वादा पूरा किया। रामरूप को विश्वास नहीं था कि यह काम इतनी सरलता से हो जायगा। बार-बार मन में आता, गणित का अध्यापक है, सो गिनकर नाप-जोखकर सटीक संयोग बैठा दिया। सुमेर बुढ़वा किसी का विश्वास न कर कोइली को जैसे दिन-रात अगोरता रहता है। कहीं जाने पर ताला हन देता है और कुंजी को एक मोटे सूत की रस्सी में गले में डाले रहता है। उस दिन शाम को तिलक देखने गया तो उसे क्या पता था कि वहां लोग उसे भंडारघर का मालिक बना देंगे। बेचारा फंस गया। बीरबहादुर ने देखा, गले में आज कुंजी की माला नहीं है और कुछ सोचकर भंडारघर संभालने की प्रार्थना की और कहा, 'काका, यह काम नये लोगों के बस का नहीं।

आप जैसे बूढ़-पुरनिया लोग जीवित हैं तब तक इज़्ज़त संभलती जाती है। ...बस, आप भंडारघर में चले चलिए। क्या करना है वहां ? बस बैठे रहें। ज़रा एक पंखी ले लें। पूड़ी बनकर आती है तो उसे करीने से सजाकर रख दें और तनिक पंखी डुला दें।...आप लोगों को पूरा अनुभव है। नये लोग भला यह काम कर सकते हैं?...चाय-पानी सब समय-समय पर मिलता रहेगा। कुछ ज़्यादे समय नहीं लगेगा, बस एक-दो घंटा संभाल दीजिए। इज़्ज़त का मामला है।'

अब बुढ़वा क्या करे ? बार-बार ध्यान जाता, बाहर ताला लगा तो दिया है किंतु कुंजी खूंटी पर ही टंगी रह गयी। सोचा था, प्रसाद लेकर सूर्यास्त होते-होते आ जायेंगे पर यहां तो पूरी मलिकाई कपार पर आ गयी। मलिकाई ? बेचारे को क्या पता कि पूड़ी 'सेरवाने' का काम तो सुबह से ही मोहना माली कर रहा था। थक गया तो उसको कुछ आराम देने के लिए बुढ़ऊ को भिड़ा दिया। इधर यह काम हो गया, उधर 'उस' कार्य में बाधा नहीं रह गयी। बीरबहादुर भी खूब गोइंया है। सायंकाल से ही घात में था कि कैसे अंधेरा होने के कुछ बाद तक बुढ़ऊ को यहां रोका जाय। उसने बाबू रघुनाथ सिंह के प्रबंधक के रूप में अपने को समर्पित कर दरवाज़े पर दौड़-धूप शुरू की। गांव में से ढो-ढोकर नयी-नयी रजाइयां आ रही हैं। तिलकहरू लोगों और अन्य रिश्तेदारों के हर पलंग पर एक रजाई। जाड़े के परोज में यह परेशानी बढ़ जाती है न ? मगर यहां बड़ारपुर में कोई खास परेशानी नहीं। अच्छे लोग हैं। फिर लेन-देन की भयवद्दी में रघुनाथ सिंह की धाक है। लोगों के घरों के भीतर से धराऊं रजाइयां निकलती चली आ रही हैं। रंग-रंग के चमकदार तोशक, तकिया, चादर, कालीन, शाल-दुशाले और रजाइयों की मंगनी ठेलमठेल में हो गया एक दिन के लिए गरीब गांव के वैभव का खोलला प्रदर्शन। गांव में ऐसे परोज के मौकों पर कोई भी 'मालिक' बन जाता है। मालिक के रूप में बीरबहादुर ने देखा कि भंडारघर की 'मलिकाई' की आनरेरी पोस्ट कुछ देर के लिए खाली होने वाली है और मामला बैठ गया।

तिलक की साइति आने में अभी डेढ़-दो घंटे का विलंब था। अत: जलपानादि के बाद बीरबहादुर राय के साथ गांव के उत्तर ओर शौच के लिए जाने में कोई बाधा नहीं थी। रघुनाथ सिंह के सजे-सजाये द्वार पर उस दिन बहुत भीड़भाड़ थी। सुबह से ही रेकार्डिंग हो रही थी और सजावट की चहल-पहल थी। लंबे-चौड़े दरवाज़े पर तीन-चार कतार में लगाये गये पलंग लोगों से खचाखच भरे थे। जाड़े का मौसम होने के कारण बाबू साहब ने तम्बू-टेंट की व्यवस्था की थी। एक-एक पलंग पर चार-चार, पांच-पांच जने। तिलकहरू लोगों की कतार वाले पलंग भीड़मुक्त थे। एक पर सिर्फ एक सज्जन। उसके इर्द-गिर्द सिर्फ पान-सुपारी आदि वाले ही मंडराते थे। पलंगों की तीसरी-चौथी कतार, जिसमें गांव के भाई-भयवद जुटे थे, अधिक शोर-शराबे में डूबी थी। जलपान का दौर समाप्ति पर

आता नहीं था। इक्के-दुक्के या थोक-थोक लोग अभी भी चले आ रहे थे। कहां लगता कि फल-मिठाई और नमकीन की महंगाई है? कागज की रंगारंग तश्तरियां पूरी उदारता से भरी हैं, एक-एक आदमी पर दो-दो और फिर छोटे-छोटे ट्रे में ऐसी कितनी तश्तरियां अंटेंगी? लोग खलिहान में ओसावन करने वाले 'पनिहा' में सजाये दौड़ते आते हैं। कोई छूट न जाय। इज्जत चली जायगी। खूब खिलाओ-पिलाओ।···अरे हां, अपने टेंट का क्या लगता है? आन के मत्थे यह इज्जत और वाहवाही का शानदार सेहरा सिर पर चढ़ा लेना है। भार जिसके मत्थे है वह रोये-गाये या उजड़े-बसे। लड़की पैदा किया तो उसकी सजा भोगो। रो-रोकर रंग बांधो।

रामरूप ने भी भरपूर रंग बांधा है। इस रंग को बाहर से देखकर आह्लादित होता है और भीतर से गहरे अनुभव में उतरकर रोता है। अरे, कितनी शोषक दासताओं से मुक्ति के लिए कैसी-कैसी कितनी लड़ाइयां इस देश को लड़नी हैं! ···लेकिन लड़ेगा कौन? यहां तो हर शूरमा मृत परंपराओं को समर्पित है। शौच के लिए चौथी कतार से गुजरते रामरूप ने देखा, एक बूढ़े सज्जन अपने बहुत छोटे-छोटे तीन-चार नाती-पोतों को लादे भयवद्दी करने आये हैं और मिठाई आदि परसने वालों से बहस कर रहे हैं, लड़के छोटे-छोटे हैं तो क्या इन्हें भी पूरी-पूरी भरी तश्तरियां चाहिए।···अच्छा, लो बाबा, पूरी-पूरी लो। क्या करोगे?···हां, गमछे में बांध लो। रसदार मिठाइयों की दाग लगने दो।···परसने वालों का क्या जाता है? बाबा खुश। मार लिया···। हां, मार लिया। बस इतना ही तुम्हारे वश में है बाबा। लुटते हो और लूटते हो। आंखों पर पट्टी पड़ी है। भोले बैल, समाज के कोल्हू में नधे खपो और फिर सिखला दो इन नन्हे-मुन्नों को। परम्परा टूटे नहीं। मज़ा पुश्त-दर-पुश्त आता रहे।

सुमेर बुढ़वा के दरवाजे पर पहुंचकर बीरबहादुर ने सबसे पहले लक्ष्य किया, कुंजी की माला खूंटी में यथावत लटक रही है। उसने नौकर से कहा, 'ये महुवारी के रिश्तेदार शौच आदि से निवृत्त होकर यहां संध्या पूजा करेंगे। मैं भी यहीं हूं। ज़रा कऊड़ पर तम्बाकू और ईख की सूखी खोइया रख दो। शौच के बाद हम लोग हाथ-पैर सेकेंगे। हां, तुम कथा सुनने नहीं गये? जाओ, जाओ, वहां फल-मिठाई और नमकीन-चाय की धूम मची है और तुम बाबू साहब के नौकर होकर कुछ नहीं पाये। अब हम लोग यहां हैं, तुम चले जाओ। तुम्हारा दरवाजा अगोर दिया जायगा। संध्या-पूजा में घंटा भर तो लगेगा ही।'

नौकर एक बार असमंजस में पड़ा परंतु दूसरे ही क्षण मिठाइयों के हल्ले ने जीभ के पानी को तेज कर दिया। बुढ़ऊ की मझली लड़की जो आजकल यहां रहती है कोइली की लड़की के साथ पहले ही वहां चली गयी थी। पट्टीदारी का मामला था। अब नौकर के जाते ही रास्ता साफ हो गया। ताला खोलकर बीरबहादुर ने

रामरूप को भीतर कर दिया। फिर ताला बंद कर कुंजी यथास्थान टांगकर वह कऊड़ पर बैठ गया। यदि कोई आ गया तो भी गड़बड़ की संभावना नहीं। रामरूप ने उसे उस संकटकाल में यदि बंड़ेरी फांदकर निकल जाने दिया तो वह रामरूप को भी अवश्य समय से सुरक्षित निकाल देगी।

रामरूप भीतर बढ़ा तो उसके पैर कांप रहे थे। तुलसी की चौपाई याद आयी, 'कीन्ह चहौं निज प्रभु कर काजा।' फिर होंठों पर हंसी आ गयी, ससुर जी उसके प्रभु कब और कैसे हो गये ? हां, एक कलंक है कि उसे उसने भगा दिया। सो, वह कलंक मिटे। लो, मिला दिया। संभालो अपनी कोइली को। लेकिन एक नरक को छोड़ दूसरे नरक में वह जायेगी क्यों ? उसे कैसे समझाया जाय कि करइल का नरक उत्तम है। पता नहीं यहां उसकी क्या स्थिति है ? यह तालाबंदी तो बता रही है कि कारागृह के बदनसीब कैदी से बेहतर उसकी स्थिति नहीं है। ···नहीं, इस जेल से उसे निकलना होगा। उस दिन एक संक्षिप्त से जटिल संत्रास के क्षण में जो रामरूप ने उसे देखा था तो उसे जाने कैसा लगा था। करुणा का एक अज्ञात हाहाकार उसके भीतर उठा था। दुष्टों के चंगुल से यह देवी बचनी चाहिए। पता नहीं कैसे रामरूप के भीतर गहरे में ऐसा एक झीना विश्वास बैठा था कि वह फिर कहीं जरूर मिलेगी। सो, मिल गयी और इसी कार्यवश तो उसे तिलक पर आना पड़ा। अन्यथा सनातन कुल परंपरानुसार अपनी पुत्री के तिलक पर पिता लोग नहीं जाते हैं। उसे कुछ लोगों ने टोका भी था, 'अरे आप भी जायेंगे ?' इस पर लापरवाही से उसने उन्हें उत्तर दिया था, 'तो क्या हुआ ?' जैसे वह इतना पढ़ा-लिखा आधुनिक आदमी परंपराओं की परवा क्यों करे ? वह जरूर जायगा।···लेकिन यह परंपरा-भंजन का उत्साह नहीं, कोइली का शायद चुंबकीय आकर्षण था कि बड़ारपुर तिलक पर आने के संदर्भ में रामरूप द्विधाहीन था। द्विधा और आशंका सिर्फ इस बात को लेकर थी कि जहां नयी-नयी रिश्तेदारी हो रही है वहीं यह लंदफंद काम नधा, कहीं से यदि कुछ भेद खुला तो कितनी अप्रतिष्ठा होगी।···कहीं ऐसा न हो कि वह एकदम न पहचाने और कोई लफंगा-उड़ाका समझ हल्ला करे। हल्ला न भी करे तो उससे कौन-सी बात की जायेगी ? जहां से मुक्त होने के लिए उसने उस प्रकार जान पर खेलकर बंडेरी फांदने जैसे साहसिक कार्य में अपने को झोंक दिया था फिर वहीं वापसी के लिए कौन-सा मुंह लेकर रामरूप उससे प्रस्ताव करेगा ?···कौन होता है रामरूप ऐसा प्रस्ताव करने वाला ? किस नाते वह ऐसा करेगा ? क्या वह अपनी करुणा को भुनाने जा रहा है ? अथवा नये सुग्रीव की भूमिका में दलाली बतियायेगा ? ओह, कितना नीच कार्य है ! रामरूप, तू इतने पतन के गर्त में कैसे ढह गया ?···यह किसी अनजाने गृहस्थ का मकान, उसमें तू ठीक चोर की तरह घुसा, चोरी करने के लिए, उसकी 'पत्नी' को भगाने के लिए, इस अधमता के लिए तुम स्वयं को

क्या जवाब दोगे। एक उच्च विचारों का आदर्शवादी अध्यापक होकर कैसे इस सीमा तक भ्रष्ट हो गया ?

अंधेरी दलान को लांघने में ही समुद्र लांघने जैसी कठिनाइयों ने उसके पैरों को जकड़ लिया। वह खड़ा हो गया। नहीं, अब भी वक्त है। वह इस कुकर्म से बाज आया। कौन होती है उसकी यह घाट-घाट का पानी पिये कलंकिनी नारी ? ऐसी बाजारू औरत के लिए वह इतना बड़ा खतरा क्यों मोल ले ? वह लौट जाएगा।···वह लौट पड़ा। अंधेरे में फाटक के पास आया। तीन बार ठक्-ठक्-ठक् करने पर बीरबहादुर फाटक खोल देगा।···मगर यह ठक्-ठक् भी अब कितनी फंसान की चीज सिद्ध हो सकती है ? पीछे दलान के बाद खम्हिया है। खम्हिया के बाद आंगन है। आंगन के बाद फिर खम्हिया जिसके एक सिरे पर से लालटेन का प्रकाश आ रहा है। अवश्य ही कोइली वहीं कहीं है। बाहर से फाटक खोलना-बन्द करना तो बाबू साहब का क्षण-क्षण का रोजगार है। उसकी ध्वनि के लिए वह सामान्यत: अभ्यस्त है। परंतु यह भीतर से ठक्-ठक् ? एकदम चौंका देने वाली चीज़ होगी। वह चट चौंककर पूछ सकती है, 'कौन ?' उत्तर न देने पर और गजब। हल्ला कर सकती है, 'चोर ! चोर !!' कुत्ते-बिल्ली का संदेह हुआ तो भी लालटेन लेकर इधर आ सकती है और तब क्या होगा ?···चलो रामरूप, तब जो हो सकता है वह अभी हो जाय। ओखली में सिर पड़ गया तो चोटों का अब क्या डर ?···नहीं, अब आगे ही बढ़ा जा सकता है।

पता नहीं कैसे एक गजब का विचार उसके भीतर आया।···झटके से चल-कर शोर करने से पूर्व उसका मुंह दबा दें। फिर देवकीनंदन खत्री के अय्यारों की भांति उठा ले चलें। हां, उठा ले चलें। पर उसके बाद ?···उसके बाद ? रामरूप को अपने इस विचार पर बहुत गहरा पश्चात्ताप हुआ। एक सभ्य आदमी होकर वह यह सब ऐसे मांगलिक मौके पर क्या सोच रहा है ? ठीक लिखा तुलसी ने कि कुपंथ पर पैर बढ़ते ही बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। रामरूप, तू सभ्य जरूर है पर तुम्हारे भीतर कहीं कोई बर्बर गुंडा जरूर छिपा है। कहीं उसी के बहकावे में तो तू नहीं पड़ा है ? सावधान···!

आहिस्ते-आहिस्ते आंगन में आकर उसने अपने को सहज किया और अत्यन्त सधे हुए स्वाभाविक किंतु नाटकीय अन्दाज में बोला—

'अरे कोइली, तू कहां है···?' बहुत कोशिश करके भी अन्त में 'बेटी' शब्द का उच्चारण वह नहीं कर सका।

सवाल के इस अपरिचित और अप्रत्याशित ताल-सुर से वह एकदम चौंक उठी और 'प्रेमसागर' को परे कर लालटेन लिये एकदम आंगन में आ गयी।

'कौन बोल रहा है भाई ?' उसने लालटेन को दाहिने हाथ में उठाकर एकदम मुंह पर कर दिया। तभी भक् से सारा आंगन-घर तेज़ रोशनी में नहा उठा।

कोइली नहीं, रामरूप चौंक उठा। तो, इस गांव में बिजली की लाइन घर-घर आ गयी है और करेंट अब आया है? बहुत बेमौके आया। एक रक्षक जो अंधेरा था, गया। अब ठीक सामने लालटेन जमीन पर रखकर एक अदद चकित नारी उसे घूर-घूरकर नीचे से ऊपर तक देख रही है।

'पहचाना ?' उसने कहा।

'नहीं।'

'वही, जिसकी करमजली बेटी बन उस दिन बंड़ेरी से कूदकर तू सुरक्षित भाग आयी।'

'अच्छा, मास्टर जी ?···कैसे आप आ गये यहां ?' लगा, वह कहते-कहते भय से कांप गयी।

रामरूप ने सारा हाल संक्षेप में बता दिया। सुनकर वह स्तब्ध-सी हो गयी। कुछ क्षण तक आंगन में दोनों व्यक्ति एक-दूसरे को देखते खामोश खड़े रहे। रामरूप सब कुछ भूल साहस जुटा रहा था कि वापसी की बात कैसे उठायी जाय शब्द नहीं मिल रहे थे और समय भारी लग रहा था।

'मास्टर जी', कोइली की कंठध्वनि थी बहुत साफ, 'कहीं आप भी मुहब्बत की चक्करबाजी में तो नहीं फंसे ?'

रामरूप के भीतर धक् से हो गया। भीतर से कोइली ने उसे शायद एकदम नंगा कर दिया था। उसे आश्चर्य हुआ, गांव की लड़की तो ऐसी भाषा सिखाने पर भी प्रयोग में नहीं ला सकती। कौन है यह कोइली ? चुल्लू भर पानी में डूब मर रामरूप ! कन्या के तिलकोत्सव का पवित्र अवसर छोड़ तू घरघुसरा बना अभी-अभी कैसी चपत खा गया ? बोल, बोल, उत्तर दे। अब तुम्हें क्या कहना है ? पढ़ा-लिखा बुद्धिमान नागरिक भाव-सम्पन्न तू कुछ जवाब सोच···।

'अपने बेटे-बेटियों से किसे मुहब्बत नहीं होगी ? उस दिन तू बनी न करमजली बेटी···।' रामरूप का स्वर लड़खड़ा रहा था और हथेली में पसीना आ गया था।

'बेटी तो मैं बाबू हनुमानप्रसाद की, सुमेर बाबू की, सुग्रीव जी की और पहले के दो जने और की भी। अब आप आये···।'

'अरे मैं एक खास काम से तुम्हारे पास आया हूं कोइली।' रामरूप ने अपने को संभाला। यह तो कहीं हाथ नहीं रखने दे रही है। गजब है। ऐसी तल्ख़ और तेज़-तर्रार शुरू से है या अनवरत ठोकरों ने बना दिया है ?

'अपने गरीब बाप के घर जवान हुई तब से हर आदमी हमारे पास 'खास' काम के लिए ही आया है मास्टर जी। यहां एकदम एकान्त है। कहिए, सेज लगा दूं, अपने को सौंप दूं ? एक बेटी और क्या कर सकती है ? यदि सुग्रीव जी की तरह आप भी कहीं और सौदा कर आये हों तो 'राज-सुख भोग' के लिए उस पांचवें बाबा के पास आपके साथ चलूं ?···बोलिए, चुप क्यों हो गये मास्टर जी ?

हमको हुक्म दें।'

सुग्रीव का रहस्य जानकर रामरूप को डूबते-डूबते जैसे तिनके का सहारा मिला। उसने कहा—

'पहले तुम मेरी बात सुन लो तब मुझे इतने तीखे-तीखे व्यंग्यबाणों से बेधो। मेरा अपराध यही है कि मैं तुम्हारे यहां एक समाधान के लिए आया हूं। बस एक मिनट में मेरी बात सुनकर कोई निर्णय दे दो।'

'तो ठीक है, कहिए। परन्तु रुक जाइये।' उसने कहा और बरामदे में चट चारपाई पर बिस्तरा लगाकर तथा उसके सामने एक स्टूल रखकर झम् से एक घर में चली गयी। रामरूप ने लक्ष्य किया, यह रेशमी साड़ी, ये गहने, तब से कुछ और खिल-सा गया चेहरा, इस कैदखाने में बूढ़े के साथ इतनी प्रसन्न कैसे है ?

लेकिन यह कैदखाना क्यों है ? बरामदों के अन्त में बोरों की छल्ली लगी हैं। उधर अहरा पर खूब बड़ी कहतरी में दूध औटाने के लिए बैठाया हुआ है। गदरायी हुई छीमियों वाली एक बोझ मटर आंगन में एक कोने में रखी हुई है। आलमारी में मोटी-मोटी पुस्तकों की ढेर लगी है। बरामदे की इंच-इंच भर दीवार सिने-तारिकाओं के कलेंडर से भरी है। सुमेर बुढ़वा बहुत अलमस्त जियरा है।

कोइली लौटी तो उसके हाथों में एक बड़ा-सा थाल था, लड्डू-पेड़े, रसगुल्ले, इमरती और कलाकंद आदि उत्तम मिठाइयों से भरा हुआ।

'बुढ़ऊ बालम ने मेरे लिए यह सब बाजार से मंगवाया है। देखा न मास्टर जी ? कितना प्यार है। कह रहे थे, हम लोग वहां रघुनाथ सिंह के द्वार पर उतना-उतना खायें-पियेंगे और तुम अकेले घर में क्यों भला सिहकोगी ?···तो बैठ जाइये भाग्यवश आप आ गये हैं। लीजिए, पहले खाइये। तब बात करूंगी।' वह मचिया खींचकर पास ही बैठ गयी।

'विलम्ब होने पर वह आ जायेगा तो···।'

'चिंता मत कीजिए। खाइये।'

एक-एक कर आज्ञाकारी बालक की भांति रामरूप को बहुत सारी मिठाइयां खा जानी पड़ीं। पानी देकर उसने पान दिया। फिर बोली, 'अब कहिए।'

रामरूप ने बहुत सहज भाव से उसके भगने के बाद वाली करइल जी की नाराजगी और उसे सताने वाली घटनाओं की चर्चा करते हुए बहुत-बहुत दुःख के साथ कहा कि सुग्रीव अब भी उसके ससुर जी का विश्वास-पात्र बना हुआ है।

'मैं सिर्फ इतना चाहता हूं कि बाबू हनुमानप्रसाद जी की गलतफहमियां दूर हो जाएं।' उसने अन्त में कहा।

'वे कैसे दूर हो सकतीं हैं ?'

'एक बार वहां चली चलो।'

'यह नहीं हो सकता। अब मैं इस दरवाज़े के बाहर पैर नहीं रख सकती। बहुत भूल-भटक कर अब मन स्थिर हो गया है। अब यहीं हमारा सासुर है और यहीं हमारा गंगा नैहर है। वहां हमारा क्या है कि चलूं ?'

'वहां तुम्हारे सुग्रीव जी हैं···।'

रामरूप को कहते-कहते याद आया, वह जब भी उसका नाम लेती है, आगे 'जी' लगाती है।

सुगीव का नाम आते ही वह सिर झुकाकर खामोश हो गयी। क्षण-भर बाद बोली—

'अब क्या है ? प्रेम और विश्वास-भरे अन्धे जवानी के जादू से मैंने अपने को मुक्त कर लिया है। सुग्रीव जी से कह दिया है, अब वे यहां न आवें। बुढ़ऊ देवता से कह दिया है, अब वे आवें तो हरगिज़ भेंट न करने दें।'

'यदि वह मेरी तरह यहां चोरी से चला आवे तो ?'

'शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा लूंगी।'

'अरे, वह तुम्हारा प्रेमी तुम्हें जलने देगा ? जल ही जाओगी तो वह भी तुम्हारे साथ जल मरेगा।'

'काश कि वह ऐसा होता ! उसे तो सिर्फ रुपया चाहिए।'

'फिर भी तुम उस पर मरती हो !'

'अब नहीं···अब आप पर मर रही हूं। आप पर लगे अछरंग को देखियेगा, मैं दूर कर दूंगी।'

इतनी देर में पहली बार कोइली के मुंह पर मुक्त हंसी की लहर आयी थी।

'कैसे ?'

'यह अभी नही बताऊंगी।'

कोइली ने कहा और उसके कथन में ऐसे विश्वास की झलक थी जिसने रामरूप को भीतर से गद्गद कर दिया। ससुर जी का भ्रम दूर हो जाये तो वह जी जायेगा।

रामरूप चलने लगा तो कोइली ने अत्यन्त अधीरता के साथ उसका हाथ पकड़ लिया। बोली, 'कुछ और रुक जायेंगे तो कुछ हर्ज होगा ?'

'तुम्हीं सोचो।' उसने कहा और फाटक की ओर बढ़ा।

१६

गरदन तो जिस किसी एक आगन्तुक की न नपती होती है, गांव के सैकड़ों

लोगों को तो बस जलसा और खाने-पीने का मौज-पानी चाहिए। और क्या ? रघुनाथ सिंहवा मौके पर कंजूसी नहीं दिखाता है। सुबह से कड़ाही बैठ गयी। गलियां गमक उठीं। क्या शान है बखरी की ? द्वार के आगे का सहन ही नहीं, अगल-बगल की गलियां भी गोबर से लीप दी गयीं। मांगलिक डुग्गी बाजावाली बुढ़िया चमाइन दो घंटा दिन रहते आकर ढिबढिबाने लगी। वातावरण में उत्सवी आह्लाद भर गया। आने-जाने वालों का तांता लग गया। अंधेरा होते-होते भीड़ बढ़ गयी। बैठकखाने पर निरंतर जलपान और चाय का दौर चल रहा है और बखरी में तिलक की तैयारी। साइति विलंब से रही है तो क्या ? नाइन ने आंगन में बहुत पहले चौक पूर दिया। ठंडक से बचने के लिए पूरे आंगन को तिरपाल टांग-कर ढक दिया गया। लोग सांय-फुस बात करते हैं, तिरपाल मलेटरी से झटककर आया हुआ है। भीतर कोहबर में कहीं सात जगह सेनुर-तेल गिराकर टीक दिया गया। कुछ तेल अंगऊं काढ़कर रख दिया गया। कक्कन छूटने के दिन जब डिह-वार पूजने चलेंगे तो इस तेल की जरूरत पड़ेगी। साइति आते-आते तक सत्य-नारायण की व्रत-कथा और पूजन का कार्य शुरू हो गया। आज वर कथा सुन रहा है। इसी चौके पर तिलक चढ़ने का कार्य सम्पन्न हो जायेगा। पुरोहित-व्यासगण बैठे हैं। कलश, गौरी-गणेश और पूजा-हवन का पवित्र मांगलिक परिवेश आकर्षित कर रहा है। तिलकहरू लोगों के लिए आंगन में आसन लगा दिये गये हैं। जोग और सगुन कढ़ाने-गाने वाली ब्राह्मणियां एक ओर बरामदे में बैठ गयी हैं। अन्य तिलक के गीत और गारी गाने वाली गोतिनें और गांव-घर की लड़कियां तथा माताएं-बहुएं पश्चिम ओर बरामदे में डट गयीं। स्वपक्ष के घरेलू दर्शकों ने पहले ही आंगन में ठिठुरे-ठिठुरे एक ओर खड़े होकर अपने लिए जगह छेंक लिया। बहुत भीड़ हो जायगी। सभी देखना चाहते हैं, क्या चढ़ रहा है ? हालांकि अब क्या देखना है ? जो चढ़ना था उधर बैंक बैलेंस बन चुका है। दिखाने के लिए चढ़ जायेंगे, एक्यावन रुपये। आदर्श तिलक के रूप में या एकाध सोने की गिन्नी। कोई हल्ला करता है, अब क्या देर है ? बुलावा भेजो तिलकहरू लोगों को।

तिलकहरू लोगों के कदम हवेली में पड़े और उधर ब्राह्मणियों ने माता दाई के गीत से मन्द स्वर में समवेत मंगल कढ़ाया, 'माता जे उतरेली बाग में, लोग तमासा जाइ'। रामरूप को रोमांच हो गया। सैकड़ों बार का सुना-सुनाया यह सनातन गीत क्यों एकरस आकर्षक बना हुआ है ? और आज क्यों बहुत अधिक स्पर्श कर रहा है ? वह बैठकर व्यवस्थित होते-होते मन-ही-मन गीत की अगली कड़ी दुहराने लगा, 'पान अइसन माता पातरी फुलवा नियरि सुकुवारि।···देखत पाप पराइ।' इसी बीच सामने चौक पर वर आ गया। नाई ने उसके पाद-प्रक्षालन की क्रिया सम्पन्न की। यूनीवर्सिटी में एम० एस-सी० करके शोध कर रहा है तो क्या ? नाइन ने बहुत उदारता से चटक लाल रंग की महावर की रेखाओं से

उसके पैरों को अलंकृत कर दिया है। 'ओम अपवित्रो पवित्रो व···'बोल जल-सिचन पूर्वक पवित्र कर पुरोहितों ने उससे पूर्व सर्वप्रथम हाथ में अक्षत दे संकल्प की क्रिया सम्पन्न कराया। अधिष्ठात्री देव कलश, गौरी-गणेश, आवाहित देव, पंचलोकपाल, नवग्रह और त्रिदेव आदि की पूजा।···उधर ब्राह्मणियां पुरखा जगा रही हैं, 'नदियन दहिया जमावसु, अमृत जोरन। हाटे चलु बाटे चालु, राजा रामचन्द्र। रानी रौतिन पूछेली, के तोरा हृदय संवारल, अगर चनन ले ले।' इस प्रश्न के उत्तर में जो पुरखे जगे अर्थात् इस मांगलिक मौके पर उनका नामोल्लेख आरंभ हुआ और उनकी परंपरा राजा दशरथ और कौशल्या रानी से शुरू हुई तो आगे चलकर रामरूप को आश्चर्य हुआ कि रघुनाथ सिंह के पुरखों में एक उनके बाबा तुलसी खां थे। 'बाब जे हमरे तुलसी खां बाबा, उन्हें भोरा दृश्य संवारना अगर चनन ले ले।' बाहरे नामों में निहित मध्य मध्यकालीन इतिहास? किसी नवाब को खुश करने के लिए अपनी जाति नहीं छोड़ी तो उनकी जाति की ही टाइटिल ले ली! तब से वह चली आयी। इधर लजाकर लड़के लोगों ने छोड़ दी।

रामरूप का ध्यान भंग किया दोनों ओर के पुरोहितों ने। अब उन्हें दो-दो दक्षिणाएं चाहिए, संकल्प की और गौरी-गणपति-पूजन की। और समय होता तो वह इस पूरे तामझाम को सांस्कृतिक शोषण-व्यापार के रूप में ले ले कटु हो जाता। यह उसकी दुर्बलता है। अनेक बार उसने अपने को समझाया है कि यह कर्मठ-जाल, ये गीत और ये दान-दक्षिणा के मौके आज के वक्त की शोभा हैं। परंतु, हर बार कहीं न कहीं से वह उखड़ जाता है। परंतु आज पता नहीं क्यों सब बहुत अच्छा लग रहा है। क्या अपनी पुत्री का मामला है इसलिए? नहीं, यह तो अपने सिर होकर और कठिन दर्द है। तब क्यों वह इतना खुश है? झोले में हाथ डाला तो एक-एक वाली गड्डी की जगह दो-दो के नोट वाली निकल आयी। दक्षिणारंभ में उसी के लाल-लाल मांगलिक पत्तों को उसने बहुत दरियादिली से खिसका कर उड़ा दिया। भीतर कोई प्रबल तरंग है तो फिर बाहर हाथ परवश रहे भी तो कैसे? हां, वर-पक्ष के नाई-बारी आदि पवनी चौंककर खुश हुए। एक की जगह दो? बादशाह है। दशरथ के आंगन में आज कोई जनक आ गया।···अरे, महंगाई कितनी बढ़ गयी। हम लोगों का भी रेट बढ़ना ही चाहिए। बिना हड़ताल-जुलूस के आज इस 'सरकार' ने बढ़ा दिया। तब ब्राह्मणियों के कक्ष से सगुन की गीत-धारा प्रवाहित हो रही थी, 'आरे आरे सगुनी, सगुनवा ले ले आउ। तोरे सगुनवा रे सगुनी होला विआह।' इस सगुन के बहाने पुरखों के जागरण के बाद तिलक वाले इस चौके पर गीतों-गीतों में सिन्होरा लिये 'कुनेलिया' बुला लिया गया। सिंदूर लिये 'सेनुरहरवा' की पुकार हुई और इसी क्रम से बजाज, पंसारी, और पटहेरा आदि वे लोग हाजिर होते गये जिनके द्वारा उपलब्ध कराये गये उपकरणों का प्रयोग विवाह में हो रहा है। ग्राम संस्कृति में

भी कैसा माधुर्य है। भला ये मांगलिक मौके न होते तो इस युग में हम अपनी सामाजिक पहचान को शायद एकदम भूल जाते।

इसी समय रघुनाथ सिंह के बड़े भाई, अवकाशप्राप्त सेना के सूबेदार, ने आंगन में बंदूक की नली ऊपर कर फायर किया—धांय ! रामरूप चौंक गया। अरे हां, हमारी ओर से तो कोई बंदूकवाला आया नहीं ! क्यों आता ? किस धन की सुरक्षा के लिए आता ? यहां आंगन में आज क्या है ?···बस एक परंपरा। उसने सोचा, पुराने जमाने में बंदूक दागी जाती रही होती तो सगुन के गीत में शायद ये औरतें किसी 'बनुकहरवा' का भी आवाहन करतीं। मगर अभी तो ये किसी माली के आंगन से बाहर हुई नहीं—

मलिया के अंगना चननवा के रे गांछ।
तंहवा बिनोद दुलहा खेले जुआ सारि॥
आरे, तंहवा कमली देई रचेली धमोइ।
देखु रे देखु अम्मा दुलहवा बेवहार॥
बंहिया झकझोरे टूटे गजमोती हार।

आखिर नवछट नवही बिटिया और बहुएं कब तक धैर्य धारण करतीं। बूढ़ी ब्राह्मणियों के चलते जोग-सगुन के बीच उन्होंने अपने गीत झूमर और 'गारी' उठा दी। अब हुआ तमाशा। आम तौर से ऐसा सर्वत्र होता है अत: सामान्यत: किसी का ध्यान नहीं जाता परंतु आज रामरूप की मानसिकता तो ऐसी है कि हर चीज़ उसे 'नयी लग रही है और हर लहर उसे भीतर से छू रही है। उसने देखा ब्राह्मणियों का स्थायी में चलता, मंद-मंद मधुर और गंभीर क्लैसिकल मुदमंगल गान सनातन पद्धति पर यथावत् अप्रभावित चल रहा है, 'शुभ बोल, शुभ बोल ए ब्राह्मण, शुभ बोल, सोबरन कलसवा। शुभ ले बाहर भइली बेटी के मायरि, आंचरन ढांपि लीहली···' लंबे कथात्मक संवाद से परिपूर्ण मंगल-गीत। और उधर पश्चिम ओर वाले बरामदे में ठसाठस भरी बालिकाओं और नवहियों के कंठ से नये अकुलाये से झनकते चमकते द्रुत स्वर में पूरे जोर-शोर से ललकार और चुनौतियों-भरा गीत प्रवाहित हुआ—

'ई जनि जनिहो समधी आंगन छोट बाड़े
अंगना के मालिक हवें रघुनाथ बाबू
तिलक लीहें नव लाख जी।'

समधी कौन ! अच्छा, सीधे रामरूप को संबोधन है ! पागल कुमारी कन्याओ, बाप लोगों के कपार पर खेलकर गा लो नवलाख तिलक के गीत ! पता नहीं इस देश में वह दिन कब आयेगा जब निचाट देहात के साधारण घरों में जनमी लड़कियों में सही माने में 'शिक्षा' का प्रवेश होगा और वे परंपरागत विवाह-बनाम खरीद-विक्री के दुष्चक्र से मुक्त होंगी !···मगर, अभी गांव के घोंसलों से

उड़-उड़ कर नगरों की गगनचुम्बी यूनिवर्सिटियों में पढ़ने वाले बाबू लोगों का यह हाल है तो इन खेतों की भोली चिरइयों की क्या बात की जाय !···गया तो था रामरूप विवाह के बारे में विनोद जी से बात करने। सिर नीचे कर कह दिया, बाबूजी जानें !

'द्रव्य दक्षिणा' शब्द सुनकर रामरूप चौंक गया। दो दिशाओं में गीत-गारी का हल्ला है और बीच में पूजन, आवाहन, अर्घ्य, पाद, आसन, आचमनी, स्नान, चंदन, रोरी, सिंदूर, पुष्प, माला, दूर्वा, गंध, दीप, नैवेद्य, दधि, गुड़, अक्षत, भोग और प्रार्थना चल रही है···'विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय···।' अन्त में द्रव्य दक्षिणा।—'एक सांस्कृतिक व्यापार।' आंगन की उस कोलाहलभरी भीड़ में उसके भीतर से अपना जो स्वर निकला वह इन्हीं शब्दों में। ब्राह्मणियां जो गीत गा रही हैं, एक व्यापार है, पुरोहितगण, जो मन्त्रों की धुआंधार वर्षा कर रहे हैं, एक व्यापार है। पश्चिम के बरामदे से जो इतने जोर-शोर से गीत चल रहा है उसके पीछे व्यापार है, सम्पदा घर आ रही है। तिलक-व्यापार से लेकर भोजन-जलपान और भोज-भात के व्यापार तक। नाई, बारी, माली और पनहेरी सभी अपने-अपने व्यापारिक धंधे में यहां नये हैं। अरे, इस एक विवाह-संस्था में कितने-कितने लोगों का धन्धा समाया है? कितने चालाक हैं ये लोग? मूर्ख सिर्फ एक लड़कीवाला यानी रामरूप है। इतने लोगों में एक वही है जो दे रहा है, लुटा रहा है···नहीं, लुट रहा है। बाकी सब लुटेरे हैं। नहीं, 'अब लौं नसानी अब ना नसैहौं।' नशे में पैसे की जगह लाल-लाल नोट खिसकाना मूर्खता है। वह बक्स में पड़ी छोटे सिक्कों की थैली अब निकाल लेगा।

इसी समय बीरबहादुर बाहर से आया और रामरूप के पास बैठकर कान में बोला, 'सुमेर बुढ़वा कुछ देर पहले भंडार घर से निकलकर अपने घर गया तो वह अब तिलक देखने लौटा है और उसके साथ कोई रही है। शायद 'वही' है।' रामरूप ने सुनकर मुसकरा दिया। जिद्द पर अड़ गयी होगी, तिलक देखने चलूंगी। बुढ़वा क्या करता?···यहां कहां होगी? उसने पश्चिम ओर बरामदे में एक अन्वेषी दृष्टि फेंकी और लजाकर खींच लिया। कोई क्या कहेगा? समधी होकर लड़कियों को घूर रहा है। हालांकि यहां खड़े आधे से अधिक युवक यही कर रहे हैं। जाड़े की कड़कड़ाती ठंडी रात में भी कुछ बबुआ लोग काला धूपी चश्मा आंखों पर टांगे समाधिस्थ हैं।···माली ने फूलों की माला उसके गले में डालकर ध्यान भंग किया। माला गले में छन्-से लगी। उसने उसे चट उतार दिया और मफलर से गला बांध दुशाले को ठीक से ओढ़ लिया। यह भव्य दुशाला खानदानी है। अर्थात् तब का खरीदा है जब बिलास बाबा जवान थे। अब कहां मिलेगा? रामरूप का हाथ नोटों की गड्डी पर गया। फिर उसने सोचा, इनकी दक्षिणा तो अन्त में चलेगी।···छोटे सिक्कों को बक्स से निकालने का विचार पता

नहीं क्यों दब गया।

तिलक का मुख्य कार्यक्रम पूरा करने के लिए वधू के भाई अरविंद जी अब चले। पंडितों ने उनके द्वारा वर के पैर धुलवाने की क्रिया सम्पन्न करायी। फिर उन्होंने जल, अक्षत और फूल-माला आदि से उसका अभिषेक किया। अरविंद इन क्रियाओं में कोई गलती नहीं कर रहा है। रामरूप बहुत खुश है। लड़के का कनटोप ज़रा टेढ़ा हो गया है। वह बार-बार बोलकर सीधा कर लेने का निर्देश कर रहा है किंतु गीतों और मन्त्रों के हल्ले में वह निर्देश खो जाता है। रामरूप का ध्यान अब वर्मा की ओर गया। वह अटैची खोलकर चढ़ावे का सामान सहेज रहा है। उधर वर के आगे एक पत्तल रख दिया गया है।···पहले अक्षत, सुपारी, गुड़ और पान-फूल आदि चढ़ रहा है, कलश से छुला-छुलाकर, एक-एक वस्तु पांच बार में। वर पत्तल के ऊपर अंजली फैलाये बैठा है।···बबुआ, ज़रा अंजुली ढीली कर लो, नाई उसे सिखाता है। हां, अब ठीक, चढ़ी हुई चीजें पत्तल में गिरती जायं, कुछ अंजली में भी रह जायं। फलों की टोकरियां तो बस अंजुली से छुला-छुलाकर एक ओर रख दी जातीं। मिष्टान्न के बाद बड़ा-सा फूल का चमचमाता थाल निकला तो दर्शकों की आंखें ज़रा अधिक चौकन्नी हो गयीं।··· अरे मूर्खो, इस थाल में खजाना नहीं चढ़ेगा यहां? आगे बस बर्तनों को देखते जाओ। स्टेनलेस स्टील के सेट हैं, हंडा भी एक बड़ा-सा है—पूरी दुकान लग गयी। आंखें चौंधिया गयीं।···बहुत सामान दिया। घर भर गया। तकदीरवाला है रघुनाथ सिंहवा।···हां, भाई, बहुत दिया। अब क्या कोई घर-दुआर तिलक पर चढ़ा देगा? नगदी तो पहले ही टेटिया लिये थे।···सुन लो, यह टिप्पणी रामरूप और खुश हो जाओ। पास···। अब पान लेकर जो यह पनहेरी खड़ा है उसकी ओर देखो। पान नहीं खाते हो तो क्या? मांगलिक अवसर है। एक बीरा दबा लो मुंह में। लोग तुम्हारा सामान देख-देख चिहा रहे हैं। गौरवान्वित अनुभव करो। फूल उठो। नशे में झूम जाओ।···वह देखो कोई हल्ला कर रहा है, लोगों को पीछे हटाओ।···कहां जगह है?···थान के थान कपड़े, वर के सेट, पुस्तकें, स्टोव ···कितना देखोगे? अन्त में दोनों अटैचियां भी?···अब द्रव्य की बारी···बरक्षा-वाला रुपया और यज्ञोपवीत···और इसके बाद?···पश्चिम वाले बरामदे से पूरे उल्लास में गाना कढ़ता है—

> 'मोरे बबुआ पढ़े रंगरेजी,
> तिलक काहें थोर जी?'

ब्राह्मणियों के पांच जोग-सगुन पूरे हो गये हैं। सो, अब उन्होंने भी लड़कियों के ठनकते सुर में अपनी थरथराती कंठध्वनि मिला दी···अब अपने गीत में तिलक को 'थोर' कहो या ढेर कहो, रामरूप सोने की एक गिन्नी निकालता है··· मंगलम् भगवान् विष्णु···। खेला खतम। अरविंद जी चमचमाती कामदार माला

वर के गले में डाल उसको तिलक लगाते हैं—कस्तूरी तिलकं ललाट पटले···फिर आशीर्वाद, लक्ष्मीस्ते पंकजाक्षे निवसति···और अंतिम अभिषेक के बाद द्रव्य-दक्षिणा का दौर···दक्षिणा और विशेष दक्षिणा। पुरोहित, आचार्य, गुरु, पुजारी, ब्राह्मणगण, ब्राह्मणियां, नाई, नाइन, बारी, बारिन, कमकर, कोहार, कोहाइन, पनहेरिन, भाट, माली आदि— दोनों पक्ष के। वर्मा अपनी नोट बुक में कुछ नोट कर रहा है। वास्तव में वह आरम्भ से ही काफी उत्सुक है और बहुत सारी चीजें उसने नोट किया है। शायद वह गांव के 'पवनियों' के नाम नोट कर रहा है। गज़ब तेज़ आदमी है। पता नहीं इससे वह क्या-क्या तुलनात्मक निष्कर्ष निकाल डालेगा। बहुत ऊंची रुचि का व्यक्ति है। दूसरी ओर विवाह के जुए में ताश के पत्ते की तरह कड़कड़-कड़कड़ नोट खिसकते रहे—वर्मा ने स्टेट बैंक से नोटों की नयी-नयी गड्डियां प्राप्त की थीं। हां तो, इस जुए में एकतरफा हार थी सिर्फ एक आदमी की—बड़ी मारक सांस्कृतिक हार, लड़कियां अब गीतों में एकदम आक्रामक की तरह गला फाड़ रही हैं—'ज़रा टारच दिखा दो तिलक गिनूंगी।···तिलकहरू सालों को खम्भे में बांधूंगी।' गिनो तिलक और बांधो खंभे में···काफी सांप-बिच्छू इन गलियों में भी छिपे हैं।···'ठग लिया लड़का हमारा रे समधी बेईमान! सोने के थारा के कउल किया था, पीतर के थारा चढ़ा दिया रे···।' और क्या-क्या ठगा, सब गिना दो, खूब गहरे में आह्लादित होकर रामरूप मुस्करा उठता है। इधर 'पंडितों की ओर से' अंतिम विसर्जन, अक्षत के छींटों के साथ 'यान्तु देवगणा सर्वे···' और तिलकहरू लोगों के खड़े होते-होते दोनों बरामदों की औरतें खड़ी हो गयीं और अब सीधे स्वर में सीधी गालियां जैसे पीछा करने लगीं। क्षण-भर के लिए आंगन में औरत-मर्द जैसे गड्ड-मड्ड हुए और दरवाज़े के बाहर निकलते-निकलते में रामरूप ने देखा कि बगल में खड़ी एक स्त्री ने अत्यन्त चतुराई से उसे अपने पास बुला लिया।···कौन? कोइली? और कोइली ने संक्षेप में अपनी स्कीम बता दी कि किस प्रकार वह उसके ससुर जी का संदेह दूर करेगी।

क्षण-भर की बात में भी कितना कुछ कह दिया जा सकता है, इसका अनुभव बहुत मूल्यवान था। '···तनी एक हमारी गारी भी सुन लीजियेगा मास्टर जी।' उसके बातचीत के बाद चलते-चलते में कहे अंतिम शब्द रामरूप के मन के भीतर खुदुर-बुदुर कर रहे थे और रात में 'बिजे' होने पर भोजन की पंगति पर जब वह बैठा तो जीभ नहीं, स्वाद के लिए उसके कान अगुआई कर रहे थे। बहुत टहकार ध्वनि में चिरपरिचित परंपरागत जेवनार गीत शुरू हुआ, 'नावन-नावन गोपी आवेली, कृष्ण गरुड़ चढ़ि आवे जी। जेवहि बइठेले राम आ लैछुमन, देली सखिन सभ गारी जी।' तिलक पर राम-लक्ष्मण वाली 'गारी'? चलती है।···तो कंठों के इस पावन मेले में कौन कंठ उस कलकंठी का है?···आगे एक 'गारी' में गाया जाता है, सवाल-जवाब के रूप में कि कहां से विप्र आया? कहां खड़ा हुआ?

वह सुन्दर राम वर का खोजी विप्र जनकपुर से आया और अयोध्या में दशरथ जी के द्वार पर खड़ा हुआ।···नहीं, इस गीत में कोइली का कंठ नहीं हो सकता। फिर अगली गारी '···कोरी-कोरी नदिया में दहिया जमवलीं।' शुद्ध गारी···हां यह देखो, एक कंठ जैसे धकियाकर ऊपर आ जाता है और गाने वाली रामरूप के साथ 'मास्टर जी' जोड़ देती है। '···छोड़-छोड़ भइया मास्टर जी होला बड़ी पीरा।' धत्तेरे की कैसी-कैसी फूहड़ बातें ये औरतें साफ शब्दों में गा डालती हैं और आश्चर्य कि आज सबकी छूट, सब शिरोधार्य, सब मंगलभवन,···अरे, अब तो इसने एक महत्वपूर्ण गारी खुद कढ़ा दिया—

> रिमझिम-रिमझिम देव बरीसे ले
> अंगना में लागी गइली काई जी,
> तहवां रामरूप मास्टर जी की बहिना बंड़ेरी फानेली,
> पड़ि गइली नजर हमारी जी

रामरूप ने ध्यान दिया मुख्य गीत में तीसरी लाइन एकदम दूसरी तरह है। इसलिए अगुआ कंठ ने नये और विशेष संदर्भ से उसे जोड़कर, कुछ परिवर्तित कर और जोर लगाकर सबको ढककर उसे अति टहकारी ध्वनि में उछाल दिया !···तो 'वह' संदर्भ यहां गीत में उछल गया ?

पूड़ी···पूड़ी।···परसने वाले सिर पर सवार हैं।

सब्जी ! चटनी !! रायता !!!

और कहां डूबा है रामरूप ? कितने स्वादों में ?

> काहे तुहू सुन्दरि बंड़ेरी फानेलू ?
> मारे लू करेजे कटारी जी।

···अच्छा, अच्छा, कोइली गा ले जीभरकर अपनी रामकहानी हमारे मत्थे मढ़कर।

गाली खाने वालों में मुख्य था रामरूप, इसके बाद अरविंद जी। वर्मा सहित अन्य तिलकहरुओं का नाम भी औरतों के पास पहुंच गया था और वे बारी-बारी से सबको 'चने के खेत' में पटक रही थीं। सबकी बहनों को रघुनाथ बाबू की गलियों में अकेली देख जैसे थपरी पीट-पीट आह्लादित हो रही थीं।···अपना देश भी खूब है। उसने मंगलमयी गालियों का आविष्कार किया। उनको ऐसे स्वाद से परिपूर्ण किया जिसे कानों से उतारे बिना जीभ से उतरा सारा भोजन का स्वाद भीतर फीका।···अरे बहुत कम खाकर भी रामरूप कितना अघा गया।···क्या बन्दूक दगेगी ? रघुनाथ सिंह की हवेली से गालियों की गोलियां अतिथियों के अंचवते तक पूरे जोर-शोर के साथ दनादन दगती रहीं और अन्त में झूमर-स्वर वाली गालियां द्रुत ताल स्वर में जैसे चहका हो गयीं।

उस रात गाली खा अघाया रामरूप सोने भी कहां पाया ? सुबह साइकि

नहीं थी अतः बिदा-बिदाई और लगन-पत्री का कार्यक्रम भोजननोपरान्त रात में ही सम्पूर्ण करना था। दोनों पक्ष के नाई-बारी आदि सजग हैं । ठंडक चरमोत्कर्ष पर है परंतु वे अधनंगे मंडरा रहे हैं। शायद ऐसे ही जीवों के लिए लकड़ियां जलाकर बहुत बड़ा कऊड़ बनाया गया है। तिलकहरू लोगों में से भी कुछ लोगों ने हाथ-पैर सेंक लिया। बाबू रघुनाथ सिंह उस रात पहली बार तिलकहरू लोगों वाली चारपाइयों की पंक्ति की ओर आये। उनके हाथ में धान से भरी एक डाली थी। पुरोहित जी के पास उसे रख दिया गया। दोनों पक्ष के पुरोहित वहां जुटे थे। पंचांग खोलकर जो विमर्श आरंभ हुआ वह पांच-सात मिनट से अधिक नहीं चला और बाबू साहब के बूढ़े पुरोहित जी कंटोप पहने माथे पर गमछा रख 'लगन-पत्री' लिखने बैठ गये। आदत की बात थी।'···श्री गणेशाय नमः' के बाद 'आदित्यादि ग्रहासर्वे···'। लगन-पत्री की भाषा संस्कृत है। पास बैठे रामरूप ने लक्ष्य किया, श्री शुभ सम्वत्···मासाणां उत्तमे मासे···आत्मजा महुवारी ग्राम निवासिनः···ख्रिष्ट तिथौ पाणिग्रहण भविष्यति···' तदुपरांत एक आयत में एक और आयत बना, उसके कोनों को मिला कुल १२ खाने बना तमाम ग्रहों की स्थिति उसमें अंकित कर दी।···पिसी हुई हल्दी का छींटा मार, उसे पीले सूत में लपेटा गया···दोनों पक्ष को अंजुरी से आधा-आधा धान बांट जब तक लगन पत्रिका का काम समाप्त हुआ, नेग-जोग वालों की फौज ने पूरी तरह उन दोनों चारपाइयों का 'घेराव'-जैसा कर दिया।

अजीब दृश्य था। चारों ओर चारपाइयों पर रजाइयां ताने लोग सोये-सोये फों-फों कर रहे थे। घोर ठंडक की कड़कड़ाती रात जम कर थिर हो गयी थी और यहां दोचारपाइयों पर लेन-देन का रतजगा चल रहा था। दोनों ओर की लिस्टों का निपटारा हो रहा था। बाबू साहब की लिस्ट में मजदूरों और सेवकों की संख्या २५ थी। और धोबी, मेहतर, चौकीदार और पुजारी वगैरह सहित इतने ही रात वाले पवनी।···झरो झरो और बरसो रामरूप। बेटी की शादी है, ठट्ठा नहीं। अभी पुरोहित जी को खुश करना है। तिलक के पांच प्रतिशत वाला 'पचोतरा नेग' का ज़माना गया तो क्या हुआ ?···अरे आज तुम राजा जनक हो। कपार के बाल बचकर बड़ारपुर से चले जाएं तो खैरियत मानो।···देखो, अधिकृत-अनधिकृत तमाम मंगनों को संभालो, जनेऊ पहनाने वालों को, पैर मलने वालों को, जेब खाली हो जाने दो।···अरे, क्या सोच रहे हो ? रह-रहकर कहां डूब जाते हो ? कोइली ने बाबू हनुमानप्रसाद के सन्देह को दूर करने के लिए जो रास्ता निकाला है और जिसके बारे में आज उसने बताया वह क्या ठीक है ?···छोड़ो भी। यह देखो, बाबू रघुनाथप्रसाद के पट्टीदार लोग आ गये। तुम्हें शायद कुछ तंग करने के लिए। 'बेटहा' लोग हैं न ? ऊंचे पीढ़े वाले। सुनो क्या कहते हैं ?··· इनके लिए यानी पूरी बरात के लिए विवाह के दिन जो दोपहर में भोजन

बनवाओगे उसमें कच्चे-पक्के दोनों तरह के भोजन की व्यवस्था रखोगे।...बस ? नहीं, कुछ और शर्तें हैं।...सबको शिरोधार्य करो रामरूप। और कोई चारा नहीं। आज के आठवें दिन यानी बुधवार तक के लिए धूर बन जाओ जैसे एक खांची वैसे पचास खांची। फेंकते जाओ लोगों के हुक्मों का कूड़ा।

२०

बत्तीसा ट्रेक्टर लेकर गठिया वापस गया था तो हनुमान प्रसाद ने बहुत भरे मन से उससे सिर्फ यही पूछा था कि विवाह का दिन कब पड़ा है और सुपरवाइजर बिजाधर सहाय से बातें करने लगे थे। उनके भीतर कुछ अटपटा लगा था।... तो कुर्की का मामला फिर इतनी जल्दी तेज़ हो गया है! लेकिन यह अच्छा नहीं हुआ है। कुछ दिन बाद होता तो बेहतर था। अभी तो ऐसे ही उसके यहां फद-फदाहट मची है। मंगल का कार्य है। कार-परोज में सब लोग मदद करते हैं। तिस पर भी तो वह अपना खून है।...पर कहां उसका व्यवहार अपने खून जैसा है? वह तो हनुमानप्रसाद की जड़ खोदने पर तुला हुआ है। काला नाग निकला। अखबार में भाषण और फोटो छपता है उस लंगड़े घसिगरहवा का। हनुमानप्रसाद जैसे गाजर-मूली है। समिति बनती है तो उसमें भी नाम नहीं। सभापति-उप-सभापति नहीं तो हनुमानप्रसाद मेम्बर भी नहीं। उल्टी राजनीति भिड़ाता है। बहुत विद्वान् बनता है।...तो भोगे, अपनी करनी का फल। अरे हां, हनुमानप्रसाद क्या कर सकता है! जस करनी तस भोगहु ताता। दिमाग ज़रा ठण्डा हो जाय। लड़का बिगड़ता है तो कान ऐंठना पड़ता है।...हां, ज़रा बेमौके की बात होगी।

'देखो बिजाधर, अमीन इधर आये तो कह देना वह पहले हमसे मिल लेगा।'

'अच्छा मालिक।'

कुछ देर की चुप्पी के बाद हनुमानप्रसाद ने हंसकर कहा—

'देखो बिजाधर, गमछे में भुजना झोरियाये और कंधे पर लाठी अलगाये जब कोई जवान किसान खेतों की ओर चलता है तो समझ लेना चाहिए कि अब लड़कों के स्कूल जाने का समय हो गया।'

बात कहां मुड़ गयी! बिजाधर ने देखा दखिन ओर से राजकिशोर का लड़का झोला लिये स्कूल के लिए निकला और पूरब ओर से बालदेव का बड़ा लड़का खेत से घास लाने के लिए निकला।...शायद उस प्रसंग से ऊबकर मालिक प्रसंग बदल मन को दूसरी ओर मोड़ना चाहते हैं। ऊबने वाली बात ही है। आखिर वह अपना ही दामाद है। उसकी इज्जत इनकी इज़्ज़त है। लेकिन वह पता नहीं कैसा कोई कांटा मन में फंसा कि सब गड़बड़ हो गया।

'आइये दीवानजी, आइये। आप तो गूलर के फूल हो गये हैं। कहिए, हाल-चाल ?' हनुमानप्रसाद ने कहा।

सामने से दीवान जी को आते देख उन्हें उस दिन सचमुच बहुत प्रसन्नता हुई थी। और दिनों में तो वे उस 'अगड़म-बगड़म आदमी' को टाल दिया करते पर आज उनके स्वर में हार्दिक स्वागत का भाव था। दीवान जी किसी स्टेट के मुंशी या लेखपाल-पटवारी नहीं रहे। काला अक्षर भैंस बराबर जैसे इस किसान के इस नामकरण का एक इतिहास है। एक समय इस गांव में साधुओं की एक जमात आयी। तब श्यामापति उर्फ अब के दीवान जी की चढ़ती जवानी थी। उस जमात में एक नागा बाबा थे। आते ही उन्होंने फरमाया, उन्हें ओढ़ना चाहिए। जाड़े का दिन था। शाम हो रही थी। गांव वाले हैरान हुए। हैरानी की बात यह थी कि रजाई-कंबल आदि का नाम लेने पर नागा बाबा मुस्कराकर अस्वीकार-सूचक सिर हिलाने लगते थे। सारा गांव चक्कर में पड़ा था। बात कुछ श्यामापति की समझ में आयी। वह घर गया। लौटा तो एक बोझ मोटी लकड़ी उसके सिर पर थी। लाकर पटक दिया। नागा बाबा अपना जाड़े का ओढ़ना पाकर प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा, लड़का बहुत विद्वान् है। सो, उसके तत्काल बाद निरक्षर श्यामापति को लोगों ने विद्वान् जी कहना आरंभ किया। बाद में शब्द घिसकर 'विद्वान् जी' से 'दीवान' जी हो गया। श्यामापति ने नागा बाबा की खूब सेवा की और बाद में वह उनका शिष्य हो गया। बाबा ने उसे उपदेश किया कि बच्चा, चोरी मत करना और झूठ मत बोलना। उपदेश गांठ बांध लिया गया।

उस दिन दीवान जी के दाहिने हाथ में मुट्ठी भर घास थी। किसी मटर के खेत से अभी-अभी उखाड़ी गयी थी। सफेद और गुलाबी रंग के फूलों में लतर की ऐसी शोभा थी मानो पौधों की आंखें नीचे लटकी हुई थीं। सफेद मोटे सूत के गुच्छों-सी पौधों की जड़ें मुट्ठी के ऊपर आसमान झांक रही थीं। उसे देख और पता नहीं क्या सोच, शायद इस उलटी गति का विचार कर हनुमानप्रसाद हंसने लगे। चौंक कर दीवान जी उनके एकदम निकट आ गये। चोर की दाढ़ी में तिनका कहीं-न-कहीं जरूर अटका होता है। कऊड़ का एक मोढ़ा खींच उस पर आसन जमाते हुए दीवान जी ने बहुत गंभीर भाव से कहना शुरू किया—

'हे हो ! क्या हंस रहे हो ? गृहस्थ किसान के धर्म में यह बात लिखी हुई है कि सरेहि से खाली हाथ नहीं लौटना चाहिए। बाजार से बिना सौदा लिये और जलाशय से खाली बर्तन लिये लौटना जैसे अशुभ है। उसी प्रकार खेतों की ओर जाकर बिना कुछ लिए लौटना मना है। सरेहि लक्ष्मी का भण्डार है। खेत अन्नपूर्णा मइया की गढ़ी है। जो उधर से हाथ हिलाता लौटता है वह अभागा है। गलती कहता होऊं तो गोली मारो। और हे हो, हमारा तो बचपन से यही नियम बन गया है। हां···आं···आं···, नागा बाबा का चेला बना तब से चोरी और झूठ

से दरकिनार हो गया।'

'लेकिने आज तो आपने चोरी की है। आपके खेत में ऐसी देसी मटर कहां बोई गयी है!' हनुमानप्रसाद ने हुंकड़कर खोंखते हुए कहा और फिर टहला से हुक्का चढ़ाने के लिए कहा।

दीवान जी को विश्वास नहीं था कि इस तरह साफ-साफ शब्दों में चोरी का इलजाम उभर आयेगा। उन्होंने संभलकर कहा—

'चोरी की है! हे हो, चोरी कैसे हुई! प्रकट रूप में तो ला रहा हूं। हमारे खेत में मटर नहीं है तो क्या हुआ! आपके खेत में है न! दूसरे का है न! तीसरे का है न! सारा खेत तो राम का है। गलती कहता होऊं तो गोली मारो। और फिर क्या अपने लिये ले जा रहा हूं? सोचो तो, हां···आं···आं···आं···।'

दीवान जी ने घास को ज़मीन पर रख दिया।

'अपने नहीं खायेंगे तो आपकी गाय खायेगी, एक ही बात हुई।' हनुमान-प्रसाद बोले।

'एक ही बात कैसे हुई! हे हो, गाय और हम एक ही हैं! गाय सिर्फ हमारी है! कृष्ण भगवान् सिर्फ हमारे हैं! पार्वती जी हमारी ही हैं! कहा जाता है, 'गइया मइया लछिमी, बरध महादेव' तब लछिमी जी हमारी ही कैसे हुईं? हे हो, कुछ दिन रहो साधु की टोली, तब सीखो एक बोली। हां···आं···आं···' बहुत गंभीरता से कहते हुए दीवान जी ने हुक्का लेकर फूंक मारना शुरू किया।

'मान लिया कि गाय लछिमी जी हैं। तो क्या आप से उन्होंने कहा है कि घास के लिए छुट्टी है?' हनुमानप्रसाद ने पूछा और यह जानते हुए कि वे क्या उत्तर देंगे। वास्तव में दीवान जी से दिलचस्पी के साथ लोग खोद-खोदकर उस एक बात को बार-बार पूछते हैं और मज़ा लेते हैं।

'नहीं, इसको मैंने अपने गुरु नागा जी से बकसवा लिया था। चेला होने को कहा तो मैंने कहा, कंठी पहनकर दूसरे के खेत में कैसे लात डालेंगे? तब गुरु जी ने 'गऊ गरासी' के लिए हुकुम दे दिया। हां···आं···आं···आं।'

'तब एक मुट्ठी गऊ गरासी से कितना धरम होगा? अरे महाराज, सौ-दो सौ बोझ का यज्ञ ठानो। इस जाड़े में गदराई फसल गऊ लोग खायें कि खाकर अघा जायं। तब ढेर-सा पुण्य होगा।···समझ रहे हो?'

'समझ रहा हूं करइल बाबू' हुक्का पलंग के पाये से टिकाते हुए दीवान जी बोले, 'कहां है मामला? इसी गांव में कि कहीं बाहर?' और मोढ़े से उछलकर हनुमानप्रसाद के पास पलंग पर पैताने की ओर बैठ गये।

'चटाईटोला में।' हनुमानप्रसाद ने धीमे से कहा।

'भीमवा रहेगा?' दीवान जी ने और धीमे से कहा।

'जरूर।'

और इसके बाद दोनों आदमी अत्यन्त धीमे-धीमे, सांय-फुस बात करने लगे। किसी सरेहि के किसी बड़े चक की उमड़ती कच्ची फसल अब स्वाहा। ठिठुरती रात के गहन अंधेरे में कठिन शस्य-यज्ञ ठना है !

बातचीत समाप्त हो गयी तो अत्यन्त ज्ञानी पुरुष की भांति हनुमानप्रसाद बोले, 'अहो दीवान जी, हम लोगों की ज़िंदगी लगता है ऐसे ही खतम हो जायेगी। बहुत कठिन माया है।'

'कठिन तो है', दीवान जी ने सुर्ती निकाल ली और उसे खूंटते हुए कहा, 'मगर क्या लेकर आये हैं और क्या लेकर जाना है। दुनिया में बस नाम-यश रह जाता है। तुम अकबाली पुरुष हो। कोई बैरी पीठ पर धूल नहीं लगा सकता। गलत कहता होऊं तो गोली मारो।'

'यह सब मेरा नहीं आप जैसे मित्र लोगों का प्रताप है। शास्त्र में लिखा है कि शानदार आदमी वह है जिसके कुछ अच्छे-भले मित्र हों तो कुछ दुष्ट और कुटिल दुश्मन भी होने चाहिए।'

'और क्या ? देखो, दिन होता है तो रात होती है। धूप होती है तो छांह होती है। नागा बाबा कहा करते थे कि···।'

'आप लोग ज़रा पलंग खिसका लें' किसुना ने आकर सूचना दी, 'गदहे आ रहे हैं।'

गदहे का अर्थ था कि उस पर लदा सिमेंट आ रहा है। हनुमानप्रसाद के यहां गोबर गैस प्लांग लग रहा है। काम आरम्भ है। सिमेंट की बोरियां लदे गदहों को निकलने की जगह इधर ही बची है क्योंकि उधर एक जोगी बाबा अहरा जोड़कर खिचड़ी बना रहे हैं। हनुमानप्रसाद ने पलंग उठवाकर और उत्तर ओर करा दिया।

गदहा कोई दर्शनीय जीव नहीं है। किंतु दीवान जी आखिरी गदहे की ओर टकटकी लगाकर इस प्रकार देखने लगे जैसे इन्हें उसके बारे में कुछ कहना है। गदहा बहुत धीमे-धीमे चल रहा था। उसके पीछे एक पतली-सी छड़ी लिये धोबिन उसी मन्द गति से चल रही थी। उसके साथ कपड़े से ढकी थाली थी। जाहिर था कि किसी गृहस्थ के घर से भोजन मांग लिया गया था। धोबिन असुन्दर नहीं थी और जवान जैसी लग रही थी। सधे ढंग से संभालकर उठते उसके पैर, उतरा हुआ पीला मुंह और शरीर के मध्य भाग का पसराव, सारे चिह्न बहुत सार्थक थे। जब वह निकल गयी तो दीवान जी बोल उठे—

'हे हो, देखा ? यह हर साल बच्चा देती है फिर जल्दी ही होने वाला है। एक बड़ा लड़का मंगरा पाट पर कपड़े पीट लेता है। छोटी बहनों में सोमरिया, बुधिया, सनीचरी, अतवरिया और सुरजिया पूरे पांच हैं। हां···आं···आं···। नामों के बारे में पूछ रहे हैं ? सुरजिया सोमवार को ही पैदा हुई। सोमरिया एक

नाम पहले से मौजूद था। उस दिन १५ अगस्त था। स्कूली लड़के जुलूस निकाले थे। मंगरा के बाप टांगुन ने पूछा, कैसा मेला है, तो लोगों ने बताया इसी दिन सुराज आया था। इसीलिए जलूस निकला है। हे हो, बस रख दिया लड़की का नाम सुरजिया। एक बात और हुई। स्त्रियों ने कहा किसी पंडित से पोथी-पतरा उलटवाकर पूछना चाहिए कि हर बार लड़की ही क्यों पैदा होती है? बड़ी मुश्किल से आठ आने मे पंडित जी का दर्जा सात पास लड़का आया। कागज उलटकर बोला, बहुत भाग्यवान लड़की है। इसकी पीठ पर सात भाई आयेंगे। तब तुम लोगों का दिन लौटेगा।···सो उसकी पीठ वाले पहले भाई का इन्तजार है। हे हो, अब ये सात हो जायेंगे।'

'अच्छा दीवान जी, एक बात बताइये सच-सच। इनमें से आपके कितने हैं ?' हनुमानप्रसाद ने मुस्करा कर पूछा।

'धत्त मरदे की नाहीं। पड़ोसी होने से का भवा हो? मैं नागा बाबा का चेला अधरम करूंगा ?'

'लेकिन एक का चेहरा तो आप से मिलता-जुलता है।' हनुमानप्रसाद ने झूठ-मूठ मजा लेने के लिए तीर छोड़ा।

'अरे गलती-सही किससे नहीं होती।' निशाना सही लगा।

'कह दीजिए, नसबन्दी करा डाले नहीं तो वे पीठ वाले सातों भाई भी आ गये तो एक गांव और फिर धोबियों का इस गांव में बढ़ जाएगा।'

'कहता तो हूं मगर साली सुनती है? कहती है, कहां जायं। किसके साथ जाएं? वहां क्या होगा? जान चली जाय तब क्या होगा? पेट चिरवाना पड़ेगा··· वगैरह-वगैरह। अब कौन इसे समझाये?···उधर सरकार है कि शहरों में और अखबारों में हल्ला करती है। जहां बेतहाशा आबादी की ऐसी बढ़ोतरी है वहां तक उसकी कहां पहुंच है? इस तरह देश में खाने वाले मुंह बढ़ते जायेंगे तो कहां से अन्न मिलेगा? गलती कहता हूं तो गोली मारो।'

'ठीक कह रहे हो दीवान जी, गांव की सुधि लेने वाला कोई नहीं। जवाहर-लाल पंडित कहते-कहते गुजर गये कि देश में सायकिल युग आ गया है। मैं कहता हूं, देश में चाहे जो हो यहां गांव में बैल युग है। लोग बैल हैं। देहाती समाज में पूरा-पूरा बैल-भाव है। यहां छोटे लोग-बड़े लोग की नाप बैलों की संख्या से होती है। यहां बैलों की पूछ है। संगत भी बैलों की ही है। गांव वालों को मूर्ख बनाने के लिए पहले वोट वाले सरकारी छाप पर बैलों की जोड़ी बैठाई गयी।'

'और बैलों की जोड़ी बिथक गयी तो गाय-बाछा का फोटो आ गया···।'

मनुष्य का मन विचित्र होता है। 'बैलों की जोड़ी' शब्द ने हनुमानप्रसाद के मन में एक नये प्रत्यय को उगा दिया। पल भर में नवीन के बैलों की चोरी के सहारे पावल पांडे का अपहरण, रामरूप की संदिग्ध पार्टीबन्दी और नवीन के

दरवाज़े पर भुवनेश्वर की मीटिंग आदि के चित्र उभर आये। अन्त में अभी-अभी दीवानजी के साथ बनाई गयी एक योजना पर उनका ध्यान केंद्रित हो गया। इस बीच दीवान जी क्या बक-बक करते रहे, हनुमानप्रसाद को कुछ भी सुनायी नहीं पड़ा। अपने विचार-चक्र से उबरकर उन्होंने पूछा—

'अच्छा दीवान जी, आप तो नागा बाबा के चेला हैं, एक बात बताइये। मेरे और नवीन के बीच जो समर ठन गया है, उसका क्या होगा?'

दीवान जी इस प्रश्न से एकदम चकित हो गये और एकटक हनुमानप्रसाद की ओर देखने लगे। कुछ क्षण बाद बोले—

'हमारा ज्योतिष कहता है कि लड़ाई ऐसे ही चलती रहेगी। कभी आप और कभी वह बीस पड़ेगा।'

'कैसे आपने जाना?'

'देखिये, नागा बाबा ने बताया कि वर्णमाला के अक्षरों में क वर्ग बिलार है, च वर्ग सिंह है, ट वर्ग कुत्ता है, तवर्ग नाग है, प वर्ग चूहा है, य र ल व हाथी है, श ष स ह मेढ़ा है और अ आ इ ई वगैरह गरुड है। तो इस हिसाब से नवीन नाग हुआ और आप मेढ़ा। तो अब बताइये न भला, किसको बलवान और किसको निर्बल कहा जाय?' हनुमानप्रसाद बहुत पढ़े-लिखे नहीं है परंतु इस कथित ज्योतिष के हिसाब से उन्होंने अपना और रामरूप का भी हिसाब-किताब कर दिया। यह जानकर कि रामरूप का हाथी उनके मेढ़े से निश्चित रूप से बलवान है, वे कुछ निराश हुए। सोचने लगे, यह ज्योतिष एकदम झूठ है। यदि सच भी है तो मेरी और रामरूप की कैसी लड़ाई? वह तो हमारा लड़का है। जो कुछ लड़ाई है, वह मात्र 'कान ऐंठने' जैसी। किंतु यह नवीन तो खान्दानी बैरी है। फिर उन्होंने दीवान जी से बहुत गंभीरतापूर्वक कहा—

'मेढ़ा बहुत शक्तिशाली होता है दीवान जी, वह नाग को अपनी सींगों और खुरों से कुचलकर नष्ट कर देगा।'

'अरे, किसको नष्ट कर रहे हो राजन', अचानक आये बभनटोली के पुरोहित नन्दकिशोर पांडेय ने टोककर बाधा दी, 'गांव में अनर्थ हो रहा है। उसकी ओर ध्यान नहीं है आपका?'

'आइये पांडे जी, आइये, प्रणाम!' हनुमानप्रसाद ने कहा मगर पलंग से उठकर न तो खड़े हुए और न तनिक खिसके।

'क्या समाचार है? क्या अनर्थ हो रहा है?' संभलकर हनुमानप्रसाद ने तुरंत पूछा। तब तक पुरोहित जी पलंग के सिरहाने की ओर आ गये और कोने की खाली जगह में आसन ग्रहण करने का उपक्रम करने लगे। अब विवशता थी। हनुमानप्रसाद ने पलंग के बीच में खिसक उनके लिए भरपूर स्थान खाली कर दिया। दीवान जी फिर मोढ़े पर चले गये।

'यही कम अनर्थ है कि अभी हाल तक ताल बोया जा रहा था और ऊब-ऊब-कर ही लोगों ने बन्द कर दिया। देखते-देखते फागुन धमक गया। अति विलंब का बोया क्या जमेगा भी? मगर किसान जाति ऐसी अन्धी है कि खेत खाली है तो बोते चलो। बाप-दादे ने इसीलिए एक पर्व बांध दिया कि इस ताल-खाल के गांव में जहां कातिक के बाद ही धीरे-धीरे ताल बोने लायक होकर निखरता है, लोग लालचवश असमय में बोआई कर बेकार परेशान नहीं हों। बोआई की एक सीमा बांध दी जाए। खबरदार उसके बाद कोई ताल में बोने न जाय। सो, पूस मास की अन्हरिया का पहला मंगलवार बीते भर माह हो गया और गांव सोया है।'

'अच्छा, अच्छा। आप कारोबीर बाबा के लावा की बात कर रहे हैं? जरूर बहुत बड़ा अनर्थ हो रहा है। वह सभापति रघुवीर है तो कोट पर बैठा है और चौबीस घंटा कमाने-खाने का धंधा सोचता है। यह बंजर है, यह पोखरी है, यह गेहूं बंट रहा है, वह कंबल बंट रहा है, यह राशन-तेल है···महाभ्रष्ट है। यह उसका काम न है कि गांव में डुग्गी पिटवा···।'

'और वह सभापति होकर देवता-पितर के काम से भी आंखें बन्द कर लेगा तो क्या हम लोग भी उसी के भरोसे अधर्म में सने रहेंगे?···राजन, उठिये। चल-कर उसका कान ऐंठिए, कि रे चांडाल सभापति, तू कुर्सी के मद में ऐसा चूर हो हो गया है कि गांव की परम्पराओं को भी भूलता जा रहा है? कल मंगलवार है, कारोबीर के लावा के लिए ऐलान हो जाना चाहिए। ज्वार इस साल कम है तो दूसरी जिन्स का लावा या चावल-चने का भुजना लोग लावें। डालियों में भरपूर-भरपूर लावें।···राजन, वह दिन कितना अच्छा लगता है जब परंपरानुसार धोबी के घर से आयी चादरों को ज़मीन पर बिछाकर उस पर गांव भर का लावा-भुजना एक में मिलाकर रखा जाता है। गांव का पिरथी ग्वाला जल का अर्घ्य देकर कारोबीर को लावा समर्पित करता है और फिर सारे गांव को बंटता है।··· हां, लावा बंटने लगे तो राजन आप वहां खड़े रहोगे। नहीं तो अब वह पुराना गांव नहीं रह गया। लूट-पाट मच जायेगी।···फिर विधिवत् ऐलान हो, अब कल से बोआई बन्द, महंगे बीज की बरबादी बन्द।···राजन गांव की परंपरा नहीं टूटनी चाहिए। परंपरायें टूट जायेंगी तो गांव टूट जाएगा।'

पुरोहित नन्दकिशोर पांडेय जितनी बार 'राजन' शब्द का उच्चारण करते उतनी बार हनुमानप्रसाद का वज़न एक-एक किलो बढ़ता जाता और पास मोढ़े पर बैठे दीवान जी उचक-उचककर दोनों व्यक्तियों को देखते।

२१

सुबह की धूप उतर आने के साथ हनुमानप्रसाद का परिचित चित्र कऊड़ के पास

वाले पलंग पर उग गया। आते ही बतीसा तलब हुआ।...महुवारी में बुधवार को विवाह है। ट्रेक्टर मंगलवार की शाम को वहां चला जायेगा। बरात विदा हो जाने तक रहेगा। बरात को लाना-पहुंचाना या सामान लाना-लेजाना पड़े तो उन लोगों की इच्छानुसार काम करेगा। हनुमानप्रसाद खुद उस दिन शाम को पहुंचेंगे। बतीसा ट्रेक्टर पर ही न्यौता का कुछ सामान लेता जायेगा—आधा कुंटल चीनी, एक कुंटल आटा और अपने खेत से निकाली गयी एकाध बोरा सब्जी। गहने-कपड़े हनुमानप्रसाद स्वयं अपने साथ ले जायेंगे और उसी के साथ उस दिन शाम को एक टीन सजाव दही भी चलेगी। अपना दूध और कुछ गांव में से लेकर जमा दिया जायेगा। हां, ट्रेक्टर पर दो बड़-बड़ी दरियां, सब्जी बनाने वाले कड़ाहे, पानी का कंडाल, पानी चलाने के लिए जग आदि परोजन वाले बर्तन भी रख लिये जायेंगे। मदद की जाय तो डट कर।

चाय के साथ मटर के टटके गदरे की घुघुनी भी आयी, पूरा एक थाल भर-कर, गरम-गरम। खुबवा लौकी की पत्तियां तोड़ लाया।...एक खांची खाने वाले का काम पत्ते की दोनी से चलेगा? अपने लिए कहीं से नाद खोज ले आ खुबवा, हनुमानप्रसाद ने कहा और कऊड़ पर बैठे लोगों को पत्तियां थमा सचमुच खुबवा अपने लिए मनीजर का तमलेट वाला बड़ा-सा कटोरा उठा लाया। राजकिशोर, पचकौड़ी सेठ और मठिया वाले महंथ जी के लिए हनुमानप्रसाद ने अपने साथ प्लेट में घुघुनी निकाली। पूरे चाय के दौर बात पुलाव की चलती रही। पशुओं के लेहना-चारा वाले अकाल का ऐसा युग आया कि पुवाल धान के भाव बिकने लगा। महंथ जी ने कचरस की बात छेड़ दी। मटर की घुघुनी के साथ मेल ईख के ताज़े कचरस का ही होता है।...मगर इतने सुबह नहीं, हनुमानप्रसाद की टिप्पणी थी।

कुछ चाय बच गयी तो खुबवा की गिलास में भरकर हनुमानप्रसाद बोले, 'ले साला, खूब छककर पी ले और आज तू चलेगा मेरे साथ खेत घूमने।' और फिर महंथ जी की ओर घूमकर बोले, 'कहिये स्वामी जी, मैंने तो सोच लिया है।' इसके बाद जल्दी-जल्दी करते-करते भी सेठ और महंथ जी के खेत वाले झगड़े को निप-टने में एक घंटा लग गया। हनुमानप्रसाद ने दोनों पक्ष को दबाकर और पूरे जोर से हंकड़कर एक निर्णय दिया। जो इस निर्णय को नहीं मानेगा हनुमानप्रसाद उसके खिलाफ हो जायेंगे। क्या मतलब खिलाफ हो जाने का? झगड़ा वर्षों से चल रहा था। इस साल गांव का माथ होने के कारण हनुमानप्रसाद उसमें पंच हो गये। दोनों ओर से नकद ढाई-ढाई हजार की 'दाबी' उनके पास रखी गयी। जो फैसला नहीं मानेगा उसका रुपया दूसरे पक्ष को उसके अपने रुपयों के साथ दण्ड-स्वरूप दे दिया जायगा। इस तरह कितनी वजनी हो गयी हनुमानप्रसाद के खिलाफ हो जाने की बात? लेकिन, गांव के लोग अपने-अपने अनुभव के आधार पर क्या कहते

हैं ?···अरे अब यह करइलवा किसी का रुपया लौटायेगा ? ऐसा फैसला करेगा कि दोनों फिर लड़ने लगेंगे। नहीं भी लड़ेंगे तो लड़ा देगा। फिर कौन मांगने आता है 'दाबी' का रुपया ?···नम्बरी गरकट्ट लुटेरा है। लौटाया है आज तक किसी की दाबी ?

हुंकड़ते-खोंखते और मिर्जापुरी से धरती दलकाते हनुमानप्रसाद तेजी से खेत घूमने निकले तो पीछे-पीछे बिना बटन का मैला-फटा कुर्त्ता और घुटने तक धोती पहने, नंगे पांव सिर पर पुरानी रंगीन लुंगी को जिसे मनचोला ने पिछली बार गिड़गिड़ाकर मांगने पर उसे 'इनाम' दे दिया था, माथ पर बांधे खुबवा किकुरी मारे इस प्रकार लपकता, अगमुंह ढहता चलने लगा जैसे चल नहीं रहा है, बंधा घसिट रहा है। छवर पर आकर अचानक हनुमानप्रसाद खड़े हो गये। क्षण-भर कुछ सोचने के बाद उन्होंने खुबवा से पूछा—

'चटाईटोला में तुम्हारी कोई हितई पड़ती है ?'

'हां मालिक, बहुत पुरानी हितई है, हमारी फूआ ब्याही गयी थी।'

'तो एक काम करो। तुम वहां चले जाओ। ज़रा हवा-पानी ले जाओ। जानते हो न, 'उस' के आठ बीघे के एक चक में अब कटिया नहीं जायेगी। तो, देखो लोग क्या कहते हैं ? नवीनवा क्या कहता है ? समझे न ?···लो, वहां किसी के पास 'माल' मिल जाय तो दम लगा लेना।' कहकर एक रुपये का नोट हनुमानप्रसाद ने उसकी ओर बढ़ा दिया।

दोनों का रास्ता दो ओर हो गया। पूरब ओर खुबवा दूर बढ़ गया तो हनुमानप्रसाद के मन के एक कोने में पावल पांडे की शकल उभर आयी।···नहीं, उसके बारे में अब कुछ सोचना, जानना बेकार है। अच्छा हुआ पाप हवेली से निकल गया। इस विचार से मुंह में ऐसा कसैलापन भर गया कि हनुमानप्रसाद ने पिच्च से थूक दिया। तभी बायीं आंख फड़क उठी। कन्धे से सरककर गिरती लोई को संभालने में दाहिने हाथ में पकड़े सोटे से पैर में चोट लगी। अकारण मन घबरा उठा। लेकिन जल्दी ही वे स्थिर हो गये। पश्चिम का बगीचा पार कर पगडण्डी के रास्ते खेतों में घुसते-घुसते उनका चित्त एकदम प्रफुल्लित हो गया। उन्होंने देखा, सबसे अधिक सरसों महंथ जी के इस झगड़े वाले खेत में फूली है।···पता नहीं उस दस बिस्वे के विवादी खेत में कितने संवादी फूल थे ? परन्तु हनुमानप्रसाद के अन्तरमन में उनकी संख्या जो उमड़ी थी वह 'पांच हजार' थी।

बाहर-भीतर के किन फूलों ने उस नीसठ मन को अचानक रंग दिया था, कहा नहीं जा सकता था परन्तु वास्तविकता थी कि उनका मन फूलों के रंगों में तब अज्ञात भाव से घुलमिल वर झूम गया था और एक विचार जोर मार रहा था कि ऐसी चढ़ी हुई सरेहिया फुलवारी में घूमते हुए खेत उखरिया, पांच हजार की दाबी और पावल पांडे जैसे चिरकुटहे विचारों में क्यों फंसे ? इन्द्र महाराज

की इस बगिया में धंसकर सब चिन्ता, उलझन, तिकड़म और खोटापन बिसर जाना चाहिए। किसान के लिए परमात्मा ने यह कैसा स्वर्गसुख उसके घर में बिखेर दिया है। अरे, करइल की काली माटी में से फूटकर यह कैसी सुनहले-रुपहले गहनों वाली प्रकृति अचानक हंसने लगी? कहां छाती भर, डूबने भर और कहीं-कहीं बांस बराबर बाढ़ का पानी यहां महीनों लहराता रहता है और कहां यह उमड़ती हरियाली और रंग-बिरंगे फूलों की खूबसूरती! इसी को कहते हैं समय का फेर। कभी धूप है, कभी छाया, कभी सुख है, कभी दुख और कभी सत्यानाशी पानी-पानी है और कभी यह मनमोहिनी शोभा! हनुमानप्रसाद ने मटर की एक लतर उखाड़ ली और मोटाई-गदराई छीमियों को छोड़कर एक पतुही छीमी तोड़ मुंह में डाल लिया, कच्च्!

आगे एक अपना चक था, दस बीघे का। मसूर बोई गयी थी। तमाम खेत में सरसों छींटी गयी थी। मटर की छिटपुट 'उतेर' डाली गयी थी और तीसी की विधिवत् लाइन में 'मूर' टारी गयी थी। छोटे-छोटे सफेद फूलों वाली मसूर ठेहुन भर लगी थी। कबूतर के पांख जैसी उसकी भूरी, चिकनी और चमकदार हरियाली थी जिसके गलीचे जैसे दस बीघे के सघन चबूतरे पर तीसी, सरसों और मटर के नीले, पीले और सफेद-लाल फूलों की चित्रकारी देख प्राण जुड़ा जाता। इतना ही क्यों? पार साल जो इस में खेसारी की फसल थी सो उसके झड़े कुछ बीजों का 'लमेरा' जहां-तहां जमा था। उसमें नीले-नीले फूल उगे थे। बर्रे नामक कंटीला तेलहन भी मसूर में डाल दिया जाता है। हनुमानप्रसाद के इस चक में ये कम हैं परन्तु जो हैं उनमें नारंगी रंग के बड़े-बड़े रोवेंदार फूल आ गये हैं। गदराई हुई फसल की यह आखिरी कुसुम-शोभा किस इन्द्रधनुषी शृंगार से घट कर है? तित-लियों, भौरों और मधुमक्खियों की बेसुध चक्कर-बाजियां देख कोई भी क्या अदेख कर सकता है? एक भौंरा मन-मन करता ठीक हनुमानप्रसाद के कानों के पास से गुजरा। उन्होंने सोचा, कवि लोग अपनी कवितायी में भौंरे का वर्णन करते हैं और वही भौंरा उनकी सरेहि में सदेह उड़ रहा है। तब यह सरेहि नहीं हुई साक्षात् कविताई हो गयी। जैसे भौंरा फूलों के रस को उड़-उड़कर पी रहा है उसी तरह आज हनुमानप्रसाद का उकठे काठ-सा मनई भी फसली सुघरायी पर न्यौछावर हो रहा है।

अपने खेत के चारों कोनों पर चकबन्दी में बहुत मोटे-तगड़े पत्थरों को हनुमानप्रसाद ने गड़वाया था। इसी एक पर वे बैठ गये। सरसों की एक लटकती टहनी में लगा फूलों का एक बड़ा-सा झुमकेदार गुच्छा उनके कानों और आंखों के बीच आ गया। उसके स्पर्श का सुखद अनुभव हनुमानप्रसाद को हुआ। पता नहीं क्या मन में आया, वे उसे तोड़कर खा गये। हलकी कड़वी पनपनाहट से मुंह भर गया। उसे चबाते-चबाते हनुमानप्रसाद ने आंखें बंद कर लीं। ठण्डी-हवा, मीठी धूप,

फूलों की खुशबू, भौरों की गुंजार और एकान्त के सन्नाटे में उभरती, कानों में सुनाई पड़ती सी···ई···ई···ई···ई···ई···की एक अविरल-अटूट सूक्ष्म ध्वनि, बनसपती माई की सीटी।···एक विचार हनुमानप्रसाद के मन में आया। कोई उनके इस दस बीघे वाले चक की सारी फसल को दुश्मनी वश चारों ओर खेत-उखरुआ गुंडों से उखड़वाकर नष्ट कर दे तो उन्हें कैसा लगेगा ?

इस विचार से वे अचानक बहुत हड़बड़ा गये। उठकर खड़े हो आंखें फाड़-फाड़कर देखने लगे। हां, अपना खेत और अन-धन सही-सलामत है। तब भी छाती धड़क रही थी। ललाट पर पसीने की बूंदें सघन होती जा रही थीं।···हां, मेरी मसूर की फसल को कौन आंख लगा सकता है ? किसमें हिम्मत है ? कमच्छा मा ँ की कृपा से कोई पीठ में धूल नहीं लगा सका।···समय के फेर की बात और है। हां, इससे डरना चाहिए। पाप नहीं करना चाहिए। कच्ची फसल की बरबादी पाप है। ताकत हो तो बैरी का बोझ कटिया के बाद खलिहान से लुटवाकर गरीबों में बांट दे।···लेकिन फसल की लूटपाट और खलिहान के जलाने या फूंक-ताप से बचो हनुमानप्रसाद। चौथापन आ गया। परमात्मा ने बहुत दिया है।···इतने बड़े-बड़े चक, ऐसी उमड़ती पैदावार, यह खेत की शोभा, किस जन्म का पुण्य है।

ऊपर नीला आकाश, नीचे गहगह सतरंगी संसार। सरसों के फूलों की बरात। फूल, फूल और फूल···छोटे-बड़े, आंखों-से, होंठों-से, सोने के गहनों-से, चांदी की किरणों के, रंग-बिरंगे, फूलों की बाजार में फूल के सौदे के फूल ही खरीदार, धूप में चमकते, यहां से वहां तक, कई-कई कोस तक, चारों ओर, बीच में कहीं कोई पेड़ नहीं, बबूल का पेड़ भी नहीं, केवल किरणों के चौड़े मैदान में पसरी लछिमी की यह मनमोहक माया, हर साल की तरह इस साल भी, अपनी सरेहि में, अपने खेत में, लेकिन अपना क्यों ? होगा कहीं लेखपाल के कागज में अपना खेत, यहां तो लगता है सब खेत अपने हैं। कागज से ऊपर भी बहुत कुछ है। इसे कानून नहीं बनाता। किसी आदमी के नहीं, ये 'गांव' के खेत हैं, गांव के फूल हैं, सपाट मैदान में गेहूं, चना, मसूर, मटर, सरसों, तीसी, लतरी आदि के चढ़ते पानी की चमक है, सोनामाटी की चमक है, बेशक करइल की माटी नहीं, सोना है। नये अर्थ वाला काला सोना, अद्‌भुत, अद्वितीय। अरे, कहां होगा दुनिया में इतना बड़ा और सपाट सुन्दरताओं के फसलिया मेले का एकान्त मैदान ? कहां होगा दुनिया में ऐसा छविमान गंगा का नैहर ? खास नैहर।

गंगा का नैहर ?

हनुमानप्रसाद चलते-चलते चौंक उठे। यह कैसा शब्द कहां से उछल आया ? उन्हें स्वयं पर आश्चर्य हो रहा था। आज मन कैसा हो गया है ? लेकिन आज ही क्यों ? जब भी अकेले खेतों के बीच में वे खड़े होते हैं, दुनिया का प्रपंच भूल जाता है। तब कैसे-कैसे भाव आते हैं ? फिर गांव में धंसते, किसी के मिलते सब हवा ?

फिर वही तिकड़म, काट, फुटानी और राग-द्वेष।···गांव की हवा कितनी खराब है? खेतों के बीच मन फैल जाता है और गांव के भीतर घुसते सिकुड़कर कितना छोटा हो जाता है।···कैसे बदलेगी गांव की हवा? हनुमानप्रसाद, तू गांव छोड़कर जंगल चाहे पहाड़ पर चले जाओ, गांव सुधर जायेगा। तू ही गांव का सनीचर है। ···ऐसे पवित्र गंगा के नैहर को तूने गड़ही जैसा अपवित्र बना दिया है। दुनिया में कहां है ऐसी उत्तम पैदावार का क्षेत्र? बिना सिंचाई, खाद और जोताई के भी बीघे में सौ बोझ मसूर काट लो। सब गंगा मइया की महिमा है। अब बरिस दिन पर बरसात के बरसात आती है और तब एक समय था कि यह सारा करइल उनकी धारा थी। पांच कोस का पाट था। इस पार कारो में कवलेश्वरनाथ और उस पार बक्सर में बरमेश्वरनाथ। अब भी जमीन को खोद दें तो नीचे शुद्ध गंगवट बालू, एकदम दर-दर। कुछ टूटी नाव के टुकड़े भी मिल जाएं। अब भी मंगई नदी में गिरने वाला एक नाला वह है, क्या नाम, गंगनहर। क्या मतलब? गंगा का घर? मान लो इसे भी। असली मतलब गंगानैहर। पता नहीं कब गंगा ने इस क्षेत्र को छोड़ दिया। फिर मिट्टी जो भरी तो पानी के जमाव से काली पड़ गयी, खूब उपजाऊ। देख लो नयन भर हनुमानप्रसाद माटी की कुदरत। इसके आगे काश्मीर झूठ। हरियर-पीअर चौरस समुद्र वहां कहां? ऐसी पतली टहनियों पर सरसों के टटके लहराते झब्बे-झुमके वहां कहां? आंखें उठती हैं तो पिअराई के इस पसार पर कोसों तक फिसलती चली जाती हैं, वहां तक जहां काले-काले धूमिल पेड़ों की घनी कतार है।

आगे रास्ता दो भागों में बंट जाता था। जो सीधे जाता था उस पर हनुमानप्रसाद का एक पन्द्रह बीघे का चक था जिसमें गेहूं और चना बोया गया था तथा जिसे काफी दिनों से इन्होंने देखा नहीं था। दूसरी पगडंडी उत्तर ओर जाती थी जिस पर उनका अपना खेत तो नहीं था किन्तु चटाईटोला के नवीन बाबू का वह आठ बीघे वाला चक था जिसे उनके गणों ने नष्ट कर दिया था। गठिया गांव के जलतराशी मौजे में यह नवीन बाबू का आठ बीघे का एक ही खेत वास्तव में हनुमानप्रसाद के खानदान वालों का था। उनके बाबा तेजबहादुर को फुसलाकर थोड़े पैसों में नवीन के बाबा जमुनाप्रसाद ने रजिस्ट्री करा लिया। बाद में चकबन्दी आयी तो वहीं चक बन गया। यह चक कहीं गहरे में हनुमान-प्रसाद के कलेजे में धीमे-धीमे करकता रहता है। अब तक तो उनका मन प्रकृति से जुड़कर बहुत ऊंचाई पर मंडरा रहा था परन्तु उस बैरी के चक वाली डहर को देखकर फिर उनमें गठिया का पुराना 'बाबू साहब' लौट आया, बहुत खर्राट, बहुत तिकड़मी। क्या पता आज खेत घूमने में अज्ञात रूप से इसी शत्रु-संहार वाले दृश्य को देखने की इच्छा छिपी थी।···अरे, क्या होगा देख कर? जो होना था हो गया। शायद अच्छा नहीं हुआ। अब इस तरह के नीच कामों में हाथ नहीं

डालना है। कुछ लाभ नहीं। बेकार राग बढ़ता है। राग से द्वेष बढ़ता है और गांव की सुख-शान्ति में खलल पड़ता है। हनुमानप्रसाद शान्ति से रहना चाहता है।···कुछ बदमाश हैं जो उन्हें छेड़ते रहते रहते हैं। मच्छर की तरह ये भनभना कर हट जाते तो ठीक था, ये छन्न्-छन्न् बीन्हने लगते हैं तो हनुमानप्रसाद क्या करे। एक हाथ चला देता है। लोग पिस जाते हैं।···गांव में शान्ति होना अकेले बूते की बात नहीं। फिर एक गांव क्या करे? पड़ोसी गांव खुराफात शुरू कर देता है। अब यह अपना ही लड़का है रामरूप। सड़क का पचड़ा ले बैठा। हमारे गठिया गांव की ढेर सारी ज़मीन फंस जायेगी। सड़क पर चलें वे लोग और ज़मीन दें हम लोग? नहीं, यह सड़क नहीं बनेगी, देखें कैसे बनती है?

हनुमानप्रसाद के पैर उत्तर ओर वाले रास्ते पर बढ़ गये। उधर खलार ज़मीन वाले बहुत जोरदार खेतों का सिलसिला था। थोड़ी दूर बढ़ने के बाद ही हनुमानप्रसाद खड़ी सरसों की फूली गांछों में डूब गये। ऐसा लग रहा था जैसे वे कोई प्रधान मन्त्री या राष्ट्रपति थे जिनके स्वागत में ऐसी सजावट की शानदार तैयारी की गयी थी और जैसे इस सजावट के सिलसिले का कहीं अन्त नहीं होने वाला था। क्या यह सजावट थोड़ी थी? इस पतली पगडण्डी पर चलता मामूली आदमी भी अचानक कितना सौभाग्यशाली हो जाता है?···मगर हनुमानप्रसाद का मन अब इस दिव्य सौन्दर्य-विभूति से उचट चुका था। वह शत्रुता के गलीज को लेकर अन्तस्थ कुरूपताओं की भद्दी-भदेस गलियों में भटक रहा था। बाहर प्रकृति का सौन्दर्य छितराया था, भीतर आदमी की गन्दगी बजबजा रही थी। वह क्षण भर पहले वाला नया आदमी मर गया था। यह पुराना आदमी ध्वंस पर मुहर लगाने के लिए आगे बढ़ता जा रहा था। हरियाली, धूप, किरण, फसलीगंध और यह सारा-सारा माटी का सौन्दर्य-वैभव अब उसकी आंखों से ओझल था। अचानक सरसों की फुलवारी का सिलसिला टूट गया और आगे भक् से एक खाली माटी का काला चौकोर टुकड़ा आंखों पर टंग गया।···यही दुश्मन का चक है।

हनुमानप्रसाद को चिन्ता हुई कि कोई देखेगा तो क्या सोचेगा? इधर आना भूल हुई। जो हुआ ठीक हुआ। उसे देखना क्या? हर्ष की एक जबरदस्त लहर भी चुपके-चुपके भीतर से उठी। न चाहते हुए भी उस उजड़े खेत के किनारे वे खड़े हो गये। खेत खाली था किन्तु देखने से ऐसा तुरन्त लग सकता था कि यहां फसल-चोरों का फेरा पड़ा है। बीच-बीच में कुछ मसूर के भुट्टे छूट गए थे। वे कितने हीन लग रहे थे। जगह-जगह उखड़े पौधों के ढेर जो मुरझाकर लगभग सूख गय थे, पड़े हुए थे। दूसरे दिन सुबह कुछ रास्ते पर बिखरे मिले थे। कुछ बोझ दूर-दूर गांवों के पास फिंके मिले थे। कच्ची फसल की चोरी नहीं, उद्देश्य बरबादी रहा। इसीलिए आधे के बाद खेत में नोंच-चोंथ अधिक हुई है। वास्तव में कितनी

फसल ढोकर ले जाते ? कहां खपाते ? क्या करते ? बस उजाड़-पखाड़ में खेत की जायदाद का सत्यानाश हो गया। खेत बेआब-बेआबरू हो गया। चारों ओर से उमड़ते खेतों के बीच यह दुर्भाग्य की क्यारी विधवा जैसे पछाड़ खाकर गिरी है। केशर-कुंकुम धुल गया। सिन्दूर पुंछ गया। चूड़ियां फूट गयीं। गया सब गीत गुन-गुन। उदासी की काली छाया ऊपर मंडरा रही है। एक आदमी ने जोत-बोकर धरती पर स्वर्ग उतारा, दूसरे ने एक काली रात में वहां नारकीय वीरानगी ठेल दी। वैर-विद्वेष के नये-नये अज्ञात बीज उस काली रात में वहां उस अभागी धरती में पड़ गये। ये विष-बीज कितने रूप में पल्लवित होंगे, कितने-कितने कैसे जुल्म ढाएंगे, कौन कह सकता है ? जिस तामस-यज्ञ में कच्ची किन्तु तैयार फसल की ऐसी मूल्यवान आहुति पड़ी है उसकी लपलपाती शिखा क्या बुझने वाली है। कई-कई पीढ़ियों को झुलसाती वह आग सरेहि के मंडप में यहां इस खेत में फिर उपटी है। उसका एक यजमान इस खेत की मेंड़ पर खड़ा है। उसे इसके विनाश-कारी फलों की चिन्ता नहीं। किसान विधाता का यह कैसा क्रूर विध्वंसक रूप है ?

हनुमानप्रसाद अधिक देर तक खड़े नहीं रह सके और न आगे बढ़ सके। अब आगे क्या जाना था ? वह पीछे लौट पड़े। मगर पैरों में जैसे पत्थर बंध गया था। उन्हें थकावट जैसी महसूस हो रही थी। भीतर गहरे में कहीं कोई कचोट थी। कोई भर्त्सना कर रहा था। इस अकाल-दुकान और अन्न की महंगाई के युग में क्या मिला तुम्हें यह कुकर्म योजित कर ? हनुमानप्रसाद भीतर की उस विरोधी लहर को बारम्बार दबा रहे थे। अपने पक्ष के समर्थन में नाना प्रकार के तर्क मन में आ रहे थे। आदमी शानदार वह है जिसके दुश्मन भी हों। बिना लड़ाई के दुनिया में रहतब नहीं। उन्होंने अपने भीतर के विचार-संघर्ष से घबराकर ध्यान को दूसरी ओर मोड़ दिया। खुबवा को आज चटाईटोला भेजा है। वह आज लौटेगा। देखें वहां क्या गुल खिला है ? क्या बातें होती हैं। लेकिन लोग उसे जानते हैं कि हनुमानप्रसाद का पायक है तो उसके आगे बातें करेंगे ? नहीं करेंगे तो क्या ? बातें तो हवा में उड़ती रहती हैं। खुबवा, तू खूब है। जल्दी आ और बोल साला, क्या-क्या खबर लाया है ?

२२

ठीक मांड़ो और हरदी के दिन सदल-बल को-ऑपरेटिव वाली कुर्की धमक गयी। पुरोहित भगवान पांडे ने सूरज उगते-उगते आकर रामरूप के कानों में धीरे से समाचार दिया, 'जजमान, रात में आकर वे सारे हमारे उस चांडाल पड़ोसी दीनदयाल के यहां टिके हैं। उनमें से एक सिपाही मेरा परिचित है। उसी ने सब बताया। ब्लाक से दीनदयाल साथ ही जीप पर रात में आया। बी० डी० ओ०

और नायब तहसीलदार वगैरह के साथ पूरी तैयारी रही है। जो ए० आर० है वह मुसलमान है, बहुत नेक। उसने जाना है कि आज तुम्हारे यहां मांड़ो है तो बेचारे ने हाथ खींच लिया है। रात-भर दीनदयाल उसका कान भरता रहा है, चढ़ाता रहा है—ऐसा जालिम आसामी फिर हाथ आने वाला नहीं। एक घंटा रात रहते उसे पकड़ लें। बस, यही मौका है। चूक गये तो सोचें, ऊपर के अधिकारियों में आपकी कितनी शिकायत होगी।···मगर वह टस से मस नहीं हुआ है। बी० डी० ओ० ने तो दीनदयाल को बहुत उल्टा-सीधा भी सुनाया है और काफी डांटा बतायी है। खबर है कि बिना चाय पिये तड़के वे सब चले गये।

पता नहीं गांवों में वह कैसा बेतार का तार लगा होता है कि ऐसी घटनायें पलक मारते ही बैठकों पर, कऊड़ों पर, कुओं पर, लोगों पर खुल जाती हैं। मांड़ो के बुलावे पर बांस काटने-ढोने और आंगन में गढ़ा खोदने, पल्लव गूंथने, रस्सी बटने और मांड़ो छाने के लिए तो लोग बहुत आराम से देर कर आते, मात्र भय-वद्दी निभाने। मगर इस गरमागरम खबर से रामरूप के दरवाज़े पर सवेरे-सवेरे भीड़ लग गयी। सहानुभूति से अधिक मनोरंजनी उत्सुकता यद्यपि अधिक थी तथापि बातों-बातों में वे सब लोग बहुत दुखी दिखने का प्रयास कर रहे थे। भीतर से यदि किसी को इसकी बेहद पीड़ा थी तो वर्मा को। रामरूप को अलग ले जाकर उसने कहा, 'अब तुम एक दम निश्चिन्त हो जाओ। सारी बात हमें ज्ञात हो गयी है। यह जो ए० आर० आया था, शहाबुद्दीन खां, वह मेरा क्लासफेलो और जिगरी दोस्त है। उससे मिलकर मैं निश्चित रूप से रफा-दफा करा दूंगा। यदि तुमने वास्तव में हस्ताक्षर भी कर दिया था, तो फिकर नहीं, मैं सब इन्तजाम जानता हूं। आज की दुनिया में कुछ भी कठिन नहीं।···चलो मांड़ो की तैयारी करो।'

लेकिन रामरूप को स्वयं क्या तैयारी करना था? आज तो सारा काम भाई-भयवद लोगों को करना था। सो, वे लोग आ ही गये थे। बांस काटने के लिए लोहार बुलाया गया। पट्टी मालिकान के अपने खास दयाद लोगों में से कोई लोहार के साथ बांस ढोकर लाने वाले कुछ भाइयों के साथ जाएगा और एक-एक बांस पूरे गांव की बंसवारियों से मांग-मांगकर काटा जाएगा। यही सनातन परिपाटी है। बांस के लिए कोई 'नाहीं' नहीं करता मगर इधर कुछ वर्षों से हालत बिगड़ रही है। परम्परा टूट रही है। पार्टीबाजी का विष फैल रहा है। साफ इनकार न कर भी बांस न देने के कई तरीके निकल आये हैं। बड़ी देर तक बहस होती रही कि दीनदयाल के यहां बांस मांगने जायें या नहीं। फैसला रामरूप ने दिया, अवश्य मांगने जाया जाय। वे न दें, यह और बात है।

थोड़ी ही देर में मांड़ो की धूमधाम में सब लोग खो गये। ऐसा होना अत्यन्त स्वाभाविक था। बीच में खड़मंडल और होते-होते बचा। चमाइन की लड़की बाजा लेकर आयी तो रामरूप ने उसे खदेड़ दिया।···भागो यहां से। जब नेता-

गिरि की हवा में तुम्हारी हरिजन बिरादरी के लोगों ते नार काटने, सौरी का कार्य सम्पादन करने, डांगर उठाने और गोबरहा उठाने से अपने लोगों को मना कर दिया है तब अब डुग्गी लेकर पियरी लेने क्यों आयी ? नहीं बाजा बजेगा, भागो !

तभी रामरूप की धुनना माई आ गयी।…हैं, हैं यह क्या कह रहे हो ? बिना बाजा के कैसे मानर पूरी जाएगी। कैसे माटी कोड़ी जाएगी ? कैसे माड़ो गड़ेगा और हरदी लगेगी ? मंगल बाजा है। सब दिन से बजता आ रहा है। शुभ काम में छेड़-भेड़ नहीं करनी चाहिए।

अब रामरूप क्या करता ? सुप्रीम कोर्ट से स्टे आर्डर हो गया। चमाइन की लड़की मुस्कराती हुई दरवाज़े पर बैठ गयी। आज उसकी महत्ता थी। नेतागिरी और हड़ताल वगैरह की बात वह क्या जाने ? मोटे में उसे मालूम है कि डांगर उठाने और नार काटने किसी मर्द-औरत का यदि आना हुआ तो वह कुजात हो जाएगा। अरे बाप रे बाप ! कौन कुजात होगा ? नुकसान चाहे जितना हो जाति भाई में मिलकर रहना चाहिए। इस छोटी-सी घटना के बाद फिर सारा कार्य निर्विघ्न चलने लगा।

ऐसे मौकों पर एक अव्यक्त उत्साह की लहर वातावरण में जो फैल जाती है, जाने-अनजाने सभी लोग उसके प्रभाव में आ जाते हैं। उस दिन थोड़ी देर के लिए रामरूप में वह लहर थम गयी थी। यद्यपि वर्मा ने उसे पूरी तरह आश्वस्त कर दिया और उसकी क्षमता पर उसे पूरा विश्वास है तथापि उसके भीतर कुछ दूसरी ही तरह की कचोट उठ रही थी।…यदि ए० आर० सज्जन अधिकारी नहीं होता तो क्या होता ? वर्मा की सिफारिश पर मामला रफादफा हो भी गया तो क्या हुआ ? जहां कोई 'वर्मा' नहीं होता है वहां क्या होता है ? झूठ, अन्याय और भ्रष्टाचार के आगे सामान्य आदमी आज इतना लाचार क्यों है ? व्यवस्था के भीतर यह कैसी अव्यवस्था है कि कोई नंगा आदमी संकेत करता जाय और अपने को सज्जन समझने वाला व्यक्ति बराबर परेशान होता और पिटता जाय ? मनुष्य जाति की सज्जनता और नैतिकता में कोई बुनियादी दोष है क्या ? वह इतना लाचार क्यों है ? भयभीत और बंधा जैसा क्यों है ? क्या उसकी कोई समस्या में भाग्य, संयोग और किसी-न-किसी की दया बिना हल होने की नहीं ? …नहीं, रामरूप को किसी की दया नहीं चाहिए। वह पांच हज़ार रुपया खेत बेचकर जमा कर देगा।…नहीं, वह एक पैसा नहीं देगा। देखें कोई क्या कर लेता है ?

'बाबा पूछ रहे हैं कि सुर्ती-बीड़ी कहां है ?' अरविन्द ने रामरूप का ध्यान भंग किया। आलमारी खोलकर एक तश्तरी में सुर्ती-बीड़ी, सुपारी, सौंफ, इलायची और जरदा आदि रखकर उसे देते हुए रामरूप ने कहा, 'पान घर से लगवा

लेना।' और फिर रामरूप जल्दी ही लहर की गिरफ्त में आ गया। उसे याद आया, बगीचे से आम का पल्लव लाने के लिए अभी तक किसी को नहीं भेजा गया है।

अरविन्द को मालूम है कि पान घर से लगवा लेने का क्या अर्थ है। सोचता है, पान लगाने वाली कमली दिदिया तो आज घर के कोने में बैठी है और कुछ बोल नहीं रही है। अभी विवाह नहीं हुआ कि कनिया बन गयी। चिढ़ाता हूं तो डब्-डब् बुलका चुआने लगती है। मगर इससे क्या? मैं तो चिढ़ाऊंगा ही। चल कर कहूंगा, तुम्हारे लिए रोज सांझ-सवेरे सगुन गाया जाता है, तुम्हारे विवाह का मांड़ो गड़ रहा है, तुम गहने पहनकर कनिया बन डोली में बैठोगी तो पान दूसरा कौन लगायेगा? लो, बैठे-बैठे बीरा बांधो, कुछ तुम भी खटो।

कमली की दशा विचित्र है। विवाह के रोमांच में गड़ी जा रही है। पता नहीं कैसी गुदगुदी की लहर भीतर से उठती है। और आंखों तक आते-आते पानी बन ढलक जाती है। चिरई जैसी भोली और नन्हीं जान सांसत में पड़ी रहती है। माई-बाप और भाई को छोड़ वह कहां चली जायेगी? कैसे जायेगी? रोज सांझ-सवेरे विवाह मंगल-गीत गाये जाते हैं। कमली सुनती है—

आरे दुधवा के निखियो ना दीहलू ए बेटी
चचलू सुनर बर साथ ए।
काहे के दुधवा पिअवल ए बाबा,
काहे के कइल दुलार ए।
जानते त रहल बाबा धिअवा पराई,
लगली सुनर बर साथ ए।

लगता है उसका कलेजा फट जायगा। काहे? खुशी में? कुछ पता नहीं चलता। उसके मस्तिष्क में रात-दिन गीतों की पंक्तियां झनझनाती रहती हैं। ···के आवे हाथी, कोई आवे घोड़ा, के आवेला सुख पालकी ए···बाबा का रोवले गंगा बढ़ि अइलीं, आमा का रोवले अन्हार···खम्हवनि ओट धरि बेटी हो कमली बेटी, बाबा से अरज हमार···धिया बिना सून अंगनवा ए बेटी···केइ रे खोज ले बर, केइ रे पूछे ले बर···

गीतों को सुन-सुनकर उसकी छाती धड़कने लगती है। बहुत लाज लगती है। अनजान, अनचीन्ह और किसी अनदेखे की छुवन की कसमसाती कल्पना में पसीना छूटने लगता है। क्यों ऐसा होता है? महादेवजी का विवाह होने चलता है तो बौराह वर देख गउरा देई की माता उनको लेकर चौके से भागने लगती हैं। नहीं होगा विवाह। तब गउरा देई कलश की ओट से अरज करती है, अरे सरकार 'तनि एक ए सीव जटा उतारीं···।' हाय, कमली में ऐसी बुद्धि कहां है? उसके कानों में रात-दिन विवाह-वर, वर-विवाह गूंज रहा है। शिव का विवाह फिर रामजी

और सीताजी का विवाह, दशरथजी, जनकजी के यहां बरात लेकर आये—बाजत आवेला ढोल दमामा। पर हमारे बाबूजी जनक राजा नहीं। दहेज के लिए कैसी जान पर आफत थी। बेटी कैसी बला है। जनमते मर जाती तो अच्छा। खुद रोओ, सबको रुलाओ। विवाह योग्य होते घर पर बिपति घहराई।'···जेकरा घर में बेटी कुंआरी से कइसे सूते निरभेद।' रुपया, पैसा, गाय, भैंस, पलंग, पालकी गहना, कपड़ा, यह-वह और तब भी—'अतना दहेज हम बेटी के देली, काहें लागी रुसले दामाद?' तब क्या करे बेटी? ज़हर खा ले? फांसी लगा ले? बाप की इज्जति डुबा दे? कुछ नहीं, गांव-गंवईं की बेटी बस रो ले। देखती है कमली, शहर में और अब कहीं-कहीं गांव में भी पढ़ी-लिखी लड़कियां नौकरी करती हैं, सुनती है अपने से अपना विवाह कर लेती हैं? अरे राम, बड़ी अगम राह है। कैसे कटेगी? वह देखती है, बिलास बाबा जो कुछ मूंज घट गयी थी, सो उसे खोजने के लिए उस घर में आ गये। जानते होते कि वह इसी में है तो नहीं आये होते। मगर अब क्या?

कमली पैर छानकर सुबक-सुबक रोने लगी। कलेजा उमड़कर पैरों पर जलधार बन बहने लगा।···ठहर पर बैठने के बाद बाबा को अब कौन भोजन-पानी परसेगा? बाबा की सूरत भी सपना हो जायेगी। बाबा हमारी कौन चूक हो गयी कि माई-बाप सब पराये हो गये?···वह काफी देर तक रोती रही। रोते बिलास बाबा भी रहे, एकदम मौन, ठगे-से, करुण कातर। बहुत कठिनाई से उनके मुंह से, कांपते-थरथराते होंठों से कुछ अस्फुट शब्द निकलते···रो मत···नन्हकी ···रो···मत···बुला लेंगे···। उसे पान लगाने का आदेश देने और चिढ़ाने के लिए गया अरविन्द दरवाज़े पर खड़ा था। कुछ देर तक उसे कुछ समझ में नहीं आया। फिर कुछ सोचने में डूब गया और उसकी आंखों से भी आंसुओं की धारा बह चली। कमली उसकी ओर बढ़ी तो वह भाग चला।···हाय बेटी, अब कौन मिलेगा? दो दिन बाद यह अपने घर की ज़मीन भी परायी हो जायेगी।

बिलास बाबा आंखों को पोंछते हुए एक हाथ में मूंज का बंडल लिये घर में से निकले तक आंगन और बरामदे में कुछ हुरदंग जैसा मचा था और वे अपनी बुढ़िया अर्थात् रामरूप की माई से टकरा गये। बात यह थी कि माई बलेसर के पीछे अखरा चावल और हल्दी पीसकर बनाये गये ऐपन को दाहिने हाथ में लिये उनके मुंह पर मलने के लिए दौड़ रही थी। मानर पूजने के बाद काफी ऐपन बचा हुआ था। रामरूप के काका पट्टीदार बलेसर बुढ़िया माई के देवर लगते हैं। विवाह के उत्साह में जो उसके पैर जल्दी-जल्दी उठ रहे थे उसे देख उस देवर ने बस इतना ही तो कहा था, 'यह मस्त फागुन भौजी के पैरों पर'···कि वह हाथ में ऐपन लिये पोतने दौड़ी।

'हैं···हैं···हैं···' कर बिलास बाबा दो कदम पीछे हट गये और रामरूप की

माई भी कुछ सकुचाकर खड़ी हो गयी। फिर पता नहीं क्या मन में आया, एकदम झपट पड़ी और 'निगोड़ा देवरा ना मिलल आ भागि गइल त का भइल? हई छछलोल मनसेधू लोग त भेंटइले। लेईं, सरकारे हई पाहुर लेईं।' कहकर हाथ का ऐपन बिलास बाबा के मुंह पर पोत दिया। आंगन में जैसे अचानक हंसी की बाढ़ आ गयी। बाहर से पल्लव-गुच्छ बंधे बांसों को लाकर गढ़े में डालते लोग, बन्दनवार के लिए मूंज की रस्सी बटते लोग, बटी हुई रस्सी में पल्लव गूंथते लोग मंगल-गीत गाती स्त्रियां, सुर्ती ठोक-ठोककर गांव की राजनीति बतियाते भयवद-गण, 'पूरी' वाले आज के भोज की तैयारियों में जुटी गोतिनें, मांड़ो गाड़ने के बाद लोगों को शरबत पिलाने की तैयारी करते कहांर और विविध कामों से बाहर-भीतर आते-जाते पवनी-परजा जन सभी क्षण-भर के लिए कितने उल्लसित हो गये। बाहर मंगल बाजा, डुग्गी बजाती चमाइन की लड़की भीतर दौड़ी आई। किस बात पर लोग इतने जोर से हंस रहे हैं लेकिन मामला रामरूप की माई का था। कोई आगे ललकार कर क्या बोलता? सभी लोग उसके नाती-पोते तुल्य थे। पूरे टोल-पड़ोस में और पट्टीदारों में से बलेसर और बलिराम ही ऐसे थे जो पद में बिलास बाबा के छोटे भाई लगते थे। बलिराम दो-तीन लोगों के साथ बांस गाड़ने में फंसा था। बांस गढ़े में ठीक से पड़ गया तो उसने छेड़ा—

'अरे भइया जी, आप भी ज़रा तबले वाला हाथ दिखा दीजिए न? भौजी तो हमारी जैसे नवही झूठ हो गयी है और आप को थथमा लग गया।'

'जेठजी का तबला तो तब बजेगा जब आप नाचेंगे।' अचानक बलेसर की पत्नी जिसे लोग प्रायः धुनना माई कहते हैं, आंगन में फट पड़ी, 'अब फिर इस आंगने में जल्दी मांड़ो नहीं गड़ने वाला है। अब फिर कमली का विवाह नहीं होगा। इससे बढ़िया खुशियाली का मौका अब कहां मिलेगा कि हमारा देवर नाच दिखायेगा। उठो, उठो देवर...'एक-एक बेटा के तीन-तीन नांव, आजन, बाजन, गंगादयाल। आरे झुलनी पर देवरा लोभाइल रे।' एक झूमर उठाकर और पूरे उल्लास के साथ हाथ मटका-मटकाकर धुनना माई, आंगन में नाच उठी। कितनी मुंहफट और चढ़बांक है यह धुनना माई, लोग लोटपोट।

'बिना नेग-न्यौछावर के इतना मत नाच दिखा धुनना माई।' भगवान पांडे बोले।

'आपको न्यौछावर मैं दूंगी।' नाच रोककर धुनना माई बोली और दौड़ी-दौड़ी घर में जाकर जो लौटी तो उसके हाथ में दही थी और उसने बचते-बचते भी पुरोहितजी के मुंह में ठूंसने के साथ भर मुंह पोत दिया—'लो नेग।'

अब बिलास बाबा को हंसी छूटी। मगर, वे हंसे कहां? सिर्फ मुस्करा कर रह गये। इतनी मुस्कराहट बहुत थी। वे प्रकृति से अत्यन्त गम्भीर और शान्त व्यक्ति हैं। आज हरदी-मांड़ो की सारी भीड़-भक्कड़ में वे निरपेक्ष भाव से गांव के भाई-

भयवद लोगों की खातिरदारी में लगे हैं। सुर्ती-तमाखू के अतिरिक्त किसान के द्वार पर सबसे बड़ी खातिरदारी तो यह होती है कि घर का कोई बड़ा-बूढ़ा व्यक्ति पूरे अवकाश के साथ बैठकर आगन्तुकों से बात करे। रामरूप के घर पर ही नहीं, पूरे पट्टी मालिकान में इस कार्य के लिए सबसे उपयुक्त व्यक्ति बिलास बाबा माने जाते हैं। एक तो गांव भर में मान्य और अजातशत्रु हैं, दूसरे जगत्-प्रपंच और व्यवहार से न्यारे, परम निश्चिन्त आदमी हैं। फिर उनके पास बातों की क्या कमी है? किसी भी गांव के आदमी को पूरी दिलचस्पी के साथ तिताला, झपताल और धमार के बारे में समझाने लगेंगे। समझाने लगे उस दिन कि तुलसीदास के पद 'राम जपु राम जपु राम जपु बावरे' को किस प्रकार दस मात्रा में भी गाया जा सकता है और बारह मात्रा में भी। वे समझाते हैं कि कहां कोमल स्वर लगेगा और कहां 'सा' और 'प' जैसे तीव्र स्वरों का प्रयोग किया जायेगा। वे बहुत अफसोस के साथ कहते सुने जाते हैं कि अब गायकी गयी। एक समय था कि सारी दुनिया में मशहूर और बेजोड़ गुनवन्त मुहम्मद हुसेन भांड़ को जो इसी महुवारी की मठिया पर ठाकुरजी के डोल में आया था, बिलास बाबा ने सितार में ऐसा खींचा कि उसने उन्हें गुरु मान लिया। अपने समय में अनोखे लाल और कंठे महाराज की संगति में उन्होंने ऐसे-ऐसे खयाल, तराना और प्रबन्धों को बांध-कर गाया है कि बड़े-बड़े गवैये हक्का-बक्का होकर मुंह देखते रह गये हैं। ऐसी सारी बातों का निचोड़ यही होता है, अब क्या गायकी होगी? गायकी गयी।

बारम्बार उनकी बातों को सुनते-सुनते कुछ लोगों को कुछ बातें याद हो गयी हैं। लोग यह भी जान गये हैं कि किस बात को वे अधिक मौज से कहते हैं। इसीलिए बन्दनवार के लिए आम के पल्लव को गूंथते हुए लोगों में से तूलप्रसाद सभापति ने छेड़ा, 'कहो बिलास, वह विष्णु पंडित का कौन ध्रुपद आपने बनारस सत्यनारायण मन्दिर में गाया था?'

उसी समय मांड़ो का एक नया गीत औरतों ने शुरू किया—

'बाबा हो, बिलास बाबा, मंड़उआ छाइ मोंहि द।
भींजेला मोरे राजा कुंअर।'

सभापति के सवाल को ऐसा नहीं कि बिलास बाबा ने नहीं सुना। वास्तव में अपना नाम आने के साथ उनका ध्यान उस गीत की ओर चला गया। गीत लम्बा था। बहुत स्थायी में गाया जा रहा था। बाबा के बाद तमाम चाचा-काका और अन्य सम्बन्धी लोगों का गीत में आह्वान था, विविध कार्यों के संपादन के लिए। धुनना माई का नाम विशेष रूप से आया, कोहबर लिखने के लिए। थोड़ी देर में गीत से निछुट कर बिलास बाबा ने बीड़ी का नया बण्डल खोल सभापति की ओर बढ़ाते हुए कहा—

'किस विष्णु पंडित की बात आप पूछ रहे हैं। पंडित विष्णु नारायण भातखंडे

यानी चतुरपंडित की या पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर की बात ? बनारस में हमने जो विष्णु नारायण भातखंडे की रचना वाला ध्रुपद गाया था वह राग मेघ मल्हार में था, 'आयो अब बरखा बहार' और ऐसा समा बंधा था कि दिल्ली के गान्धर्व महाविद्यालय के लोग दांतों तले उंगली दबा लिये, गांव में रह ऐसी गायकी ? लोगों ने कहा, और सुनाइये, और सुनाइये तो मैंने शुद्ध सारंग में खयाल सुना दिया। पंडित मणिरामजी ने मारे खुशी के हमको टांग लिया। हमने कहा, घनाक्षरी, अड़ाना, भैरवी, देस और बागेश्वरी जो राग आप लोग सुनना चाहें हम सुना देंगे। उस्ताद इमरत खां ने एक बार पीठ ठोककर कहा था, यार तुम्हारी जीभ पर तो साक्षात् सरस्वती का बास है और उन्होंने राग धूलिया मल्हार और राग मालकोस को एक में तोड़-मरोड़कर गाना सिखाया।'

'मल्हार गाने से तो शायद पानी बरसता है' सभापति ने बीच में टोका, 'और यह धूलिया मल्हार गाने से क्या धूल उड़ने लगती है ?'

बिलास बाबा ने कोई उत्तर नहीं दिया। वास्तव में वे मूर्खतापूर्ण विनोदी-टोकटाक को बहुत नापसंद करते हैं और जब भी ऐसा मौका आता है, एकदम खामोश हो जाते हैं। उनके खामोश हो जाने के बाद फिर कोई नहीं छेड़ता। लोग जानते हैं, अबकी छेड़ा तो उठकर चले जाएंगे। वास्तव में बिलास बाबा बहुत गंभीर प्रकृति के व्यक्ति हैं और जो भी कहते हैं बहुत गहराई से, मनोरंजन करना उन्हें नहीं आता। इसीलिए गांव का कोई आदमी मनोरंजन के मूड में उनसे कभी कुछ नहीं पूछता। सभापति तूलप्रसाद बचपन के सहपाठी होने के कारण कभी-कभी बहक जाते हैं।

'सुना है कि बाजावाली को सुबह रामरूप ने खदेड़ा था' प्रसंग बदलने के लिए सभापति ने कहा, 'तो फिर काहे बजाने लगी ? पुरानी परंपरा वे लोग तोड़ रहे हैं तो हम लोग काहे उससे चिपके रहें ?'

'कोई तोड़-ताड़ नहीं रहा है काका, सब गठिया के सुखुआ-सिटहला की कारस्तानी है। छोटी जातियों को उभाड़ रहे हैं।' पिरथी नारायन की बखरी से आये जमुना ने कहा। जमुना की आवाज़ बहुत भारी है और धीरे से भी बोलता है तो लगता है हांव-हांव हल्ला कर रहा है। उस समारोह के चहल-पहल और कोलाहलपूर्ण हड़बड़ में भी उसकी आवाज पहचानकर भोजवाली पूरी के लिए उधर आड़ में पूरन पीसती रामकली ने हाथ रोककर गानेवालियों की ओर मुंह करके ज़ोर से कहा—

'अरे पाहुन आये हैं···कुछ इनको भी चाहिए।'

रामकली जमुना को पाहुन कहती है। उसके मामा की लड़की से इनकी शादी हुई है। सो, उसने 'गारी' गाने के लिए जो संकेत किया सो चट नाम जुड़ गया—

'मस्त मातलि जमुना बाबू के बहिनिया,
घूमेले बजारे-बजारे···।'

अब मांड़ो गाड़ने का कार्य समापन पर था। मूंज का पतलो ऊपर डालकर लोग 'बान्ह' डाल रहे थे। परंपरागत गीत गाने के बाद अब औरतें आये हुए कुछ चुने लोगों को 'गारी' गा रही थीं। कमाल करती हैं ये सांस्कृतिक गालियां। खाने वाला कृतकृत्य हो जाता है। जमुना ने आह्लादित स्वर में हाथ भांजकर औरतों की ओर मुंह करके कहा—

'आरे भाई, सीरी भइया नाराज़ होंगे कि हमको अति सीधा-सोझिया समझ कोई नहीं पूछ रहा है···।'

'हां-हां, और ज़रा दस-दस गिलास शर्बत पीने वालों की भी नयी गालियों में विशेष रूप से खबर ली जानी चाहिए।' सभापतिजी बोल उठे।

इधर औरतों में परंपरागत गालियों से हटकर सिनेमा और बिरहा के तर्ज़ पर नये-नये ढंग की गालियों को खड़ी बोली में गाने का शौक बढ़ा है। मगर, लोक-भाषा की परंपरागत गालियों के आगे ये कितनी फीकी लगती हैं? पर गालियों से हटकर लोगों का ध्यान अब शरबत की ओर लगा था।

और फिर सचमुच ही थोड़ी देर बाद अप्रत्याशित भीड़-भक्कड़ के बीच गिलासें खड़खड़ाने लगीं। एक कंडाल शर्बत तैयार था। और भी ज़रूरत पड़ सकती थी। केवड़ा जल छोड़ा जा रहा था तो सभापति ने हंसकर कहा, एक तो ऐसे ही सवेरे मुंह में मिर्च डाले लोग कटकटाकर गिलास थाम रहे हैं, दूसरे शर्बत को सुगन्धित कर क्या पेट फाड़ोगे? ऐसे मौकों पर गांव वास्तव में कितना भुक्कड़ होता जा रहा है? गौं लगा तो किसी ने एकाध बाल्टी शर्बत या चीनी चुपके से अपने घर पहुंचा दिया। पूरी प्रतियोगिता के साथ और महंगाई के संदर्भों को नज़रअंदाज करती कठिन प्रेमभरी क्रूरता के साथ भयवद लोगों को शर्बत उड़ाते देख रामरूप सोचता है, अब यह परंपरा भी टूटकर रहेगी। दीनदयाल चाचा के घर से कोई नहीं आया। एक परंपरा तो यह टूट ही गयी।

२३

'तिनमंगरा' और 'पंचमंगरा' की लोक परंपरा और पंचाग के ग्रह-नक्षत्रों के दबाव वाली साइति से मांड़ो-हरदी के ठीक तीसरे ही दिन विवाह की साइति पड़ गयी थी। इस कारण से परेशानी और दौड़-धूप बढ़ गयी थी। सबसे परेशानी विदाई वाले प्रसंग से जुड़ी थी। पहले तय था कि लड़की गौने के लिए रहेगी। बाद में बदल गया। खत आ गया, लड़की विवाह के साथ ही विदा होकर आयेगी। जैसी मरजी सरकार। मगर, इस छोटे-से आकस्मिक परिवर्तन ने रामरूप की

तैयारी को बुरी तरह झकझोर दिया। बिदाऊ गहने, कपड़े, मिठाई, पलंग, सोफा सेट, बर्तन, बक्स, बिस्तर और नाना भांति की टीमटाम वाली नये फैशन की दुनिया भर की अगड़म-बगड़म सामग्रियां जुटाने में रामरूप और भारतेन्दु वर्मा के छक्के छूट गये। ऐसा लग रहा था कि विवाह का बोझ सबसे अधिक वर्मा के सिर पर है। बोझ कुल मिलाकर सुखकर था और उसने स्वयं ही उठाया था। सामाजिक अनुभव और सांस्कृतिक रोमांच के सर्वथा नये-नये आयाम उसके आगे खुलते जाते थे। एक ओर सामाजिक स्तरों के गंभीर भिन्नत्व के प्रत्यक्ष दर्शन से उसे आश्चर्य होता और दूसरी ओर अनेक ग्राम विकास संबंधी अनुत्तरित प्रश्नों के समाधान की दिशा में खुलती।

इस दौड़धूप में उसे स्पष्ट लगा, शहर का एक साधारण पान का दुकानदार बहुत प्रसन्न रहता है और आराम से परिवार की नाव खे ले चलता है तथा यहां महुवारी जैसे गांव में बीस-बीस, पच्चीस-पच्चीस बीघे के काश्तकार फटेहाल, तंग-दस्त और अति उखड़े हुए हैं। एक तो खेती लाभकर नहीं है, नयी खेती भी हाथी दांत सिद्ध हो रही दूसरे यहां की सामाजिक और सांस्कृतिक परंपरायें हैं जो बड़े प्रेम से ग्रामीण किसानों का मांस नोंच-नोंचकर खा रही हैं। विवाह आदि के मंगल समारोह यथार्थ रूप में अपनी मृत, रूढ़, दिखाऊ और मूर्खताभरी फिजूल-खर्ची की परंपराओं को लेकर बहुत अमंगलपूर्ण हैं। ऋण काढ़कर तथा खेत बेच-कर उत्सव मनाने का अर्थशास्त्र कितना भयानक है? इस संपूर्ण वातावरण में खपकर उसे सिर्फ एक इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिल रहा है कि जब-तब अचानक उसकी आंखों से यह एकाध बूंद पानी कैसे ढब से छलक आता है?

शहर में उसने अपनी दो-दो बहनों के विवाह देखे। हंसी-खुशी के खिलवाड़ की भांति सारा कार्य संपन्न हो गया। यहां तो पूरा मंगलमय संघर्ष नधा है। लोग रो-रोकर रंग बांध रहे हैं। इस विवाह-व्यापार के सांस्कृतिक समर में जो कट-घरे में खड़े जैसे किसी बेटी के बाप की कमर टूट जाती है तो लोग समझते हैं, यह उसे मटका-मटकाकर नाच रहा है। बहुत नशीली वाहवाही होती है। गांव की नस-नस में व्याप्त विवाह का नशा कितना गहरा है? यहां वे सभी, जो दूसरों को देखते हैं, कितने क्रूर हैं? फिर समाज और धर्म के नाम पर क्या नहीं हो रहा है? हत्या, शोषण, चोरी, डकैती और अनेकमुखी भ्रष्टाचार आदि सब कुछ। सारा-सारा उपद्रव ओढ़कर आदमी परेशान है, हांफ-हांफकर दौड़ रहा है, चिल्ला रहा है, जुटा-पटा रहा है, खप रहा है, पसीना बहा रहा है। क्यों? क्यों यह सब वह करता है? क्यों आफत मोल लेता है? भारतेन्दु वर्मा स्वयं क्यों प्रबंध की ऐसी भीषण आपाधापी में उलझा है?

यह एक प्रश्न है जिसका एक बहुत गूढ़ और अस्पष्ट उत्तर वर्मा के मस्तिष्क में उमड़ रहा है। उसकी कोई अपनी लड़की यद्यपि नहीं है तथापि महुवारी में

आकर और रामरूप के परिवार के साथ रहकर उसने जाना है, आधुनिक ग्राम-जीवन के समस्त विकार-ग्रस्त ढांचे में कन्या के संदर्भ में एक आंतरिक पिता-भाव का बोध है जो अत्यन्त निर्विकार और अमूल्य वस्तु है। इसी भाव पर कोई पिता खुशी-खुशी उजड़ जाता है। फिर यह भाव कितना संक्रामक है ? विवाह के मौके पर जैसे सारा का सारा गांव उसका पिता है। जाति, कुल, गोत्र और स्थान की दृष्टि से यह दूर-दराज़ का वर्मा भी पता नहीं कब से चुपके-चुपके उसका 'पिता' हो गया। अरे, वह दो दिन बाद चली जायेगी वर्मा के भीतर धक्-से हो जाता है।

वास्तव में वर्मा के लिए यह सब अधिकांश नया और बहुत कुतूहलवर्धक है। प्रबंध संबंधी समस्त उत्तरदायित्वों को संभालते हुए वह बराबर सजग उन सब परंपरित 'करमटों' के लिए रहता है जिन्हें औरतें संपन्न करती हैं। 'करमटों' में अब दम नहीं रहा और वे सांस्कृतिक खंडहरों की भूत-लीला से अधिक और कुछ नहीं रह गए पर गांव की औरतें कितने हार्दिक लगाव के साथ उन्हें सम्पन्न करती हैं। सुबह-सुबह ही 'मानर' की पूजा को लेकर विवाद खड़ा हुआ। समस्त औरतें रामरूप को कोसने लगीं। फिर जितनी श्रद्धा-भक्ति से वे मंदिर में शिव या कालीजी की पूजा करती हैं अथवा किसी कुल देवता को पिठार चढ़ाती हैं, उसी तन्मयता से 'मानर' यानी चमाइन की डुग्गी की पूजा करती हैं, अखरा और हल्दी की थाप दी जाती है, सिन्दूर लगाया जाता है। रहा होगा कभी आदिवासियों का मंदला बाजा विवाह की समूची प्रसन्नता का प्रतीक-देव और इस रूप में पूज्य मगर अब तो तीन से बढ़ तैंतीस फिर तैंतीस सौ देवताओं के युग में भी उसका वह आदिम संस्कार आदिम जन-जातियों से छनकर सभ्य कहे जाने वाले लोगों की कट्टर पुरातनपंथी औरतों में मानर-रूप में विद्यमान है।

वर्मा अपनी डायरी पर नोट करता जाता है किस प्रकार मानर पूजा के बाद औरतें उस ढिब-ढिब-ढिब-ढिब बजने वाली 'मानर' के साथ गाते-बजाते 'माटी कोड़ने' जाती हैं। उनका कितना विकट उल्लास है ? पैर ज़मीन पर नहीं पड़ रहे हैं। अपने सबसे अच्छे गहनों और कपड़ों को उन्होंने शरीर की सजावट पर भिड़ा रखे हैं। रंगीनियों के इस इन्द्रधनुषी जुलूस में घूंघट में लजारू नववधुएं भी हैं। आज बहुरिया लोगों के पैर घर से बाहर निकले हैं। ऊंची एड़ी की धराऊं जूतियों पर चलने का अभ्यास कहां है ? पांव लड़खड़ा-लड़खड़ा जाते हैं। जुलूस माटी कोड़ने के सुनिश्चित परंपरागत स्थान पर धीमे-धीमे बढ़ रहा है। मुक्त कंठ के झनझनाते गीतों से गलियां गूंज रही हैं। बड़ी बूढ़ी से लेकर छोटी बालिकाओं के विभिन्न स्तर वाले कंठ स्वर समवेत हो जिस रोमांचक स्वर-मेला का सृजन करते हैं उसमें वर्मा खो जाता है, खो जाते हैं भावाकुल ध्वनियों के मेले में शब्द, बड़ी कठिनाई से पूछ-पूछकर वर्मा उन पकड़ से छूट-छूट जाते गीत के शब्दों को सहेजता है—'माटी कोड़े गइलों से ओही माटी कोड़वा···।' और क्या एक दो गीत ? गीतों का भी

एक रंगारंग जुलूस, अति आकर्षक, 'पीपरा के पतवा पलउआ डोले रे ननदी, ओइसे डोले जिअरा…।' फिर माटी कोड़ते समय वह झक्का झूमर, गाली, फूहड़पन भी, हांव-हांव कांव-कांव, सब बहुत प्रेम से, उमंग में, तूफानी गति में! वर्मा एक महत्त्वपूर्ण द्रुत गीत नोट करता है—

'करिया-करिया भेंडवा के उज्जर-उज्जर बार रे,
कहां जाला भेंड़वा अन्हरिया रात रे ?'

नोट करने के बाद क्षण-भर कहीं डूबता है। प्रतीकों को पकड़ने की चेष्टा करता है। कुछ आभास मिलने पर पहले तो उसे लाज लगती है, फिर जोर से अट्टहास करता है। धत्तेरे की। आज ये सचमुच मुक्त हैं, सब कुछ कह जाने के लिए, प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष। माटी कोड़ने के बहाने ये अपनी दबी घुटी सारी उमंगों को कोड़ डालती हैं। फिर जुलूस के प्रत्यावर्तित होने पर वही गीत, माथ पर नयी रंगीन डाली लिये नाइन के नेग-जोग वाले रक-झक में डूबे, धुनना माई के हल्ला-हुज्जत में डूबे। आज उसकी खुशहाली का धक्का कोई आड़े। उसने 'अइघइनी' नारी की सारी गंभीरता और मर्यादा को परे हटाकर इतनी गालियां दीं, चुन-चुनकर मजाक कसे कि युवतियां और लड़कियां हार गयीं और इस बीच उसने हाथ चमका-चमकाकर माटी कोड़ने का कार्य भी सम्पन्न किया है। वह 'अइघाई' रहेगी इसलिए अक्षत, पान और सुपारी आदि से प्रारंभ में जो मानर की पूजा हुई, उसका अक्षत उसके खूंटे में गठिया दिया गया है। यह गांठ का अक्षत अब 'कक्कन छूटने' के दिन खुलेगा। वही कोहबर में पूजन कराने की अधिकारिणी होगी। जो माटी कोड़कर आयी उससे बने मंगलमय चूल्हे पर विवाह के दिन 'कोहरथ' का वह भात पकेगा जिसे विवाह-पूर्व वर-कन्या प्रसाद रूप में लेंगे। अरे यह 'कोहरथ का भात' न जाने कितनी लोककथाओं में कैसे-कैसे आता है? एक उस लम्बी लोककथा में राजकुमार दूल्ला विवाह के ठीक वक्त नहीं पहुंचता है तो बरात में किसी तरह पहुंचे एक सामान्य सुन्दर युवक से राजकुमारी की शादी हो जाती है। गौना करने जब नकली वर यानी राजकुमार पहुंचा तो कन्या ने प्रश्न किया, बताएं विवाह की रात 'कोहरथ का भात' कैसे पका? दूल्हा चुप। फिर शोर हो गया, राजकुमारी को असली वर की प्रतीक्षा है जो इस भात पकने के रहस्य को जानता है। वर्मा स्मरण कर पुलकित हो जाता है। उसके कानों में कुछ बहुत गहराई से झनकता रहता है—

कहंवा के पीयर माटी कहंवा के कुदारी,
कहंवा के पांच सहेली माटी कोड़ें अइलीं हो।

मिट्टी, चूल्हा और मण्डप का आदिम संस्कार। विवाह के पवित्र और आह्लादित संस्कार के लिए मण्डप अर्थात् मांड़ो का यह समारोह काल-प्रवाह में घिसकर भी कितना-कितना उत्साह लिये अभी गांव में शेष है।

सुबह आंगन में पुरोहितजी ने आते ही फरमाइश की, 'हमको लड़की के हाथ की नाप दे दीजिए ताकि मैं बांस गाड़ने के लिए खोदे जाने वाले गड्ढों के निशान बना दूं और पृथ्वी की पूजा करने के लिए सामान लाइए।' उस समय संयोग से आंगन में वर्मा उपलब्ध था। वह एक सरकंडे का टुकड़ा लेकर भीतर गया। 'तुम्हारे हाथ का नाप चाहिए', वर्मा सपाट ढंग से कमली से कह गया। उसने सकुचाते-सकुचाते मौन नतशिर हाथ आगे कर दिया, नाप लीजिए। वर्मा गद्गद हो गया। क्या वासनामय हाथों से कन्या के उस पवित्र हाथ का स्पर्श भी किया जा सकता है? नाप लेकर चला तो कमली की बरस-सी जाने वाली तरल चमकीली आखें ऊपर उठीं। वर्मा ने भी उसे देखा और फुर्ती से बाहर भाग आया। लगा, जैसे दो थरथराते हाथ उसके पैरों को छानकर जलधार में डुबोने के लिए आतुर-अधीर हो पीछा कर रहे हैं—तू भी तो मेरा पिता अब बिछुड़ जाएगा।

वर्मा ने जाना कि क्यों रामरूप आज घर के भीतर नहीं आ रहा है और भगा-भगा फिरता है। ओह, सामना हो जाने पर कैसे वह सह सकेगा? छाती फट जाएगी। कितना कठकरेजी बनेगा?···उसने चट नाप देकर पंडितजी के कामों में सहयोगी बन अपने को अति व्यस्त कर दिया। पंडितजी ने नौ हाथ लम्बा और सात हाथ चौड़ा मंडप आंगन में निकाल लिया। उत्तर-दक्षिण जो नौ हाथ की लम्बाई थी उसे तीन-तीन हाथ पर तीन भाग किया। इस प्रकार चारों ओर आठ और एक बीच में, कुल नौ गड्ढों के निशान बने। बीच वाला गड्ढा खोदने के पूर्व पूजा शुरू हुई, 'ओम् स्योना पृथ्वी···।' अक्षत, फल, फूल, गुड़ और दधि आदि के साथ दक्षिणा उसमें अर्पित की गयी। मांड़ो गाड़ने की हरी झंडी दिखा दी गयी। ब्राह्मणियों ने मांड़ों के मंगल-गीत का शुभारम्भ किया—

> गाई का गोबरे महादेव आंगन लिपाइ,
> गज मोती आहो महादेव चउक पुराइ।

और गीत-गीत में महादेव के विवाह की पूरी प्रक्रिया।···अरे शिव बाबा भी दहेज के लिए रूठते हैं? उन्हें हाथी चाहिए, घोड़ा चाहिए।···देखो महादेव, विवाह में कुछ नहीं, सब तुम्हें गौने में मिलेगा।···और कितनी-कितनी मनोरंजक बातें। वर्मा स्वयं रम्मा लेकर एक गड्ढा खोदने बैठ गया। 'हां-हां मास्टर साहब' कहकर कुछ शिष्य झपटे और उसके हाथ से अस्त्र छीन प्रेमपूर्वक स्वयं जुट गए। अरे, ऐसे मौकों पर क्या किसी को अढ़ौने की प्रतीक्षा होती है?

अब वर्मा क्या करे? नौ बांस तो सीधे-सीधे तैयार होंगे। इसके अतिरिक्त नौ बांस नौ-नौ हाथ के और इतने ही फट्ठे लगेंगे मांड़ो छाने के लिए। दौड़ो नाप लेकर बाहर।···देखिये, यह नाप है। बांस और फट्ठे तैयार किये जाएं। हां, हां, पहले लम्बे-लम्बे सीधे बांस तैयार कर लिये जाएं। अरे, ये कैसे दरवाज़े से होकर हवेली में घुसेंगे? फंदा देंगे क्या छप्पर के ऊपर से, बंड़ेरी पर से?···पल्लव गुच्छ

बंधे ऊंचे-ऊंचे, आसमान छूते नौ बांस, वे गांव के बाहर से ही दिखायी पड़ें, लोग समझें, घर में मंगल-अवसर आया है, बराती बिना पूछे जान जायं, यही घराती का घर है। इसी घर में वह कन्या-रत्न है जिसके पवित्र पाणि-ग्रहण पर इतनी धूम है, भारी समारोह है और इतने लोग मिलकर उसे सम्पन्न कर रहे हैं।…वर्मा को कमली की याद आ जाती है। कुछ लाकर देने अथवा ले जाने के अतिरिक्त उसे न कभी देखा, न बात करने का मौका मिला। आज आखों में न जाने कितनी मार्मिक भाषा भरकर उसने उस प्रकार देखा। कितनी करुणार्द्र थीं वे आखें। क्या यह सब संस्कारगत बेबसी थी? क्या यह रूढ़ियों के कारागार की उम्र-कैद की अनजानी पीड़ा थी जो आंखों में झांक रही थी? वर्तमान सभ्य और वैज्ञानिक विश्व के नारी नवोत्कर्ष को देखते क्या यह सब मृत अतीत के व्यामोह-प्रपंच से परिपूर्ण हास्यास्पद परिदृश्य जैसा नहीं लगता है? पिछड़े लोगों के इन पिछड़े संस्कारों में तब यह कहां से कैसी यह एक आन्तरिक रागात्मकता आ गयी? क्या यह राग आरोपित है? या यह वैयक्तिक जीवन का सत्य है?

वर्मा, मत पड़ इन विचारों में। देख, बस आज तू देख। देख कि कैसी चहल-पहल है और आनन-फानन में हाथोंहाथ एक मंडप तैयार। हाथ अभ्यस्त हैं। आंख मूंदकर बांध पड़ते जा रहे हैं। पतलो का यह झांझर मांड़ो कितना पवित्र, मनोरम लग रहा है। नोट करो, इस झांझर मांड़ो को लेकर चलता गीत—

बेरिया की बेरी तोके बरजीं ए बाबा,
झांझर मंड़उआ जनि छाव।

बेटी और बाप का संवाद। क्यों बेटी, क्यों? इसलिए कि झांझर मांड़ो में से सूरज की 'दौ' लगेगी तो गोरा बदन कुम्हला जायेगा। अच्छा ऐसा है? तब कहो बेटी तो ऐसा छत्र तनवा दें कि सूरज छिप जाय। नहीं, पिताजी, एक तो मैं बहुत गुणहीन हूं, दूसरे एक ही रात के मामले के लिए ऐसा कष्ट क्यों उठायेंगे? बिहान होते और पौ फटते ही मैं किसी परदेशी के साथ चली जाऊंगी। नहीं, बेटी, ऐसा न कहो। तुम्हें हमने घी-दूध से सींचा है। टटका लैनू और साढ़ीदार दूध पिलाया है। तुम्हारे भीतर एक भी अवगुण नहीं है। तू परदेशी के साथ खुशी-खुशी जा। बाबा का आशीर्वाद है। कौन बाबा? क्या एक दो? आज सारा गांव ही कन्या का बाबा है—

बन पइसि बाबा बांस कटावे ले,
ओही के मंड़वा छवायो, जनकपुर माड़ो।
पानन मोरे बाबा मंड़वा छववले,
फुलवन झालरि लावे, जनकपुर मांड़ो।

कैंची से लाल-पीले कागजों की झालर काटते वर्मा की आंखें फिर भर आयीं। वह आंगन में दौड़ा गया। मांड़ों तैयार होने पर बीच वाले बांस के यहां कलश-

स्थापन और पूजा का कार्य कन्या द्वारा सम्पन्न कराया जा रहा है। बीच के बांस के साथ हल वाली हरिस बंधी है। बांस के साथ आम, पीपल, पाकड़, वट और गूलर के पंच-पल्लव, हरी कइनि भी है। नीचे ओखल, मूसल, चाकी, पूरी कृषि-संस्कृति की छाप, मानर की तरह सब पर अखरा-हल्दी की। मिट्टी और जौ कलश के नीचे। कलश के ऊपर जौभरी ढकनी और दीपक। पंडितजी विधिवत् पूजन के बाद 'हल्दी' की मांगलिक क्रिया संपन्न करेंगे। हां, पहले ब्राह्मण पुरोहित ही हल्दी लगायेगा। ढकनी में हल्दी, थोड़ा कड़वा तेल, पंच-पल्लव से कलश का स्पर्श कर हल्दी कन्या के मस्सक पर, दोनों कंधों पर···अब चलें कन्या के पांच भाई, पांच बार···अरे अरविन्दजी एक ही हैं तो क्या? आज तो टोल-पड़ोस के सारे बालक उसके भाई हैं।···चल वर्मा, किसी बहाने आंगन में चल, देख हाथ जोड़े कमली को मांड़ो में बैठाया गया है। जैसे किसी अचिन्त्य भाव में डूबी साक्षात् गौरी बैठी है। हल्दी लगती गौरी। प्रणाम कर। तेरी आंखें पुलक में डूब गयीं? तो मन को भी डूब जाने दो हल्दी के कुछ गीतों में—

कोइरिनि-कोइरिनि तुहूं मोरी रानी रे
कहंवां के हरदी ऊपर कइलू आजु रे
हमरो कमली देई अति सुकुवार रे
सहि नाहीं सकेली, हरदिया के झाक रे।

और कोइरिनि के बाद तेलिनि का आह्वान···अरे कितनी कड़वी झाक वाला तेल आज के दिन के लिए तूने रख छोड़ा था। पुरोहित द्वारा देवता के विसर्जन के बाद अब कमली की सहेलियों की बारी···हल्दी लगाने के साथ 'चुमावन' गीत का रोमांच—

साठी के चउरा लहालरि दूबि रे,
चूमहि चलेलीं लछिमीना देई रानी रे,
मथवा चूमेली मुखे देलीं असीस रे,
जीअसु विनोद दुलहा लाख बरीस रे।

बलेसर बाबू की लड़की लक्ष्मी सर्वप्रथम आगे आयी है। अभी चार और खड़ी हैं। गीत के साथ पूरी एक प्रक्रिया···हाथ में चावल, गुड़ और राई लेकर दोनों हाथ की चुटकियों से कन्धे पर, घुटने पर, पैर पर, गीत···खिलखिलाहट, विनोद, आह्लादक, धक्कम-मुक्की···अरे प्रभावती तो कमली के ऊपर ही ढह गयी। देख वर्मा, ये हार्दिक उल्लास के कुछ दुर्लभ-दुर्लभ क्षण और नोट कर···। भूल जा कि अभी-अभी तुम्हें चटनी के लिए इमली भिगोना है। वह कल तैयार हो जानी चाहिए। उस दिन के लिए गंगाजल लाने के लिए आदमी को आज ही सरेख देना है। कन्यादान करने वाला आदमी ही क्यों, यहां लगता है कि खानदान भर के बड़े-बूढ़े कन्यादान तक गंगाजल पीकर ही रहेंगे। एक कांवर आ जायगा।

ऐन मौके पर नहीं, सारा प्रबन्ध कुछ पहले हो जाय तो बेहतर।

वर्मा ने घड़ी की ओर निगाह दौड़ाई, अरे ढाई बज गये? बड़ी देर से उधर पूरी का भोज चल रहा है। मगर वर्मा को आज भूख कहां? वह कई मोर्चों पर दौड़ रहा है। मोर्चा कई-कई भाग में बंट गया है। बाहर कड़ाही चढ़ी है। बरातियों के स्वागत के लिए दो दिन पहले से ही मिठाई आदि सामग्री बननी शुरू है। भीतर उल्लास भरे कोहबर से अब गीत ध्वनि उठ रही है—वर्मा देख, शब्द छूट न जाएं, नोट कर ले—

> कांच पितरिया के इहे नव कोहबर, मानिक दीप जरे
> ताही कोहबर सूतेले दुलहा बिनोद दुलहा जवरे कमलीदेई रानी।

इन औरतों का करमट कितना-कितना विशाल है। चुमावन के बाद पुरोहित द्वारा 'डांड फारना' सम्पन्न होगा अर्थात् कोहबर में जिधर दीवार की ओर मुंह करके कन्या बैठी है उधर दीवार पर वे गेरू के रंग से पांच लकीरें खींच देंगे, या कुछ बना देंगे। तब लड़कियां कोहबर 'लिखेंगी' अर्थात् चित्रकारी, हाथी, घोड़ा, गाय-आदमी...तमाम अगड़म-बगड़म। बस? खेला खतम? नहीं। अभी 'पीतर नेवतने' का काम बाकी रह गया। ब्राह्मणी और कुल खानदान की स्त्रियां मिलकर पितरों को आवाहित कर उनको नेवतेंगी। पितर अर्थात् सात पूर्वजों को...फिर ये पितर आकर बंद हो जाएंगे। विवाह के दिन, कन्यादान और गोत्रोच्चार के समय खुलेंगे।

वर्मा ने देखा रामरूप एक छोटी-सी चीज़ को लेकर परेशान है। उधर से 'सहबाला' कौन आ रहा है? क्या उम्र है? किस नाप का कौन-सा सूट उसके लिए रेडीमेड की दुकान से जल्दी उपलब्ध किया जा सकता है?...उसने कहा, छोड़ो इसकी चिन्ता। यह काम हमारे जिम्मे। सूट की ज़रूरत दूसरे दिन खिचड़ी के समय पड़ेगी। परसों बरात आने पर 'साहबे आला साहब' को देखकर कोई प्रबन्ध हो जाएगा।

शाम के चार बजे औरतों ने जौ की ढूंढ़ी बनाना शुरू किया।...सुबह की मानर पूजा से लेकर इस ढूंढ़ी बनने तक वे कितनी व्यस्त रहीं? और व्यस्तता क्या बीत गयी? अभी तो उसकी शुरुआत है। जाड़े का दिन, रात उतरते आज की 'संझाकाली' यानी सांझ वाले गीत...खूब जमकर। तिलक चढ़ा उसी दिन से प्रातकाली-संझाकाली मंगल-गीतों का सिलसिला...गीत, गीत और गीत। अरे, औरतों के पास कितने गीत हैं? यह कृषि-संस्कृति कितनी गीतमय है? मगर, गीत नहीं, वर्मा तुम्हें अब कुछ ठोस कार्य आमंत्रित कर रहे हैं। एक कप चाय पीकर देख, हिसाब लगा, पुरवा-पत्तल आ गया कि नहीं? बैलगाड़ी लेकर जो आदमी सब्जी आदि शेष सामान लाने आज वाली बाजार गया है, वह आया या नहीं? छोड़ रामरूप को। उसे बनती हुई मिठाइयों के पास चुपचाप बैठे रहने दो। तुम

और प्रबन्ध देख लो। ओह, एक सूई से लेकर सूट तक और तृण से लेकर पहाड़ तक कितनी-कितनी चीज़ें कहां-कहां से, कैसी-कैसी मशक्कत उठाकर जुटाई जाती हैं। पानी के और कण्डाल, बरात के लिए चारपाइयां, नाच वालों के लिए चौकियां···अरे, जो कार्य पूरा होता जाय, लिस्ट पर निशान लगाता जाय। मांड़ों में तो रंगीन कागज साट-सूटकर रंग-बिरंगे वस्त्रों से लड़कों ने सजावट पूरी कर दी, अब देख 'स्वागतम्' वाला कपड़ा तैयार हुआ या नहीं ? खूब खटो, खूब खटो, उसकी याद तो भूली रहे।

२४

रामरूप की लड़की की शादी में न्यौता पर कवि 'खोरा' भी आये। उनके आने से और 'पहल' पर एक कोने में जम जाने से द्वार का मनसायन बढ़ गया। उन गुरु-गम्भीर आदरणीय और मात्र 'द्वार की शोभा बढ़ाने' के लिए धराऊं शाल-दुशाले में सजकर आये रिश्तेदारों के बीच एक मुक्त भाव का कथक्कड़ आदमी पहुंच गया जो बेचारे चुपचाप बैठे-बैठे या सोये-सोये ऊब रहे थे। रामरूप ने बरामदे में नये पुवाल की विस्तृत पहल (पयाल) डलवा दी थी। उस पर लम्बी दरी डालकर ऊपर गद्दे और कालीन करीने से बिछा दिए गये थे। सचमुच यह कितना अच्छा लगता है कि घराती के यहां बाहर अर्थात् जनवासा या मांड़ो आदि की सारी दौड़धूप और भीड़-भक्कड़ से निरपेक्ष कुछ सुभेख और सज्जन नातेदार स्थिर-भाव से द्वार पर बैठ नाना प्रकार की मुक्त चर्चाओं में मशगूल हैं। गांव-घर के बूढ़ों और प्रबन्ध से कटे चलता-पुरजा लोगों को भी इस दल में बैठकर खूब हांकने का मौका मिलता है। बाहर से रिश्तेदार आये तो द्वार पर पूरी फुरसत के साथ उनके साथ बैठ हुक्का पीने वाला, बात करने वाला कोई घरइया भी चाहिए। रामरूप के द्वार पर इस समस्या का समाधान करने के लिए बिलास बाबा बहुत उपयुक्त व्यक्ति थे। चिलम ठण्डी नहीं होने देते थे।

लेकिन बहुत चाहते हुए भी बिलास बाबा कवि खोरा से संगीत-चर्चा नहीं कर सके। बातें अधिकांश घूम-फिरकर राजनीतिक रूप ले लेतीं। वे बातें भी ऐसी होतीं जो उनके भीतर नहीं धंसतीं। उन्होंने जाना, ज़माना एकदम कितना बदल गया। रामायन-महाभारत की चर्चा की जगह लोग चुनाव और हड़ताल वगैरह की बातें करते हैं। राम, कृष्ण, भरत, व्यास, कर्ण, हनुमान और तुलसी वगैरह की जगह इन्दिरा, कमलापति, संजय, चन्द्रशेखर, अटल बिहारी, चरणसिंह और राजनारायण आदि की चर्चा दिन-दिन भर, रात-रात भर लोग करते हैं। गांव-देहात के रईसों, पंडितों, पहलवानों, साधुओं और अच्छे-भले लोगों की जगह छुरा, कट्टा लेकर घूमने वाले छात्रों की, गुंडों की, दरोगा को तुम-तड़ाम कर भिश्ती बना

देने वाले किसी नेता के चेले की, चीनी का समूचा कोटा ब्लैक कर देने वाले किसी नेता के चमचे दुकानदार की और अचानक ठेकेदारी द्वारा धन की मंजिल पर मंजिल उठाते जाते एस० पी० साहब के किसी रिश्तेदार आदि की जैसी चर्चाएं खूब गहमागहमी के साथ बैठक में हुक्का-सुरती और बीड़ी के साथ बेरोक चलती रहती हैं। एक बार एक हलके से रोक वाला अवसर तब आया जब लगभग चार बजे रामरूप के ससुरजी बाबू हनुमानप्रसाद अपने कांवरदार जिसकी बहंगी पर दोनों ओर एक-एक टीन सजाव दही था, खिदमतगार के साथ पहुंचे और पुवाल पर लोगों ने उनके लिए स्थान छोड़ दिया।

जलपान आया तो हनुमानप्रसाद ने वापस कर दिया। बोले, 'आज मुझे कुछ खाना-पीना नहीं है। जरूरत पड़ी तो गंगा-जल वालों की पार्टी में रहूंगा।'

'शास्त्र का भी यही कहनाम है' खोरा ने कहा, 'कन्या के गृह का अन्न-जल धरमी लोग नहीं छूते हैं। तिस पर भी आज तो सरकार की खास नतिनी का बिआह है।'

हनुमानप्रसाद ने खोरा की ओर देखा। मुस्कराकर कहने लगे, 'सो ऐसा धरमी मैं कहां हूं कबी जी? अरे, कल फागुनी शिवरात्रि थी, और आज मेरा चतुर्दशी का निर्जला व्रत है। जब तक निबह जाय···।'

'निबाहने वाला वही अवढरदानी भोला है। अपने का शिवरात्रि की व्रत-कथा सुने होंगे। उस जंगली जनावर, जइसे भील पर कैसे किरपा हो गयी? वह कथा सुनाता हूं।'

खोरा अभी इतना कह पाये कि क्षेत्रीय एम० एल० ए० पण्डित बालेश्वर उपाध्याय अपने गणों के साथ आ गये। धप्-धप् धवल शोभा से द्वार भर गया। पुवाल के एक सिरे पर जो एक मात्र ऊंचा सुसज्जित पलंग बिछा था तथा जिस पर बैठे लोग विधायकजी के करबद्ध नमन की गम्भीर मुद्रा में आते ही खड़े हो गये, उपाध्यायजी उसी के गद्दे में धंस गये और तकिये को मोड़कर केहुनी के नीचे कर ओठंगे-ओठंगे बोले, 'मुझे फिलहाल कुछ नहीं चाहिए। हां, जो बात चल रही थी, चलने दीजिए।'

रामरूप स्वयं कुछ लोगों के साथ जलपान की सामग्री···कागज की तश्तरियों में पांच जगह मिठाई-नमकीन—एक ट्रे में लिये दौड़ा आया, 'यह कैसे होगा? पहले जलपान तो कर लें। चाय आ रही है।'

इधर जलपान, स्वागत, समाचार और हें-हें-हें-हें चलता रहा और साथ ही खोरा की चर्चा भी। 'उधर जीप का ड्राइवर होगा। उसको भी···।' कहते हुए रामरूप द्वारपूजा की तैयारी में चला गया। पुवाल पर बैठे विधायकजी के गण लोग जलपान के साथ खोरा की चलती कथा से प्रायः उदासीन रहे और पलंग की ओर मुखातिब हो अपनी भक्ति प्रदर्शित करते रहे। पुवाल पर कुछ और लोग

भी अपनी बातों में लगे रहे। उधर खोरा शिवरात व्रत की कथा कहते गये—

'अपने लइका-फइका और मेहरारू को भूख से तड़पते हुए घर छोड़ व्याध भील भिनसहरे बन में आया, शिकार के लिए दिन-भर कुछ नहीं हाथ लगा। सांझ के वक्त पोखरा पर पहुंच सिरफल के पेड़ पर चढ़ गया। पहर रात बीती। एक हिरनी आयी। निशाना साधने में हाथ के झटके से उसकी तुमड़ी का पानी नीचे शिवजी की मूर्ति पर गिर गया। साथ ही कुछ बेलपत्र भी गिरे। हिरनी ने प्रार्थना किया कि उसको अपने बाल-बच्चों से भेंट-मुलाकात की छुट्टी दे दें। धोखा नहीं करेगी। वह गयी। इसी तरह दूसरे, तीसरे और चौथे पहर हिरना-हिरनी आते गये। अनजाने तुमड़ी का जल और बेलपत्र गिरता गया। दिन-भर का निर्जला व्याध था। और चारों पहर की पूजा अपने आप हो गयी। भोले बाबा परम प्रसन्न। उसी समय एक ही परिवार के वे सब हिरना-हिरनी और उनके बच्चे आये। 'अब हम लोगों को आप खुशी से मार कर खाइए।' मगर अब वह पुराना हिंसक व्याध कहां था। उसका सारा पाप कट गया था। मति बदल गयी थी।···तो महाराज, अनजान के ब्रत का ऐसा फल, तो जानकर ब्रत करने का कितना पुण्य होगा ?' अन्त में खोरा ने सवाल उछाला।

चलती चाय के बीच सबसे बोलते, बात करते हुए भी एम० एल० ए० साहब खोरा की कहानी के प्रति सजग थे। उसके समाप्त होते ही बोले—

'खोरा जी, अब ये कहानियां तो खंडहर हो गयीं। आप उनके प्रति मोह करना चाहें, कर लें। पर सच में वे किसी काम की नहीं। हमारी आज की जटिल समस्याओं का इनमें जवाब नहीं मिलेगा। ज़माना कितना आगे बढ़ गया। हम लोग कब तक उसी पुराने हिरना-हिरनी में उलझे रहेंगे ?···आप देखें, दो महीने बाद चुनाव घहराने वाला है। देश में एक ओर राजनीतिक उठा-पटक हो रही है और दूसरी ओर अपना-अपना वेतन बढ़वाने और बोनस के लिए तमाम-तमाम कर्मचारी आन्दोलन कर रहे हैं, केन्द्र के कर्मचारी, प्रान्त के कर्मचारी। केन्द्रीय सचिवालय के कर्मचारी और अफसर प्रदर्शन-रत हैं। आयल एण्ड नेचुरल गैस कमीशन के हज़ारों अधिकारी सामूहिक छुट्टी पर हैं। डाक-तार के कर्मचारियों के अतिरिक्त विभिन्न विभागों के जूनियर इंजीनियर 'नियमानुसार काम' करने का आन्दोलन कर रहे हैं। हमारे प्रान्त के बिजली-विभाग के इंजीनियर भी फिरन्ट हैं। आन्दोलन, गिरफ्तारी, हड़ताल जारी है। हिमाचल प्रदेश के स्वायत्त कर्मचारी विभिन्न विश्वविद्यालयों के कर्मचारी, कलकत्ता, मद्रास और बम्बई के जहाजी कर्मचारी, चाय मजदूर, राज्य व्यापार निगम, इंडियन नेशनल सीमेंट एण्ड एलायड वर्क्स फेडरेशन, राज्य बीमा निगम और कोल माइन्स आफीसर्स असोसियेशन वगैरह सब के सब आन्दोलन के मार्ग पर हैं। पूरा देश जैसे खौल रहा है। हत्या, लूट-पाट, भ्रष्टाचार, गुंडई, नंगई और अपहरण-बलात्कार के समाचारों के

धक्के से मन टूट-टूट जाता है।···एक हमारी पार्टी क्या करे ? समस्याओं को एक सिरे से सुलझायें तब तक दूसरा सिरा और उलझा मिलता है। बताइये तो, इस निर्जला व्रत और जल-बेल-पत्र चढ़ाने से आज की विकट राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान में क्या मदद मिलेगी ?'

विधायकजी ने अन्त में जो जवाबी सवाल उछाला वह यद्यपि सीधे बाबू हनुमानप्रसाद पर घहरा रहा था। तथापि उनकी ओर से उसकी कोई नोटिस नहीं ली गयी। उनका मन तब कहीं और उलझा था। बात यह थी कि खुबवा को चटाईटोला गये कई दिन हो गये और उसका कुछ पता नहीं चला। कहां मर-खप गया ? क्या हुआ ? ऐसा तो कभी नहीं हुआ। उन्होंने आज महुवारी आने के पूर्व किसुना को चटाईटोला भेजा था। वह वहां से उसका पता लेकर और उसे साथ लेकर महुवारी में आकर सूचना दे। यहां उनको दो दिन रहना है। ठीक-ठीक समाचार नहीं मिलने से मन कितना उड़ा-उड़ा रहेगा। सो, वह किसुना भी अब तक नहीं लौटा। खुबवा ने गांजा-पीकर कहीं दम के साथ दम तो नहीं तोड़ दिया ? कहीं बहक तो नहीं गया ?···कई कारणों से खुबवा उन्हें इस समय बहुत महत्त्व-पूर्ण व्यक्ति प्रतीत होता था।···वह उसका महुवारी वाला पांच बीघे का खेत··· वह उसकी अन्त्योदय वाली भैंस···साला कैसे जांघ पर हाथ मार मतवाले की तरह बात करता है। लौटता है तो उसकी हजामत बनाता हूं।

विधायकजी की बात का उत्तर दिया खोरा ने—

'सरकार, शिवरात्रि के निर्जला-व्रत करने और जल-बेल-पत्र भोले बाबा को चढ़ाने से जरूर रास्ता मिलेगा। धरम-करम तजिके जो राजनीति के पीछे अपने लोग पड़े हैं सो उसी के कारण यह सारा गदर मचा है। देश-दुनिया का पंवारा छोड़िये। इस हमारे बाबू साहेब, बाबू हनुमानप्रसाद को देखिये। भोले बाबा और कमच्छा माई के चरन-सेवक हैं। तो, इनको क्या कमी है ? अन्न-धन और जन से सम्पूरन हैं। प्रभुजी ने क्या नहीं दिया है ? तो, आप कहिये, व्रत करने से काहे नहीं रास्ता मिलेगा ?'

अपना नाम और प्रसंग कान में पड़ा तो बाबू साहेब की विचार-धारा भंग हुई। उस समय दमरी नाई बिलास बाबा को द्वारपूजा के चौक पर बैठने और उसके लिए तैयार होने के लिए बुलाने आया। स्पष्ट था कि बैठे लोगों को भी अब अगवानी में चलने के लिए सन्नद्ध हो जाना चाहिए। दुमेला वाले टोन में अंग्रेजी बाजा जो गांव के बाहर बज रहा था। उसकी धूम-धड़क इधर की रेकार्डिंग के भीतर से छन-छनकर सुनाई दे रही थी। टोल-पड़ोस के लोग घरों से बन-ठनकर बाहर दरवाजे पर आ गये थे। पहल पर बैठे लोगों में से भी अधिकांश लोग उठ गये और अगवानी वाला जुलूस दरवाज़े से नीचे उतरा तो उसमें सम्मिलित हो गये। पहल पर रह गये खोरा, बाबू हनुमानप्रसाद, सीरी भाई, दो बूढ़े रिश्तेदार,

एम० एल० ए० साहब के दो गण और पलंग पर एम० एल० ए० साहब। जब शान्ति हो गयी तो विधायकजी ने कहना शुरू किया—

'खोरा जी, आप कहते हैं कि व्रत के प्रभाव से बाबू हनुमानप्रसाद को विधाता ने सब कुछ दिया है और आपका कहना सही भी हो सकता है। परन्तु मेरी दृष्टि में—बाबू साहब क्षमा करेंगे—एक चीज़ नहीं दिया है और वह चीज़ है सार्वजनिक कार्य के प्रति रुचि और जन-सेवा का भाव।'

'विधायकजी की बात सुनकर और ऐसी खुली आलोचना देखकर हनुमानप्रसाद स्तब्ध हो गये। कुछ उत्तर न देकर उनकी ओर देखने लगे जैसे पूछ रहे हों, इसका क्या प्रमाण है आपके पास? खोरा को भी लगा कि अकारण ये विधायक महाराज इस रईस पर रह-रहकर बोली वोलते हैं। कुछ रातनीतिक मामला है क्या? विधायकजी ने हंसकर कहा—

'सुना है, पूर्वांचल विकास मंच की ओर से प्रस्तावित महुवारी-स्टेशन मार्ग का बाबू साहब द्वारा विरोध हो रहा है। भला ऐसा…।'

हनुमानप्रसाद ने हेंकड़ खोंखी के साथ हाथ उठाकर उन्हें आगे कुछ कहने से रोकते हुए कहा, 'बस, बस। समझ गया।…तो, आप साहब तो लखनऊ रहते हैं, जहां पहले नवाब रहते थे। आप जैसा मगज हमारे पास कहां है? मैं गंवार आप को क्या जवाब दूं और क्या समझाऊं? कहा है, पढ़े फारसी बेचे तेल। सो, विधायकजी, पहिली दफा तो यह कि जैसी सार्वजनिक जन-सेवा आप जैसे खद्दरी-टिनोपाली लोग करते हैं उसे देखते धिक्कार है बड़े नाम और बड़े बोल को और दूसरी दफा यह कि जब सब जगह खुला मामला पार्टीबन्दी का है तब नकली चेहरे की क्या दरकार? आप जनता पार्टी के हैं और अपनी पार्टी वाले रामरूप के यहां न्यौता पर आये हैं। उसका पक्ष गा रहे हैं। मैं पुराना कांग्रेसी हूं तो मेरे ऊपर ताना मार रहे हैं।…तो ठीक है। आपने रामरूप की पार्टी का होकर पूर्वांचल विकास मंच को लोक लिया है तो मैं इन्दिरा कांग्रेस का होकर आप लोग जो कुछ करेंगे, उसका विरोध करूंगा ही। कहिए, मैं क्या ग़लत कह रहा हूं?'

'मगर रामरूप तो आपका खास रिश्तेदार है।'

'रिश्तेदारी अपनी जगह पर है और पार्टी अपनी जगह पर। दोनों दो चीज़ें हैं। सड़क बनने से मेरी अपने गांव की पार्टी को धक्का लग रहा है।'

'मैंने समझा नहीं।'

'जो नक्शा सड़क का बनने जा रहा है, वह हमारे दोस्त दीवानजी के चक के भीतर से जा रहा है। तो, बताइये, महुवारी के लोगों के लिए सड़क बने और पेट कटे गठिया का? यह कहां का न्याय है?'

'जितना खेत फंसेगा उसका सरकार मुआवज़ा देगी।'

'देगी, मालूम है। मगर, विधायक जी, भोजन की भूख पान खाने से नहीं

जाती।···आप को इस क्षेत्र का वोट लेना है तो इस सड़क के चक्कर में न पड़ें। गठिया के लोग सड़क नहीं बनने देंगे।'

इसी समय एक हाथी का बच्चा जिसकी पीठ पर सिर्फ दो व्यक्ति बैठे थे, दुमेला के घुड़-दौड़ से इधर रुख होते ही जल्दी-जल्दी भागकर द्वार पर आ गया और उसके पीछे एक अलंकारों से सज्जित घोड़ा, फिर उसके पीछे हल्ला करते लड़के, लोगों की भीड़, बरात, बाजा, पालकी, छूटती बन्दूकें, तनी मंछें और असाधारण धूमधाम का मेला, भारी हंगामे की तरह, नियंत्रित और सज्जित कोलाहल से परिपूर्ण। और इस औरतों के द्वार-पूजा वाले मंगल-गीत से परिपूर्ण कोलाहल में डूब गयी पहल पर की बहस। विधायकजी और हनुमानप्रसाद दोनों बाहर दर्शक की भांति खड़े हो गये।

यह टक्कर की बहस जब तक चलती रही, खोराजी एकदम खामोश उसमें डूबे रहे। दोनों उठकर एक साथ बाहर गये तो उन्होंने मन-ही-मन सोचा, दोनों खिलाड़ी अपने-अपने दांव पर हैं। पूर्वांचल विकास मंच के सभापति इस खोरा की कोई पुछवाई नहीं। जैसे वह था ही नहीं, है ही नहीं।

'आप नहीं देखने चलेंगे?' उठकर बाहर जाते-जाते सीरी भाई ने पूछा।

'कहां चलेंगे? वहां जवन चीज़ भी देखना है, मैं यहीं से देख रहा हूं। बड़ारपुर के बड़े बाबू रघुनाथ सिंह बहुत जोम से चढ़ आये हैं, हाथी, घोड़ा, बरात, तम्बू, नाच-बाजा और हाली-महाली लेकर। दो दिन की रहाइस है। द्वार-पूजा शुरू है। इसके बाद जलखवई होगी। बरात तम्बू में जायेगी और फिर थोड़ा बिलम कर लोग 'आज्ञा' मांगने जायेंगे। फिर डाल पूजा, बरनेति, विवाह, भोजन और इस तरह दूसरे दिन···तीसरे दिन···बिदाई तक, कुछ हूंय-फांय, कुछ शान-संघरसन, कुछ इज्ज़ती मामला। सब घिसी मशीन की तरह···खट्टरखों-खट्टरखों···कवन नयी बात देखने चलेंगे बाबू साहब?' खोरा ने कहा। किन्तु सीरी भाई के जाने के बाद वे भी उठकर बैठ गये और सामने वाले जंगले से बाहर का दृश्य देखने लगे। ···लंगड़ टांग लिये बाहर कहां प्रदर्शन करने जाते?

जलपान वाले टेंट में आदर्श विद्यालय के मैनेजर—प्रिंसिपल सहित अधिकांश अध्यापक एक जगह बैठे थे। वर्मा और बीरबहादुर सहित कुछ अध्यापक प्रबन्ध में गांव वालों के साथ खट रहे थे। खोरा ने देखा विधायकजी और करइलजी एक ही टेबुल पर बैठे खाने-पीने से अधिक कुछ घुट-घुटकर बातें कर रहे हैं। तभी जलपान की सभी सामग्री लेकर रामरूप स्वयं खोरा के पास पहुंचा।

जलपान करके विधायकजी दीनदयाल के चलता-पुरजा हुरदंग युवा-पुत्र और युवक कांग्रेस के उभरते अवसरवादी नेता गजिन्दर से बात करने लगे। बरात के न्यौते पर नहीं, रामरूप के द्वार पर गजिन्दर मात्र विधायकजी से मिलने और भोजनोपरान्त अपने यहां लिवा जाने के लिए आग्रह करने आया था किंतु रामरूप

के आग्रह पर उसने जलपान कर लिया।

बाबू हनुमानप्रसाद जलपान के बाद सीधे खोरा के पास पहुंचे। 'का हो साधू, हमारा काम नहीं होगा ?' उन्होंने धीरे से कहा।

'कौन काम ?' खोरा ने एक ओर सरककर पूछा।

'अरे वही, कोइली वाला काम। वह अभी नहीं मिली।'

'जा पर जाकर सत्य सनेहू, सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।'

'मगर कब ? कितनी देर है ?'

अब खोराजी को कुछ मदाड़ीपन सूझा। ध्यान की मुद्रा में क्षण-भर बैठ उंगलियों पर गिनते हुए कहने लगे—

'ईन-बीन-सवा-अढाई-तीन। मगर कुछ गड़बड़-सड़बड़ फीन।।'

इसी समय किसुना आता हुआ दिखायी पड़ा और हनुमानप्रसाद लगभग उछलकर बाहर आ गये।

'क्या समाचार है ?' पूछा।

'समाचार ठीक नहीं है मालिक।' मुंह लटकाये हुए किसुना ने कहा और एक सांस में बता गया कि खुबवा के जाते ही रास्ते में उससे चटाईटोला के बाहर संयोग से नवीन बाबू मिल गये और उन्होंने जाना कि यही खुबवा है जो अपनी महुवारी की पांच बीघा जमीन बाबू साहब के हाथों बेच अब उन्हीं के यहां गुलाम बन रहता है तो उन्होंने दो दिन तक उसकी 'दामाद' की तरह खातिरदारी की और खूब खिलाया-पिलाया तथा अन्त में अपना नहीं तो गांव का दामाद उसे बना ही दिया। अर्थात् करइल महाराज के उस छोटे बादशाह उर्फ 'पावल पांडे' की महतारी, कलिका कहांर की बेटी और नवीन की बदनाम प्रेमिका सुनरी से आज रात खुबवा की शादी हो रही है।...अरे, वह क्या पहचान में आ रहा था ? खिजाब में रंगे बाल, तेल-चुपड़े, वह पिअरी धोती, लाल कुर्त्ता। दम लगाने के बाद पान खाकर बोला था सठसाला खुबवा, 'मलिकार से हमारी रम-रम्मी कहियो जी किसुन महाराज। और कहियो, अब हमारा खेत छोड़ दें, हमारी भैंस वह जो कि सरकार की है...।' खुबवा की ज़बान लड़खड़ा रही थी। मुंह महक रहा था।

सिर में चक्कर आ जाने से हनुमानप्रसाद गिरते-गिरते बचे और एक कुरसी खींच बैठ गये, एक दम अवाक्।

२५

वह बेटी का विवाह ही क्या जिसमें बरात राज़ी-खुशी वापस चली जाय। रूठना और तुनकना ही तो जैसे बरात का स्वधर्म है। इसका निर्वाह तब बाबू रघुनाथ सिंह क्यों नहीं करते ? बहानों की क्या कमी हो सकती थी ? वह दहेज का बैल

भी हो सकता था और किसी विशेष नाम वाले स्कूटर से लेकर सीको घड़ी वगैरह तक। मगर यहां जब यह सब नहीं चला तो सर्वथा नया कारण उछल आया। छह बजकर सत्रह मिनट के भीतर कन्या की विदाई क्यों नहीं हुई? उसके बाद साइति ठीक नहीं। कुसाइति में कन्या को नहीं लिवा जायेंगे। पुरोहित्त भगवत पांडे उधर के पंडित को साइति के बारे में चुनौती देते रह गये। सब बेकार। जनवासे से पालकी भेजी ही नहीं गयी। तम्बू उखड़ गया। पवनियों के नेग-जोग का काम किसी तरह घिस-पिटकर सम्पन्न हुआ। मिलनी-भेंट आदि की रस्में कड़वाहट में डूब गयीं। सारा रस अनरस। प्रार्थनाएं बेकार हुईं। हां, विदाई का जो दुनिया भर का बिदाऊ सामान बाहर निकल आया था उसे चुस्ती के साथ ट्रेक्टर पर तथा कुछ बैलगाडियों पर लाद दिया गया और दोनों ट्रेक्टरों पर बैठ बरात जैसे भड़भड़-भड़भड़ कुछ शब्द छोड़ चली गयी।

कुछ देर बाद रामरूप के मस्तिष्क की तनावपूर्ण जड़ता कुछ ढीली हुई तो उसने जाना, बक्सों की कुंजियों का गुच्छा तो उसके पास ही रह गया। जब अनुचित, अनैतिक लूट की भांति लगभग जबरदस्ती बक्से चले गये तो कुंजियों को रखकर क्या होगा? रामरूप ने इस बात को बताते हुए पास बैठे आहत और शून्य-से पड़े भारतेन्दु वर्मा की ओर देखा। वर्मा खड़ा हो गया। ऐसे कार्यों में किसी और को नहीं खोजा जाता है। ट्रेक्टर तो काफी दूर निकल गये होंगे। बैलगाड़ियां अभी सिर्फ आधे ताल तक गयी होंगी। उसने कुंजियों का गुच्छा पाकेट के हवाले कर सायकिल निकाली। रात्रि जागरण के कारण शरीर और मन एकदम निढाल हो गया था। तिस पर आकस्मिक 'दुर्घटना।' सायकिल के पैडिल पर से पैर खिसक जाता। वह प्राइमरी स्कूल के बाद खेतों के बीच की पगडंडी पकड़े जब सरेहि में धंसी तो कुछ गति आई। उसकी सायकिल गोबर से लिपे हुए एक खलिहान से निकली। बाहर की फागुनी हवा ने पिटे मन पर मरहम का काम किया और सूरज की किरणों में खिले मैदान के विराट् दिव्य फसली पुष्पों के अनन्त प्रसारी सौन्दर्य वैभव देखकर जैसे सारा दुख भूल गया। अरे, इधर तो मैं कभी आया ही नहीं था। एक ही समय इस ओर फूली हुई सरसों और उधर कटी फसल?

सचमुच, वर्मा का नागर मन खुशी में नाच उठा। खेतों के इस महान् सौन्दर्य को देख उसका मन एकाग्र हो गया। नगरों की भीड़ से कम सुखद यह पगडण्डी के दोनों ओर वाली पौधों की जीवन्त भीड़ नहीं है। पर, यहां कितनी शान्ति है? ये सजीव, भोले, निर्विकार और आत्मा के सहचर जैसे पौधे कितने प्यार भरे हैं? इनकी हरियाली से ही संसार के चेहरों पर हरियाली है। इनकी दिव्य नवीनता ही तो किसान की विपन्न मनहूसी के बीच चांदनी का लास भर देती है। गदराई और कुछ-कुछ पिअराई फसलों के बीच साफ, चिकनी, गोरी-भूरी, मौन पड़ी

कलात्मक और तन्वंगी पगडंडी का ऐसा मोहक रूप पहले कभी वर्मा ने देखा था ? नहीं, वह बारम्बार सोचता है, इसे किसी सरकार ने ठीके पर नहीं निर्माण कराया है। इसे जनता ने अपने दुरमिस जैसे नंगे पैरों से बनाया है। हरियाली के बीच रेंगती-सरकती इस पगडण्डी को देख लो वर्मा, सरेहि में धंसती चली जाती मानो मनमोहिनी सौन्दर्य-सृष्टि के बीच धरती के अस्तित्व की लकीर खींच रही है। अपनी अनुभूतियों के इस क्षण विचार-बिम्ब को बांध लो—

यह पगडण्डी
जिस पर यह सायकिल सवार
सर्र से चला जाता है
जब बनी तब कैसी थी ?
कांटे-से ढेले जो काट-काट खाये !
फूल-सा चरण पड़ा
दुर्मुठ-से पग चले
और आज यह
हरे, भरे, फूले, गदराये खेतों बीच विराजती
साफ लकीर
कुछ कहती है।···
जन चलता है
जनता राह बनाती है !

वर्मा क्षण-भर के लिए भूल गया कि वह किसी काम से जा रहा है। एक मटर के खेत के पास से गुजरते वह सायकिल की सीट पर बैठा नहीं रह सका। उतरकर उसने सायकिल को स्टैंड पर खड़ी कर दी और लपककर एक मटर के पौधे की लतर को हाथों में भरकर उठा लिया। उसके वे लचीले डण्ठल, चिकने पात, लम्बे-लम्बे पोर, शीतल स्पर्श और सब से सुन्दर सिरे के फूल। फूल की दो पंखुड़ी हलके गुलाबी रंग की जो नीचे की ओर झुकी हैं और उनके ऊपर दो पंखुड़ी एक में जुड़ी हुई, गहरे लाल रंग की, ऊपर की ओर उठी हुई, सारे फूल जैसे एक सांचे में ढाले गये। और तगड़ी-तगड़ी छीमियों की छुवन ? वर्मा किन शब्दों में उन कुछ अज्ञात आदिम अतीन्द्रिय अनुभूतियों को बांधे ? उसने लतर को हाथों में ले ऊपर उठाया। हाथ छोटे पड़ गये। अरे, यह कितनी लम्बी है ? उसे याद आया, रामरूप एक दिन बता रहा था कि कहते हैं, इस्तमरारी बन्दोबस्त के सिल-सिले में लार्ड कार्नवालिस करइल में पहुंचा तो फसल लगी थी और हाथी पर बैठे-बैठे उसके आदमियों द्वारा उंचकाई गयी मटर के फसल की लम्बाई छू उसने छीमी तोड़कर खायी थी। अब हाथी पर नहीं तो सायकिल की सीट पर बैठे-बैठे वर्मा छीमियों का मज़ा उठावे। उसने जल्दी-जल्दी कुछ छीमियों को तोड़ पाकेट के

हवाले किया और सायकिल को सम्हाला तो याद आया, वे बैलगाड़ियां कहा हैं ? उसने चारों ओर निगाह दौड़ाई। मगर बैलगाड़ियां कहीं दिखाई नहीं पड़ीं।

छीमी काटली सायकिल बैलगाड़ियों की अदर्शन-चिन्ता में धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। बैलगाड़ियां वहां से चलीं तो फिर बीच में क्या हो गयीं ? दूर-दूर तक सपाट सरेहि दिखाई पड़ रही है। यह शार्टकट पगडण्डी आगे चलकर बैलगाड़ियों के मार्ग में मिल जायगी। आखिर उनकी रफ्तार कितनी तेज़ हो सकती है? वर्मा की अन्वेषक आंखें बारम्बार फूलों के गहगहे पसार पर फिसल-फिसलकर उन्हें छान रही थीं। किन्तु बारम्बार वह बैलगाड़ियों की बात भूल जाता और उसका मन धरती के ऊपर ऊंची सजी हरियाली की मनमोहक सेज तथा उन पर चुने पारिजात-सुमन-जैसे फूलों की कोमलता पर लोटने लगता। लगता जैसे सरसों के फूलों की अनंत झंडियों वाले पौधों के जुलूस के साथ वह भी करइल क्षेत्र की जय-जयकार करने लगेगा। जैसे नन्हें-नन्हें सफेद फूलों में गुमसुम, एक में एक सटी, भूरी-झबरी मसूर की फसल के अकवार-भेंट के लिए वह सायकिल से फिर उतर जायेगा। खेसारी और तीसी के नीले फूल, सरसों के पीले फूल, मटर के सफेद और लाल फूल, मसूर के सफेद और बर्रे के जोगिया फूल···नोट कर वर्मा, मसूर के मण्डप में तीसी का तोरण, सरसों की झंडियां और मटर के सफेद फूल जैसे असंख्य तितलियां।

छवर आ गयी। बैलगाड़ियों की लीक तो इस पर बहुत हैं, कुछ ताज़ी हैं पर बैलों सहित गाड़ियां कहां उड़ गयीं ? वह सायकिल रोककर फिर एक बार आगे-पीछे देखने लगा। पीछे होने की सम्भावना नहीं थी। आगे गयी होंगी पर कहां तक ? आगे वह मेहपुर गांव है। उसके बगीचे के पेड़ काजल के मेघ जैसे लगते हैं। तो क्या बैलगाड़ियां उस मेघमाला में धंसी हैं ? उसने फिर सायकिल पर बैठ पैडिल को कसकर दबाया। आगे कुछ खाल ज़मीन थी और इसीलिए फसल और अधिक ज़ोरदार थी। एक सिलसिला गेहूं के खेतों का था। सुनहरा पानी चढ़ने की प्रतीक्षा में ये तगड़े टूंड़ों के ब्रस वाले तरनाये पौधे वर्मा के मन के गर्द-गुबार को जैसे साफ करने लगे। उसने सोचा, ऐसी यह ढेर सारी पैदावार खाकर भी गांव की ठटरियों पर मांस क्यों नहीं चढ़ता है ? फटी-पुरानी धोती-चादर वाले किसान उसकी बगल से कन्धे पर लाठी अलगाये, खोये हुए रास्ता पकड़े निकल जाते हैं। नंगे पैर कुछ लोग गठरी-मोटरी लिये कहीं लपकते हुए जाते मिलते हैं। विशाल मैदान के सन्नाटे में बजते सांय-सांय में कहीं रास्ते पर कुछ लोग परम निश्चिन्तता से बैठे जब बातचीत करते मिलते हैं तो उनकी शब्दा-वलियां शून्य में कितनी बिखरी-बिखरी होती हैं। यहां जो कुछ है, सब अद्भुत है। दूर-दूर चारों ओर के धुंधले-धुंधले पेड़ों की विस्तृत गोलाई में यह फसलों का जो इतना बड़ा मैदान है, क्या आश्चर्य कि इसके बीच में कोई पेड़ नहीं। वर्मा ने मन-

ही-मन सोचा, यह बाढ़-ग्रस्त क्षेत्र होने का प्रसाद है। बाढ़-बरसात के चौमासे में जहां यह समुद्र बना रहता होगा वहां पेड़-पौधे कैसे उगते ? ओह, तब का दृश्य कैसा होगा ? देख लोगे वर्मा उसे भी। जैसे यह स्वर्ग एक सत्य है वैसे ही यहां का वह नरक भी सत्य है।

अचानक वर्मा को आगे कहीं 'आव' की ठनकती आवाज़ के साथ बिरहा की तान सुनाई पड़ी मगर कहीं कुछ दिखायी नहीं पड़ा। उसने सोचा, निश्चित रूप से यह गाड़ीवान की ध्वनि है। बैलों को हांककर आलाप के टुकड़ों को शून्य में उछाल रहा है। और तभी धीरे-धीरे गाड़ियों के न दिखायी देने का रहस्य उसकी समझ में आया। वे दिखें तो कैसे ? पोरसा भर ऊंची फूली सरसों वाले ताल में वे डूबी हैं। उसने ध्यान से देखा तो आगे मोड़ के बायें फूलों के बीच कोई सफेद आकार की चीज ऊपर-ऊपर सरक रही थी। निश्चित रूप से वहां बैलगाड़ी है जिस पर कोई व्यक्ति लदे सामान के ऊपर बैठा है और लगता है जैसे जादू के जोर से फूलों के ऊपर-ऊपर चल रहा है। यह आदमी ही क्यों ? किसानों द्वारा घर की ओर ले जाते हुए बोझ भी सरसों में डूबे-डूबे जैसे हवा में तैरते चले जा रहे हैं। तभी फूली सरसों की अत्यन्त मादक सोंधेपन से भरी सुगन्ध का एक झोंका आया और वर्मा के नासापुट को छेड़ता भीतर धंस गया। उसके नशे में सायकिल के पैंडिल पर जो उसने जोर लगाकर ताबड़तोड़ पैर मारा तो शीघ्र ही ढक्कर-पैंच करती गाड़ियों से जा लगा।

गाड़ियों को रोकवाने के लिए उसे बहुत हल्ला करना पड़ा। एक तो उन्हें खींचने वाले बैल हैं, दूसरे हांकने वाले उनसे भी बीहड़ बैल। फिर कहा नहीं जा सकता कि उस पर बैठा 'आदमी' आदमी है। क्योंकि वह रूठी हुई बारात से लौटा कुछ मालिक टाइप मनई है। 'लूट' के माल के साथ है। शान की सींगे काफी तरनाई हुई होंगी। मालिक तो मालिक है, पता नहीं कैसे बरातियों के सिरों पर भी सींगे उग आती हैं। दूसरे दिन रात भोजन के समय 'बिजे' गया तो निवेदन किया गया कि आज कच्चा भोजन आंगन में खाना है। अतः दो बार में लोग आयें तो सुविधा होगी। मगर, कौन सुनता है। एकबारगी सारी बारात, लगभग तीन-चार सौ व्यक्ति जम गये। अब बैठने को भारी अंडस। एक खद्दर-धारी सज्जन बैठने की जगह खोजते-खोजते खड़े-के-खड़े रह गये। फिर भाषण करने लगे—

'यदि खिलाने के लिए बुलाकर इस प्रकार अपमान करना था और लोगों को भेड़-बकरियों की तरह ठूंस-ठूंसकर बैठाना था तो क्यों आप लोगों ने बरात बुलायी ?'

'बारात बुलाई नहीं गयी, आ गयी।' एक आदमी ने जो पत्तल परस रहा था, कह दिया।

'तो कह दीजिए, हम लोग बिना खाये चले जायं।' वे सज्जन और जोर से चिल्लाये।

'खिला तो हम बहुत आदर के साथ रहे हैं पर आप खड़े-खड़े खाना चाहते हैं तो हमारा क्या दोष है?'

'खड़े-खड़े नहीं तो कहां आपके सिर पर बैठें?'

'सिर पर बैठाकर खिलाने के लिए भी हम तैयार हैं सरकार, काहे नाराज़ हो रहे हैं?' पूड़ी परसने वाले ने कहा।

'ज़मीन पर तो जगह ही नहीं, सिर पर क्या बैठायेंगे और खिलायेंगे?' एक अंडस में बैठा हुआ बराती पत्तल में पड़ी पूड़ी को तोड़ते हुए बोला।

'भीड़ होने पर और क्या होगा?' सब्जी परसते हुए एक दूसरे आदमी ने कहा।

'हम लोग भीड़ हैं? बराती मेहमानों को आप लोगों ने भिखमंगों की भीड़ समझ लिया?' एक तीसरा बराती आदमी खड़ा होकर चिल्लाया।

'लानत है ऐसे भोजन पर, बरात नहीं खायेगी। चलो भाइयो, उठो…।' वह पहला खद्दरपोश मदद पाकर और गरमजोशी से बोला। कुछ और लोगों ने खाते-खाते हाथ रोककर कुछ-कुछ वैसा ही अंड-बंड कहा। फिर हल्ला बढ़ गया और घरातियों में से कुछ लोग मान-मनौवल के लिए बढ़े। खद्दरधारी सज्जन को किसी घर में भीतर बैठाने के लिए लोग ले गये। तब तक भोजनार्थ बैठी बरात ने पत्तल पर के भोजन का पहला दौर चुपचाप समाप्त कर लिया था और मामला शान्त हो गया। ऐसे बरातियों की गाड़ी रोकवाना क्या सहज था?

'क्या काम है? लड़की नहीं विदा किया तो क्या दहेज भी बीच ताल में लूटने की स्कीम है?' वह मालिक टाइप आदमी गरजकर वर्मा पर जैसे झपट पड़ा।

'लूटने के लिए तो पूरी गैंग चाहिए। मैं तो, आप देख रहे हैं, अकेला हूं। निहत्था हूं।' वर्मा ने उत्तर दिया।

'क्या पता सरसों में लोग ढुक्का लगे हों। फिर अकेला आदमी भी आज कट्टा-तमंचा लेकर क्या-क्या नहीं करता है? महुवारी वालों का कुछ ठिकाना नहीं।… कहो न, अब क्या बाकी रह गया?'

'आप हमारे चरण-पूज्य हैं। आपकी गाली, मार सब सिर पर है।…एक ज़रूरी चीज़ सचमुच बाकी रह गयी। यह लीजिए।'

वर्मा ने कुंजियों का गुच्छा उनके आगे फैलाकर हवा में टांग दिया। मालिक ने उसे चट झपट तो लिया पर नाराजगी के उसी स्वर में वह कहता गया—

'ले जाइये ये कुंजियां। सारा कौल-करार बाकी रह गया तो इन कुंजियों से तबीयत भरेगी?' उसने गुच्छे को हवा में हिलाया जैसे फेंकने का अभिनय कर रहा है और फिर अपने पाकिट में डाल लिया। कहने लगा—

'जाइये कह दीजिएगा, रिश्तेदारी नहीं चलेगी । गौने का दिन नहीं जायेगा। तीज-त्यौहारी भी नहीं जायेगी। हम लोग मास्टर रामरूप की धूर्तता पर बहुत नाराज़ हैं।' उसका मुंह कहते-कहते लटक गया।

'गलती माफ हो बाबू साहब, क्या धूर्तता की है रामरूप ने?' क्षोभ रोककर बहुत धैर्य से वर्मा ने पूछा।

'इससे बढ़कर धूर्तता क्या होगी कि लड़की की विदाई नहीं की। हम लोगों को सुबह नाश्ता नहीं दिया।'

'मगर विदाई के सामानों की तो विदाई कर दी?' वर्मा ने कहा और व्यंग्य को समझकर वह आदमी झेंप गया। वर्मा ने फिर कहा, 'इसी को कहा जाता है बाबू साहब कि बरिआरा चोर सेंध में गावे। पहले करार था कि लड़की विदा नहीं होगी। बीच तैयारी में विदाई का हुक्म देकर आप लोगों ने कितने संकट में डाल दिया। फिर विदाई के लिए तैयारी करने के बाद यह नाटक कर तो उस गरीब को उजाड़ ही दिया। क्या इसी का नाम रिश्तेदारी है? अब बाकी जो कोर-कसर है वह गौने के समय निकालकर क्या उसकी जान ले लेने का विचार है?'

'तब क्या तुम्हारे मास्टर ने लड़की के विवाह को पुतरी-कनिया का विवाह समझ लिया था?…कह देना, गौने में हम लोग अत्यन्त शरीफ की तरह, जो देंगे उसे खुशी-खुशी लेकर चले जायेंगे। एक ज़बान नहीं बोलेंगे। अब तो हम लोग रिश्तेदार हो गये। दोनों खून एक में मिल गया।…अरे हां भाई, विवाह-शादी में तो यह सब होता ही है। कोई नयी बात नहीं…।' वह बोलता गया।

उसके इस उतरते पारे वाले ठंडे रूप को देखकर वर्मा को बहुत हैरानी हुई। अरे, ये ग्रामवासी भी विचित्र हैं! अभी कटहे कुत्ते की तरह भूंक रहा था और अभी पालतू बिल्ली जैसा म्याऊं-म्याऊ करने लगा।

कुंजी देकर लौटते समय वर्मा ने सोचा, क्या जल्दी है, पैदल चलकर इस अकस्मात् प्राप्त सुअवसर का कुछ लाभ उठाया जाय। इस सौन्दर्य-सागर के बीच पूरी फुरसती मुद्रा में चलना ही न्याय है। वहां द्वार पर की अब सारी हड़बड़ी उतार पर होगी और उसके बिना कोई कार्य कहीं रुका नहीं होगा। गांव में तो ऐसे मंगल-समारोह जैसे यन्त्रवत् सम्पादित होते हैं। हर मौके के लिए निर्धारित लोग हैं। छोटी-छोटी चीज़ों की परम्परायें हैं। सब लोग जानते हैं कि उन्हें क्या करना है। समय की स्वार्थपरक, अहं-केन्द्रित, वैयक्तिकतामूलक असामाजिक धारा ने यद्यपि बहुत कुछ तोड़ दिया है फिर भी जितना जुड़ा हैं उतने मात्र से अब भी ग्राम-जीवन का सांस्कृतिक यन्त्र घिस-पिटकर 'चल' रहा है।

वह सायकिल पकड़े अब परिचित रास्ते पर वापसी में था। उसने अनुभव किया कि मौसम में बदलाव आ गया है। फगुनहट वाली खुनकभरी पछिमा

हुहुकारी देने लगी है, धूप तीखी लगने लगी है। तथा उसकी चमक बढ़ गयी है। पौधों का रंग बदलने लगा है। अरे, ये ताल के पौधे हैं तब न हरियाली अभी शेष है, नहीं तो उपरवारि के कुछ खेतों में तो कटिया की शुरुआत है। जगह-जगह किसान खलिहान छीलते और उसे गोबर से पोतते दिखायी पड़ रहे हैं। सुनहरा-सुनहरा गल्ला कट कर खलिहान में जल्दी आने लगेगा। उसने अनुभव किया, जब इस विस्तृत ताल की उमड़ती फसल पर सुनहरा पानी चढ़ जायगा तो निकट भविष्य में उभरने वाला वह दृश्य और अधिक आकर्षक होगा। सरसों के पीत-सागर सहित हरीतिमा के इस महासागर का सोना फसल पकने के बाद बटोरकर जब खेतों से खलिहानों में पहुंच जायगा तब एक बार फिर करइल का नंगा काला-सागर जेठ-बैसाख की मृग-मरीचिका में लहराने लगेगा और वही बाढ़ के दिनों सफेद ज़हर का असली गंगा-सागर बन आंखों में लहरा उठेगा। उसे दूध, घी और दधि का सागर कहते-कहते किसान सहम जायेगा। बदलते मौसम का यह सतरंगी करइल क्षेत्र कितना जादूभरा है।

वर्मा बहुत सूक्ष्मता के साथ खेतों के इस संसार के बीच अपनी चेतना पर उभरने वाली तरंगों का निरीक्षण करता आगे बढ़ रहा था। उसने देखा, सामने गजिन्दर कुछ कर रहा है। एक खेत में वह पैरों से पौधों को दोनों ओर दबा-दबा बराता हुआ आगे बढ़ रहा था और इस प्रकार जैसे खेत की मांग फार रहा था। खेत का डांड़ बराकर एक में एक मिले खेतों को पृथक्-पृथक् करते गजिन्दर की ओर देखते हुए कुतूहलवश एक मिनट के लिए वह रास्ते पर रुका। अपने काम में तल्लीन गजिन्दर न उलटकर अचानक इधर दृष्टि घुमाई। और कुछ सोचकर वह भारतेन्दु वर्मा के पास आ गया तथा अत्यन्त उद्दण्डता के साथ बोला—

'दो रुपल्ली की तुम्हारे जैसे मास्टर जाति से यह पहरेदारी हो चुकी। मन हो तो जाकर अपने 'बाप' को भेज दो। आज ही फरिया लें या कुछ दिन बाद कटिया में तो हम काट कर ले ही जायेंगे। हम लोग चुपके-चुपके काम नहीं करते।'

'आप जो कुछ कह रहे हैं मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है।' भौंचक्का-सा वर्मा बोला।

'समझ में कैसे आयेगा? पार्टीबन्दी की चर्बी जो दिमाग पर चढ़ी है और जानकर अनजान बनते हो तो फिर समझ की दुहाई देना कितनी फालतू बात है?'

'नहीं, एकदम सत्य वचन महाशय, यहां तक कि मैं आपको पहचान भी नहीं रहा हूं कि आप कौन हैं? और तब पता नहीं किस कारण मुझे इस प्रकार ज़लील कर रहे हैं?'

'जाओ, जाओ। यह छत्तीसा किसी और को पढ़ाना।'

वर्मा कुछ कहता इसके पूर्व गजिन्दर तेज़ी से मुड़कर खेत में वापस वहां चला गया जहां से काम छोड़कर आया था और अपने कार्य में फिर तेज़ी से जुट

गया। स्तब्ध और क्षुब्ध वर्मा कुछ क्षण ठक्-सा खड़ा रहा और फिर अत्यन्त खिन्नपन सायकिल घसीटते आगे बढ़ा। काफी आगे जाकर उसे याद पड़ा कि सायकिल पर चढ़कर चलना चाहिए। प्रकृति की स्फूर्तिदायी सुन्दरता वाला स्वर्ग पूर्णतः लुप्त हो चुका था और मन में कोई अज्ञात नरक बजबजाने लगा था। थोड़ी दूर बाद एक खेत में 'उतेर' गढ़ता हुआ भगेलुआ मिला। वर्मा ने सारा किस्सा बता दिया और तब जाकर असलियत खुली कि चोर की दाढ़ी में तिनका वाले न्याय से यह दीनदयाल-पुत्र उजड्ड गजिन्दर रामरूप के उस तनाजा वाले खेत से गुज़रते वर्मा पर सन्देह कर उबल पड़ा था।···ओह, डांड़ के लिए इस खेत पर क्या रामरूप और दीनदयाल में संघर्ष होकर ही रहेगा? रामरूप का यह शत्रु इस खेत पर उसके किसी मित्र की उपस्थिति मात्र को भी नहीं सह पाता है। वर्मा की दृष्टि गांव के पास वाले बाग के पास अटक गयी। खूब गाढ़े धुएं का विराट् गुब्बारा आसमान में एक जगह से उठ रहा था। उसने बुदबुदाकर कहा, 'लोग झोला फूंक रहे हैं।' और हारे-थके पैर पैडिल पर फिर चक्कर करने लगे।

२६

वर्मा कुंजी देकर वापस लौटा तो रामरूप दमरी कुम्हार को मिट्टी के बर्तनों का हिसाब दे रहा था। दमरी का कहना था कि बर्तन वह स्वयं बनाकर नहीं बल्कि बाजार से खरीद कर लाया है क्योंकि चकबन्दी के बाद उसे कहीं से बर्तन बनाने के लिए मिट्टी मिलना कठिन हो गया है और ग्राम पंचायत द्वारा निर्धारित कुम्हार के 'मटिखन्ना' में से सारे गांव ने इस प्रकार झोंक से मिट्टी निकाल ली कि पोखरी जैसा होकर नीचे से बालू फेंक दिया है। इसीलिए वह बाजार के व्यापारिक भाव पर बर्तन देगा। वह पुराना 'पवनी' वाला परम्परागत देने-लेने वाला बंधा-बंधाया रेट अब नहीं चल सकेगा। कुछ मौकों के नेग-जोग में साड़ी वगैरह जो उसने पाया है, वह उसकी व्यक्तिगत सेवा के पुरस्कार रूप में समझा जाय। दमरी के कथन में सत्यता थी परन्तु इस प्रकार परम्परा टूटने पर रामरूप को गहरा क्षोभ था। उसने संक्षेप में कुंजियों के ठिकाने पहुंच जाने का हाल जानकर दमरी को जल्दी-जल्दी निपटा दिया और फिर वर्मा से जानना चाहा कि उन लोगों से क्या कोई विशेष बात भी हुई?

चित्र-विचित्र हैरानी, इज्ज़ती दौड़धूप और रस्मी मनोरंजनों की गूंज से रामरूप का मन ऊब गया था तथा करमटभरी परम्पराओं के गर्द-गुबार से बाहर-भीतर ऐसा किरकिरा गया था कि आराम हराम हो गया था। ऐसी स्थिति में वर्मा द्वारा न चाहते हुए भी प्रस्तुत किये गए बीच ताल के संवादों को श्रवण कर उसे कैसा लगता? वह अवाक् हो गया। उसने सोचा गजिन्दर जब बिना नापे-जोखे

हमारी अनुपस्थिति में डांड़ बरा रहा है तो क्या ताज्जुब चुपके-चुपके कटवा न ले। उसका खेत पहले का बोया गया है। पक चला होगा। हमारा कुछ कच्चा है मगर ऐसे में कच्चा-पक्का कौन देखता है? झपट लो जो जैसा मिले।···उससे भिड़ना होगा। वह आदमी नहीं शैतान है। रामरूप ने उधर से ध्यान खींचकर अपने सिर पर पड़े इस वर्तमान बोझ की ओर ध्यान मोड़ना चाहा। विवाह वाला सन्दर्भ सामने आते ही जैसे फागुन का वह पूर्वाह्न जेठ जैसा जलने लगा। लगा विवाह-ऋतु का कहीं बाजा बज रहा है। कोई बरात कहीं पांतर में पड़ी है। एक ओर मृगतृष्णा में मृग डहक रहे हैं, दूसरी ओर बरात-तृष्णा में बराती। चिलचिलाती दोपहरी में विराम नहीं। हाके-प्यासे ढहते-ढिमलाते चले आ रहे हैं। देश भी परदेश हो गया है। जाने-पहचाने लोग भी बेगाने हो गए हैं। हाय भोजन, हाय दहेज! सैकड़ों-हज़ारों का आक्रमण हुआ। भूखे-प्यासे जन टूट पड़े। तनिक-तनिक में तुनक गए। कुछ लोग उनके शान के सिंहासन को गरदन टूट-टूट जाने पर भी ढो रहे हैं। उधर वे लोग जंगली भैंसे की तरह अकड़ रहे हैं। किसी एक खूनी सींग पर चढ़कर फिका यह एक मास्टर रामरूप।

उसे कहीं खो गया जानकर वर्मा नहाने-धोने चला गया। उधर वह सचमुच अपना शरीर टटोलने लगा, कहां कितनी चोट लगी? धत्तेरे की, चोट बाहर कहां है? 'आवाज़ों' की चोट कहीं शरीर पर लगती है? सचमुच वे मांगलिक महोत्सव की कुछ आवाज़ें जिनकी गूंज रामरूप के मस्तिष्क में जम-सी गयी हैं कितनी सत्यानाशी हैं। कहीं से उनके नये रूप के औचित्य का उसे समर्थन नहीं मिल रहा है। ढोंग, पाखण्ड, लोभ, अत्याचार, धूर्तता, लूट, झुठाई, अन्धता और अमानवता के एक-एक सूत्र मिलकर बुराई की ऐसी मजबूत-मोटी रस्सी हो गयी कि इसे तोड़ना शंकर के धनुष को तोड़ने से भी कठिन है। विवाह में राम-सीता के अब गीत भर गाए जाते हैं। रस और आनन्द का अस्तित्व भी क्या है? सब जैसे आरोपित हैं, घिसे-पिटे रस्म और बात-बर्ताव।

तिलक-विवाह सम्बन्धी तैयारियों के विषय में आरम्भ में ही रामरूप अपने पट्टी-मालिकान के सबसे समझदार और अनुभवी बलेसर काका से सलाह किया था और जो बातें हुई थीं वे आज तक ज्यों की त्यों स्मरण हैं। उसने कहा था, 'अपनी चादर देखकर ही पैर फैलाऊं और अधिक खर्च करने के लिए ऋण न लूं तो क्या हर्ज?' और इस पर उसके काका ने कितनी नाराज़गी प्रकट की थी। बोले थे, 'क्या लड़कपन की बातें करते हो? मर्द की ज़िन्दगी में ऐसे ही मौके आते हैं कि करेजा पोढ़ कर भिड़ा जाता है। क्या फिर कमली का विवाह होगा? बस एक बार ही न। नीति कहती है, कि शादी कि बादी। तीसरी कौन जगह है खर्च करने की? अपने पेट से तो जानवर भी खाते हैं। खाना-पीना कौन देखता है? सामने मौका आया खर्च करने का तो भागना ठीक नहीं, सभी खर्च करते हैं। इसमें

शिकायत नहीं। भला ऐसा कौन होगा जो शादी में कर्ज नहीं काढता है। जगह-ज़मीन, बाग-बगीचे किस दिन-रात के लिए हैं? ये कब काम आएंगे? दस जगह के तमाम हित-मित्र जमा होंगे। लोग देखेंगे क्या खर्च कर रहे हो? बचवा, गरदन नीचे नहीं होनी चाहिए। यही सब न दुनिया में है? कोई क्या लेकर आया है और क्या लेकर जायगा?···तो मेरी तो यही सलाह है और हमसे जो भी काम हो कहो, हाजिर हूं। इज्ज़त के मामले में हम पीछे नहीं हट सकते···'

जिस दिन बलेसर काका से परामर्श हो रहा था रामरूप के मामा हृदयनारायण आए थे और काका के चुप होते ही बीच में कूद पड़े। बोले, 'मुझे देखो, दस वर्ष के भीतर एक लड़का और तीन लड़कियों की शादी की है। दो श्राद्ध के भोज और दो गौना किया है। चौथी लड़की की शादी इस वर्ष होने जा रही है।···दुनिया को दिखाने के लिए हंसता रहता हूं। कोशिश करता हूं कि चेहरा खिला रहे। लेकिन भीतर? उस भीतर का हाल तो भगवान् ही जानता है। लगता है दम निकल जायगा।···लेकिन क्या करें? हाथी के दांत निकल गए तो उन्हें कहां तक दबाया-छिपाया जा सकता है? भगवान सब निबाहेगा न?'

'तो क्यों हम सड़ी-गली परम्पराओं की फांसी का फंदा गले में डालकर मरें?' रामरूप के मुंह से निकल गया।

'फांसी गले में लगाना नहीं है, वह लगी है और उससे उबरने का कोई रास्ता नहीं है। समाज के बाहर कोई कैसे जाएगा?···अरे देखो, यह सब यज्ञ है। सर्व-स्वार्पण यज्ञ है। जो कुछ पास में है लुटा कर साफ। गाना-बजाना, हो-हल्ला, खाना-पीना, दान-दक्षिणा, लेन-देन, हंसी-खुशी और खेल खतम। इसमें तकलीफ मानने की क्या ज़रूरत है? यही सब तो होता है और सभी करते हैं।'

'नहीं, यह कोई न्याय नहीं है' रामरूप ने कहा, 'कि जो सभी करते हैं वही हम करें। इस तरह समाज कैसे बदल सकेगा? विवाह-सम्बन्धी फालतू परम्पराएं कैसे बदलेंगी।'

'मुश्किल तो यह है कि बदलने की बात लड़की वाला ही सोचता है जब कि वह परवश है। कोई लड़का वाला यह सब नहीं सोचता। वह तो मजा लेता है।' बलेसर काका बोले।

'एक परम्परा लड़के वालों ने ज़रूर तोड़नी शुरू की है और वह यह कि तिलक नहीं चढ़ता है। उस दिन के समारोह का फालतू खर्च बच जाता है। लेकिन इसमें भी फायदा लड़के वालों का ही है। रकम तो वे चुपके-चुपके ऐंठ लेते हैं।···तब तुम और हम क्या सोचें? शायद यह तभी होगा जब खूब पढ़-लिखकर लड़के-लकड़ियों के जोड़े स्वयं अपना विवाह करने लगेंगे। मगर वह सब ग्रामीण समाज के लिए बहुत दूर का सपना है।' मामाजी ने कहा।

'तब तक हम लोग खुशी-खुशी मरते चलें।' रामरूप ने भीतर की छटपटाहट

को दबा कर कहा था।

'हां।' मामाजी ने बहुत गम्भीर और निर्णायक स्वर में जबाब दिया था, बहुत सहज भाव से।

रामरूप ने देखा कि सुगिया नाइन आ रही है। ज़रूर अरविन्द की मां का कोई सन्देश होगा, उसने सोचा और तब तक तड़-से एक समस्या खड़ी हो गयी। सुगिया कह रही थी—

'भीतर से कहने के लिए हुकुम हुआ है कि कक्कन (कंगन) छूटने की साइति कल ही संझा समय तक है। क्या कुछ भोज-भात की तैयारी होगी?'

'नहीं' रामरूप के मुंह से निकलते-निकलते रह गया और उसने बहुत धीरज के साथ कहा—

'कह दो, मां से पूछकर जैसा होता हो करें। सगरी कांकर खाकर भेंटी काहे तीत करें?'···और रामरूप फिर कहीं डूब गया। कहां? उसके मस्तिष्क में एक शब्द धमाचौकड़ी मचाने लगा, भोज-भात। फिर उसी क्रम में नाना प्रकार के शब्द और चित्र उसके भीतर कौंधने लगे।···कितने अजीब हैं ए लोग! एक का नाम है दूल्हा, एक का नाम है समधी। एक है दूल्हे का भाई, एक है समधी का भाई और ऐसे अनेक हैं। सुरसा की भांति मुंह फैलाए हैं। लड़की का बाप गरदन काटकर रख दे। वे उसका खून पीने के लिए अधीर-जैसे हैं। कैसा है वह सुरसा का पेट? घर-द्वार, गहना-गुरिया, खेत-बारी और माल-मवेशी सब निगल जायं तब भी भरने वाला नहीं।···ये शादी करने के लिए आए हैं या रोजगार? मोटर सायकिल, रेडियो ग्राम, सोफा सेट, बैल, भैंस, बर्तन, कपड़ा और नकद रुपया ही नहीं, इन्हें हाथी-घोड़े और कार-जहाज के साथ कुबेर का कोष चाहिए। ये रूठते हैं, तमकते-तुनुकते हैं, धमकी देते हैं, बातबाजी करते हैं, फुसलाते हैं, ताना मारते हैं, खार पर चढ़ाते हैं और पैर पटकते हैं। चालबाजी से मोल और दाम बढ़ाते हैं। घात से द्रव्य खींचते हैं। तिकड़म से दहेज काढ़ते हैं। एक ही लड़के की शादी में धनी हो जाने के सपनों की सिद्धि के लिए रंग-बिरंगे कम्पे लगाने वाले ये अद्भुत कलाकार हैं। जमकर दलाली होती है···और क्या नहीं होता है।

बेमतलब की आदर्शहीन कांव-किच!

द्वार पूजा पर इक्यावन ही नहीं, एक सौ एक का भी रेट पुराना पड़ गया। इस बदलते महंगाई वाले ज़माने में एक हज़ार से कम क्या चाहिए?···धरते झांपी बवण्डर। द्वारपूजा से ही खटपट का श्रीगणेश शुरू।···१५० घड़े, २०० चारपाइयां, चार क़िलो गांजा, तीन हज़ार बीड़ियां, चार बकरे, १०० पाकिट पनामा, आधा बोरी चीनी और···इन सब चीज़ों के साथ 'आज्ञा' हो तब तो मंजूर, नहीं तो···उधर बराती शास्त्रार्थ का हंगामा—

प्रश्न—एक क्या है और उसका क्या महत्त्व है?

उत्तर—एक है तुम्हारा बाप और उसका महत्त्व यह है कि उसने तुम्हें पैदा किया।

प्रश्न घराती का, उत्तर बराती का और अगली बहस का नमूना—

'तुम पढ़े-लिखे आदमी हो कि बनिहार हो या कि जानवर हो जो कुत्ते की तरह भूंक रहे हो ?'

'तुमको मैं बीस साल तक पढ़ा सकता हूं और तुम अब कौवे की तरह कांव-कांव करना बन्द करो।'

बहस आस्तीनों के चढ़ जाने तक चलती रहती है और घराती भुनभुनाते हैं···यह बरात है कि कोरे कमीने खब्बुओं का झुंड है ? न एक विद्वान् है और न कोई शरीफ। देखना भाई, खोज-खोजकर झरनाठ लोग हैं जिनमें से एक-एक आदमी आठ आठ के बराबर अनाज नुकसान करेगा। एक कड़ाही और चढ़वा दो।

दस, ग्यारह, बारह, एक, दो···समय की कोई सीमा नहीं। वह या तो थम जाएगा या उसका कोई हिसाब नहीं।···अरे भाई, क्या कौआ बोलने तक मन्त्रों की बौछार होती रहेगी ?···मध्य रात में 'बिजे' यानी भोजन के बुलावे के बाद की हलचल, हड़कम्प। लोग चौंक रहे हैं। द्वारपूजा पर पचास-साठ लोग थे। 'आज्ञा' के समय सौ-डेढ़ सौ और 'बिजे' पर यह तीन-चार सौ की कतार कैसी ? ···पहचानो, पहचानो, पहचानकर बैठाओ, मगर क्या पहचान है ?···पत्तल दो, पूड़ी लाओ, पुरवा इधर, चले पानी। लाना इधर सब्जी।···अजीब दृश्य ताबड़-तोड़ हाथ चल रहा है, मुंह चल रहा है। आधा पेट में आधा पत्तल में, कतार के कतार, एक में एक भेड़ियाये हुए बराती, संभालने वाले लोग अब दौड़-दौड़कर उन्हें संभाल रहे हैं।

'पत्तल पर गर्दा उड़ रहा है।' एक ने ज़ोर से कहा। क्या मतलब ? मतलब कि दही परसने के बाद उस पर चीनी चल रही है—मुट्ठी खोलकर और जरा हाथ टांठ करके दो, सकोरे में पूरी तरहथी डुबोकर चीनी उड़ेल दो। वह बरात ही क्या जिसमें कुछ खवक्कड़ वीर न हों।···सारा जोर दही-चीनी पर। एक हाथ, दो हाथ, चार हाथ, पत्तल पर चीनी का गर्दा।···देखते क्या हो ? दही की पूरी कहतरी उलट दो, सकोरे की पूरी चीनी झोंक दो···वाह बहादुरो, पत्तल साफ कर दो। बाहर डोम चिल्ला रहा है—'पत्तल पर जरा हाथ लगा दें मालिक।' और उसके लड़के फेंके पत्तलों पर कुत्तों के साथ भिड़े हैं।···गलियां कीचड़ से भर उठीं और मन ?

पत्तल पर का गर्दा रामरूप के मन पर झूठे आनन्द का गुबार बन जमा हुआ है। बार-बार सोचता है, किस अपराध का वह ऐसा दण्ड भोग रहा है ? क्यों समाज के मांगलिक महोत्सव पर घर उजाड़ने के धन्धे हो गए हैं ? क्यों बुद्धिजीवी जन आहत, कुंठित और हतबुद्धि हो इस अनपेक्षित धन्धे में नधा है ? लोग मारते

हैं, लोग मरते हैं और विवाह संस्था बनाम गांव के कसाईबाड़े का कोई आशाप्रद भविष्य क्यों नहीं दिखायी पड़ता है ?

इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं है। अपने यहां उसने बहुत निकट से देखा। दूसरों के यहां भी देखा है। जब से होश हुआ, सुनता आया है। ग़लत की गलाज़त मन पर सही बन जमी है। पत्तल पर गर्दा उड़ रहा है। ध्वनि विस्तारक यन्त्र इस गर्दे के गीतों को हवा में उछाल रहा है। लाजवश, भयवश और विवशतावश उड़ने वाला यह उड़ता गर्दा समाज को अपने साथ उड़ाकर कहां ले पटकेगा ? धन पर उड़ता गर्दा और मन पर उड़ता गर्दा गांव-जीवन का कितना भीषण अन्धेर है ?

'सभापतिजी के यहां से जो दरी आयी थी और पहली रात को जो मंड़वा में बिछायी गयी थी, नहीं मिल रही है।' भगेलुआ ने आकर कहा।

'दूसरे दिन दोपहर में एक दरी बरात में लोग मांगकर ले गये थे। वही तो नहीं थी ?···कहीं वह दरी भी अपने सामानों के साथ लादकर न लिये चले गये हों ? अच्छा पता लगाता हूं।' रामरूप ने कहा।

भगेलुआ जाने लगा। और जाते-जाते रुककर बोला, 'चारपाइयां जहां-जहां से मांगकर आयी थीं, भेजी जा रही हैं। बहुत-सी टूट गयी हैं। बहुतों के पाये पर नीचे चिपकाया गया नाम वाला कागज नोच दिया गया है। अब पता ही नहीं चलता है कि वे किसकी हैं ? कहां भेजवाई जायं ? ज़रा चलकर देख लीजिए।'

रामरूप जैसे होश में आ गया। दूसरे की चारपाई दूसरे के यहां चली गयी तो कितना झमेला खड़ा होगा ? बेशक जिसका जो सामान मांगकर आया उसके यहां वह सुरक्षित पहुंच जाना चाहिए। चारपाइयां, चौकियां, बिछौने, दरियां, कंडाल, हंडे, कड़ाहे, लालटेनें, टाट, जग आदि···अरे हां, ससुरजी का ट्रेक्टर चला गया ? पहल पर से उठकर भीतर घर में जा पत्नी से उसने पूछना चाहा किन्तु उठते-उठते ऐसा लगा कि वह चक्कर खाकर गिर जायगा। वहां आते-जाते और कार्यव्यस्त लोगों को कुछ पता नहीं चला और वह फिर जहां का तहां धम्म से बैठ गया। क्षण-भर की वह अन्धकारभरी मस्तिष्क की सनसनी कुछ अतिरिक्त धड़कनों को छोड़ शान्त हो गयी तो रामरूप ने अनुभव किया वह बहुत कमजोर हो गया है। विवाह के दिन तो निरन्न रहना ही पड़ा, उसके इधर-उधर वाले दिनों में भी उसे खाने-पीने की कहां सुधि रही ?

२७

कक्कन वाला भाइयों का भोज दस बजे रात के बाद तक चलता रहा। घरेलू भोज था अतः रामरूप बहुत परेशान नहीं था। अन्त में पवनी प्रजा-जन की पांत बैठने

जा रही थी तो वह भोजन कर सोने चला गया। सप्ताह भर की थकावट के बीच आज वह कुछ निर्भार अनुभव कर रहा था। जहां पहल थी वहीं सफाई कर वर्मा और उसकी चारपाइयां लगा दी गयीं। पहल को आज सुबह ही उठाकर 'सम्मत बाबा' में डाल दिया गया। बरात की भीड़ में उसकी भी भूसी छूट गयी थी। होली के बाद वैसे भी लोग पहल नहीं रहने देते हैं और इस पुवाल के कूड़े के लिए सबसे उपयुक्त स्थान वही 'सम्मत बाबा' ही हो सकता है। होली के बाद सम्वत् बदल जाता है अत: यह गांव की भाषा में होली जलने वाला सार्वजनिक स्थान 'सम्मत बाबा' की संज्ञा पा गया।

'हिन्दी में कक्कन छूटना एक मुहावरा भी तो है?' रामरूप की ओर करवट बदलकर घूमते हुए वर्मा ने कहा।

'हां, वह बहुत सार्थक है। विवाह-बरात का कचूमर निकलते-निकलते कक्कन के दिन रही-सही कचूमर भी निकल जाती है।' रामरूप ने उत्तर दिया।

'लेकिन मैं देखता हूं ग्रामीण-क्षेत्र में विवाह को लेकर जितना और जिस प्रकार व्यय होता है तथा जितना पसीना बहाया जाता है वह प्रबुद्ध नागरिक और उच्च वर्गीय समाज की तुलना में बहुत अधिक है। यहां तो सब जैसे अंखमुद्दा युद्ध होता है।'

'सही है। इसीलिए तो गांव नरक बना है।'

'नहीं, इस नरक का स्रोत एक विराट् स्वर्ग है जिसे कल मैंने देखा है और मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि कुल मिलाकर गांव के किसान का जीवन अपेक्षाकृत सुखी और शान्त है।'

'कुछ दिन और गांव में रह लो तब जानोगे कि किसान कितना सुखी है। आज किसान उसे कहा जाता है जो कड़ी धरती को तोड़कर अन्न उत्पन्न करता है और भोजन न मिलने के कारण जो स्वयं टूट जाता है। जीवन की सुख-शान्ति असीम अभाव और मृत परम्पराओं की आग में भस्म हो जाती है। तुम गांव के बाहर वाले खेतों की दुनिया की बात करते हो। सही है, सामने सुन्दरता की, वैभव की खान लहरा रही है पर उसका रसास्वाद कहां मिलता है किसान को? किस तिकड़म से पता नहीं कौन सब ऊपर-ऊपर ही खींच लेता है।'

'तो क्या साहित्य में किसान के जीवन-सौन्दर्य का जो चित्रण होता है वह सब फालतू है?'

'लगभग ऐसा ही है। वह सारी कला भरे-पेट वालों की है। इस कोरे अभिजात मनोरंजन की ओर तो आज टूटे किसान में आंख फेरने की भी रुचि शेष नहीं रही।'

'इसका अर्थ यह' वर्मा चारपाई पर बैठकर कहने लगा, 'कि तुम सांसारिक धन-वैभव की बात करते हो। यहां भूल जाते हो कि किसान की महत्ता इसमें नहीं

है कि वह कितना धनी है। वास्तव में उसके जीवन की शान्ति, सुन्दरता और सरलता मूल्यवान है। हरे-भरे लहराते चौड़े खेत, सघन छाया वाली विशाल खुली अमराइयां, नदी-नाले और मैदान, ताल-तलैया, मुक्त आकाश, शुद्ध वायु और खुली रोशनी आदि का जो प्राकृतिक वैभव गांव के पास है वह किसी जड़ वैभव से अधिक मूल्यवान है।'

अब रामरूप भी बैठ गया।

'सब है, परंतु प्रश्न यह है कि किसान को ये प्राकृतिक दृश्य तनिक भी प्रभावित करते हैं? उन्हें कुछ सुन्दर-सुखकर मानकर उधर आंखें भी उठती हैं? गंवई जीवन की बेहाली और बेचारगी में दिन-रात उलझा किसान वास्तव में भूखा है और प्राकृतिक सुन्दरता के रस को ग्रहण करने के लिए अपने पेट में भी रस होना चाहिए।'

'मुझे लगता है तुम मुझे बहका रहे हो। प्रकृति आज भी किसान के जीवन को निखार रही है। माघ-फागुन की गदराई फसल को मैंने अपनी आंखों से देखा है…।'

'हां-हां, तुमने अपनी शहरी आंखों से देखा होगा और मन पर वह दृश्य उतर कर लगा होगा कि सरेहि में श्रीवर्षा हो रही है। लक्ष्मी अपनी सहेलियों के साथ अलक्षित पांव बढ़ाती मन्द गति से गांव की ओर चली आ रही हैं और पायलों की झंकार सुनाई पड़ रही है।…क्यों है न ऐसा?'

'मान लो, ऐसा है और ऐसा सोचने का मेरे पास सार्थक आधार है। मगर इस सोच में गलती कहां है?'

'बताता हूं। अनादि काल से किसानों के सन्दर्भ में इसी प्रकार का रोमानी चिन्तन होता आया है और जाने-अनजाने आज भी इस अन्याय का सिलसिला चल रहा है गांव का सारा जीवन ऐसे अन्धेर खाते में पड़ा है कि किसी ने उसे देखा नहीं और जिसने देखा वह तुम्हारी तरह ही यथार्थ न देखकर कविता करने लगा। तुम्हें खेतों की राह से लक्ष्मी के आगमन की, उनके पायलों की झंकार की आहट मिलती है परन्तु खेतों की दुनिया से गांव में लौट कर क्या यह भी सोचा कि यह छुम-छनन वाली श्री क्या सचमुच किसान के घर आती है? अफसोस, वह नहीं आती है। यदि आती तो गांव और गांववासी इतने श्रीहीन क्यों होते?…प्रकृति हंस रही है, सच है उसके एक-एक मदभरे इशारे मत्त बना देने वाले हैं मगर मन रोता है, 'का पर करौं सिंगार?' नाना प्रकार के अन्तर्विरोधों में हारा-थका और टूटा-जर्जर खेतों का मनहूस मालिक खुशियां किस पर मनावे? मुट्ठी भर भावुक कवि प्रकृति के गीत गा लें। सौन्दर्य-कला के झूले पर झूल लें परन्तु इससे कोटि-कोटि करुन्न लोगों पर कोई असर पड़ने वाला नहीं है। रूई-सूत की कठिन सहेज में उनका रोम-रोम रो रहा है। जीवन बोझ हो गया है, बहुत

भारी।'

वर्मा ने उठकर एक गिलास पानी लिया और फिर खोंख-खंखारकर आसन पर आ गया। बोला—

'तुम्हारी कविता की चुनौती को मैं स्वीकार करता हूं और अब विवश हूं कि तुम्हें कविता में ही उत्तर दूं।...जहां-जहां तुम्हें अभाव दिखायी पड़ता है वहां-वहां मुझे भाव नज़र आता है। तुम्हें गांव जैसा लगता है वास्तव में वैसा नहीं है। इस गांव में एक और गांव है जिसे तुम किसी कारणवश नहीं देख पाते हो। मैं बताता हूं।...बरगद, पीपल, इमली, नीम और आम आदि के घने-घने पेड़ गांव वालों के जीवन में सरसता का संचार करने के लिए महान् रसिक की भांति अपना मोहक बाना लिये खड़े हैं। श्रम से हारे-थके किसान इनके नीचे बैठ सुस्ताते हैं। हल की मूठ छोड़ बबूल की झंझरी छतरी में बैठा सुर्ती ठोकता किसान कैसा लगता है। शायद तब वह स्वयं भी प्रकृति का एक अंग हो जाता है। किसी नदी के दूब चांचर तट पर भैंस अथवा गाय के साथ हाथ में लाठी लिये बिरहा की तानें छेड़ते हुए चरवाहे क्या कम मस्त हैं? सूर्योदय के पूर्व घंटी की टुनटुन के बीच खेतों की ओर हल बैल लिये जाते किसान का अथवा ज्वार-बाजरे के खेत में मचान पर बैठी और मैनी-कौवा आदि चिड़ियों से आत्मीयता जोड़ती हुई किसान-पुत्री का चित्र कैसा होता है? क्या इसे 'भद्दगी' की संज्ञा दे सकते हो? क्या खलिहान में पड़ी अन्न-राशि को देख किसान के कंठ से फाग के राग नहीं फूट पड़ते हैं? तब क्या दुख भी सुख नहीं हो जाता है?'

'भला तुमने गांव के दुख को माना तो। अब अपने कथन पर ही जो स्वाभाविक रूप से निकल आया है, सोचो। सुख होना और दुख का सुख हो जाना क्या एक ही स्थिति है? निस्सन्देह गांव का जीवन ऐसा है कि लोग बस यथार्थ और अनिवार्य दुख में ही किसी काल्पनिक सुख की कल्पना कर जीते भर हैं।'

'कल्पना क्यों? क्या फूली हुई सरसों कल्पना है? क्या पिअराई हुई...।'

'बस, बस।...एक बात बताओ। बात बहस की नहीं। सच-सच कहो।... यह फूली सरसों, बिरहा की तान, बरगद की छांव, बैलों की घंटी की टुनटुन और इस तरह के सारे रोमैंटिक चित्र तुम्हारी अपनी अनुभूतियां हैं या मात्र किताबों से निगल कर उगल रहे हो?'

'तुम्हें यह व्यर्थ का भ्रम है कि नगर-निवासी ग्राम-प्रकृति के बारे में सिर्फ किताबों के माध्यम से ही जानता है। फिर मैं तो अब महुवारी का पुराना बाशिन्दा हो गया। तुम्हारे सारे ताल-खाल अब मेरे परिचित्त हैं और...।'

'...और ज़हर उगलता गजिन्दर भी। क्यों?'

रामरूप के इस व्यंग्य से वर्मा को जैसे अचानक गहरा धक्का लगा। वह चुप हो गया। सारी बहस जैसे किसी-कूड़े के ढेर पर फिक गयी। उसके सामने अब

तक गांव की सुन्दरता थी और रामरूप ने अचानक भद्दगी को ठेलकर आगे कर दिया। इस नये यथार्थ का साक्षात्कार कितना कड़वा है और उसकी चोट खाकर अब वर्मा आगे क्या कहे ? बोला रामरूप—

'मित्र, कोरे कमल की दुनिया कब तक लुभाये रहेगी ? आटा-दाल का संसार टांग खींचेगा ही। ऊपर से ये गांव के रगड़े-झगड़े। सुख की आशाओं पर तुषार-पात नहीं, दिन-रात वज्रपात होता रहता है। आनन्द की ईख को कीड़े खा गये। रस निकलता ही नहीं। कहां से गुड़ पकेगा और कहां से सुगन्धि निकलेगी? प्रकृति ने गांव को अशेष वैभव प्रदान किया और व्यवस्था ने अपने निष्ठुर हाथों से उसे बुरी तरह लूट लिया। उधर तुम्हारे जैसे शहरी बुद्धिजीवी हैं जो मध्यकालीन सौन्दर्यबोध के चश्मे से गांव को देख रहे हैं।'

इसी समय दरवाजे के पास खांसने की आवाज़ आयी। आवाज़ को रामरूप पहचानता है। वह उठकर भीतर गया। वर्मा ने लालटेन की रोशनी में घड़ी की ओर निगाह दौड़ाई। ग्यारह से ऊपर हो रहे थे। भीतर पत्नी से रामरूप की जो बात हो रही थी वह पूरी तरह सुनायी नहीं पड़ रही थी। जो कुछ स्फुट शब्द पकड़ में आते थे उससे वर्मा ने जाना, यह भोज-भात का कोई मामला है। बड़ी देर से वह देख रहा है कि परात में भर-भरकर भोज्य पदार्थ इस घर-उस घर तक पहुंचाये जा रहे हैं। यह घर-घर पहुंचाने वाली भयवट्टी तो बड़ी बीहड़ है। कहीं से सामान वापस आ गया है…कि हमने थाली को ऊपर तक भात से भरकर भेजा और यह इतनी खाली क्यों आयी ? अब चलो फिर उनकी मनावन करने। रामरूप जरा जोर से कहते हुए वापस आ जाता है, 'भई, यह तुम्हारे औरतों वाले भोज का मामला है, तुम जानो और जसे चाहो इसे निपटाओ।'

रामरूप लौटा तो विनोदपूर्ण लहजे में वर्मा ने कहा—

'मैं नगर का बुद्धिजीवी होकर ग्राम-प्रकृति के सन्दर्भ में मध्यकालीन बोध को जी रहा हूं तो तुम गांव के बुद्धिजीवी होकर भोज-भात वाले इस जंगली पचड़े में कैसे पड़े हो ?'

'कहां पड़ा हूं ? देखा, झटककर किनारे कर दिया।' रामरूप ने उसी तरह उत्तर दिया।

'यानी भाग खड़े हुए। पलायन ही शायद आज के बुद्धिजीवियों की नियति है।'

'तुम बुद्धिजीवी किसे कहते हो ? भारत में तथाकथित बुद्धिजीवी एक बहुत बड़ा विभ्रम-अभिशाप जी रहे हैं। मध्यवर्ग का एक विशाल समुदाय बुद्धिजीवी होने के बोध-विपर्यय में पड़ा है। उसने हीन मर्यादित स्थिति से परम्परागत रूप से जुड़े होने वाले श्रमजीवियों से मन-ही-मन अपने को पृथक् कर, अपने अभिजात तेवर की रक्षा और अहं की तुष्टि कर ली है। स्पष्ट नाम लूं तो साहित्यकार, पत्र-

कार ही नहीं हम अध्यापकों आदि का चित्र भी साफ है। हम लोग उतनी मात्रा में श्रमजीवी हैं जितनी मात्रा में श्रमजीवी भी बुद्धिजीवी है। अन्तरिक्ष युग में श्रम को भी बुद्धि की ज़बरदस्त अपेक्षा है।'

बहस फिर एक बार गम्भीर हो गयी। रामरूप कह रहा था—

'अब तुम्हीं बताओ, यहां गांव में दीनदयाल जो मेरे एक सौ बीस लट्‌टा लम्बे और डेढ़ लठ्ठा चौड़े खेत में लाठी के बल पर घुसपैठ कर ऊपर से दहाड़ रहा है, वह जो सीरी भाई का तीन बीघा खुल्लमखुल्ला हड़प रहा है, मेरे ससुरजी जो महुवारी-स्टेशन रोड का विरोध कर रहे हैं, उनके और चटाईटोला के नवीन में जो ठन गयी है, खास रिश्तेदार होकर रघुनाथ सिंह जो वैसे प्रपंच के साथ मुझे धकिया गये, सुखुआ-सिटहला की अधकचरी वामपंथी जोड़ी जो देहात में आग-अंगार का विकल्प बो रही है और ऐसे-ऐसे हज़ारों अन्तर्विरोधों में जो अंचल बिलबिला रहा है उसमें कोई बुद्धिजीवी कितना क्या करे? फिर, वह कैसे हार मान बैठ जाय? वास्तव में आज की उलझी स्थितियों में यहां गांव में सब कुछ इतने अन्धेरखाते में पड़ा है कि बुद्धि चकरा जाती है।'

'गांव ही क्यों? पूरे देश की, समाज की और राष्ट्र की यही स्थिति है। बुद्धि-जीवी हतबुद्धि और किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया है। अब तो सचमुच इस सवाल का जवाब बहुत कठिन हो गया है कि सम्प्रति राष्ट्र-निर्माण में इनका कोई योगदान भी है?' वर्मा बोला।

'अच्छा, इस पर ज़रा गहराई से सोचें। विचार यदि भारत को लक्ष्य कर होता है तो एक तथ्य स्पष्ट है कि स्वाधीनता प्राप्ति-काल एक विभाजक रेखा हो जाता है। दासता युग में बुद्धिजीवियों ने प्रत्येक कोने से वैचारिक और रचनात्मक स्तर पर राष्ट्र-निर्माण मे योगदान दिया था तथा कुल मिलाकर उनका वह सहयोग ब्रिटिश सरकार के साथ असहयोग के रूप में परिणत होकर स्वतंत्रता के उद्देश्यों तक पहुंचता है.परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् जब कि राष्ट्र-निर्माण का वास्तविक लक्ष्य सामने आया, उसके लिए प्रशस्त सुविधाएं-संभावनाएं उपलब्ध हुईं, बुद्धिजीवी फिसल गये। उन्होंने न केवल अर्जित मर्यादा खो दी अपितु नये दायित्यों से भी विमुख रहे। वे अनाम सरहदों में अघोषित अन्तर्युद्धों में संघर्षरत हो गये अथवा राष्ट्रीय-उद्देश्यों को राजनीतिक उद्देश्यों में स्थानान्तरित कर उपक्रम को ही उपलब्धियां मानते रहे।'

'यह कक्कन छूट जाने की चोट है क्या? आज पहली बार तुम्हारे मुंह से ऐसी गम्भीर बातें सुन रहा हूं। तुम्हारे जैसा बुद्धिजीवी गांव में रह जिस प्रकार जड़मूल्यों की चपेट में आहत हो खप रहा है, उसकी पीड़ा समझी जा सकती है।'

'हमारे जैसा ही क्यों? अब तो तुम्हारी भी यही नियति है। तुम्हें भी गांव को जी कर खपने की मजबूरी होगी।...स्वस्थ लोकतान्त्रिक परम्पराओं के लिए

चाहो तो संघर्ष कर सकते हो, रास्ता खुला है और नहीं तो फिर इस विघटन-शील देश की चिन्ता छोड़ कोटि-कोटि सुविधाजीवियों की कतार में लग चुपचाप जीते चलो। क्या बताऊं शर्म से गरदन झुक जाती है जब अपने को बुद्धिजीवी कहने वाले तबके द्वारा परोपजीविता और भ्रष्टाचार का स्वागत होते देखता हूं। इनके बल पर राष्ट्र का ऐसा निर्माण हुआ कि निर्माण शब्द का अर्थ उलट गया। इस देश में नये-नये वर्गों के उदय के साथ बुद्धिजीवियों का भी नया वर्ग पैदा हो गया। वे प्रत्येक वर्ग से उठकर वर्गान्तरित हुए हैं। इन नव-बुद्धिवादियों का नक्शा साफ है। इन्होंने राष्ट्र के नवोत्थान का समूचा दायित्व अपने सिर पर ले लिया है और इस समारोह के साथ प्रदर्शित किया है कि पुराने बुद्धिजीवी उदासीन हो गये हैं।'

'पुराने यानी असली बुद्धिजीवी?' वर्मा ने टोका।

'हां, लगभग ऐसा ही समझो। आज वे कुंठित और हताश हैं। उन्होंने घोषणाओं और परिणतियों में घोर अन्तर्विरोध देखा है तथा देखा है राष्ट्र-निर्माण का खोखलापन। अपनी अपूछ स्थिति से मर्माहत होते-होते, टूटते-टूटते वे यन्त्रगतिक श्रमजीवी की नियति जीने लगे। उनकी कोई आवाज़ नहीं रह गयी। वास्तव में ये न बुद्धिजीवी रह गये न श्रमजीवी। रोजी-रोटी के चक्रव्यूह में फंसे, परिस्थिति-प्रेस्टिज ढोते पुराने बुद्धिजीवी वास्तव में कितने दयनीय हैं।'

'दयनीय का अर्थ क्या निष्क्रिय होना होगा? तब क्या राष्ट्र-निर्माण या समाज-निर्माण की आशा को अन्तिम रूप से विसर्जित कर दिया जाय?'

'वे पुराने बुद्धिजीवी आज जब अपने जीवन के निर्माण में अक्षम हैं तब उनसे राष्ट्र-निर्माण की क्या आशा? नवोदित लोकतांत्रिक बुद्धिजीवियों ने उन्हें तोड़ दिया। बुद्धि में जीना अर्थात् राजनीति में जीना। इस नये क्षेत्र के खुलते ही कवि-कथाकार से लेकर शिक्षाविद् आदि कितने पीछे छूट गये। सबसे आगे वह जो राजनीतिज्ञ यानी नेता है। उसके पीछे धक्कम-धुक्की करता, बदहवास, समूचा राष्ट्र-निर्माण तो किसी लाभकारी मृग-मरीचिका में पड़ा है।'

'ज़रूर स्वराज्य के बाद कहीं कुछ बेहद गलत हो गया और नकली बुद्धि-जीवियों के हल्ले में असली बुद्धिजीवी खो गये।'

'यही देखो, नये भारत की गौरवशाली परम्परा में जुड़े नामों में गोखले, तिलक, पटेल, मालवीय, सुभाष और गांधी से लेकर अरविन्द, विवेकानन्द, टैगोर, दयानन्द, रामानुजम, गणेश शंकर विद्यार्थी और निराला आदि के आगे इस कोटि की स्वातन्त्र्योत्तर संज्ञायें कितनी फीकी और हलकी पड़ गयीं? आन्तरिक स्तर पर राष्ट्र-निर्माण कहीं ठहरा हुआ है और उसे असली बुद्धि-जीवियों की अपेक्षा है।'

'और ग्राम-निर्माण?'

'वह मरणासन्न है। जब तक दीनदयाल और हनुमानप्रसाद जैसे पुराने घाघ लोग हैं, कोई आशा नहीं।'

'सोने की शान्त बेला में उस साक्षात् दुर्भाग्य और ग्रामराक्षस की चर्चा भी न करो।' रामरूप बोला।

'यानी बुद्धिजीवी का पलायन शुरू...।'

'पलायन नहीं, वक्त पर देखना।'

'संघर्ष हुआ तो लाठी लेकर जाओगे क्या ?'

'हां।'

'और तब क्या हम दो बुद्धिजीवियों का अब तक का चिन्तन बुद्धिविलास मात्र बन धरा नहीं रह जायगा।'

'सब लोग सो गये। आओ, अब हम लोग भी सो जायं।'

२८

उस रात रामरूप को नींद नहीं आयी। वह रात-भर करवट बदलता रहा और नाना प्रकार की दुश्चिन्ताओं के जंगल में भटकता रहा। सुबह झपकी आयी तब तक बलेसर ने अत्यन्त हड़बड़ी में आकर जगा दिया। वह लगभग चिल्ला रहे थे, 'उठो उठो...तुम सोये हो और उधर पहर रात से दीनदयाल ने कटिया लगा रखी है। सब काट ले जाएगा तो क्या खलिहान से वह भला बोझ देगा ?'

'तो वह दुर्भाग्यपूर्ण दिन आज आ ही गया।' सोचता हुआ रामरूप झटके से चारपाई से नीचे उतर पैरों में जूता डाल आंख मलते हुए बोला, 'मैं अभी चल रहा हूं। और चादर ओढ़ते हुए वर्मा से जो अपनी चारपाई पर उठकर बैठ गया था, कहने लगा, 'देर हो तो विद्यालय में मेरी आज की अर्जी दे देना।'

'तो और सबको खबर कर दूं न ?' बलेसर ने कहा।

'हां।' एक क्षण सोचकर और किसी असमंजस से उबरते हुए रामरूप ने कहा। 'सबको खबर करने' का अर्थ वह अच्छी तरह समझता है। अपने पट्टी मालिकान, पूरा पर की अहीर बस्ती, सभापति, सीरी भाई, पिरथी नारायन की बखरी और दुबरी देवता वगैरह के घर खबर करेंगे कि लोग रामरूप की ओर से गोहार में चलें। वह जानता है कि गोहार के लोग किस पैंतरे पर होते हैं और किस सीमा तक दूसरों के लिए सिर फोड़वाने को तैयार रहते हैं। वास्तव में यह किये-कराये का भयवद्दी जैसा मामला है। जिसके लिए जो लाठी चलाता है वह उसके साथ पार करने जाता है। रामरूप किसान नहीं, अध्यापक है। लाठी लेकर किसी की गोहार नहीं करता है। वह अपने को सभ्य समझ ऐसा करने में शरमाता है। उसके पिता को मार-झगड़े से कोई मतलब नहीं। ऐसी स्थिति में उसकी गोहार के

कितने लोगों में कितनी हमदर्दी होगी, वह मन-ही-मन समझता है। मगर, ऐसी भी नहीं है कि लोग उसकी ओर से लाठी भांजते और गरजते हुए नहीं जायेंगे। काफी लोग जायेंगे और तहे-दिल से चाहेंगे कि दो-दो हाथ हो जाए। लाठी चल जाए। तो, ऐसा वे क्या रामरूप के प्रति प्रेम-भाव से करेंगे? नहीं, वे लोग दीनदयाल के प्रति अपनी कोई दुश्मनी साधने के लिए इसे एक दुर्लभ अवसर मान उत्साहित दिखायी देंगे। दूसरे के मत्थे खेल खेलने में कितना मज़ा आता है। वह खेत की लड़ाई खेत में ही तो खतम होगी नहीं। असली लड़ाई तो उसके बाद शुरू होगी, थाने में, कचहरी में, रुपये की लड़ाई। किसान को लाठी की लड़ाई से अधिक परेशानी रुपये की अदालती लड़ाई से होती है। खेत में तो चटपट हार-जीत हो जाती है मगर वहां का लटका पता नहीं कितने साल चले। फिर कुछ पता नहीं सफेद होगा कि स्याह होगा? जब खेत की लड़ाई का सेहरा किसी मोटे आसामी के सिर बंधा है और स्पष्ट है कि प्रतिष्ठा का मामला बन जाने पर अदालतों में नोटों की गड्डी फूंकने में यह आदमी कतरायेगा नहीं तो मज़ा लेने वाले और अपने-अपने बैर-बदले वाले ग्राम-खिलाड़ी क्यों न उलछकर सामने आ जाएं। फूटे कुछ सालों का कपार। गवाह भी बने तो पूड़ी-मिठाई मिलेगी।···कैसे-कैसे विचारों की शृंखला इस क्षण रामरूप के भीतर झनझना रही है।

'मैं भी चलूंगा।' वर्मा ने कहा और उठकर तैयार होने लगा था। उसकी दृष्टि हवेली के फाटक पर गयी जहां चुपचाप कमली खड़ी थी, एकदम उड़ा हुआ-सा चेहरा, उठती-गिरती पलकें, जैसे कह रही है, चाचा जी, पिताजी को रोकिये···? भीतर से हल्ला करती मांजी भी धमक आयीं। बातें किस प्रकार फैल जाती हैं। लोग कैसे खड़भड़ हो जाते हैं।

'नहीं, इसका कोई औचित्य नहीं। फिर, कुछ हुआ तो घर की देख-रेख, दौड़-धूप, दवा-दारू और ज़मानत कराने वाला आदमी बाहर तो रहेगा।' रामरूप ने हंसकर कहा और चेहरे पर कुछ प्रसन्नता लाने की चेष्टा करता हुआ आगे कहने लगा, 'मामला कोई खास गम्भीर नहीं है। गांव में तो यह सब होता ही रहता है। रगड़े-झगड़े का ही नाम ग्राम-जीवन है और इसका मर्म मैं जानता हूं। झगड़ा नहीं होने दूंगा।'

'इसका अर्थ कि दब-झुक जाओगे और अपना खेत ज़बरदस्ती उसे काट ले जाने दोगे।'

'नहीं, यह नहीं होगा। लेकिन वह भी नहीं होगा।'

'तब क्या होगा? क्या सुलह के लिए उसने कटिया लगाई है?'

'नहीं, कटिया तो संघर्ष के लिए ही उसने लगाई है क्योंकि वह जानता है कि मैं कमज़ोर हूं, किन्तु मैं भाग कहां रहा हूं? देखो, जा रहा हूं। अकेले ही लड़ूंगा।' रामरूप बोला।

'आप अकेले काहे लड़ेंगे' चार-पांच लट्ठधारियों के साथ सीता अहीर दौड़ा हुआ आया और कहता गया, 'हम लोग आगे रहेंगे। आप हमारे पीछे रहेंगे। मार-कर भुस न कर दिया तो असल खून का नहीं। बस, आप हमारे पीछे रहें।'

रामरूप ने मुसकरा दिया। बोला, 'हां चौधरी, तुमसे यही उम्मीद थी। मगर, झगड़ा-फसाद पेड़ा नहीं है कि शौक से खा लें। चलो, देखो कि भरसक कहने-सुनने से ही लोग रास्ते पर आ जाएं।'

'आप कह सुनकर अपना मन भर लें। वह दुष्ट भला बात सुनेगा?…ऐसे ही छूछे हाथ चलेंगे?'

रामरूप के आगे बढ़ने पर सीता ने टोका मगर उसे बिना उत्तर दिए चुपचाप रामरूप गली में उतर गया। कई बार की टोकाटोकी से उसके भीतर एक हलका असमंजसपूर्ण द्वन्द्व पैदा हो गया। कहीं ऐसा तो नहीं कि सचमुच उसे लाठी लेकर ही चलना चाहिए? कहीं वह गलती तो नहीं कर रहा है? लेकिन नहीं, वह ठीक कर रहा है। वह लाठी लेकर नहीं जाएगा। वह अध्यापक है।…फिर उसके भीतर कहीं से क्षोभपूर्ण कचोट उठने लगी। यह दोहरे मानदण्डों वाले जीवन को एक साथ जीने का अंडस कितना बुरा है। वह केवल किसान होता तो क्या खाली हाथ जाता? नहीं, वह भी औरों की तरह लाठी लिये छरकता-बमकता और लाठी भांजता जाता होता। अब यह अध्यापक यानी समाज का एक ऊंचा सफेदपोश बीच में आ गया। वह उसे लाठी लेकर चलने की अनुमति नहीं दे रहा है। वह संघर्ष करने तो जा रहा है मगर खाली हाथ। वह अपने आदर्शों के द्वारा संघर्ष करेगा। इस संघर्ष का नक्शा उसके मन में बहुत साफ नहीं है तथापि वह उसके झोंक में आगे बढ़ता चला जा रहा है। पता नहीं उसके पैरों में कैसे पंख बंध गए थे। उसे स्वयं लग रहा था, वह उड़ रहा है। इसी के साथ उसके मन के चिन्तन में भी आंधी-पानी और धूल-बवण्डर के उपद्रव नधे थे।…यह सीता? आज कहां की कैसी स्वामीभक्ति उमड़ आयी? एक गांव में रहते हुए भी यह कितनी दूर का, कितने किनारे रहने वाला आदमी आज किस जादू से इस तरह सट रहा है?… उसे याद आया, पार साल दीनदयाल ने इस पर खेत-उखरिया में दावा कर जुरमाना करा दिया था। माठा-पानी बेचकर गुज़र करने वाला सीता मुकदमा-बाजी में 'ठण्डा' हो गया। अब बेचारा यह परायी अगलगी देख सुगबुगा रहा है और चलकर घात लगा हाथ सेंकने के लिए आतुर हो रहा है।

गांव के बाहर होते-होते आगे दुबरी देवता अपने स्कूल-कॉलेज में पढ़ने वाले लड़कों के साथ लाठी लिये लपकते जाते दिखाई पड़े। रामरूप के दल को देख छरककर चहक उठे—

'मार कर लाठी से धुर्रा उड़ा दिया जायगा बबुआ। क्या समझ लिया है दीनदयाल सा…? ऐसे-ऐसे मूजियों को तो मैं नीचे-ऊपर नोटों की गड्डी रख फूंक

दूं। तुम तनिक फिकिर मत करना, हां।…मगर बबुआ, संग्राम में खाली हाथ नहीं चलना चाहिए। मंगा दूं एक ठेंगा?'

'नहीं देवता जी।' रामरूप ने कहा और बिना कुछ कहे उसी प्रकार आगे बढ़ता गया। धत्तेरे की, फिर वही लाठी। अरे, गांव की दृष्टि में बस लाठी ही धुरी की तरह घूमती रहती है? उसे लग रहा था, उसके पीछे कोलाहल करते लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है। शायद तमाशेवाली मानसिकता की ही प्रधानता थी। उसे देवताजी की बात सोच-सोच इस तूफान में भी हंसी छूट रही थी। …दीनदयाल को ये नोटों की गड्डियां नीचे-ऊपर रखकर फूंक देंगे। बहुत मुश्किल नहीं है देवताजी के इस रहस्यवाद की गुत्थी को खोलना।…क्या आश्चर्य कि देवता खुद घात लगाकर चलते ही लाठी बजाकर आग लगा दें और सरक जाएं। फूटें लोगों के कपार, टूटें लोगों के हाथ-पैर और पड़े देवता की पौ बारह।…अब चलो रामरूप थाने, चलो कचहरी, फूंको नोटों की गड्डियां नीचे-ऊपर रख अपने शत्रु को। नोटों की कमी क्या है? यह गांव का नोटदार कुबेर खुद दहिनदयाल हो तुम्हें ललकार रहा है, तुम्हारे साथ कन्धे से कन्धा मिला समरांगण में लाठी भांज रहा है, धीरज बंधा रहा है, फिकिर मत करना बबुआ। …ईश्वर न करे ऐसी नौबत आये पर अभी एक-दो घंटे के भीतर कुछ हो गया तो बबुआ को देवता की शरण में जाना पड़ सकता है और तब कितना घघाकर वह देवता उसका स्वागत करेगा? नोटों की गड्डियां आगे पसार देगा, जितना चाहो ले जाओ बबुआ, धिक्कार है हमको जो मौके पर तुम्हारे काम न आयें। फिर वह रामायण की एक चौपाई बोलेगा, 'जे न मिन्त्र दुख होंहि दुखारी…।' देवताजी मित्र का उच्चारण 'मिन्त्र' के रूप में करते हैं।…सामने पसरी नोटों की गड्डियों को देख रामरूप को सांप जैसे सूंघ जायेगा। नहीं, वह बेहोश होकर गिरेगा नहीं। उससे कितना-कितना काम करना है। सवाल इज़्ज़त और आन का है। सवाल जीने का है। यदि आज डेढ़ लट्ठे के डांड पर दबकर सब्र ले तो कल कोई कितनी आसानी से डेढ़ बीघा दबा लेगा और परसों कोई कहेगा कि घर-द्वार छोड़, गांव छोड दो तो रामरूप का क्या होगा? नहीं, पीछे हटने का सवाल अब कहां?…रामरूप हिसाब जोड़कर थरथराते होंठों से हजार की कुछ संख्याओं को बतायेगा। संख्या सुन देवता अब गंभीर हो जायगा। गंभीर होकर सिर हिलायेगा और मांग वाले धन को छोड़ के शेष नोट संभालकर भीतर जायेगा। कुछ क्षण बाद भीतर से और अधिक गंभीर होकर लौटेगा। अब उसके हाथों में नोटों की जगह स्टैम्प पेपर होगा। फिर अति गंभीर होकर कागज रामरूप की ओर बढ़ा देगा और धीरे से कहेगा, 'तुम्हारे यहां से रुपया कहां जायगा? मगर यह दस्तूर है न?…हां, कहां वाला खेत इस रुपये पर रहेगा?…मुंह में धान डाल देने पर फूटता रहे लावा, तुम खुशी-खुशी गरदन नाप दो रामरूप देवता के आगे।…

रामरूप को लगा, वह पसीने-पसीने हो गया है। क्या रास्ता तेज़—लगभग दौड़ते—चलने के कारण? क्या शत्रु-भय के कारण?…उसने सिर झटककर मित्र-भय की कल्पित दुश्चिन्ताओं से मुक्त होने का प्रयास किया। तभी कुछ लोग उसकी बगल से लाठियां लिये दौड़ते हुए आगे निकल गये। पीछे से किसी ने कहा, 'गजिन्दर कंपनी है।' और रामरूप की दृष्टि जो उनकी ओर उठी तो उसने देखा गांव के भिन्न-भिन्न मार्गों से लाठियां लिये लोग दौड़ते चले आ रहे हैं। कितने उत्साही कटे खेतों के बीच से तिरछे भागे चले जा रहे हैं। वह अरविंदजी और भगेलुआ को सशस्त्र दौड़ लगाते देख चकित हो गया। जितने छोटे अरविन्दजी उससे कुछ ही बड़ी लाठी, पैर में जूता नदारत, सिर पर पगड़ी, युद्ध करने निकले हैं, पिता-पुत्र दोनों? उसने जोर से चिल्लाकर भगेलुआ को डांट बताई क्यों उसे लिये जा रहा है? भगेलुआ खड़ा हो गया। मगर अरविन्दजी? बलेसर काका के लड़के के साथ। उनका सरपट्टा और तेज हो गया। अरे मूर्ख, मार-पीट को क्या बरात करना समझ लिया है? भगेलुआ गिड़गिड़ाता है, हमारा क्या दोष मालिक? बबुआ छरियाकर पकड़ते-पकड़ते भाग चले तो मालकिन ने कहा, चांडाल मानेगा नहीं। तू भी चला जा। ज़रा दूर ही रखना…अब क्या कहे रामरूप?

सूरज उग गया था और बहुत तेज़ चमक रहा था। किरनें सबेरे ही हवा में गरमाहट भरने लगी थीं। पछिमा हुहुकारी देने-देने को हुमाच बांध रही थी। कटे खेत में काली माटी के ढेले बिछे थे जो सुनसान को गाढ़ा बना रहे थे। कुछ खेतों में सरसों, तीसी और बर्रे लगा था। बर्रे के कांटे अब निखरकर रोमांच की तरह भरभरा गये थे। चमकती धूप के सन्नाटे में उस विवादास्पद खेत पर लोगों का जमाव सनसनी भर रहा था। हांव-हांव जैसी आवाज़ें हवा में फैलकर बिखर रही थीं। कुछ साफ-साफ सुनायी नहीं पड़ रहा था। रामरूप ने दूर से ही लक्ष्य किया, दीनदयाल चचवा अपनी छह हाथ की लाठी में होली के लाल-पीले रंगों में रंगा गमछा बांध झंडे की तरह हवा में उड़ा रहा है और कुछ हल्ला कर संकेत कर रहा है। शायद अपनी गोहार को अपनी ओर बुला रहा है। मूर्ख कहीं का! कहां इतने अधिक लोगों का मजमा है कि लोग अपना दल नहीं चीन्ह रहे हैं? और कहां इतना बड़ा चलावे वाला हंगामा है कि ऐसे नाटक की ज़रूरत पड़ रही है? ज़रूर नखरे दिखा रहा है और 'बन' रहा है।

खेत कट चुका था। बोझ बांधे जा चुके थे। दीनदयाल के अपने खेत वाले बोझ खलिहान में चले गये थे। झगड़े वाले हिस्से के बोझ पूरे खेत में जहां के तहां बिखरे पड़े थे। वे रोक दिये गए थे। मजदूर या तो खड़े-खड़े बाबू लोगों का तमाशा देख रहे थे या बिनिया कर रहे थे। ठीक रास्ते पर दीनदयाल का गोल लाठियां लिये खड़ा था और उससे पूरब ओर कुछ हटकर पट्टी मालिकान के लोग और उनके गोहार वाले जुटाव कर रहे थे। दोनों दल से कुछ और हट खेतों में

थोक-थोक लोग खड़े थे। कुछ तटस्थ-से, कुछ तमाशबीन-से, कुछ असमंजस में पड़े-से और कुछ निर्भाव-से। सीरी भाई के सामने दीनदयाल उलटा-सीधा बक रहा था। तू मूंजी यहां क्या ठेंगा चमका रहा है? परसों अपने खेत पर आना। मर्द का बच्चा डग्गा बजाकर कटिया लगायेगा और नहीं आज ही अपना श्राद्ध कराना चाहता है तो···वह लाठी तान कर दौड़ता है।

सभापतिजी बीच में आ जाते हैं। कहते हैं, 'एकदम सनक मत जाओ दीनदयाल! आज जिससे झगड़ा है उससे ही उलझो। रावण और कंस से अधिक बलवान अभी तुम नहीं हुए हो कि तुम्हारी लाठी का जोर···।'

'तुम लाठी का जोर देखोगे सभापति के दमाद···' गजिन्दर लाठी तानकर सभापति की ओर दौड़ता है। दोनों ओर से 'मारो-मारो' का हल्ला होता है। दीनदयाल के दल वाले आपस में ही लाठियां खड़-खड़ाकर सबको चौंका देते हैं। गजिन्दर सीता को सामने देख सहम जाता है। कहता है, 'तू भी ससुरा गोहार आया है? इतनी जल्दी भूल गया?'

'भूल जाता तो कैसे आता रे साला?'

'खबरदार···।' गजिन्दर फिर लाठी तानकर बढ़ता है। दुबरी देवता की आवाज़ ऊपर ही ऊपर सब लोग सुनते हैं, 'अब क्या देख रहा है सितवा? छोड़ ज़रा हाथ कड़ेर कर लाठी।' और उस खड़बड़-खड़बड़ जैसे निर्णायक क्षण की तना-तनी के बीच पहुंच गया रामरूप, दोनों हाथ ऊपर किए, 'रुको-रुको, दोनों तरफ के लोग, पागल मत बनो···।'

'बहुत देर से तुमको खोज रहा'—कहता गजिन्दर झपटकर मुड़ा और रामरूप पर लाठी चला दी। निशाना एकदम सधा हुआ था परन्तु उसके बाप दीनदयाल ने उस वार को अपनी लाठी पर रोक ठरका दिया। वह गजिन्दर को डांटने लगा, 'इस तरह मतवाला बन मार नहीं होती। देखते हो, वह खाली है।' अर्थात् रामरूप का खाली हाथ आना काम कर गया। उसके मन में एक क्षण का एक विचित्र पश्चात्ताप जगा। वह यदि लाठी लेकर आया होता तब तो गजिन्दर को झेलना ही पड़ता और निहत्थे की स्थिति में यदि दीनदयाल ने बचाया नहीं होता तब क्या होता? क्या वह शत्रु की कृपा से बच गया? बहुत अफसोस···।

तभी से हालत ऐसी बिगड़ी कि रामरूप पागलों की तरह बीच में नाच-नाच लोगों को रोकने लगा।···मैं हरगिज मार-पीट नहीं चाहता। मेरी बात सुनो··· मेरी बात सुनो···बस, एक बात सुन लो···और किसी तरह वह अगियाई लहर रुकी तो उसने खूब जोर से कहा, 'बस मेरी दो-एक बात आप लोग सुन लें, इसके बाद चाहे जो करें।'

उसकी दृष्टि एक बार उधर घूम गयी जिधर सीरी भाई के लड़के अविनाश और उसके लड़के अरविन्दजी को कई लोग घेर-घेरकर पकड़ रहे थे और वे

गजिन्दर को गालियां बकते-ललकारते घेरा तोड़ने के लिए खेत में इधर-उधर भाग-दौड़ रहे थे। बेचारे, वे नन्हें-नन्हें लड़के ! रामरूप की दृष्टि पड़ते ही सहम-कर चुपचाप खड़े हो गये।

बहुत मुश्किल से लोग शान्त हुए। रामरूप को बारम्बार आश्चर्य हो रहा था कि मामला उसका है और ये उसकी ओर के दूसरे लोग हैं जो इतने अधिक उत्साहित हैं। आखिर मेरे लिए लोग इतना जोखिम उठाने, जान देने के लिए क्यों अधीर हैं? अपने बेटे गजिन्दर को निहत्थे आदमी पर वार करने के विषय में पुनः झिड़कते-फटकारते हुए दीनदयाल के सामने पहुंचकर रामरूप बोला—

'चाचा जी, मार-पीट के अलावा क्या कोई और रास्ता शेष नहीं है ?'

'क्यों नहीं शेष है ? तुम हमारा बोझ मत रोको। फिर कोई झगड़ा नहीं है' दीनदयाल ने जवाब दिया।

'आपके जो बोझ थे वे सब तो आपके खलिहान में चले गये। ये बाकी बोझ हमारे खेत के हैं। हमने बोते समय हराई फेर दी थी। आप हमसे बड़े हैं। आपको चाहिए था कि डांड फरिया लें। पर आपने ऐसा नहीं किया। कटिया लगी तो हम अपने धन के पीछे खड़े हैं। लेकिन मैं झगड़ा नहीं चाहता। यहां सारा गांव इकट्ठा है। आप सबके सामने कह दें कि यह बढ़ा हुआ डेढ़ लट्ठा खेत रामरूप का नहीं है।'

'यह रामरूप का होता तो हमारी कटिया क्यों लगती ? क्या मैं सनकी पागल हूं ?'

'मैं सनकी नहीं, आपको गांव का सबसे समझदार और प्रतिष्ठित व्यक्ति मानकर आपको ही पंच मान रहा हूं। आप पार्टी नहीं, पंच के रूप में फैसला दें। मुझे आपका फैसला स्वीकार है।'

'मैं पार्टी और पंच एक साथ कैसे हो सकता हू ? यही करना है तो किसी और को पंच बदो।'

'मैं तो आपको ही मान रहा हूं। यदि आप नहीं रहना चाहते हैं तो आप इतने लोगों में से किसी को भी पंच बद दें और उसका कहना हम दोनों मान लें।'

दीनदयाल चुप हो जैसे सकते में पड़ गया। किसी को उम्मीद नहीं थी कि रामरूप दीनदयाल जैसे धूर्त को इस प्रकार अपने नैतिक घेरे में ले लेगा। जिन लोगों की हार्दिक इच्छा थी कि लाठी चल जाय उन्हें तनी लाठियों के इस प्रकार खिंच जाने से गहरी निराशा हुई।···एक तो खाली हाथ आया दूसरे आते ही दुश्मन को सिर पर बैठा लिया, मस्टरवा अकिल वाला है।···मगर इस अकिल से खेत और बोझ तो अब मिलने से रहा।···दब्बू-डरपोक है। आदमी को मोर्चे पर जरा कड़ा पड़ना चाहिए। नाना प्रकार की बातें।

'हम लोग दयानाथ पाण्डेय को मान रहे हैं।' दीनदयाल को असमंजस में पड़ा देख गजिन्दर चिल्ला उठा। उसने सोचा, कहीं बाबूजी उस पार्टी के किसी

आदमी का नाम न ले लें।

दीनदयाल के होंठ फड़के, कुछ स्फुट शब्द झटके से निकले परन्तु वह कुछ सोचकर चुप हो गया। रामरूप ने स्थिति भांपकर कहा—

'चाचा अपने मुंह से कह दें…।'

'तो ठीक ही तो है। क्या हर्ज है? दयानाथ पाण्डेय फैसला कर दें। गांव में उनसे अधिक कायदे-कानून को कौन समझता है?'

दुबले-पतले शरीर वाले और उसी के अनुरूप एक पतली टिकासनी छड़ी एक हाथ में लिये तथा दूसरे में बीड़ी दगाये साक्षात् कानून के पुतले जैसे पाण्डेयजी आगे आ गये।

'मुझे आपने पंच बनाया तो मेरा फैसला है कि सारा बोझ मेरे खलिहान में जायगा। फुरसत निकालकर मैं खेत की पैमायश कराऊंगा। नक्शे और खतौनी के मुताबिक जिसका निकलेगा उसे माल दे दूंगा।'

पंचायत में और क्या होता? यही तो होता है। किन्तु सवाल है कि दयानाथ को क्या पैमायश की फुरसत मिलेगी?

दीनदयाल की पार्टी को खुशी है कि मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय का यह भाई उनके घर का अपना आदमी है। उधर रामरूप को खुशी है कि झगड़ा टल गया। खेत किसी का कहां जायगा? हां, बोझ ज़रूर कभी कहीं जा सकता है और जहन्नुम में जाकर भी फायदा दे सकता है।

२६

महुवारी में हर साल की भांति होली धमक गयी। वस्त्र और भोजन के नवोल्लास के साथ गाने-बजाने की धूम भी उतर आयी। हर साल की तरह 'सम्मत बाबा' फूंके गये और 'होलरी' जलाकर उसे लुकार जैसे भांजते लोगों की भीड़ सीवान की ओर बगटुट भगी…हो-हो-हो-होल्लरी। हर साल की तरह दूधिया चांदनी की सारी रात छनन-मनन पकते पकवानों की सुगन्धि में कुलबुलाती रही और नयी सुबह जब अबीर-गुलाल भरी रंगों की तरंग में इठलाती उतरी तो सचमुच लगा, साल-सम्बत् बदल गया, पुराना पहरा बदल गया। समय की मार से आहत लोग सुगबुगा उठे। बाहर से नहीं, कोई हवा भीतर से उकसाने लगी तो हर साल की तरह लोग गाने-बजाने और देवस्थानों से लेकर दरवाज़े-दरवाज़े रंग लेने में जुटे। ढोल, झाल और डफ आदि की धूमधाम में डूब गया एक दिन और एक रात। फिर दूसरे दिन जब हर साल की तरह सारा गांव घूमकर गाने-बजाने का धुरहेड़ी वाला दोनों टोल का जुलूस समापन के लिए नाले के किनारे गोपी के दरवाज़े पर जाकर जम गया तो भारतेन्दु वर्मा ने कुछ ऐसा देखा जिसके बारे में रामरूप ने

कभी कोई चर्चा नहीं की थी।

नाले के उस पार चमटोल के हरिजनों का नाचता-गाता दल जैसे मुकाबले में आकर डट गया था। पुराने घिसे-पिटे मज़े में जैसे अकस्मात् एक नयी कलम लग गयी थी। महुवारी के लोग चिहा-चिहाकर देखने लगे। अरे, यह देखो···यह देखो कैसी उखमंज जगी है? मनतरंगी लोग कैसे झूम रहे हैं? वर्मा ने गहराई से अनुभव किया, हरिजनों की होली में अधिक ताज़गी और तन्मयता है। सुर के टटके जैसे सोते छलछला रहे हैं। नयी बासन्ती चहक झमक-झमक नाले में भर रही है। नाले में पानी नहीं हुआ तो क्या? हुआ करता था कभी जैसा कि रामरूप ने उसे बताया था, इस नाले मे पानी और तब की परम्परा थी कि लोग गाना खत्म कर गुरु महाराज की जै बोलने के बाद यहां पैर धोकर घर जाते थे। अब शायद हर साल नाला सूख जाता है। पैर कैसे धुलें? तो न धुलें पैर, कान तो धुलें। फिर कान ही क्यों? चमरौटी की यह नयी लोकधुन-धारा और प्रेम-प्रतिस्पर्धा की तरंगें सचमुच इस क्षण सम्पूर्ण अन्तरंग को धो रही है। आंखों के साथ मन-प्राण को जुड़ाने वाला यह तृप्तकारक दृश्य देखता वर्मा एकदम विस्मय-विमुग्ध हो गया था।

ठीक होली के दिन रामरूप को उसके ससुरजी ने याद किया था और वह दूसरे दिन जो गठिया पहुंचा तो अब तक लौटा नहीं था। भारतेन्दु वर्मा को उसका अभाव खटक रहा था परन्तु यह धूल-धक्कड़भरी गांव की गलियों में ऐसा साफ-सुथरा मनोरंजन उतर आया था जो सुबह से ही उसे पूरे वक्त अपनी गिरफ्त में रखने लगा था। जिनका सिर और मुंह अबीर-गुलाल से भठ गया है और जिनके उजले-चमकीले वस्त्र रंगों के धधकते धक्के से खिल-से गये थे और जो खड़े-खड़े या बैठे-बैठे गाने-बजाने के साथ उत्सुक-उत्फुल्ल वातावरण के सम्पूर्ण स्वाद के भीतर अनजाने उतर रहे थे, ऐसे आबाल-वृद्ध-वनिता ग्रामजन का यह मेला अपूर्व था। घरों में बन्द गांव के फूल आज निखार के साथ कैसे इधर-उधर उछल-कूद रहे हैं। गहरी ऊर्जा है इस समारोह में और जबरदस्त आकर्षण है इन गायन-क्षणों में। दो दिन से गला फाड़ते और झाल-ढोल पीटते लोग जैसे थक ही नहीं रहे हैं। हर आदमी साक्षात् होली का हुरदंग बना जैसे आपे से बाहर है और एक दिन की यह दो गोल वाली गायन प्रतिस्पर्द्धा उन्हें उत्तरोत्तर उत्तेजित करती जा रही है।

अब सूखे नाले के पार की यह अछूती सांस्कृतिक भयवद्दी क्षण-भर के लिए उन उत्तेजना के नशे में चूर गवैया लोगों का मनोरंजन करने लगी जो अब तक दूसरों के मनोरंजन-पात्र बने थे। बेचारे कल से ही खट रहे हैं। थककर चूर हैं। उंगलियां ढोल पीटते-पीटते फट गयी हैं। नदीपार का जलसा देख हुमक रहे हैं, चलकर एक ताल वहां भी बमबमा कर बजा दें। कहां ख्याल रह जाता है कि वह छोटे लोगों का दल है। भयवद्दी की बात ठहरी, सामाजिक नहीं, सांस्कृतिक

भयवद्दी । वर्मा ने अनुभव किया, खूब भयवद्दी निभाई हरिजनों ने ।

गोपी के दरवाज़े पर होली-गायन समाप्त हो गया, मिठाई, पान इलायची आदि के स्वागत के साथ रंग मिल गया, अबीर-गुलाल ऊपर उड़ा दिया गया तो आगे वाले गोल ने गाया—'सदा आनन्द रहे एहि द्वारे, जिये से खेले होरी ।' इसके बाद एक चैता गाकर जयकार की ध्वनि उठा समारोह की समाप्ति की अघोषित घोषणा कर दी । ठीक इसी के पश्चात् यही कार्य पीछे वाले दल ने किया तथा उनके बाद तुरन्त उस पार भी जय बोल दी गयी । भयवद्दी की बात ठहरी । अगहर गा-कर घर गया तो पछहर भी जायेगा । साथ देना भाई-चारा है । ठहरकर बाद तक गाते रहना तो जैसे मोर्चाबंदी हो गयी । नहीं, वे मोर्चा क्यों लेंगे ? साथ देंगे । गांव में होली-गायन के दो दल हैं तो इस साल यह तीसरा भी सामने आ गया । चमटोल पृथक् होकर भी महुवारी का अंग है । वह मज़बूत सांस्कृतिक सूत्रों में जुड़ा है । वे लोग हर काम में, घर में, खेत-खलिहान में, सर्वत्र साथ हैं तो इस हंसी-खुशी में क्यों नहीं साथ रहें ? कतार में कतार, गोल में गोल मिलाकर साथ रहें । हां, इसका श्रेय उन्हीं को जा रहा है । किसी अज्ञात नवोन्मेष की प्रेरणा से उन लोगों ने इस वर्ष महुवारी के बाबुओं से अपने को इस प्रकार जोड़ लिया और होली की हवा में नयी मिठास आ गयी ।

वर्मा सोचता है, सामाजिक कोण से उठे अलगाव को सांस्कृतिक कोण पाट देता है । राजनीतिक कोण इस गांव में नहीं उठता दीख रहा है । जहां वह उठा है वहां तो जैसे आग लगी है । बाबू और बनिहार दोनों जल रहे हैं । आंच ज़रूर इस गांव तक आती होगी, पर वह लगती भर है । आश्चर्य ? इस गांव में जलाने वाला जैसा कभी कुछ हुआ नहीं । कोई छोटी-मोटी चिनगारी भी नहीं । गठिया में अवश्य ही सुना है, रामरूप के ससुरजी का भुसहुल कुछ मास पहले जल गया था । कुछ वैसा ही मामला था । यहां इस गांव में उसे कभी किसी के चेहरे पर उलटी राजनीति का वह सत्यानाशी तनाव अथवा आक्रोश उमड़ता नहीं दिखायी पड़ा ।

वर्मा कैसे कहे कि महुवारी गांव दुनिया-बाहर है ? लेकिन जो है वह है । यहां रहकर उसे हरिजनों पर अत्याचार वाली रक्तरंजित कहानियों पर, मोर्चा-बन्दियों पर विश्वास नहीं होता । क्या इस गांव की स्थिति में ही विलक्षणता है ?

वर्मा सोचता है, एक विलक्षणता तो यह है कि सर्वत्र ग्राम-संरचना में चमटोल की स्थिति दक्षिण दिशा में होती है और यहां वह उत्तर ओर है । लेकिन इसे भूगोल का कमाल कहना उचित होगा । तहसीलों का भूगोल दोनों को पृथक् करता है और इन गांवों का इतिहास दोनों को जोड़ देता है । दोनों के बीच में नाला है । नाले की गहराई दोनों गांवों के मनों की गहराई होती नहीं दीख रही है । उसके ठीक दाहिने-बायें किनारे पर आमने-सामने बसे दोनों—बाबुओं और बनिहारों के—गांव उसकी दोनों भुजाओं की भांति सदा जुड़े लगते हैं । सरकते समय और करवट

बदलते इतिहास के बीच दूसरे-दूसरे गांवों में कितना-कितना क्या-क्या नहीं बदल गया ? यह दिन भी देखना पड़ा कि दलितोन्मेष खूनी क्रांति का उद्घोष बन घहराने लगा है। सुदूर चीन से चल कामरेड माओ निचाट ग्रामांचल में पहुंचने लगा है। रातों-रात पैरों के नीचे वाली विश्वासों की ज़मीन खिसकने लगी है। कहीं-कहीं सुबह सूरज का नक्सली गोला लाल सलाम का आतंक लिये दगने लगा है। खबरें अखबारों में छपती हैं कि पढ़कर दिल दहल जाता है।

किन्तु आश्चर्य ! आज भारतेन्दु वर्मा अपनी आंखों से देख रहा है कि नाले की दोनों जुड़ी भुजायें यहां अभी पूरी तरह जुड़ी हैं। हंसिया-हल की मूठ पर जुड़ी हैं तो यहां ढोल-झांझ पर भी जुड़ी हैं। वर्मा को याद आयी वह बात, एक दिन रामरूप का हलवाह जलिमा आया तो उसने उसे 'आओ भगत' कहकर बुलाया था और बाद में पूछने पर इसका रहस्य बताया था कि कुछ वर्षों से बनइया का चमटोल भादों के निठाल मौसम में श्रीकृष्ण भगवान् के जन्मोत्सव की खुशियों में डूब जाता है। इस पार महुवारी में बाबुओं की परम्परागत जन्माटष्मी तो अब फीकी पड़ गयी है। किसी तरह 'पंजीरी' बांटकर लोग टाल देते हैं। हार्दिक उल्लास नहीं रहा। ऐसी स्थिति में जिला दिया हरिजनबस्ती वालों ने रसिकों को। जमकर नाच-कीर्तन का आयोजन होता है। सो, इस जलिमा के घर 'डोल' रखा जाता है। एक साथ ही इस पार की ठाकुरबारी पर और उस पार के जालिम राम के घर पर श्री कृष्ण भगवान् जन्म लेते हैं। डोल का उत्सव वे लोग भी छठियार तक चलाते हैं। नित्य बिना हिचक तिवारीजी पूजा-भोग के लिए जाते हैं। 'परसाद' लेने इस पार से काफी लोग जाते हैं। इनकी सुविधा के लिए हरिजन भाई रात में नाव की व्यवस्था रखते हैं।

वर्मा को स्मरण है, कहता है रामरूप, इस पार की तुलना में उस पार वाला जलसा फर्स्ट, उनकी सजावट फर्स्ट, कीर्तन और प्रसाद फर्स्ट। यही क्यों तिवारीजी को मिलने वाली पूजा-दक्षिणा भी फर्स्ट। यह सांस्कृतिक प्रतिस्पर्द्धा कभी किसी स्तर पर सामाजिक वैमनस्य का कारण नहीं बनती है। क्योंकि यहां लोग अभी राजनीतिक कीटाणुओं से मुक्त हैं। इसीलिए तो खुलकर गा रहे हैं, नाच रहे हैं, मस्ती में झूम रहे हैं। मन में उल्लास है। वसन्त के रोमांस को आत्मसात् करने की अन्तर्दृष्टि है। ऋतु की उस उतरी सम्पदा में धनी-गरीब का कोई हिसाब तो है नहीं।

वर्मा घर की ओर वापस हुआ तो उसने देखा, अत्यन्त उदारता के साथ घरों के सामने गाने वालों तथा दर्शकों के ऊपर जो अबीर उड़ाई गयी है उससे ज़मीन लाल हो गयी है। धूर-कतवार तक रंग गय हैं। मलिन धूल का आज श्रृंगार हो गया है। दीवारों पर होली के नाना प्रकार के रंगों के छींटे-छपाक् अंकित हो गये हैं और कुल मिलाकर यह कितना सुखकर लगता है। उसके मुंह से हठात् निकल

गया, 'आज का दिन जीवन की एक मूल्यवान उपलब्धि हो गया है।' उसके मस्तिष्क में गायन की गूंज अभी ज्यों-की-त्यों जमा थी। बारम्बार हरिजनों के गायन का सहजोल्लास उमग जाता। वह सोचता, होली के रंग में चित्त को ढालकर रसमग्न होने की पूर्ण अवकाश-क्षमता उनमें अधिक है। अतीत की विशाल सांस्कृतिक परम्परा से जुड़ने वाला उनका संगीत बहुत ताजा है। ये पिछड़े लोग धूमधाम की एकाग्रता में आगे हैं तो आनन्द की समग्रता में भी आगे हैं। इनके हाथों का बल, इनके कलेजे का बल और इनका कंठ-बल सब मिलाकर जैसे यहां नाले के किनारे खुशियाली के नये मौसम को काट-काटकर खलिहान कर रहे हैं। सपनों की सांवर-गोरिया के रोमांस से लेकर द्वापर-त्रेता की कहानियों की रंगीन फसल एकदम तैयार है। यह फसली नशा है कि कुछ गीतों की मूल ध्वनि 'हो हो' के हल्ले में इस प्रकार दब जाती है कि झमर-झमर झांय-झांय के बाद कुछ पल्ले नहीं पड़ता है।

वह दरवाज़े पर पहुंचा तो होली की सम्पूर्ण खुशियाली की अति पवित्र प्रतिमा-सी कमली चाय के लिए प्रतीक्षा करती मिली। वर्मा को देखते ही वह खिलखिलाकर हंस पड़ी और बोली, 'सिर को किसी कपड़े से झाड़ दीजिए चाचाजी, उस पर कितना रंग भठ गया है।'···काश कि वर्मा उससे कह पाता, बेटी, सिर के ऊपर नहीं, उसके भीतर जो आज रंग भर गया है वह क्या धुलने वाला है?··· और चाय पीते-पीते एक बार वह और उस रंग में डूब गया। पता नहीं क्यों इस पार से अधिक वह उस पार वालों के गायन के प्रति आकर्षित हो गया है। वह बारम्बार सोचता है···क्या गा रहे थे वे लोग? आ हो रामा···आ हो रामा··· आहो मोरे रामा की लाइन पर उनकी धुनवंती राजधानी एक्सप्रेस अयोध्या से श्रीराम को वनवास के लिए लेकर चलती है तो मज़ा आ जाता है। सोनार से प्रार्थना की जा रही है कि हे भैया, जल्दी से खड़ाऊं गढ़कर हाजिर कर दो। राम वन के लिए तैयार हैं। खड़ाऊं ऐसा-तैसा काठ का नहीं। दमदम दमकते सोने का खड़ाऊं पहन हमारे भगवान् जंगल में पग धारेंगे। कैसा मारा था पट्ठों ने होली के झूमर-संस्करण का चुटीला हाथ? झूमर में झूमने का मौका अधिक होता है न? कैसे-कैसे नचा दिया लय को। भोले शिवशंकर का प्रसंग उठा। गौरा की मां छाती पीट रही हैं। 'अइसना बउरहवा बर से गौरा ना बिअहबों···।' हो···हो···हो··· हो···। अरे हां, उछाला तो था उसके बाद उन बेवकूफ बसन्तों ने ऋतुरंग में डूबी कुछ उमर वाली रसीली चीज़ें। भारतेन्दु वर्मा इस पार से कितना रस लेता? वह नाला पार कर तब उनके निकट चला गया था। गायन तब बहुत ऊंचाई पर पहुंच गया था।

कितनी ऊंचाई पर? वर्मा ने मन की नोट बुक पर नोट किया था—कोई बलमुआ है। रसे-रसे बेनिया डुला रहा है। मगर आश्चर्य? बेनिया तो वह डुला

रहा है और बांह किसी और की मुरक जाती है। जवाब नहीं फागुनी उत्पात का। अब क्या हो? 'मोरे बलमुआ रे पटना से बैदा बोलाउ।' हो-हो-हो···होरी है—फिर नयी पिचकारी—'केकरि भींजेले कुसुमी चुनरिया, केकर भिंजेला सिर पाग? सीता के भीजेली कुसुमी चुनरिया, राम के भिंजेला···। हरिया, भुटेलिया, घुरहुआ केदरा और ललनवा आदि अपने विद्यालय में पढ़ने वाले कई हरिजन बालकों को वर्मा पहचान रहा था। उसे देख वे पहले तो कुछ झिझक रहे थे, बाद में झूम-झूमकर कैसे हुमकने लगे। आज संकोच कैसा?···गइल जवानी माझा ढील। यह दिन अब फिर बरिस दिन पर लौटेगा। लड़ा दे जान, उठा दे एक ठो मरखाह चहका।···छौंड़ी पतरकी रे। अथवा गीतों-गीतों में उड़ा दे किसी हिरामन सुगना की ओर उसे फिर बिठी दे ठीक गोरी की झुलनी के ऊपर। इस स्नेही सुगना को झुलनी का रस लेकर फिर उड़ जाने दो। बेचारा सुगना। साल भर बाद लौटेगा इस नाले के किनारे। तब तक प्रतीक्षा रहेगी इस सुदिन की।

चाय समाप्त होते-होते धोबी के यहां जाने योग्य एक चादर और एक तौलिया लिये कमली आ गयी। 'चाचा जी, यह चादर ओढ़कर बैठ जाइये। मैं आपके बालों पर जमे रंगों को साफ कर दूं। अब इस समय क्या नहायेंगे, कल आपका एक मन साबुन खर्च होगा।' और मिनटों में यह काम अत्यन्त सफाई और शालीनता से सम्पन्न हो गया। सिर पर पड़ी अबीर बरामदे के फर्श पर आ गयी। वर्मा मन्त्र-मुग्ध उसे देखता रहा। उसे पता नहीं चला और जगह-जगह लोगों ने पीछे से उस पर रंग डाल दिया था। वह सोचता है खुनखुनी अबीर गंध की प्रथम खरी अनुभूति उसे इस साल इस गांव में हुई है। यह गांव अभी पूरी तरह ज़िन्दा है। अभी यहां अबीर की लाली का मौसम बावजूद वैर-विद्वेषपूर्ण तनावों के भरपूर उत्साह के साथ उतर आता है। यहां बैठ अभी उस दुर्दिन की कल्पना नहीं की जा सकती जो बिहार के कुछ गांवों में उतर आया है और अबीर की मौसमी लाली का स्थान खून की बारहमासी होली ने ले लिया है। भोजपुर जिला जल रहा है। सहार थाने के एकबारी गांव से जो नक्सली आग उपटी वह दुल्लमचक, चौरी, बहुआरा, गोरमा, मथुरापुर, बंसीडिहरी, बड़ा गांव और बाघी आदि गांवों को जला रही है। खेत-मजदूर न्यूनतम मजदूरी के सवाल पर घृणा और हिंसा की आंच में खौल रहे हैं। हजूर-मजूर संघर्ष पूरे जोर पर है। खबरें आतंकित कर रही हैं। राम बचाये गांवों को उस होली से। कहते हैं रंग से नहीं, रक्त से धरती लाल हो जायेगी। देखने में भी आ रहा है। बिहार के किसी गांव से धुआं उठता है तो लोग आग देखने पहुंच जाते हैं।···और तमाशा क्या देख रहे हो? धुआं तुम्हारे घर तक पहुंच गया है। यह कथित नक्सली धुआं तमाशा नहीं होता। हक के लिए एक-दूसरे के खून के प्यासे गुर्राते लोग कट्टा-बन्दूक ले आमने-सामने हैं। बीच में नक्सली नारे गंज रहे हैं। हिंसा और वर्ग-

संघर्ष की उस होली के सूत्रों के सहारे क्या महुवारी की इस होली की व्याख्या की जा सकती है ?

नहीं, वर्मा ज़ोर देकर स्फुट शब्दों में स्वयं से कहता है, फिलहाल इस व्याख्या की कोई ज़रूरत नहीं। यहां पूरी तरह राजी-खुशी है। होली का जशन चोटी पर है। महुवारी के बाबू सीरी परसाद सुरभर पूरे जोश से एक फगुआ उठाते हैं—

'होरी खेलत रंग बनाय, ठाकुर धाम में।
काहेके ऊधो रंग बनत है,
काहे के उड़त अबीर, ठाकुर धाम में।
गंगा जल के रंग बनत है,
बालू के उड़त अबीर, ठाकुर धाम में।'

तो उस पार से जालिम राम हाथ भांजकर कढ़ाते हैं—

ननदी का अंगना चननवा के गंछिया,
ताहि चढ़ि बोलेला काग।
देऊं तोहे कगवा दूध-भात खोरवा,
जो पिया आवहिं आज।'

वर्मा की भाव-धारा मांजी के मरामदे में आने से भंग हुई। उन्होंने आकर पूछा, 'का हो मास्टर बबुआ, बचवा त खूब ससुरारि करे लगलन। आजुओ ना अइहन का ?'

'आज तो आ जाना चाहिए।' वर्मा ने उत्तर दिया।

३०

होली त्योहार है कि तब सब लोग अपने गांव-घर पर होते हैं और खुश होते हैं। दूर-दराज की नौकरी वाले भी छुट्टी ले बगटुट जैसे भागते हुए पहुंचना चाहते हैं। रामरूप को याद नहीं कि कभी होली में बाहर रहा। इस साल इसी मौके पर ससुराल की जवाई पर उसे अजीब-सा लगा। ससुराल का कोई रोमांच शेष रहता तब बात दूसरी थी परन्तु वर्तमान स्थिति में तो यह जैसे बांधकर ले जाया जाना-जैसा था। बहुत खिन्न मन वह बाबू हनुमानप्रसाद के दरवाज़े पर पहुंचा था किन्तु उसे देखते ही जिस प्रकार घघाकर उसके ससुरजी ने स्वागत किया और सिर पर उठा लिया उससे उसकी खिन्नता तो कट गयी किन्तु उसका स्थान आशंकाओं ने ले लिया। ये भीतर के भाव हैं कि कोई छद्मलीला है ? हनुमानप्रसाद ने कहा—

'बेटा, होली में अपने लोगों का जुटाव कितना सुख देता है। बबुआ आ गया है। तुम भी आ गये। अब देखो, गठिया में कोट पर कैसे आज जमावड़ा होता है

दोपहर तक तीनों गोल वहां जुम जायेंगे।···अरे टहला, भीतर मलिकाइनि को खबर करो कि···लेकिन बेटा, तुम खुद चले जाओ तुम्हारे लिए कौन यहां लजारू है ? तुमको देखने के लिए सब को ललक लगी रहती है।'

लेकिन इस दुलार से रामरूप आह्लादित नहीं हुआ। उसकी आशंका बढ़ती गयी और हवेली में जाकर पूरी तरह पुष्ट हो गयी। मलिकाइनि ने दो-टूक कह दिया, दुश्मन का दाव लगा है तो मुहब्बत चरचराई है। कैसा दुश्मन? मलिकाइन दुलहिनिया साफ-साफ खोलकर कहती हैं, 'वह जो खुबवा मरकीलौना है, चटाईटोला में जाकर मुंह करिखी लगा बैठा है। मरनसेज पर सोने वाली उमिर में सेज-सुख की सनक सवार हुई है और उस सुनरी हरजाई से गठजोरा हो गया है। यह सब पापड़ बेला है दुलरुआ सरकारजी के बैरी ने और अब महुवारी वाले खेत पर चढ़ाई की खबर है। खुबवा खुद एक दिन यहां आया था। दारू से भक्-भक् मुंह महक रहा था। पता नहीं कैसी अपनी कोई भैंस मांग रहा था और महुवारी वाला खेत छोड़ने का मामला उठा रहा था। सरकारजी जूता लेकर दौड़े तो भगा। अब तमाम तरह का हंगामा सुनाई पड़ रहा है और खेत काटने का पैगाम हो रहा है।···यह मसला तो खुद तुम्हारे सामने आयेगा। पहले खा-पीकर आराम कर लो। कितने दुबरा गये हो ? घर पर सब ठीक है न ? बचिया कैसे है ?'

'ठीक है मां जी, सब ठीक है।' रामरूप ने कहा और आशंका की बात मालूम हो जाने से कुछ राहत-जैसी महसूस हुई। रहा-सहा तनाव रंगबाजियों में गल गया। नाश्ते के पूर्व एक बार, नाश्ते और स्नान के बीच तीन बार, स्नान और भोजन के बीच दो बार और भोजन करते समय एक बार और उसके बाद कई बार उसको लोटे-कटोरे से लेकर पिचकारियों तक के रंगीले आक्रमणों को झेलना पड़ा। कपड़ों पर कितने-कितने प्रकार के रंग पड़े, कौन-कौन लोग, कैसे-कैसे हंस-बोलकर डाल गए, कितनी-कितनी बार गुलाल मले गये, कोई हिसाब नहीं। ससुराल का मामला था। ऐसे पाहुन जन ऐसे मौकों पर कहां मिलते हैं ? और जब मिल गये तो लो, याद करने भर ससुराल का रंग।···यहां भी उसका 'अध्यापक' आड़े आने लगा। एक ओर उसे लगता कि उल्लसित होने, हुमकने और धमा-चौकड़ी मचाने वाली उसकी पात्रता समय ने छीन ली है। दूसरी ओर भीतर से इच्छा उठती, एक बड़ी बाल्टी में पक्का रंग घोल टोल-पड़ोस को नहला दूं। फिर इच्छा दब जाती। लोग क्या कहेंगे ? ये मास्टर साहब लड़कों की तरह हुरदंगई करने लगे।···हुरदंगई ? रामरूप का मन ललच-ललचकर रह जाता। काश कि वह खुलकर वैसा कर पाता।···जा रामरूप, तुझे यह होली और ससुराल का संयोग भी नहीं खोल सका। तू शरीफ अध्यापक बन अपनी कुंठाओं से लड़ता रह। इस गुरु-गम्भीर अध्यापक जालिम ने तुझे मार डाला। इसके

मारे सामान्य स्थिति में तुम न किसान बन पाते और न असामान्य स्थिति में हुरदंगी।

रामरूप कपड़े बदलकर द्वार पर आया तो बाबू हनुमानप्रसाद कोट पर चलने के लिए तैयार बैठे थे। बोले, 'तुरन्त भोजन किए हो, दस मिनट लेट लो तो फगुआ सुनने चला जाय। रामरूप चाहता भी यही था। जो हो, ससुरजी के यहां खाने-पीने की खूब मौज है। इतना बढ़िया खाना खाकर तो बस गाना ही सुना जा सकता है। उसका ध्यान उत्तर ओर वहां गया जहां मनीजर का आसन रहता है। मनीजर बहुत मस्ती में एक होरी का पद धीरे-धीरे गा रहा था, महीन राग में खूब चढ़ाव-उतार के साथ—

मोहन मारत रोरी, पनिया भरन कैसे जाऊं अकेली।
सासु मोरी दिहली कोरे घरिलवा, कैसे भरूं बिनु डोरी।
मोहन मारत रोरी॥

एक तो सास का दिया हुआ कच्चा घड़ा दूसरे डोर बिना पानी भरने की विवशता और तीसरे रोरी का उपद्रव। अरे, यह चौथेपन का मनीजर होरी-होरी के बहाने कैसे ऐसे सरस साहित्य के क्षणों को जी रहा है। रामरूप कुछ देर के लिए विचारों में खो गया। यह कितना अच्छा है कि मनुष्य-जाति ने साहित्य-कला का ऐसा दिव्य आविष्कार कर दिया है जो भीतर से प्रभावित करता है। आंखों से नव-नव विकसित कुसुम क्यारी भले ही न दिखाई पडे, स्थूल कानों से कोयल की पंचम तान भले ही उपलब्ध न हो, कच्चे-पक्के घड़े और रोरी के संदर्भ भले ही बहुत दूर छूट गये हों परन्तु उसका साहित्य सहवास एक बार घोर जड़ से लेकर गहन बुद्धिवादी के हृदय को बासंती रंग में सराबोर कर देगा। हमारे जातीय-रक्त में घुला ऐसा साहित्य क्या त्यौहारों को मरने देगा? नहीं, अभी नहीं, हमारे त्यौहारों की मृत्यु तब होगी, जब साहित्य मर जायेगा। जब तक साहित्य लोक-साहित्य के रूप में जिन्दा है, हमारे त्यौहारों के लिए एक कवच का कार्य करता है। हमारे पर्व आधुनिक सभ्यता तथा विज्ञान के यान्त्रिक धक्के को उस पर झेल लेते हैं।

रामरूप बाबू हनुमानप्रसाद के साथ कोट पर चला तो रास्ते भर प्रतिक्षण सशंकित रहा, अब उसके सामने वह प्रस्ताव आया, अब उसे गोहार जुटाने का वह अप्रिय कार्य सौंपा गया, अब रगड़े-झगड़े की झड़बेरी वाली झांग में वह फिका। मगर ऐसा मौका नहीं आया। कई लोग और साथ हो गये। रामरूप की जान बची। मगर, कब तक? कुछ कहने के लिए एकान्त की क्या कमी है? उस प्रपंच से पिंड छूटने वाला नहीं। महुवारी गांव अब लंका होकर ही रहेगा। बाप रे बाप, सारे के सारे झगड़े एक इसी गांव के सिर पर! जिस दिन महुवारी-स्टेशन रोड की नापी आयेगी उस दिन के हंगामे की अभी से अटकलबाजियां शुरू हैं।

दीवानजी को आगे कर ससुरजी परदे के पीछे रहेंगे। राजनीतिक पार्टियां अपना-अपना लाभ लेने के लिए आग में घी डालेंगी। सड़क बने चाहे नहीं उनकी राजनीति बननी चाहिए। सीरी भाई के खेत पर वह जालिम पठान आज-कल में ही धावा बोलेगा। उनके मेहपुर वाले रिश्तेदारों ने खबर दी है, मौके पर दबना नहीं है। वे लोग खुद ताक में हैं कि दीनदयाल खेत पर जाता है। लोहा बज कर रहेगा। चटाईटोला के नवीन बाबू खुबवा को हथियार बनाकर पैंतरे पर हैं। इधर ससुरजी भला कब दबने वाले हैं। यह दो भैंसों की लड़ाई भी घहराई तो महुवारी में ही।···कितनी सत्यानाशी निकली यह ससुरजी की महुवारी वाली ज़मीन। किसी गरीब को फुसला-बहकाकर उसकी हैसियत हड़प लेना एक पाप, कन्या के लिए संकल्प कर लोभ में पड़ जाना दूसरा पाप,···अच्छा हुआ यह ज़मीन रामरूप से नहीं सटी। हालांकि आज मदद के प्रस्ताव के साथ उस दान वाले प्रस्ताव को फिर उसके ससुरजी दुहराएंगे।···नहीं, अब रामरूप के मन से उस ज़मीन की लालसा जड़ से निकल गयी है। अब नहीं। अब ससुरजी उसे बख्श दें, यही बहुत है। वह जी कड़ा कर कह देगा, नहीं, अब वह यह सब नहीं कर सकता। गोहार वाली लाइनें अब बिगड़ गयी हैं। वह अब एकदम असमर्थ है। वह गोहार नहीं जुटा सकता। हां, अपने शरीर से वह पीछे नहीं हटेगा। उनके पीछे डटकर खड़ा रहेगा।···लेकिन लाठी चलाना उसके वश का नहीं।

रामरूप पहुंचा तो कोट पर वाले पाकड़ के पेड़ के नीचे एक दल के लोग गा रहे थे—

> बिना नन्दकिशोर होरी मो कासो खेलों।
> आम की डाली कोइलिया, बन में बोलेला मोर,
> आवन-आवन कहि गये, बेलमे कवनी ओर।

दलों की तुमुल-ध्वनियां इस प्रकार एक में एक मिल जातीं कि पद साफ सुनाई नहीं पड़ रहे थे परन्तु परिचित होने के कारण रामरूप को यह कठिनाई नहीं थी। उसके गांव की अपेक्षा यहां बाजा, विशेषकर ढोल अधिक बज रहे थे। इसीलिए कठिन धूमगज्जर से कान के परदे धड़क रहे थे। दूसरी ओर उसके ससुरजी की पट्टी के लोग संत कवि भीखा साहब का एक होरी-पद गा रहे थे—

> एक पुरुख पुरान चहूं जुग में,
> मिलि आतम राम खेले होरी।
> रंग लगे फगुआ रस बसे हो
> माया-ब्रह्म दुनो जोरी।
> जग भरि पंथ कर्म अरुझे हो
> सबही कहे मोरी-मोरी।

राम पदारथ भूलि परे हो,
हाथ लियो भ्रम की झोरी।
जोरि जुगुति रसभेद पाइके,
सुरति निरन्तर रस बोरी।
बाजत अनहद ताल पखाउज,
नाचत सखिन अवध खोरी।
सतगुरु सबद अबीर कुमकुमा,
भाव भगति भरि-भरि झोरी।
भीखा दिव्य दृष्टि से छिरके,
पलकन नीर चुए ओरी।

उठते-गिरते झमाझम ताल पर चलते इस गम्भीर पद के मनोरंजक गायन को सुनकर रामरूप क्षण-भर के लिए सबसे कटकर कहीं खो गया। इसी प्रकार तुलसी, सूर, कबीर, भीखा और बुलाकी आदि सन्तों के मार्मिक पद उसके यहां भी तो होली में गाये जाते हैं। क्या उद्देश्य है इस प्रवृत्तिमूलक उल्लास-पर्व के अवसर पर इस प्रकार के निवृत्ति-प्रधान गीतों के गायन के पीछे? उसने सोचा, इन पर्वों और त्यौहारों के पीछे यदि कोई उद्देश्य है तो वह निश्चित रूप से आध्यात्मिक है, अज्ञात, अयाचित, अपरिचित और अपरिभाषित। भौतिक स्तर पर हम उसकी कोई व्याख्या नहीं कर सकते। उसका धर्म साधना और मोक्ष सम्पृक्त होना, उसके पीछे लगी प्रतीकात्मक अनुश्रुतियां, आस्थावादी स्वरूप और नैसर्गिक रोमांच सब साक्षी हैं कि मात्र जागतिक या सामाजिक उद्देश्यों तक ही इन पर्वों की सीमा नहीं है।

रामरूप की चिन्तनधारा को खंडित किया एक ज़बरदस्त अभिवादन ने। 'प्रणाम गुरुजी।' उसने देखा, सामने एक लम्बे कद का लडका खड़ा है, सिर के बाल, खत, पैंट-बुशर्ट और जूता सब मे से होकर उभरती एक खास पहचान और उस पहचान के बाद किसी और पहचान की ज़रूरत नहीं पड़ती। ज़रूरत पड़ी भी नहीं, लड़का कहता गया,'···चलें वहां बैठें। खड़े-खड़े क्यों तकलीफ कर रहे हैं? आयें···।' और रामरूप को जाना ही पड़ा। दस कदम पर एक झोंपड़ी में दो चारपाइयों पर वैसे ही दस लदे थे। जाते ही सब खड़े हो गये और उन्होंने अति विनम्र प्रणामों से गुरुजी को गद्‌गद कर दिया। एक ने झुककर चरण छू लिया। 'अरे तुम? भुवनेश्वर? कहो क्या हाल-चाल है?'

'आपकी कृपा से सब ठीक है। मां के मुंह से अभी-अभी सुना कि आपका पदार्पण हुआ है तो बहुत खुशी हुई। आपको खोजते हुए हम लोग यहां आए।··· हम लोगों ने आज रात में एक सभ्य होली-मिलन का कार्य-क्रम बनाया है। आपको उसमें सम्मिलित होना है।···इस गंवारू-गला-फाड़ गाने में क्या है जो

आप इतने ध्यान से सुन रहे थे।'

रामरूप ने देखा, कहीं से एक कुर्सी आ गयी और तब उन सब के पूर्ववत् चारपाइयों पर लदते-लदते उसे भी कुर्सी पर आसीन हो अपने लायक साले साहब को सम्बोधित करना पड़ा। उसने कहा—

'बड़ी खुशी है कि होली-मिलन जैसा नागरिक कार्यक्रम इस शुद्ध गांव में आप लोगों ने योजित किया है किन्तु इस पाकड़ के नीचे यह जो अनौपचारिक होली-मिलन का सांस्कृतिक कार्यक्रम सम्पन्न हो रहा है, इससे अधिक रोमांचक और आह्लादक कोई और कार्यक्रम हो सकता है, ऐसा मैं नहीं सोच सकता। आप इसे गंवारू-गलाफाड़ कहकर उपेक्षित क्यों कर रहे हैं? इसके मर्म में प्रवेश तो करें...।'

'इस मृत त्यौहार की जड़ परम्परा पालन में क्या मर्म निहित होगा सर? सामाजिक विघटन ने त्यौहारों को तो तोड़-मरोड़कर रख दिया। अब लकीरों के ढोल-झांझ पीटने को हम और क्या समझें?' भुवनेश्वर अर्थात् मगनचोला ने कहा।

'आपका कहना ठीक हो सकता है', रामरूप बोला, 'किन्तु जहां तक मेरा ख्याल है सामाजिक विघटन और त्यौहारों के टूटने में सम्बन्ध तो है परन्तु वह दुतरफा या एकतरफा कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं है। वास्तव में इन दोनों प्रक्रियाओं में समानान्तरता है और दोनों को प्रभावित करने वाली यह सत्यानाशी अर्थमूलक दृष्टि है, जिसने सांस्कृतिक धरती को बंजर कर दिया...।'

रामरूप ने देखा, जब उसने अर्थमूलक दृष्टि की आलोचना की है तो कुछ ने चौंककर उसकी ओर देखा है और कुछ ने आपस में आंखों-आंखों में ही कुछ बात की है। रामरूप कहता गया—

'भरे परिवारों में रहकर माता-पिता, पति-पत्नी और भाई-भाई जैसे स्वीकृत सम्बन्धों की भीड़ में रहकर भी आज का आधुनिक आदमी अजनबी और अकेला है। आजीविकार्थ दूर-दराज के नगरों में प्रव्रजित मध्यवर्गीय आदमी पर्वों पर किसी आदिम खुशियाली के नशे में परिवार से आकर जुड़ता अवश्य है परन्तु उसका पुराना सांस्कृतिक नशा जो नये सामाजिक यथार्थ से टकराता है और उससे जो एक नयी उखड़ी मानसिकता का प्रादुर्भाव होता है उसी के प्रभाव से हमारे त्यौहार मृत और जड़ परम्परा मात्र जैसे लगते हैं।'

'हम लोगों के प्रस्ताव को आप अपनी इस गम्भीर बहस की आंधी में उड़ा मत दीजिए। हम लोग उसकी मंजूरी चाहते हैं।' एक लड़का बोला।

'तो भाइयो, रात के लिए तो विवशता है। गांव पर जाना है। मेरी हार्दिक शुभकामना...।' कहते हुए रामरूप ने बीस रुपये का एक लाल पत्ता निकालकर लड़कों की ओर खिसका दिया।

'अजी, यह शुभकामना ही क्या कम है ? धन्यवाद गुरुजी !' कहते हुए एक ने हाथ बढ़ाकर नोट इस प्रकार हस्तगत कर लिया जैसे उपस्थिति से अधिक इसी की अपेक्षा थी। रामरूप ने स्पष्ट अनुभव किया, लड़का नोट लेने के लिए बढ़ा तो उसके चाहते हुए भी मदिरा-गंध छिप नहीं सकी। गंध उसे बहुत अखर गयी। इनके बाप लोग वहां अबीर-गुलाल में डूबे सारे गांव को ही वृन्दावन बना 'ब्रज में हरि होरी मचाई' की लाइन पर परम मर्दानगी से मैदान मे जूझ रहे हैं, पसीना बहा रहे हैं, गला फाड़ रहे हैं, पागलों की तरह चीख-चिल्लाकर भीतर का कूड़ा-करकट बाहर निकाल रहे हैं, विकारमुक्त हो नये साल के लिए नयी ऊर्जा ग्रहण कर रहे हैं और नयी पीढ़ी के ये गंवई बालक नारी सुलभ सुकुमार सज्जा ओढ़े एकान्त में होली मिलने के बहाने खाने-पीने के जोगाड़ में लगे हैं।...ओह, रामरूप तुमको अभी पता नहीं दुनिया कितनी तेजी से कितने आगे गयी। सुबह तुमने मनीजर का गाना सुना, 'पनिया भरन कैसे जाऊं...।' तो वह संगीत उछल आया था कि उसे आज पेंशन वाला पैंतालीस रुपया मिलना था। आज ही गांव के पोस्ट मास्टर ने देने के लिए कहा था। नियमानुसार पैसा लेकर हनुमानजी के मन्दिर पर दर्शन करने गया। वहां से लौटते समय नन्दकिशोर पाण्डेय के द्वार पर बैठी इसी मगनचोला की चंडाल-चौकड़ी के हत्थे चढ़ गया। बेचारा मनीजर और उसकी गांठ के वे सारे पैसे जैसे एक मैजिक शो में उड़ गए। जब आंखों से देखा नहीं तो किसका नाम ले ? पीठ पीछे की गयी किसी की टिप्पणी ज़रूर उसने सुनी...हनुमानप्रसाद के खाते में मरने पर मन्दिर बनवाने के लिए जमा होने की जगह इस पवित्र होली-मिलन-फंड में तुरन्त पुण्य-लाभ के लिए दान करना अधिक अच्छा है। और यह पुण्य-लाभ का सिलसिला क्या पिछले दिनों से, जब से 'नेताजी' प्रयागराज से आए कभी किसी दिन टूटने पाता था ? होली-मिलन-फंड ज्ञात से अधिक अज्ञात प्रभावी सिद्ध होता था। आज किसी का मुर्गा तो कल किसी का बकरा और परसों किसी के द्वार पर रखा सरसों का बोरा छू-मन्तर हो जाता। हल्ला होता, हाय-हाय मचता. फिर सब लोग खून का घूंट पी चुप हो जाते। कौन बर्रे के छत्ते में हाथ डाले। बनिया महाजन लोगों के नाक में दम है। रात-रात भर 'जोगानी' और 'जोगीड़ा' की पार्टी घूमती। फटहे-फटहे 'कबीर' बोले जाते। किसका कौन 'पद' में क्या लगेगा, कोई विचार नहीं। होली में ठीक तो है परन्तु मस्तीभरे मनोरंजन से अधिक स्वार्थपूर्ण फंड-वसूली की कड़ाई के लिए क्या कहा जाय ?...'इतना देना पड़ेगा।' हुक्म सुनाकर अच्छे लाल मारता ढोल पर हाथ और मगनचोला खुद उछलकर बीच में आ जाता—'जोगी जी, चुप्पे रहि जा। सुन ले मोरी बानी, नहिं तो भरो जोगिन का पानी।' फिर नया जोगीड़ा बनाकर कहता—

कौन जो साला 'नाहीं' करता ?
कौन ससुर इनकार ?
किसके माथ सनीचर आया ?
किसको 'फंड' नहीं स्वीकार ?

फिर होहो-होहो के तूफान के साथ 'सारा-रा-रा सारा-रा-रा···अब मज़ा है दो घड़ी का···अब बजाओ नागड़ धिन्ना···जोगी जी, धीरे-धीरे, नदी का तीरे-तीरे।···सारा-रा-रा, सारा-रा-रा···।' के साथ वह तूफान मेल रात-रात भर नधती है कि होली नहीं 'लिहो-लिहो' की डकैती में सारा गठिया गांव हिल जाता है।···अरे भाग रामरूप, तू तो सस्ते में छूट गया। हां, ज़रा मनचित लगाकर सुनो, ऐसा लगता है कि तुम्हारा नेता साला कुछ तुमसे विशेष बात कहना चाह रहा है। क्या कोई गहरे भेद की बात है ? राम जाने !

३१

लोहा इतनी जल्दी बज जाएगा, रामरूप को उम्मीद नहीं थी और न ही उसे ऐसी कल्पना थी कि सारा गांव एक साथ इस प्रकार कई-कई पागलपने में फंसकर जानवरों की तरह भिड़ जाएगा। अभी तो उसके मस्तिष्क से गठिया की रस-वर्षिणी गायन गूंज मिटी नहीं थी कि यह अनरस का भीषण कोलाहल महुवारी में उतर आया। वापस आने के दूसरे दिन रात में जब कि वह गहरी नींद में सो रहा था और रात उतर रही थी तभी किसी ने सांय-सांय बोलकर उसे जगाया। देखा, भीम खड़ा है।···अभी भुसहुल-घर खोल देना है। उसमें 'लोग' रहेंगे। किन्तु भुसहुल तो अभी उजड़ा पड़ा है। धरन टूट गयी है। विवाह में ऐसा फंसा कि छाने का मौका नहीं मिला। हां, बैलों के बांधने वाला घर खाली है। 'लोग' उसमें समय काटें। मगर कौन लोग ? कितने लोग ? ···भीमवा और सांय-सांय कहता है, "अपने बाबू साहब की गोहार के लोग हैं। पचास-साठ हैं। लाठी, भाला और कट्टे से लैस। बाहर से बुलाये गए हैं। किसी को पता न चले। कल खुबवा वाली परिया पर सुबह हम लोग कटिया लगावें। खबर है कि कल नवीन भी उस खेत पर कटिया लगायेगा। यदि वह आया तो पहले कहा-सुनी और साधारण रोक-छेंक होगी। मामला नहीं सलटेगा तो 'इन लोगों' को इशारा कर दिया जायगा। खेत इन्हें पहिचनवा दिया गया रहेगा।'

'मगर वे लोग हैं कहां ?' रामरूप ने पूछा।

'मैं खबर देने की गरज से कुछ पहले आ गया। वे सुग्रीव के साथ पहुंचना ही चाहते हैं।' उसने कहा।

'सुग्रीव ?' वह चौंक उठा और एक अत्यन्त छोटे क्षण में विशाल कोइली-

कथा उसके भीतर कौंध गयी। आ तो गया चैत और आ धमका नवरात्र।···किन्तु हाय, कल की सत्यानाशी सुबह पता नहीं कितनी रक्तरंजित होगी और पता नहीं क्या होगा? उसके आगे बाबू हनुमानप्रसाद का वह आंखों में चुभता-सा चित्र उभर आया जब दम साधकर उन्होंने अत्यन्त गम्भीर भाव से कहा था—बेटा, तुम्हें चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं। 'लोग' तैयार हैं। यह सब मेरे जिम्मे है। बस, तुम अपने गांव को सहेज लेना। सिर न झुके। इसीलिए तुम्हें याद किया। मेरा है भी क्या? सम्पत्ति तुम्हारी है।···दुष्ट कहीं का। सिर कटाने के लिए कैसा झूठा चारा फेंक रहा था। बाप-बेटे दोनों एक से बढ़कर एक नम्बरी। वह साला चुनाव का जाल फेंकता है। उसकी पार्टी में आ जाऊं तो सोसाइटी वाले ऋण का मामला रफा-दफा करा देगा। बात को कितना घुमा-फिरा कर कहता है। और क्या एक ही जाल? नहीं, वह महुवारी-स्टेशन मार्ग के लिए चिन्तित है। अपनी सत्ताधारी पार्टी के सड़क-विरोध के प्रति चिन्तित है। वह मुख्य मन्त्री को स्थितियों से अवगत करायेगा। नये सिरे से स्थितियों का जायजा लेगा। चार दिन का लौंडा चमचागिरी कर कितनी ऊंचाई से बोलने लगा। उन संकेतों का क्या मतलब? क्या रामरूप इतना नादान है कि समझ नहीं रहा है?

मजमा धीमे-धीमे दबे पांव भी आ रहा हो तो क्या हुआ? उसकी आहट मिल जायगी। रामरूप चौंककर खड़ा हो गया। बैलसार खोलना क्या था, वह पहले से खुला था। उसने देखा, उन अपरिचित प्रेतों का नायक सुग्रीव नहीं बीरपुर का सालिका है। तो, सुग्रीव कहां गया? रामरूप अपनी चारपाई के पास मूर्तिवत् खड़ा रहा। भीम उन्हें लेकर सीधे बैलसार में चला गया। क्षण-भर बाद सुग्रीव की शक्ल उभरी। उसके पीछे चार भारवाहक भूत थे। एक के सिर पर एक दरी में लिपटा लाठियों आदि का बोझ था। रास्ते भर अस्त्र-शस्त्र छिपा आया और यहां दरी चट बिछाकर बैठने के काम में आ जायेगी। ठीक हुआ, इस रात में अचानक कहां से बिछौना जुटता? शेष के सिर पर, रामरूप ने अनुमान किया, चिउड़ा, लाई, गुड़ आदि के गट्ठर होंगे। पहले एकाध बार भी ससुरजी के लिए यह सब सुकर्म झेलना पड़ा है। इस बार वह संयोजक नहीं, मात्र सहायक है। अब उसे तत्काल पानी और लोटा-गिलास की व्यवस्था कर छुट्टी पाना है। नहीं, ये लोग गिलास से नहीं, लोटे से चिरुआ लगाकर पानी पीते हैं, गटर-गटर कितने सज्जन हैं, मित्र के दुख से दुखी हो नींद हराम कर सिर हथेली पर ले निकल पड़े। कितने परोपकारी और शान्त हैं। पूरी भीड़ बैलसार में निःशब्द समाकर जम गयी। इतनी शान्ति से तो उसमें बैल भी नहीं बैठते हैं। रात में जब कि सारा संसार सोया है ये जगते हुए प्रशान्त युयुत्सु-योगी क्या सचमुच दिन में चरम अशान्ति के जनक हो तुमुल-कोलाहल कलह के बीच लोगों के मोक्ष-मार्ग की अगुआई करेंगे? और उस पुनीत कार्य में इस मास्टर का हार्दिक सहयोग होगा?

धिक् रामरूप। इस मूल्यहीनता की मिथ्या जकड़बन्दी से क्या कभी मुक्त हो सकोगे? कब तक दुष्ट और अवांछित ग्राम शनीचरों के चक्र में तुम ऊब-ऊब अवश नाचते रहोगे?

रामरूप मन-ही-मन मना रहा था कि नवीन खुबवा वाले पचबिगहिया को काटने या रोकने न आवे। झगड़ा टल जाय। मगर मनाने से क्या होता है? होनी होकर रहती है। रामरूप को आग में कूदना पड़ा। हां, वह आग वहां न लगकर नयी आग अचानक सीरी भाई के खेत पर उसी सुबह धधक उठी। मालूम हुआ, दो घड़ी रात रहते दीनदयाल ने कटिया लगवा दिया है। सीरी भाई की छोटी लड़की आशा दौड़ती आयी, 'भाई ने भेजा है कि मार लगी है। बाबूजी और भैया लाठी लिये दौड़ते हुए खेत पर गये हैं।' चल रामरूप, ससुरजी के दुश्मन से लड़ने से पहले उनके दोस्त से भिड़ ले। सम्भव है अपने गणों को यहां भेजकर वे वहीं हों।

रामरूप का अनुमान सही निकला। बाबू हनुमानप्रसाद कन्धे पर दुनाली टांगे वहां सीरी भाई और दीनदयाल के बीच पंचायत कर रहे थे। और ऐसे समय में जब वे अपनी बंदूक लेकर निकलते हैं किसुना उसे टांगे रहता है किंतु आज उसका बोझ वे स्वयं ढो रहे थे। उसे देखते ही बोले—

'सिर फुटौवल से क्या फायदा? मैं कहता हूं, दीनदयालजी बोझ को अपने खलिहान में अभी अलग रखेंगे। दो दिन के भीतर बाबू जमुना प्रसाद को बुलाकर हक-पद समझ लिया जाएगा और बोझ जिसका होगा वह ले जाएगा। अब सब लोग अपने-अपने घर जायं।'

रामरूप जल उठा। उसने कहा, 'इस तरह पंचायत कर इस गरीब सीरी भाई को लुटवाने की सलाह मैं नहीं दूंगा।'

हनुमानप्रसाद को उम्मीद नहीं थी कि रामरूप उनके आगे इस प्रकार बेलौस हो जबान खोलेगा। ट्रेक्टर नाधकर दीवानजी, सभापति, नन्द किशोर पांडेय और अपने दामाद आदि बीस-पचीस लोगों के साथ उन्होंने महुवारी के लिए प्रस्थान किया तो उन्हें यह पता नहीं था कि उनका यार दीनदयाल आज ही रास्ते में लोहा लिये मिल जाएगा। लोगों का जमावड़ा देख अपने साथ के लोगों को आगे भेज वे चले आये। सीरी भाई के मेहपुर वाले दबंग रिश्तेदार बाबू जमुना प्रसाद को वहां मौजूद देख उन्होंने पंचायत की गोटी फेंकी। होती चाहे जितनी गलत है किन्तु गांव में पंचायत के प्रस्ताव पर विरोध का स्वर बहुत कम उठता है। जमुनाप्रसाद ने कुछ सोच-समझकर हामी भर दी। बाबू हनुमानप्रसाद का मन क्यों तोड़ें? और साथ ही उन्हीं ने पंच के लिए बाबू साहब का नाम प्रस्तावित कर दिया। जिसके बल पर सीरी भाई यहां मुकाबले में आये वहीं पंचायत की बात करता है तो वे क्या करें? सिर झुका लिया।

इतने के बाद रामरूप के क्षुब्ध होने का कारण उसका ताजा अनुभव था। गांव का कोई घड़ियाल पंच बन कहां शिकार के प्रति न्याय बरतता है? उसी के मामले में क्या हुआ? कहां बोझ देता है दयानाथ पाण्डेय उसे? यह और बात है कि इसी पैंतरे पर दीनदयाल और उसमें कुछ अनबन हो गयी होगी और वह आज यहां नहीं दिखाई पड़ रहा है। उसके ससुरजी किससे कम लुटेरे हैं? सेठ और महंथ की ढाई हजार की दाबी तो अभी हाल में ही उस बड़े पेट में समा गयी है, हर साल न जाने कितने ऐसे झगड़ों की फसल इस न्यायाधीशजी के घाट लग जाती है। फिर उसका यह दोस्त दीनदयाल तो लुटेरेपन में उनसे कई गुना चांड। तब क्या उसके खलिहान में गया बोझ वहां से हिल सकेगा? उसे आश्चर्य था कि बाबू जमुनाप्रसाद ने स्थिति को जानते हुए भी कैसे बाबू साहब को चुपचाप पंच मान लिया? क्या गरीब किसानों को लूटने के सन्दर्भ में गांव-देहात के सभी मोटे-मोटे धनी किसान बाहर से भिन्न दीखते हुए भी भीतर से एक हैं? वह यहां प्रत्यक्ष देख रहा है। बाबू जमुनाप्रसाद तनकर खड़े होते तो दीनदयाल घुटने टेक देता। किन्तु ऐसा हुआ नहीं। इस कराल करइल से सभी तरह देते हैं तो क्या रामरूप भी जीती मक्खी निगल जाय? इसी आवेश में उसने विरोध खड़ा कर दिया।

विरोध का तड़ाक-से उत्तर दिया गजिन्दर ने—

'तो फिर अपने सीरी भाई को फायदा पहुंचाने के लिए दम हो तो आगे बढ़ो...।' लेकिन गजिन्दर को तत्काल ख्याल आया कि बाबू हनुमानप्रसाद यहीं मौजूद हैं। उसे चुप रहना चाहिए। वह दुनिया में सिर्फ इसी एक व्यक्ति से दबता है। उसके खामोश होते ही भीड़ में एक विचित्र तरह का दमघोंट मौन छा गया। मौन तोड़ा हनुमानप्रसाद ने। बोले, 'मुझे अधिक मौका नहीं है। मेरी चोटी में तो खुद आग लगी है। मैं अब चलूंगा। मेरा लड़का पंचायत नहीं मान रहा है तो मेरी प्रार्थना है कि वही रास्ता निकाल दे।'

'मैं कौन हूं रास्ता निकालने वाला? मैंने तो सिर्फ अपनी राय दी थी। आप लोग सीरी भाई से पूछिए।' रामरूप बोला।

'यह ठीक है।...तो कहें सीरी भाई, अपने रिश्तेदार बाबू जमुनासिंह के पंचायत वाले प्रस्ताव को आप मानते हैं?'

सीरी भाई चुप।

इधर बाघ उधर भालू। पंचायत मानते हैं तो गया खेत। नहीं मानते हैं तो किसके बूते खड़े हों? "जबरा चोर सेंध में गावे। यहां कोई सरकार नहीं, कोई न्याय नहीं, सभी बलती आग को तापते हैं। सभी मुंह देखते हैं। कोई किसी का और कोई किसी का मुंह देख चुप रह जाता है। सत्य को या न्याय को कोई नहीं देखता। इस मजमे में कौन किसका मुंह देख चुप है, सीरी भाई खूब अनुभव कर

रहे हैं। क्या बोलें ?

'कुछ कहो सीरी भाई तुम भी···। बिना कहे हक-पद भी रोता है।' रामरूप ने कहा।

सीरी भाई ने अपनी लाठी फेंक दी। अपने पुत्र अविनाश के हाथ की लाठी भी छीनकर फेंक दी और उसे खींचकर अपने साथ दीनदयाल के सामने कर हाथ जोड़कर बोले, 'दीनदयाल भइया, हमारे लड़के को और हमको यहीं मार दो कि हम दोनों मर जायं और हमारा सारा खेत तुम ले लो। इतने ही खेत से तुम्हारा काम चलने वाला नहीं है।'

'इस तरह नौटंकी करने से काम नहीं चलेगा। कागज, हक और कानून की बात करो सीरी भाई।' बहुत कठोरता के साथ दीनदयाल ने कहा।

'कागज, हक और कानून यहां क्या कहता है चाचा, उपस्थित इतने लोगों में कौन है जो नहीं जानता है ? कौन नहीं जानता है कि ढाई सौ ऋण देकर जबर-दस्ती तीन बीघा ब-एवज सूद के जोता गया और अदालत में चुपके फर्जी आदमी खड़ा कर रुपये के बल पर रजिस्ट्री करा लिया गया ? कौन नहीं जानता है कि खारिज दाखिल हो गया है ? हां, संभव है एक आदमी है जो नहीं जानता है और उसका नाम है सीरी भाई, क्योंकि उसके पास आज लाठी का बल या पैसे का बल नहीं है।' दीनदयाल को जवाब दिया रामरूप ने।

'तुम्हारे पास तो बल है न···।'

'बल होता तो तुम्हीं चाचा, मेरा डांड काट ले जाते ?'

'मैं काट कहां ले गया ? तुम्हीं ने पंचायत मान ली और पंच के जिम्मे बोझ रखा गया ?'

'बस ठीक उसी तरह हमने भी पंचायत मान ली जिस तरह आज सीरी भाई से मान लेने के लिए कहा जा रहा है। पंच दयानाथ पाण्डेय से जैसे हमको बोझ मिल चुका उसी प्रकार माननीय बाबू हनुमानप्रसाद के फैसले से सीरी भाई को खेत मिल जाएगा।'

'अच्छा तो मैं चला।' कहकर पैर पटकते हुए बहुत तेज़ी से पसीना पोंछते हुए बाबू साहब अपने आदमियों की ओर चले जो कुछ दूर आगे एक पेड़ के नीचे ट्रेक्टर रोककर उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

'अच्छा तो अब बोलो, तुम्हारा क्या इरादा है ?' हनुमानप्रसाद के पीठ फेरते ही गजिन्दर अति उग्र मुद्रा में लाठी से धरती धमकाता रामरूप के सामने आ गया।

'जो तुम्हारा इरादा है वही हमारा इरादा है···।' रामरूप ने उबाल खाकर उत्तर दिया। और जैसे कोई अप्रत्याशित भयानक के सम्मुख होते रोवें खड़े हो जाते हैं उसी प्रकार रामरूप की क्रुद्ध वाणी सुनकर उसके स्वपक्षी पनपनाकर

खड़े हो गए। लाठियों पर हाथ की पकड़ कस गयी। आंखें चौकन्नी हो गयीं। पैंतरों की तजबीजें होने लगीं। लोग सुविधा के लिए आगे-पीछे हटने लगे। लगभग यही स्थिति दीनदयाल के दल में हुई। रामरूप के शब्द तो जैसे चुनौती हैं, जूझने के संकेत हैं। अब सिर की पगड़ी संभाल लो। बिगुल बज गया।

बीच में आ गए बाबू जमुनाप्रसाद। बोले—

'झगड़े से काम बिगड़ेगा। एक बाबू हनुमानप्रसाद से काम नहीं बनता है तो दो और लोगों को आप लोग मान दें।'

'तब मैं पंचायत के बारे में कही गयी अपनी बात वापस लेता हूं और चलता हूं।' रामरूप बोला।

रामरूप के साथ उसके कुछ पक्षधर तत्काल चले आए। कुछ तमाशे का सारांश जानने की और कुछ अब तटस्थ दीखने की मुद्रा में खड़े रहे। गांव के इस धनी नंगे की नज़र में नाहक क्यों विरोधी बन खटकें। दुबरी देवता तो गजिन्दर से ऐसे सटे-जैसे लगे, वास्तव में वे उसी की ओर से ठेंगा चलाने आए थे। उधर के बढ़-बढ़कर बहकते लोगों की हां में हां मिलाते और सुर्ती ठोंकते वे कितने विह्वल थे। सीरी भाई का खेत लुटे या बचे, इसमें उन्हें कोई दिलचस्पी नहीं थी। स्थिति ऐसी ढीली हुई कि स्वयं सीरी भाई को कोई दिलचस्पी नहीं रह गयी थी। वे अब इस प्रकार खड़े थे जैसे घर जाने की इजाज़त चाहते हैं। अविनाश ने छटपटाकर अब उठते बोझों को रोकने की कोशिश की। सफलता नहीं मिली तो वह रोता और बाप को गरियाता घर की ओर चला। बाबू जमुनाप्रसाद को लगा, जैसे वे मूर्ख बन गए, उल्ला हो गए। अब क्या करें ? भगने का भी रास्ता नहीं रहा। हनुमानप्रसाद को देख ज़रा-सा ढीला पड़ना कितना अपमानजनक हुआ। लजाते-लजाते उन्होंने सीरीभाई से कहा, 'घबराने की बात नहीं। दस गांव के दस सरदार लोगों को बुलाकर बटोर करूंगा। छोड़ूंगा नहीं। आज गड़बड़ हो गया। आप घर जायं। आपका नहीं अब यह मेरा मामला है।' और वे भी अपने लोगों के साथ मेहपुर की राह लगे। दीनदयाल उनका जाना देर तक देखता रहा और मुस्कराता रहा, 'इसी को कहा जाता है कि छोटे गांव का सरदार न बड़े गांव का बनिहार। टोलाटोली का रहवइया इस सीनियर गांव महुवारी में आया था गोहार करने ! घोड़ा कहीं का।'

इधर हनुमानप्रसाद ने खेत पर आकर कटिया लगा दी। बनिहार काफी जुट गए थे। ऐसे झगड़े वाले खेतों पर कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कोई कटिया लगाने वाला पक्ष अपने को कमज़ोर पाने लगता है और ऐसी आशा हो जाती है कि वह बोझ सकुशल अपने खलिहान में नहीं ले जा पाएगा तो वह 'लुटइया' की घोषणा कर देता है। बनिहार जो जितना काटता है, लूट ले जाय। अब प्रतिपक्षी लड़े बनिहारों से ! यही कारण था कि खेत में काटने वालों का

मेला उतर आया था। कहीं लुटइया हो ही न जाय। सुग्रीव और किसुना को लेकर हनुमानप्रसाद खेत पर रह गए। बाकी लोग गांव में चले गए। कुछ लोग रामरूप के दरवाजे पर कुछ दीनदयाल के यहां। वहीं से टोह लेते रहेंगे। खेत पर मजमा बैठाकर हनुमानप्रसाद अपने को दुर्बल या भयग्रस्त क्यों दिखने दें? इसीलिए मुख्य मजमे के लिए बैलसार की खाई में पोजीशन लेने की व्यवस्था कर दी गयी। रामरूप के घर से गोंयड़े के उस खेत तक बेतार के तार फिट हो गए। लोग हैं कि बाहर से निश्चिन्त, भीतर से चौकन्ने। खानदानी दुश्मन को छोटा नहीं समझना चाहिए।

पांच बिगहा खेत तावड़-तोड़ चलते इतने हाथों की चोट खा कब तक अड़ता? कब तक खड़ा रहता? बनिहार अब बोझ बांधने की तैयारी कर रहे थे कि चिथड़े में लिपटे एक छोटे लड़के के साथ खुबवा आया, रोता-चिल्लाता और पागलों की तरह हाथ-पैर नचाता। आकर हनुमानप्रसाद के आगे लोट गया। आंखें बन्दकर हाथ-पैर पीटते तथा सिर धुनते हुए बकता रहा, 'बोझ नहीं जाने दूंगा।···हमारा खेत छोड़ दें।···हमारी भैंस दे दें।···अन्याय नहीं फलता है।···हे बरम बाबा, दुहाई।' वगैरह। हनुमानप्रसाद ने उसकी ओर देखा भी नहीं। हां, गांव के लोग जो सीरी भाई के खेत के 'तमाशे' से लौटे थे, इस तमाशे पर जुट गए। कुछ लोग कहते, 'विना टिकट-फार्म के खेत छोड़ने की लोटपोट वाली दरख्वास्त हवा में उड़ जाएगी खुबवा।' कुछ लोग पूछते, 'तुम्हारे समधी नहीं आए?' किन्तु खुबवा अपनी धुन में पागल बना पूर्ववत् चीखता रहा।

खेत कट गया, बोझ बंध गए, वे ट्रैक्टरों पर लद गए। गांव के लगभग सारे ट्रैक्टर पहुंच गए थे। और समय तो बोझ आराम से जाता रहता है परन्तु आज तो हंगामा था न। प्रतिक्षण झगड़े की आशंका थी। कोई आया नहीं तो एक बार खुलकर हुंकड़ खोखी की ध्वनि निकली और मिर्जापुरी हाथ में थामे हनुमानप्रसाद मेंड़ पर खड़े हुए। अब? उन्होंने रामरूप की ओर देखा। उस दृष्टि मे विजयोल्लास था। रामरूप के मुंह से निकल गया—

'वे लोग क्या बोझ के साथ जाएंगे?'

ठठाकर हंस पड़े बाबू हनुमानप्रसाद। बोले, 'पढ़े फारसी बेचे तेल। अध्यापकों की अकल लड़के चर डालते हैं।···अरे जो मौके पर सामने नहीं आया वह रास्ते में क्या हमारा बोझ लूट लेगा?···जाकर सालिका से कह दो, वह हमसे कल भेंट कर लेगा और बाकी लोग एक-एक कर छिटपुट इधर-उधर से निकल जायं।' फिर उन्होंने खुबवा की ओर देखकर कहा—

'इस ससुरे को भी ट्रैक्टर पर बांधकर लाद ले चलो।'

बगल में जमीन पर पड़े और चिल्लाते-चिल्लाते थके तथा मुंह से गाज फेंकते, धूल-मिट्टी में सनकर बहुत बीभत्स-करुण बने खुबवा की ओर देख हनुमानप्रसाद

का आदेश हुआ तो आदेश का पालन भी हो गया। उन्हें याद पड़ा कि इसके साथ एक छोटा लड़का भी था। वह साला कहां भाग गया? मगर बहुत खोजने पर भी वह नहीं मिला। ट्रेक्टर घड़घडाने लगे। उधर से साथ आए लोग लाठी लिये मडगाडों पर बैठ गए। अपने निजी अगले ट्रेक्टर पर बन्दूक लिये बाबू साहब स्वयं बैठे। इस तरह दोपहर से पहले ही इस आशंकित मोर्चे पर रामरूप के ससुरजी की 'एकतरफा' डिग्री हो गयी। उसके पक्षधर किन्तु उसे बधाई नहीं दे सके। पता नहीं क्यों, उसका मुंह बेतरह लटका हुआ था। जैसे कहीं उसकी गहरी पराजय हुई है। इस आतंकित पराजय की बात उसके गांव के लोग क्या समझें? हां, आज वर्मा होता तो कुछ अनुभव करता मगर वह आकस्मिक अवकाश पर है : मूल्यहीनताओं के बीच मात्र जीना होता तो रामरूप घुट-घुटकर जी लेता मगर इस प्रकार उन्हें सक्रिय समर्थन देने की विवशता, बारम्बार प्रवंचित होने की विवशता उसके भीतर हथौड़े की चोट कर रही थी।

बहुत भारी मन से वापस आकर उसने बाबू साहब का आदेश सालिका को सुनाया। मुंह बिचकाकर बहुत भद्दे ढंग से उसने कहा, 'चले गए? बड़े लाट साहब बने हैं? उन्हें यहां आते शरम लगी?...हुंह, टटके पेमेंट होना चाहिए था। क्या सालिका उनका आसामी है जो...।' रामरूप निर्भाव सुनता रहा और हाथ-मुंह धोने भीतर चला। उसका मन कहीं एकान्त में सोने के लिए छटपटा रहा था। उसके भीतर गहरे में कहीं शायद ऐसी भी इच्छा छिपी थी कि चटाईटोला का नवीन कुछ और अधिक लोहचांड़ गोहार के साथ आता और खुबवा का खेत काट ले जाता तो कितना अच्छा होता। उसके बैलसार के वीरगण पिट जाते। उसके ससुरजी भाग खड़े होते। मज़ा आ जाता।...फिर अपनी इस दोमुंही ओछी मनोवृत्ति पर उसे झुंझलाहट भी होती। क्यों उसका चरित्र ऐसा गिरा है कि बाहर से अपने ससुरजी का भक्त और पक्षधर है तथा भीतर से क्षुब्ध विरोधी। उनकी पराजय की कामना करने वाला।...लेकिन उसकी इस कामना मात्र से क्या होता है? भाग्यवान है उसका ससुर। भूत-प्रेतों से सेवा लेता है। रामरूप जैसे थोथे आदर्शवादी उसके आगे सब कुछ भूल दुम हिलाने लगते हैं। ...लाठी की धमकियों की छाया में बाहु-बल से फसल काट ले जाने से अब उसकी शक्ति चौगुना बढ़ गयी। अब कोई माई का लाल क्या खाकर उसके सामने आएगा? बचा बेचारा खुबवा, देखें उसकी क्या दुर्गति होती है? किस घाट लगता है? ट्रेक्टर पर बोझ की भांति बांधकर चला गया।

३२

लेकिन खुबवा मुकद्दर का सिकन्दर निकला। औघट घाट लगते-लगते उसकी

ज़िन्दा माटी एक किनारे लग गयी। बड़ा भारी चमत्कार हो गया। कौन सहसा विश्वास कर सकता है कि महुवारी और गठिया के बीच लगभग अपने ही सीवान में न केवल बाबू हनुमानप्रसाद का बोझ लुट जायगा अपितु कुछ नये किस्म के सधे हुए साहसी बाल-लुटेरे उन्हें धूल चटा देंगे और उनकी बन्दूक तथा गोली-गठा सब धरा रह जायगा। और खुबवा? कटी फसल के बोझ के साथ बंधा-बंधा जब मुक्त होकर खड़ी फसल की तरह झनकने लगा तब उसकी चुनौती स्वीकार करने वाला कौन था? जिस हंसुए से खेत की फसल काटी जाती है उससे आदमी की फसल नहीं काटी जा सकती। खुबवा सूखकर पक ज़रूर गया है मगर वह गेहूं का पौधा नहीं है जिसे बांधकर बोझों के बीच खपा दिया जाता। कहां खपा? बाबू हनुमानप्रसाद ने घोषणा की थी, गठिया ले चलकर पहले तो इसकी खूब मरम्मत होगी, पूजा होगी और उसके बाद 'झऽझऽ काली' (रेल) के आगे फेंकवा दिया जाएगा। किन्तु हुआ यह कि वे स्वयं कमच्छाजी के आगे फिंक गये।

हां, बाबू हनुमानप्रसाद इस वर्ष नवरात्र में करहिया गांव की कमच्छाजी के दरबार में भक्तिभाव से अधिक अपमान के तनावों और कड़वी झेंप से मुक्ति प्राप्त करने के दबाव में गये। प्रति वर्ष सारा काम-धाम छोड़ कम-से-कम नवरात्र के अन्तिम दो दिन तो वे देवी की सेवा में गुज़ारते ही हैं। इच्छा रहती है कि पूरा व्रत-काल वहीं व्यतीत हो परन्तु खेत-खलिहान की अनिवार्यतायें भी इसी समय लगी रहती हैं। कहां यह इच्छा पूरी होती है? इस वर्ष उलझनें अपेक्षाकृत अधिक होने पर भी वे जब नवरात्र आरम्भ होने के एक दिन पूर्व ही बोरिया-बिस्तर और पूजन सामग्री समेटकर एक सेवक के साथ चुपचाप चले गये तो सबने अनुभव किया, लजाकर दस दिन के लिए भाग गया। बेशक वे भाग गये। उस दिन भी लोगों ने कुछ ऐसा ही अनुभव किया जिस दिन उन्होंने कहा, थाने में रिपोर्ट नहीं होगी और मुकदमे से नहीं, मामला फिर आमने-सामने निपटेगा। उनके मित्र महुवारी के दीनदयाल ने टिप्पणी की, जिस प्रकार जोरदार हमला करने के पहले शेर अपने शरीर को पीछे की ओर सिकोड़ लेता है उसी प्रकार हमारा यह करइला शेर देवी के चरणों में दम साधकर नयी शक्ति जोड़ने गया है।

दीवानजी ने इस टिप्पणी पर आपत्ति की। बोले, 'शक्ति की उसके पास कमी नहीं है। समय अनुकूल नहीं रहा। अर्जुन जैसे वीर के संरक्षण में जा रही कृष्णजी की पटरानियों को जंगली लोग लूट ले गये और अर्जुन का धनुष-बाण रखा ही रह गया। कहा गया है, 'मनुज बली नहिं होत है, समय होत बलवान'।'

सचमुच समय ने साथ नहीं दिया था और जीवन में पहली बार बाबू हनुमान-प्रसाद को शुद्ध पराजय का मुंह देखना पड़ा था। उनके खास पुत्र के जिगरी दोस्त और बैरी नवीन के पुत्र अच्छेलाल जैसे चार दिन के लौंडे ने उनकी गोली-बन्दूक

छीन ली थी। उसमें भरी दो गोलियों को हवा में धड़काकर उसने कितने तिरस्कार के साथ बन्दूक उनके आगे फेंक दिया था। हनुमानप्रसाद को आज तक इन प्रश्नों का समाधान नहीं मिला कि वह गोलियों के साथ बन्दूक को भी क्यों नहीं ले भगा? क्यों उन सबों ने उन पर कोई छोटा-मोटा भी प्रहार नहीं किया? क्यों मात्र इधर के लोगों को विवश कर उन सबों का ध्यान बोझ समेट ट्रेक्टर और खुबवा को लूट ले जाने पर ही संकेन्द्रित था? सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह कि ऐसा साहस कैसे कहां से आया? देवी के चरणों में जाकर भी वे उस शर्मनाक दृश्य को नहीं भूल सके जब उसी प्रकार ट्रेक्टर पर लदा-लदाया बोझ बैरी के खलिहान में चला गया और खाली वापस आया तो उस पर लदकर ये लोग अपना काला मुंह लटकाये-छिपाये अपने गांव पहुंचे।

हनुमानप्रसाद को देवीधाम में पड़े-पड़े अखबारी खबरों की याद आती है, अमुक जगह एक हवाई जहाज को लुटेरों ने लूट लिया, अमुक जगह एक बस को कब्जे में कर लिया गया और कहां पहुंचने की जगह वह कहां पहुंच गयी? सो वैसी ही घटना यहां गांव में उन्हीं के सिर घहराई। हनुमानप्रसाद ने एक-से-एक झगड़े देखे, लाठियों की चड़चड़ाहट देखी, उनके बीच से निकलती आग को, उसके धुएं को देखा। जोड़-तोड़ की भिड़न्तों को देखा, लोगों के सिरों को फटते देखा, ज़मीन पर धूल चाटते देखा, कलेजा कड़ा कर स्वयं गैंग को चीरकर और दुश्मन के गोल में घुसकर लोहा लेना देखा, स्वयं लोहे से लोहा बजाया पर ऐसी चटक मैदानी हार नहीं देखी। देवी के मन्दिर के उत्तर ओर स्थित चिलबिल के पेड़ के नीचे पड़े पुवाल पर ढरके बाबू हनुमानप्रसाद बस सोचते जा रहे हैं, सोचते जा रहे हैं। सोच का अन्त नहीं है। जबकि यहां उन्हें एकान्त मिला है। कुटिया की भीड़-भाड़ में ऊब रहे थे। आस-पास के ग्रामीणों ने मेले के यात्रियों के लिए यहां पुवाल डलवा दिया है। इसकी उपयोगिता दिन की अपेक्षा रात में अधिक है अतः स्थान खाली देख हनुमानप्रसाद आ गये। बहुत जोर लगाने पर भी बन्द आंखों में यहां वे देवी का ध्यान नहीं कर पाते हैं। उसकी जगह वही गठिया, वही महुवारी, वही खुबवा और वही रामरूप···घबराकर उन्होंने आंखें खोल दीं। किन्तु यह क्या? वे एकदम चौंककर खड़े हो गये।

सामने हाथ में झोला लिये कोइली खड़ी मुस्करा रही है। रूप-रंग पहले से निखर गया है। छः महीने में कुछ अधिक पुष्ट हो गयी है। हाथों में सोने की चूड़ियां आ गयी हैं। बनारसी रेशम की साड़ी में उभरे शरीर के भूगोल का साश्चर्य निरीक्षण करते-करते हनुमानप्रसाद की दृष्टि मांग के सिन्दूर पर गयी। महाकाली की जीभ-सी लपलपाती वह मोटी भभकती लाल रेखा देख उन्हें स्मरण आया, उनका व्रत चल रहा है।

'तुम कैसे यहां आ गयी?' उन्होंने पूछा।

'हुजूर की तलाश में। मुझे मालूम था कि इस दिन आप यहां अवश्य हाजिर रहते हैं।' कोइली ने जवाब दिया और भौंहों के धनुष पर चढ़ा आखों का एक जबरदस्त तीर छोड़ा।

वार बचाकर हनुमानप्रसाद पैंतरे पर आ गये। बोले, 'तुम्हारी सारी गलती माफ किया…।'

'इतनी जल्दी? बिना माफी मांगे? सिर्फ सामने खड़ी देख कर?' कोइली ने सामने पुवाल पर कुछ दूरी बनाये हुए बैठकर बीच में टोक दिया।

'हां, माफ किया। तुम चाहो तो रामकली के बाद की मेरी दूसरी बेटी बन घर रह सकती हो।'

'फिर से माफ कीजिएगा सरकार, बेटियां घर नहीं रखी जाती हैं। आपकी यह घर की 'रखनी' कहां से कहां गयी और आप कहां की बात करते हैं? बात घुमाकर चाहे जैसे कही जाय भाव नहीं छिपता है। माफी तो मुझे मांगनी थी परन्तु जब वह बिना मांगे मिलने लगी तो मन डर गया है। बाबूजी, आप भवानी से डरिये। मैं सिर्फ आपका दर्शन करने इधर चली आयी।'

'तुम्हें यह कैसे पता चला कि मैं यहां हूं?'

'पुजारी ने बताया कि दखिन ओर वाली कुटिया में आपका आसन है। वहां गयी तो सिर्फ आसन ही था। भगत का पता नहीं था। संयोग से एक आदमी वहां था जिसने बताया कि तमाम मेला पार कर इधर आप यहां पड़े हैं।'

'हां कोइली, मेरा मन इस साल नहीं जम रहा है। बहुत बेचैनी है। अब विश्वास हो गया, मैं बहुत बड़ा पापी हूं। मेरे पापों का अन्त नहीं। देवी का दर्शन कर भी, नहीं कर पाता हूं। मुझे तो यहां तुम्हारे रूप में देवी दिखायी पड़ती है। तुम हमारे घर से रूठकर चली क्या गयी, सारी सुख-शान्ति चली गयी। बोलो, कैसे चली गयी?'

'जहां लोग मुर्दे की तरह सोते हों वहां से कैसे नहीं निकल भागती?'

'रामरूप तो जगा था, तुम्हारा जवान प्रेमी।'

'हमारा प्रेमी तो जेल में था। रामरूप आपके किस द्वारपाल का नाम है, मुझे नहीं मालूम। यदि आपका मतलब उस बेखबर सोये आदमी से है तो राम-राम! ऐसों को ऐसी पहरेदारी सौंपी जाती है? और, बाबू साहेब, हमारे भाग्य में जवान कहां? हमारे प्रेमी तो बूढ़े लोग होते हैं। नये बुढ़ऊ से मिलियेगा? लोटा-सोटा लिये आपके आसन के नीचे बैठे हैं। यह देखिये, मेरे लिए सिन्दूर, टीका, टिकुली, चोटी, चूड़ियां, आलता, शीशा और फिल्मी गीतों की पुस्तक वगैरह खरीदी है।' कोइली झोले से सामानों को निकालने लगी।

'बस करो।…वह कौन कहां का बदमाश है, मैं उसे अभी हवालात में भेजवाता हूं।' अचानक मारे क्रोध के फुफकारते हुए हनुमानप्रसाद खड़े हो गये।

'एक पाप यह और हुआ।' बैठे-बैठे शान्त भाव से कोइली बोली, 'आप व्रत में हैं। इस काल के काम-क्रोध को नेवारिये।···मेरा प्रेमी आप से जबरदस्त भक्त है। इसी प्रताप से इस देवी को आपकी हवेली से उड़ा ले गया। अभी तो सरकार की देवी को उसने हड़प लिया है, मुकाबला होने पर आपका देवता कूच कर जायेगा।'

'मैं उस साले को अभी देखूंगा।'

'देख आइये, मैं यहीं बैठी हूं।' कहकर कोइली ने मन्द मुस्कान का दूसरा जबरदस्त तीर छोड़ा और इसके विष को न झेल पाने की स्थिति में छटपटाते हुए, पैर पटकते हुए, बेसुध-बेहाल-से बाबू हनुमानप्रसाद कुटी की ओर लपके।

लेकिन वहां कौन था? पुजारी ने बताया औरत के साथ एक बूढ़ा आया ज़रूर था और कुछ क्षण अकेले बैठा भी रहा मगर जल्दी ही एक चिलम तमाखू पीकर चला गया। हनुमानप्रसाद दांत पीसकर उलटे पांव वापस। यहां आकर देखा तो कोइली गायब। उसी झोंक में दोनों को पकड़ लेने के लिए जो मेले में घुसे तो एक साधू से टकरा गये। पानी भरी तुमड़ी ज़मीन पर गिर गयी। कहां फुरसत थी माफी मांगने की? झटके से एक बार देख लिया। नहीं, सकल-सूरत और जटा-जूट वगैरह वैसा ही है मगर यह खोरा नहीं। टांगें दोनों सही हैं···अरे हां, उस खोरा का कथन तो तुल गया। कहा था न उस दिन रामरूप के द्वार पर, ईन-बीन-सवा-अढाई-तीन। सो सवा महीने पर ही वह यहां मिल गयी। फिर कहा था, कुछ गड़बड़ है, सो यह गड़बड़ हो गया। हाथ लगकर भी बे-हाथ हो गयी।···चलो हनुमानप्रसाद, अब इस साधु से क्षमा मांग लो। फिर पूछो, कोइली और वह बैरी बूढ़ा दोनों कैसे पकड़ में आयेंगे?···लेकिन समय गंवाने से क्या लाभ? वे इतनी जल्दी मेले से भाग कैसे जायेंगे? कहां भागकर जायेंगे? हर साधु गुनी थोड़े होता है। हनुमानप्रसाद को स्वयं मालूम है यह साधु क्या कहेगा। कह देगा, बच्चा, कौन किसका शत्रु है? शत्रु तो सिर्फ दो हैं, पहला काम और दूसरा क्रोध।···हां कोइली के प्रति काम और उस बूढ़े के प्रति क्रोध हनुमानप्रसाद में है। लेकिन क्या छोड़ने से यह छूटेगा?···एक बार वे दोनों मिल जायं और फिर सदा के लिए मुक्ति। ऐसे चरका पढ़ाकर उसका भागना तो पता नहीं कितने जनम सालता रहेगा।

असमंजस के क्षणों को लांघ हनुमानप्रसाद फिर एक ओर झपटे। दक्षिण ओर निगाह गयी। जहां ऊंचे चबूतरे पर मन्दिर के पार्श्व में वृक्ष के नीचे हज़ारों वर्ष पुरानी यक्ष-किन्नरों और अप्सराओं के साथ शालभंजिका आदि की खंडित-अखंडित मूर्तियों की ढेरी लगी है और जहां अक्षत, जल, फूल और सिन्दूर आदि से उनकी पूजा करने वाली ग्रामीण स्त्रियों का जमघट लगा है। इस झुंड में तो वह नहीं छिपी है? मन्दिर के उत्तर एक बड़ा भारी जो निर्जन संकरा डीह है और जहां फतहपुर सीकरी से अपनी देवी के साथ लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व संकरवार

वंश के लोग आये थे और बाद में खरवार लोगों ने उस पर कब्जा कर लिया, कहीं उसके ढूहों में तो वह नहीं छिपी है? हनुमानप्रसाद ने बारी-बारी से दोनों जगहों को छान डाला।...नहीं यहां नहीं है। मन्दिर के पश्चिम ओर जो शिरीष, झड़बेरी और चिलबिल आदि का जंगल है उसमें तो कहीं नहीं छिपे हैं?...'हे खग-मृग हे मधुकर स्रेनी, तुम देखी सीता मृगनैनी?' हनुमानप्रसाद को याद आया और जोर की हंसी छूटी। हे राम, तुम्हारा पतन इस सीमा तक हो चुका है? पूजा, व्रत और नियम सब एक मामूली छोकरी के पीछे हवा? कोई इस बेहाल चक्करबाजी को देखकर क्या सोचेगा? यह तो सोचो कि यह मेला अपने गांव देहात से दूर पड़ता है नहीं तो अब तक कितने लोगों को उत्तर देने में कितना झूठ बोलना पड़ गया होता?

हनुमानप्रसाद का चित्त कुछ शान्त हुआ। वे धीरे-धीरे उस ओर बढ़े जिधर मन्दिर के सामने ग्रामीणों की सघन भीड़ के भीतर घांटो और चैता गाया जा रहा था। 'आहो रामा ठूंठी पकड़िया शीतल जुड़-छंहिया हो रामा...' वाले भुड़कुड़ा के सिद्ध संत बुलाकीदास (बुल्ला साहब) का प्रसिद्ध 'घांटो' सुनकर हनुमानप्रसाद को रोमांच हो गया। हल, हंसुआ और कुदाल के साथ कर्मक्षेत्र में जूझने वाले ग्रामीणों के कठिन हाथ आज झांझ-ढोल के उठते-गिरते ताल पर जमे थे। वे जान लड़ा रहे थे और मेले की अपार भीड़ को सात्विक रोमांच से भर रहे थे। घांटो के बाद जब उन्होंने चैता उठाया, 'बने-बने फुलवा फुलइले हो रामा...।' तो हनुमानप्रसाद का मन एकदम लहरा उठा। वे सब कुछ भूलकर उसमें खो गये। तीन-चार ताल के बाद गाने वाले गाना बन्द कर सुस्ताने लगे तो उन्हें याद आया, वे किसी की खोज में निकले हैं।...नहीं, अब उन्हें किसी की खोज नहीं है। संसार माया है। कोइली प्रबल माया है।

एक विचित्र प्रकार की निरुद्वेग किन्तु उच्चाटन की अवसन्न स्थिति में हनुमानप्रसाद चैता गायन वाले गोल के पास वाली चाय की दुकान पर बैठ गये। खूब सफाई से बनवाकर पुरवे में एक चाय ली। और क्या लेते? उनका फलाहार तो आज कुटी में वैसे ही पड़ा रह गया। कहीं एक कदम भी चलने की इच्छा नहीं हो रही थी। मन करता, बैठे-बैठे बस मेला देखें। उनकी आंखों के सामने राम-नवमी के इस ग्रामीण मेले का जीवन्त प्रसार था। उन्हें आश्चर्य हुआ, इस मेले में इतने साल से रहकर भी उन्होंने कभी 'देखा' नहीं। कहां से लौट आया यह मेला देखने वाला ऐसा मन? लौट स्वयं हनुमानप्रसाद भी आये। कितना जबरदस्त वह झटका लगा था। कहां फिंक जाते, क्या ठिकाना? सबे देवी की कृपा है। भक्तों को स्वयं कृपाकर उबार लेती हैं। मन के मैल को धो देती हैं। यह मेला-भूमि धरती पर एक नया ब्रह्माण्ड है। इसके भीतर कोई शक्ति प्रतिक्षण काम करती है और अपने-अपने धारक प्राणतत्त्वों को जाने-अनजाने अनुप्राणित करती

रहती है। इतने लोग कितने-कितने भावों में खिंचे यहां आये। जो दुर्भाव में आये वे भी प्रांगण में प्रवेश करते भीतर से किसी-न-किसी तरह उस स्रोत से जुड़ गये। वह कितनी जबरदस्त जोड़ने की शक्ति है जो हरसाल अगणित लोगों को जोड़ती है। यह मेला स्वयं एक बड़ा भारी जोड़ है। उखड़े लोग किसी-न-किसी से अथवा खुद अपने जुड़ने के लिए मेले में आते हैं।

हनुमानप्रसाद को उस चाय की दुकान पर बैठे-बैठे अपने भीतर एक जबरदस्त परिवर्तन का आभास हुआ। वैर-विद्वेष, प्रतिशोध, क्षोभ और संघर्ष के जिस तनाव ने उन्हें तोड़ दिया था और वे सबसे टूटकर यहां आहत-से पड़े थे, वह कितना ढीला पड़ गया। दांत पीसता और कटकटाता आदमी कहां चला गया? वे अब अपने अन्तस में जैसे हंस-हंसकर सबसे जुड़ सकते हैं, कोइली से, खोरा से, खुबवा से, नवीन से भी। हां, अरे ये सब तो अपने लोग हैं। क्या हुआ कि पराये-से हो गये? कहीं-न-कहीं कोई अपनी गलती है। अपने लोगों को सहेज-बटोरकर न रखना और स्वार्थ के दांव-पेंच में रात-दिन उलझे रहना कितनी भारी मूर्खता है। धन्य हो, कोइली देवी। तुमने हनुमानप्रसाद को बचा दिया। घृणा के मरुस्थल जैसे सूखे-झनकते अन्तस् में तुमने प्रेम की धार बहा दी।···हनुमानप्रसाद को लगा उनके प्रेम की धारा सारे संसार को अपने भीतर समेट लेगी। सबको एक में जोड़ देगी। उनका पूरा संसार देवीधाम का मेला हो जायेगा। कितनी महत्ता है इस मेले की, इस पर्व की? इस टूटे-बिखरे युग जीवन में मेले-त्यौहार की जोड़ने वाली यह विशेषता अब भी बनी हुई है। क्या इसको अनदेखा किया जा सकता है? यह आदमी को समाज से, परिवार से, गांव से, लोगों से और अपने धर्म से, संस्कृति से जोड़ता है। जो इसे आडम्बर मानते हैं उन्हें भी जानना है कि इस धर्म के आडम्बर के भीतर भी कुछ ऐसा शेष है जो ज़िन्दगी के बोझ से टूटे और अपने ही भीतर टुकड़े-टुकड़े हुए आदमी को एक घड़ी के लिए या सब दिन के लिए जोड़-बटोर कर सही-साबूत कर देता है।

अचानक हनुमानप्रसाद को याद आया, जेल में एक दिन जब वे संकट का अनुभव कर रहे थे तो यहां होम कराने की मनौती की थी। वे उठकर और सीढ़ियों को पारकर ऊंचे चबूतरे पर स्थित सामने वाली यज्ञशाला में आये। वहां होम करने वाले पंडितजी बैठे थे। उन्हें एक रुपया थमाया और उन्होंने स्वयं घी देकर होम और संकल्पादि का कार्य चटपट सम्पन्न करा दिया। भस्म का तिलक लगा बाबू साहब ने देवी का दर्शन किया। अपराह्न का समय था। भीड़ छंट गयी थी। लोहे के छड़ के घेरे के भीतर घुसकर देवी के चरणों का स्पर्श किया तो आंखें छलछला गयीं। मां, यह जीव कब तक इस प्रकार मिथ्या व्यामोह में क्लेश पाता रहेगा? अपने चरणों की भक्ति जगा और उसके भीतर की सारी वासना को धो दो, मां!

मन्दिर से बाहर निकले तो देखा साथ आये सेवक के साथ उन्हें खोजते हुए हैरान-सी सूरत बनाए सुग्रीव खड़ा है।

'अरे सुग्रीव, एक समाचार...' आसन पर बैठते ही कोइली वाला वृत्तान्त उन्होंने चाहा कि सुग्रीव को सुना दें परन्तु अचानक कुछ सोचकर दबा दिया। बोले, 'खैर छोड़ो, तुम पहले अपना समाचार बताओ। किसलिए आये हो? क्या यहां भी तुम लोग प्रपंच से मुक्त नहीं रखोगे?'

'प्रपंच से कहां मुक्ति है? दीवानजी ने भेजा है कि बी० डी० ओ० की देख-रेख में महुवारी से स्टेशन तक वाली सड़क की नापी हो रही है। आप जल्दी अधिकारियों से मिल लें और गांव पर चले आवें।' सुग्रीव ने कहा।

'हूं।' बहुत गम्भीरता से हनुमानप्रसाद ने कहा और कुछ सोचते हुए-से चुप हो गये।

'एक खास बात और मालिक...' कहते-कहते सुग्रीव चुप हो गया। वह अब बता देना चाहता था कि बड़ारपुर में रघुनाथ के घर कोइली है क्योंकि इधर कोइली उसे हाथ रखने नहीं दे रही थी। यहां तक कि उसने सब प्रकार के गुप्त सम्पर्क सूत्र तोड़ दिए। गयी तब से कभी मिली नहीं। अब वह फिर बिकने के लिए तैयार नहीं थी। इससे सुग्रीव बहुत क्षुब्ध था। उसने अन्तिम अस्त्र का प्रयोग भी यह सूचना देकर किया कि वह उसके भूतपूर्व मालिकों को सूचना देकर उसे फल्लड़ में फंसा देगा परन्तु इसका भी कोई फल नहीं निकला। प्रथम तो यह कि यह धमकी बेकार थी। इसमें सुग्रीव स्वयं भी फंस सकता था। दूसरे कोइली के भीतर पहले-पहल शीलवान नारी ने जनम ले लिया था। उसके इस नये रूप के प्रति आक्रोश से भरा सुग्रीव उसे किसी भी तरह अब हनुमानप्रसाद से दण्डित कराना चाहता था। परन्तु भेद की बात कहते-कहते उसके भीतर अन्तिम क्षीण आशा जगी, फिर एक बार प्रयास करें, बस एक बार और, शायद पत्थर पिघले। हाय कोइली, बस तू एक बार हाथ लग जाये तो सारी दुनिया छोड़ सुग्रीव जोगी-जती हो जाय। उसने चट बात बदलकर कहा—

'बड़ी चर्चा है कि बबुआ अगले चुनाव में एम० एल० ए० के लिए खड़ा होगा। लोग कहते हैं, निर्विरोध हो जायगा। कौन है जो मुकाबले में खड़ा होगा?'
'अच्छा, मैं खुश हो गया। अब जाओ। मैं परसों जिले पर से होता हुआ आ जाऊंगा। मेरा खलिहान कितने दिन से छूट गया है।'

३३

खलिहान में किसी से बात करने के लिए हनुमानप्रसाद क्षण-भर के लिए रुके, इसी बीच भारतेन्दु और रामरूप सायकिल उठाकर दूसरी ओर से निकलकर ब्लाक

कार्यालय से बाहर हो गये। उन्होने दूर से ही बाबू साहब और दीवानजी को आते देख लिया था। अच्छा हुआ, बात खत्म हो चुकी थी और बी० डी० ओ० को सडक-विरोध की पूरी पृष्ठभूमि समझा दी जा चुकी थी। वर्मा और रामरूप से अधिक उसे प्रभावित किया खोरा ने। पहले तो बी० डी० ओ० ने समझा कि इन अध्यापको के साथ बबुनी बाजार का ही कोई लगडा किसान खलिहान से उठकर चला आया है और देर तक उनकी ओर ध्यान नही दिया। बातचीत के दौरान जब बी० डी० ओ० ने जाना कि यही सज्जन पूर्वांचल विकास मच के प्रथम सम्मेलन के सभापति रहे तो आकर्षण बढा और फिर तो झाड-झखाड के निवासी उस ठोस कवि ने अपनी कविताओ से उसे प्रभावित कर ही लिया।

'आप क्या करते है ?' बी० डी० ओ० ने पूछा था।

'मैं ए० सी० ओ० हू।' बहुत गम्भीर भाव से खोरा ने उत्तर दिया था।

'ए० सी० ओ० ?' उसने चकित होकर दुहराया।

'हा, चकबन्दी वाला नही, मैं सबदबन्दी का ए० सी० ओ० हू।' खोरा ने कहा और चट एक कविता सुना दी—

'खोरा कवि कहते हैं दोनो हाथ जोडकर,
बी० डी० ओ० जी सुन लेवे अपने कान ओडकर।
जुग-जुग तक अमर नाम आपका रहेगा,
सडक जो बनी तो यश आपका चलेगा।
कपटी-कबाडो के कहे मे क्यो आइयो ?
खुद सरकार हैं तो जाच फरमाइयो।'

फिर उन्होने अपनी भाषा मे बताया कि गाव की पार्टीबन्दी के कारण इस जनोपयोगी सार्वजनिक कार्य मे लोग अडगा डाल रहे हैं। चकबन्दी हुई तो दीवानजी ने जान-बूझकर ऐसा चक लिया कि चकरोड के दोनो ओर खेत रहे। इससे चकरोड को जोत-बो लेने मे बहुत सुविधा है। हर साल चकरोड की फसल खाते-खाते लोभ बढ गया है। खेत के बीच से सडक क्या नये सिरे से निकल रही है ? वह तो पहले मे ही कागज मे निकली है। हा, कुछ चौडी होगी तो कुछ खेत भी उनका जायेगा। तो, इस तरह तो सारे काश्तकारो का खेत जायेगा। सबको एतराज नही है तो एक आदमी की अडगेबाजी से यह विकास क्यो रुकेगा ? वे लोग जो यह चिल्ला रहे है कि पेट फाडकर सडक निकल रही है तो यह गलत है। खेत का पेट तो जान-बूझकर उन्होने फडवाया और बीच मे चकरोड लिया, माल मारने के लिए। अब वही घात नही लगने वाला है तो जी छनछना रहा है।

फिर खोरा कवि अपनी मौलिक लोकभाषा मे चार लाइन सुनाते है—

रहि-रहि दीवान का करेजा मे आचा।
मौजा बनकटा मे सडक के बाचा।

सगरी जमीन रउआ चलिके करीं जांच,
खोरा के बाति अइसन झूठ बा कि सांच ?'

'बस, बस। मैं पूरी बात समझ गया' बी० डी० ओ० कहने लगा, 'अब समझने के लिए सिर्फ एक बात शेष रह गयी। यह सबदबन्दी का ए० सी० ओ० कैसा है ? चकबन्दी कैसे होती है, यह तो मैं देख चुका हूं। उसमें रह कर कुछ दिन उसे कर भी चुका हूं पर यह सबदबन्दी तो एकदम अबूझ पड़ रही है। चकबन्दी में तो नक्शा है, स्केल है, गोनिया है, ज़मीन है, जंजीर है, लेखपाल है और कागजात-काश्तकार हैं, इस सबदबन्दी में क्या-क्या है ?'

'जुलमी काम है सबदबन्दी' खोरा का उत्तर होता है, 'इसमें काट-काटकर नहीं बांटने होगा। निज को नापकर कांटा होगा। यहां पर ज़मीन नहीं, हवा है। सांसों के हरूफ को सरकार देखेंगे ? दिखा सकता हूं। सबदबन्दी का ए० सी० ओ० हंसी ठट्ठा नहीं। भीतर के कट्ठा-कट्ठा की पैमाइश की दरकार होगी।'

'आपकी बातें हमारे पल्ले नहीं पड़ीं। इस तरह कहेंगे तो शायद पल्ले पड़ें भी नहीं। अतः कुछ ठोस उदाहरण देकर समझायें।'

'हां, हां कबी जी, ठोस उदाहरण बिना बात जमती नहीं। मुझे भी मज़ा आ रहा है।' वर्मा ने कहा।

'खोराजी के पास कमी कुछ नहीं। बस, आप लोग धैर्य धारण करें।' रामरूप बोला।

'बी० डी० ओ० जी', खोरा ने कहना शुरू किया, 'अपने का ठोस उदाहरण के रूप में सबदबन्दी को जानना चाहते हैं। तो, यही जानिये कि उसमें हवा में उड़ने वाला एह दुनिया का रस नहीं होता है। ओह में का होता है, कुछ पता नहीं होता है। ओह के सुने वाला जरूर कुछ पाता है। बाकी चकबन्दी का चक जइसन कुछ नहीं मिलता है। महुवारी आ स्टेशन का बीचे बननेवाली सड़क जैसी चीज मिलेगी, सब जनता का काम के चीज, एकदम सोझ, सीधी।'

'क्षमा कीजिएगा कवि जी,' बी० डी० ओ० ने कहा, 'एकदम सीधी वाली बात हमको खटकती है। क्या सचमुच आपकी शब्दबन्दी सड़क की तरह नाप-तौल कर सीधी होती है ? हमें तो ऐसा नहीं लगता है। एकदम सीधी तो तब होगी जब आप वर्णों पर ऊपर-नीचे कोई मात्रा नहीं देंगे और बिना मात्रा के केवल वर्णों से आप अपनी पूरी बात कहेंगे कैसे ? भाषा बनेगी कैसे ?'

'बनेगी सरकार। सबदबन्दी का एसीओ का निजी सेक्टर में पधारि के देखिये, ई बिना मात्रा के सबदबन्दी—

खलजन समझ कहब हम जब तक,
चलब अगम मग बसब नरक जग।

हड़पब जब सड़क क हक बड़ बन,
बनब जबर अबरन पर बरबस।
भल अनभल भगवन सब समझत,
तनमन डहकत जग डकडक कर।

···जब तक दीवान जैसे खल लोगों की बातों में आकर उन्हीं के अनुरूप हम भी कहते रहेंगे तब तक ऊबड़-खाड़ब अगम्य मार्गों में भटकते-कलपते रहेंगे और नरक में बसने के लिए विवश रहेंगे···।'

सबदबन्दी सुनकर बी० डी० ओ० अवाक् हो गया। भारतेन्दु और रामरूप दोनों मुसकराने लगे।

'खूब, आपने अपनी सबदबन्दी में महुवारी की सड़क का निर्माण कर दिया।' बी० डी० ओ० ने कहा।

'अब अपने का जमीन पर सड़क बना दीं सरकार।' खोरा ने उत्तर दिया।

'बन गयी।'

'बन गयी ?'

'हां, हमें वचनबद्ध मानें। सही कार्य के लिए हमारे कदम पीछे नहीं हटेंगे।'

'आ 'ठगिनिया' खींचेगी तब ?'

'कौन ठगिनियां ?'

'ठगिनिया माई।···अच्छा एह माई को जानने हेतु सरकार अब हमारे सबदबन्दी के दूसरा सेक्टर में चलीं। आयीं, देखीं कि इहां सिर्फ आ की मात्रा लगायी गयी है—

माया ना पारा।
गारा सारा भारा माता का
आवाजा गारा ता पावा पारा ना
आवाजा दाया ता दाया पाछारा था
माता का मारा गारा सारा मारा
भारा ना पारा
काया का माया का जाया का दाना पा
ताना का गारा टारा जाना
टारा टारा ना।

'इस बार तो पल्ले नहीं पड़ी आपकी यह कूट शब्दबन्दी कवि जी।' बी० डी० ओ० ने कहा।

'कइसे पल्ले पड़ेगी सरकार ? अपने का ओहदा में दोयम हैं न ?'

'क्या मतलब ? यह तो और अबूझ पहेली हो गयी।'

'कोई बूझे बूझनहारा।···अब हम आपको बुझा रहे हैं। अपने का सरकार

हैं बी डी ओ और हम हैं ए सी ओ। ओ माने ओहदा। ओहदा दोनों के पास है। बाकी का बचल? बी डी और ए सी। सरकार तो रंगरेजी भाषा के पढ़वैया हैं। भाषा में ए बी सी डी सीधे-सीधे होता है। पहिला लम्मर 'ए' हमारा, फिर दूसरा लम्मर 'बी' अपने का, फिर 'सी' हमारा तब जाके 'डी' अपने का। अब आप समुझ गइलीं ओहदा में दोयम के मरम ?'

'वाह कवि जी, वाह। लोहा मान गया' बी० डी० ओ० उछल पड़ा। उसने फिर आग्रह किया, 'अब कृपया अपनी उक्त ठोस कविता का कुछ अर्थ बताने की कृपा करें।

'सुनें···सब बैठ जायगा। माया ना पारा। माने हे माता। तुम्हारी माया का पार नहीं है। गारा सारा मारा···माने, इस गंभीर भवजल से गरबीला जन कइसे पार पा सकेगा ? तुम्हारी दया···'

खोरा की व्याख्या चलती रही। व्याख्या का प्रत्येक सम विवादास्पद स्टेशन रोड पर गिरता रहा। देहात के घाघ लोगों की माया पर चोट होती रही और बारबर संकेत दिया जाता रहा कि वे धन-जन के गर्वीले लोग यहां आ-आकर आपको न्याय-पथ से टालने के लिए विवश करेंगे। आप उनके धोखे में आकर टलें नहीं। व्याख्या सुनकर बी० डी० ओ० एकदम जैसे गिडगिड़ा उठा।

'बस बस, अब उस सड़क वाली बात को न उठायें। मैं बहुत लज्जित होता हूं। मैं किसी के दबाव में आने वाला नहीं। आप देखेंगे, सड़क बनेगी और यथा-स्थान बनेगी।···अब कुछ और सुनाइये।'

'कविजी, अपनी वह 'इ' की मात्रा वाली कविता साहब को सुना न दीजिए।' रामरूप ने कहा।

बिना किसी भूमिका के कविता शुरू हो गयी। इस बार सचमुच उस पूरी लम्बी कविता में केवल ह्रस्व 'इ' की मात्रा का प्रयोग था। काफी सुना जाने के बाद सम्भवत: खोरा को स्वयं ही इस बात का आभास हुआ कि श्रोताओं को प्रसंग बता देना चाहिए और बीच से कविता को रोककर उन्होंने बताया कि किस प्रकार अशोक वाटिका में रावण सीता को त्रास देता है और किस प्रकार उसके चले जाने पर त्रिजटा आकर सीता को समझाती है। सीता बारम्बार मूच्छित और हतचेत हो जाती हैं। वे उठती हैं और गिर पड़ती हैं। उनका सारा समय पीड़ा के गम्भीर अन्तर्-संघर्ष में व्यतीत हो रहा है। कविता की अन्तिम तीन पंक्तियों को खोरा विशेष बल देकर सुनाते हैं—

> फिर-फिरि गिरि-गिरि झिरि-झिरि थिरि-थिरि
> सिति क्षिति दिठि विसि बिति इमि दिनि तिनि।
> निसि निधि दिठि दिठि रिटि सिनि बिलिपिहि।

ठीक इसी समय वर्मा और रामरूप को विपक्षी बाबू हनुमानप्रसाद की शकल

खलिहान में दिखायी पड़ी। ब्लाक कार्यालय बहुत ऊंचाई पर बना है, और उसके ठीक सामने ही मैदान में खलिहान पड़ता है। उन्होंने बी० डी० ओ० से विरोध-पक्ष के जल्दी ही आ धमकने की बात बतायी और भरपूर आश्वासन पाने के बाद वे दोनों खोरा को छोड़कर बाहर निकल आये। रामरूप को देखकर पता नहीं बाबू साहब क्या सोचते? उसे बराबर लगता है, वह उनकी आंखों में कांटों की भांति चुभने लगता है। खोरा को बी० डी० ओ० ने स्वयं रोक लिया, वह उन्हें गाड़ी से भेजवा देगा। रामरूप ने भी उनके चलने का आग्रह नहीं किया क्योंकि उसकी सायकिल बहुत भारी चल रही थी और खोरा को बिठाकर लाने में ही वह पस्त हो गया था। इससे एक लाभ और था। वहां बाबू साहब और बी० डी० ओ० के बीच क्या बात हुई, यह खोरा द्वारा ज्ञात हो जाता।

बाबू हनुमानप्रसाद ने आकर देखा, बी० डी० ओ० के पास खोराजी विराज-मान हैं तो उन्हें आश्चर्य की सीमा नहीं रही।…तो भेंट हो ही गयी?

'अरे खोरा साधू, आप इस सरकारी दफ्तर में कैसे पहुंच गये?' उन्होंने बहुत आह्लादपूर्वक कहा और खोरा के पैर छू लिये।

खोरा ने समझा अब यह शैतान पैर पकड़कर यहीं घसीटने या दे पटकने के लिए झुक रहा है और डरकर 'हैं-हैं…'करने लगे। बाद में लगा, मामला कुछ और है। बहुत आश्चर्य हुआ। क्या रहस्य है इस परिवर्तन का? किन्तु उस रहस्य में अधिक देर तक नहीं डूबना पड़ा। स्वयं ही उद्घाटन हो गया। कुर्सी पर बैठते ही करइल महाराज खोरा की ओर मुखातिब हो कहने लगे—

'आपका कहनाम तो सही-सही तुल गया। सवा, अढ़ाई, तीन। मगर, सवा महीने पर ही मेरा 'आसामी' मेरे सामने आ गया। फिर 'कुछ गड़बड़' भी हो गया। कुछ क्या, बहुत गड़बड़ हो गया। सरासर धोखा हो गया। चकमा देकर निकल भगी। तभी से मन में सरधा लगी थी। सरकार के दर्शन हों तो कहें। वह 'कुछ गड़बड़' का योग कब तक चलेगा?…कि मान लें, संसार माया है। मेरा 'आसामी' माया है?…लेकिन नहीं, धोखेबाजियों का मज़ा उसे चखाना ही होगा। आप एक बार और…।'

बी० डी० ओ० हैरान।

रात-दिन साथ रहने वाले दीवानजी की समझ में भी मामला कुछ बैठ नहीं रहा है। क्या हो गया है बाबू साहब को? आये थे हरिभजन को, ओटन लगे कपास? किस प्रकार सुध-बुध खोकर जैसे बक रहा है। इस रामरूप की पार्टी के नेता में ऐसी भगती जगी तब तो खूब काम बना।

खोरा आश्चर्यचकित। रीछ नथ गया है। आरत हो गया है। काम का मोर्चा आसान नहीं। कुछ भी बोल दो तो कुछ-न-कुछ अर्थ तो लग ही जाता है। इसे और फंसाना होगा। फंसा रहेगा तो गांव में चैन रहेगा, सड़क बनेगी। फेंको फिर

लासा, तगड़ा लासा। बोले—

'मनोरथ पूरन होगा राजन्। काहे को धीरज खो रहे हैं।' खोरा ने गंभीरता के साथ कहा।

'तो बताइये न महाराज कुछ...।'

'सुनें, सुनें', बात काटकर खोरा ने कहना शुरू किया, 'रामायनजी में कागभुसुंडीजी कहते हैं, 'मिलेउ गरुड़ मारग मंह मोहीं, कवन भांति समझावहुं तोहीं', सो वही हाल है। यहां क्या कहूं ?'

बाबू हनुमानप्रसाद के भीतर कुछ धक्-से लगा। होश हो गया। कहां बैठे हैं ? क्या करने आये हैं ? क्या ले बैठे ? और चट वह आदमी जो खोरा को देखते ही कोइली वाले सन्दर्भ के दबाव के कारण कुछ देर के लिए अनुपस्थित हो गया था, लौट आया। उसके लौटते ही अब हनुमानप्रसाद हनुमानप्रसाद हो गये। चेहरे पर गंभीर चौकन्नापन टंग गया। भीतर जालिम जमींदार उग आया। राजनीतिक लाइन का बोध पनपना उठा और वे कुटिल हास्य के साथ खोरा को सिर झुका बोले—

'जैसी आज्ञा हो भगवन्। मैं आपके पास आऊंगा। यहां तो ये हमारे बी० डी० ओ० साहब हैं...' कहते हुए बाबू हनुमानप्रसाद बी० डी० ओ० की ओर झुक गये और कहते गये, 'बेचारे कितने नेक है। साहब, एक ज़रूरी काम था आप से। यदि दो मिनट वक्त दें तो...।' कहते हुए बाबू साहब कार्यालय के उत्तर ओर स्थित उनके निवास स्थान की ओर देखने लगे।

संकेत स्पष्ट था।

'दो मिनट की बात क्या ? इतमीनान से यहीं बात होगी। बस आप ही मुझे दो मिनट की छुट्टी दें। मुझे खोराजी को गाड़ी से उनके बाग तक भेजना है।' बी० डी० ओ० ने कहा और उसके बाद यह व्यवस्था एक मिनट में ही सम्पन्न हो गयी। जीप को तो स्टेशन तक आज जाना ही था, रास्ते में यह काम भी हो जायगा।

'तो, ये खोरा साहब बहुत जानकार हैं क्या ?' बी० डी० ओ० ने बात की शुरुआत की। खोरा तब जीप पर बैठ चुका था।

'हां, कुछ आंय-बांय जानता है। पढ़े फारसी बेचे तेल। कुछ ऐसा ही घसगढ़ा जंगली कवि है।...सड़क का सारा झगड़ा इसी बदमाश का लगाया हुआ है।' हनुमानप्रसाद बोले।

'उसमें क्या झगड़ा है, मैं यह नहीं समझ पाया। आप विस्तारपूर्वक बताइये।'

'झगड़ा बस इतना ही है कि वे लोग कहते हैं, सड़क दीवानजी के चक के बीच से सरपट्ट जायेगी और हम लोग कहते हैं, उसे घुमाकर खेत के किसी एक सिरे से निकालो।'

'मतलब झगड़ा नहीं रगड़ा है।'

'यही बात है सरकार।' दीवानजी ने झपटकर कह तो दिया परन्तु तत्काल जिस प्रकार आंखें तरेरकर उनकी ओर बाबू साहब देखने लगे उससे उन्हें लगा कि गलती हो गयी और फिर संभलकर कहने लगे—'और यह रगड़ा उधर से ही शुरू हुआ है।'

'तो मेरे लिए क्या हुक्म है?' बी० डी० ओ० ने कहा।

'आप सड़क घुमवा दीजिए। हम लोग इतनी ही मदद आपसे चाहते हैं।' हनुमानप्रसाद ने कहा।

'इसमें क्या रखा है? यही होगा। यानी वही होगा जो आप चाहेंगे। मैं तो आपका खिदमतगार हूं।' कहते हुए बी० डी० ओ० ने चाय के लिए आदेश किया।

चाय की एक घूंट लेकर बी० डी० ओ० ने बाबू हनुमानप्रसाद से कहा—

'भला सड़क के बहाने आप आ गए। मैं तो स्वयं आपके पास आने वाला था।...मेरे भतीजे की परीक्षा का सेन्टर महुवारी हाई स्कूल पर पड़ा है। वह आपके यहां रहकर परीक्षा देगा। वहां से निकट पड़ेगा।...फिर, बेचारा गणित और इंगलिश में कई साल से फेल हो रहा है...'

'तो इस साल पास होने से उसे कोई रोक नहीं सकता। बस, आप भेज दीजिएगा और निश्चिंत रहियेगा। कहा गया है—वृथा न जाइ देव ऋषि बानी।' कहते-कहते हुंकड़कर खोंखते हुए बाबू हनुमानप्रसाद ने चाय का प्याला उठा लिया।

३४

बाबू हनुमानप्रसाद ने मिर्जापुरी हाथ में साधे सीधे गजिन्दर के साथ एक बार फिर कॉलेज का चक्कर लगाया। बाद में इतमीनान के साथ वे पीपल के नीचे की दुकान पर बैठ गये। उन्होंने सोचा, अब ठीक हुआ। फिर कहने लगे—'इस कॉलेज में नकलबाजी नहीं होगी। यदि होगी भी तो सब को छूट रहेगी। एकदम छुट्टी। जैसे मन भावे लिखो। अरे हां, यह भी कोई बात है? आधे लड़कों को सोर्स देख नकल कराओ और आधे ताकते रहें? सब नकल करेंगे, सबको कराना पड़ेगा। मज़ाक है? इतनी फीस लगती है, इतनी पासकराई लगती है।'

'हाई स्कूल में पासकराई नहीं लगती है मालिक'। पास ही किसी कमरे से एक खांची नकलबाजी के चिट, पन्ने, पोथी और गैस पेपर, जो काम हो जाने पर फालतू हो गये थे, निकालकर कहीं फेंकने के लिए ले जाते हुए और बाबू साहब को देख खड़े हुए चपरासी कपिलदेव ने कहा।

'मुंह पिटाये पासकरायी। मेरी चले तो करिया अच्छर भैंस बराबर वालों

को कलक्टर-डिप्टी बना दूं। पढ़ाई भी डालडा हो गयी। इम्तहान का ब्लेक मार्केट खुला है। क्या होगा पास होकर? पढ़े फारसी बेचे तेल। तो बेच साला तेल, मुझे क्या? मैं काहे को इसके फेर में पड़ू। ई तो यहां सेन्टर हो जाने से रिश्ते-दारियों के जो लड़के दरवाज़े पर टिकने के लिए आ गये, उनके कारण तंग हो गया। ससुरे रो रहे थे, आज गणित का परचा है। अपने यहां के लड़कों को नकल करने दिया जाता है और दूसरे विद्यालयों के बाहर से आये लड़कों पर कड़ाई होती है। तो, ऐसा क्यों? हमारे दरवाज़े पर जो आ गये वे क्यों फेल होंगे? वे भी पास होंगे। वे भी नकलियायेंगे। तो, करो नकल, मैं बैठा हूं।'

प्रिंसिपल ऑफिस के कोने से कक्ष-सहायक भारतेन्दु वर्मा ने करइलजी को देखा और रामरूप को उनके आगमन की सूचना देने कक्ष नंबर सात की ओर बढ़ा। नेहरू विद्यालय के [illegible] चतुरी उपाध्याय के साथ उनकी ड्यूटी थी। कमरे में घुसते ही उसे पता चल गया, कक्ष-निरीक्षकों को बेहद आराम है। अब निरीक्षण किस बात का हो? उन्हें बस घंटा बजने पर कापी बटोर लेनी है। बगल के कमरे से अंग्रेजी अध्यापक जयप्रकाशजी भी आ गए हैं। कोई सरस गपास्टक का क्रम चल रहा है। गप्प का आधार प्रश्न-पत्र में पूछा गया एक हिन्दी का दोहा था, 'साधु हुआ तो क्या हुआ···।' उपाध्याय कह रहा था, 'हिन्दी के कवि भी एकदम मनमाने-मनमौजी होते हैं। जब जो मन में आया लिख मारा। उलटा-पुलटा भी घिस दिया। अब पढ़ने वाला करे अर्थ पर शीर्षा-सन।···यही देखो, एक जगह कहता है कि साधु होना क्या है जैसे खजूर का लंबा पेड़ हो जाना। चढ़ें तो प्रेम रस चखें और गिरें तो चकनाचूर हो जाएं। फिर लिखता है—

'बड़ा हुआ तो क्या हुआ, लम्बा पेड़ खजूर।
पंथिन को छाया नहीं, फल लागै अति दूर।'

एक में खजूर की प्रशंसा कर दी, एक में निन्दा।'

'ठीक कहा उपाध्याय ने', भारतेन्दु ने कहना शुरू किया, 'हिन्दी में एक कवि हैं रहीम। एक जगह लिखते हैं कि कुसंगति में कुशल नहीं है और रहीम के मन में इसका बहुत अफसोस है। फिर उदाहरण देते हैं कि रावण के पड़ोस में बसने के कारण समुद्र की महिमा घट गयी। अर्थात् कुसंग का बुरा प्रभाव अनिवार्य रूप से पड़ता ही है। दूसरी जगह वे ही कवि महाराज अपनी बात काट देते हैं, कहते हैं, उत्तम प्रकृति वालों पर कुसंग का प्रभाव नहीं पड़ सकता। क्योंकि सांपों के लिपटे रहने से चंदन को विषैला होते नहीं देखा गया है। तो देखा यह शब्दों का इंद्रजाल। ···यही तो तुम्हारा हिन्दी-काव्य है रामरूप।···तुम्हारे ससुर करइलजी की तरह। उनका दिव्य दर्शन करना चाहो तो मेरे साथ चलो।'

'कर लिया है। उनका काम हो रहा है। खुद प्रिंसिपल साहब ने घूम-घूम-

कर कह दिया है, कोई गड़बड़ी न हो।'

'वण्डरफुल।' जयप्रकाश ने एक ज़ोर का ठहाका लगाया। भारतेन्दु वर्मा कक्ष में इधर-उधर देखने लगा, ठहाके से कोई विघ्न तो नहीं पड़ा।...नहीं परीक्षार्थी चिट-पुरजों और पोथियों में धसे निर्विघ्न संघर्षरत हैं। जयप्रकाश का वक्तव्य चलता रहा—

'यह स्टेटमेंट भी हिन्दी कविता की तरह ही हो गया। गड़बड़ी जमकर हो और कोई गड़बड़ी न हो। कितनी दूर की दोहरी सूझ है।'

'हिन्दी में एक कवि हैं तुलसीदास' भारतेन्दु ने कहा, 'देखो जरा तमाशा। एक जगह भर्त्सना के स्वर में कहते हैं, 'जिमि स्वतंत्र होइ बिगरहिं नारी' और फिर नारी जाति की नियति पर टेसुआ चुवाते हैं, 'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।'

'खूब परीक्षा की गरिमा आप लोग बनाये हैं' कहते हुए वाइस प्रिंसिपल राममंगल मिश्र कमरे में आ गए और बोले, 'यह निरीक्षण हो रहा है कि गपाष्टक में उसका मखौल उड़ाया जा रहा है ?'

'आइये मिश्रजी, हम लोग तो बहुत गंभीरता से कार्य कर रहे हैं परंतु आप जब उसे मखौल मान रहे हैं तो सोचना पड़ेगा कि वह आया कहां से ?' भारतेन्दु ने दोनों हाथ बढ़ा उनका स्वागत करते हुए कहा।

'अरे वर्मा, 'वह' गठिया गांव से आया है और बाहर बैठा है। देखा नहीं ? मैं तो रामरूप को सूचना देने यहां आया।'

'सूचना मिल चुकी है।...आपको चाय मंगाऊं ?' रामरूप बोला।

'नहीं, बाहर जाकर जरा अपने रिश्तेदार को तो चाय पिलाओ।' कहते हुए मिश्रजी जयप्रकाश का हाथ पकड़े बाहर चले गये।

मगर, बाबू हनुमानप्रसाद को चाय पिलाने रामरूप को कहां जाना था ? प्रिंसिपल राममनोहर सिंह उनका आना सुनते ही नाक सुड़कते दौड़े-दौड़े बाहर निकले। बाहर उधर करइलजी का ग्रामोफोन चालू था। सामने कौन कुछ बोले ? देहात के सीनियर आदमी हैं। आ गये तो आतंक छा गया। पहले लोगों ने कुछ और ही समझा। कॉलेज के बाहर लगी छात्र-मददकारों की भीड़ भाग खड़ी हुई। भीतर परीक्षार्थी सूख गये। नकल रुक गयी तो कैसे बेड़ा पार होगा ? परंतु थोड़ी देर में मामला साफ हो गया। गाड़ी लाइन पर आ गयी। छंटी भीड़ फिर प्लेटफार्म पर आ डटी और भनभनाने लगी। बाहर-भीतर दूने उत्साह से कार्य चलने लगा। कोई ऐसा परीक्षार्थी न बच जाय जिसके पास 'चिट' न पहुंच जायं। मददगार न पहुंच जायं। सब को पास होना है। बी० डी० ओ० के भतीजे के फर्स्ट नहीं तो सिकेण्ड में पास होने की गारंटी है। तीन-तीन गण उसके पीछे लगे हुए हैं। करइलजी के दरवाज़े पर टिके उनके अन्य रिश्तेदार परीक्षार्थियों को तो अवश्य पार लगना है। सबको नकल करनी है, सबको नकल करानी है। यही

पुण्य है। इस पुण्य-कार्य में आज कौन रोक-टोक करने वाला है? असरदार सरदार मिर्जापुरी अलगाये कॉलिज का चक्कर काट रहा है। मिर्जापुरी के वजन के बारे में एक जबरदस्त मिथ चारों ओर फैला है, कहते हैं वह पूरे साढ़े सात किलो की है। वर्षों तक दूध पिला हल्दी-तेल की मालिश और धर्रा का कार्यक्रम चला।···अरे मिर्जापुरी में यह सब बखेड़ा कहां होता है?···खैर, जहां होता है, होता है। तुम मानो, सरदारी की लाठी के मुकाबले पांच कोस के भीतर अवार-जवार में मुकाबले को लाठी नहीं और न कोई मुकाबले का मर्द, कोई मूंछ भी मुकाबले की नहीं। यह मूछें हैं जिसकी नोक पर आज कॉलेज की परीक्षा टंगी है, नकल कराने वालों की भीड़ टंगी है, साथ-ही साथ प्रिंसिपल की इज्जत टंगी है। वह हाथ जोड़ सामने खड़ा है।

'सरदार, आपने काहे को तकलीफ फरमाया? खादिम तो यहां था ही।'

'थे तो क्या? आप नकलबाजी नहीं रोक सकते थे। मैंने उसे रोक दिया। इसी के लिए मैं आया। अब देखिए काम ठीक से हो रहा है। इसी प्रकार अंग्रेजी वाले दोनों दिन भी होना ज़रूरी है। याद रखिएगा। मजाल नहीं कि एक कागज़ का टुकड़ा भीतर चला जाए।···और आज इस भीड़ को मत देखिए। ये सब गीदड़ हैं। ये अपना काम कर रहे हैं। आप अपना कीजिए। आप भीतर जाइए, संभालिए। बाहर सब ठीक है।' एक सांस में बाबू हनुमानप्रसाद कह गए और ज़ोरदार रूप में हुंकड़कर एक बार खोंख दिया।

बोले, 'बोल, बजरग बली की···जै।' भीड़ ने जोर से जयकार की।

हल्ला सुनकर पुलिस वाले दौड़े आये। फिर सब लोग कहने लगे, 'चुप··· चुप···। हल्ला नहीं। भीतर परीक्षा हो रही है। शान्तिपूर्वक काम हो रहा है। बाहर से जो होना हो, शान्तिपूर्वक होना चाहिए।' और इस प्रकार शान्ति की गारन्टी सुन पुलिस वाले पान की दुकान पर चले गए। उन्होंने मूंछों को फरफरा कर बहुत गर्व के साथ अपने-अपने शरीरों को सामने छाया में पड़ी बेंच पर स्थाई रूप से रख दिया।

प्रिंसिपल साहब के साथ गजिन्दर को बाहर ही चौकसी के लिए छोड़ बाबू हनुमानप्रसाद जिस समय ऑफिस में पहुंचे उस समय दो अध्यापक महुवारी के दोनवार लोगों के कुर्सीनामे से सम्बन्धित बहस में तल्लीन थे।

'आप लोग अपने-अपने कमरों को छोड़ यहां फालतू गप्प लड़ा रहे हैं? मेहरबानी कर ड्यूटी कीजिए।'

'सर, एक हादसा हो गया है' उनमें से एक ने करबद्ध खड़े होकर कहा, 'आज फिर एक लड़का कापी-पेपर के साथ फरार हो गया है। क्या किया जाय?··· यही कहने हम लोग यहां आए और···।'

'अपनी बुद्धि से सोचकर जो चाहें करें।···लड़का शादी कापी लेकर भगा

है तो अन्त में लिखी कापी के साथ वापस भी हो सकता है।···चिन्ता की बात नहीं। आप लोग अपनी ड्यूटी कीजिए।'

अध्यापकों के चले जाने के बाद प्रिंसिपल साहब बाबू हनुमानप्रसाद की खातिरदारी में जुटे। सुराही से स्वयं पानी ढालते हुए बोले—

'इस साल शुरू-शुरू में ही इतनी गर्मी पड़ने लगी तो जेठ तक जाते-जाते क्या होगा ?'

उस समय हनुमानप्रसाद की आंखें खिड़की से दिखलायी पड़ते एक खुले मैदान के खलिहान पर अटकी थीं। पछिमा के धुंधकारी प्रवाह में उड़ते ओसावन के सुनहले भूसे की गर्द में सारा खलिहान डूब गया था और उस तीखी धूप की जलन को हेमन्त के धूप की तरह खुशी-खुशी ओढ़े जैसे किसान खुले-खुले मैदान में कार्यरत थे। एक ज़िन्दा कृषि-संस्कृति का पुरातन खलिहान-देवता मैदान में जगा था। कहीं बैलों की दंवरी के पीछे पैना लिये आदमी घूम रहा है तो कहीं दंवरी के बाद लम्बी या गोल गढ़ी गयी विशाल कूट-राशि 'उकांव' को फोड़कर लोग हवा में उड़ाकर ओसावन कर रहे हैं, अन्न अलग, भूसा अलग। खलिहान देवता की दो बाहें, दंवाई-ओसवाई। फिर उससे लगे नाना प्रकार के परम्परागत अनुशासन, नियम, नीतियां, कुछ धार्मिक रूढ़ियां, सनातन चलन···और अब आ गयी भीषण चुनौती की भांति यह दैत्याकार मशीन थ्रैसर। घर-घर-घर-घर···हड़हड़···भड़भड़ सर्रर्र-सर्रर्र···। जा, गयीं सब परम्परायें, गयी दवरी, गयी ओसावन। मशीन ने मारा कि खलिहान के ख्याल को ही खतम कर दिया। कहीं भी लगाकर काट दिया गल्ला का गल्ला। साफ-साफ अनाज अलग, भूसा अलग। जा बैल। बिना बैलों के ही खेत के साथ खलिहान का मोर्चा फतह। कितनी आसानी है।···अब हर चीज़ आसान हो जाएगी। लड़के भी बिना पढ़े पास हो जायेंगे। परीक्षा की मशीन का कमाल है।

प्रिंसिपल साहब के ज़ोरदार रूप में नाक सुड़कने से बाबू हनुमानप्रसाद ख्यालों के खलिहान से असलियत के ऑफिस में लौट आये। देखा, टेबल पर मीठा-पानी हाजिर है।···यह प्रिंसीपलवा पूरा मक्खीचूस है, इसे दंड देना चाहिए। ऐसा सोचकर प्लेट के छोटे-छोटे बताशों में से तीन-चार को एक साथ उन्होंने पानी के गिलास में डाला और बोले—

'जेठ आते-आते सावन की तरह पानी बरसने लगेगा प्रिंसिपल साहब। देख लीजिएगा।'

'लेकिन, ओफ्। अभी तो बड़ी गर्मी है। जल ग्रहण करें।'

'जल क्या ग्रहण करें' कहते-कहते तीन-चार और बताशों को गिलास में डाल हनुमानप्रसाद बोले, 'आपकी व्यवस्था देख जी जुड़ा गया है।'

'अच्छा, पीजिए, बहुत हो गया। मैं तो एक तुच्छ प्राणी हूं। मैं क्या व्यवस्था

कर सकता हूं।'

'अरे नहीं, इतना क्या कम है?' कहते हुए शेष बताशों को गिलास में डाल बाबू साहब कहने लगे, 'कितनी यहां शान्ति है। बाहर खड़ी अशान्ति भी शान्त है सब कुछ कुशलपूर्वक चल रहा है।'

'मैं तो आपकी कुशलता का तलबगार हूं। क्या हुआ वह चटाईटोला वाला खुबवा का मामला? सुना, खुबवा सहित सारे गांव की नकेल एक किसी सुनरी नाम के औरत के हाथों में है?'

'है नहीं, थी और अब उस औरत की नकेल आपके अपने हाथ में है।'

'मैंने समझा नहीं।' नाक सुड़ककर राममनोहर सिंह बोले।

'समय पर सब समझ जायेंगे।' कहते हुए गिलास हिलाकर बताशे के बन गये शर्बत को एक सांस में खड़े-खड़े पीकर हनुमानप्रसाद ने ऑफिस के बाहर खड़ी मिर्जापुरी को उठा लिया और बाहर निकलते-निकलते बोले—'हम खेत-खलिहान वाले लोगों को बाहर ही बैठने-उठने में आराम रहता है।'

बाबू हनुमानप्रसाद को हुंकड़ते-खोंखते इधर आते देख पान वाले ने गजिन्दर से पूछा, 'यह बाबू साहब की मिर्जापुरी तो बहुतों को धूल चटा चुकी होगी?'

'अरे नाहीं रे', गजिन्दर बोला, 'मार-झगड़ा में अब लाठी लेकर कोई कहां जाता है या चलाता है। वह बस दिखावटी रूप में। असल लड़ाई का रूप बदल गया है। कुछ दिन पहले रुपये की लड़ाई थी कचहरी में और अब दूसरी 'जिस' चलती है। यहां तो स्कूल पर चलना था तो सोचा लाठी लेते चलें।'

स्कूल और लाठी।

लाठी का अवमूल्यन हो गया। उसने छड़ी का स्थान ले लिया। स्कूल का अवमूल्यन हो गया। वहां अध्यापक की जगह लाठी लिये गांव का सरदार तप रहा है। शिक्षा का अवमूल्यन हो गया। वह नकलबाजी की जागीर हो गयी। नकल को अब कौन उखाड़ सकता है? गांव में उसकी अजेय सेना है। लाठीवाला सेनापति है। हुड़दंग मचा है। मेला लगा है। हलचल, हड़कम्प और हल्ला से भरी शान्ति मंडरा रही है। शिक्षा जगत् में अभूतपूर्व क्रान्ति हो गयी है। बालकों के विकास से जुड़े सर्वथा नये मूल्यों के जयगान की गूंज है।

कक्षा नम्बर सात के बाहर बरामदे में खड़े होकर रामरूप बाहर के मेले को देखता है। सोचता है, इतिहास में आज से पहले अभिभावकों ने अपने बच्चों के 'पास-फेल' के बारे में ऐसी उत्कट चिन्ता और सक्रिय खबरदारी कभी नहीं प्रकट की। क्या शिक्षा का मूल्य इतना बढ़ गया?…वह देखता है, गांवों में इंटर, बी० ए०, एम० ए०, और बी० एड० आदि करके जो युवक खेत या राजनीति या बेकारी में जुते हैं तथा जो नौकरी खोजते-खोजते नाकाम हो शिक्षा, सरकार और भाग्य को दस हज़ार गाली दे-देकर घर बैठ गये, इस परीक्षा-पर्व के आते कितने

सक्रिय हो गये हैं। कॉलेज और यूनिवर्सिटियों से रिटर्न कुछ अभागे हीरो जो गांवों में सड़ते समय की कोफ्त में घिस गये होते हैं और जो अपने अधकचरे हीरो को घोर नाकामयाबी की किसी खूंटी पर टांग दिये होते हैं, उतारकर अचानक ओढ़ लेते हैं और दल के दल उतर पड़ते हैं इस मनोरंजन में, अपने किसी छोटे भाई के भविष्य की चिन्ता में अथवा किसी मित्र के सुपुत्र की मंगल कामना में अथवा सार्वजनिक रूप से गांव के छात्रों की शैक्षणिक सफलता की शुभेच्छा-सद्-भावना में। फिर प्रांगण में उतर गये तो जुटे हैं जी-जान से। शिक्षा की मंजिल 'शान्ति' पूर्वक पार हो जाय।

रामरूप बहुत अनमने और उदासीन भाव से देख रहा है अच्छेलाल और बनारसी के उद्धारक दल को। यह दल प्रत्येक प्रकार से तुला है कि अच्छेलाल और बनारसी की नैया किसी प्रकार इस साल हाई स्कूल की वैतरनी पार कर जाये। इस दल में प्रिंसिपल-पुत्र दिलीप अगुआ है। विजय इसी कार्य के लिए इलाहाबाद से आया। मगनचोला ने कहा, यह बिलो स्टैंडर्ड कार्य है, विजय तुम्हीं जाओ। यह दल अत्यंत निर्भीक भाव से कार्यलग्न है। तीखी धूप और धूल बवंडर की चिन्ता न कर थोक-थोक बैठ कहीं कुछ कागज पर घिस रहे हैं और कुछ झपट-झपटकर इधर-उधर कर रहे हैं। ये अड़ोस-पड़ोस के गांव के युवक हैं, अब निरे बच्चे नहीं, समझदार हैं, शिक्षित हैं। देश के भविष्य हैं।···रामरूप तब क्या समझे? ये सभी लोग अपने उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक हैं। देश की नींव अर्थात् शिक्षा के प्रति, उसके शुभ-लाभ के प्रति जागरूक हैं। जागरूक हैं कि हवा बना रहे हैं। हवा है कि नयी पीढ़ी ही नहीं, पुरानी पीढ़ी भी लाठी लेकर मैदान में उतर आयी है। नयी-पुरानी दोनों पीढ़ियों के बालकों की शिक्षा की, उनके उज्ज्वल भविष्य की तथा उनकी जीवन-सफलता की गहरी चिन्ता है।···'सर्वे भवन्तु सुखिनः।' रामरूप के मुंह से निकल गया।

'धन्य जगद्गुरु महाराज।' बरामदे से गुज़रता हुआ वर्मा ठिठककर खड़ा हो गया और बोला, 'क्या यह रामराज्य का मेला देखकर ऐसी मंगल वाणी प्रस्फुटित हुई है?'

'मन करता है जाते-जाते पिताजी को प्रणाम कर लूं, नहीं तो पता नहीं वे क्या सोचें।' रामरूप बोला।

'ठीक सोचा, अब दस मिनट वाला घंटा कुछ देर में बजने वाला है और उसके बाद खेल खतम होने पर यहां कौन रह जाएगा?···क्या तुम्हें मालूम है कि चटाईटोला की सुनरी को किसी प्रकार तुम्हारे करइल महाराज ने कब्जे में कर लिया है?'

'नहीं, मुझे तो कुछ खबर नहीं। तुमसे कौन कह रहा था?'

'अभी-अभी प्रिंसिपल साहब ने कहा है और कहा है कि किसी से बात कही

न जाय। उन्हें किसी गुप्त और पक्के सूत्र से यह बात ज्ञात हुई है।'

'अथाह माया है। कुछ भी असम्भव नहीं।···जाने दो, मैं प्रणाम करने से रहा। ऐसे बड़ों का दर्शन हमेशा महंगा पड़ता है।'

'नहीं, ज़रूर जाओ। लगता है, तुम्हारे प्रति इधर कुछ सदय हैं। महुवारी-स्टेशन रोड वाले उस दिन के हंगामे में तटस्थ और निरपेक्ष जैसे दिखते कैसी सरदारी कर रहे थे।'

'उस सरदारी का रहस्य तुम अभी नहीं समझ सकते। हमारा ससुर गला भी काटता है तो बहुत प्रेम से, पुचकार कर।'

'भाई हमें तो उस दिन लगा, तुम्हारे ससुरजी किसी प्रकार मामले को निपटाने के लिए आतुर हैं और झगड़ा नहीं चाहते हैं। वह बी० डी० ओ० ऐन मौके पर नहीं आया तो लगा, वे छटपटाकर रह गये।'

'हां, बी०डी० ओ० का न आना तो सचमुच खल गया। वह क्यों नहीं आया, यह भी एक रहस्य की बात हो गयी।'

'गठिया महुवारी में पता नहीं कितने-कितने रहस्य हैं।' कहते हुए वर्मा आगे बढ़ गया तो घड़ी की ओर नजर डालकर रामरूप अपने ससुरजी तक जाने के लिए गेट की ओर बढ़ा।

३५

सुनरी चौका-बर्तन से मुक्त होकर जब रात में बाबू हनुमानप्रसाद की हवेली के उस प्रभाग में जिसकी एक कोठरी में कभी उसका स्वर्गीय शिशु 'पावल पांडे' दाई के साथ सोया करता था, सोने चली तो उसे याद आया कि बुढ़वा (खुबवा) चटाईटोला रहते में एक मुहावरे का बारम्बार प्रयोग किया करता था। कितना रहस्यमय है यह मुहावरा। वह कहा करता, 'जिस आम को करइलवा चूस-निचोरकर चाट देता है उसकी गुठली कभी जमती नहीं है।' उसके भीतर धक्-से चोट लगी। वहां वह बुढ़वा तो अब क्या जमेगा और इस हवेली में आकर उसने भी गलती कर दी क्या? नहीं, कोई गलती नहीं की। बहुत सही किया। चटाईटोला में सुनरी क्या हो गयी थी। गली की एक लाड़ली कुतिया। जिस ड्योढी से स्वादिष्ट कौरा मिला करता था उसके मालिक की नवछटिया लौंडे-लपाड़ियों के आगे चलती नहीं। रातोंरात कब गली पर उन बनैले जैसे कुत्तों का कब्जा हो गया, किसी को पता नहीं चला। पता चलता तो उस बार जैसे वह कोई उबारने वाला बन्दोबस्त करता न? पर अब क्या हो? हाय राम, उस रात कोठरी में बाप-बेटा आमने-सामने हो गए। शर्म के मारे गड़ जा धरती में सुनरी। दोनों एक-दूसरे को देख गुर्रा रहे थे।···तू कुलबोरन।···तू बेहया, बदमाश!

तो, सुनरी को क्या आंख दिखा रहे हैं मालिक ? वह रंडी हो गयी है, छिनाल है; तो जैसा हुक्म हो। निकल जाएगी घर से। मगर झगड़ा नहीं। जवान लड़के से दब जा नवीन बाबू। इज्जत पानी बचाकर धीरे से सरक जा। अफसोस, कितने गलत वक्त पर सरकार आए। हमारे आपके ये अच्छे बबुआजी आजकल रोज सुनरी को 'मेमर' बनाते हैं। क्या कहते हैं, एक 'युवा मोर्चा' है। सुनरी ने समझा जवानी का मुरचा। तो, उसे छुड़ा लो छोटे राजाजी, तुम अभी छैला हो, लेकिन अपने बाप की इस लैला से तनिक डरो भी तो। वह थर-थर कांप रही है और तुम बेडर खिलखिलाते जाते हो। कितने प्यारे हो ! लेकिन, छिः-छिः ! यह क्या करते हो ? सारे लुहेड़ों का मोर्चा यहीं बटोर लाये ? सुनरी की इस छोटी कोठरी में इतना बड़ा पांच-पांच का मोर्चा कैसे निबटेगा ? मार डालो, बेदम कर दो, झिझोड़कर धूर कर दो, एकदम असह्य, भाग जाएगी सुनरी अब, आने दो मालिक को, लेकिन मालिक के आने पर कैसे सब भूल जाता ? कितने भले हैं ! देह में 'हरदी' लगवा दी, भांवरें फिरवा दी। तब खुबवा बुढ़वा को देखकर हंस पड़ी थी सुनरी। अरे जनम-जनम के हमरे दुलरुआ राजा। फिर क्या फर्क पड़ा ? दो के बदले चार चिलम खींच लेने पर एक अदद मुर्दा घर के बाहर पड़ा रहे। रात में सुनरी द्वार बन्द कर सोती तो वह नवीन बाबू के लिए स्वयं खुल जाता। आंधी की तरह वह आकर कैसे जगा देता। जा, अब उस चटाईटोला के सारे आंधी-तूफान से मुक्ति। मगर किसी दिन यह गठिया का नया बुढ़वा बवण्डर इस कोठरी में घुस आया तो ? तो···इसकी चाटी तो आम की गुठली भी नहीं जमती। धक्, धक्, धक्···सुनरी को अपने भीतर की धड़कन साफ-साफ सुनायी पड़ने लगी।

लेकिन अब इस जवानी की सूखी ठूंठी गांछी का अब और कहीं जमना क्या ? एक वह जमन लिया था छलिया, अहक छोड़कर चला गया तो सब चला गया।

कोठरी से बंसखट बाहर करते समय उसकी आंखें छलछला गयीं। एक बार सिहर गयी। बाहर अकेले खुले में सोयेगी ?···हां सोयेगी। कोठरी में घुटन सही नहीं जाती। अब क्या है जिसे सहेज-बटोरकर रखने के लिए कोठरी की सुरक्षा चाहेगी ? अब क्या बचा ? अस्मत किस चिड़िया का नाम है ? गरीब की कहीं अस्मत होती है ? भगवान् न करे किसी जूठखौका जाति के घर बिन ब्याही कोई सुघर सलोनी लड़की पन्द्रह-सोलह की हो और गांव-घर के बड़भैयों को देख-देख कुछ साध और कुछ सपनों का रोग भी भीतर पाल ले। सुनरी पागल थी कि साधों में पहले ही उग आयी कानों की बाली। बाली बैरिन हो गयी। मनिहार आया तो मां से बीस पैसा लेकर खरीद ली। असली सोने से भी अधिक चमकदार सुनहरे रंग की बाली। नक्काशीदार, नगजड़ी, कमाल की कलई वाली। दूसरे दिन नजर पड़ गयी मालिक की, नवीन बाबू की। वह कौन-सा महीना था ?

हां, पिछले अगहन के पीछे वाले साल के अगहन की पुरनबांसी थी, 'पराहु' की पूजा वाली। गोबर से सारी बखरी पोतनी थी। अकेले माई से नहीं सम्हलता। साथ चली गयी और सत्यानाश हो गया। देखकर बोले, 'रुक-रुक सुनरी की माई। इधर आ। यह क्या पहन रखा है कानों में तुम्हारी छौंड़ी ने ?' फिर हाथ पर लेकर देखा। अरे, ऐसी राजरानी-सी धिया को ऐसी नकली बाली ? रोमांच-हो गया सुनरी को। आंचल से ढका मुंह उधर फेर हंसती हुई मां क्या कह रही थी उसने नहीं सुना। सुना यह कि असली सोने की बाली इनाम में मिलेगी। कैसा इनाम ? हाय, वह क्या जाने ? उसके कानों ने बीस पैसे से छलांग लगाकर दो ढाई सौ रुपये की यात्रा कर ली तो उसे लगा वह भरा-पूरा आकाश का चांद उसकी मुट्ठी में आ गया। क्या झूठ ? नहीं, एकदम सच। फिर बाली ही क्यों ? कौन-कौन गहना नहीं उगा उसकी देह पर ? अरे, उसे क्या हो गया ? वह क्या हो गयी ? रात-दिन नशा, एक सनसनाहट, कब शाम होगी, कब माई मालिक के यहां चौका-बर्तन करने जाएगी, कब बाबू उनके नलकूप पर जाएंगे, अपनी नयी ड्यूटी पर, कब भैया को बुलाने कोई न कोई आ जाएगा ? कब घर सूना हो जायगा और वह भात पकाने लगेगी। कैसा भात ? खूब पकाया भात सुनरी तू ने। उस पहले दिन अभी अदहन चढ़ाया था कि सारा आंगन भर गया एक आदमी से। अरे मालिक आप ? हां, सुनरी एक ज़रूरी काम है। बाहर की कुंडी चढ़ा दे। उसने उनकी ओर देखा। कैसे इतनी अवश हो गयी तू सुनरी ? कुंडी चढ़ाने चली तो जैसे हर कदम कानों की बाली चमक बिखेरने लगी और लौटी तो क्या हुआ ? अरे हां, क्या हुआ ? याद कर अब क्या रोवें खड़े होंगे ? भूल जा सुनरी, भूल जा उस पूरे सिलसिले को, कई महीनों की मस्त बेहोशी को, उन स्वादों को। लेकिन उस दिन को कैसे भूलेगी जब एक दिन होश हो गया। तू रोती रही। तुम्हें गोद में ले मालिक समझाते रहे। दुत् पगली। कुछ नहीं होगा। कुछ मास पहले बीमारी का बहाना कर सो रहना। बाकी काम मेरा। कितने अच्छे हैं। संभाल लिया अस्पताल में और बेटा देखकर धन्य हुई सुनरी। फिर धक्-धक्···कौन-सा मुंह लेकर गांव पर ले जायगा। घबरा मत, सब इन्तजाम हो जाएगा। इन्तजाम ? कैसा ? यही इन्तजाम कि खेत में सुला दो ? काढ़ लो कलेजा मालिक। फिर अगला 'इन्तजाम', फिर उसके आगे वाला 'इन्तजाम', फिर आखिरी 'इन्तजाम', कितने इन्तजामी निकले मालिक। वह इन्तजाम तो सुनरी की समझ में अब आता है कि चांद के टुकड़े-सा वह बेटा कैसी-कैसी दवा खाकर रें-रें करता चला गया। उसे किसी अस्पताल में क्यों नहीं ले गए ? फिर अगला इन्तजाम एक विवाह का कि एक बूढ़े के मत्थे सब दिन उसकी जवानी से खुलकर खेलने का इन्तजाम ? ये धन-बल वाले गरीबों का कैसा बढ़िया 'इन्तजाम' करते हैं ? ऐसा इन्तजाम कि ये अभागे सही-सलामत अपने डीह पर

नहीं रह सकते। सुनरी का गांव छूटा, घर छूटा। भला हुआ, बहुत भला। लेकिन तवे से छूटकर रोटी जो आग पर आ गयी तो क्या भला? फिर उसे सुखपूर्वक जीमने के लिए किसी दिन कोई धनी रसिया गठिया के किसी बूढ़े से फिर उसका ब्याह ठान दे तो? तो?···बाबू हनुमानप्रसाद को याद कर सुनरी पसीने-पसीने हो गयी? अरे, इसकी चाटी तो गुठली भी नहीं जमती।

आज सुनरी से नींद रूठ गयी थी। चारपाई पर लेटे-लेटे वह दीवारों को देख रही थी। मिट्टी की हैं पर कितनी मजबूत हैं। कितनी पोख्ता हैं। कहीं से टूटी-फूटी नहीं। कितनी ऊंची-ऊंची दीवारों के मजबूत घेरे में सुनरी आ गयी। अपने बाप का घर यानी चटाईटोला के कालिका कहांर का घर याद आया। मां याद आयी। मां ज़िन्दा होती तो शायद इस तरह दीन-दुनिया दोनों के नष्ट हो जाने की नौबत नहीं आती। तब कहीं वह जाती तो दुलहिन बनकर जाती। अब सब खतम। पहाड़ जैसी ज़िन्दगी कैसे कटेगी? पूर्व जन्म की कौन करनी है कि इस कैदखाने में आ मरी। अरे हां, यह कैदखाना नहीं तो और क्या है? इतनी ऊंची-ऊंची दीवारें तो बस जेल की होती हैं। जब-जब बक्सर के मेले में जाती, जेल की दीवारें देख मन कैसे ऊभ-चूभ होने लगता। क्या पता था कि ये ही दीवारें उसे एक दिन चारों ओर से घेर लेंगी। घर और जेल में कितना फर्क है? लेकिन एक उसका भी तो घर था कि घर होकर भी कोई छोटा-मोटा घेरा नहीं। घर नहीं जैसे वह अकेले मैदान में रहती थी। कोई कभी भी आकर उसे लूट ले। किसी गरीब का क्या घर और क्या उसका घेरा। घेरा होता तो उसे काहे भागना पड़ता? कैसी वैसी देह दुर्गति होती? बाप रे बाप, एक-एक साथ चार-चार, छह-छह। शर्म से गड़कर मर गयी सुनरी। उस दिन भैया को उन सबों ने मार-कर खदेड़ दिया। बाबू को डांट दिया। चुपचाप बाहर चबूतरे पर छोटी लड़की के साथ जाकर सो जा साला। हम लोगों को 'राजनीति' करने में खलल मत पहुंचा। फिर चला युवा राजनीति का दौर। एक ने दारू की बोतल का मुंह मुंह में घुसेड़ दिया, जबरदस्ती। रस-गंध के धक्के से लगा, अब जान गयी। कलेजा चीरकर कोई चीज़ कितनी-कितनी बार कहां जाती है? जब तक होश था सुनरी असह को सहती रही और फिर बेहोशी के बाद क्या हुआ, उसका पता सुबह होश आने पर चला। साड़ी चिथड़े-चिथड़े हो गयी थी। उस पर जगह-जगह खून के धब्बे लगे थे। फटा ब्लाउज़ दूर फिका था और वह स्वयं नंगी जगह-जगह सूजी और खरोंच भरी कलंकित देह लिये ज़मीन पर पड़े टाट के टुकड़े पर पड़ी थी। चारपाई की एक पाटी टूट गयी थी। उस पर खाली बोतल लुढ़के थे। एक नेता बबुआ की, शायद अच्छेजी की तौलिया छूट गयी थी। उस पर किसी ने कै कर दिया था। अपने ही घर के आंगन को देख भय लगता था। पाप का बदबू क्या सहा जा रहा था? मुर्दे की तरह पड़ी रही सुनरी। मगर कब तक पड़ी

रहती। धीरे-धीरे उसके भीतर की जवान औरत सुगबुगाने लगी। टूटती-बथती आहत देह को संभालकर वह आहिस्ते-आहिस्ते उठी और अरगनी पर से दूसरी साड़ी खींच लिया। कपड़े बदलते में अचानक कुछ सोचकर एकदम पनपना गयी। चारों ओर देखा, अभी सुबह का उजाला दुनिया में नहीं पहुंचा है। पहुंचेगा तो ज़रूर परन्तु तब वह न जाने कहां होगी? अरे हां, कहां होगी? चक्का घूम गया रहेगा, लाली फैल गयी रहेगी और बस एक साहस से मुक्ति।...लेकिन हाय, इस दुनिया में कुछ लोग हैं जिनके लिए मुक्ति का कुछ भी माने नहीं। सुनरी तू कैसे रेलवे लाइन की दिशा में धंसकर गठिया पहुंच सुग्रीव के फन्दे मे फंस गयी? सच है, जान बहुत प्यारी होती है। जान के सवाल पर तुम्हें याद आया था सुग्रीव। पिछले एक-डेढ़ महीने में कई बार आया था। कैसा मयार है। पहली बार कालिका का घर पूछता आया तो घर पर कोई नहीं था। बोला था, 'मैं तुम्हारी मां का फूफा हूं।' फिर रस-पानी करके बोला था, 'बचिया, मैं बूढ़ा हुआ और आगे-पीछे कोई नहीं है। घर-द्वार और कुछ खेत-बारी है सो कौन भोगेगा? हमारे सबसे करीबी तो तुम्हीं लोग है। तुम हमको भला क्या जानती होगी? तुम्हारी मां रहती तो देखती'...छल्-छल्-छल् उसकी आंखों से लोर झरने लगा। पिघल गयी थी सुनरी। फिर वह दस दिन बाद आया। उस दिन भी घर सिर्फ वही थी। खुबवा को भी दरबार से फुरसत कहां? इस वार सुग्रीव ने उसके हाथ पर सौ का एक नोट रख दिया। बेटी, उस बार भूल गया। मिठाई खाने के लिए है। तब से कई बार आया। आश्चर्य, जब भी आया, घर कोई नहीं। हर बार कहता, जिससे नाता होता है उसी से होता है। औरों से चर्चा भी नहीं करनी चाहिए। हर बार कहता, कोई आफत-बिपत आए तो इस बाप को याद करना और फिर कितनी-कितनी बातें। ओफ्, उसने गुपचुप क्या जादू कर दिया कि तब सुनरी आखिर उसके दरवाज़े पर पूछते-पूछते पहुंच ही गयी और जब पहुंच गयी तो कैसे मीठे-मीठे बाबू साहब तक पहुंच गयी? अब सोच सुनरी कि तू गुठली नहीं, अभी पूरे रसीले आम सरीखी है, एक दुर्भाग्य की आंधी में डाल से छिटक, धूलभरे रास्ते पर पड़े हुए।...लेकिन अब डर मत, जी कड़ा-कर यहां रह। याद है? क्या कहा था हंकड़कर बाबू हनुमानप्रसाद ने?

कहा था, 'मैं तुम्हें मरने-खपने के लिए अब कहीं जाने नहीं दूंगा। बहुत भले समय पर तुम मिल गयी और सारी बातें हमें मालूम हो गयीं। देख, चटाईटोला मेरा खान्दानी दुश्मन है और तुमको बरबाद करने के कारण तुम्हारा भी दुश्मन हुआ। नीति कहती है कि दुश्मन का दुश्मन मित्र होता है। सो, तुम मेरा मित्र हुई। मित्र के दुख को दूर करना धर्म है। रामायण में लिखा है, 'जे न मित्र दुख होहिं दुखारी, तिनहिं बिलोकत पातक भारी।' मैं वचन देता हूं कि तुम्हारी हर तरह से रक्षा करूंगा। तू घर के प्राणी की तरह आराम से पड़ी रह। जिन पापियों

ने राज करते रहते तुम्हारे बच्चे को यहां से चुरवाकर मार डाला उनको क्या मैं छोड़ दूंगा और वह खुबवा ? देखना, कैसे कुत्ते की तरह दुम हिलाता यहां दौड़ा आता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि वह तुम्हारा मर्द होगा। तुम्हारी तरफ वह आंख भी नहीं उठा सकता। जो हुआ उसे तू भूल जा। यह चटाईटोला नहीं, गठिया है। तू बाबू हनुमानप्रसाद की हवेली में हो। राज़ी-खुशी पड़ी रह। तुम्हारे कष्ट के दिन बीत गये।···हां, अब बात छिपी क्यों रहे, मैं साफ-साफ बता दूं। तुम यहां आ नहीं गयी हो, मैंने तुम्हें तन्त्र-मन्त्र से बुला लिया है, ऐसा मानो।'

ओफ्, कितनी ऊमस है। रइनि नहीं डोल रही है। जी के भीतर हौल उठ रहा है। सुनरी चारपाई से उतरकर ज़मीन पर खड़ी हो गयी। खड़े-खड़ा चोटी को खोलकर बालों को छितरा दिया। गरदन की ओर से हाथों द्वारा उन्हें उठा-कर कई बार झटका दिया। मुंह पर हाथ फेरा। मन में आया, फाटक खोलकर ज़रा बाहर चलें किन्तु तुरन्त ही होश हो गया। क्या वह अपना घर है कि ऊमस होने पर बाहर चबूतरे पर निकलकर हवा खायें ? यह कालिका कहांर का घर नहीं, बाबू हनुमानप्रसाद की हवेली है। यहां वह आयी नहीं, खींचकर 'बुला' ली गयी है।···धूर्त्त कहीं का। माई का फूफा बनता था। सुग्रीव की शकल उसकी आंखों के सामने उभरी और चारपाई पर फिर धम्म से बैठ गयी।···क्या गजब हुआ कि जवानों की उस 'राजनीति' से उबरी तो बूढ़ों की इस नयी प्रतिशोध वाली राजनीति में उलझ गयी। उस दिन सुग्रीव से बाबू हनुमानप्रसाद ने जो कुछ कहा था उसे उसने सुन लिया। '···एक मुकदमा हुआ है कि हमने खुबवा का खेत काट लिया और उसे मारा-पीटा। दूसरा मुकदमा है कबाले की मंसूखी का। तीसरा मुकदमा है कि हमने खुबवा की बिकास वाली भैंस ले ली और देखो सुग्रीव अब एक चौथे मुकदमे का नक्शा है कि हमने खुबवा की औरत को भगाकर अपनी हवेली में रखा है। बस, यह चौथा केस भी कल दायर हो जाने दो तब देखो मेरा खेल। जैसे खुबवा की जोरू यहां आ गयी, वैसे ही वह भी आ जाय और सारी बाजी उलट जाय। अपने ही दाव पर दुश्मन चित। चले उल्टा केस। इज्ज़त हतक का दावा, एक लाख का हरजाना। सोनार की ठुकुर-ठुकुर न लोहार का एक धमाका। खूबवा जैसी ढुलमुल ढरकी के भरोसे नवीन बाबू फूले हैं तो फिर देखें, फल क्या होता है ?···देखो सुग्रीव चिट्ठी कल ही पहुंच जाय खुबवा के पास।'

चिट्ठी ?

कैसी चिट्ठी ? अरे ये लोग परफंदी हैं कि मेरी ओर से कुछ भी चिट्ठी बना कर लिख सकते हैं। सुनरी के सिर में चारपाई पर बैठे-बैठे कोई चिट्ठी चक्कर काटने लगी।···सोस्ती सिरी सर्व उपमा जोग सिरी पत्री लिखी प्यारी सुन्दरदेवी की ओर से परान प्यारेजी के चरनों में रोज-रोज का परनाम पहुंचे। आगे सरकारजी को मालूम हो कि आपके बिना बाबू साहेब की हवेली में बैठी मैं तड़प

रही हूं। नइया अथाह में पड़ी है। हे प्रियतम जी, जल्दी से आकर बांह गह कर उबारिये। तब आप सरकार तो वहां बाबू साहब के दरवाज़े पर बड़े लोगों की सभा में बैठकर मौज करते रहते थे, हमारी सुधि नहीं लेते थे और इधर सगरे गांव के लुहेंड़ों ने मिलकर इज्जत लूट हमारा वहां रहतब कठिन कर दिया। उन कट-कटाये नंगे कुत्तों की नोंच-चोंथ से ऊबकर किसी तरह जान लेकर मैं बाबू हनुमानप्रसाद के यहां भाग आयी। और कहां सरन मिलता? और दूसरा कौन इस धरती पर भुइयां भूपाल है जो सताई हुई गरीब औरत की इज्जत बचायेगा? बाबू साहेब सरकारजी को कितना मानते हैं मैं लिख नहीं सकती। पुराना संबन्ध और स्नेह सोच-सोचकर रोते हैं। अब भी कुछ बिगड़ा नहीं है। दिन-भर का भूला शाम को घर आ जाता है तो उसे भूला हुआ नहीं कहा जाता है। हे सरकारजी, आप चिट्ठी पाते ही चले आइये। चिट्ठी की बात किसी से मत बताइयेगा। स्याही से नहीं जिगर के खून से यह खत लिख रही हूं। अपना मन न हो तो भी मेरी खातिर आप चुपचाप चले आइये। आपने अगिनि के सामने मेरी बांह गही है। बांह गहे की लाज निबाहिये स्वामीजी। लोग कहते हैं कि सरकार बूढ़े हैं परन्तु हमको तो कई बार लगा कि सरकार में जवानों से अधिक जवानी है। फिर यहां रहेंगे तो मैं सेवा करके सरकारजी को और तगड़ा कर दूंगी। पति की सेवा करना ही स्त्री का धर्म है। आप ही हमारे लिए परमेश्वर है। यह एक-दो दिन का नहीं जनम-जनम का नाता है। अपना हमेशा अपना होता है और पराया पराया होता है। आप हमारे अपने हैं। बाकी दुनिया परायी है। मैं आपकी अपनी हूं। बाकी दुनिया परायी है। जिनिगी में अपना ही आदमी काम आता है। बाबू हनुमानप्रसाद सरकार के अपने हैं। नवीन बाबू पराये हैं। वे स्वारथवश सरकार को रखे हैं। वे अपने खान्दानी दुश्मन को सर करने के लिए सरकार को हथियार बनाये हैं। सरकार के सुख-दुख से उनको कोई मतलब नहीं है। मैं तो सरकार की औरत हूं, चरनों की दासी हूं। हमको रात-दिन बस आप की सुधि रहती है। इसीलिए सरकार के सुख के लिए मैं बार-बार बिनती करती हूं कि जल्दी चले आइये। मेरे पल्ले जो ढेर सारे सोने के गहने थे और पांच-सात हजार नकदी के थे, सो सब साथ गठरी बांध लेती आयी हूं। रात-दिन उनको अगोरती रहती हूं। आप आयें तो आपको सौंप दूं और सुखपूर्वक सोऊं। वैसे हे प्रियतमजी, इस जीवन में सुख कहां? चढ़ी जवानी बैरिन हो गयी है। मेरा अंग-अंग टूट रहा है। भीतर हूक उठती है। चारपाई पर पड़ती हूं तो अकेले में रात काटने लगती है। शरीर में आग लग जाती है। कसमसाकर रह जाती हूं। हे मेरी नइया के खेवइयाजी, जल्दी आकर मेरी आग बुझाइये। नहीं तो मैं जल से बिलग मछरी की तरह छटपटा-छटपटाकर मर जाऊंगी। जहर खा लूंगी। गरे फंसरी लगा लूंगी। तब आपको सिर्फ पछताना ही हाथ लगेगा। अधिक क्या लिखूं। थोर लिखना, ज्यादे

समझना। खाना वहां अंचवना यहां। ज्यादे सुभ।

अपने प्रान प्यारे सरकारजी के चरनों की दासी—

सुन्दर देवी

रात के उस बोझ-से बने क्षणों को इस ख्याली चिट्ठी के चक्कर ने और बोझिल कर दिया। उसे लगा, सचमुच उसके भीतर आग लग गयी है। किन्तु यह और ही किस्म की आग है। उसे लगा, सारी दुर्गति की जड़ उसके वे मालिक हैं। छलकर उसे खंदक में फेंक दिया। प्रेम था तो ब्याह क्यों नहीं कर लिये? उनकी ब्याहता होती तो वैसा मेला कैसे लगता? क्या सारी दुनिया मूर्ख है जो खुबवा के साथ ब्याह के मानी नहीं समझती है? चूक गयी सुनरी। बाप-बेटा को थोड़ा और लगा देना चाहिए था। जैसे उसके मुंह पर कलंक की कालिख पुती उसी तरह उनके मुंह पर पुत जाती। लेकिन, क्या कालिख पुतना बाकी है? गांव-देहात में थू-थू होती होगी। पुराना जमाना होता तो हुक्का-पानी बन्द हो जाता। अब हवा ही कुछ और है। इसी में इज्जत है। मौज-पानी लेकर मस्त हैं। कैसा मस्त बना दिया था तब सुनरी को भी! कितने अच्छे लगते थे! उनका कुछ दोष नहीं। और अधिक क्या करते? बोले थे, कहो तो साले को गोली मार दूं। हाय, सुनरी कैसे कहे कि उसके कारण अपने बेटे को गोली मार दें? क्या-क्या नहीं किया उसके लिए उन्होंने? उसकी हर साध पूरी की। कितना सुख दिया! अब उस सुख की कीमत चुका सुनरी। सुख के बाद दुख आता है। लेकिन क्या दुख है? उसकी जैसी गरीब जाति के लोगों को कैसा दुख? उनका कैसा घर? कैसा गांव? जहां रहेंगे जांगर-पांहुच चलाकर खायेंगे। कहीं भी दो रोटी मिल जायेगी। यहां भी मिल रही है। लेकिन, रोटी मिल रही है तो नींद क्यों नहीं आ रही है। भीतर धुक्-धुक् कर हौल दिल क्यों होता रहता है? भीतर कुछ मरोड़ता क्यों रहता है? कहीं कुछ गड़बड़ है! कुछ कहीं भारी भूल-चूक है। हे राम, नागनाथ और सांपनाथ के फन्दों से क्या कभी गला मुक्त होगा? क्या सुनरी अपने से जी सकेगी। इस कैद-खाने से छूटेगी? जमीन वाले और पैसे वाले कैसे पापी हैं। सांड-भैंसा की लड़ाई नधी है। बीच में एक वह गरीब खुबवा और एक यह मुंहझौंसी सुनरी। जा, अब कहां खैर है? अथवा जब गरीब के घर पैदा हुई तब खैर कहां? चुपचाप धनियों के मुंह का कौर बन जा। कहते हैं, ईश्वर है। खाक ईश्वर है। सो जा, सुनरी। इस युग में पैसा ही ईश्वर है।

इसी समय सदर दरवाजे पर खटका हुआ और सांकल खुलने की आवाज आयी। चट चारपाई पर सो जाने का बहाना कर सुनरी ने आंचल से मुंह ढक लिया। कुछ लोगों के आने की आहट मिली। मुंह ढके-ढके एक कोने से देखा, आगे-आगे अटैची लिये भीम है और पीछे एक दाढ़ी वाला लम्बा···अरे, यह तो वही है, उस नेताजी का नेता। भीतर धक्-धक् करने लगा। नेता जाति तो सभी

एक तरह की होती है। तभी उसने सुना, वह लम्बू नेता पूछ रहा है—

'यह कौन आंगन में सोयी है ?'

'यह घर की नयी महरी है।' उत्तर मिलता है।

और फिर सन्नाटा छा जाता है। सन्नाटे से छनकर दखिन ओर से जो मंगल गीत की ध्वनि आ रही थी उसने उसके कानों को अब जाकर प्रभावित किया। किसी के घर शादी पड़ी है। बहुत देर तक वह गीत सुनती रही और फिर सो गयी।

३६

ले-देकर ये ही तो तिलक-विवाह और बरात आदि के कुछ नायाब मौके हैं जो गांव को चहल-पहल से भर देते हैं। फिर ये अवसर यदि हनुमानप्रसाद जैसे नांव-गांव वाले शानदार व्यक्ति से जुड़ जाएं तो उसकी कल्पना-मात्र से एक प्रकार के परमाह्लादक रोमांच का होना स्वाभाविक ही है। भुवनेश्वर बबुआ अर्थात् मगन-चोला का शुभ विवाह इस वर्तमान लग्न में सम्पन्न हो जायगा, इस आशा और अनुमान ने शीघ्र ही पक्के शुभ समाचार का रूप धारण कर लिया। यदि कोई खटक थी तो नाम मात्र की। उसका भी समाधान नये युग का नया प्रभाव समझ कर हो जाता। तब वाले पुराने ज़माने की तरह अब बड़े लोगों के यहां के तिलकहरू लोगों का झमेड़ कहां लगता है? बड़ी-बड़ी वहसें भी कहां होती है। हनुमानप्रसाद के यहां एक दिन कार पर बैठ चुपके-से दो व्यक्ति आये। पन्द्रह मिनट तक उनकी बात भुवनेश्वर से हुई और तीस मिनट तक उसके बाप करइल महाराज से। फिर भुवनेश्वर को कार पर बैठाकर वे लोग लिये चले गये। संक्षेप में मालूम हुआ, शादी तय हो गयी। कैसे-कैसे तय हुई, क्या मिल रहा है, कौन जाने? एक ही घाघ है करइलवा। भला जल्दी कुछ बतायेगा? भुवनेश्वर ज़रूर भड़भड़िया है। सम्भव है, बक दे। कार उसे उसी रात गठिया छोड़ गयी। सुबह लोग उससे नाना प्रकार के बहाने बना मिलने चले। मगर वह मिलेगा कहां? कहां रहता है वह द्वार पर? गर्मी की छुट्टी में बटुरे हुए अपने सारे चेलों-चमचों के साथ आम के बगीचे में ढहा हुआ है।

उस मगनचोला को पहचान लेना बहुत ही सरल है। आइये उससे मिलिए। तीन-चार अधशहरी गंवार लड़कों के बीच जो नेता-कट लम्बा कुर्ता पहने ऊंचे कद का दढ़ियल जवान बैठा है यही तो है वह। यार लोग काफी दिनों से तिलक-विवाह के भोज की इन्तजार में रहे हैं। अब जमकर छनेगी। अभी तो बातों-बातों में छन रही है। अन्य कई चेलों के साथ अच्छे लाल है, विजय भी और बनारसी की प्रतीक्षा है। बहुत कुछ इधर-उधर की भी हांकी जा रही है—

'तो, यूनिवर्सिटी में यही सब रिसर्च हो रहा है?' छेड़ता पहले अच्छे लाल है।

'रीयली' सिगरेट की राख झाड़कर मगनचोला उत्तर देता है, 'मैं कहता हूं, सुनो पुराने युग में उत्तम वर के लिए कन्यायें तप करती थीं। और अब योग्य कन्याओं के लिए अपने बैचलर्स लोगों को तप करना पड़ता है।'

'इसका अर्थ यह कि आज तक तुम जो कुछ भी करते रहे वह शोध नहीं, कन्यार्थ तप था?'

'समझता क्या है? यूनिवर्सिटी के आश्रम में यह कोई मामूली तपस्या है? साल-साल भर वह बन्द रहती है, फिर भी हम पढ़ रहे हैं। खुलती भी है तो कोई लेक्चरर गुरु क्लास में झांकता नहीं। तो भी हम परीक्षा के लिए तैयार हो जाते हैं। गदहे के बोझ जैसी मोटी-मोटी कोर्स की किताबों को कभी देखा नहीं, फिर भी ज्ञान की डिग्री मिल जाती है। यही तप है, तप का फल है। सोचो, ऐसा कठिन तप किसलिए?

'नौकरी के लिए।'

'नहीं प्यारे, और जोर लगा तबीयत से सोचो। सोचो, एक डिग्री का तप, दो डिग्री का तप, डिग्री पर डिग्री बढ़ता तप, यूनिवर्सिटी की धूल में लोट कर, जरूरत पड़ी तो उस पर चोट कर, तमाम-तमाम तप-भंग करने वालों से लड़ कर, सरकार से, वाइस चांसलर से, गुरुओं से और विरोधी छात्र-नेताओं से लोहा गह, कठिन नारे उछाल, तोड़फोड़ में जुट, वाक़ई हमारी तपस्या कितनी हाई है, कितनी जबरदस्त है? कहते हैं, तपस्या बारह वर्ष में फलवती होती है। तो, एम० ए० करते, डबलियाते, कम्पीटीशन शोध और नाना प्रकार की परीक्षाओं में बैठने का ऊटक-नाटक करते क्या वह समय पूरा नहीं हो जाता है? मेरा भी समय पूरा हो गया। भोज-भात के लिए मत घबराओ।'

'इसका मतलब कि तुम्हारा बाप तुम्हारे ऊंट को किसी ऊंटनी के साथ जल्दी नत्थी कर रहा है?'

'बाप से क्या मतलब? ब्याह मेरा होगा या मेरे बाप का? गये साले बेटे की नीलामी बोली बोलने वाले। मगनचोला अपनी शादी खुद यानी मनपसन्द की रचा रहा है। बस थोड़ा सब्र करो।'

'सब्र करें या हम सब लोग मिल अब शुभ कामनाओं के रूप में तुम्हारे लिए तपस्या करें?'

'तुम सब साले नौकरी के लिए खपो-तपो।'

'तो क्या तुम्हें नौकरी नहीं चाहिए?'

'चाहिए काहे नहीं? मगर क्या वह पढ़ाई से मिलेगी? मेरी बात सुनो। डिग्रियां लेते जाओ। फिर प्रतीक्षा करते रहो। टोह में रहो, कोई समर्थ ससुर

मिले जो कन्या के साथ सर्विस भी प्रजेंट करे। या फिर इतना पैसा दे जितना पूरी सर्विस में बचाया न जा सके।'

'तुम्हारा मामला कैसे बैठा है? पहले का चांस है या दूसरे नम्बर का सौदा है?'

'दोनों है। ऊंचे दरजे के बैचलर्स को ऐसा बुलन्द छप्पर फाड़ भाग्य मिलता है यारो। तुम सब तो देहाती मल्लू ठहरे। किसी का हाथ हाई स्कूल में पीला हो गया तो कोई इंटर में बिक गया। किसी के कई-कई मेमने उछल आये।···बेचारे फादर चूक गये। आगे पढ़ाना ही था तो शादी रोकना चाहिए था। हर साल दो-चार हज़ार का भाव बढ़ जाता।'

'तो क्या इसी हिसाब से तुम्हारा तिलक बढ़ा है? कितनी मांग थी? क्या मिल रहा है? कुछ बताओगे?'

'मामला अथाह है।'

'तप से तो थाह लग जानी चाहिए।'

'तू मज़ाक करता है? सुन, रामायण में लिखा है, 'सुत तप ते दुर्लभ कछु नाहीं।'

'तो क्या तू भी राजा प्रताप भानु वाली कहानी से कपटी तापस एकतनु की भांति तप करता है?'

'आज का हर ऐसा वर एकतनु है।'

इस बात पर विजय मुंह बा देता है। हाय, यह पट्टीदार पुत्र क्या कह रहा है? क्या वह भी ऐसा हो सकेगा?

विजय मगनचोला का पट्टीदार ही नहीं, चेला भी है। कल उसके तिलकहरू आए थे। उन लोगों की राय हुई, लड़का सामने बुलाया जाय। वह आया और इस प्रकार आया जैसे दीक्षान्त भाषण के लिए कोई वी० आई० पी० आ रहा हो। आते-आते गागल के भीतर से एक नज़र लम्बी चरन पर बंधे अपने बैलों के झुंड पर डाल ली। चारपाइयों के पास आकर पिता के पास सिरहाने की तरफ बैठ जाना उसे सुविधाजनक लगा। क्षण-भर के लिए गागल उतारकर हाथ में ले लिया। फिर बालों की कुछ आगे आयी लटों को पीछे ढकेल गागल चढ़ा लिया। तिलकहरू लोगों ने देख लिया, बिकने के लिए सामने बैठा एक अदद वर काना नहीं है। सामने से चल कर आया है, लंगड़ा नहीं है। बी० ए० में पढ़ता है। पीछे के दो-दो फाइनल वाले फाटक ऐसे ही नहीं टूटे होंगे। लड़का पढ़वैया है, सुन्दर-सुभेख है। भविष्य उज्ज्वल है। सौदा चटपट पट जाना चाहिए।'

'क्या तिलक लेंगे साहब?'

विजय के पिता अर्थात् तुलसी बाबू से उधर के लोगों में से एक सज्जन ने पूछा किन्तु ऐसा लगा कि उन्हें तुरन्त अपनी भूल ज्ञात हो गयी। लड़के के आगे

इस प्रकार नहीं पूछना चाहिए।

'अच्छा बचवा जाओ।' उन्होंने कहा।

अव विजय क्या करता ? हलकी लम्बी सांस भर उठ गया। वास्तव में वह जान लेना चाहता था कि कितने पर मामला बैठ रहा है। शादी तो उसकी उसी साल लगी थी और बारह हजार नकद मिल रहा था जिस साल हाई स्कूल की परीक्षा दी थी। पिता चाहते थे कि परीक्षाफल निकलने के पूर्व सब हो जाय किन्तु पंडितों ने कहा, बृहस्पति नहीं बन रहा है। शादी रुक गयी। अच्छा हुआ। क्योंकि परीक्षाफल आशा के विपरीत ठीक निकला तो एक ओर विजय चाकू और चिट के कमाल पर मुरीद हो गया और दूसरी ओर उसके पिता बारह से बीस पर आ गए। विजय का भी हौसला बुलन्द हुआ। कॉलेज में जम गया। गोल वांधकर इन्टर भी कर लिया। बालों को और बढ़ जाने दिया। कहीं से 'धर्मयुग' का एक रंगीन पन्ना मिल गया तो फैशन की बुलन्दियों वाले सूटिंग के विज्ञापन की कतरन दिखा बक्सर से कपड़े खरीदे तथा सिलवाये गए। स्कूटर वालों से दोस्ती बढ़ी। एक ने कहा, 'बेटा, स्कूटर का दहेज इंटर वालों को नहीं मिलता। बी० ए० करो।' बात मन में बैठ गयी। उसने घोषणा कर दी, शादी अभी नहीं करूंगा। मैं बी० ए० करूगा। मैं अब जूनियर छात्र-नेता भी नहीं बना रहना चाहता। मेरी पढ़ाई को अब तेज़ हो जाने दो।

पिता ने सुना तो इस फैसले को फिक्स डिपाजिट की शैली में लिया। अच्छी शादी वाली अच्छी-खासी इनकम के लिए एक डिग्री की कसर काहे रह जाय। जा वेटा, छोड़ कस्बा। किसी बड़े शहर की बड़ी यूनिवर्सिटी में एडमिशन करा।

जिस बड़े शहर इलाहाबाद की बड़ी यूनिवर्सिटी में मगनचोला और भगवान् द्विवेदी की सुपुत्री विद्या की जोड़ी पहले से धंसी थी उसमें विजय भी खिचा-खिचा पहुंच गया। विद्या की कहानी एक साहस की कहानी है। लोगों को आश्चर्य होता कि एक गांव की लड़की में ऐसा साहस कैसे आया ? पिता के न चाहते हुए भी अम्मा से पैसे ले भुवनेश्वर भइया के साथ इलाहाबाद चली गयी और इंटर में प्रवेश ले लिया। उसे यह आशंका बराबर बनी रहती कि पिताजी घर-वर की तलाश के साथ पढ़ाई बन्द करा देंगे। द्विवेदीजी बार-बार कहते, 'ज्यादे पढ़ना-लिखना दिक्कत पैदा करेगा। लड़की चूल्हे-चौके के लिए बेकार हो जायगी। तब उसे पार-घाट लगाने के लिए बैठे-बैठे हुकूमत और खड़े-खड़े मटरगश्ती करने वाली ऊंची जमात तक पहुंचने के लिए दौलत की जो सीढ़ी ज़रूरी हो जायगी वह कहां है ? यदि मर-खपकर एक पढ़ी लड़की के लिए रकम जुट भी गयी तो क्या हुआ ? विद्या की और बहनों का क्या होगा ? ससुरी पढ़ने में सबकी सब एक से बढ़कर एक पलीता। लेकिन कीमत क्या रह गयी पढ़ाई की ? नौकरी दुःस्वप्न है। खानदान में या गांव-घर में किसी औरत ने नौकरी की नहीं। इधर शादी के

लिए देहात के गृहस्थ परिवार में अधिक पढ़ाई-लिखाई एक भारी अयोग्यता।'

और क्या विद्या स्वयं नहीं समझती है यह सब ? समझती है कि वह एक भारी बोझ है। किन्तु यह बोझ गांव के किसी नये धनी के गोदाम में क्यों फिके ? वह चुपचाप बाप से लड़ेगी। उसकी लड़ाई का हथियार है पढ़ाई और उसकी पीठ पर हैं उसके भुवनेश्वर भइया। कितने अच्छे हैं ! घर आकर उसके पक्ष में अम्मा से बहस कर जाते हैं। मां कहती है, 'अब और पढ़कर क्या नौकरी करनी है ?' और एक दिन भइया के सामने ही मन की बात विद्या के मुंह से निकल गयी, 'सब लोग तो ऊंचे-ऊंचे सपने देखती हैं। वह क्यों नहीं देखे ? फिर बिना पढ़े क्या होगा ?'

तो, क्या रूपरेखा है उन अव्यक्त सपनों की ?

गांव में नया-नया हेल्थ सेन्टर खुला तो वहां भुवनेश्वर से मिलने में विद्या को बहुत सुविधा होती है। उसने डॉक्टर की बी० ए० पास पत्नी से मेल-जोल बढ़ा लिया। एक दिन वहां से विद्या घर लौटी तो उलटे पल्ले वाली आधुनिक ढंग से बंधी साड़ी देखकर अम्मा चौंक गयीं। बोलीं—

'किसने सिखाया है रे ?'

'डॉक्टरनी चाचीजी ने।' उसने कुछ लजाते हुए उत्तर दिया।

'मेम बनेगी ?···ऐसा लगता है कि तुम्हारा कान काटकर उस डॉक्टर के घर गाड़ दिया गया है। उन लोगों की रहन मत सीख। उस दिन देखा, तू गुड़िया को उस तरह डांट रही थी जिस तरह डॉक्टरनी अपने नौकर को डांटती है।···जा रसोई घर में अभी जूठे बर्तन पड़े हैं, देख।'

मगर रसोई घर में जाने से पहले विद्या टेबुल पर बैठकर गेस पेपर उलट-पुलट लेना अच्छा समझ रही है। अम्मा की टिप्पणी से मन भारी हो गया है तो क्या ? सपने दब नहीं रहे हैं। वे और अधिक फड़फड़ा उठते हैं।···भुवनेश्वर भइया···नये युग की नयी बातें···पढ़ाई···परीक्षा···इंजीनियर···डॉक्टर···।

हेल्थ सेन्टर की स्वतन्त्र बिल्डिंग अभी बनी नहीं है। तब तक भगवान् द्विवेदी के ही बैठकखाने के एक भाग में उसका दवाखाना और डॉक्टर का निवास है। छुट्टियों में जब भुवनेश्वर घर आता है, प्राय: विद्या भी आ जाती है। इस वर्ष का ग्रीष्मावकाश तो कितनी-कितनी चहल-पहल लेकर आया। उसके भुवनेश्वर भइया की शादी है। शादी बनारसी की भी लगी है।

बनारसी ?

विद्या इलाहाबाद जाकर भी उसे भूल नहीं सकी। अरे, वह शैतान भूलने लायक है ?

उस दिन सुबह नदी किनारे मैच के विषय में अभी बहस और चलती किन्तु एक तो उसकी नज़र विद्या पर पड़ गयी। दूसरे याद आया कि शर्ट अभी धोबी

के यहां से नहीं आयी और वह लुंगी कसते, गमछा कपार पर बांध, यह घोषणा कर उठ गया कि इस फाइनल मैच में अपने कॉलेज का कोई मास्टर रेफरी बनाया गया तो गोली चल जाएगी।

घर पहुंचकर बनारसी ने छोटी बहन को धोबी के यहां भेज खाना खाने के लिए हल्ला किया। स्नान ज़रूरी नहीं। लड़का जल्दी में है। बारह बजे वाला शो नहीं छूटना चाहिए। कस्बा दस मील दूर है।···कहां है पाइंट, कहां है पेटी? ···सायकिल में हवा? फिर कहता है, मां मुझे स्कूल जाने की जल्दी है। रोज पहली घंटी छूट जाती है।···जल्दी कर। लड़का भोजनार्थ डट गया चारपाई पर। मां झिड़कती है—

'खूब सऊर है। रामजी करेंगे तो भर घर की मेहरी उतरेगी और ई देखो रे, खटिये पर···।'

तभी सभापतिजी आ गए, बनारसी के पिता। बोले—

'क्या है, क्या बात है?···अरे देखो, वे लोग आ गए। कचौड़ी, भुजिया और चाय तैयार करा कर जल्दी भेजो।'

ब्रेक तगड़ा था। सारी तेज़ी खतम। प्रोग्राम ठप। अचानक बनारसी गम्भीर होकर चिन्तक मुद्रा में आ गया। 'वे लोग आ गए।' कौन लोग? मतलब साफ है। ससुरे जल्दी से यह विवाह तय कर लेते तो रोज-रोज स्कूल जाने के बखेड़े से मुक्ति मिलती। पढ़ाई-लिखाई बनारसी के वश की नहीं। चार साल तो हुआ इसी हाई स्कूल के दर्जे में। देखें इस साल क्या होता है। पेपर तो सब एकदम चौचक हुए हैं। बहुत सारा विना पढ़ा यानी आउट आफ कोर्स आ गया तो भी यारों की मदद से सब चुटकी बजाते हल।···मस्टरवे ससुरे तो जैसे कसम खा लिये हैं कि कुछ नहीं पढ़ाएंगे, कोई क्या कर लेगा? फिर यह कोई स्कूल है? यहां से निकलकर कोई कुछ नहीं हुआ तो बनारसी किस गली का पियादा बनेगा? इस परीक्षा में पास हो जाय, यही बहुत है···आगे अब पढ़ना क्या है? खूब पता है पिताजी को भी। मगर बनारसी पढ़ाई छोड़ सानी-पानी वाली कम्पनी में भर्ती हो जाएगा तो दहेज कैसे तेज होगा? अतः पढ़े चलो बच्चा।

बनारसी बैठे-बैठे बोलता है, 'अरे मैं तो भूल ही गया था। अभी तो नहाना बाकी है। मां खाना मत निकालो।'

बनारसी की शादी तय हो गयी। चांडाल चौकड़ी में बच रहा अच्छे लाल। बेचारा घुट रहा है। कितना सुखद होता सबकी शादियों का वर्ष एक होना। अपनी ओर से प्रयास भी बेचारा कम नहीं करता है। परीक्षा से दस-बारह दिन पूर्व की बात है। धड़धड़ाते हुए प्रिंसिपल साहब के सामने जाकर खड़ा हो गया था—

'हमको आपने बुलाया है?'

खाया-पिया सुघड़ शरीर, प्यारा-प्यारा किन्तु बेलौस मुखमण्डल, सिर पर काले-रूखे बालों की साफ-सुथरी नियन्त्रित मोटी हिप्पी कट तह जो पीछे बिखर-कर शर्ट की कालर पर छायी है, चौड़ी मोहरी के बेलबाटम के नीचे ऊंचे हिल का शू, लड़का 'बड़का' जैसे खड़ा था।

'ओ! तुम ? चटाईटोला के नवीन बाबू के सुपुत्र ?' प्रिंसिपल राममनोहर सिंह नाक सुड़ककर कहते हैं, 'तुमसे कहना है कि इतने अच्छे खुशहाल किसान परिवार के होकर तुम क्या करोगे पढ़कर या परीक्षा देकर ? महीने-महीने भर गोल रहते हो। जाकर खेती कराओ या कोई और जगह खोजो। प्रिपरेशन लीव में भी राउंड लेते रहते हो। जाओ, बक्सो इस आदर्श विद्यालय को।'

'नहीं साइब, जब तक शादी नहीं हो जाती तब तक पढ़ना ही है और यहीं इसी विद्यालय में पढ़ना है। परीक्षा में पास हो जाने पर तो पढ़ना ही है, फेल हो जाने पर भी पढ़ना है। वैसे इस साल हमारा परीक्षा-फल अच्छा रहेगा।' लड़का गम्भीर होकर कहता है।

'तब अपने पिता से कहो, जल्दी तुम्हारी शादी कर दें।…जाओ, कल उन्हें भेज देना।'

स्कूटर स्टार्ट कर लड़का गंगा घाट का कार्यक्रम रोक कर घर की ओर चला। उत्तेजना में गाड़ी उड़ रही थी। दब जाने दो कुछ सालों को। एक बार मन में आया, गाड़ी मोड़कर लौट चलें और खड़े-खड़ा कालर खींच उस प्रिंसिपल के बच्चे को दो तमाचा रसीद करे।…उस दिन हनुमानप्रसाद से नहीं डरा तो यह पिद्दी किस गिनती में है। कितने ठाठ से खेत कटवाकर बोझ लिवा जाते रहे। भरी बन्दूक साथ थी। और देखते-देखते छीन ली तो कैसे पागल सियार बन चक्कर काटने लगे। चाहता तो ढेर कर देता। मगर नेता का हुक्म नहीं था। गोलियां तड़काकर बन्दूक फेंक दी। गजब नेता है ! बाप को भी नहीं बख्शता है। राजनीति और बाप कि बाप और राजनीति ? या कि धोखा ? कहीं ऐसा तो नहीं कि दोनों मिलकर नाटक करते हों ?…नहीं, ऐसा नहीं। हमारा नेता खरा सोना। करइलवा तो बस माटी। और यह प्रिंसिपल ? माटी का केंचुआ। तो केंचुआ पर क्यों हाथ उठाऊं ? चलूं बापजान से पूछूं—

'आप हमारी शादी क्यों नहीं कहीं ठीक कर रहे हैं ? प्रिंसिपल अंड-बंड बोल रहा है।' अच्छेलाल घर पहुंच पिता नवीन बाबू से बोला।

'बोलता है तो बोलने दो। शादी की तुम्हें क्या चिन्ता है ? वह तो मेरे सिर का दर्द है। तू बस पढ़ता चल। इस साल पास हो जाओगे। स्कूटर कहा, वह आ ही गया। अब क्या चाहिए ? अभी आगे भी पढ़ते चलना है।'

'अब पढ़ाई क्या खाक होगी ? मगन दादा की शादी हो रही है, बनारसी की हो गयी और विजय की शादी तय हो गयी। मैं ही क्यों पिछड़ूंगा ? दूसरी बात

यह कि इस प्रकार मैं अधिक पढ़-लिख जाऊंगा तो, खेती नहीं कराऊंगा।'

'तो क्या करोगे? नौकरी कहां मिलेगी?'

'नौकरी नहीं, मैं ठीकेदारी करूंगा।'

लड़का उत्तर की प्रतीक्षा न कर स्कूटर स्टार्ट कर गंगा-घाट पर अर्थात् अपने भावी धन्धे के दीक्षा विद्यालय पर पहुंच गया। चांडाल चौकड़ी चाय की दुकान पर जमी थी। मगनचोला को अच्छे लाल की प्रतीक्षा थी। उसे आते देख वह आगे बढ़ आया और उसे रोककर बोला—

'देख बे, जूनियर नम्बर दो, आज ही वह काम होना है। पार्टी को बिना अधिक परीशान किए उसकी सायकिल-घड़ी तिड़ी करना है। कहां इतनी देर हुई?'

'क्या बतायें' लड़का पसीना पोंछकर कहता है, 'वह प्रिंसिपलवा है न, कहता है कि इस स्कूल को बकसो। सो, कैसे बकसूं? अभी तो शादी साली न जाने कहां अटकी है।'

'नहीं, शादी के बाद भी तुझे कॉलेज को नहीं बकसना है और देख, नहीं मानता है तो प्रिंसिपल से बोल दे, वह खुद कॉलेज को बकसे अथवा तुम्हारी राय हो तो बकसवा ही दिया जाय।'

उस दिन के बाद बनारसी का पता नहीं चला। आज उसकी प्रतीक्षा है। मगनचोला के सामने समस्या है कि यह पूरा अप्रैल यदि शादियों की मूर्खताओं में बीत गया तो अगले महीने विधान-सभा के चुनाव की तैयारियों का क्या होगा? ···विवाह जाय चूल्हे भाड़ में, किसी कीमत पर उसे यह चुनाव जीतना है। जन-सम्पर्क के तूफानी कार्यक्रमों को कल से ही चालू कर देना है। संजयजी के कार्य-क्रमों को जन-जन तक पहुंचा देना है। पूरे क्षेत्र का युवा वर्ग उसके साथ है। यह बीच में सड़क की राजनीति ससुरी आ घुसरी। जनता पार्टी वाले उसे युवा कांग्रेस के विरोध मे संघर्ष का मुद्दा बनाने के लिए नया-नया कलर दे रहे हैं।···मन करता है उस साले रामरूप के जीजा बच्चू को दो महीने के लिए गायब करा दें। ···खैर, वन की मुर्गी जायेगी कहां? नकेल हाथों में है। उसे पटना पड़ेगा या हटना पड़ेगा। यही एक रोड़ा है। बहुत आदर्शवादी बनता है। ऐसे गांधियों को धकियाना मगनचोला जानता है। बिना धक्के के चक्का नहीं चलने वाला है। बस···एक धक्का और दो, ज़रा जोरदार।

३७

उस दिन रविवार था। बहुत सवेरे-सवेरे ही रामरूप का मन डांवाडोल हो उठा। साले साहब की बात भीतर सालती रहती है कि उसका सलफा कांटा जैसे

निकलने का नाम नहीं लेता। गजब कांटा है। निकलकर भी ज्यों-का-त्यों करक रहा है। कब तक ऐसे चलेगा ? वह सोचता है, रामरूप, तू अपनी आदत बदल। सीधी बात को भी तू कितना घुमाकर सोचता है ? और इस प्रकार अज्ञात भय और दुश्चिन्ताओं ने उसे एकदम अस्थिर कर दिया। भारतेन्दु वर्मा बनारस गया था। अकेले दम घुटने लगा। किताबों का सहारा लेना चाहा। कोई कविता की पुस्तक हो तो बेहतर। मनोयोग पूर्वक कवि की भावधारा में डुबकी लगायी जाय। याद आया; पुस्तकालय से 'तारक वध' ईशू कराकर लाया है। आलमारी खोल-कर पुस्तक निकाली। ५५८ पृष्ठों का भारी-भरकम महाकाव्य सामने था। उस महासिन्धु में उतरना था। दो पृष्ठ उलटने के बाद उसने पुस्तक बन्द कर उसकी मोटाई का जायजा लेना शुरू कर दिया। कितने दिनों में कवि ने इसकी रचना की होगी ? कितने दिनों में कोई अध्यापक इसे पढ़ डालेगा ? इसे पढ़ने में जो श्रम और समय खपेगा क्या उसका मूल्य मिल जायगा ?···अरे, कौन पढ़ता है। अब महाकाव्य ? दीनदयालों और मगनचोलों के युग का आदमी पढ़े भी कैसे ? रामरूप, कुछ और सोच। मन बहलाने के लिए महाकाव्य पढ़ने जैसी तजबीज बहुत ऊटपटांग लग रही है। चल सरेहि में, उजाड़ सीवान के खेतों की दुनिया देख, सुबह वहां कैसा लगता है ?

ग्रीष्म की सुबह कितनी मनमोहक होती है ! फिर झरझर-झरझर पुरवा डोल रही हो तो क्या पूछना ? रामरूप को याद आया। कागजी महाकाव्य से बढ़कर प्रकृति का नैसर्गिक महाकाव्य जो गांव के बाहर रात-दिन पन्ने-पन्ना फरफराकर उड़ा करता है, उसके एक पृष्ठ को कल शाम को उसने देखा था। डूब गये सूरज की लाल धूल के बीच क्षितिज के परदे पर उगी और बगीचे के ऊपर-ऊपर दिखलायी पड़ती एकाकी ताड़ वृक्ष की वह थी न एक छतरी। देर तक तन्मय होकर देखता रहा। कब लालिमा में नील घुलकर उसे काटने लगा, उसे पता नहीं चला। कब छतरी धुएं-सी उतरती आती हलकी-हलकी कालिमा में डूब गयी। यह भी पता नहीं चला। हां, पता चला कि अबेर हो जाने पर कई तरह का अकाज हो जायगा। कैसा अकाज ? कौन-सा अकाज ? यह सब कुछ साफ-साफ नहीं था। परन्तु अज्ञात अकाज के सहारे क्षण-भर में रामरूप पूरी तरह संसार में लौट आया था। अज्ञात अकाज के साथ अज्ञात भय और दुश्चिन्ताओं का सीमाहीन विस्तार। मन अचानक सिकुड़ गया था। चुपचाप खाट में पड़ जाने की इच्छा जोर मारने लगी। कभी-कभी वह खाट भी कितनी दूर हो जाती है।

मगर आज इस ताज़े सुबह की बात कुछ और है। पता नहीं कहां से एक लहर आया है। बहुत दिनों के बाद बावजूद मन में घुलते एक घटना की याद के कड़वे-कसैलेपन के यह एक फुरसती सुबह बहुत अच्छी लगी है। मन करता है किसी जगह चलें और गांव के लोगों की गपशप सुनें। सुनें—अब धरती पर मघई

बाबू से बढ़कर बड़ा आदमी क्या खाकर जनम लेगा ? परिवार में झगड़ा लगा। दो वर्ष तक पंचायत और मुकदमे का तनाजा रहा। तमाम खेत परती पड़े रहे मगर कहीं से एक पैसा कर्ज नहीं लिया गया। अब सोचो, घर की तरी कितनी मजबूत थी ? अलग-अलग होकर चार जगह छिटा गये। अब भी दरवाज़े पर हाथी जैसे दस-दस बैल हैं। किसी का बना, न उसका बिगड़ा।···ज़माना कैसा आया ? सब कुछ चला गया। सरकार अब कुछ रहने नहीं देगी। जमींदारी लिया, महाजनी-साहूकारी लिया। खेत खरीदना-बेचना मुश्किल हो गया। जो बचा है वह भी ले लेगी तब तसला लेकर सरकारी होटल में चलकर लाइन लगाना। भोजन भी सरकारी बोलो, सियावर रामचन्द्र की···हे भाई, पुरनबंसिया आजकल खूब गुदा गया है। बाप को देखो, सिलहट में कुली-कबाड़ी बन चाह बगान में खटनी करता रहा और बेटा को देखो पगड़ी बांधकर मजलिस कर रहा है। इसी को कहते हैं कुदरत का खेल। कहता है गठिया का करइलवा कि 'पढ़े फारसी बेचे तेल···।'

फिर कहने वाला रामरूप की उपस्थिति से सहमकर चुप हो जाये। पटती नहीं है तो क्या हनुमानप्रसाद उसका ससुर है न ? और वह अब रामरूप की खुशामद में इधर-उधर देखकर कोई नया शिगूफा उठाये—सुना है कि 'हाय खेत, हाय सड़क' कहकर रात गठिया में दीवनवा छाती पीट रहा था तो ताजियादारों के सरगना शौकत मियां ने उसे झटककर बाहर ढकेल दिया और सुबह जो वह आज चारपाई से उठा है तो कहता है, जा रहे हैं थाने में रपट करने कि उसकी कमर का डोरा टूट गया है।

लेकिन ऐसे गपशप में रामरूप रम सकेगा ? बेकार और निठल्लों की बैठक-बाजियां उसे विराम दे सकेंगी।

वह झटके से उठा। कुर्त्ता और जूता सहेजने में कितना विलम्ब लगता ? माथे पर गमछा रख लिया। गांव से बाहर हुआ। देखा, सवेरे-सवेरे पिताजी खांची में खाद लिये चले जा रहे हैं। आश्चर्य ? ऐसी अनहोनी कैसे घट रही है ? याद आया, घर में एक दिन चर्चा चल रही थी, पिताजी एक बीघे खेत में अपने ढंग की नयी खेती करेंगे, बतौर निजी प्रयोग के। तो, क्या चर्चा कार्यान्वित हो गयी ? संगीत माटी पर उतरेगा ?

रामरूप ने रास्ता बदल दिया। अगले मोड़ पर देखा, सभापति तूलप्रसादजी हैं। कुदाल से खेत के भीतर दूब कोड़ रहे हैं। याद आया, जब वह अध्यापक नहीं था तो वह भी इसी प्रकार सुबह की जुड़ासी में दूब कोड़ने निकल जाता था। सौ चास न एक पास। मुहावरा याद आया। अब ये भी भूलते जा रहे हैं। असल में याद करने लायक अब नयी-नयी बातें सामने आती जाती हैं।···कितने बेलौस ढंग से साले साहब श्रीमान बाबू भुवनेश्वर प्रसाद उर्फ मगनचोला ने प्रस्ताव रखा, 'आप हमारी पार्टी में आ जायं तो वह पांच हज़ार वाला मामला ऊपर से चुटकी

बजा कर रफा-दफा करा दूं।'

बेशर्म, बदतमीज़...।

झटके से रामरूप अब कहीं और फिक गया।...एक सप्ताह हुआ कि वर्मा ने एक संक्षिप्त-सी खबर दी। मित्र है न? बहुत बढ़ा-चढ़ा कर क्यों कहे?...यूनिवर्सिटी का उसका क्लासफेलो इस जिले में डी० एम० बनकर आ गया। वह ए० आर० दोस्त रहा ही है और इस प्रकार को-ऑपरेटिव संकट दूर हुआ। खबर सुनकर रामरूप को खुश होना चाहिए था न? मगर वह पता नहीं कहां डूब गया। यही तो उसकी खराब आदत है।...यदि मित्र का मित्र डी० एम० नहीं होता तो क्या होता? कहां होंगे उसके जैसे इस देश के अगणित भ्रष्टाचार-पीड़ित लोगों की पहुंच के भीतर डी० एम० लोग? फिर एक भ्रष्टाचार से मुक्ति के लिए दूसरा भ्रष्टाचार आवश्यक है? क्या अब इसके बिना इस देश में काम चलने वाला नहीं? यह देश कहां जा रहा है?—और मैं भी कहां जा रहा हूं?

सचमुच रामरूप बगीचे से बाहर होकर एक अटपटे रास्ते पर बढ़ता चला जा रहा था। हां, इधर कहां जा रहा है? कोई उत्तर नहीं था। शायद मन को स्थिर करने के लिए वह शरीर को थकाना चाहता है और इसीलिए इधर बढ़ रहा है। कटिया हो जाने से चारों ओर सूखी-सूखी राहें दिखायी पड़ रही हैं। एक राह तो चरने जाने वाले मवेशियों द्वारा तिरछे-तिरछे लग गयी है। असाढ़ में पानी बरस जाने पर आदतवश ये मवेशी इसी तरह खेतों के बीचों-बीच से धांगते जायेंगे। कौन रोकने वाला है? असली स्वराज्य हो गया है। मवेशियों के खुर से दबकर गीली ज़मीन जब पत्थर जैसी हो जायेगी तो हल में नधे बैलों पर क्या गुज़रेगी? कलेजा फटने लगेगा। खेत वाला हाय करके रह जायगा। हलवाहों की भी नसें ढीली हो जायेंगी। बड़े-बड़े काले-काले ढेले उखड़ने लगेंगे। कड़ा तावा तोड़ने में हलवाहों को बार-बार सटाकी भांजनी पड़ेगी। बैल आगे बढ़ने में भभरने लगेंगे। अरे, यह तो उनका ही कलेजा है कि करइल की यह कड़ी धरती तोड़ते हैं। देव नहीं, वे सचमुच महादेव हैं। ऐसे महादेवों का हलवाहा, क्या इस धरती पर सबसे महान् महामानव नहीं है? वह खेती और खेतों की दुनिया का कितना शक्तिशाली ब्राह्मण-पुरोहित है। उन्हें छोटा और नीच समझने वाले, बातों में जीने वाले और ऊंचे शब्दों के व्यापारी वास्तव में चोर-चाई हैं।...काश कि विधाता ने रामरूप को अध्यापक न बनाकर एक हलवाहा बनाया होता। अथवा समाज की ही ऐसी व्यवस्था रही होती कि उसमें हल चलाने के संस्कार का विकास हो गया होता। वह आज की अर्थ-अनर्थकारी विद्या पढ़कर नौकर क्या हुआ, शायद मनुष्य नहीं रह गया। ...क्या यह मात्र परिस्थितियों का दोष है कि गांव में कोई मनुष्य, मनुष्य की तरह रहना चाहे तो उसे वैसे रहने नहीं दिया जायगा? क्या गांव के वर्तमान ढांचे में अब छोटभइयों की कोई आवाज़ नहीं रही? नहीं, बड़भइयों के भूत से गांव को

मुक्त होना ही होगा। इस खेतों के स्वर्ग के बीच गांव को नरक बनाने वालों की पहचान होनी चाहिए। अपने बीच होकर भी ये अपने नहीं हैं।

जिस पतले किन्तु मले-दले चिकने मार्ग को पकड़े रामरूप आगे बढ़ रहा था उसके दोनों ओर 'खेझड़ा' नामक हरे-हरे बौने झाड़ जैसे पौधे उग आये थे। उनमें अब नन्हे-नन्हे फल लगने लगे थे। वे जब पुष्ट होकर कुछ दिनों में पक जायेंगे तो चलती लू और तपते-सीवान में औरतें धैर्यपूर्वक इन फलों को तोड़ती दिखायी पड़ने लगेंगी। चावल-चने के भुजने में मिलकर यह स्वाद को बहुत बढ़ानेवाला सिद्ध होता है। तेल भी निकलता है।···देखो, प्रकृति की लीला। फसल सूख गयी। खर-पात और घास तक सूख गयी। करइल की माटी में दरार फट गये। तब जाकर इस खेझड़ा महाशय के हरे-भरे हो लहराने का सोजन आया। अपनी-अपनी प्रकृति काम करती है न ? दुख-ताप सब एक प्रकार से सहायक हैं।

रामरूप को पंडितजी का कथन याद आया, 'जजमान, अभी क्या ? जब घोर कलिकाल आ जायेगा तो आदमी इन खेझड़ों के बराबर होने लगेंगे।' और वह अकेले में हंसने लगा। चलो, खैरियत है। अभी घोर कलियुग नहीं आया। अभी तो खेझड़े अधिक से अधिक उसके घुटने बराबर हैं। अभी लोगों में सात्विक अंश बाकी है। फिर उसने सोचा, हो सकता है जिस युग में यह भविष्यवाणी की गयी उस युग में खेझड़े आज के आदमियों की लम्बाई के बराबर होते हों। चकितकारी गिरावट के साथ उत्तरोत्तर चतुर्मुखी ह्रास और हीनत्व एक ज्वलन्त सत्य है। लोग छोटे नहीं कितने खोटे होने लगे, पैदायशी काइयां, कुटिल। स्वादहीन, गंधहीन मनुष्य ही नहीं, ढेर-सारी चीज़ें भी होने लगीं जैसे आलू, प्याज, चावल, चना—खूब ढेर-ढेर पैदावार, लोगों को भूखों मारने वाली, अकाल-दुकान की पैदावार और सम्पत्ति की सत्यानाशी बाढ़।

पगडण्डी ने रामरूप को पीपल के उस विशाल छायामंडित वृक्ष के नीचे पहुंचा दिया जिसे रामरूप पिता की भांति पूज्य समझता है। जब से उसने होश सम्भाला, इस एकांत के बादशाह को इसी प्रकार लहराते देखा। बचपन में तोतों-सुग्गों को पकड़ने यहां साथियों के साथ आया करता था। इसके कोटरों में अब भी उनकी कमी नहीं परन्तु जब उसके उस बचपन के तोते उड़ गये तो ये कोटरों के तोते नाकाम हो गये। उसे पीपल के पत्तियों की हरहराहट बहुत भली लगी। वे कितनी मुलायम और चंचल-चिक्कन हैं ? हरदम हिलना-डुलना और समवेत हरहराना कितना अच्छा लगता है ? रामरूप के मन की भी क्या यही स्थिति नहीं है ? वह कितना चंचल रहता है, कितना डांवाडोल और एकान्त में भी उसके भीतर जैसे कोई भीड़ हरहराती रहती है।

वह पीपल की छाया में घास पर गमछा डाल बैठ गया। गांव की ओर दृष्टि गयी। गांव और उसके बीच लगभग चार किलोमीटर में चमचमाती धूप कस

गयी थी। उत्तर ओर कुछ दूरी पर खलिहान सिमटकर अन्न और भूसे की राशियों में चमक रहा था। अभी पूरा मनसायन जमा है। सुनसान प्रतीक्षा में है। एक बैलगाड़ी खलिहान से चली है। उस पर भूसा लदा है। खेतों में छिट-फुट मवेशी चर रहे हैं। सूखे ढेले में क्या चर रहे हैं? खेत तो राजा है, किसान काट ले गया तो क्या हुआ? बहुत कुछ झड़ कर पड़ा है। सूने खेत में बबूल अपनी छतरी ताने खड़ा जैसे उस झड़े डंठल, बाल अथवा अन्न की रखवाली कर रहा है। तीखी धूप ओढ़ सोये करइल के खेत सूने हैं तो भी कितने अच्छे लगते हैं। इनकी काली माटी का सोना खलिहान के रास्ते किसान के घर पहुंचने वाला है।···नहीं, कहां जाता है उनके घर? कोई व्यापारी उसे कितनी कृपा करके नोट में बदल देगा और मण्डी में पहुंचा देगा। अब शुरू हो जायेगा बाजार में भाव के चढ़ने-उतरने का नाटक। अरे, इस सीधे-सादे संसार के पीछे गद्दी का, कागज का, तार-टेलीफोन का, बुकिंग-बैंगन का और बैंक आदि का कितना-कितना कुचक्र लगा है? इसी माटी की बदौलत कोई चांदी काट रहा है और कोई कूड़ा बटोर रहा है। किसान के अनाज के व्यापार में आज जिसने हाथ लगाया कल उसकी मंडी में कोठी खड़ी हो गयी, गोला दमदमाने लगा और गद्दी के इर्द-गिर्द सुनहरे शुभ-लाभ का ताम-झाम इकट्ठा हो गया। इधर किसान पुश्त-दर-पुश्त उसी अनाज को पैदा कर-करके आज भी उसी तंगदस्ती, फटेहाली और बेहाली में बिलबिला रहा है। खेत देखकर, रकबा देखकर, गल्ला देखकर, और किताबी अनुमान लगाकर किसान को खुशहाल बादशाह घोषित करने वाले कितने भ्रम में हैं। शहरी नेता, व्यापारी और शहरी सरकार के लोग कभी क्या किसान का दर्द समझेंगे?

रामरूप का मन उचट गया। थैली में हाथ डाला। बीड़ी-सलाई लाना भूल गया था। उसे लगा, अब लौटना चाहिए। तभी याद आया, वह क्या करने यहां इस एकान्त में आया?···कुछ याद आया और वह जोर से हंसने लगा। तब चकबन्दी नहीं हुई थी। इस पीपल से कुछ दूर हट पूरब ओर वह उसका एक खेत था। उस साल उसमें दूब फफन गयी थी। वह कुदाल कंधे पर रख नित्य यहां खेत पर सूर्योदय होते-होते पहुंच जाता और दो घंटे कुदाल चलाता। गर्मी के इस मौसम में खेत का ऐसा काम जो होता है सुबह की बेला में ही होता है। इसी बीच एक दिन आया तो एक विचित्र घटना घट गयी। अभी वह इधर रास्ते पर ही था कि एक लड़का झुरमुट से निकलकर गांव की ओर जोर से भगा। तब इस पीपल के दर्द-गिर्द काफी झाड़-झंखाड़ था। वह उसे बेतहाशा भागते लड़के को देखने लगा। अरे, यह तो दयलुआ है। तभी बगल में खांची दबाये, गोबर बीनने की सहज मुद्रा में पीपल के पास से एक लड़की निकली और दक्षिण ओर बढ़ी।···धत्तेरे की। कितनी सुन्दर उनकी इस एकान्त में, गांव से दूर, हवाखोरी और गोबर बीनने के बहाने प्रात-मिलन की योजना थी और यह कैसा विघ्न पड़ा। उस

दिन खेत कोड़ने में रामरूप का मन नहीं लगा। एक वर्जित सनसनी उसे पूरे वक्त अपनी गिरफ्त में रखे रही। यह उसके भूतपूर्व हलवाह की लड़की मंगरी ऐसा गोबर बीनती है? शादी इसकी जब मां की गोद में थी, तभी हो गयी। यह दिपवा साला इसका गौना क्यों नहीं कर देता?

स्मृति की चुहल और मुक्तहास से रामरूप का मन हलका हो गया।··· सवाल फिर सामने खड़ा हो गया। क्या करने यहां आया? मंगरी की जैसी तलाश से उसके नैतिक मन ने जीवन भर वंचित रखा और उसके भीतर से खेत कोड़ने वाला भी खारिज हो गया। काश कि जीवन की वह सहज-सीधी लाइन छूटी नहीं होती। कब से छूट गयी? कब से वह नाना प्रकार की जटिलताओं और तनावों में फंस गया? कब से उसके जीवन की भीड़ से विराम गायब हो गया, जिसकी खोज में वह इस एकान्त में आया? क्या मिला वह विराम? नहीं। आज के आदमी के साथ यह कैसी भीषण विडम्बना जुड़ी है कि वह एकान्त में रहकर भी भीड़ से घिरा रहता है और भीड़ में पड़ने पर अकेला हो जाता है? दुर्भाग्यवश यूनिवर्सिटी छोड़ने के बाद रामरूप साहित्य से दूर हो गया तथापि अब उसे लगता है कि आधुनिक साहित्य का हल्ला ठेठ गांव में घुस यहां उसके सिर यथार्थ बन घहरा गया है? अर्थहीन जीवन की स्थितियों के बीच लड़ी जाने वाली लड़ाइयों का क्या होगा? यह देखो तमाशा कि जिन गांव वालों के लिए सड़क बनेगी वे ही उसका विरोध कर रहे हैं। सड़क बनाने के लिए जहां सब लोग एकजुट हो सरकार से लड़ते, वहां बनती सड़क को रोकने के लिए आपस में लड़ रहे हैं। रामरूप को कल्पना नहीं थी कि मामला इतना तूल पकड़ जायगा और गांव की गन्दी और संकुचित स्थानीय राजनीति का रंग देकर नेता लोग उसे और भद्दा कर देंगे।···चल रामरूप घर। वैशाख की तपन है। पछिमा हुहुकारी देने लगी। सड़क का मोर्चा भी कल इसी तपन में खुलेगा।

३८

ठीक सतुआन के दिन हंगामा-जैसा घहरा गया। समय से कुछ पहले ही नहा-धोकर हनुमानप्रसाद बैठकखाने में अपनी पलंग पर आ गए। थोड़ी देर बाद किसुना ने भीतर से आकर सूचना दी, हवेली में सतुआ-दान, जलकुंभ-दान और विष्णु-पूजा की सारी व्यवस्था हो गयी है। कुछ वर्षों से आज के सतुआ-दान और पूजा का कार्य दुलहिन मलिकाइन के जिम्मे हो गया है। स्वयं हनुमानप्रसाद को इस त्यौहार से कोई दिलचस्पी नहीं। कारण, वे सतुआ खाना एकदम पसन्द नहीं करते हैं। उनकी दृष्टि में इस त्यौहार का महत्त्व मात्र इतनी बात को लेकर है कि आज से नित्य आम के टिकोरों की चटनी मिलने लगेगी। सतुआ खाने की

परम्परा का पालन सुबह 'गुड़-सत्तू' खाकर हो जाती है। मगर उसमें गुड़ और सत्तू से अधिक घी की मात्रा हुआ करती है और वह सूखे मोहन-भोग जैसा पदार्थ प्लेट में रखकर चम्मच से खाया जाता है।

मगर आज हनुमानप्रसाद का मन इस त्यौहारी 'मोहन-भोग' को पाते-पाते भी अनमना बना रहा और आधा से अधिक पहले ही निकालकर खुबवा को दे दिया। चाय पीते-पीते भी हंसने-बोलने और अपने आदमियों को छेड़ने-बनाने वाली उनकी परिचित मुद्रा अनुपस्थित मिली। उन्हें ऐसा गम्भीर देख दूसरे लोगों ने भी सहमे-सहमे अपनी चाय समाप्त की। सुग्रीव ने आहिस्ते से पूछा, 'दीवानजी तो अभी नहीं आए। फिर बुलाने जाऊं?'

सुग्रीव के चले जाने पर खुबवा पास पहुंचा। बोला, 'मालिक, हुकुम हो तो हम भी सोटा लेकर चलें।'

हनुमानप्रसाद हंसी रोक नहीं सके और उनके खुलकर हंसने से वातावरण हलका हो गया। उन्होंने कहा, 'एक ही शादी में साले का सोटा फरकने लगा। घबरा मत, अब तो आज से खरमास चढ़ गया। बीतने दे तो तुम्हारी एक और शादी करा देंगे। तब हमारी पार्टी और मज़बूत होगी।'

खुबवा हनुमानप्रसाद के दरबार में विदूषक का कार्य बहुत खूबसूरती से करता है। इसीलिए वह बहककर चटाईटोला चला गया था तो मालिक को उदास लगता था। उन्हें यकीन था, खुबवा लौटेगा। सो वही हुआ। चिट्ठी पाकर वह लौटा ही नहीं, दुश्मन पर मार का एक मोहरा भी बन गया। सचमुच बाजी पलट गयी थी और नवीन अपने ही दांव पर चूक कर चित हो गया था। खुबवा के यहां आ जाने से चारों मुकदमों का कोई आधार नहीं रहा। हनुमानप्रसाद की ओर से अब एक चार सौ बीस के केस के साथ इज्ज़त हतक का दावा कोर्ट में दायर होने वाला है। हां, खुबवा की सुरक्षा की व्यवस्था कड़ी कर दी गयी थी। पावल पांडे जैसी पुनरावृत्ति न हो।

हनुमानप्रसाद ने देखा, दीवानजी के साथ दीनदयाल भी आ रहा है। इतने सबेरे महुवारी से आ गया? इसी बीच भुलोटन भी सलाम ठोककर सामने बैठ गया। ट्रेक्टर के ड्राइवर बतीसा के इस बूढ़े बाप के आज सतुआन के दिन सुबह-सुबह आने का कुछ विशेष प्रयोजन था जिसके सन्दर्भ में हनुमानप्रसाद ने उसके बैठते ही डांटना शुरू किया, 'तू बूढ़ा हो गया। अब घर बैठकर राम-राम करना चाहिए तो चला है देह जलाने का धंधा करने। जा, जा। भाग यहां से। ज़माना बदल गया। बाप-दादे की इज्ज़त को कहां तक ढोया जायगा। दुनिया दान-पुण्य की नहीं, मतलब की है। सब दिन पानी पिलाने का हमने ही ठीका नहीं लिया है। वेमतलब का काम···।'

भुलोटन चुपचाप सुनता रहा। क्या बोले? पिछले कुछ वर्षों से इस दिन

मालिक ऐसे ही बोलने लगे हैं। कुछ देर बाद स्वयं ही स्वीकृति दे देते हैं, 'अच्छा जा, इस साल और सही। खाना-दाना और कुंडा-कलश आदि का इन्तजाम किसुना से करा ले। और सुन, सुना है कि तू पनिसरा चलाने के बहाने वहां चोरी का गांजा बेचता है। तो, यह ठीक नहीं। किसी को शिकायत नहीं होनी चाहिए। सुबह से शाम तक डट कर काम कर।' और इस प्रकार हर साल भुलोटन की गर्मी भर की नौकरी बहाल हो जाती है। पिछले पन्द्रह वर्षों से वह मालिक की ओर से मौजा बनकटा के भैरो बाबा वाले डीह पर पाकड़ के नीचे पनिसरा चला रहा है।

मालिक की मर्जी की प्रतीक्षा में भुलोटन सामने से हटकर चुपचाप बगल में बैठ गया। उसकी निगाहें सामने के सहन पर कुछ खोज रही थीं। मगर अब कऊड़ वहां कहां था? वह तो बैलों के बांधने वाले घर के एक कोने में चला गया था। वहां बैल तो जाड़े में बांधे जाते हैं अतः खाली घर कऊड़ के लिए उपयुक्त जगह है। पछिमा के झकोरों से भी सुरक्षित है। मगर भुलोटन को डर है कि तम्बाकू पीने यदि वहां गया और इसी बीच मालिक उठकर कहीं चल दिए तब क्या होगा? ऐसे तो कभी निगाह पड़ी कि चट काम हुआ। हनुमानप्रसाद का ध्यान अब दीवानजी की ओर गया। वे खामोश थे। संवाद शुरू हुआ दीनदयाल की ओर से—

'तो अब क्या देर है? खेत पर चला जाय।'

'हां, गर्मी का दिन होने के कारण बी० डी० ओ० सुबह ही आयेगा।…आप लोग चलें, मैं आ रहा हूं।' हनुमानप्रसाद ने काफी गम्भीर होकर कहा।

'सरदार, मैं साफ-साफ कहता हूं। अब आप खुलकर सामने आइए। रिश्तेदारी बचाने से काम नहीं चलेगा। …लोग प्रचार कर रहे हैं कि यह महुवारी और गठिया गांव की लड़ाई है। और आप…।'

'कौन लोग?'

'और दूसरा कौन? आपका दामाद रामरूप है। लगता है, दोनों गांवों को सड़क के नाम पर लड़ाकर तहस-नहस कर देगा। महुवारी के हाई स्कूल में आग उसी की लगाई हुई है। आपको पता है या नहीं, कल वहां हड़ताल हो गई और प्रिंसिपल ने अनिश्चित काल के लिए विद्यालय बन्द कर दिया है।'

'नहीं, मुझे तो इस बारे में कुछ पता नहीं है।'

'पता कीजिए। ऐसे कान में तेल डालकर बैठे रहने से काम कैसे चलेगा?… मास्टर रामरूप ने तमाम अध्यापकों को भड़काया है कि यह दुश्मनों के गैर गांव का प्रिंसिपल इस गांव का रुपया खा रहा है। इसकी खिलाफत में काम बन्द कर दो। दरअसल यह आपका अगिया-बैताल दामाद खुद प्रिंसिपल की कुर्सी हथियाना चाहता है। सड़क की लड़ाई दो गांवों की लड़ाई बनाकर पहला मोर्चा स्कूल में

खोल दिया। प्रिंसिपल को हटाओ। उधर मैनेजर से भीतर-ही-भीतर मिला हुआ है। उसके भाई दयानाथ पाण्डेय को पंच बनाकर मेरा बोझा लुटवा दिया। उसे आज तक खेत की पैमायश का मौका नहीं मिला और खलिहान उठने-उठने को है। पंचायत का बोझ मंड़ाई-ओसवाई कर पंच के घर चला गया।···क्या कहें, कहते डर लगता है, आप बुरा न मानें। खबर है कि वह नक्सलवादी हो गया है। सुखुआ-सिटहला की आये दिन उसके यहां बैठकी जमती रहती है। हल्ला तो यह भी है कि वे दोनों रामरूप की ओर से घातक हथियार लेकर आयेंगे और···'

'गठिया गांव के लोगों को उड़ा देंगे।' हनुमानप्रसाद ने बात काटकर हंस-कर कहा, 'यही न तुम कहना चाहते हो? तो, दीनदयाल भाई, यदि डरते हो तो मत पड़ो इस झमेले में। दीवानजी को न्याय दिलाने के लिए मैं काफी हूं।'

'यह भी होगा?' दीनदयाल भीतर से हिल गया। यदि यह तनिक-सी बेरुखी पनप गयी तो फिर क्या होगा? दीनदयाल किसके सहारे अपनी योजनाओं को चालू रखेगा? सीरीवाले मामले में यही पंच है। रामरूप वाले मामले में उसका रिश्तेदार होकर भी तटस्थ है। उसके और सारे कारनामों का आंख मूंदकर समर्थन करता है। अपनी गांव की पार्टी का मजबूत खूंटा है। इसी की धाक से अपनी धाक है। वह अत्यंत हड़बड़ी में दाहिने हाथ से बंडी के भीतर से जनेऊ निकालकर खड़ा हो गया, 'यह देखिए, हाथ में जनेऊ लेकर सत्तोसत्त गंगामुंह हाथ उठा कहता हूं, जब तक ठट्टी में परान रहेगा, दीनदयाल आपके साथ रहेगा। जहां आपका पसीना गिरेगा, वहां उसका खून गिरेगा।···आप बाद में वहां आना चाहते हैं, खुशी से आइए! नहीं आए तो इस शरीर को बस अपना ही खास अंग मानें। चलिए दीवानजी। वे सब लोग पहुंच गए होंगे।'

दीनदयाल ने अपनी मिर्जापुरी उठा ली। दीवानजी खड़े होकर कुछ सकपका रहे थे।

'तनिक चिन्ता की बात नहीं। मैं पीछे लगा आ रहा हूं।' हनुमानप्रसाद को हुंकड़ते हुए खोंखकर कहना पड़ा।

उन लोगों के जाने के बाद उन्होंने टहला को बुलाकर कहा, 'मेरी वह खद्दर वाली चादर ज़रा घर से लेते आना।' फिर तुरन्त कहा, 'नहीं, रहने दो।' और मन में सोचा, जब काम बिना गए भी हो ही जाएगा तो कौन जाकर अपने को खोले?

दीनदयाल और दीवानजी ने खेत पर पहुंचकर देखा, गठिया के लोग भैरो-बाबा वाले डीह पर पाकड़ के पेड़ के नीचे दीवानजी के चक के पश्चिम ओर डटे हुए हैं और रामरूप सहित महुवारी के लोग उससे कुछ दक्षिण और विवादास्पद स्थल के पास छवर पर प्रतीक्षा कर रहे हैं। दीनदयाल मन-ही-मन सोचता है, कैसे आ गया मास्टरवा? प्रिंसिपल से कहकर कड़ी नोटिस निकलवाई गयी थी

कि हड़ताल की बन्दी में मास्टर लोग ७ बजे से ११ बजे तक विद्यालय से हिल नहीं सकेंगे।...लेकिन वह आ गया। उसका एक-एक मिनट मूल्यवान जैसा हो उठा है। बार-बार घड़ी देखता है। साढ़े सात हो गए। उस बार की तरह इस बार भी बी० डी० ओ० नहीं आएगा क्या?

तभी दक्षिण-पश्चिम ओर दूर छवर पर धूल उड़ती दिखायी पड़ी और लोगों के चौकन्ने होते-होते जीप आ पहुंची। ग्राम सेवक, पंचायत सेक्रेटरी, लेखपाल और कानूनगो का सरकारी दल ग्राम सभापति तूलप्रसाद के साथ दौड़ा।

तभी एक घटना घट गयी।

धीमे-धीमे आगे सरकारी जीप के बायें पहिये के पास धड़ाम् से एक विस्फोट हुआ और बहुत सारी मिट्टी धुएं के साथ बगल से उड़ गयी। कुछ धुआंसनी धूल-मिट्टी ड्राइवर के ऊपर भी पड़ी और उसने बहुत तत्परता से पहिये को विस्फोट वाले गढे में जाने से बचा लिया। जीप खड़ी हुई तो धूल झाड़ते हुए सहमे-सहमे लोग उसके पास पहुंचे। कुछ लोग अब ज़मीन पर पैर इस प्रकार रखने लगे जैसे उनके पैर के नीचे ही न कुछ फट जाय। संग्राम भूमि अचानक ऐसी रोमांच और सनसनी की आतंक भूमि हो जायगी, किसी को कल्पना नहीं थी। मामला बेहाथ और अथाह जैसा था। यह कैसा धड़का? किस बदले रंगढंग की सूचना? अरे, यह एकदम सद्यःपरिवर्तित गांव की शकल तो पकड़ के बाहर है। खैरियत है कि लोग सुरक्षित हैं, जीप बच गयी। बम रखने वाला अनाड़ी था या किसी कारणवश विस्फोट बहुत हलका हुआ।

दूर-दूर से सुनी जाती चीज़ सामने आ गयी तो लोग सन्न। जीप खड़ी है और एक क्षण के लिए सकते में आयी जैसी भीड़ मौन है। आगे बढ़कर ग्राम सेवक ने स्तब्धता की जकड़न तोड़ने में पहल की।

'जीप से नीचे उतर आइए साहब।' उसने कहा।

और अब लोगों का ध्यान बी० डी० ओ० नामक साहब की ओर गया। फिर यह गाड़ी से उसके साथ उतरने वाला दूसरा व्यक्ति कौन? फिर उसके साथ तीसरा फटीचर सफेदपोश कौन?

मजमे में एक दूसरा जबरदस्त विस्फोट हुआ। मगर यह विस्फोट धूल-मिट्टी में नहीं, शुद्ध मन के भीतर हुआ, कुछ चौंकाने वाला कुछ चिंतित करने वाला। चिन्ता गठिया के लोगों को, विशेषकर बाबू हनुमानप्रसाद के गणों को हुई कि ये चटाईटोला के नवीन बाबू बी० डी० ओ० की जीप पर यहां कैसे? क्यों?

गाड़ी से उतरकर नवीन बाबू की आंखों ने क्षणभर में अत्यन्त अधीरता से चेहरे-चेहरे की पैमायश कर डाली। कहां हैं बाबू हनुमानप्रसाद? उन्हें आशा थी कि महुवारी स्टेशन रोड के मामले में इस मौके पर हनुमानप्रसाद आगे-आगे होंगे और इस प्रकार जनोपयोगी निर्माण-कार्य में ऐसी बाधा पहुंचाने वाले अपने

दकियानूस बैरी को साथ आए मित्र पत्रकार अर्थात् दैनिक 'प्रकाश' के संवाद-दाता के द्वारा प्रकाश में ला देंगे। तब कितनी थू-थू होगी। योजना थी कि अड़ंगे-बाजों का नेतृत्व करते जैसा उनका चित्र भी ले लिया जाय। तब देखें वे इस नयी अखबारी लड़ाई का असर। नवीन को उन्होंने अपने जैसा कोरा गंवार समझ लिया है।

लेकिन बाबू हनुमानप्रसाद को न देखकर नवीन कट कर रह गया। वास्तव में वह एकदम बुझ-सा गया और वहां की कार्यवाही में उसे अब कोई दिलचस्पी नहीं रह गयी। फिर भी वह समझ रहा था कि उसकी उपस्थिति महुवारी के पक्ष में पड़ रही है और यह बात ऐसी है जैसे गुनाह बिना लज्ज़त। इसी बीच यह बम फटा। कहीं उसी की तो कारगुजारी नहीं है कि बैरी को उड़ा दो? मगर, उसे क्या पता है कि नवीन आ रहा है? तब क्या बी० डी० ओ० को उड़ा देने की साजिश रही है? मगर, क्यों?…क्यों? नवीन की समझ जवाब देने लगी।

सभापतिजी उसी समय मातमी मुद्रा में हाथ जोड़कर बी० डी० ओ० के सामने आए। कहने लगे, 'सरकार, अब तो गांव आपके सामने मुंह दिखाने लायक नहीं रहा। कितने अफसोस की बात है कि ऐसी नागहानी हो गयी। सरकार, बुरा मत मानें तो एक अर्ज करूं। कुछ दिन पूर्व इस गांव में सियार मारने वाले आए थे। सगरे सीवान के सियार साफ हो गए। एक भी नहीं बचा। अब रात को सीवान में सियार की बोली नहीं सुनाई पड़ती। तो सरकार, आपको बताऊं, वे मांस-मछली के टुकड़े के साथ एक छोटा-सा बम फंसाकर रात में इधर-उधर रख देते थे। सियार लोग ज्यों ही उस पर मुंह मारते त्यों ही बम फट जाता और उनका मुंह उड़ जाता। सुना कि एक-एक स्यार का चमड़ा साठ-साठ रुपये में बिकता है। अमेरिका जाता है। तो, सरकार, लगता है कि उसी में से एकाध बम कहीं धूल-माटी में पड़ा रह गया था…।'

'लेकिन ठीक छवर पर और गाड़ी की लीक पर रहकर वह आज तक नहीं फटा? ठीक आज ही उसे…' नवीन ने कहा।

'खैर, छोड़िए। ईश्वर की कृपा से हम लोग बच गए। मौके पर सड़क का पोज़ीशन देखें।' बी० डी० ओ० ने कहा।

'मगर मैं जीप यहां से आगे नहीं बढ़ाऊंगा।' ड्राइवर ने कहा।

'हां सरकार, खतरा हो सकता है' सुखुआ मुंह में पान जमाकर सिटहला के साथ आगे बढ़ कहने लगा, 'यहीं से आप लौट जाइए। यहां सड़क की ज़रूरत ही नहीं है। देखते हैं, कैसी बढ़िया मिट्टी है, एकदम करइल की सोना-माटी। सड़क निकलने पर कितनी ज़मीन बरबाद हो जाएगी। सड़क के बिना बाप-दादे का काम चल गया तो हम लोगों का नहीं चल जायगा? सड़क आयी तो तमाम गांव की बहू-बेटियां आवारा हो जाएंगी। रोज शाम को रिक्शा पर बैठकर सिनेमा

देखने के लिए बक्सर जाने लगेंगी। सबसे बड़ा खतरा तो यह होगा कि सड़क हो जाने पर बिहार के नक्सलवादी जीप से चटपट पहुंच जाएंगे और लाल सलाम बोल इधर के गांवों को लूट ले जाएंगे। ऐसे तो बाढ़-बूढ़ा और ऊबड़-खाबड़ में गांव सुरक्षित है।' सुखुआ की बात का समर्थन सिटहला ने किया, 'हमारी भी राय है साहब कि सड़क से कोई फायदा नहीं।'

'इन भले लोगों का एक पहले वाला कहना श्रीमान जी मान लें। आगे न बढ़ें। ज़रूरत भी नहीं। सड़क का पोजीशन तो यहीं से साफ दिखाई पड़ रहा है। यह सीधी छवर नब्बे अंश का कोण बनाती उत्तर ओर स्टेशन पर जाती है और इसी प्रकार बनने के लिए सड़क प्रस्तावित है। अब दीवानजी का दावा है उसे उनके खेत पर से ढाई सौ लट्ठा पश्चिम घुमाया जाय और फिर पूरब लाकर छवर पर सीधा कर स्टेशन ले जाया जाय। इसी मुद्दे पर विचार करना है। तो, बगल में यह पाकड़ का पेड़ है। वहां छांह में बैठकर इस केस को देख लीजिए।' ग्राम-सेवक ने अर्ज़ किया।

'पश्चिम-पूरब की बात नहीं सरकार' दीवानजी सामने आकर कहने लगे, 'मैं कहता हूं कि सड़क की छूरी से हमारा लाद मत भोंकिए।'

'तब क्या सड़क आसमान पर बनेगी कि तुम्हारे खेत का लाद बच जाय?' दुबरी देवता ने दीवानजी के मुंह पर हाथ चमकाकर पूरे तैश में आकर कहा।

'आसमान पर नहीं, सड़क तुम्हारी गां···पर बनेगी।' झपटकर आगे आ दीनदयाल ने और तीखे तेवर में उत्तर दिया।

'ऐसा गाली-गलौज शोभा नहीं देता चाचा' सामने आ गया रामरूप और कहने लगा, 'समस्या इस प्रकार हल भी नहीं होगी। अच्छा हो कि हम लोग आपस में तू-तू, मैं-मैं न कर बी० डी० ओ० साहब के सामने अपना पक्ष ही रखें।'

'तो पहले अपने बाप को क्यों नहीं रोकते हो?' दुबरी की ओर हाथ से इशारा कर दीनदयाल ने उसी कड़वाहट के साथ कहा।

'मेरा विचार है कि इस मसले पर यहीं अभी वोटिंग हो जाय। मामला साफ हो जाएगा।' दयानाथ पाण्डेय ने बीड़ी सुड़कते हुए कहा।

'वोटिंग होगी तो आज नहीं, उसके लिए फिर से कोई दिन तय किया जाय ताकि गठिया के लोग भी पूरी तैयारी के साथ आवें।' बाबू हनुमानप्रसाद के पुरोहित नन्दकिशोर पाण्डेय ने कहा।

'हां-हां, बी० डी० ओ० साहब' गजिन्दर अपनी लाठी लिये दुबरी को धकियाता आगे आ गया, 'देख लीजिए महुवारी के लोगों की चालबाजी कि वोट देने के लिए अंडा-बच्चा सभी चले आए हैं। इधर बेचारे गठिया वाले सिर्फ अपना हक कहने के लिए आए हैं कि उस गांव की जायदाद नष्ट न की जाय। यह कहां का न्याय है सरकार कि सड़क बने महुवारी के नाम पर, महुवारी के लोगों के

लिए और ज़मीन नुकसान हो गठिया की।···खेलवाड़ है कि ऐसी अन्याय की सड़क बन जाएगी ? यहां खून की नदी बह जाएगी।'

'ये लोग तो खून की नदी बहाएंगे नवीनजी, हम लोग क्या करें ? अच्छा हो, हम लोग चलें और रिपोर्ट कर दें कि मामला विकास और निर्माण का नहीं, फौजदारी का है।' बी० डी० ओ० ने अपने पास अति उदासीन भाव से खड़े नवीन बाबू से कहा।

नवीन ने अब रामरूप की ओर सोद्देश्य दृष्टि से देखा। कहा, 'आप को क्या कहना है मास्टर साहब ?'

'साहब, मुझे यह कहना है कि यह गठिया और महुवारी का संघर्ष नहीं है। सड़क किसी एक गांव की नहीं, सबकी है। वह गठिया की ज़मीन में नहीं बन रही है। वहां के दुबरीजी का सिर्फ वह एक खेत है। समस्या अड़ंगेबाजी की है। आप स्थिति देखकर जो उचित समझें आदेश करें। हमें आप से न्याय की आशा है।'

'क्यों न बाबू संतशरणजी एम० पी० को पंच बद दिया जाय और वे जो कहें, सब लोग मान जायं ?' बाबू हनुमानप्रसाद का पट्टीदार तुलसी बोल उठा।

'नहीं, पंच बनाना है तो क्षेत्रीय विधायक पं० बालेश्वर उपाध्याय को बना दिया जाय।' जवाब खड़ा कर दिया रामरूप के पट्टीदार बलेसर ने।

'देखिए सरकार', दयानाथ पांडेय ने बी० डी० ओ० को सम्बोधित कर कहा, 'अब यह इंदिरा कांग्रेस और जनता पार्टी की खींचतान शुरू हुई।'

'तो क्यों न दोनों गांव के ग्राम प्रधानों के साथ इन दोनों की एक कमेटी बना दी जाय कि वही इस पर फैसला दे।' 'प्रकाशन' के प्रतिनिधि ने कहा।

'पंचायत में चार नहीं, पांच आदमी होते हैं। अत: जननेता होराराम को भी इसमें रखा जाय।' भीड़ में से एक आदमी चिल्लाया।

'युवा नेता मगनचोला भी एक पंच रहेगा।' एक और आवाज़ आयी और उसके बाद दोनों ओर से नाम ले-लेकर आवाज़बाज़ी होने लगी और कुछ देर तक चलती रही। कड़ी धूप के कारण सूखे गले की आवाज़ों में थरथराहट और खुश्की आ गयी थी। लोग पसीना पोंछ-पोंछकर और खंखार-खंखारकर हल्ले को आगे बढ़ा रहे थे। तभी बी० डी० ओ० ने ज़ोर से कहा—

'अच्छा, आप लोग हल्ला बन्द करें। मैंने सबकी बात सुन ली। कोई दो नाम गठिया के लोग दें और दो नाम महुवारी के लोग। एक नाम मैं दे दूंगा।'

रामरूप अवाक्। यह क्या हो रहा है ?

थोड़ी देर बाद काफी गर्द-गुबार छोड़ जीप उड़ गयी और वातावरण में घोषित पंचों के नाम देर तक सनसनाते रहे।

सड़क फंस गयी। अब क्या बनेगी ? रामरूप ने माथा ठोंक लिया। बी० डी० ओ० ने उसे शुद्ध क्षेत्रीय राजनीति का रंग देकर लड़ा दिया दोनों गांवों

को। अब क्या हो ? लह गयी ससुरजी की ?

भीड़ छंट जाने के बाद पानी पीने के लिए वह पाकड़ के नीचे आ गया। पनिसरा इस वर्ष नहीं बैठा ? कुएं पर जो लोटे के साथ बाल्टी रखी थी, उसे देखकर वह चौंक उठा। यह तो अपने घर की है। फिर नज़र उठ गयी अपने खेत की ओर। अरे, ये तो पिताजी हैं। समझा, यहीं खाद आ रही थी। अब मेड़बन्दी हो रही है। धान रोपेंगे।···ओफ्, काश कि रामरूप उनका हाथ बंटाता और संगीत से इस नयी परिणति पर खुशी मनाता ! क्या हो गयीं दुनिया की खुशियां ? वे भी हड़ताल पर हैं क्या ?

३९

दूसरे दिन विद्यालय में नगर से लौटने वाले एक अध्यापक ने 'प्रकाश' की वह प्रति दी जिसमें महुवारी रोड की जांच से सम्बन्धित समाचार प्रकाशित हुआ था तो पढ़कर रामरूप स्तब्ध हो गया। सड़क की आड़ में नक्सली प्रसार ? उसका कर्णधार पड़ोसी गांव का एक जालिम जमींदार ?—यह सब कहां की बेबुनियाद बातें सम्वाददाता के मस्तिष्क के कूड़ेखाने से उछल आयीं ? कितने शरारतपूर्ण ढंग से कई-कई बार समाचार में बाबू हनुमानप्रसाद का उल्लेख किया जाता है। रामरूप सोचता है, यह शायद नवीन बाबू का नया मोर्चा है। तो गांव में यह शहरी अखबारी लड़ाई चलेगी ? गांव के स्तर पर लड़ चुके ? सड़क वाले विवाद में बी० डी० ओ० ने इस अपने लायक दोस्त को भी बाबू हनुमानप्रसाद के साथ पंच बना दिया। दोनों एक-दूसरे के दुश्मन। जनता पार्टी के एम० एल० ए० पं० बालेश्वर उपाध्याय और इंदिरा कांग्रेस के एम० पी० बाबू संतशरणजी जैसे पंच। एक-दूसरे के कट्टर विरोधी और इन सबके विरोधी भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के उम्मीदवार हीराराम। क्या ये लोग कभी किसी एक बात पर सहमत होंगे ?···बन गयी सड़क ! रामरूप समाचार-पत्र परे कर असफलता की गहन चिन्ता में डूब गया और डूबता गया। क्या सड़क सपना ही रह जायेगी ?

उसका ध्यान भंग किया चपरासी ने। वह निलम्बन का आदेश देकर दूसरी प्रति पर हस्ताक्षर के लिए लू के ताज़े झोंके की भांति आकर खड़ा था। भारतेन्दु वर्मा ने ललकारा, 'हस्ताक्षर मत करो। नोटिस मत लो। लड़ाई हो तो फिर जम कर लड़ाई हो। कई मोर्चे खुलें।' किन्तु पता नहीं क्या सोच रामरूप ने हस्ताक्षर कर दिया। वह निलम्बित किया जायगा इसकी कुछ-कुछ आशंका तो उसी दिन हो गयी जिस दिन नोटिस निकली कि हड़ताली अध्यापक १० बजे से लेकर ४ बजे के बीच कहीं नहीं जा सकते हैं और इस बीच उन्हें अवकाश नहीं मिलेगा। वास्तव में यह हड़ताल और ऐसी लड़ाई भीतर से उसके स्वभाव के मेल में नहीं बैठ रही

थी। फिर भी सबका साथ तो उसे देना ही था। क्लेश की बात यह थी कि प्रिंसिपल और मैनेजर के दल में उसे ही अध्यापकों का नेता माना जा रहा है। आग तो लगायी रामराघव प्रसाद ने और आंच में अब जल रहा है रामरूप।···वह आदेश का उल्लंघन कर विद्यालय के समय में क्यों सड़क के विवाद में गया ? सड़क-सेवा का उपहार लो यह निलम्बन। बरखास्त भी हो सकते हो। नौकरी से हाथ धोना पड़ सकता है। भूखों मरना पड़ सकता है। क्या हुआ जो खेत रेहन रखकर चार हजार में यह नौकरी तुम्हारी खरीदी हुई है ? वर्षों तक आधे वेतन पर कार्य किया है। महंगाई की बढ़ोतरी वाले ऐरियर का दान वाला प्रस्ताव अक्तूबर में तुम्हारे ही विरोध से तो गिरा। फिर मार्च में ग्रांट पर ग्रहण लगा तो अध्यापकों के पैरों पर पगड़ी रख दी मैनेजर ने, विद्यालय की इज्जत आप लोगों के हाथों में है। तब तुम्हीं ने, रामरूप तुम्हीं ने बिना ऐरियर पाये ग्रांट मिलने के बाद उसे दे देने के कोरे आश्वासन पर प्राप्ति सम्बन्धी हस्ताक्षर में भी अगुआई कर दी और ग्रांट मिलने के बाद जब अंगूठा दिखा दिया गया तब ?···तब ? केवल क्षुब्ध होने से क्या होता है ? शोषण के आगे समर्पण का क्या ? तुम कायर हो। कायरता का प्रसाद अब भोगो। सोचो, सिर्फ सोचो, यह सब क्या हो रहा है ? क्यों नहीं अध्यापकों की पीड़ा को सही रूप से समझा जा रहा है ? क्यों उन्हें विद्यालय का शत्रु समझा जा रहा है ?

सोचते-सोचते रामरूप अचानक अत्यन्त करुण हो उठा। जेठ के तपते-दहकते वातावरण में यह बहुत ऊंचे सद्भाव की शीतल करुणा थी और हृदय की विशाल ऊंचाई पर लहरा रही थी। उस प्रशान्त हिमाच्छादित चोटी पर वैर-भाव की दाहकता मिट गयी थी और रामरूप को लगने लगा था कि भ्रम में पड़े कुचक्रों के मूलजनक इस प्रिंसिपल को एक पत्र लिख मानवीय स्तर पर वास्तविक स्थिति समझाना चाहिए। समझाना चाहिए कि हम लोग आपके और विद्यालय के शुभ-चिन्तक हैं। आपके आने से पहले से ही कार्यरत हैं। आप आये तो हम लोग धन्य हुए कि विद्यालय का अभाव अब भरेगा। भरा भी, मगर भीतर से सब खाली। आपकी 'काम निकालू नीति' और 'आश्रितों का पेट काट मैनेजर का कमाऊ पूत बनने की नीति' सफल रही। कैसा फल ? एक अमर्यादित कलंक। फिर शौक आपका पूरा हुआ न कि अन्य विद्यालयों की भांति यहां भी चार-चार, पांच-पांच महीने का वेतन बाकी रहे। एक गंवार टाइप स्कूल मैनेजर का एम० ए० पास 'नौकर' ऐसा रास्ता निकाल दे कि बिना हाथ-पैर हिलाये, थोड़ी बेहयाई के साहस में ही पैसा बरसने लगे तो मामला कैसी वाहवाही का होगा ? लूटो वाहवाही और दिखाओ अपने बादशाह को बीच दरिया में नाव पर से डूबते लोगों का दृश्य, फिर हंसो···डूबने वालों की आग से निश्चिन्त, व्यवस्था के उच्चासन पर बैठे, सभ्य सफेदपोश किन्तु दरिद्र गुरुओं के क्रूर गुरुघंटाल। कहां जायगी हड़ताल कर इस

युग में यह 'निकम्मों' की टोली ? सच, जो अध्यापक हो गया, वह जीवन में और कुछ नहीं कर सकता। पैसे-पैसे का मुहताज रहेगा, कपड़े-लत्ते से ठीक-ठाक रह हंसते दिखने का प्रयास करेगा और बेकारी की मार सह बिना दाना-पानी बैलों की तरह जुआ कंधे पर रख नधा रहेगा।···हे ऐसे मरियल बैलों के हलवाह, कुछ तो शर्म करो ? तुम अपना तो एक पाई नहीं छोड़ते तब क्या हक है हमारी थैली काटने का ? आप परमस्वतन्त्र, आप मैनेजर के मोस्ट ओबीडियेंट सर्वेन्ट, आप ट्रेण्ड भेड़िये, डिग्रीधारी प्रवंचक, शिक्षा व्यवसाय के कुटिल मुनीम और ऊंची कुर्सी के धिक्कार···अरे नहीं, नहीं रामरूप पत्र में ऐसे कड़े शब्द नहीं लिखेगा। ऐसे काम नहीं बनेगा। संक्षुब्ध शैली में नहीं, सहज-शान्त भाव से समझाने पर काम बनेगा। उसे महाकवि बिहारी लाल के एक दोहे का अर्थ समझाया जायगा। 'स्वारथ सुकृत न श्रम बृथा···।'

हे प्रिंसिपल, तू बाज की भांति मैनेजर रूपी शिकारी के लिए अपने पक्ष के, अपने ही भाइयों की क्यों हत्या करा रहा है ? जरा सोच तो, इस कार्य में तुझे क्या पुण्य होगा ? तुम्हारा, अपना स्वार्थ क्या···मगर, स्वार्थ तो स्पष्ट है और परिश्रम भी व्यर्थ नहीं है। मैनेजर को खिलाकर स्वयं भी खा रहा है। खा-खाकर अन्धा हो रहा है। उसे अपयश का डर नहीं।···तब ऐसे अन्धे को क्या कहकर समझाया जाय ? वास्तव में इसे समझाया नहीं जा सकता है। यह कोई पूर्व जन्मकृत पाप है, भोग रहे हैं आदर्श विद्यालय के अध्यापक। इन विद्यालय बनाम कसाईखानों को कौन देख रहा है। ग्रेड का सब्ज बाग, बेकारी का कम्पा, उन्नति या प्रोन्नति का तगड़ा लासा···फंसे कि गये रसातल। मोलभाव, सौदा, पट गया तो पट गया। नहीं तो रास्ता नापो। महात्मा गांधी, उच्चादर्श, सब धोखा। विद्यालय की आमदनी के सबसे तगड़े स्रोत अध्यापक। घर के लोग समझते हैं वह कमा रहा है। इधर वह मुअत्तल-बरखास्तगी के सांप-बिच्छुओं से लड़ रहा है। आधे वर्ष की गाढ़े परिश्रम की कमायी पर जालिमों के नख-दंत लगे हैं। वे समझते हैं, अब क्या दुख है ? खजाने से पूरा वेतन मिल जाता है। जिस विद्यालय की बदौलत यह मिल रहा है उसके हक में आप लोग त्याग करें।···त्याग, त्याग, त्याग। ओफ्, कई साल तक वेतन अटका-अटका जो इन्होंने अध्यापकों को मार डाला है उससे उनका स्वाभिमान एकदम नष्ट हो गया है। भूखे आदमी का ध्यान रोटी में अटकाकर कितना-कितना खटाया जा सकता है ? कितना-कितना दबाया जा सकता है ? शब्दों में अध्यापक स्कूल के व्यवस्थापक बन जायं और व्यवस्था के नाम पर आदेश हो, चन्दा मांगकर अपना बकाया पूरा कर लें। जैसे धोबी लादी लाद-लादकर बाद में गदहों की टांग छान चरने के लिए छोड़ दे।···सो हे, मरियल गदहों के धोबियो, उस मुहावरे को याद करो। गदहों की ऐसी यारी में लात की सनसनाहट के लिए भी तैयार रहो। बैलों ने जुआ कन्धे से उतार फेंका है। वे

पिछले हिसाब का एक पाई भी नहीं छोड़ेंगे। क्यों छोड़ेंगे? बहुत मूर्ख बने।— मगर, रामरूप तू तो हड़ताल का विरोधी है? तो, बता तो और कौन रास्ता शेष है अध्यापकों के लिए? तू कब अपने विचारों और कर्मों में साफ होगा? तुम्हारे भीतर कैसी विरोधाभासी ग्रन्थि है?

रामरूप का फिर ध्यान भंग हुआ तो देखा एक गिलास ठण्डा पानी लिये चपरासी कपिलदेव खड़ा है। किसने यह कृपा की? वास्तव में उसे प्यास लगी थी। पानी पीते हुए पश्चिम की खुली खिड़की को, जिससे सीधे गरम हवा आ रही थी, चपरासी से बन्द करने के लिए कहकर वह मित्रों की ओर देखने लगा। उसने देखा सामने वाले बरामदे में रामगंगल मिश्र और जयप्रकाश के बीच खड़े-खड़े कुछ बहस हो रही है। बगल में दीनानाथजी समाचार पत्र में डूबे हैं। भगवान द्विवेदी कुर्सी पर बैठे-बैठे झपकी ले रहे हैं। तब जलदाता भारतेन्दु शायद भीतर कमरे में हैं। कमरे झन्न-झन्न कर रहे हैं। घंटा खामोश है। समूचा हड़ताली परिसर उदासी में डूबा है। संघर्ष के वातावरण ने उसे बीहड़ बना दिया है। बरामदे तनाव से भरे हैं। विद्यालय का नया अर्थ सन्नाटे में उभर रहा है। शान्त चरने वाले व्यवस्था के बकरे अति चौकन्ने हो गये हैं। कुछ अपने भाई-बन्धु भी उनके प्रच्छन्न चारे की चिन्ता में दीख रहे हैं। रामराघव प्रसाद प्रिंसिपल साहब से खड़े-खड़े कुछ बात कर रहे हैं। वीरबहादुर को उधर से निकलते देख दोनों चुप हो गये। फिर दोनों आगे बढ़े। अच्छा, तो मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय आ गये? आजकल रोज आ रहा है। रोजी खतरे में है। उन्होंने आते ही राम-राघव के कन्धे पर हाथ रख पुचकारना शुरू किया।···विश्वासघाती! कैसा उस डाकू के आगे जैसे दुम हिला रहा है! इस स्कूल मैनेजर नामक जन्तु को तो डाकू कहना भी जैसे 'डाकू' शब्द का अपमान करना है। कितना फर्क है 'इस' और 'उस' डाकू में। यह भी लूटता है और वे भी लूटते हैं पर वे प्रायः समाज के उन शत्रुओं का धन लूटने का अपराध करते हैं जिनका धन वास्तविक अर्थ में उनका नहीं होता। प्रकारान्तर से वह भी अपहृत ही होता है और बन्द तिजोरियों में दरिद्रों की रोटी बन सड़ा करता है। यह डाकू तो समाज के शुभचिन्तकों अर्थात् अध्यापकों का ऐसा पारिश्रमिक लूटता है जो स्वतः इतना अल्प है कि अमीर-सा दीखने वाला अध्यापक गरीब की भांति भी उस छोटी रकम से गुज़ारा करने में असमर्थ होता है। वे लोगों को सताकर बलात् घृणापूर्वक लूटते हैं और यह कैसे हंस-बोलकर प्रेमपूर्वक लूटता है। उनकी लूट अवैध है और इसकी वैध है। वे लक्ष्मी-पात्रों को लूटते हैं और इस जालिम ने सरस्वती के पुजारियों को चुन रखा है। वे भाला-बन्दूक दिखाकर लूटते हैं और यह गीता का श्लोक सुना, संतोष का पाठ पढ़ा, सेवा-त्याग और भगवान की मरजी की दुहाई देकर लूटता है। उसकी लूट की वेदना तो आंधी की तरह आती है और चली जाती है परन्तु इसकी लूट

तो अहर्निश, प्रतिक्षण, काठ के कुन्दे की धूनी की भांति भीतर सुलगती रहती है।'

रामरूप बैठे-बैठे ऊब गया तो बरामदे में टहलने लगा। उसे आश्चर्य हुआ कि किस प्रकार इस पांडेय जैसे स्कूल-मैनेजर का नया मानस-प्रत्यक्ष उसके सामने भरभरा कर धारा-प्रवाह उभर रहा है। अरे, वह क्या कम है? अभी उसकी शृंखला टूट नहीं रही है। वह सोचता है, उस डाकू का जीवन तो गोपनीय होता है और वह अपने कार्यकाल में ही प्रकट होता है। अन्धकार उसका सहायक होता है। इधर इस लुटेरे का जीवन तो खुली पुस्तक जैसा सार्वजनिक बना रहता है। यह चौराहे पर खड़ा हो प्रकाश में लूटता है। इसकी लूट के पीछे भाई-चारे की, परिचयपूर्ण आत्मीयता की भूमिका होती है। यह अभिभावक का दुलार देकर अपने आश्रितों को लूटता है। फिर इस लूट में कोई जोखिम नहीं, कोई श्रम नहीं। कैसी सभ्य-शरीफ डकैती है! यह स्कूल है कि बनिए की मनमानी दुकान है? या कि कोई घरेलू कारखाना है? इस वर्ष ट्रेजरी पेमेंट हो गया तो गनीमत है अन्यथा जून का वेतन किसी अध्यापक को कभी नहीं मिला। फीस, चन्दा, वजीफा और वेतन—सब धोखा-धड़ी। उन्हें कितना मजा आता है जब कोई अध्यापक गिड़गिड़ाकर दस-पांच की कभी याचना करता है?…अच्छा हुआ, रामरूप तूने कभी ऐसा मौका नहीं आने दिया।

'तू ध्यानमग्न ही रहा, इधर वीरान हुआ प्यारा स्वदेश।' भारतेन्दु वर्मा ने पीछे से कन्धे पर हाथ रखकर कहा, 'आज की ताजी खबर सुनने के लिए समय है?'

'कैसी खबर? डकैती की किसी नयी योजना की खबर या कड़फू-कम्पनी के किसी नये अभियान की खबर?' रामरूप ने भारतेन्दु को सामने की कुर्सी पर बैठने का संकेत करते हुए कहा।

'कड़फू-कंपनी' नाम भारतेन्दु का ही दिया हुआ था। इन दिनों शाम को कोई अध्यापक अपने घर नहीं जाता है। जनमत तैयार करने, अपने पक्ष के तथ्यों का प्रचार करने, विद्यालय के शुभचिन्तकों और प्रबन्ध समिति के सदस्यों को वास्तविकता की जानकारी देने, अपने मनोबल को बनाये रखने, विरोध के कार्य-कलाप की टोह लेने और छात्रों को सान्त्वना देने के उद्देश्य से वे लोग विद्यालय समय के बाद विभिन्न छोटे-बड़े पड़ोसी गांवों में समवेत रूप से जाते। प्रिंसिपल और मैनेजर के विरोधियों के यहां वे जानबूझकर नहीं जाते और इससे सचमुच एक दबाव का ऐसा स्वस्थ नैतिक वातावरण तैयार हो रहा था कि विश्वनाथ पाण्डेय घबरा उठे थे। तो, इस प्रकार नित्य शाम को किसी गांव की ओर बढ़ता हडतालियों का दल जैसा विद्रोह कर रहा था। उसे देखते एक दिन इसी से सम्बन्धित किसी प्रसंग में कबीर का एक दोहा इस दल में पढ़ा गया, 'जो घर फूंके आपना…।' और चट भारतेन्दु ने फूंकने वाले अर्थात् फूकड़ को

उलटकर 'कड़फू कम्पनी' नाम दे दिया। जब नाम पड़ गया तो चल गया और काफी स्फूर्ति देने लगा। विद्यालय से निकलते ही लोग 'कड़फू' हो जाते। कहां चला जाता है वह उदास, मनहूस, भविष्य की चिन्ता में डूबा, बेकाम बैठा-बैठा ऊबा अध्यापक ? संघ और संगठन का चमत्कार था और यह समूचा चमत्कार एक मनोरंजक-मज़ाकिया नाम में सिमट गया था।

'नहीं, दूसरे तरह की खबर', भारतेन्दु ने कहा, डकैतों के आत्म-समर्पणपूर्ण हृदय-परिवर्तन की खबर।'

'असम्भव। समर्पणात्मक आक्रमण की नयी मोर्चेबन्दी के प्रति सावधान!··· ज़रा साफ-साफ बताओ न।'

'हमारे मान्य विद्यालय प्रबंधक महोदय के मन में विद्रोही गुरुओं को सद्भाव-समझौता के उद्देश्य से सम्बोधित करने की सदिच्छा जगी है और वे इस शुभ कार्य को सायंकालीन अधिवेशन में सम्पन्न करेंगे।' भारतेन्दु वर्मा ने कहा।

'तुम्हारी इस भाषा के पीछे छिपे भावों की खोज की जानी चाहिए।' रामरूप कहते-कहते हंसने लगा।

'हमारी भाषा के पीछे···' भारतेन्दु ने कुछ रुककर जैसे कुछ आहट लेते हुए कहा, 'भाव की खोज फिलहाल हो चाहे न हो परन्तु मित्र, इस समय इस विद्यालय की चहारदीवारी के पीछे इस बात की खोज ज़रूरी लगती है कि जीप पर हम लोगों को किसी मामले में गिरफ्तार करने कोई पुलिस-अधिकारी आया है या मामले की छानबीन करने शिक्षा-विभाग का कोई अधिकारी?'

किन्तु वास्तव में उक्त दोनों में से वहां कोई नहीं था। जो आ रहा था वह एक तीसरे प्रकार का बवण्डर था।

थोड़ी ही देर में सूना-सूना-सा लगने वाला, गर्मी से तपता विद्यालय, प्रांगण जीप की धड़धड़ के बन्द होते न होते जोशीले चुनाव प्रचारों से रंगे, तिरंगे युवा नेताओं की विद्युती गतिविधियों से भर गया। एक जीप में ये कितने बिल्ले ठूंसे थे?

मगनचोला ने हाथ-मुंह धोकर एक गिलास जल लिया और विश्वनाथ पांडेय को झाड़ना शुरू किया, 'विद्यालय के पवित्र प्रांगण में यह कैसी गुंडई हो रही है मैनेजर साहब ? आपने तो लगता है, विद्यालय को लूट का कोल्हू बना दिया है। तो याद रखिए, अध्यापक कच्ची ईख नहीं हैं कि आप उन्हें निचोड़ देंगे। पांच महीने का वेतन उधर का बाकी है, कई साल का महंगाई का ऐरियर है, आपको यह सब फौरन चुकता करना होगा। हमारी पार्टी शोषण और भ्रष्टाचार की धांधली बरदाश्त नहीं कर सकती। हां, देखिए, आपके विद्यालय में इंटर में विज्ञान की मान्यता के लिए मैंने शिक्षा-मन्त्री से कह दिया है। आर्डर हो गया होगा।' (जैसे आप अब मन में हिसाब लगा लें कि विज्ञान अध्यापकों की नियुक्ति

में कितना पैसा जेब में जाएगा।)

मगनचोला ने पुनः प्रिंसिपल साहब को सम्बोधित करके कहा, 'अध्यापकों की हड़ताल के लिए आप स्वयं जिम्मेदार हैं प्रिंसिपल साहब! मैंने सब पता लगा लिया है। आप पहल कर शीघ्र इसे खत्म कराएं। शिक्षा-कार्य शीघ्र शुरू हो। मैंने हरिजन छात्रावास की स्वीकृति मुख्यमन्त्री से कहकर लगभग ले ही ली है। आप निश्चिन्त रहें।' (जैसे मन-ही-मन जोड़िए कि सत्तर-अस्सी हज़ार का छात्रावास बनवाने में कितना पैसा स्वयं की जेब में जाएगा।)

अन्त में अध्यापकों से उसने अपील की, 'आप लोग तो हमारे गुरु हैं, पूज्य हैं, आशीर्वाद दीजिए। मेरे दिल में आपके लिए जो कदर है वह मैं शब्दों में नहीं व्यक्त कर सकता। राजनीति में आकर अपने क्षेत्र के शैक्षिक विकास के सम्बन्ध में एक अहम नक्शा मेरे भीतर बारम्बार कौंध रहा है। मैं शीघ्र ही इस आदर्श इंटर कॉलेज को डिग्री कॉलेज के रूप में देखना चाहता हूं। इसकी पूरी प्लानिंग हो चुकी है। कानपुर के सेठ मेरे इशारे से मुंतजिर हैं। फारचूनेट हैं आप में से वे लोग जो सीधे विभागाध्यक्ष हो जाएंगे। आई रिक्वेस्ट यू, प्लीज़ हेल्प मी। पोलिटिकल बेसिस पर नहीं, मानवता के नाते। आप लोगों की चरनों की डस्ट से उठा यह तिनका जो आकाश छूने चला है, वह किसके बल-बूते पर? मुझे यकीन है कि आपकी राजनीतिक पार्टी चाहे जो भी होगी, शुभकामनाओं के लिए मुझे नाउम्मीदी नहीं होगी।'

चाय पीकर मगनचोला ने हड़ताल खत्म करने के व्यावहारिक पक्ष पर गम्भीर नेता की भांति बातचीत शुरू कर दी और उस दिन मैनेजर साहब की मीटिंग नहीं हुई।

४०

आत्मनिरीक्षण चीज़ तो अच्छी है मगर करता कौन है? और जो करता है चकितकारी परिणामों के बीच से न गुज़रे, असम्भव है। आजकल भारतेन्दु वर्मा भी इस राह से गुज़रते खुश है। साल का आधा इस गांव में बीता और वह कितना बदल गया? मित्र-कन्या कमली एक ओर निकट आ गयी तो दूसरी ओर वह उसका पुराना 'कुत्ता' कहां कितनी दूर चला गया? हां, उस 'भाव' को पता नहीं क्यों वह बहुत पहले से कुत्ता कहता आया है। सो, वह कैसे बहुत-बहुत दूर हो गया? कमली दोनों वक्त एकान्त में चाय दे जाए, खाना पहुंचा जाय, छोटे-छोटे हर कार्य के लिए जैसे खड़ी रहे, उसके कपड़े साफ कर दे, रात गये तक सूर-तुलसी के पीछे पास पड़ी रहे, एकान्त की शंका से रहित, निर्विकार, सहज भाव से, और आश्चर्य, कहां से आया एक अज्ञात अपरिचित कन्या-भाव भारतेन्दु के

भीतर ? फिर और आश्चर्य, यह सारी निकटता परिवार के और लोगों के आगे कितनी सहज है, जैसे भारतेन्दु वास्तव में रामरूप का सहोदर अग्रज है, फिर सगे चाचा की कन्या में परायेपन की सहम कैसे ? कितना चकितकारी, परम अविश्वसनीय, विश्वास करने के लिए रोज ही तो वर्मा को उतरना पड़ता है आत्म-निरीक्षण में, बहुत-बहुत गहरे, पवित्रता वाले पुराने मूल्यों की पड़ताल में, ऐसे मूल्य-शेष हैं या यह अपवाद है, या कोई भ्रम है ? या कोई मनोवैज्ञानिक केस है ? यह 'आदमी' ऐसे ठण्डा 'साधु' कैसे हो जायगा ? क्या पर-भाव का ऐसा आत्यन्तिक उन्मूलन सम्भव है ? यदि सम्भव है तो रामरूप भाई के साथ ऐसा क्यों नहीं होता है ? अपने कुछ स्थानीय स्वार्थों और रिश्तों को लेकर वर्मा चुनाव में रामरूप से छिटककर यानी जनता पार्टी को छोड़ इन्दिरा कांग्रेस की कतार में कैसे खड़ा हो गया ?

कितने सहज भाव से कहती है कमली, 'चाचा जी, माताजी ने कहा है, हम लोग भी आपकी पार्टी में रहेंगी। इन्दिरा गान्धी को वोंट देंगी।'

सच ? हां, बात हंसी की नहीं। सौ पाई की एक विचित्र सचाई है जिसमें चित्र नैहर के छोटे भइया भुवनेश्वर की उम्मीदवारी के नैतिक दबाव का ही नहीं, नारी होने की एक सहज, स्वतः स्फूर्त और आन्तरिक अनजानी हवा जैसी अगम्भीर पक्षधरता का भी निहित है। किन्तु इससे वर्मा को क्या ? पक्ष तो उसका ही मजबूत होगा।

और रामरूप ? कोई कारण नाराजगी का नहीं। यह तो आंधी है, चुनाव की आंधी। वोट का कौन पत्ता क्यों किधर खिसका, इसका हिसाब रामरूप जैसा व्यक्ति क्यों रखे ? कैसे रखे ? ये आंधियां क्या कुछ समझने-बूझने लायक स्थितियां रहने देती हैं ? मई के पहले सप्ताह में एक शाम धूल-भरी आंधी आयी और उसने ग्रामांचल के जनजीवन को खलभला दिया। काफी दिनों बाद आयी थी और पूरे जोर-शोर से काफी देर तक लोगों की आंखों को धूल से भठती रही। पहले पछिमा की आंधी आयी, फिर पुरवा की हो गयी। भारतीय राजनीति-सी यह आंधी अन्धेरे में सिर धुनती, पछाड़ खाती और हाहा-हूहू करती लोगों की नंगी खोखली ज़िन्दगी पर परत-दर-परत गर्द-गुबार जमाती, साक्षात् अन्धेर की तरह अभी पूरे वेग में थी तभी किसी ने कहा—आंधी आयी तो पानी भी आयेगा।

नियम तो यही है, आंधी-पानी। दोनों का क्रम सनातन है। दोनों एक-दूसरे से जुड़े हैं। मगर इस युग में तो जैसे सब कुछ उलट गया है। कोई नियम नहीं काम करता है। तो क्या आंधी आने पर भी पानी नहीं आयेगा ?

और रामरूप ने देखा, सचमुच पानी की प्रतीक्षा ही रह गयी। उसे लगा, अब हर आंधी बेपानी होकर आयेगी। आंधी-पानी के परिचित मुहावरे को बदलना पड़ेगा। गांव के लड़कों को बरजना होगा। वे शोर करना छोड़ें कि

'आंधी पानी आवेला, चिरइया ढोल बजावेले।' अब एक तो आंधी में पानी नहीं, दूसरे चिड़ियों के लिए ढोल बजा खुशियां मनाने की खुशकिस्मती कहां? वोट का चारा गले में अटक गया है और इधर बूंद-भर पानी मुअस्सर नहीं। हाय रे चुनाव की आंधी, (इन्दिरा गान्धी की आंधी?), एकदम सूखी-सूखी, चतुर्दिक् सूखा-सूखा। भूखे-प्यासे और जीवन-संघर्ष में घिसे-पिटे गंवई-मनई को भी सरकार बनाना है। डीज़ल बिना जिनकी फसलें सूख गयीं, मिट्टी के तेल बिना जिनके घरों में अंधेरा है, जो चुल्लू-भर पानी के लिए छिछिया रहे हैं और भ्रष्टाचार के अराजक तमाचों से जिनकी आंखें चौंधिया गयी हैं उन्हें हंसकर या रोकर या उदासीन होकर, चाहे जैसे भी हो, इस महीने इस 'आंधी' को झेलना है, झेल रहे हैं। प्रजातन्त्र के चौराहे पर जुटे राजनीतिक नंगों के बेहूदे चुनावी हंगामों में अवाक्, किंकर्तव्यविमूढ़ और ठगी-सी आम जनता अपने को, अपने अस्तित्व को, अपनी अस्मिता को खोज रही है। वह कहां है? सारे देश में तो नेता-नेता भरे हैं। हवा के कण-कण में राजनीति, राजनीतिज्ञ, कुर्सी, सत्ता, वोट, चुनाव और बड़बोल धूर्तों की काटाकाटी ठुंसी है। जनता की आवाज़ कहां है? चुनाव की घोषणा, प्रत्याशियों का चुनाव, टिकटों-सीटों का बंटवारा, प्रचार, जोड़-तोड़ की सारी-सारी कशमकश, सब एक से बढ़कर जबरदस्त आंधी और इसमें सूखे पत्ते-सी उड़ती, पिछड़ी-सिकुड़ी, अभावग्रस्त जनता। कहां अन्त है इस अर्थहीन प्रजातान्त्रिक प्रहसन-ट्रेजडी का? और रामरूप तू भी अब रंग-मंच पर आ जा। वोटर का, वोट के आढ़तियों का पार्ट भी क्या कम महत्त्वपूर्ण है? नाटक का एक दृश्य—

'बलिया से एक आंचलिक दैनिक अखबार छपता है जिसका नाम 'क' है।' वर्मा ने कहा। वह पोस्टर-पैम्फलेट लेकर तैयार था। जीप आने वाली थी।

'हां, छपता तो है। कोई खास बात?' रामरूप ने पूछा। वह सुबह-सुबह बासीमुंह अरविन्दजी को लेकर बैठा था। किसी 'पिअरी' झाड़ने वाली औरत की प्रतीक्षा थी।

'उसमें छपा है कि पूरे दो दिन, दो रात से बलिया के पचास हज़ार नागरिक पीने के पानी के लिए तड़प रहे हैं।'

'तुम इस चार-पांच हज़ार आबादी वाले महुवारी गांव को क्यों नहीं देख रहे हो? कई सौ बीघा गेहूं बिजली और डीज़ल के धोखे में सिंचाई बिना चौपट हो गया।...यही तो तुम्हारी पार्टी है। अब तो उम्मीदवारों से लोग कहेंगे, 'पानी दो वोट लो।'

'इसमें कोई पार्टी क्या करेगी? सूखा क्या इस पूर्वी उत्तर प्रदेश में ही है? राजस्थान, मध्यप्रदेश, आन्ध्र, बिहार और हरियाना आदि को देखो, जल रहे हैं।'

'यह तो तुम ऐसे कहते हो जैसे भ्रष्टाचार की बात उठाने पर सत्ताधारी

कहते हैं, अरे भाई, भ्रष्टाचार क्या भारतवर्ष में ही है ?···कब तक ध्यान बंटाने वाले इन हथकंडों के बल शासन चलेगा ?'

'जब तक चुनाव-चक्र चलता रहेगा।'

'सो तो चलता रहेगा। मतदाता को पानी, रोटी, नौकरी और ज़िन्दगी की ज़रूरी चीज़ें भले न मिलें, चुनाव द्वारा राजनीति-कर्मियों को सरकार तो मिलती ही रहेगी, दस-बीस प्रतिशत वोट गिरें तब भी।'

'लोकतन्त्र की यही प्रतिष्ठा है। देश की जनता जिसके साथ हो जाय···।'

'देश की जनता तो दूर है, हमारे घर की जनता देखता हूं, तुम्हारे साथ हो गयी है।'

'नाते-रिश्ते के एकदम पार कोई कैसे हो जाय ?'

'जाति और रिश्तों की गन्दी राजनीति की वकालत यह तुम कर रहे हो ?'

'राजनीति पतितपावनी गंगा की धारा है। उससे जुड़ने पर कुछ गंदा नहीं दोस्त !···देखो जीप का पवित्र अनहद नाद सुनाई पड़ने लगा।'

और देखते-देखते गरम हवा के झोंके की भांति भुवनेश्वर आकर बारी-बारी से दोनों के चरण छूता कहता गया, 'धन्यवाद जीजा जी, हड़ताल खत्म हुई, अच्छा हुआ। सब बकिऔता दिलवाऊंगा।···इस चुनाव-यज्ञ में आप की शुभ-कामना मिले।' और इसके बाद झोंके से 'कहां हो बहिन जी···मेरी कमलिनी भांजी कहां है ?' करता घर में घुस गया।

रामरूप हैरान। एक युग के बाद यह कहां का कैसा प्रेम उमड़ पड़ा ? और कितने बड़े झूठ के साथ ? इस देहात में पंचायत में पड़ी कोई विवाद की वस्तु कहां किसी को मिली है ? गया बाकी वेतन, गयी बढ़ोतरी की रकम और अध्यापकों की लाज।···कहता है यह माया-नट-नेता, मेरी लाज आप लोगों के हाथ है। आप मुझे बिचवई मान बिना शर्त हड़ताल समाप्त करें।···मैं इज्ज़त के साथ आप लोगों की सारी मांगें पूरी कराऊंगा। और मान लिया था लोगों ने !

जीप चली गयी तो रामरूप का ध्यान कोने में पीतल की थाली, पानी, थोड़ा कड़वा तेल और दूब लिये चुपचाप बैठी पिअरी झाड़ने वाली स्त्री की ओर गया। यही है बिसुनी लोहाइनि ? कालिख में डूबी और चारों ओर से पिचकी अलमूनियम की तसली जैसी। ऐसी गुनवन्ती ?

उसके मन में सनसना रहा था एक शब्द, चुनाव-यज्ञ।

कितना विकट है यह जल और डीज़ल के साथ अन्य सुविधाओं के मृगजल जैसे रूप वाला यह मई अर्थात् जलते जेठ का धधकता चुनाव-यज्ञ। अधिकृत प्रत्याशियों के कर्मकाण्डी गण चुनाव घोषणा-पत्रों का मन्त्रोच्चार कर रहे हैं। हल्ला-जैसा, हंगामा-जैसा मचा है। पागलपन का बाजार गर्म है। देश-सेवा का भाव काफी ऊंचा चढ़ा हुआ है। मतदाता महान् है। उसका गांव स्वर्ग होने जा

रहा है। गांव-गांव सड़क, गांव-गांव अस्पताल, घर-घर नौकरी।

अस्पताल। रामरूप के भीतर एक फोड़ा कसक उठा। सड़क के ख़राब का वह हाल हुआ तो अस्पताल का ख्याल तो यहां उठने से भी रहा···कहता है वर्मा, पिअरी नहीं, अरविन्द को पीलिया है दोस्त, जांडिस बहुत खतरनाक रोग। भला यह झाड़-फूंक से दुरुस्त होगा? जल्दी शहर के किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाया जाना चाहिए।···लेकिन शहर की अस्पताली चिकित्सा गवईं-गांव के लिए कितनी 'दूर' पड़ रही है। निकट है बिसुनी। कहती है मां, 'अरे बचवा तोहरो पिअरी भइलि रहे तब इहे बिसुनी झरले रहे। दुइये अतवार में चंगा हो गइल।'

बिसुनी पीतल की जलभरी थाली अरविन्दजी के आगे रखती है। उसमें थोड़ा कड़वा तेल डालती है। फिर अरविन्द को आदेश देती है कि पानी में दोनों हाथ डाल मलमल कर, एक-दूसरे से रगड़-रगड़कर धीरे-धीरे धोता रहे। वह स्वयं एक दूब से हाथ को मन्त्र पढ़-पढ़कर झाड़ने लगती है।

तभी पूरब ओर से नारे की उठती गूंज कानों में आती है, 'देश की नेता: इन्दिरा गांधी।' और रामरूप अनुमान करता है, जुलूस के रूप में भुवनेश्वर का प्रचारक-दल मठिया पर पहुंच गया है। मठिया पर का डीह काफी ऊंचा है। सदर रास्ते के बीच में पड़ने के कारण हर प्रचारक वहां जाता है। प्रत्येक समय खाली निठल्लों की भीड़ भी और कहां मिलेगी। फैलायेगा यह लौंडा अपना मायाजाल। मठिया में जाकर पवहारी बाबा की धुईं की राख सिर पर लगाएगा। ठाकुरजी के सिंहासन के आगे साष्टांग दण्डवत् करेगा। और बहुत कुछ कर सकता है। ऐसा ही सब हो रहा है। भारतीय शिष्टाचार, विनम्रता और शील का उपयोग ढाल की भांति होने लगा है। हाथ जोड़ेंगे, दांत चिआरेंगे, गधों को माई-बाप कहेंगे। नये लोग मौका देने के लिए कहेंगे। पुराने लोग गलतियों के लिए माफी मांगेंगे। पैरों पर टोपी रख देंगे। कान पकड़कर उठे-बैठेंगे। बिरादरी की दुहाई देंगे। माहौल बना, हवा का रूख माफिक करेंगे।

जेठ के सूरज का गोला उठने के कुछ ही देर बाद तपने-जैसा लगा। उसके अमरूद के गांछ के ऊपर आते-आते बिलास बाबा भी घर से बाहर आ गए। कन्धे पर कुदाल है। एक हाथ में बाल्टी, डोर सहित। बाल्टी में एक लोटा माठा, जिसका मुंह कपड़े से बंधा है और एक हाथ में एक पतली छड़ी जैसा सोटा। संगीत ने यह कैसा बनवास लिया? रामरूप ने देखा, उन्होंने एक बार इस झाड़-फूंक के झमेले की ओर देखा और फिर चबूतरे के नीचे उतर गए। नयी खेती का निरपेक्ष नशा कैसा रंग लाता है, रामरूप के लिए यह गहरी दिलचस्पी का विषय बन गया है। वह बाहर से धीरे-धीरे खम्हिया में आ गया जहां दूर्वाभिमंत्रित हाथ की धुलाई शुरू थी। रामरूप ने एक बार अविश्वास के साथ उस ओर देखा, इससे क्या होगा? फिर उसकी निगाह उठी तो सामने की दीवार पर तिरंगांकित भव्य नारी-चित्र

का आदमकद पोस्टर। अरे, यह कब लग गया?···मन में आया, नोच फेंके। मगर वढ़ा हाथ रुक गया। अपने ही घर वह अल्पमत की श्रेणी में आ गया है।

उसे लगा, बाहर की तपन भीतर आ गयी। एक तो भीषण गर्मी, दूसरे जीवन के अनेकमुखी संकट-संत्रास और तीसरे हंगामें-हड़बड़ियां। क्रिया-प्रतिक्रिया में हतप्रभ जनता क्या करेगी? परस्पर बजते विरोधी भोंपों के बीच उसका पारा चढ़ेगा, उतरेगा। अकुला कर कहेगी, जैसे नागनाथ वैसे सांपनाथ। चलो तुम्हीं को सही यह वोट। पिछड़ी और अभावग्रस्त जनता की सबसे बड़ी पहचान वोटों के चलते सिलसिलों और छलावों के बीच यही उभरी है कि वह सब कुछ भूल जाती है। वह भूल जाती है अपने पिछले आक्रोश को और क्षोभ को भी। फिर नयी स्थितियों के नये आक्रोश और नये क्षोभ जनम लेते हैं। करें सामना नये उम्मीदवार। मगर सामना कौन करता है? चुनाव की कला तो कतराने में है, फुसलाने-बहलाने में है। अब देखें इस चुनाव में क्षेत्रीय जनता को भारतीय कम्यु-निस्ट पार्टी के उम्मीदवार हीराराम फुसला लेते हैं या कि इन्दिरा कांग्रेस के इस नौजवान उम्मीदवार का लासा तगड़ा पड़ता है या हमारे लोकनायक की आन रह जाती है, या हमारी जनता पार्टी के उम्मीदवार वर्तमान एम०एल०ए० पं० बालेश्वर उपाध्याय का श्रम सार्थक होता है? कुछ अनुमान होना कठिन है। कारण चारों ओर गहरी उदासीनता है। चुनाव में गरमाहट भी कहां आ पाती है। गांव के लोगों के दिलो-दिमाग को तो सूखा-अकाल ने ठण्डा कर दिया है। वैसे ठण्डापन तो पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोगों की स्थाई नियति जैसे बन गयी है। पिछड़ेपन का मुहावरा जैसे स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व उससे जुड़ा था वैसे ही अब भी अपनी पूरी अर्थवत्ता के साथ जुड़ा है।

'अरे लद्-लद् पिअरी गिर रही है।' कमली की टिप्पणी से रामरूप का ध्यान भंग हुआ। देखा, सारा परिवार जुट गया है। कमली के बलाउज पर इन्दिरा गांधी के चित्र का चमकदार बिल्ला देखकर वह चौंक उठा। बिल्ले की ओर संकेत कर पूछा, 'यह कहां से मिला है?'

'मामा ने दिया।' उसने सहमते-सहमते कहा।

'तुम लोग हमें जिन्दा नहीं रहने दोगी।' उसने झल्लाकर कहा और देखा कि कमली आहिस्ते-आहिस्ते बिल्ले की पिन खोल उतारने लगी। उसने फिर कहा, 'मेरा यह मतलब नहीं है···।'

'बाबू जी, अब इधर देखिए।' यह बिसुनी की आवाज थी।

रामरूप ने देखा, सचमुच सफेद पानी एकदम पीला और गाढ़ा हो गया है। यह तन्त्र-मंत्र का प्रभाव है? इस तरह यह रोग सचमुच अच्छा हो जाएगा क्या? क्या गांव के परम्परित झाड़-फूंक वाले इन सस्ते उपचारों में सच्चाई है? क्या इस अंधविश्वास जैसे उपचार पर निर्भर रहा जा सकता है? यदि यह भ्रामक है

तब यह कैसे हुआ कि साधारण सफेद पानी इतना पीला गाढ़ा हो गया ? क्या यह तेल दूब, पानी और हाथ के रास्ते रोग के पीलेपन के उतरने की कोई सामान्य रासायनिक प्रक्रिया है कि पानी ऐसा हो गया है ? यदि यह निरर्थक भ्रम है तो ऐसा कैसे कि गांव के लोग इसी उपचार से पियरी-मुक्त हो जाते हैं ? उसे स्वयं बचपन में कभी यह रोग हुआ तो कहां सूई लगी ? फिर क्या पता कि सभी अच्छे होते हैं या नहीं। विचित्र विडम्बना है कि एक ओर सैकड़ों-हज़ारों खरचने वाले सुविधासम्पन्न लोगों के लिए डॉक्टर और चिकित्सालय हैं दूसरी ओर गांव के सुविधाहीन गरीबों के लिए भगवान हैं, बिसुनी है, झाड़-फूंक है और सवा किलो आटा के साथ एक पिंड़िया गुड़ और पांच गांठ हल्दी का खर्चा है। कितनी सस्ती चिकित्सा ?

बिसुनी आटा और गुड़ लेकर चली गयी। खम्हिया का मेला उठकर घर के भीतर चला गया। बाहर सन्नाटे जैसी सहन में फैली धूप की आंच से भीतर कोठरी तक तमकने लगी। घर के भीतर गुनवन्ती बिसुनी की उपचार-शक्ति की जो पूर्ण द्विधा-मुक्त चर्चा उठ रही थी उसकी प्रतिध्वनि कोठरी में आने लगी परन्तु क्या स्वयं रामरूप द्विधा-मुक्त हुआ ? वास्तव में उसकी द्विधा और भी बढ़ गयी। क्या है असलियत ? यह या वह ? किधर है सच्चाई ? इधर या उधर ?

उसे लगा, वह और उसका परिवार ही नहीं, पूरे देश का मानस किसी बिसुनी के चक्कर में भ्रमित और द्वन्द्वग्रस्त हो गया है। वैषम्य और विरोधाभासों में लोग भौंचक्के हैं। मजबूरियों की अदेख जकड़न कहीं नकार बनी है तो कहीं स्वार्थ की जकड़बन्दी युक्त स्वीकार। पूरा लोकतन्त्र द्विधाग्रस्त है। वह एक गहरा नशा है। …मगर रामरूप के ऊपर क्यों नहीं पूरी-पूरी तरह चढ़ रहा है ? काश की वर्मा की तरह उसमें वह भी डूब गया होता ! गिरोह में आदमी कितना खुश है ? रामरूप किस गिरोह में अपने को झोंक दे ?…द्विधा की स्थिति शायद एक दुर्भाग्य है। क्यों उसे ऐसा लग रहा है कि कहीं कुछ भी स्पष्ट नहीं है, न सिद्धान्त, न नारे और न संकल्प ? पूरा राष्ट्र रोगग्रस्त है। चुनाव की औषधि रोग बढ़ा रही है कि घटा रही है, कुछ भी कहना कठिन है। लेकिन इतना पढ़ा-लिखा होकर रामरूप यह कैसे मान ले कि बिसुनी का तन्त्र-मन्त्र सत्य है ? उसका विरोध बना रहेगा।

४१

खोरा की अपनी निजी बारहमासी बहार में उनके बाग की मौसमी बहार जो जुट गयी तो देखते क्या हैं कि सुनसान-सा लगने वाला बाग एक तरह का नया व फसली दौलतखाना हो रात-दिन खुले दावतखाने की तरह चहल-पहल से भरा

रहता है। जेठ की तवाठी से धकियाए गये आदमी जुड़ांसी की तलाश में गांव-घर छोड़कर भगे चले आ रहे हैं तो धूप की अदेख आंच से आतंकित हो दिशा-दिशा से खुले आसमान के नीचे सरेहि में चरना छोड़ चौआ-चांगर भी खरामे-खरामे बगमुंह हो जुट रहे हैं। बाग की धरती पर इस पशु-परानियों के मेले से दिलचस्प सम्मेलन पेड़ों के ऊपर उनकी घनघोर छांव में पक्षियों का, जहां सेनुरिया, लम-कोइया, मलदहिया से लेकर बम्बइया, बइरिया, सुगउआ आदि के देशी-कलमी लालच लगाते रसीदे लट्टू लटके हैं पछिमा के झकोरों की डोरी पर नाच-नाच जाते हैं और अधीर चोंच की मार न सह कभी-कभी पके-अधपके चू जाते हैं, खड़-खड़-खड़-खड़-पट्ट। सचमुच ही वह एक गिरा, लड़के दौड़े। 'अरे शैतानो, ज़मीन पर गिरा आम कहीं भाग रहा है कि घोड़ा बने हो ? भागो, भागो। देखो जीप आ रही है। दरोगा आ रहा है। धरवा देंगे।' खोराजी डांटते हैं मगर लड़के क्यों मानें। नीचे आम, उसके ऊपर एक लड़के की मुट्ठी, मुट्ठी पर लड़का और लड़के पर तीन लड़के। तभी आगे लहरते तिरंगे वाली, लू के ताज़े झोके जैसी जीप ठीक उनके पास आकर भर्र-से रुक गयी।

खोरा ने देखा, बाबू हनुमानप्रसाद हैं, आगे वाली सीट पर, रामपुर गांव के धनपति किसान काली बाबू के साथ। उनके उतरकर खड़े होते-होते महुवारी के मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय, गजिन्दर, रामरूप के पट्टीदार बलिराम, गठिया के सभापति रघुवीर के पुत्र बनारसी और विश्वनाथ पाण्डेय के नौकर श्यामलाल जो इन दिनों सस्ते गल्ले की दूकान चला रहा है, के भी चुनाव-प्रचारक चेहरे जीप के पिछवारे से उछल-उछलकर खोरा के सामने टंग गए।

'बाबा, गाय बछड़े की दुहाई। हमारे उम्मीदवार भुवनेश्वर बाबू को आशीर्वाद मिले।' खोरा के आगे हाथ जोड़कर तथा आवश्यकता से कुछ अधिक झुककर विश्वनाथ पाण्डेय ने कहा।

हनुमानप्रसाद ने आगे बढ़कर हाथ और आंखों के इशारे से उन्हें मना किया, ऐसे नहीं। और स्वयं खोराजी का चरण स्पर्श कर कहा, 'कबी जी, कहीं पर पांच मिनट के लिए बैठा जाय तो···।'

'मगर टाइम कहां है ?' विश्वनाथ पाण्डेय ने अपनी घड़ी की ओर और फिर बाबू हनुमानप्रसाद की ओर देखते हुए इस प्रकार चिन्तातुर चेहरा बनाकर कहा जैसे पूरे चुनाव का भार उन्हीं के सिर घहराया है और वे अपने एक-एक मिनट के बहुमूल्य समय के उपयोग के लिए काफी अधीर हैं। ऐसा ही होता है। जो भी आदमी किसी उम्मीदवार की चुनाव-प्रचार वाली गाड़ी पर बैठ जाता है वह एक-दम नशे की ऊंची झोंकों में हो जाता है। अचानक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो जाने के अहसास के साथ उसे ऐसा लगता है, यह सारी हवा मेरी वजह से बन रही है। विश्वनाथ पाण्डेय अभी हाल तक मगनचोला को गाली देते थे। परन्तु उस दिन

आदर्श विद्यालय में विज्ञान की मान्यता वाला ऐसा तगड़ा लासा फेंका मगनचोला ने कि चिड़िया फंस गयी। बाबू हनुमानप्रसाद के यहां जाकर उन्होंने खुद प्रस्ताव किया, प्रचार में जहां कहें, चलूं। जो मदद चाहिए, हाजिर हूं।

हनुमानप्रसाद भीतर से प्रचार में घूमना नहीं चाहते थे। ऐसा कार्य उन्होंने कभी किया नहीं। हर चुनाव में वे दरवाज़े पर बैठें-बैठे सबको चरका देकर मूर्ख बनाया करते थे। यह कला काली बाबू ने उनको सिखलाया या इन्होंने काली बाबू को इस कार्य में दीक्षित किया, लोगों में मतभेद है। परन्तु वोट के सीजन में इन दोनों सज्जनों का नाम इसी संदर्भ में लिया जाता है। इधर काली बाबू के बारे में एक बात यह भी धीरे-धीरे फैल रही है कि छिपे-छिपे वामपंथियों की मदद करते हैं। जो हो उनके मित्र बाबू हनुमानप्रसाद तो इस बार फंस गये हैं। सबको सदा 'हां-हां' कर टरकाया है तो यही गति क्या अबकी बार उनकी नहीं होगी ? तिस पर भी स्थितियां बदल गयी हैं। एक तो घोर गरीबी और दूसरे इस वर्ष का अवर्षणजन्य अकाल, दोनों ने मिलकर क्षेत्र का मनोबल तोड़ दिया है। क्वार में एक बार खूब जोर से बरसकर पानी तड़क गया। किसी तरह कार्तिक बुआई हुई। कुछ खेत परती रह गये। सिंचाई के लिए हाहाकार मचा रहा। कोई प्रचारक गांव में क्या मुंह लेकर जाय ? चुनाव घोषित तो कभी हुआ पर कहां कोई नेता-फेता आ रहा है ? सूखा, डीज़ल की पूर्ति का संकट, बिजली की परेशानी, सस्ते गल्ले की दुकानों की चोर-बाजारी वगैरह-वगैरह, कुल मिलाकर हालत यह है कि राजनीतिक लोगों की हिम्मत छूट जाती है। सारा प्रचार सड़कों पर, शहरों में और अखबारों में हो रहा है। जिस समय गांवों में लोग सूखा के मारे सूख रहे थे और हड्डी घिस रहे थे उस वक्त नेता लोग इस विपत्ति से अनजान राजधानियों में गठबन्धन और टिकटों के बांट-बखरे में लगे हुए थे। अब कपार पर भूत चढ़ा है तो वोट के लिए आतुर होकर गाड़ी और झंडा-भोंपा लेकर दौड़े हैं। अब तक आप लोगों को डीज़ल लेकर किसानों के आंसू पोंछने की फुरसत नहीं मिली और अब चले हैं मीठी-मीठी बातें करने ? क्या जवाब है इन बातों का ?

बाबू हनुमानप्रसाद को यद्यपि ऐसी ऊंची बातों का जवाब नहीं देना है और सारा प्रचार भयवद्दी, आपसी राह-रस्म और धाक के आधार पर सम्पन्न होना है परन्तु सवाल खड़े तो होंगे ही। हां, उन्हें मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय को साथ लेने में संकोच हो रहा था। फिर ये पाण्डेय महाराज अकेले नहीं, मुफ्त की गाड़ी पर सैर-सपाटे के लिए अपने चमचे के चमचे बेईमान चोट्टा श्यामललवा को भी बैठा लिये हैं। कौन नहीं जानता है कि तहसील पर से गल्ला उठाते-उठाते वह वहीं ब्लेक कर देता है। चुनाव के बाद इसकी दुकान कैंसिल करानी पड़ेगी। चीनी और मिट्टी के तेल के तो कभी दर्शन ही नहीं हुए। ऐसी स्थिति में ऐसे व्यक्ति को

साथ लेकर चलने में उलटा प्रभाव भी पड़ सकता है। दूसरी ओर इस व्यक्ति को नाखुश भी नहीं करना है। इसीलिए उन्होंने सोचा कि खास उनके लिए जो गाड़ी आयी है उसे लेकर वे सीधे खोरा के यहां पहले चलें। कई काम एक साथ सधेंगे। फिर वहां से छातापुर न्याय पंचायत के क्षेत्र की ओर चले जाएंगे। दूर के लोग इस गल्ले के गोलमाल और दुकानदार के बारे में क्या जानते हैं ?

मगर मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय को बक्सर में एक डॉक्टर से सुबह ही अपना ब्लड-प्रेशर चेक कराना था। इसलिए झख मारकर मन-ही-मन जल-भुनकर भी बाबू हनुमानप्रसाद को खोरा से सुबह की मुलाकात का लोभ रोकना पड़ा और बक्सर से छातापुर होते लौटने में काफी विलम्ब हो गया। मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय की घड़ी पर जिस समय उनकी नज़र का कांटा भिड़ा, उस समय छोटी-बड़ी सुइयों ने मिलकर डेढ़ बजा दिये थे। जेठ के इतने बजे का कुछ अर्थ होता है। सचमुच बैठने का समय नहीं था और भूख सबको लगी थी। चाय-पानी से क्या होता है ? और फिर एलेक्शन-प्रचार वालों को भोजन के लिए कौन पूछे ? देखते ही, हें-हें-हें-हें···हम आपसे बाहर हैं ? वोट आपको ही मिलेगा।···जाइये, टलिये, दुर्-दुर्-दुर् ! जैसे परम अवांछित।

'तो अपने सबका वोट खातिर घूम रहे हैं', खोरा ने कहा, 'जीप गाड़ी जोतकर पधारे हैं और देहात के सगरे बड़मनई इकट्ठे दरशन दिये हैं, तब यह लंगड़ा-लाचार खोरा कवनी विधि सरकार लोगन की सेवा करे ? का हुकुम होता है ?'

'हुकुम-हाकिम कुछ नहीं कबी जी,' बाबू हनुमानप्रसाद ने हाथ जोड़कर श्रीमती गान्धी के चित्र का एक चमचमाता बिल्ला देते हुए कहा, 'बस देश के लिए इन्हीं की लाज रखनी है और इसी आशीर्वाद के लिए हम लोग आपकी सेवा में आये हैं।'

'यह किसका छापा है ?'

'पहचान नहीं रहे हैं ? श्रीमती इंदिरा गांधी हैं, देश की नेता।'

'दुर्गा का अवतार हैं।' बनारसी बोला।

'दुर्गा का अवतार तो हर औरत होती है बचवा। कलिकाल में अवतार कलंकी का लिखा है। हम तो वोट देता नहीं। सुना है, दूसरे लोगों ने इंदिरा गांधी को वोट नहीं देने को परोगिराम बनाया है। अब बाबू साहेब के जइसन हुकुम हो।'

'बाबू साहब क्या कहेंगे ?' गजिन्दर ने कहना शुरू किया, 'हम कह रहे हैं। हमारी बात सुन लो साधू।···बाबू साहब का खास एकलौता बेटा भुवनेश्वर वोट में खड़ा है। उसको वोट देकर जिताना है।···आप वोटर हो न ?'

'ऊपर वाला जाने।' खोरा मुंह ऊपर कर आसमान की ओर हाथों से इशारा किया और गजिन्दर की ओर संकेत कर कहना शुरू किया—

'तू भइया महुवारी के दीनदयाल के बेटवा हो न?···सुन लो एक ठो किस्सा। बाबू हनुमानप्रसाद, आप भी कान में डाल लीजिये।'

इसी समय एक छोटा लड़का जिसकी धूल-धूसरित बुशर्ट पर पके हुए आम का ताजा रस कई जगह चुपड़ा था तथा मुख पर भी उसका लेप लगा था, हनुमानप्रसाद की चारपाई के पास आया और पास सटकर हाथ से उनका मुंह छूकर अपनी ओर ध्यान आकर्षित करते हुए ठुनककर बोला, 'हे, एगो फोटउआ हमरो के द हो।'

सभी लोग खिलखिलाकर हंस पड़े।

वास्तव में खोरा के उस पेड़ के नीचे पूरा मजमा लग गया था। जीप देखकर आस-पास से लोग जुट आये थे। बात की बात में स्वागत में दो चारपाइयां आ गयी थीं और उस विशाल पेड़ के नीचे पूरब और जिधर छाया कुछ अधिक सघन थी, आगन्तुक लोग आमने-सामने इतमीनान से बैठ गये थे। शेष लोग कुछ ज़मीन पर बैठ गये थे और कुछ लोग खड़े थे। लड़के कभी इधर मंडराते और कभी जीप का मुआइना करते। कहां रंग-बिरंगे फोटो वाले कागज वगैरह रखे हैं? वे कब बंटेंगे? अपनी मौज में उछल-उछलकर वे कभी-कभी उछाल देते, जीतेगा भाई जीतेगा···। छोटे हैं तो क्या? बड़ों की भांति गाड़ी देखकर चीन्ह जाते हैं कि ये वोट वाले हैं. खोरा से वोट मांगने आये हैं।

खोरा ने अपने बांस वाले चांचर पर आसन जमा लिया था। एक बाग वाले ने आवश्यक समझकर एक लोटा और एक घड़ा पानी प्रस्तुत कर दिया था। किन्तु खोरा-बाग में प्रवेश करने के पूर्व हनुमानप्रसाद के निर्देश पर लोगों ने एक गांव में जल पी लिया था। लंगड़ा पानी को पूछेगा भी नहीं। पर उन्हें क्या पता कि इस तवाठी के धुंध-धुक्कड़ वाले रसीले सीजन में उस बाग में केवल खोरा ही नहीं है, पूरा गांव है और सवाल पूरे इस गांव के बाग की इज्ज़त का होता है। जैसे गांव वैसे ही खेत-खलिहान तथा जैसी खेती वैसी ही बारी। कार्तिक में जैसे सारा गांव खेत में, चैत-वैशाख में जैसे वे खलिहान में उसी प्रकार जेठ-असाढ़ में उनका जमाव बगीचे में।

हनुमानप्रसाद ने गन्दगी की ओर तनिक ध्यान न देकर लड़के को गोद में उठा लिया और चुप कराते हुए बोले, 'तुन्हें हम फोटो देंगे तो तुम हमको वोट दोगे न?'

'हां।' बालक ने सिर हिलाया।

'अपनी मां से भी वोट दिलवाओगे न?'

'हां।'

'और अगर नहीं देंगे तब क्या करोगे?' पता नहीं कैसे मौज में यह प्रश्न भी उछल गया। और इसके धक्के से वह छोटा बालक छिटककर दूर खड़ा हो गया

तथा अपने बुशर्ट की पाकिट से एक बिल्ला निकाल हनुमानप्रसाद को दिखाते हुए मुंह बिराकर भाग गया, 'हारेगा भाई हारेगा...।'

विरोधी पार्टी का बिल्ला। फिर लोगों की हंसी और हंसी नहीं, इस बार लोगों की हंसी का सैलाब! उधर हनुमानप्रसाद ही नहीं, चारपाइयों पर बैठे सभी लोगों का मुंह उतर गया। मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय ने बाबू साहब की ओर देखकर कलाई मोड़ अपनी घड़ी पर गहरी दृष्टि डाली और फिर सोद्देश्य उनकी ओर देखा। उनकी आंखों में अपनी ही नहीं अपने पूरे प्रचारक दल की भूख टंगी थी। माना कि चुनाव प्रचार में भूख-प्यास पर ध्यान नहीं जाना चाहिए। पर वैसा नशा मैनेजर साहब पर अभी नहीं चढ़ा था।

'तो कबी जी, आज आशीर्वाद हो। कुबेला हो गयी है। फिर कभी मिलूंगा।' हनुमानप्रसाद ने कहा।

'मेरा आशीर्वाद अभी ऊपर टंगा है। मिलट भर में मिल जायेगा।'

'वोट आसमान पर से नहीं बरसता है कबी जी...।' काली बाबू ने कुछ कहना चाहा परन्तु बात बीच में ही अटक गयी। उसे पूरा कर दिया खोरा ने—

'आसमान पर से वोट नहीं सरकार, पाकल-पाकल आम भहराता है और एह जेठ का खरउदिया दुपहरिया में सूखल-पाखल वोट को मारिये गोली। तबीयत से रसगर डाढ़िके इहां इन्द्रासनी फल चाभिये।'

और तभी पेड़ के पश्चिम ओर वाले भाग में जैसे अचानक हज़ारों हाहाकारी घुड़सवार आ गये। पड़-पड़-पड़-पड़ पड़ाक्-पड़ाक्...।

हां, वह खोरा के विशाल वृक्ष की सिर्फ एक डाल का कमाल था और वह भी एक बार क्षण-भर झहराई गयी थी। नीचे पूरे फर्श पर पके आमों की वर्षा से पथार पड़ गया। हरे, पीले और लाल रंगों के मिश्रण से उभरी उत्कृष्ट नैसर्गिक कलाकारी के तृप्तिदायक आयामों से पूर्ण वे बिखरे हुए टटके अमृत-कन्दुक अब सब की आंखों के आकर्षण केन्द्र बन गये थे। कैसा आह्लादक परिदृश्य है। कोई भी ललच-ललच जाय।

'हां, तो वह छूटा हुआ किस्सा सुना दीजिये कबी जी।' एक आम को बाल्टी से निकालने के बाद हाथों से घुलाकर उसका रस भरपूर भाव से भीतर उतारते हुए काली बाबू ने कहा और कानों सहित सिर को तौलिये से बांध लिया।

एक बड़ी बाल्टी में पानी भरकर उसी में आम डाल दिये गए थे। बाल्टी दोनों चारपाइयों के बीच में रख दी गयी थी। बाल्टी के पास एक खाली टोकरी छिलके तथा चूसी गुठलियों को फेंकने के लिए रख दी गयी थी। खोरा को छोड़-कर इस रसाल-यज्ञ में वहां उपस्थित गांव वाले भी सम्मिलित थे। वे कुछ दूर हट भूमि पर जमे थे। झहराने वाला पेड़ के ऊपर ही कपि-प्रणाली से न्याय कर रहा था और बच्चे हाथों में लेकर दूसरी ओर ओल्हापाती की भाग-दौड़ में मस्त हो

गये थे। कहां पता चल रहा था कि कानों को जलाने वाले गर्म हवा के झोंके अब लगातार आ रहे हैं ?

'का किस्सा कहें, लाट साहेब के बाप से पाला पड़ गया था', खोरा ने कहना शुरू किया, 'तब पहिले-पहिले सुराज का पीठि पर वोट आया था। जइसे मुखिया का गइले गांव में सभापती आये ओइसे पटवारी का गइले लेखपाल और लाट साहब का जगह राज्यपाल। लोग कहते राज्यपाल से बढ़कर आला हाकिम लेखपाल। अब आगे सुनीं। एक दिन लेखपाल साहेब बाग में आये। बोले, अंचार वास्ते सौ ठो कच्चा आम चाहिए। हम बोला, सरकार, आज अतवार है। आज कच्चा आम हम नहीं तोड़ सकता। बिहाने सेवा होगी। सो, वो बूझे कि बहाना करता है। चले गये। अब आगे के हवाल सुनिये। वोट आया। हम गये तो वोट के पर्ची वाले बबुआ बोले, कवी जी, आपके नांव के सामने तो 'मृत' लिखा है। आप वोट नहीं देने सकता। लेखपाल साहब के जै बोल हम लौट आया।'

'बनारसी जरा वोटर लिस्ट में देखना, इस वर्ष खोराजी का नाम है न ?' हनुमानप्रसाद ने गुठली चिचोरते हुए कहा।

'मत ढूंढिये नाम-फाम' खोराजी बोले, 'थोड़ा किस्सा और है। सुन लीजिए।···तो दुसरका वोट पांच सालि बाद आया। उहे लेख-पाल था। कमनिस्ट पाटी में मिला था। हमने जवाहरलाल पर जो एक बिरहा बनाया और लड़के लोग गाने लगे तो वह जल गया। जो है सो हमारी पाटी के लोग भी नाम जिलाने वास्ते दरखास्त दिये। नांव जी गया। बाकी का जी गया? वोट देने गया तो पर्ची मिली, मरसिरजा! रामधीरज की जगह पर 'मरसिरजा।' धिरजा-सिरजा। हम ठठाकर हंसे। बोले, लेखपाल साहेब की जै। सो सरकार! परन कर लिया, खोरा कभी वोट देने नहीं जायेगा।'

'इस बार हम लोगों के हित में प्रण तोड़ दें साधु जी।' मैनेजर साहब ने बालटी से आम निकालते हुए कहा।

'नहीं, परन नहीं टूट सकता।' खोरा ने उत्तर दिया।

'अच्छा, ठीक है। अपना प्रण पालिये परन्तु दूसरों से हमारे लिए कह दें, कह-कर वोटों की वर्षा करा दें, उसी तरह जिस तरह आमों की वर्षा करा दिये हैं। धन्यवाद कवि जी।'

'और भाइयो' मैनेजर साहब हाथ जोड़कर अन्य ग्रामीणों की ओर मुखातिब हुए, 'आप लोगों से भी करबद्ध प्रार्थना है, हमारे लोकप्रिय और जीतते हुए उम्मीदवार बाबू भुवनेश्वर प्रसाद को जितायें। आप देखेंगे, आप को इतने दिनों बाद एक कर्मठ और तेजस्वी नेता मिला है···।'

'अरे पाण्डेय जी, आपको यह भी कहना पड़ेगा' एक ग्रामीण ने कहा, 'आप लोग आ गये, धन्यभाग्य। बाबू हनुमानप्रसाद जहां कहेंगे, हम लोग वोट वहीं

देंगे। हां, कबीजी को आप लोग ज़रूर सहेज लीजिए।'

'कबीजी का आशीर्वाद तो हम लोगों को मिलेगा ही।' कहते-कहते उन्हें डकार आ गयी।

'काहे के वास्ते मिलेगा साहब?' खोरा बोला।

'देश में स्थायी और जनहितकारी···।'

'मेरा जवाब बाबू साहब दें।'

'आपका जो हुक्म हो हाजिर हूं।' हाथ साफ कर कुल्ला करते हुए हनुमानप्रसाद ने कहा।

'महुवारी वाली सड़क के विरोध और तनाजा से खुद अपने आप फरक हो जाइये और उसको बन जाने दीजिए।'

हनुमानप्रसाद चुप। उन्हें उम्मीद नहीं थी कि यह सवाल यहीं सामने आयेगा। क्षण-भर बाद हुंकड़कर खोंखते हुए उन्होंने कहा—

'अच्छा ठीक, यही सही। मगर, आप अपने चेले रामरूप को समझा दें कि वह इस वोट में रिश्तेदारी निभावे। कम-से-कम चुपचाप बैठ भी तो जाये।' जीप की ओर बढ़ते हुए हनुमानप्रसाद ने कहा।

'समझाऊंगा। बाकी पहिले सरकार ओह दहेज वाली ज़मीन से कब्जा-दखल उठा लेंगे? पक्का-पक्का वादा करेंगे?'

हनुमानप्रसाद स्तब्ध। देखने में बौरहिया, आवै पांचों पीर। तो, इसे यह भी मालूम है? अब क्या कहें? बोले—

'मान लिया, मगर एक शर्त है। आप अपने विद्या-बल से उस भगे आसामी को हमारे यहां वापस करा दें।' उन्होंने जीप में बैठने के पूर्व खोरा का चरण स्पर्श करते हुए कहा।

खोराजी कुछ कहने जा रहे थे कि एक ग्रामीण ने उनका ध्यान बगीचे के कोने की ओर आकृष्ट कराया जहां से कुछ और तरह के झंडे वाली एक और जीप इधर आ रही थी। नज़र हनुमानप्रसाद की भी उधर घूमी। मन ऐंठकर रह गया, आ गया साला।

जीप स्टार्ट हुई तो राधेश्याम ने हल्ला किया, पर्चे झंडे और पोस्टर तो रह ही गये। गाड़ी रोककर उन्हें बांट दिया जाय।

'ज़रूरत नहीं।' हनुमानप्रसाद ने कहा और जीप ने रफ्तार पकड़ ली।

४२

लोकतन्त्र ने भारत को और चाहे जो दिया हो, एक चीज़ बहुत जबरदस्त उसने दी, अलगाव। उसके राजनीतिक चरण···'वो' और 'ट'··· के गांव में

पहुंचने के साथ गांव टूट गये। लोकतन्त्र के मर्म को समझने भर उनकी शिक्षा-दीक्षा तो रही नहीं, सो चुनाव को गांव की राजनीति से जोड़कर, गोल-गिरोह और सरदारी से जोड़कर, जाति-बिरादरी से जोड़कर, घरेलू स्वार्थों से जोड़कर और निजी लड़ाई का रूप देकर गांव वाले ऐसे उलझे कि कभी स्वराज्य-सुख को एक होकर भोग नहीं सके। राजनीतिक लोगों ने स्वार्थवश उनके इस अलगाव को बढ़ावा दिया। परिणाम यह हुआ कि गलत ढंग की ऐसी गिरोह-बन्दी हुई और इतने चौड़े-चौड़े दरार पड़े कि एक गांव में कई-कई गांव हो गए। हर टुकड़ा अपने को उचित सिद्ध करने के लिए राजनीति की आड़ लेता है। सिद्धान्तहीन राजनीति भाई-भाई में, बाप-बेटे में और मित्र-मित्र में अन्तर डाल अपनी जड़ जमाती चली जाती है। धूर्त राजनीतिज्ञों की काली राजनीति के उद्देश्यों के लिए मानवीयता की बलि चढ़ जाती है। रातोंरात निर्लज्ज दलबदल हो जाता है। किसे उम्मीद थी कि दो शरीर एक प्राण सरीखे रहने वाले भारतेन्दु और रामरूप आमने-सामने दो विरोधी शिविर लगाकर बैठ जायंगे?

आरम्भ में तो यह खेलवाड़ की तरह हुआ परन्तु जैसे-जैसे मतदान की तिथि निकट आती गयी मामला गम्भीर होता गया। भारतेन्दु नहीं होता तो रामरूप के घर की औरतें इस प्रकार खुलकर इस चुनाव में रिश्ता निभाने के लिए साहस नहीं करतीं। पहले उन्होंने धीमे-धीमे हंसी के रूप में भुवनेश्वर को समर्थन देना शुरू किया। बाद में लगा, रामरूप नाराज़ नहीं हो रहा है, इस मामले में चुप है, तो वे सब खुलकर इंदिरा गान्धी की जयकार करने लगीं।

रामरूप भीतर से तो ऐंठकर रह जाता पर बाहर से क्या कहे? दोहरे मानसिक दबाव में वह चंपकर मौन ही बने रहने के लिए मजबूर था। रामरूप के सामने चुनाव के सत्य की चुनौती जितने गम्भीर रूप में प्रस्तुत होती है उतनी गम्भीरता से उसके घर की औरतों के सामने उसके प्रस्तुत होने का प्रश्न ही नहीं था। उनके सामने इस 'खेल' में मामा-भाई वाली अपने रिश्ते और खून की कतार ही निकटतम सत्य थी। दूसरी बात कि घर में रामरूप की ही भांति अधिकृत रूप से समादृत उसके मित्र वर्मा का उन लोगों को बल मिल रहा था। वास्तव में वर्मा को औरतों का सहारा था और औरतों को वर्मा का सहारा था और दोनों एक-दूसरे के सहारे रामरूप के अपने ही घर में उसके विरोधी बने हुए थे। भीतर से रामरूप को मर्माहत कर भी वर्मा बाहर से व्यक्ति स्वातन्त्र्य और प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त-निष्ठा-स्वातन्त्र्य के सहारे बहुत मजे में उसका मित्र बना रह सकता था। हंसी-हंसी के नाट्य में दोनों में दो-दो चोंचें हो जातीं। वर्मा की नागर काट-झपट और चुस्त-चौकस घेरेबन्दी में सीधा-सरल रामरूप छटपटा कर रह जाता। मन-ही-मन साले को सौ गाली देता, घर में उसने कटुता की आग बो दी। हां, भीतर से वह बहुत कटु होता जाता था। जिस दिन तिरंगा झंडा गाड़कर रामरूप

के द्वार पर वर्मा की कोठरी में इन्दिरा कांग्रेस का चुनाव कार्यालय बन गया, उस दिन तो जैसे रामरूप के भीतर आग लग गयी, परन्तु बाहर से क्या कहे? किसे डांटे? उसने स्वयं सह-अस्तित्व स्वीकार कर तथा अपने दोस्त की भावनाओं का ख्याल कर अपनी जनता पार्टी का झंडा अपने द्वार पर नहीं लगाया। सोचा, झंडा लगाने से क्या होता है? बस, काम होना चाहिए। किसी को किसी प्रकार की ठेंस पहुंचाये बिना भी यदि काम होता है तो उत्तम है। इधर इस लायक दोस्त ने जैसे उसको एकदम उखाड़ फेंकने की कसम खा ली है। जीप उड़ाते मगनचोला हर दूसरे-तीसरे दिन आकर सदल-बल हलवा-पूड़ी काट उसकी छाती पर मूंग दल जाता है।

अत्यन्त मर्माहत होकर रामरूप ने लगभग घर छोड़ दिया। गांव पर रहने पर भोजन के लिए वह घर आता तो किस प्रकार संतुलित और सामान्य बना रहता। विद्यालय के बाद उसका शेष समय मठिया पर या बाहर प्रचार में बीतता। मठिया के महंथ सहित पिरथीनारायण की बखरी और पूरी सोनार-टोली का समर्थन जनता पार्टी को मिल रहा था। उसकी पट्टी मालिकान के लोग भी दीनदयाल के गोल में मिलकर चुनाव में उसके विरोधी बने हुए थे। वास्तव में वह अपने पूरे लम्बे-चौड़े खानदान में अकेला पड़ गया था। मात्र अरविन्दजी थे जो उससे जनता पार्टी के पोस्टर-पैम्फलेट लेकर इधर-उधर सटाया करते थे। बिलास बाबा अभी तक 'सुरुज छाप' के सपने में जी रहे थे। करपात्रीजी के भक्त हैं। पहले चुनाव में राम राज्य परिषद् की ओर से इस देहात के प्रसिद्ध संगीतज्ञ रामाधीन उर्फ अगड़धत्तजी इस चुनाव क्षेत्र के उम्मीदवार थे। परिणाम घोषित होने पर उनकी जमानत जब्त हो गयी तथापि बिलास बाबा के मन में धंसा यह विश्वास निर्मूल नहीं हो सका कि 'धरम-करम' वाली सबसे उत्तम पार्टी 'सुरुज छाप' वाली है। उन्हें इसके विपरीत कुछ समझाया जाना असम्भव था। वे कहते हैं, जब कोई 'सुरुज छाप' वाला नहीं खड़ा है तो विधर्मियों को वोट देकर क्या होगा? चित्र में इंदिरा गांधी के गले की माला दिखाकर और मन्दिरों में उनकी पूजा-भक्ति का समाचार पढ़वाकर वर्मा ने बहुत सिर मारा कि उन्हें मोड़ दे या मूंड़ ले परन्तु दाल नहीं गली। अपने अभियान में इसे वह अपनी पराजय मानने लगा।

किन्तु इतनी सारी जीत के सामने यह एक छोटी पराजय किस गिनती में थी? बेशक, रामरूप के द्वार पर तिरंगा गड़ जाना उसकी बड़ी भारी जीत थी। यहां तक कि इस एक जीत से लोग अब यह भविष्यवाणी करने की स्थिति में आ गये थे कि महुवारी में रामरूप हार रहा है तथा यदि महुवारी में रामरूप हार रहा है तो इस चुनाव-क्षेत्र में मगनचोला जीत रहा है। वास्तव में बहुत सोच-समझकर भारतेन्दु वर्मा ने चटपट जनता पार्टी को छोड़ इस क्षेत्र में जीतती-जैसी पार्टी का

दामन पकड़ लिया था। पिछली जनवरी में बाबू हनुमानप्रसाद के द्वार पर वह भुवनेश्वर से मिला था और उसी दिन उसने भांप लिया था, यह असाधारण विद्युत्गतिक और युगीन सफलताओं वाला अनाहत आधुनिक व्यक्तित्व है। नगर में रहकर जो ज़माने के अनुभवों से परिपक्व हो गया है तथा जिसमें अवसर को पहचानने की क्षमता है, ऐसा भारतेन्दु व्यर्थ की भावुकता के प्रवाह में क्यों बह-कर मौके को हाथ से निकलने दे ? वह कॉलेज के हड़ताल वाले सन्दर्भ में उसके और निकट आ गया। रामरूप की निलंबन-समाप्ति को लेकर कितनी बुरी तरह वह प्रिंसिपल और मैनेजर को फटकार रहा था। कांप गए थे वे लोग। चार दिन के मुंहफट लौंडे की यह तेजस्विता ? वर्मा एकदम उससे सट गया। सटना फायदेमन्द था। उसके भाई सुबोध को टी० आई० बनना था। केन्द्रीय परिवहन मन्त्री जिसके चुनाव-प्रचार में एक दिन का समय दे रहा है। उसकी चमचागिरी में भी अचूक बरक्कत। सिद्धान्तों का मानसिक अचार चाटकर इस रोजी-रोटी की भयानक किल्लत वाले दौर में कौन जी सकेगा ? सिद्धान्तवादिता और मान-वीयता का सहारा मूर्खता है। रामरूप की मैत्री का अर्थ यह नहीं कि उसने अपने को किसी पार्टी के हाथों बेच दिया है। वह उसकी अलाभकर वर्तमान नाराज़गी की चिन्ता करे कि अपने लाभकर भविष्य की ? फिर क्या देश का लाभकर भविष्य विरोध-पक्ष से सधेगा ? त्यागी, तपस्वी, निष्ठावान, विचारक और उच्च कोटि का चिन्तक होना और बात है और सत्ता संभालना और बात है। वर्मा तू गलत नहीं है। तू रामरूप का विरोधी भी कहां है ? तुम उसके परिवार के साथ हो। उसकी पत्नी के भाई-बाप के मुंह पर चन्दन लगाने के लिए खप रहे हो। मगन-चोला एम० एल० ए० हो जायेगा तो वर्मा का नहीं, रामरूप का ही तो सम्बन्धी कहा जायेगा। फिर हंमुआ कितना हू टेढ़ा होता है तो अपनी ओर ही खींचता है। कैसे रामरूप का निलम्बन समाप्त हुआ, कैसे हड़ताल टूटी, कैसे बकाया मिलने का रास्ता साफ हुआ, यह सब क्या भूला जा सकता है ? रामरूप विरोधी पार्टी में होने की लाज निबाहने के कारण यदि अपने खास साले की मदद नहीं कर पाता है तो उसके एक मित्र के नाते वर्मा ही इस फर्ज को अंजाम दे रहा है। रामरूप को तो खुशी ही होनी चाहिए।

लेकिन रामरूप खुश नहीं था। एक दिन वह रात में देर से भोजन करने आया। देखता क्या है कि द्वार पर कम्बलों के गट्ठर और नोटों की गड्डियों की गिनती चल रही है। नाना प्रकार के लोग एकत्र हैं और वे सब लोकतन्त्र के रक्षक अथवा उसके सभ्य सैनिक नहीं, गन्दी राजनीति के बदबूदार निशाचर हैं और खदर-बदर एकत्र हैं। क्षण-भर के लिए उसका सन्तुलन बिगड़ गया। उसने चीखकर कहा, 'यह घोर और जघन्य भ्रष्टाचार है। पिछड़े लोगों की गरीबी से लाभ उठाकर और रुपया-कम्बल बांट वोट खरीदना बेशर्मी की हद है।'

'दोस्त रामरूप', वर्मा क्षण-भर के लिए काम रोककर और पसीना पोंछकर बोला, 'यह न भ्रष्टाचार है और न बेशर्मी है। यह इस क्षेत्र के पिछड़ेपन को दूर करने का तथा यहां के तत्काल विकास का शुद्ध और ठोस नुस्खा है। ठीक कह रहा हूं न ?'

'क्या ठीक कह रहे हो ? भ्रष्टाचार को विकास की संज्ञा देते आश्चर्य है कि तुम्हें तनिक झिझक नहीं हो रही है। इसी को कहते हैं दुर्बुद्धि ! तुम्हारा दोष नहीं। यह संग दोष है। तुम अब सरकारी भ्रष्टाचार के साथ हो। तुम अब आदमी नहीं, राजनीति के पुतले हो। ऐसे ही पुतलों को बटोर तुम्हारी सरकार इतने दिनों से नंगा नाच कर रही है और पूर्वी उत्तर प्रदेश के पिछड़ेपन को ऐसे चुनाव के सन्दर्भ में वरदान मान ऐसा प्रशासनिक डंडा भांजती है कि वह अनन्त काल तक उनकी गद्दीनशीनी का मददगार बन कायम रहे। यह कम्बल बांटना भला किस विकास की कोटि में आता है ? और कौन-सा विकास यहां हुआ है ? यदि ऐसा ही विकास होना है तो अनन्त काल तक 'दुर्भाग्य' जैसे विशेषण को इस क्षेत्र से चिपके रहने से कौन रोक सकता है ? हर चुनाव नयी-नयी आशाएं लेकर आता है और उपलब्धि के रूप में निष्फल कांग्रेसी यथास्थिति को छोड़ चला जाता है। यहां की अकल्पित और अविश्वसनीयता की सीमा तक पहुंची आम लोगों की गरीबी देखते कांग्रेसी शासन के जनप्रतिनिधियों से जो अपेक्षाएं रहीं क्या वे आंशिक रूप से भी पूर्ण हुईं ?'

'तो क्या ये प्रतिनिधि सिर्फ···।' वर्मा ने कुछ कहना चाहा।

'चुप रहो ! क्या बोलोगे, पता है। कांग्रेस के लोगों के पास बोलने को बहुत कुछ होता है। मैं यह कह रहा था कि इतने दिन के स्वातंत्र्योत्तर इतिहास में सिर्फ एक बार अवसर आया कि पूर्वी उत्तर प्रदेश की पीड़ा सार्वजनिक रूप से उभरी। तब वह इसी जिले का एक संसद सदस्य था विश्वनाथ सिंह गहमरी, जिसने १३ जून १९६२ को लोकसभा में पूर्वी उत्तर प्रदेश की दरिद्रता और हीनावस्था को प्रभावी प्रखरता के साथ प्रस्तुत किया था और तत्कालीन प्रधानमन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू को द्रवित कर दिया था।'

'तो, गहमरी और जवाहरलाल कौन थे ? क्या वे कांग्रेसी नहीं थे ?'

'थे और मैं पूछता हूं कि उसके बाद भी तो कांग्रेसी शासन की श्रृंखला नहीं टूटी है ? तब क्या हुई वह पटेल आयोग की आशायें ? पूर्वी उत्तर प्रदेश की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए योजना आयोग की ओर से वी० पी० पटेल की अध्यक्षता में जो समिति गठित हुई थी तथा जिसने बड़ी लगन से दो वर्षों के अध्ययन के निष्कर्ष को तीन सौ पृष्ठों की मार्मिक रिपोर्ट के रूप में सदन के सामने प्रस्तुत कर दिया सो क्या हुआ उस रिपोर्ट का अंतिम परिणाम ?···दोस्त, जब-जब चुनाव आता है, इस क्षेत्र के कलेजे में वह 'पटेल-आयोग' का घाव करकने

लगता है। अत्यन्त क्रूर उपेक्षा के साथ वह पूरी रिपोर्ट दफना दी गयी। यह पिछड़ा क्षेत्र जहां का तहां रह गया।'

'तो क्या इस क्षेत्र में कुछ भी विकास हुआ ही नहीं ? आंख मूंदकर सरपट्टा समूचे सरकारी प्रयासों को नकार देना और बात तथा असलियत कुछ और है।' वर्मा ने उत्तर दिया परन्तु उसकी ज़बान लड़खड़ा रही थी।

'हां, विकास की असलियत तो यह सब सामने पड़ी है।' रामरूप ने मुस्कराते हुए नोटों की गड्डियों और कम्बल के गट्ठरों की ओर संकेत किया। वह आगे कहता गया, 'और लोग इतने विकसित हो गये कि एक कम्बल और दो-चार लाल-हरे पत्तों पर खरीदे जा सकते हैं। फिर दूसरी असलियत यह कि 'पूर्वांचल विकास मंच' का संयोजक और एक अत्यन्त तुच्छतम विकासी-प्रयास का असफल स्वप्नद्रष्टा आज भ्रष्टाचार की गद्दी पर मुनीम बना बैठा है।'

'इतने कटु मत हो रामरूप। तुम्हारी पार्टी भी यह सब ठीक इसी प्रकार करती है, तुम्हें पता हो, चाहे न हो। अपने उम्मीदवार पं० बालेश्वर उपाध्याय के निकट जाकर जरा अध्ययन करो। फिर मैं कहता हूं कि ये समाजवादी विचारधारा वाले महाशय इतने वर्ष से जनता-विधायक हैं, इन्होंने ही यहां क्या किया है ? इधर तुम उनके मुरीद बने बैठे हो और वे हैं कि एक बार इधर झांकने भी नहीं आये। जब इस मौके पर नहीं आये तो जीतने के बाद वे क्यों आने लगे ? बड़े-बड़े गांवों में, थोक-थोक वोटों के आढ़तियों के यहां चक्कर लगा रहे होंगे। इस ऊबड़-खाबड़ वाले छोटे गांव में क्या धरा है ? ···और सच, हृदय पर हाथ रखकर पूछो, कांग्रेसवालों ने यहां कुछ नहीं किया तो जनता वालों ने क्या किया ? ···हां, किया है। अपने निजी गांव पर बहुत कुछ किया है। अपने गांव तक चारों ओर से सड़क करा ली। अपने गांव में अस्पताल, बीज-भण्डार और नहर-नलकूप आदि करा लिया। ···तो, ज़रा इस बात को व्यावहारिक ढंग से सोचो। पहली बार तो तुम्हारे गांव-घर से एक तेजस्वी नौजवान खड़ा हुआ है जिसमें इस अपने क्षेत्र के लिए कुछ करने की आग है और आशा बंधी है कि जो कुछ अब तक नहीं हुआ, वह हो जायेगा। गठिया और महुवारी में कोई अन्तर नहीं। महुवारी-स्टेशन रोड तो प्रथम नम्बर पर है।'

'कितनी खूबसूरती से तुम अपना यह एलेक्शन-प्रचार कर गये।'

'प्रचार नहीं दोस्त!···तुमसे सच कहता हूं। तुम्हारे इस पटेल आयोग की चर्चा भुवनेश्वर बाबू के मुंह से हमने सुनी। यकीन मानो···यह चर्चा करते-करते वह हिचक-हिचक कर रो उठा।···कह रहा था, उसने रिपोर्ट के एक-एक अक्षर को पढ़ डाला है। कितना दुःखद है कि उस रिपोर्ट के अनुसार यहां की कुल आबादी का ९२.६ प्रतिशत गांवों में रहता है और प्रति व्यक्ति आय का औसत १९४.७ रुपया है तथा ३३ प्रतिशत लोग ही ऐसे हैं जो प्रतिमाह २१ रुपया व्यय कर सकते

हैं। शेष लोगों के व्यय का औसत १२ रुपया मात्र है। कुछ जिलों में भूमि से सम्बद्ध लोगों की मजदूरी चार पैसे से लेकर पन्द्रह पैसा रोज तक है।···फिर बीते वर्षों में क्या कुछ गुणात्मक फर्क आया है? नहीं, लोगों ने जैसे मान लिया कि अब यहां कुछ होने-जाने का नहीं। मनोबल टूट गया। आशायें क्षीण होकर नष्ट हो गयीं। निरन्तर की बाढ़-विभिषिका और अकाल ने ऊपर से ऐसा तोड़ दिया है कि अपने प्रतिनिधियों पर से जनता का विश्वास उठ गया है।···इसीलिए बदलाव ज़रूरी है। ज़रूरी है कि इस अन्धेरे घर में चिराग जलाने के लिए किसी अपने इसी घर के आदमी के हाथों में अधिकार सौंपे जाएं।'

'गुड। कन्वेसिंग की कला में यह रही तुम्हारी प्रथम श्रेणी।···लेकिन, गांठ बांध लो मेरा कहना। तुम्हारा उम्मीदवार इस गांव में हार रहा है।' कहते हुए पसीने में डूबे अपने कुर्ते को उतार रामरूप ने एक गिलास पानी के लिए आवाज़ लगायी।

'कैसे हार रहा है?'

'सोनारटोली का पूरा वोट तुम्हें नहीं मिलेगा और वही बैलेंस करती है।'

'मिलेगा।···वोट रातों-रात टूटते हैं।'

'वे नहीं टूटेंगे। कम्बल लौट आये न? नोट भी लौट आएंगे।'

'तब भी क्या फर्क पड़ेगा?'

'फर्क पड़ेगा। उनके वोट हमें मिलेंगे तो फर्क पड़ेगा ही।'

'तो वे वोट देंगे ही नहीं···।'

'इसका अर्थ कि बूथ कैप्चर होगा।···खबर है और पुलिस को खबर कर दी गयी है।'

'पुलिस क्या करेगी? वह तो बाहर रहेगी।'

पानी लेकर स्वयं कमली आयी।

'वर्मा ने कमली की ओर देखा और एक क्षण में वह जैसे दूसरा आदमी हो गया। एक क्षण के लिए वह रामरूप की उपस्थिति को भी भूल गया। आज-कल चुनाव की सरगर्मी के चलते वह अनायास उसके बहुत पास आ गयी है। अपने मामा के प्रचारकों के लिए चाय-नाश्ता और भोजन-पानी आदि की व्यवस्था से लेकर गांव की महिलाओं में प्रचार तक में वर्मा उसे पूरे अधिकार के साथ लगभग एक कार्यकर्ता की भांति खटाता है। ऐसा करने के लिए एक बहुत बड़ा आड़ उसे मिला हुआ है, मामाजी का मामला जो है।···और विरोधी पिताजी? ···तो पिताजी का काट माताजी। माताजी का मामला है, उनके भाई-बाप का मामला है···पिताजी महाराज चुनाव भर के लिए घर-बाहर, अपने ही घर में बेगाने।···यह सारी नकशाबन्दी इसी जालिम भारतेन्दु वर्मा की है। कहां के कहां रामरूप ने इस शहरी बला को घर में स्थान दिया, घर बरबाद हो गया।

'मामाजी की जीत का सारा श्रेय भांजी कमली बेटी को।' गहरी मुग्ध दृष्टि से उसे देखते हुए वर्मा ने टिप्पणी की।

'चलो, खना निकलवाओ। पानी से भूख नहीं जायेगी।' रामरूप ने कमली को आदेश किया और उसके जाने के बाद स्वयं उठकर भीतर चला गया।

रामरूप के जाने के बाद कम्बल की गांठ ले जाने के लिए एक मजदूर के साथ मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय आए। वर्मा ने पूछा, 'क्या समाचार है ?'

'सब ठीक है। कोटवां साइड में गड़बड़ी थी। सो, एक दिन गया। बाबू साहब भी थे। खोरा कवी को गुरु से चेला बना लिया और उसी के बाग में आस-पास के गांवों के लोगों की मीटिंग करके सब समझा दिया।···अरे समझा क्या दिया, मेरे पहुंचते ही सारे लोग टूट गए। कहने लगे, विश्वास न हो तो आप अपने एजेंट से कह देंगे। उसे दिखा-दिखाकर आप वाले छाप पर ठप्पा लगा देंगे।··· एक ओट भी इधर-उधर नहीं जाएगा। हां, उन लोगों के वोटरों को लाने के लिए सवारी की व्यवस्था करनी होगी।

काफी देर तक पाण्डेयजी अपने प्रचार का गुन गाते रहे। उनके जाने के बाद वर्मा ने घड़ी की ओर देखा। ओह, एक बज रहे हैं ? लगता है आज भी तीन बजे से पहले फुरसत नहीं मिलेगी। कमली एक प्याला चाय दे जाती।

४३

कमली चाय लेकर आयी तो वर्मा के भीतर उठा हुआ कृतज्ञता का ज्वार ऐसा अबूझ आह्लाद बन उमड़ आया कि भुजायें उसे अपने में समेट एक बार पूरे अस्तित्व के साथ चूम लेने के लिए तड़प उठीं। लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका। फिर क्षण-भर बाद पछताया भी कि यह कैसी विकार जैसी लहर उसके भीतर पहली बार उठी ? सावधान वर्मा, काम-वासनाएं ऐसे ही धोखों में गिरा देती हैं।

वोट का जातिवादी जैसा चार्ट लेकर हेडमास्टर धनेसर यादव बैठा था और बार-बार जम्हाइयां लेकर वर्मा के भीतर भी नींद संक्रमित कर रहा था। मगर उसे अभी सोना कहां था ? उस चार्ट को जल्दी समझ उन्हें विदा करना चाहता था क्योंकि भुवनेश्वर का कोई आदमी अभी-अभी गाड़ी लेकर आनेवाला था और उसे कहीं जाना था। फिर भेंट पता नहीं कब हो। कुछ बातें समझ लेनी हैं। अब तो अगला दिन वोट गिरने का निर्णायक दिन है। खुला प्रचार बन्द हो गया है। ···ओह, प्रचार में घूमना कितना मजेदार हुआ होता। यहां ऑफिस इंचार्ज होकर मर गया वर्मा, कितना-कितना हल्ला होता है, नारे लगते हैं, हड़कम्प होता है। जहां ऐसे में गांव का असली रूप दिखाई पड़ा वहां इस प्रकार का बोझ ले इस

चौकी के कैद में गांव के सिरफिरे और वोट के मनबहके लोगों से निबटते सचमुच मर गया वर्मा।

चाय तिपाई पर रखकर कमली जाने लगी तो उसने कहा, 'एक मिनट रुकना···।' और जब वह पिछले पहर की अलसायी चांदनी की भांति सामने निर्भाव खड़ी हो गयी तो वर्मा को सूझ ही नहीं रहा था कि क्या कहे ? किसलिए रोका ? चाय की घूंट भरते जैसे-तैसे उसके मुंह से निकला—

'आज वो जो लड़कियां आयी थीं, क्या कह रही थीं ?' और वर्मा के आगे सुबह का दृश्यचित्र साकार हो उठा।

मगनचोला का चुनाव प्रचार करने के लिए प्रयाग विश्वविद्यालय की कुछ लड़कियां आयी हैं। वे रामरूप के घर आंगन में चारपाई पर बैठी हैं और उनका 'प्रचार' चल रहा है। यहां प्रचार क्या करना था, स्वागत और धन्यवाद की औपचारिकताएं ग्रामीण स्तर पर चल रही थीं। बिना कुछ कहे गांव में आकर नागर लड़कियां स्वयं एक 'प्रचार' बन गयी थीं। उनके नाक-नक्श, नाज-नखरे, व्यक्तित्व के चुस्त-चौकन्नेपन और अनायास-सायास सुरुचि प्रदर्शन में जो एक अहंस्फीत पार्थक्य है, बराबर भारी पड़ता जा रहा है। प्रभाव प्रचार का नहीं उनके व्यक्तित्व के सुन्दर-सुवेश पार्थक्य का पड़ता है और कुल मिलाकर उनका आकर्षण जैसे गांव-घर के भदेस में अंट नहीं रहा है। मानो वे लड़कियां नहीं, एक अव्यक्त तनाव हैं, एक चुनौती हैं।

दल की सर्वाधिक सुन्दरी मिस कान्ता, मगन की गर्ल फ्रेंड, रामरूप की मां, पत्नी और मुहल्ले की एकत्र अन्य औरतों से 'प्रचार' अर्थात् बातचीत करने में योगदान करने के अतिरिक्त जब-तब एक विशेष दिशा में देखती हुई बराबर मुसकराये चली जा रही है। क्या बात है ? वास्तव में मिस कान्ता की जिधर दृष्टि है उसी ओर तुलसी का चौरा है। कमली उसे तन्मय होकर गोबर से लीप रही है। कुछ ही देर में यानी लड़कियों के विदा होते ही उसकी आजी को पूजा करनी है और उसे अभी धूप, दीप, टीका आदि की व्यवस्था करनी है। इसलिए प्रचार की उस बैठकी से उठकर अभी-अभी वह धीरे से चली आयी है। कमल की ताजी पंखड़ियों जैसे उसके गोबरसने हाथ मन्द-मन्द तुलसी के चौरे पर सरक रहे हैं। भोली कन्या इधर के प्रचार से ऐसी निरपेक्ष भाव-मग्न है कि लगता है, पूजालीन है। तुलसी के परिवेश की सारी सूक्ष्म, अतीन्द्रिय और विश्वासों में वास करने वाली पवित्रता ने मानो आकार ग्रहण कर लिया है। मिट्टी के खपरैलों वाले घर में इस कन्यारत्न का जो अनौपचारिक सौन्दर्य-प्रकाश है क्या मिस कान्ता के लिए ईर्ष्या की वस्तु बना है ?

भारतेन्दु वर्मा भीतर यह कहने के लिए गया था कि गठिया में जो कालीमाई का चौरा निर्मित हुआ है और जिसका उद्घाटन करते हुए मिस कान्ता को

औरतों को सम्बोधित करना है, उस आयोजन में जाने के लिए गाड़ी आ गयी है। किन्तु अभी तो भीतर एक ओर नाश्ता-पानी के बाद बतकही का दौर चल रहा है और दूसरी ओर मिस कान्ता कहीं और उलझी हैं।

वर्मा ने सोचा था, बेशक मिस कान्ता कमली पर हंस सकती हैं और साथ ही उससे ईर्ष्या कर सकती हैं। गांव के शालीन, प्राकृत और शिष्ट सौन्दर्य के प्रति शहर के ग्लैमरयुक्त कृत्रिम सौन्दर्य की ईर्ष्या स्वाभाविक है। एक में मौन-सौन्दर्य है और दूसरे में बहुत मुखर। मौन-भाव लज्जाशीलता से नियन्त्रित है और उधर की मुखरता बुद्धिवादिता से अनुप्रेरित है। हां, कहां है गांव में शिक्षा-दीक्षा की आधुनिक बुद्धिवादी व्यवस्था? बिना शिक्षा-दीक्षा के ही ग्राम-बा।ायें देखा-देखी और नाना प्रकार से खिड़कियों के मार्ग से प्रविष्ट आधुनिकता के प्रभाव को अनजाने ग्रहण कर लेती हैं, यही बहुत है। शुभ लक्षण यह है कि यह प्रभाव सहज ढंग से संक्रान्त होता है और बहुत कुछ बदल जाने के बाद आज भी मौनभाव की लज्जाशीलता पर प्रायः आंच नहीं आती है और वह कवच की भांति चतुर्दिक् से उनकी रक्षा करती चलती है।

अरे, वर्मा ने देखा, उसके प्रश्न का उत्तर देकर कमली खड़ो है। चार्ट लेकर आखिरी आदमी यादव बैठा है, बीतने की प्रतीक्षा में पिछले पहर की एक तारों-भरी ठण्डी रात खड़ी है, और वह कहां खो गया था? कमली ने क्या कहा, उसने सुनकर भी कुछ नहीं सुना।...व्यर्थ ही उसे रोका। वर्मा ने अस्थिर होकर कहा, 'जाओ, जाओ बेटी सो रहो, एलेक्शन ने मार डाला।'

और कमली चली गयी तो उसका अपने भीतर का क्षोभ नये कोण से उसे कोंचने लगा। अभी-अभी क्षण-भर पहले कैसे अशिष्ट, अशोभन और घृणित व्यवहार की कल्पना उसके छलिया मन में उपजी थी? निश्चित रूप से वर्मा के भीतर पाप है। ऐसे पापी और घाती शिकारियों के रहते ैसे इस अवमूल्यन और गिरावट के दौर में गांव का अक्षत शील-सौन्दर्य तथा पवित्र आभामण्डल-युक्त कौमार्य सुरक्षित रहेगा? वर्मा देख, गांव का यह सौन्दर्य अभी छायाग्रस्त नहीं हुआ है और न ही वह मकड़ियों के जालों से भरा है। यहां कोई व्यवस्था है जो उसकी रक्षा करती है। तू उस व्यवस्था को मत तोड़। उस व्यवस्था के अनुसार तू उसका पिता है। नैतिकता की यह सनातन पहरेदारी है जो टूटते-टूटते भी गांव के शील-सौन्दर्य की रक्षा करती है। गांव के सौन्दर्य के साथ यह नैतिकता जिस प्रकार चिपकी है, लगता है नागर सौन्दर्य आज आजीविका के सवालों के साथ उसी प्रकार विविध स्तर और कोणों के साथ नत्थी हो गया है तथा उसके प्रभाव से अपना सहज आकर्षण खोता जा रहा है। मिस कान्ता और उनकी सहेलियां एक ओर और कमली एक ओर, बिना साज-संवार के ही खिली-खिली। विजन वन की सुन्दरता को क्या कोई साज-संवार चाहिए? इसकी

आवश्यकता तो वाटिका या नगरोद्यान को पड़ती है। गरीबी, अभाव और साधन-हीनता के विजन-वन में खिला एक कमली जैसा सुन्दर फूल निजी अन्तस्थ मधु-सुरभि से कितना खींचता है, आह्लादित और आनन्दित करता है।···लेकिन इस खिंचाव में कुछ क्षण पहले जैसा किसी अज्ञात नशे की बेहोशी का खिंचाव घुसा हो तब ? सोचते-सोचते वर्मा सिहर गया।

'मास्टर साहब, अब हमें छुट्टी हो।'

यादव ने उसका ध्यान भंग किया और वह हड़बड़ाकर चौकी पर से उठ खड़ा हुआ। उसने ऊपर आकाश में हाथ उठा अंगड़ाइयों से शेष रात को नापने का प्रयास किया। तिपाई पर रखे लोटे के पानी से मुंह धोकर बीते क्षणों को धोने की चेष्टा की और सुपारी-लौंग के टुकड़ों को मुंह में दबा यादव के चार्ट को बैठते हुए हाथ में ले लिया।

···इस गांव की वोटरलिस्ट में कुल १२४६ वोटर हैं।···६१ व्यक्ति बाहर हैं। डोम, नाई, बारी, लोहार, मुसलमान, कहांर, अतीथ, हरिजन और ब्राह्मणों के मिलकर कुल ३८६ वोट ठोस अपने···अहीरटोली के १२८ वोट में लगभग कुल ७६ अपने···भूमिहारों के कुल २०५ वोट में दीनदयाल से प्रभावित सिर्फ २८ वोट अपने···क्षत्रिय का वोट अपने को कम मिल रहा है।···इस तरह कुल लगभग ५६५ वोट ठोस अपने···और ५४१ वोट जनता के···मात्र ४६ वोट छिपुट तौर से कम्युनिस्ट उम्मीदवार हीराराम के हैं।···अब सोनारटोली जिसे चाहे जिता दे। उनके बचे २१३ वोट जो विरोध में जाकर गड़बड़ कर रहे हैं।

'हेडमास्टर साहब', वर्मा ने चार्ट पर से आंखें उठा लीं और जम्हाई लेते हुए कहा, 'आप सुबह, नहीं···फौरन गठिया जाकर बाबू हनुमानप्रसाद से कह दें, महुवारी की सोनारटोली को अब वे और दीनदयालजी संभालें।···और अहीर-टोली में हमें इतने कम वोट क्यों मिल रहे हैं ?'

'सीता अहीर रामरूप का खास आदमी है। गड़बड़ कर रहा है।'

'वह कैसे ठीक होगा, युक्ति बताओ।'

'उसका लड़का···एक ही तो लड़का है···सो, छह वर्ष से बी० टी० सी० पास कर घर पर बेकार बैठा है। कुछ उसे···।'

'कल उससे मेरी भेंट कराओ।···और मठिया के महंथ के यहां तो विरोध पक्ष का अड्डा है, वे कैसे तुम्हें वोट देंगे।'

'कोई मामला है और बाबू हनुमानप्रसाद के यहां एक 'दाबी' फंसी है···। एक बात और है। जो ६१ लोग बाहर हैं, उनकी लिस्ट और वोटर संख्या की पर्ची यह रही, अपने आदमी ठीक कर इन सबका वोट पहले ही झोंक में गिरवाना होगा।···इनमें से एक शायद कल आ जाय।'

'कौन ?'

'गोपी बनिया की लड़की रुपिया।'

'रुपिया ? कौन रुपिया ?···रुपिया।'

···अचानक कुछ याद आ गया और वर्मा चुनाव के इस उबाऊ और रूखे मसले से फिककर कहीं और पहुंच गया।

···रुपिया···रामरूप की बचपन की प्रेमिका···एक दिन कह रहा था न वह···क्यों आ रही है वह ऐन चुनाव के दिन ?

'उसका बाप किस ओर है ?' वर्मा ने पूछा।

'अपना आदमी है।' यादवजी ने उत्तर दिया।

'तब तो गड़बड़ होने की आशंका है। कल गोपी से मुलाकात करनी पड़ेगी। ···अच्छा, हेडमास्टर साहब, आप सायकिल उठाइये।···मुझे तो गाड़ी की प्रतीक्षा में अभी बैठना है। आखिर गाड़ी अब तक क्यों नहीं आयी ?'

वर्मा चौकी पर लेट क्या गया, ढह पड़ा। कितनी थकावट है, मर गये। शरीर बेकाबू हो गया और मन ? अलस, उनींदे और नाना प्रकार के तनावों में बिखरा-बिखरा एकदम पस्त, अरे, मन का कोना कहां है ?···उसे लगा, अभी-अभी पता चला है कि उसके पास भी मन है और वहां पता नहीं क्यों बारम्बार एक शब्द गूंज रहा है, रुपिया।···रामरूप की प्रेमिका रुपिया, बाबू हनुमानप्रसाद की प्रेमिका कोइली, मगनचोला की प्रेमिका मिस कान्ता, कैसे वोट के बहाने सभी सटीं हुई हैं···और वर्मा की प्रेमिका ?···हां, वर्मा की भी कोई प्रेमिका है, वासना-रहित शुद्ध प्रेम की प्रेमिका।···लेकिन क्या प्रेम अशुद्ध भी होता है ? वर्मा तू प्रेम को खानों में बांट कर अपने साथ अत्याचार मत कर। प्रेम प्रेम है। वह न पाप है, न पुण्य है। वह जीवन के सबसे मूल्यवान क्षणों की लेखा है।···किसी झूठे पिता की नैतिक कल्पना में वे क्षण तुम्हारे हाथों से निकलते जा रहे हैं। अस्वीकार भाव को छोड़ो। प्रेम को स्वीकार करो, सौन्दर्य को स्वीकार करो।··· स्वीकार का अर्थ दुराव नहीं। दिव्य, स्वर्गीय और पवित्र जैसे काल्पनिक शब्दों में उभरे नकार और वर्जनाओं के अनुशासन को कब तक ढोओगे ?···ओह मन का यहछल ?

वर्मा चौकी पर उठकर सावधान जैसा बैठ गया।···नहीं, वह मन के धोखे में नहीं आयेगा। पूरब ओर से क्षितिज पर फूटने वाली आभा की भांति उसका मन साफ है। नगीना बाबू की बंसवारि में जगी कौओं की कर्कश कांव-कांव के साथ भृंगराज की मधुर सुरीली आवाज़ भी जगी है और इसी प्रकार की अपने भीतरवाली बंसवारि की मधुर और पवित्र ध्वनि को पहचानने में वह गलती नहीं करेगा। कमली के निर्विकार शील की भांति धवल लालिमा का वह प्रशान्त प्रसार क्या उसके अन्धेरे को नहीं छांट देगा ? वर्मा को यह सोचकर हंसी आ गयी कि रात-भर जागते हुए घोर तप करने के बाद यह तत्त्वज्ञान उसके भीतर भोर

में जगा है।

इसी समय भड़ाक्-से फाटक खुला। इस समय कौन ? कमली की मां तो अब घर में से निकलती नहीं। चलना-फिरना कठिन है। किसी तरह वोट देने जा सकती है। पर कहीं वैसा न हो जैसा कि किसी-किसी साल अखबारों में छपता है—मतदान केन्द्र पर ही···। नहीं, ऐसा नहीं होगा। अभी कुछ देर है। रामरूप शायद कहीं बाहर ले जाय। तभी वर्मा क्या देखता है कि चाय लिये कमली आ रही है। उसके भीतर धक्-से कर कोई चीज जैसे ऐंठ गयी। अरे, यह वही कमली है ? इस एक रात में ही जैसे पूरी औरत हो गयी, असाधारण सुन्दर। इसका यह रूप वर्मा को कभी दिखायी नहीं पड़ा था। लगता है, कुछ कद भी बढ़ गया, अंगों के उभार में आग पैदा हो गयी। हाथ में प्याला-प्लेट लिये धीमे-धीमे आगे बढ़ रही है। चाय शायद पूरी तरह प्याले में भरी है, कहीं छलक न जाय। विचित्र अलस भाव है। शायद गहरी नींद से जगा दी गयी है। सोकर उठने का समय भी क्या कोई खूबसूरती के निखार की बेला है ? और ऐसी बेला में यह हाथों पर टंगा प्याले-प्लेट का भरा-भरा एक छोटा सरस संसार।···निश्चित रूप से चाय इसने स्वयं बनायी है। उसकी मां को कहां सर है। इसीलिए लगता है, चाय उसके साथ प्याले में से बात कर रही है। उससे उठता भाप उसके कपोलों से खेल रहा है। सुबह का अलसाया और अंगड़ाइयों में बन्द बदन कितना-कितना सम्मोहन समेटे है। अनिन्द्य रूपसी परियां किसी स्वर्ग में रहती हैं, शायद बहुत ऊंचाई में रहती हैं और जिन्हें देख बड़े-बड़े तत्त्वज्ञानी संयम-नियम बिसार बेगवती प्राण-धारा में धंस जाते हैं। वह परियों का परा सौन्दर्य छीन साक्षात् परमतत्त्व-सी कमली क्या भोर की इस मोहक बेला में इस प्रकार अनुगृहीत कर आज के दिन को सुदिन बनाने के लिए बढ़ती चली आ रही है ? ओह, कहां से आयी यह काया-कान्ति जो क्षितिज की अरुणाभ गोराई को लज्जित करने वाली है ? सौम्य मुख-मण्डल पर चिकनी किरणों का ऐसा आकर्षण लेप क्या वर्मा ने कभी देखा था ? अल्हड़ यौवन का यह ताजा-ताजा खिला फूल मन में क्यों अज्ञात कम्पन और थरथराहट पैदा कर रहा है ? तोड़ ले वर्मा चटाक्-से इस फूल को और देख, कैसी दिव्य सुरभि है, कैसा मादक मधु है। उसने लड़खड़ाती वाणी में आवेश को दबाकर कहा, 'आज की यह चाय तो जीवन में अविस्मरणीय बन गयी कमल।'

उसे अपने इस नये सम्बोधन पर आश्चर्य हुआ।

कमली ने चाय को चौकी पर रख दिया और चुपचाप लौट गयी। वर्मा कुछ और कहना चाहता था परन्तु शब्द मुंह से नहीं निकले। उसकी सम्मोहित-सी निगाहें बराबर उनके पीछे लगी रहीं। कहां छिपी होती हैं किसी देह में ऐसी सनसनियां ? फाटक बन्द हो गया तो उसकी निगाह चाय पर गयी और इसी

समय नालेके उस पार चमटोल बनइया की ओर से आती हुई जीप की ध्वनि कानों में आयी। ध्वनि के खिंचाव से उधर आंखें उठीं तो एक क्षण के लिए वर्मा एक सर्वथा नयी अनुभूति के जादू से चमत्कृत हो गया। ओह, प्रभाव क्या इतना खूबसूरत होता है? और रोज-रोज होता है? वर्मा, तेरा जनम अकारथ गया जो गांव में रहकर ऐसी मुक्त···मनमोहक क्षितिजों वाली राग-पराग बरसती बेला को तू आज जैसे पहली बार देख रहा है। धन्य है यह जीप-ध्वनि जिसे 'देखते' में यह अविस्मरणीय छवि दिख गयी।

उसने प्याली उठा लिया। उसके आने तक वह चाय खतम कर देगा। यह चाय नहीं कमली का प्रेम है।···लेकिन कमली का क्यों? बनवाकर तो भेजा होगा उसकी मां ने। शायद जगते रहने की उन्हें आहट मिल गयी होगी। तो प्रेम किसका हुआ?···अभी-अभी छायावादी जैसी कैसी-कैसी अगड़म-बगड़म कल्पनाओं में तू भटक गया था? धिक् वर्मा!

उसके हाथों में प्याला लड़खड़ा गया। वास्तव में वह बहुत अधिक शारीरिक दुर्बलता का अनुभव कर रहा था। हाथों में प्याला-प्लेट भी भारी लग रहा था। नींद ने तोड़ दिया था। लेकिन आज सोना कहां था? आज तो 'कतल की रात' का सुदिन है। यह खूंखार सुदिन पता नहीं कितना कतल करेगा? पहला कतल खुद वर्मा का। उसे अभी-अभी क्या हो गया था?

जीप दरवाज़े पर आ गयी तो वर्मा चौकी पर से उठ खड़ा हुआ। उसे लगा, उसमें तो खड़े होने भर की शक्ति नहीं रही।

४४

करइल-पुत्र भुवनेश्वर जीत गया। कल का आवारा मगनचोला आज सहसा क्षेत्र का विधायक हो गया, जन-प्रतिनिधि हो गया। इस त्रिकोण संघर्ष में हीराराम की जमानत ज़ब्त हो गयी और भुवनेश्वर ने अपने निकटतम प्रतिद्वन्द्वी पं० बालेश्वर उपाध्याय को बारह हज़ार से अधिक वोटों से पराजित कर दिया। गठिया में खुशियाली की जो बाढ़ आ गयी है उसका एक ज़बरदस्त झोंका अभी सुबह-सुबह रामरूप के घर में घुस गया है। वह इसे कैसे झेले? कहां से झटपट एक मुस्कराता हुआ स्वागती चेहरा लेकर अपने पिटे-पराजित और उतरे मुंह पर टांग ले? अपनी जनता पार्टी की पराजय पर इतनी जल्दी परदा देकर कैसे साले साहब की जीत पर खुशी मनाये? राजनीति ने उसके घर को चौपट कर दिया। अपने लोगों को बांटकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। अपने लोग पराये जैसे लगने लगे। मन में न जाने कैसी अनकही-अनजानी गांठ पड़ गयी। वही घर, वही स्वजन और सब कुछ के होते हुए भी कैसे क्या खो गया कि मन उखड़ गया है। भीतर लगी

खरोंच कहीं घाव न बन जाय। रामरूप के भीतर बारम्बार कचोट उठती है, क्यों वह अपनी पत्नी और पुत्री को विरोधी मान दुखी हो जाय ? क्यों उसके भीतर उच्चस्तरीय लोकतान्त्रिक और मत-स्वातन्त्र्य की भावना नहीं उठती है ? उसकी मां, पत्नी और पुत्री को कहीं नहीं लगता है कि रामरूप की पार्टी को वोट न देकर तथा रिश्तेदारी निभाकर कोई अपराध किया है तो क्या उनकी राजनीतिक समझ रामरूप से अधिक है ? क्या रामरूप शुद्ध राजनीतिक चेतना से रहित स्वार्थान्ध और कपट खेल वाले परिवेश के दबाव से आहत होकर छटपटा रहा है तथा उसका क्षोभ पार्टी की हार से अधिक अपनी वैयक्तिक पराजय को लेकर है।

उसका विजयी साला दरवाज़े पर आकर उसे नहीं खोजता-पूछता है, सीधे बहनजी को पुकारता भीतर जाता है। उसका अभिन्न मित्र बिना दायें-बायें देखे और उसकी बिना अपेक्षा किये सीधे उसका अनुगमन करता है। उसका परिवार बिना उसकी परवाह किये अकेले हलवा-पूड़ी और खुशियालियों की भेंट लिये स्वागत-सत्कार में डूब जाता है। क्या रामरूप अपने ही घर में दूध की मक्खी की भांति निकालकर फेंक दिया गया ? परम अवांछित अनावश्क व्यक्ति बन गया ? क्यों ऐसा हुआ ? कैसे ऐसा हो गया ? अथवा यह सब उसके मन का भ्रमात्मक मैल है क्या ? लेकिन मैल क्यों ? वह प्रत्यक्ष देख रहा है कि कोई यह जानने की फिक्र नहीं कर रहा है कि रामरूप कहां है ? क्या उसके घर में विद्रोह जैसा हो गया ? अभी तो वह घर का सर्वेसर्वा है। चाहे तो एक क्षण में ही चीखकर सबको झटकार दे। आंख उठाने वाले की ज़बान खींच ले। कैसे हिम्मत हुई बिना उसकी मरज़ी के दुश्मनों का अभिनन्दन करने की ?

मारे क्रोध-क्षोभ के रामरूप कांप उठा और कोठरी से निकलकर बरामदे में चहलकदमी करने लगा। भीतर जैसे-जैसे कहकहों और बहकते-खनकते शब्दों की तरावट बढ़ती गयी, रामरूप की आन्तरिक आग लहकती गयी।

यदि उसे विरोधी मान नहीं पूछा जा रहा है तो फिर उसके परिवार से इस प्रकार जुड़ने का क्या अर्थ है ? क्या यह शुद्ध घर-फोड़ तमाशा नहीं है ? बाप उस प्रकार उजाड़ने पर तुला है और बेटा इस प्रकार तोड़ने-फोड़ने में लगा है। यह राजनीति है या खुली शत्रुता है ? रामरूप के भीतर पश्चात्ताप की एक ज़बरदस्त मरोड़ उठी। पहले ही दिन उसने क्यों न इस उत्पात की जड़ को काट दिया ? कुरोख होकर यदि वह डांट देता तो कमली और रामकली की मजाल थी कि वोट का नाम लेतीं ? कह देता, खबरदार जो उसे घर में घुसने दिया। चुनाव के बाद रिश्तेदारी जोड़ती रहना। और वर्मा साहब, यह विरोधी-पार्टी का अखाड़ा आप कहीं और ले जाकर जमाइये, जाइये, टलिये मेरे दरवाज़े पर से। उखाड़िये यह झंडा-पतुक्की।...मगर अब क्या हो सकता है ? कितना बुरा असर

पड़ा है यहां विरोधी पार्टी का चुनाव-कार्यालय रहने का और रामरूप के परिवार के फूटने का? कौन विश्वास कर सकता है कि यह सब रामरूप की मर्जी के खिलाफ हुआ है? लोग ज़माने की हवा देख सोच सकते थे, रामरूप कितना काइयां है जो दोहरा नाटक खेल रहा है। कोई पार्टी जीते, मज़ा रहेगा।…ओह, यह सब कितना बुरा हुआ और जो कुछ हुआ सो हुआ, अब आगे यह सब क्या हो रहा है? और कब तक होता जायगा।…अचानक उसकी मुट्ठी बंध गयी और भीतर उत्तेजना की सनसनी उठी कि भीतर जाकर एकदम फट पड़े और सदा-सदा के लिए इस खेल को खत्म कर दे पर फाटक के भीतर कदम नहीं बढ़े और वह कोठरी में जाकर धम्म से चारपाई पर गिर पड़ा।

मगनचोला भीतर से निकला तो एक नज़र कोठरी में दौड़ा ली। 'अरे मास्टर साहब तो सोये हुए हैं', कहता हुआ भीतर चला गया।

'तबीयत ठीक है न?' पैर छूकर कहा मगन ने।

'हां ठीक है।…बधाई।' उसी प्रकार सोये-सोये अनमने भाव से रामरूप ने कहा।

'अब आशीर्वाद दीजिए कि जनता की सेवा में तन-मन-धन से जुट जाऊं और क्षेत्र के लिए कुछ कर सकूं।' कहता हुआ वर्मा के साथ मगनचोला कोठरी से निकल आया।

इसी बीच कुछ लोग आ गये और खड़े-खड़ा बधाई, शुभ कामना, आमन्त्रण, प्रशंसा और वोट की लड़ाई की बहक का एक हलका दौर चला। मौका पाकर वर्मा कोठरी में गया और बोला—

'दुराव छोड़ो दोस्त! अब वह तुम्हारा प्रतिनिधि है। रिश्तेदार तो है ही। बहुत काम का आदमी सिद्ध हो सकता है। तुमको उसका…।'

'स्वागत कर आरती उतारनी चाहिए' रामरूप ने बात काटकर कहा, 'यही न कहना चाहते हो?'

'इसमें भी क्या बुराई है?'

'मुझे यह सब भड़ैती एकदम नापसन्द है। चले जाओ यहां से…मेरी तबीयत ठीक नहीं है।'

वर्मा सन्न।

चले जाओ यहां से, क्या मतलब? अभी या सदा के लिए? …रामरूप सोच सकता है कि वर्मा अब यहां से टले। स्थिति है भी ऐसी। व्यक्तिगत विरोध की मंशा न होते हुए भी विरोध तो हो ही गया। स्थितियां तूफानी गति से बदल गयीं। कटुता बढ़ जाय, आश्चर्य नहीं। वर्मा मजबूर था।…अब स्थिति कैसे संभलेगी? संभलनी चाहिए। वर्मा कहां जायगा?…एक दिन स्वयं भी उसके मन में आया था, यहां से डेरा कूच करना पड़ेगा। किन्तु ऐसा क्या था कि इस सोच की

हर मानसिक लहर कमली की सूरत से टकराकर बिखर जाती और उन्हें कोई किनारा नहीं मिलता ।···मित्र के प्रति अपराध हुआ तो अपमानित होकर भी पड़ा रह वर्मा। प्रायश्चित्त कर, उसे सह, उसे झेल, तू कहां अब किस गांव के नरक में धंसेगा यह स्वर्ग छोड़कर ? फिर विधायक के सम्बधियों का सूत्र कितना तगड़ा है मंजिल तक पहुंचने के लिए ?

वर्मा चला गया तो रामरूप को झटका लगा, उसे इतना क्रूर क्यों हो जाना चाहिए ? दोनों को नाहक क्यों अपमानित करना चाहिए ? वर्मा उसका कुछ बिना बिगाड़े अपना कुछ बना रहा है तो इससे वह क्यों ऐंठ रहा है ? क्यों नहीं वह इसे एक खेल की भांति हार-जीत निरपेक्ष ले रहा है ? यह उसका खास रिश्तेदार भुवनेश्वर यहां अपने सम्बन्धों में आता है तो क्या बुरा है ? रामरूप का यदि कोई शत्रु है तो उसका बाप है न कि यह ? इसने तो उसकी भलाई ही की है। कॉलेज का मसला उस प्रकार हल कर दिया। सड़क बनवाने का वचन दे रहा है। फिर क्या है कि रामरूप इस प्रकार विक्षुब्ध है ? चुनाव में जीत हुई तो वह उसका प्रतिनिधि है, वह माने चाहे न माने। क्या उसके आने पर रामरूप को खड़े होकर शुभ कामना के कुछ और शब्द खुशियाली का इज़हार करते नहीं खरचने चाहिए थे। ऐसा असभ्य और कृपण रामरूप कैसे हो गया ? क्यों वह चाहते हुए भी वैसा सहज नहीं हो पा रहा है जैसा होना चाहिए। क्यों वह स्वयं अपने को और अपने परिवार को अकारण दण्डित कर रहा है ? नहीं, वह भीतर चलकर और सब कुछ भुला प्रेम से बोलेगा, बतियायेगा।

कोठरी से निकल रामरूप ने हाथ-मुंह धोया। खोंख-खंखारकर प्रफुल्ल मुद्रा बनाई। खूंटी पर से पंखी उतारकर हवा करते मुसकराते घर में घुसा। चौखट लांघते ही दृष्टि पड़ी सामने दीवार पर चिपके एक विराट विरोधी पोस्टर पर 'हम न्याय के लिए···।' और जैसे टकराकर पीछे फिंक गया। धत्तेरे न्याय की। वह दांत पीसता बड़बड़ाता कोठरी में लौट आया और फिर चारपाई पर धम्म से गिर गया। उसे लगा, सवेरे-सवेरे ही उखड़कर बहती पछिमा हवा खपरैलों को दरेरने लगी। आज दिन-भर गलियों में गरम धूल झोंक-झोंक यह नगरनाच करेगी और जले जीवों को और जलाएगी। सूर्य की वृषभ संक्रान्ति लग गयी है न। कहते हैं वह 'मृगडाह' नक्षत्र है, अति उत्तप्त। मारे गरमी के सबका विष झड़ जाता है। धरती जलकर खाद बन जाती है। कोठरी से बाहर मत निकलना रामरूप। बुद्ध पूर्णिमा का यह आखिरी अवकाश जल जाएगा। सख्त मना है जेठ की दुपहरिया। विषैली किरणें चमचमाते फन काढ़ लहराती रहती हैं।···मगर कोठरी के भीतर एकान्त की सुरक्षा में वे जो कड़वे व्यतीत की ताजी-ताजी ज़हरीली लहरें छू-छूकर अचेत कर रही हैं उनके लिए वह क्या करे ?

···उसकी पट्टी मालिकान से लगी सोनारटोली के दो सौ से ऊपर वोट को

दीनदयाल और गजिन्दर सहित हनुमानप्रसाद के गुण्डों ने घरों से बाहर निकलने ही नहीं दिया और पोलिंग बूथ पर कब्जा कर सारा मत जो विरोध में जाता एक-तरफा गिरवा लिया।···बदनाम बदमाश सालिका और देवमुनिया के साथ गजिन्दर अपने पिता को और कुछ अन्य गांव वालों को लेकर सोनारटोली में पहुंचा था, हाथ जोड़े, दांत चिआरे। सोनार भाइयो, हमारी इज्जत आप लोगों के हाथ में है। बोलिए क्या मर्जी होती है? स्वाभाविक है कि लोग कहेंगे, आप जहां कहेंगे वोट दिया जाएगा। यही गांव का नियम है। सबको 'हां' किया जाता है और वोट अपने मन का दिया जाता है। सो, ये लोग चटपट उनकी स्वीकृति को तोड़-मरोड़कर मजा लेते हैं। भाइयो, यदि आप हमें वोट दे रहे हैं तो आपको तलीफ करने की ज़रूरत नहीं। हमने मान लिया कि वह मिल गया। आप लोग अपने-अपने घरों में रहें। कोई तमाशा देखने भी न जाय। आप लोगों से यही प्रार्थना है, यही हथजोरी है···लेकिन इस हथजोरी का रहस्य सोनारटोली के लोगों से तब छिपा नहीं रहता है। पट्टी मालिकान वाली खोर, जिससे वे बाहर निललेंगे, के दोनों छोर पर, दक्षिण ओर मन्दिर पर और उत्तर ओर गोपी बनिया के घर के पास नीमतले लट्ठधारी बैठे हैं। मामला हथजोरी की आड़ में सिर-तोड़ाई का है। निकले तो सोनारटोली का कोई वोटर घर से बाहर?···न्याय, निष्पक्षता, हक और समानाधिकार···क्या मज़ाक है? मतदान-केन्द्र पर लोकतन्त्र की लाश निकल गयी। किसका वोट कौन दे रहा है? कितनी बार दे रहा है?

बेचारा राजनीति क्या जाने? रामरूप, देखो, तुम्हारे गठिया निवासी नौकर भगेलुआ ने वहां जाकर वर्मा साहब की आज्ञा से कई-कई बार वोट गिराया है। यहां तक कि अति वृद्ध और इसी वर्ष सुरधाम चले गये हनुमानप्रसाद के आसामी बनाम मनीजर का ओट भी इस जवान ने गिरा दिया। ओह, उस मनीजर, असली नाम फूलनराम को क्या रामरूप भूल सकता है? पिछले फागुन में होली के समय सुबह-सुबह चटकार लय में कोई होली का पद गुनगुनाता वह बूढ़ा···कितना खुश था···आज पेंशनवाला रुपया डाकबाबू देने के लिए बोला है···उधर रुपया मिलता है तो कोई उसके अन्धेपन का लाभ उठा लेता है। और उसी लूट के धक्के से बहुत जल्दी ही मनीजर बेचारा बीमार होकर मर जाता है। तो दूसरा कौन लूट सकता है श्रीमान् करइलजी के मैनेजर की पेंशन?···हाय रे हमारे गंगा नहा-कर मिले विधायक!···अच्छा हुआ, पिता से तो कम ही लूट पाया, सिर्फ एक माह की पेंशन···पिछले दसियों वर्ष की पेंशन तो तगड़ी तिजोरी में गयी···स्वर्ग में मनीजर के लिए बन गया होगा मन्दिर। कितना पुण्य-लाभ हुआ मालिक साहब को··बेटे के माथ पर राजतिलक लग गया।··· रानी कांता के भाग जगे।··· और इसी महीने यह जो वह असली विवाह होने जा रहा है, सो उस 'रानी' का क्या होगा?···मत सोच रामरूप, बड़ों की बात। देश में क्रान्ति हो रही है।

···पहला क्रांतिकारी मगनचोला, बोल दिया—तिलक नहीं चढ़ेगा। सिर्फ बारात चलेगी। तिलकोत्सव ढोंग और फिजूलखर्ची है, सामाजिक कुरीति है।···और चुपके-चुपके दहेजमें नयी जीप और चालीस हज़ार रुपया ले लेना क्या है? 'इज्ज़त के मुताबिक' मांग वाले सामानों की लिस्ट क्या है? क्या लूट नहीं है?

···ओह, अपने देश में एक लूटनेवाला समुदाय कितना सक्रिय है, कैसी-कैसी लूट होती है? वोटों की लूट का मामला सामने ही गुज़रा। फिर रामरूप का तो सरबस लुट गया। क्या-क्या लुट जाने के बाद अब लगता है भीतर कैसे-कैसे दरार पड़ गए। कुछ लूट तो एकदम खल गयी। अपनी पार्टी के प्रमुख स्तम्भ गुरुवर महंथ ऐन मौके पर कैसे बदल गए? गुरु ही क्यों, मित्र ऐसे लुट गया, परिवार वैसे लुट गया। जातिवाद के चक्कर में पुरोहित लुट गया, देहाती सरदारी के फेर में अपने भाई-दयाद लुट गए और दबाव में चंपकर रामरूप की प्रेमिका लुट गयी।

पुरोहित भागवत पाण्डेय के इर्दगिर्द काफी वोट था और जातिवादी मायाजाल फैलाकर उन्हें फंसा लिया गया परन्तु रुपिया के एक वोट पर वर्मा ने इतनी शक्ति कैसे लगा दी?···हां, उसे एक दिन हंसी-हंसी में रामरूप ने बता दिया था, वह एकमात्र उसकी बाल-प्रेमिका रही।···तो, क्या उसे तोड़कर वर्मा साहब गांव में रामरूप को एकदम मरोड़कर बैठा देना चाहते थे?···बेशक, जालिम ने तोड़ दिया। बीस पड़ गया। वोट देने का वादा कर भी रुपिया अपने बाप गोपी के साथ बहक गयी। क्या पता है इन सब राजनीतिक प्रपंचों के बारे में उसे?···अभागी पति-परित्यक्ता लेंहड़े भर गेदा-गेदी लेकर गोपी के सिर घहरायी है। देश के भविष्य के बहाने अपना भविष्य बनाने वालों को तो सिर्फ वोट लेना है, ऐसों के भविष्य से उनका क्या सरोकार है? एक बदनसीब रुपिया नहीं, देश में करोड़ों भविष्यहीन, जीविकाहीन और भाग्य के भरोसे बिलबिलाते जीवों की जमात है जिसकी इस समूचे लोकतांत्रिक ढांचे में कोई सुनवाई नहीं। समूचे राजनीतिक सिद्धान्त जैसे कूड़े के ढेर हैं जिनके ऊपर निर्वाचन की बरसात में कठफुले जैसी कुर्सियां उगती हैं और लूट पड़ जाती है। देखा, एक लूट का नज़ारा न? फिर, रामरूप, तूने और क्या देखा, और क्या सुना?

बात चुपके-चुपके सांय-फुस वाली नहीं, राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा की कि चुनाव के मुख्य मुद्दे ऐसे हो गये कि किस जाति का प्रधानमंत्री? राजनीतिक वाद नहीं असली तथ्य जातिवाद। राजनीतिक समझौते या गठबन्धन नहीं, जातिवादी समझौते और गठबन्धन। अपढ़-गंवारों के क्षेत्र में मशगूल हैं लोग कि ठाकुर बिरादरी किसके साथ? ब्राह्मण किसके साथ? तुम अमुक पार्टी में अपना वर्चस्व और राष्ट्रीय विकल्प खोजो, तुम अमुक दल में अपनी शक्तिशाली राजनीतिक धारा को खोजो···खोजो अपने अस्तित्व की समूची छवियों को विशेष-विशेष जातियों के ही इर्दगिर्द। क्षेत्रीय बिरादरीवाद को राष्ट्रीय बिरादरीवाद में परिणत

हो जाने दो। जाति विशेष के लीडर की कल्पना ही राष्ट्रीय लीडर के रूप में करो। इसे 'ज़िन्दा रहने की लड़ाई' की संज्ञा दो। गरीबों के गांमांचलों में इस जातिवादी रंग को निखरने दो ताकि आर्थिक स्तर वाली जीवन-संघर्ष की कठिन मार भूली रहे। सारा हिसाब-किताब जातिवादी कि जैसे इस जिले में हर पांचवां वोटर हरिजन है, कि जैसे इस जिले में मुसलमान, अहीर, राजपूत और भूमिहार ब्राह्मणों के वोट लगभग बराबर हैं, कि जैसे इस जिले के मुसलमान इन्दिरा गांधी के साथ हैं।···धत्तेरे की, दो-ढाई दशक के भारतीय लोकतन्त्र की यही उपलब्धि है, जातिवादी गन्दगी ?

'बाबू जी, एक नयी बात जानते हैं ?' भगेलुआ ने ध्यान भंग किया था और फिर बिना पूछे उसने बता दी थी कि क्या नयी बात हुई है ?···झगड़ुआ की भैंस रात में खूंटे पर से गुम हो गयी है। चारों ओर खोजी गयी, कहीं पता नहीं।

···अब सोचो रामरूप, शायद इस गरीब का मात्र इतना ही अपराध था कि उसने गजिन्दर की पार्टी को वोट नहीं दिया। झगड़ुवा के लिए कितना महंगा पड़ा यह चुनाव ?···वोट आया, अराजकता लाया। कहां ले जायेगी देश को यह व्यापक अराजकता ? चुनाव की प्रतिक्रिया में जो गांव में उपद्रव-अनाचार फैलेंगे उसे कौन देखने वाला है ? कानून-व्यवस्था की स्थिति दिनों-दिन गम्भीर होती जा रही है। ट्रेन की डकैतियां और हत्याएं बढ़ रही हैं। गरीबी-बेहाली को देखते इधर के लोग चुनाव-बहिष्कार भी नहीं कर पाये। वे इतने प्रबुद्ध कहां हैं ? खाद की समस्या, चीनी-डीज़ल की समस्या, दामों के उछाल की समस्या··· समस्या···समस्या। फिर सरकार को अपनी कुर्सी की चिन्ता है और कर्मचारियों को अपने वेतन की। चुनाव के दौरान अपनी-अपनी लह बैठाने के लिए तमाम-तमाम लोगों ने हड़ताल कर दी थी। सिविल कोर्ट के कर्मचारी, बिजली के इंजीनियर, विभिन्न विभागों के कार्मिक···वेतन बढ़े, बोनस मिले। झगड़ुआ क्या करता ? झगड़ुआ जैसी नियति के करोड़ों लोग क्या करते ? किसान क्या करते ? सूखा, अकाल, विविधि संकट, बिना-वोये खेत, लड़कों की बेकारी-बेरोज-गारी, भविष्यहीन कुंद और ऊब भरी ज़िन्दगी···क्या मिला गांव को चुनाव से ? क्या सचमुच उसे दुख-सुख की खबर लेने वाला एक प्रतिनिधि मिला ? नहीं, वह तो आज भगा लखनऊ। कल से वह गठिया का नहीं, लखनऊ का हो गया। गठिया और महुवारी के लोग ही यहां के होंगे।

'बहुत सुचित से सूतल बा बचवा' मां आ गयी कोठरी में, 'आजु छुट्टी हवे का ?'

'हां छुट्टी है और छुट्टी ही छुट्टी है। दो दिन में गर्मी भर के लिए स्कूल बन्द हो जायेगा।' रामरूप ने कहा और उठकर खड़ा हो गया।

'तब ठीक बा। बहुत मोका से छुट्टी मिललि बा। वोट-सोट बितिए गइल। अब ओहू काम के सुधि कर। ···गांव के चमाइनि त अब सौरि कमाई ना···।'

रामरूप सुनता रहा···सुनता रहा···और ऐसा लग रहा था जैसे वह कुछ सुन नहीं रहा है। सचमुच वह कुछ सुन नहीं रहा था।

४५

बाबू हनुमानप्रसाद को गोली मार दी गयी।···रामरूप बारम्बार चौंक उठता है। नींद आ नहीं रही है और कुत्ते भूंक रहे हैं, कितना भूंक रहे हैं ?

कल सुबह-सुबह वाइस प्रिंसिपल राममंगल मिश्र हड़बड़ाये हुए आये और बोले, 'बाबू हनुमानप्रसाद को गोली मार दी गयी।'···लगा, गोली रामरूप को लग गयी। आंय···आंय···आंय···रामरूप यह क्या सुन रहा है ? मिश्रजी के पड़ोसी दीनदयाल को पहले-पहल यह खबर लगी है। वह उधर दौड़ा-दौड़ा गया है, ये इधर खबर करने···पूरी बात मालूम नहीं। दातून फेंक रामरूप भगा घर के भीतर—अरी सुनती हो ?···फिर हड़कम्प, हड़बड़ी, हाय-हाय···ओह, फिर दो-दिन की वह दहशत-भरी दुर्गति···अब जाकर तो सांस आयी है। कुछ आराम मिला है। मगर कहां है आराम ? राममंगल मिश्र द्वारा कल सुबह-सुबह कहा वह परम अमंगल वाक्य किस तरह फिर-फिर भीतर धमक जाता है। फिर ये कुत्ते ? आज रामरूप को पहली बार मालूम हुआ कि गांव में इतने कुत्ते हैं।

अब सो जा रामरूप, सब ठीक है। मगर ये कुत्ते ? नाक में दम आ गया। दो घड़ी रात नहीं बीती कि ये पहरा देने लगे। बेशक, चोरों के सामने ये गऊ हो जाते हैं। पेट-युग के कुत्ते हैं, पहरे से इन्हें क्या सरोकार ? घात लगा तो घर में सीधे चुहान तक कूच मार्च करते चढ़ गये और भोजन की हंड़िया-बटुलिया उड़ा ले गए। घर वाले डंडे लेकर पीछे दौड़े। भेंट हो गयी तो मार खा कें-कें-कें करने लगे। बच गये तो किसी घूर पर या गली में माल की महक पा झपटने वाले अन्य बन्धुओं के साथ घंटों कड़बच···कड़बच···म्हूं···म्हूं···तड़प-झड़प। जैसे पागल हो गए। हां, पागल भी होते हैं। इनके काटे की जान नहीं बचती।

मगर भाग्यशाली हैं बाबू हनुमानप्रसाद। जान बच गयी। कुत्तों के बीच उपटे कुछ पगले कुत्तों के हत्थे पर कैसे चढ़ गये बाबू साहब ?···जिला अस्पताल में वह भीड़···वह भीड़···विधायकजी के पिताजी हैं।···अरे रामरूप तू क्या समझता है। वह गठिया का तुम्हारा ससुर करइलवा है ?···कलक्टर, पुलिस कप्तान और सिविल सर्जन आदि से लेकर नगर के नामी-गिरामी लोग, नेता, पत्रकार, गांवों से गये परिचित-अपरिचित रिश्तेदार, जवान खद्दरपोश, गंगा-जमुनी दुपट्टा कंधे पर डाले, कुछ गांधी टोपी वाले, बड़ी तेज़ी में, भीड़ में और राजशक्ति के पूरे वेग में,···अरे, तिनके की भांति कहां उमड़ गया मास्टर रामरूप तुम्हारा अस्तित्व ? हास्पीटल के फाटक पर ही मिले चाचा दीनदयाल। देखते ही

मुंह फेरकर एक ओर निकल गये जैसे किसी बहुत ज़रूरी काम से जा रहे हैं।···घंटों बाद कुछ खाली मिलने पर चरन छूकर तुम कुछ कहने जा रहे थे पर कहां अटक गए तुम्हारे शब्द ? बाबू हनुमानप्रसाद नर्स से टेबलेट और इंजेक्शन के बारे में बातें करते रहे। तुम्हारी हाजिरी की उन्होंने नोटिस भी नहीं ली। तुम वैसे ही खड़े रहे। नर्स के जाने के बाद वे अपने बनारस के रिश्तेदार से बातें करने लगे।···कि कैसे परसों बक्सर से शाम को अकेले लौट रहे थे तो मेहपुर से आगे बढ़ने पर जहां महुवारी का सीवान शुरू होता है, मुंजवान के कोने पर दूर से दो आदमी बैठे दिखायी पड़े···कि कैसे उन्हें देखते ही वे पश्चिम ओर मुड़कर छिप गए जैसे खेत घूमने कोई आया है और जैसे ही हनुमानप्रसाद मुंजवान के आड़ में पहुंचे तो बगल से धांय-धांय···कि कैसे एक गोली के मिस होने और दूसरी के पसली खरोंचते निकल जाने के बाद उनकी ललकार पर वे मुंह ढके भूत भगे।

म्यूं···म्यूं···म्यूं···।

मारे खीझ के एक ढेला उठाकर मारा रामरूप ने। पर कहां लगा वह ढेला ? उधर जाकर अपनी बिरादरी में मिल वह और शेर हो गया। अरे, क्या ये एक-दो हैं ? क्या ये सब पालतू हैं ? झुंड के झुंड कुत्ते, आवारे, गुण्डे और बदमाश। लाखैरे पिल्ले। डकडक घूमने वाली कुत्तियां। गांव की सौभाग्यवती गलियों को सुशोभित करने वाली। गंदगी के नहले पर मशहूर इनका दहला। पर इनका दोष ही क्या ? आदमी के बच्चे क्या करते हैं ? पग-पग पर घिन। कदम-कदम पर स्वच्छन्दता के मुंह पर कालिख। तेज़ हवा चली नहीं कि कूचे का कचरा गुबार बन घरों पर छा गया। क्या कभी गलियों की सफाई भी होती है ? धन्यवाद उस परमात्मा को जिसने बरसात बनायी। आकर साल-भर की गन्दगी की धुलाई करती है। पर क्या वह नयी गन्दगी नहीं पैदा कर देती है ? दीनदयाल जैसे परोपकारियों की कमी नहीं जो पानी का निकास रोककर हर साल एक पूरे मुहल्ले को नरक बना देते हैं।···मैल गलियों में नहीं, मन में है।

कुत्तों का भूंकना जारी है। नींद कोसों दूर है। रामरूप के भीतर मरोड़-सी उठती है, दीनदयाल ने उस तरह एकदम मुंह क्यों फेर लिया ? घंटे-भर तक उस तरह खड़ा रहने पर भी बाबूजी ने नज़र तक क्यों नहीं मिलाई ? एकाध बार साहस कर कुछ पूछने पर अनसुनी क्यों कर दी ? वहां के पूरे वातावरण में जैसे उसके प्रति उपेक्षा और घृणा का रहस्य बोझिल स्पन्दन क्यों भरा हुआ था ? चिल-चिलाती दोपहरी में रामरूप बवण्डर की तरह हास्पीटल के बरामदों में पछाड़ खाता रहा। तीसरे पहर लखनऊ से फोन पर खबर पा भुवनेश्वर लौटा तो उसके साथ एक पूरा हल्ला, दुम हिलाता दीनदयाल, कितना बेपहचान हो खो गया रामरूप।···और वह भीमवा रापरूप को जब देखता, मुस्कराने क्यों लगता।

सोये-सोये रामरूप स्मरण करता है, भीम को दो-तीन दिन पहले कहां देखा

था ?···हां, याद आया। कोटवा बाजार···सौदा करने के बाद रामरूप पानी पीने एक दुकान में घुसा तो देखता क्या है कि सुखुवा-सिटहला दोनों बैठे सांय-फुस कर रहे हैं। वह उलटे पांव लौटना चाहकर भी लौट नहीं सका। देखते ही सुखुआ हल्ला करता है, 'मास्टरजी, जय हिन्द। हमारी पार्टी का तो आप ने भट्ठा बैठा दिया। अब चाय भी पिलाइएगा ?'

'लेकिन मेरी जीत कहां हुई ?' रामरूप अत्यन्त उदासीन और निरपेक्ष स्वर में कहता है।

उसी समय भीमवा खली का बोरा पटक पसीना पोंछते पानी पीने दुकान में घुसता है और एक-एक नज़र फेंक पहले तो ठिठककर खड़ा होता है और फिर धीरे-धीरे बोरा उठाकर जाने लगता है।

'अरे भीम भाई आओ, क्यों लौट गये ?' सिटहला कहता है पर एक 'ज़रूरी चीज़ छूट गयी है' का बहाना कर भीमवा सरक जाता है। रामरूप के भीतर एक खटका होता है। उसने फिर बात नहीं बढ़ायी थी। वास्तव में तब वह कुछ सोच-कर, विशेषकर यह सोचकर कि वह मालिक से जाकर रामरूप का सुखुआ-सिटहला के साथ बैठना जरूर बयान करेगा, उदास हो गया था। और चटपट चाय खतम कर दुकान छोड़ दी थी। दिन-भर कुछ बातें मन को मथती रहीं और बाद में सब भूल गया।···कुछ वही रंग-कुरंग है क्या ? सन्देह पक्का लगता है।

जेठ-असाढ़ी की ऊमस भरी रात में नींद का उचट जाना कितना जुल्म ढाता है ? तब उस उचटी नींद को और उचाटने वाले नये-नये कारण पैदा होते जाते हैं। बाहर-भीतर के कुत्ते तो थे ही अब दखिन ओर से पहले धीमे-धीमे शीत-युद्ध फिर जोर-जोर से उठती उग्र कलह-ध्वनि तंग करने लगी। बलेसर की पत्नी धुनना माई और उसकी पुत्र-वधू की भिड़न्त है। हर दूसरे-तीसरे दिन टक्कर हो जाती है। एक दिन झोंटा-झोंटी भी हो चुकी है। सासजी बहू के बाप-भाई को खा रही हैं तो वह ऐसी चढ़बांक कि सास की मांग में कोयला तक दर देती है।···इन करालो कर्कशाओं के इस दुर्भाग्यपूर्ण काव्य-प्रवाह में गोते लगा क्या कोई चैन से सो सकता है ?···सेर को सवा सेर मिल गया है···अब सुन ले रामरूप कान खोल अपने इज्ज़तदार पट्टी-मालिकान की एक हवेली से उठता सरस संवाद—

'हरे बाप काटी, तेरे कुल खान्दान में माता दाई के रंथ में झोंके जाने से बचा कोई ऐसा नहीं था जो तुझे तमाखू बढ़ाना सिखाता ?'

'ऐसा घीव पीने वाला खानदान सरकार का है कि उस पर बजर परो।'

'तू गाली देती है रे नटिन। तेरे सात पुश्त को बढ़नी बहरो।'

'खबरदार···।'

बेहतर है, अब आगे मत सुन रामरूप। सुई-सी चुभने वाली उक्तियां, नफ़रत के कड़वे नश्तर, दमघोंट गंवारपन और क्रूर कुसंस्कार की आग···किस ग्रामीण

परिवार के होंठों पर रह गयी मुस्कराहट ? भीतर···भीतर···घर के भीतर से ज़हरीला धुआं उठ रहा है, परदे की ओट से, किवाड़ के कैदखाने से, वे असंस्कृत मन की उमंगें···गहने, कपड़े, फैशन, आराम, हुकूमत और ऊपर से हेकड़ी। सड़ी-रूढ़ियों की पुतलियां कुसंस्कारों की प्रेत-बाधा में बलबलाने लगती हैं तो जैसे उनके आगे डाइन-चुड़ैल झूठ।

रामरूप चारपाई से उतरकर टहलने लगा। 'एहि जग जामिनि जागत जोगी' वाली चौपाई याद आयी। तो, वह आज योगी हो गया।···तो, सुनो योगीजी, यह आ रही है डुग्गी की तेज़ ताल पर समवेत गायन की चटक ध्वनि और हो···हो···हा···हा···की आवाज़। समझा, आज लगन है। चौधरी के यहां बरात आयी है। यह नाच का रंग है। भांड़-मंडली की नाच है।···ससुरजी की बरात में पता नहीं भांड़ चलेगा या नहीं। गंगा-दशहरा के दिन लगन पड़ी है। दो दिन बरात रहेगी। मालिक मौत के मुंह से बचा है। दिल खोल खर्च करेगा। मगर बेटा ? अर्थात् नये विधायकजी ? क्या इस फिज़ूलखर्ची कही जाने वाली चीज़ों को स्वीकारेंगे ? सामंत परम्परा की बरातवादी टीमटाम को दाद देंगे ? शान-शौकत वाला पागल-पन चलेगा ?···चल भी सकता है। जन्मजात पागल, अड़ियल और वहेतू है। अब पूरा राजनीतिक भांड़ बन गया है तो सांस्कृतिक भांड़ों को क्यों नहीं न्योतेगा ? क्या खता है उन बेचारों की ? राजनेता को देश की बेकारी-बेरोज़गारी की समस्या को भी तो देखना है···देख लेना तू भी उस दिन जमकर नाच रामरूप मास्टर। मगर, उस दिन का वह उस प्रकार सबका मुंह फुलाये दीखना ? उस प्रकार तुम्हारा अवांछित हो जाना ? कहीं बरात में भी वैसी ही पुनरावृत्ति न हो। अभी तो बैल खरीदना भी बाकी है। दशहरे को ही बैलों का आखिरी मेला लगता है। रामरूप बरात गया तो फिर बैल कौन खरीदेगा ? असाढ़ चढ़ आया। पानी वक्त से पड़ गया तो क्या होगा ? फिर उसी के इर्द-गिर्द तो 'उसका' भी अनुमान था। उसी दिन मिशन की मिडवाइफ आदि को लिवा आना पड़ा तो ?···यह देखो तमाशा। बबुनी बजार के मिशन वाले गरीब चमारों को फुसलाकर ईसाई बना रहे हैं। उन्हें भड़का रहे हैं कि बाबुओं की गुलामी छोड़ो। इधर चमारों ने नार काटना और सौर कमाना छोड़ दिया और उधर मिशन वालों का वही रोज़गार चल निकला।···'डागडरनी' घर-घर जाकर बच्चा जनवाती है। इसी डागडरनी को रामरूप को भी लाना है।

कड़-कड़-कड़-कड़-धड़ाम्।

डुग्गी की आवाज़ आ रही है। आवाज़ के पीछे वाले चित्र भी आंखों के सामने आ रहे हैं। ये चित्र मांगलिक विपत्ति और सांस्कृतिक हंगामे के हैं। बरात की विदाई के बाद सूने गांव और बिथके परिवार के हैं, तथा इज्ज़त के पीछे पागल लोगों के हैं। पागल कहीं के ! गरीब की कहीं कोई इज्ज़त होती है ? वह सिर्फ

बेइज्ज़त हो सकता है।···खास दामाद होकर भी रामरूप का ससुरजी के यहां इसलिए अनादर चलता है कि उसके पास उतने बैल नहीं हैं, वैसे खेतों के चक नहीं हैं। और अव तो एक महान् राजनीतिक बड़प्पन भी जुड़ गया। अव क्यों नज़रें उठेंगी ?···कितना खराब आंगछ है रामरूप तुम्हारा कि बराबर गलत समझे जाते चले आये। शायद तुमसे अधिक विश्वसनीय ससुरजी का तुच्छ टहलुआ भीमवा है, नम्बरी बदमाश। शायद बहुत कुछ नमक-मिर्च लगा जड़ दिया है।···बिना कहे बात जो हवा में उड़ रही है···कि अपने कंडीडेट हीराराम की ज़मानत जब्त हो जाने की खीस उतारा उन लोगों ने। किन लोगों ने ? अरे, यह भी कहने की ज़रूरत है ? गांव में घुसे कथित नक्सलवाद ने कैसा तेवर बदला है ? भुसहुल की आग महज़ सलामी थी। पहला प्रयोग बी० डी० ओ० की जीप पर। आग, धमाका, हिंसा, विद्रोह···दूर-दूर से सुना जाता आतंक अब अपने सिर पर···और शायद सचमुच ही अपने सिर पर। रामरूप, तू कथित नक्सलवादियों के साथ बैठकर चाय पीता है ? उनकी मदद करता है ? उन्हें बढ़ावा देता है और षड्यन्त्र करता है ?

कड़-कड़-कड़-कड़-धड़ाम्।

डुग्गी की आवाज़ अब भी आ रही है। गीत की ध्वनि भी कानों में आ रही है परन्तु शब्द पकड़ में नहीं आ रहे हैं। गीत-ध्वनि के बीच यह पों···पों···पों··· क्या ? कोई गाड़ी है या भांड़ की नाच में चलते नाटक का कोई भाग है ? नहीं, आवाज़ बताती है कि असली जीप है। भरभराहट में रोक भरी गम्भीरता है। शायद नाले के ऊपर चढ़ रही है।

···सरकारी नाटक का अद्भुत सीन। उस दिन नये विधायक सहित बाबू हनुमानप्रसाद को बधाई देकर बी० डी० ओ० शाम को लौटा और सरेशाम अन्धकार का झीना परदा गिरा तो लोगों ने देखा, दीनदयाल के दरवाज़े के सामने बरगद की छाया रूपी मंच पर एक जीप खड़ी है। जीप में चार व्यक्ति हैं। एक ड्राइवर, एक ग्राम सेवक···पर शेष दो को झट से बता देना सरल नहीं है। ड्राइवर की बगल में बैठा व्यक्ति पूरे साढ़े तीन हाथ का उगता जवान है। मक्खन-सा चमकता अति कोमल गोल चेहरा है। मूंछें सफाचट हैं। आंखों पर धूपी चश्मा अब भी है। वह बादामी रंग की पतलून और बुशर्ट में तो लगता राजकुमार-सा है। परन्तु व्यक्तित्व में जो छुई-मुई-सी लजाधुर झलक है उसे देख लगता है कि किसी राजकुमारी ने वेश परिवर्तन कर लिया है। कमल जैसे हाथ हैं तो पंखुड़ी जैसी उंगलियां और तभी भौंरे जैसी जुल्फें सार्थक हैं। कदली-सी कलाई है और सोने की चेन वाली घड़ी पार्करपेन से होड़ लगा रही है। बाटा का एम्बेस्डर जूता पैरों में डाले···इसे सचमुच कहीं का एम्बेस्डर होना चाहिए था। कहां आ गया यहां ऊबड़-खाबड़ में ? यह रेशम-सा रूप उजाले-सा आगमन, जैसे धूल पर फूल। ऐसे ही हैं दूसरे भी। दीनदयाल धन्य हो गया है सरकार पहली बार आये, कहां

उठाएं, कहां बिठाएं ?···आइये सरकार, यह रास्ता है।

बाद में लोगों ने जाना, नया बी० डी० ओ० है। पुराना वाला बदल गया। स्टेशन-महुवारी रोड की जांच में उसकी जीप के आगे जो बम फटा तो उसकी धमक आखिर सरकार तक पहुंच ही गयी और शीघ्र ही पूरे स्टाफ का स्थानान्तरण हो गया। लोग कहने लगे, सुखुआ-सिटहला ने धकिया दिया। वास्तव में वह बहुत डर गया था। सो, भगा और अपने साथ सड़क के भाग्य को उलझा कर। यही तो कठिनाई है। जो आता है, सिर्फ नौकरी करने। किसी क्षेत्र-विशेष के नफे-नुकसान से वह नहीं जुड़ पाता। ज़मीन पर के विकास से अधिक उसकी दृष्टि कागज़ पर की खानापूर्तियों पर है और परिणाम जो है, सामने है। इस नये से अब क्या आशा की जाय जब इसकी जीप सभापति के द्वार पर न जाकर दीनदयाल के द्वार के सामने रुकी है? विचित्र रवैया है नौकरशाही का। महुवारी में रुकना है तो बी० डी० ओ० विधायकजी के पक्षधर को सूंघकर कदम बढ़ाएगा। तन्त्र-भ्रष्टता की बड़ी विकट श्रृंखला है। कौन इसे तोड़ेगा ?···क्या सुखुआ-सिटहला ? नहीं, नरक से नरक नहीं कटेगा। देश में फिर से गान्धी को पैदा होना होगा। फिर से स्वराज्य की लड़ाई को नींव से दुहराना होगा।

कड़-कड़-कड़-कड़-धड़ाम्।

जीप नाले के पार चली गयी। अब सो जा रामरूप। मत चिन्ता में पड़ कि बी० डी० ओ० आज यहां क्या करने आया था ? विधायक के गांव आते-जाते बीच रास्ते में महुवारी पड़ेगा ही। उस सरकारी गांव में तो अब कोई घास नहीं डालेगा। सो वापसी में यहां कसर पूरी होगी ही। दीनदयालजी हैं ही। गांव के सारे मुर्गे उनके बेटे की जायदाद हैं।···कटे होंगे आज भी। सम्भव है नाच के मजे भी आए हों। सम्भव है, खरीफ अभियान या अल्पबचत जैसे, पांच-सात मिनट के ही सही, कार्यक्रम की खानापूर्ति भी कहीं हो गयी हो। कुछ भी हो सकता है।··· क्या स्टेशन रोड सम्बन्धी कोई आशाजनक कार्यवाही भी ? नहीं। नैराश्यं परमं-सुखम्। सो जा रामरूप। कल ढहे हुए भूसे वाले घर को उठाने का प्रबन्ध करना है। भट्ठे पर ईंट के लिए जाना है। मजदूर-मिस्त्री खोजना है। मिशन के हास्पीटल पर जाना है। बरात के लिए कपड़े साफ करने हैं। परित्यक्ता रुपिया के पति को टेलीग्राम करना है।···रात भीग गयी है। बारह से ऊपर हो रहा है। कुछ शरीफ किस्म के नचदेखवा जन वापसी पर हैं।···पर, ये सामने से कौन लोग आ रहे हैं ? वरदी में हैं। अरे, यह आगे तो नायब थानेदार है ? पूरी तैयारी से कहां ?··· मेरे यहां ? क्यों ? रामरूप की छाती धड़कने लगी।

'तुम्हारा ही नाम रामरूप है ?' कड़कता सवाल।

'हां हुजूर।' वह और क्या कहता ? चारपाई से उतरकर ज़मीन पर करबद्ध खड़ा हो गया।

४६

गंगा-दशहरा के दिन सुबह सोकर उठने के बाद चारपाई से नीचे उतरते समय रामरूप को चक्कर आ गया और वह लड़खड़ाकर गिरते-गिरते ज़मीन पर बैठ गया। किन्तु वह सनसनाहटभरी शून्य की स्थिति क्षण-भर में ही समाप्त हो गयी। उसने धूल झाड़कर उठ खड़े होने की कोशिश की किन्तु चारपाई पर बैठ गया। बेहद कमज़ोरी मालूम हुई। उसने चारों ओर निगाह घुमाई, किसी ने ज़मीन पर बैठे देखा तो नहीं? फिर भारी चिन्ता हुई, यह उसे क्या हुआ? क्या इसी को ब्लड-प्रेशर कहते हैं? क्या यह ऐसे ही सनसन-सनसन बेहोश कर प्राण ले लेता है? रामरूप मृत्युभय से कांप उठा। ऐसा तो कभी हुआ नहीं। कैसे ऐसा हुआ? एक-ब-एक ऐसी कमज़ोरी कहां से आ गयी? उसका मन डूबने लगा। ईंट···भट्ठा···रुपिया···टेलीग्राम···मिशन···रामकली··· डागडरनी··· मेला···बैल··· बरात ···न्योता···डाका···पुलिस···इन्क्वायरी···बेकार हो गयी ज़िन्दगी ऐसे चक्करों में।

स्मृति के एक झटके से तभी उस दिन का ताज़ा घाव भीतर ज़ोर से टीसने लगा। दरोगा तुम-तड़ाम कर उसे कितना ज़लील करता है। ···तुम नक्सल-वादियों की मीटिंग में भाषण करते हो? तोड़-फोड़ की राजनीतिक साजिश में शरीक होते हो? हत्या, हिंसा और अराजकता के लिए उकसाते हो?···हद हो गयी। नायब थानेदार के एक-एक आरोप हृदय पर हथौड़े की चोट-से पड़ते रहे। क्या सफाई देता रामरूप? उसका जीवन तो एकदम खुली किताब है। कहां कोई ऐसा राजनीतिक रहस्य है जिसके लिए सफाई दे? उसे अत्यधिक भयग्रस्त देख चलते-चलते अचानक अति नरम पड़ थानेदार कहता है, आप चिन्ता न करें मास्टर साहब। हमने अपनी ड्यूटी पूरी कर दी मालूम है कि आप निर्दोष हैं। पर डायरी में नाम आ गया तो जांच की प्रक्रिया तो पूरी करनी ही है। समय-समय पर दो-तीन बार और पूछताछ होगी, या नहीं भी होगी फिर नाम कट जायगा। ···लेकिन इस प्रकार की कलंकित डायरी में नाम लिखाने वाले सज्जन फिर-फिर सजग-सक्रिय रहें तो? आज यह लांछन लगाया और कल दूसरा आरोप खड़ा कर फांसा तो? उसे शत्रु मानकर कोई एकदम मटियामेट कर देने की ठान ले तो?

रामरूप ने भगेलुआ को आवाज़ दी कि वह एक बीड़ी जलाकर दे जाय। कभी-कभी ही पीता है पर इस समय ज़रूरी लग रही थी। उसे बीड़ी देते हुए नौकर ने पूछा, 'क्या मेले में मुझे भी चलना है?' रामरूप ने कोई उत्तर नहीं दिया। चुपचाप बीड़ी का धुआं खींचता रहा। भगेलुआ चला गया। अभी गोटी बैठ नहीं रही थी। एक ही दिन सारे काम घहरा गये थे। कौन-सा कार्य पहले हो?

जब तक रामरूप स्नान कर आया, अरविन्दजी ने दधि, दूब, फूल, अक्षत, सुपारी और गुड़ आदि का प्रबन्ध कर दिया था। लड़के को सुबह ही न्यौते की तैयारी के साथ गठिया जाना था। रामरूप स्वयं तो दोपहर से पूर्व नहीं पहुंच सकता। वरात का प्रस्थान ढाई बजे से था। मौका न केवल आसन्नप्रसवा होने के कारण रामकली के हाथ से बल्कि इसी कारण से कमली के हाथ से भी छूट गया। मजबूरी थी। ऐसे में अकेले मां से क्या होता ? ऐसी स्थिति में अरविन्द ने पूजा की सामग्री जल्दी-जल्दी जुटाकर समय से पूर्व ही प्रस्तुत कर दिया था। जल रामरूप स्वयं लेता आया। आज्ञानुसार ढहे हुए घर की नींव में फावड़े से पांच छेव मारकर उसने पूजा की वस्तुएं अर्पित कर दीं। अन्त में जल चढ़ाकर प्रणाम करते हुए मिट्टी का तिलक लगा लिया और अगरबत्ती जला दी। साइति हो गयी। ईश्वर बेड़ा पार लगावे। मामूली आदमी का ढहा हुआ घर खड़ा हो जाय, आज-कल कितना मुश्किल है। कटोरी में दही-गुड़ लेकर चुपचाप मां खड़ी थी, उस साइति करने वाले के लिए। मां बहुत गम्भीर थी।

मां के पीछे-पीछे रामरूप भीतर गया। कमली अपनी मां को पिलाने के लिए कुछ तैयार कर रही थी। रामकली ने चारपाई से उठने की कोशिश की पर रामरूप ने उसे रोक दिया। एकदम पीली पड़ गयी है और वेदनाओं की आगत-अनागत छाया मुख-मण्डल पर छा गयी है। कितनी-कितनी पीड़ा के बाद तो एक इंसान जन्म लेता है। शायद यही कारण है कि उसके जीवन में पीड़ा प्रधान है। रामरूप ने उसके सिर पर हाथ रखा। 'तबीयत कैसी है ?' पूछा।

'ठीक है।' रामकली ने धीरे से कहा। ऐसा लगा कि शब्द हुटुक-हुटुककर निकल रहे हैं। पता नहीं कैसे रामकली इतनी कमज़ोर हो गयी है। ऐसी कमज़ोरी प्रसव में कितनी खतरनाक सिद्ध हो सकती है ?

'घबराने की बात नहीं। कल शाम को मैं फिर मिशन पर गया था। लेडी डॉक्टर अब आती ही होंगी। सब ठीक हो जायेगा। उसके हाथों में यश है।' अपनी घबाराहट रोककर रामरूप बोला।

घर से बैठक तक जाते समय एक विचार अचानक कितनी चोट के साथ भीतर पैंतरा भांजने लगा।···कहीं फिर लड़की हो गयी तो ? एक कन्या-रत्न में तो वह दुर्गति हो गयी, अब फिर वही शादी-वादी दुहरानी पड़ी तो ?

अरविन्द के गठिया चले जाने के बाद रामरूप ने ईंट-भट्ठे पर एक चक्कर लगाया। ज्ञात हुआ कि दो दिन के भीतर भाव प्रति हज़ार पचीस रूपये तेज़ हो गया। माथा ठोककर उसने रास्ते में मिस्त्री का दरवाज़ा खटखटाया। उसने मुसकराकर कहा, पुराने रेट पर अब काम नहीं हो रहा है। नये रेट के कड़वे घूंट भीतर उतारता ताबड़तोड़ पैर मारता पसीने से थकबक घर आ रहा था कि बीच में जमुना बाबू से भेंट हो गयी। सायकिल रोकने का इशारा था। उन्होंने बताया

उसका खेत दीनदयाल फिर इस साल पानी पड़ते ही चढ़कर जोतने की ताक में है बल्कि आधा लट्ठा चौड़ाई में और अधिक पर दावा करता है। अर्थात् १२० लट्ठा लम्बाई के साथ डेढ़ की जगह दो लट्ठा चौड़ा। समय से पहले रामरूप को नाप-जोखकर डांड फरिया डालना चाहिए। जमुना बाबू के सद्‌भाव के प्रति खुशी प्रकट कर रामरूप फिर सायकिल पर सवार हुआ तो उसके मस्तिष्क में घंटी टुनटुनाने लगी···और यह सब छोड़कर सबसे पहले क्या उसे किसी डॉक्टर के यहां चलकर अपना ब्लड-प्रेशर नहीं चेक करा लेना चाहिए?

घर आकर रामरूप फिर एक बार रामकली का हालचाल लेने भीतर गया। देखा, सब यथावत् है और प्रायः ठीक है। मां ने बताया, अभी-अभी 'डागडरनी' आयी थी। फिर एक बजे आने को कह गयी है और कह गयी है कि वह आकर यहां रुकेगी। तब तक अपने यहां की एक अंगरेजी दाई को भेज देगी। वह कहती है, तनिक चिन्तित होने की बात नहीं। मां उसकी प्रशंसा करते नहीं थकती है। क्रिस्तानिन है तो क्या एकदम देवी-देवता की तरह है। जैसे-जैसे मां उसका गुण-गान करती जाती है, रामरूप का मन एक सवाल की कचोट में छटपटाता जाता है।···यह अंग्रेजी मिशन की लेडी डॉक्टर नहीं होती तो? फिर वह सोचता है, अंग्रेजों के जाने के बाद अपने मुल्क की 'डागडरनी' गांव-गांव में नहीं पहुंची और पराये मुल्क वाली का ही आसरा अन्ततः शेष रहा। इस प्रकार घूम-फिर कर नये रूप में फिर विदेशी जम गये, और अधिक गहराई से, ठेठ ग्रामांचल में, आम लोगों के बीच।

'अरविन्द तो न्यौते पर चला ही गया, मैं नहीं जाऊं तो क्या हर्ज? उसकी हालत खराब है।' रामरूप ने मां से पूछा। गठिया के प्रति उसके भीतर धीरे-धीरे जमता विकर्षण का भाव पूरी गहराई से जम गया है।

'इहो करबे बचवा?' मां ने कहा, 'इहां के फिकिर छोड़। इहां राम बाड़न। ना गइले लोग का कही? कही कि एमेले भइल नइखे सोहात का कि डाह वस पाहुन ना आइले? फेरु ओकरा पर डाका के लोटिस आइलि बा। ऊ लोग केतना अफतरा में बाड़न। अइसना मौका पर हीतमीत का दुअरा न जाई त कब जाई?'

अरे हां, रामरूप को यह तो आज भूल ही गया था। बहुत हल्ला है और निमन्त्रण-पत्र लाने वाला नाई भी बता रहा था कि बाबू साहब पर डाका की चिट्ठी आयी है। डाकुओं ने लिखा है कि दशहरे के दिन वे उन पर पड़ कर लूट-पाट करेंगे।···'गोली मार कर देखा, अब ड़ाका डालकर देख लें।' सुना है, चिट्ठी पाकर खूब ज़ोर से ठठाकर हंसते हुए कहा था ससुर करइलजी ने।···समर्थ हैं वे, उन्हें हंसना ही चाहिए। किन्तु गांवों की हालत खराब है। कथित नक्सलवाद के मन बढ़े विकृत भूत आतंक जमाने में सफल होते जा रहे हैं। बिहार के सीमा-वर्ती कई गांवों में 'माओत्से तुंग जिन्दाबाद' बोलकर खलिहान लूटे गए। पिछले

दिनों एक गांव में न केवल एक पूरा खलिहान ही फूंक दिया गया बल्कि उसके एक रखवाले को भी उसमें फेंक दिया गया। नारायणपुर में वर्ग-संघर्ष का तनाव है। रोज़ बम फूट रहे हैं। हत्याओं का सिलसिला जारी है।···अराजक आग क्या उधर से ठेठ करइल क्षेत्र की ओर भी सरक आयी ? रामरूप को ज़रूर गठिया चलना चाहिए।

गठिया गांव में जाने के लिए ताल लांघकर चमटोल के पूरब से रामरूप सीधे हनुमानजी के मन्दिर पर पहुंचा और पहुंचने के साथ ही वहां जो कुछ देखा उसकी रास्ते की सारी उमड़-घुमड़कर परेशान करने वाली बाहर की तेज धूप और धूल-गर्द की परेशानियों के साथ भीतर की चिन्ताएं समाप्त हो गयीं। उल्लास की नयी ऊर्जा में उसका जैसे अचानक रूपान्तर हो गया। गाजे-बाजे के साथ गांव की महिलाओं का मांगलिक सागर मन्दिर के आगे छवर पर परिछावन के लिए उमड़ आया है। घरों के भीतर से आज कीमती से कीमती साड़ियां, शाल, सैंडिल और आभूषण बाहर निकले हैं। चटकीले रंगों और स्वरों का उमड़ता मेला गांव की एक ऐसी समृद्धि का परिचय दे रहा है जिसे आमतौर से लोग नज़रअन्दाज़ किये रहते हैं। औरतों के जुलूस के समवेत सौन्दर्य, समवेत गीत-स्वर और समवेत उत्साह में डूबे रामरूप को घोड़े पर सवार और मुसकरा कर प्रणाम करता दुलहा भुवनेश्वर दिखायी पड़ा। अरे, विवाह के दिन भी नेताओं वाली पोशाक नहीं छूटी ? हां, पैरों में महावर तो खूब खुले मन से लगी है। मलिकाइन दुलहिन परिछन में मूसल भांजती हैं तो वह कैसे सिर तक पहुंचे ? घोड़े की पीठ तक घूम कर रह जाता है। पट्टीदार तुलसी के घर की एक हंसोड़ दुलहिन उन्हें गोद में उठा और उचकाकर कहती है, 'अब माथ से मूसर भेंटी सरकार।' धूमधाम, हंसी-खुशी धक्का-हल्ला और बैंड की धुंधकारी धुन में गीत स्वर सबसे अलग होकर हवा में लहरा रहा है—

परिछे बाहर भइली बरवा के मायरि,
आरसी सिन्होरा लेले हाथ रे।
किया बर परिछिलां माथ के मऊर,
किया वर तिलक लिलार रे।

रामरूप बाबू हनुमानप्रसाद के बैठकखाने पर पहुंचा तो उसके स्वागत में अरविन्दजी खड़े मिले। ठाट-बाट बरात में जाने वाला लग रहा था। मालिक व्यवस्था में अतिव्यस्त दिखलायी पड़े। रामरूप को भी अभिवादन आदि के बहाने बस अपने को दिखला देना था, सरकार हाजिर हूं। उसे रिश्तेदारों के बीच बैठ बेबाक बतकहियों में शामिल हो जाना सुविधाजनक लगा। ऐसे मौकों पर रिश्तेदारगण बैठे-बैठे कितनी फुरसत के साथ कैसी-कैसी बातों के दिलचस्प लच्छे निकालते हैं। बनारस वाले रिश्तेदार रामपाल सिंह ने बताया कि बरात बहुत

संक्षिप्त जायेगी। रिश्तेदारों को प्राय: नहीं जाना है। उन्हें यहां घर अगोरना है। उन्होंने बगल में पड़ी बन्दूक की ओर इशारा करते हुए कहा, 'खबर गयी थी कि तैयारी के साथ आयेंगे।' उन्होंने यह भी धीरे से बताया कि पुलिस को डाके की चिट्ठी सम्बन्धी सूचना तो लोगों ने दे दी है परन्तु पुलिस की यहां व्यवस्था शायद नहीं मांगी गयी कि लोग कहेंगे, एक मामूली चिट्ठी पा डर गए। पुलिस शायद रात में गश्त करे।

बरात नहीं जाना है, जानकारी रामरूप के लिए बहुत सुखद थी। अब रात में यहां पहरेदारी करने के पूर्व वह घर जाकर खबर ले सकता है।···मगर, यहां की ऐसी पहरेदारी तो उसे नहीं सहती है। कहीं फिर न वह किसी लफड़े में पड़ जाय।···किन्तु अनुपस्थित रहना कहीं उससे भी अधिक जुर्म न हो जाय ?

पहले दुलहे वाली कार रवाना हुई। उसके कुछ देर बाद बस की भरभराहट सुनायी पड़ी। बहुत सारा सामान दो ट्रेक्टरों पर पहले ही चला गया है। बरात निकल जाने पर दरवाज़ा अचानक बहुत सूना लगने लगा। सूरज ढलकर नीचे गया और बाहर फर्श पर पानी का छिड़काव पूरा हो गया तो रिश्तेदारों के पलंग बाहर निकाल दिये गये। रामरूप सहित कुल आठ-नौ रिश्तेदार बरात जाने से बचे थे जिनमें चार के पास हथियार थे। दो बन्दूक वाले विशेष रिश्तेदार बरात के साथ गये। गजिन्दर, भीम और सालिका एक ओर बैठे बात कर रहे थे। ये भी बरात में नहीं गये। मगर बाबू हनुमानप्रसाद की बन्दूक तो यहां किसुना के संरक्षण में रहती है। वह भी मौजूद है। डाके के खत ने कितनों के बराती मजे की कल्पना पर पानी फेर दिया। रामरूप किसुना को बुलाकर कुछ पूछने जा रहा था कि दमरी नाई गांव पर से आता दिखाई पड़ा। उसने आते ही बताया कि लड़की हुई है और बकिया सब ठीक है। मांजी ने कहा है कि चिन्ता की कोई बात नहीं।

अब क्या खबर लेने घर जाना है ? रामरूप का मुंह उतर गया। शर्बत के साथ किसुना एक प्लेट में भांग का एक गोला अलग से लिये चल रहा था। रामरूप को आज पहली बार इसकी आवश्यकता महसूस हुई। उस आधी मटर बराबर बूटी ने अनुकूल प्रभाव दिखाया। रात में भोजन के समय उसे जगाया गया तो देर तक झलमलाता रहा। सोते समय उसने अपना पलंग रिश्तेदारों से अलग हवादार जगह में करा लिया था। वे लोग आत्म-ज्ञापनार्थ कभी-कभी बन्दूक दागते तो रामरूप का कलेजा धड़कने लगता। दूसरी बात यह थी कि उन्हीं रिश्तेदारों के साथ गजिन्दर भी सोया था और हो-हो कर उनसे बहुत भद्दे-भद्दे मज़ाक करता था। एक बार उसने भी एक गोली हवा में छोड़कर सुरक्षात्मक आतंक पैदा करने में सहयोग किया। मगर इस बन्दूक के धड़ाके से भी एक जबरदस्त चीज़ थी जिसने नींद सहित भांग के शेष नशे में और जागरण सहित एक विशेष सांस्कृतिक स्वाद

में संघर्ष करा दिया। देखो, कौन जीतता है? रामरूप ने सोचा, सांस्कृतिक स्वाद का 'जलुआ' जगाये रखे तो अच्छा ही है। पहरेदारी ठीक से होगी। वैसे इस कार्य के लिए शायद पुलिस भी आ गयी है। हाते के बाहर बाजार वाले मैदान में उनका दल पड़ा है।

भीतर हवेली में 'जलुआ' हो रहा था। रामरूप ने उसके बारे में बहुत कुछ जाना-सुना था, कभी देखने का मौका नहीं मिला था। मगर 'देखने' का प्रश्न ही नहीं था। 'जलुआ' सिर्फ औरतों द्वारा सम्पन्न होता है। पुरुष का उस स्वांग में प्रवेश सम्भव नहीं। भीषण शोर-शराबा, गाली-गलौज, हंसी-मज़ाक, फूहड़पन और मुक्त नंगट नाच के बीच जहां ढोल, थाली और मंजीरा बजा-बजाकर विवाह की खुशी में बाहर का फाटक बन्द कर भीतर आंगन में औरतें 'डोमकच' और 'रतजगा' कर रही हैं, कैसे कोई पुरुष जायेगा? हां, कान की आंखों से आज तो देखने का ऐसा सुयोग मिला है वह भी कहां मिला था कभी रामरूप को? थोड़ी देर में कान के परदे पर आंगन के 'नकटा' के दृश्य उभरने लगे। कैसा दृश्य?

बूढ़ी फूआ को 'भोजइतिन' बनाया गया है। चारपाई के पाये पर कपड़ा लपेट कर 'जलुआ' बनाया गया है। जलुआ को नवजात छोटे बच्चे की तरह बनाया-सजाया गया है। उसका जनम होगा। जनम भी क्या ऐसा-वैसा होगा? स्वांग में आसन्नप्रसवा पीड़ा में छटपटाती मिलेगी। उसका पति-पटना जाकर वैद्य को बुला लायेगा। वैद्य महाराज जटाजूट और कमंडलधारी वेश में 'कान के दरद··· पेट के दरद···' जैसे कुछ बोलते पहुंचेंगे। फिर लड़का अर्थात् 'जलुआ' का जनम होगा। नार काटने के लिए चमाइनि को बुलाया जायगा। उसके नखरे चलेंगे। फिर तिलक-त्रिपुंड में पत्रा लिये कोई पंडित-पुरोहित आता दृष्टिगोचर होगा। वह साइति बतायेगा। 'नहौआ' होगा। सोहर उठेगा—

केकरा महलिया लेके जाऊं,
जलुआ बड़ा हो बेहाल।
कि मोरा जलुआ के बथेला कपार॥

फिर नाना प्रकार के स्वांग। धोबी-धोबिन के, दही-साग, मछली और सब्जी बेचने वालियों के, चूड़ी बेचने वाली के, गांव के नामी चौधरी-सरदारों के, डोम-डोमिन के (अइसन सुघरी रे डोमिनिया डोमवां कहंवां पवले ना?)। लकठा खाते बाल-कृष्ण के, भूत-चुड़ैल के, सिपाही-दारोगा के और मालिक-नौकर आदि के स्वांग। रात-भर चलता स्वांग, परम स्वतन्त्रता से, खुले मन से जीवन-भर की दबी-घुटी कुंठा और घेरे में मौन बन्द रहने की कसक को निकालते हुए। आज कौन डांटने वाला है? सब लोग तो बरात गये। फिर यह मौका कैसा है? करमट अथवा कुलरीति का परम्परित सांस्कृतिक जामा पहन भद्दी-भद्दी गालियां और फूहड़-फूहड़ स्वांग भी जोर-शोर से चल रहे हैं।

अचानक महुवारी का नाम कान में आने पर रामरूप चौंक गया। एक जलुआ का परम्परागत पात्र अरजुनवा है। उससे उसका स्वामी बनी एक नारी कड़ककर पूछती है कि वह कहां गया था? वह बताता है कि महुवारी में रामरूप मास्टर के यहां गया था तो फिर सवाल होता है, वहां उसने क्या देखा? अरजुनवा बताता है कि रामरूपजी अपनी जोरू को 'दिदिया' कह रहे थे! बस अब क्या है? एक समवेत गीत झूमझूमकर चलने लगता है, 'मारल जइवे ए अरजुनवा'। महुवारी और रामरूप को लेकर कुछ और स्वांग उपस्थित किये जाते हैं जिन्हें रामरूप स्पष्ट रूप से पकड़ नहीं पाता है। तीन-तीन बड़ेरियों को लांघकर ध्वनि जो आती है, घिसकर अस्पष्ट हो जाती है।

रामरूप को याद आया जब वह छोटा था तो उसकी मां बड़े काका के घर 'जलुआ' दिखाने के लिए ले गयी थी। 'अइघाइल' दउरी से दो दीपक (पति-पत्नी के प्रतीक) जलाकर शुरू-शुरू में ढक दिए गये और चार-चार गोतिनें इधर-उधर होकर उस दउरी को गा-गाकर ठोकने लगीं। उसकी मां ने बताया था कि इसे 'दादरा 'ठोकना' कहते हैं। इसके बाद जलुआ का जनम हुआ था तो उसकी मां बनी औरत गा-गाकर कहने लगी कि मुझे कौन बांझिन कहेगा? ऐ मेरी देयादिन लोगो, मेरे होरिल को देखो। इसके बाद जलुआ बीमार पड़ा था। बहुत झाड़-फूंक के बाद अच्छा हुआ। तब धुनना माई राधा प्यारी बनी थीं और रास-लीला की कहानी स्वांग में उतारी गयी थी। धोबी-धोबिन के खेल में 'मोटी-मोटी लिटिया पकइहे धोबिनिया' वाला गीत गाया गया था। तभी से वह याद रहता है। हर-बिसुनी वाले स्वांग में वह हंसते-हंसते लोट-पोट हो गया था। कहां की मुक्त स्वांग कल्पना, कहां की कला-बुद्धि और अभिव्यक्ति चतुराई ऐसे मौकों पर उमड़ आती है? बेशक, ये घरों में बन्द हमारी औरतें ही जीवित जीवन-स्रोत हैं। यह स्रोत आज किस प्रकार उमड़ रहा है?

चुड़िहारिन वाले लम्बे दिलचस्प स्वांग के संवाद-गीत को सुनते-सुनते अचानक रामरूप को नींद आ गयी और जब नींद आ गयी तो थोड़ी ही देर में गहरा गयी। उसे क्या पता था कि उसकी नींद वैरिन हो जायगी। उसे अत्यन्त बेरहमी और बेहूदगी के साथ झकझोर कर जगा दिया गया था। '···उठ-उठ मास्टर साला रामरूप, महुवारी से यहां तक हम लोग दिन-भर खोजते-खोजते हैरान हो गये और यह साला बहनचो···यहां रात में अजगर की तरह पड़ा है··· उठ, उठ, चल अभी अमीन साहब के साथ, तहसीलदार साहब ने सभापति के दरवाज़े पर बुलाया है। तमाम मालगुजारी बाकी पड़ी है और साला भागता फिरता है।···उठा ले बस्ता अमीन साहब का।'

रामरूप ने पहले समझा डाकू आ गये। वह हड़बड़ाकर उठा तो देखता है, डाकू नहीं सामने एक खूब मोटा व्यक्ति, बड़ी-बड़ी खूंखार मूंछों वाला, सिर पर

बड़ा-सा लाल साफा बांधे, पहलवानी कुर्ता-धोती के अटपटे ठाट के साथ हाथ में मोटा सोटा लिये गाली से बात करता, डांटता, हुक्म करता चपरासी-रूप में खड़ा है। जिसे वह अमीन साहब कहता है वह पैंट-बुशर्ट वाला बस्ता लिये आदमी भी कितना ज़ालिम लग रहा है! बेशक मालगुजारी दो साल की बाकी है मगर यह कौन-सा तरीका है वसूली का? क्या सरकार रामरूप को एकदम पीस देने पर तुली है? उस दिन थाने वालों ने वैसा ही किया और आज यह तहसील वालों की अन्धेरगर्दी? क्या समझ लिया है इन कुत्तों ने रामरूप को? वह एकदम चीख उठा—

'नहीं जायगा रामरूप किसी तहसीलदार-फहसीलदार के यहां। जाओ यहां से भाग जाओ और जो मन में आवे करो। एक इज्ज़तदार आदमी के साथ इस प्रकार की गुंडई करते तुम लोगों को शर्म नहीं आती है? दो पैसे की नौकरी करने वाले टुकड़खोर कमीने, कैसे तुम्हारी हिम्मत हुई गाली देने की? खैरियत चाहते हो तो तुरन्त सामने से चुपचाप हट जाओ, नहीं तो···'

रामरूप अपनी चारपाई पर पड़ी छड़ी को उठाने के लिए झुका। मगर छड़ी कहां थी और यह क्या? वह सनाका खा गया। अब वह हंसे कि रोये? उसकी बगल में स्वांग वाला 'जलुआ' सुलाया गया है और कहां गये अमीन-चपरासी? 'वे सब' क्षण-भर में भागकर यहां-वहां हो गयीं तो रामरूप का ध्यान हवेली के मुख्य द्वार की ओर गया जहां से औरतों के एक दल के हंसने-खिलखिलाने की आहट आ रही थी। कोई औरत कह रही थी—

लजाये के का बाति बा? लइका भइल त अब पाहुन ओहके दूध पिआवसु।" मज़ा उधर जगे-अधजगे रिश्तेदार लोग भी ले रहे हैं।

४७

भोर की किरनें आसमान में पूरब ओर से उजाले का जाल फेंक रही थीं और चिड़ियां खुशी मना रही थीं। उस समय भीतर जलुआ का समापन हो रहा था और गीत-गीत में भोजइतिन अर्थात् घर की मालकिन से खुशी-खुशी विदा मांगी जा रही थी। किन्तु अभी-अभी जो घटना घट गयी थी उसने रामरूप को बहुत सिकोड़ दिया था। शाम को सांस्कृतिक बोध से जिस आनन्दोल्लास का आरम्भ हुआ वह भोर होते-होते एक कड़वे अपमान और पश्चात्ताप-बोध में डूब गया। ससुराल की गाली और मज़ाक तो प्रसाद जैसा सहज-सुखद रूप में स्वीकार्य होता है किन्तु कुछ पूर्व प्रसंगों से जुड़कर घटना जैसे रामरूप के भीतर सालने लगी थी। गठिया का रात्रि-विश्राम इस बार भी कहां सहा? अनजाने में ही सही, दुर्घटना आखिर घट ही गयी। महुवारी में असली लड़की हुई तो यहां नकली

लड़का होना दिखाकर खिल्ली उड़ाई गयी। या उड़ गयी। महुवारी में असली पुलिस वालों ने उस प्रकार लांछित किया तो यहां नकली पुलिस-जुल्म घहराया। माना कि औरतों ने जान-बूझकर ऐसा नहीं किया परन्तु अनजाने भी क्यों रामरूप के साथ ऐसा घटा ? क्या इसे नियति का व्यंग्य मानें ? तो ससुरजी आदि गांव की प्रतिगामी और उत्पीड़क शक्तियों के साथ नियति भी उसके प्रति क्यों क्रूर हो गयी है ? क्या कसूर है उसका ? किसी का क्या बिगाड़ा है उसने ? क्या इसीलिए उसे पग-पग पर ठोकर लग रही है कि वह एक आदर्श अध्यापक की भांति सचाई और ईमानदारी से जीना चाहता है ? वह वैसे आधुनिक दोमुंहपन और अवसर-वादिता की नकाब अब लगा ले ? कैसे चोट खाने के बाद धूल झाड़कर ऊपर-ऊपर से खिलखिला उठे ? वह अकारण चोट खाये क्या ? क्या हक है किसी को कि उसे जब चाहे इस प्रकार लहूलुहान कर दे ? वह एक मिनट भी अब इस दरवाज़े पर नहीं रुकेगा।

उसने सोचा, मुंह-अन्धेरे यहां से निकल चलें। मेले में सुबह पहुंचने पर काम बन जायगा। गर्मी का दिन है, खरीद-बिक्री के लिए दोपहरी ठीक नहीं। उसने देखा, सायकिल तो खम्हिया में पड़ी है और ऊपर खूंटी पर बैग टंगा है मगर उसकी छड़ी कहां गयी ? चूंकि इधर से ही मेले में जाने की तैयारी थी अतः छड़ी ले लिया। बैलों के मेले में खाली हाथ घूमना निरापद नहीं। पता नहीं किधर से कौन-सी सींग उसी की ओर पिल पड़े। उसके सितारे आजकल प्रतिकूल हैं। सो, छड़ी कहीं दिखायी नहीं पड़ रही है। जलुआजी को तो बाद में नाइन आकर ले गयी पर अपनी गुमशुदा छड़ी के बारे में, जिसकी जगह बेटा बना जलुआ सुलाया गया था, वह उससे नहीं पूछ सका। शायद इस डर से कि कहीं छड़ी स्वांग के सिपाही पर बरसने न लगे, पहले ही चंट औरतों ने उसे तिड़ी कर दिया।

उसने फिर सोचा, भोर-भोर में जबकि लोग यहां सोये हैं बिना छड़ी के भी निकल चला जा सकता है। छड़ी आवश्यक नहीं। किसान लाठी-छड़ी लेकर कहां जाता है मेले में ? यह तो शायद मास्टरजी होने का फल है कि मेले में भी छड़ी ही सूझती है, कदम-कदम पर ग्रह-नक्षत्रों का चक्कर दिखायी पड़ता है और सामान्य बातों की चोट बतंगड़ जैसी कचोट बन जाती है। अरे, रामरूप कितना अच्छा होता तू निखालिस किसान होता ? तब निर्द्वन्द्व और अकुंठ जीवन कितना सहज होता। निश्चित रूप से तू बहुत जटिल हो गया है। शायद यह भी तुम्हारी भीतर की कोई आन्तरिक ग्रन्थि है जो तुम्हें इस प्रकार मुंह छिपाकर भागने के लिए प्रेरित कर रही है। कुछ रात शेष है। शान्त होकर सो जाओ। दो घड़ी नींद मार कर उठो तो रात का हल्ला दरवाज़े पर नये मज़े के साथ उठे। बन जाओ खुशी-खुशी मूर्ख। चले रिश्तेदारों के बीच उस घटना की गरमागरम चर्चा और मज़ा आ जाये। यह औरतों का सांस्कृतिक डाका सचमुच कितना अनुरंजनकारी है,

कितना सुखकर है इस प्रकार मूर्ख बन जाना भी। रात में उस समय जो सोये-अधसोये लोग पूरा-पूरा मज़ा नहीं उठा सके उन्हें अपनी उपस्थिति से खूब हंसने-चहकने का मौका दो। भूल जाओ ग्रह-नक्षत्र, भूल जाओ कन्या-रत्न का पुनरागमन, भूल जाओ मेला, घर की नींव, ब्लड-प्रेशर···हां, यही तो इस रोग की दवा है। निश्चित रहो, हसो और हंसाओ। बरात-विवाह के ऐसे मांगलिक मौके ही तो हैं कि कुछ समय के लिए किसान निश्चिन्त होकर कहीं हंस-बोल लेता है और लोगों के जमावड़े में अपने को डाल मुक्त अवकाश की जीवनदायिनी पवित्र धारा को प्राप्त करता है। ऐसा एक मौका हाथ आया भी तो तुम पूर्व पचड़ों का बोझ ले उससे कतराकर भागने लगे, बाहर के समारोहवत् उल्लास के मौके पर अपने भीतर के झूठे क्लेशों को सहेज-बटोर एकान्त खोजने लगे। तुम्हारी यह एकान्त की तलाश मेले की भीड़ में भीतर से शायद और तोड़ने लगेगी। यह आन्तरिक पराजय बोध और पलायन एकान्त का विष है। रुको, मेला जाना ही है तो जल-पान के बाद जाना, लोगों से कहकर जाना, कौन-सी चोरी किये हो कि ऐसे मुंह-चोर बन दुम दबा भगोगे?

रामरूप चारपाई पर ढरक गया। क्षण-भर बाद उसने देखा, सवेरा हुआ जानकर किसुना हाते का फाटक खोल रहा है। ससुरजी का द्वार पहले चारों ओर से खुला था। अब एक चहारदीवारी खींचकर पूरब-दखिन के कोने पर एक लोहे का विशाल फाटक लग गया है जिसमें रात को ताला बन्द हो जाता है। किसुना को फाटक खोलते देख रामरूप ने सोचा, सुबह-सुबह इसी समय निकल चलने की यह बाधा भी दूर हो गयी। वह उठकर बैठ गया। गर्मी में सवेरे चल देना ही बुद्धिमानी लगा। एक झटके में सायकिल बैग सहित किसुना को संक्षिप्त रूप में मेला जाने और शाम को फिर लौटने की सूचना देकर वह फाटक से बाहर हो गया। राहत जैसी महसूस हुई। उसे स्पष्ट लग रहा था, शाम को फिर लौटने के बारे में वह झूठ बोल गया। अब क्या यहां आयेगा?

रामरूप को स्वप्न में भी यह विश्वास नहीं था कि मेले में वर्मा मिल जायगा। वह विधायकजी की जीप से तीन-चार अपरिचित व्यक्तियों के साथ उतर रहा था। दोनों मित्र आन्तरिक आह्लाद के साथ मिले। पता नहीं क्यों मेले की यह अप्रत्याशित मुलाकात दोनों को बेहद सुखकर लगी। संक्षेप में समाचारों का आदान-प्रदान हुआ और वर्मा ने बताया, साथ में आप लोग दुलहे के ससुरजी के पट्टीदार हैं। मेले से सर्वश्रेष्ठ बैल और ऐसी ही दूधवाली एक देशी गाय दहेज के लिए खरीदी जाएगी। खिचड़ी खाने के वक्त तक दोनों चीज़ें पहुंच जानी चाहिए। रामरूप को स्थिति अटपटी लगी। वर्मा ने कहा, 'पूरा किस्सा एकान्त में बताऊंगा।'

मेले में सर्वाधिक मूल्य के बैल-गाय खरीदने में बहुत सरलता थी। जिससे पूछें सिकन्दरपुर से आयी गाय और रामपुर से काली बाबू वाले बैल के बारे में

बता देगा। दाम दोनों के एकदम तोलकर खुल चुके थे और खूंटा गड़ा था। कोई भी कलेजे का पोढ़ व्यक्ति नकद गिनकर खूंटा उखाड़ दे। साढ़े चार हज़ार रुपये का बैल और तीन हज़ार रुपये की गाय।

पहले गाय खरीदी गयी। गाय-हट्टा में वह गाय इस प्रकार सबसे पृथक् हो गयी थी जैसे ग्रह-नक्षत्रों और अन्य तारक-मण्डली में चन्द्रमा। दूध से चमकीले धवर रंग वाली वह गाय, सेवा ऐसी कि रोवें पर से मक्खी भी फिसल जाय। उत्तम कोटि के 'बाट' वाली, यानी थन आया है कि चूंचियां बिखरकर करीब छह-छह अंगुल दूर-दूर हो गयी हैं, चारों ओर, केले की छीमी जैसी। पतली गरदन लम्बा मुंह, छोटी पूंछ, तीन-तीन अंगुल की सींग, छोटे-छोटे पैर, आगे-पीछे से बनी हुई और सीधी इतनी कि धर्म का भाव न रहे तो बिना नोइ के दुह लें, सात-आठ लीटर दूध। दूध पर रामरूप ने आश्चर्य प्रकट किया तो पट्टीदारों ने बताया कि मेले में लोग मंगरइला या केला-किसमिस, या बेसन-तेल आदि उसके दूध के साथ पिला देते हैं और दूध दूना तक बढ़ जाता है। गाय देखकर वास्तव में रामरूप दंग रह गया। तन-मन ही नहीं, पूरा अस्तित्व उसके आगे झुक गया। जगन्माता ! तेरा आज साक्षात् दर्शन हुआ। जब रुपया गिना जा रहा था, रामरूप की आंखों में आंसू आ गये। उसने उसके प्यारे बछड़े को चूम लिया। आज इसका मालिक बदल जायगा। पगहा थमाने की रस्म पूरी कर गाय वहीं छोड़ दी गयी और बगल के बैल-हट्टे में उसके केन्द्रवर्ती आकर्षण तक लोग जल्दी ही पहुंच गये। वह अठारह मुट्ठा ऊंचा, कोड़े की तरह कसे शरीर वाला, लम्बा-छरहरा, बाम मछली की तरह छटपट सोकन बैल, घोड़े की तरह सीधा-तना बैल, निश्चित रूप से दर्शनीय था। सकुची की पूंछ जैसी चढ़ाव-उतार वाली मात्र घुटने तक आयी पूंछ, आठ-आठ अंगुल की उकसती सींग, छोटे-छोटे ऐंठे कान, लम्बा मुंह, बिना नाभि और ललरी का, औसत खड़े और कुछ दाहिने झुके डील वाला वह बैल मात्र छह दांत का था। साल भर के भीतर 'मिल' जायगा। अर्थात् पूरे आठ दांत का मर्द हो जायगा। दर्शक देख-देखकर जुड़ा रहे थे। इन खरीदारों के पहुंचने पर जो लोग बैल का दर्शन कर रहे थे वे अब खरीदारों का दर्शन करने लगे। कौन हैं ये लोग ? कहां के भूपति ? अनजाने ही इस महत्ता का पानी सब के मुंह पर चमकने लगा। महत्ता के सान्निध्य से महत्ता आती ही है। वह साक्षात् पार्वती तो ये सदेह महादेव। वर्मा से नहीं रहा गया। बोला, 'मैंने आज तक ऐसा शानदार बैल नहीं देखा।' फिर उसे अपनी गलती महसूस हुई। नगर-जीवन में कहां से बैल-दर्शन के मौके मिलते हैं ? कैसे हैं ये गांव जिनके जीवन को संवारने में मरद के सहयोगी ऐसे-ऐसे 'बरद' (बैल) होते हैं। वास्तव में ऐसा बड़ा बैलों का मेला भी उसने कभी देखा नहीं था और चारों ओर आंखें उठा देखने पर सींगों का जो विराट सम्मेलन दिखायी पड़ रहा था, वह परम खड़भड़ विचित्र लग रहा था।

बैल और गाय की खरीद के बाद पट्टीदार लोगों की राय से यह दल सड़क पर घुघुर-घंटियों की दूकान पर पहुंचा। विशेषकर गाय को सजाना था। उसके पैर की गद्दीदार पैजनी, पीतल का पानी चढ़ा हलका अलंकृत मोहरी और गेवठा, मूल्यवान मांगटीका, लिलारी-फुलेना, सीगों में बांधने का फीता और गले में पहनने की लड़ीदार मूंगे और गुरियों की मूल्यवान मालायें तथा हार आदि लगभग दो ढाई सौ रुपये का सामान खरीदा गया। रंगीन पगहा और तार चढ़ी लाल कामदार चादर जो पहले से मौजूद थी, काफी शानदार थी। इसी प्रकार के कुछ शेष सामान बैल के लिए भी लिये गए। दूकान का ऐसा सजा-सजाया सामान देख रामरूप दंग रह गया। उसने कहा, 'अब पशुओं के भी गहनों का रिवाज चल निकला तो किसानों के उजड़ने में कोई कसर नहीं रह जाएगी।

'क्या उजड़ेंगे' दूकान पर खड़े एक गर्द-गुबार भरे उलझे बालों और कठिन मुखमुद्रा वाले नौजवान ने बहुत रूखेपन से कहा, 'करइल क्षेत्र के भुक्खड़ किसान कहां खरीदते हैं ये सब गहने?' और उसके पांच-छह मुड़ी-तुड़ी और बेरहमी से प्रयुक्त होने के कारण घिसी-पिटी जैसी पैंट-बुशर्ट में खड़े साथी हो-हो, हो-हो कर हंसने लगे।

'आप लोग कहां के रहने वाले हैं?' वर्मा ने पूछा।

'क्या कीजिएगा जानकर? हम लोग पछिम के हैं और पहले-पहल बैलों की हार लेकर मेले में बेचने आए हैं।'

'तब भुक्खड़ कौन हुआ? आप लोग कि करइल क्षेत्र के लोग?' एक अपरिचित व्यक्ति ने विवाद को लोक लिया। शायद वह इसी क्षेत्र का था और कुछ देर तक जोरदार और व्यर्थ की हांव-हांव होती रही।

भुवनेश्वर के ससुर के पट्टीदार लोग जलपान के बाद जब पैदल गाय-बैल हांककर ले चले तो रामरूप को समय का ध्यान आया। कितने सवेरे जल्दी-जल्दी काम हो गया। अभी तो सिर्फ आठ बज रहे हैं। मगर इन लोगों को जानवरों के साथ हुसेनपुर पहुंचने में पांच-छह घंटे से कम नहीं लगेंगे। बहुत बीहड़ ग्रामीण जन हैं, दोपहरी में भी सुर्ती ठोकते धूल उड़ाते चले जाएंगे। आटा-गोहरा यहीं से खरीद कर लोगों ने गठिया लिया है, रास्ते में कहीं लिट्टी लग जाएगी। खिचड़ी खाने के वक्त तक यानी चार-पांच बजे तक तो आराम से चले जायेंगे। उसने देखा, गाय को पकड़कर ले चलने की ज़रूरत नहीं है। बैल के साथ बछड़े को लोग आगे-आगे लिये चल रहे हैं, पीछे-पीछे छुट्टा गाय स्वयं ही दौड़ती चली जा रही है। इन कुल छह जानवरों की कम्पनी में सातवां एक रामरूप भी होता तो कितना मजा आता, उसने सोचा और तब तक उसके कंधे पर हाथ रख वर्मा बोला, 'अब क्या सोच रहे हो, चलो गाड़ी में बैठो।'

'कहां? मैं बरात नहीं जाऊंगा। मेरी ड्यूटी गठिया में लगी है।' रामरूप

बोला।

'चलो, हमें भी वहीं चलना है। कुछ नये कैसेट वहां कम पड़ गए हैं और उनका स्टाक गठिया में ही छूट गया है। उन्हें ले चलना है। विधायकजी को झक सवार हुई कि लोकगीतों सहित सारा मुखर कार्यक्रम टेप होगा। वही कल से हो रहा है।'

'अच्छा, गज़ब की झक है।···वह दहेज वाला क्या मामला था? कह रहे थे···।'

'चलो, गाड़ी में बैठो। बहुत दिलचस्प मामला है। उसे बताता हूं।' कहते हुए वर्मा ने उसे आगे ही अपने पास बिठा लिया।

रामरूप यह कह नहीं सका कि वह अपने लिए बैल खरीदने आया है। गाड़ी में बैठने के साथ उसे बेहद झुंझलाहट और अपने ऊपर खिजलाहट पैदा हुई। यह उसके व्यक्तित्व में कैसी कमज़ोरी है कि कभी-कभी न कुछ जैसा हो निराधार बह जाता है। क्या उसे बैल खरीदने की बात कहने में शर्म आ रही थी? यह उसके भीतर का कैसा मूर्ख अध्यापक है जिसे अपने किसान के काम की सुधि नहीं? अथवा यह किसी सत्ता, महत्ता और प्रभुत्व का अज्ञात तेज़ है जिसके आगे झुककर अपना काम छोड़ रामरूप गाड़ी पर बैठ गया?···किसी राजनीतिक व्यक्ति की गाड़ी पर बैठने का तो कुछ अर्थ हुआ करता है। सो, रामरूप को इसका भी ध्यान क्यों नहीं रहा?···अच्छा चलो, यह एक प्रकार की समझौते जैसी चीज़ हो गयी। कब तक अलगाव को ढोते रहेंगे? अच्छा है, पिछला सब भूल जाय। भूल जायगा भी। यही प्रकृति का नियम है।

जीप चींटी की चाल से भीड़भरी सड़क पर आगे बढ़ी। दोनों ओर दुकानें थीं। पशुओं के मेले की दुकानों पर चीज़ें भी कुछ वैसी ही थीं, चारा-भूसा, मिट्टी के बर्तन, खली, नाद, आटा-सत्तू और उपले आदि। पगहा सहित घुघुर-घंटी और रंग-विरंगे साज-सामान की दुकानें अधिक थीं। पान-चाय, पूड़ी-मिठाई आदि की दूकानों के साथ एक छोटी नौटंकी और एक हलका-फुलका सर्कस भी लगा था। दूर-दूर फैले, धूप में चमकते और जेठअसाढ़ी की तीखी आंच में सुबह-सुबह ही दहकते जैसे मेले के पसार के बीच इस छायादार सड़क पर की दुकानें आराम देती थीं और इसीलिए धीरे-धीरे इस पर भीड़ सघन होती जा रही थी। उस भीड़ में एक व्यक्ति ने नमस्ते किया तो रामरूप ने देखा, वह ग्राम सेवक है और पास ही भैंस-हट्टा है तथा बी० डी० ओ० का विकासी कैम्प लगा है। कैम्प देख उसे बहुत-सी बातें याद आ गयीं। जिस भैंस-हट्टे में यह विकास का मेला गया, भैंसों का दाम ड्यौढ़ा-सवाया बढ़ गया।

'तुमने हमारे ससुरजी के द्वार पर वाली उस बड़ी भैंस को देखा है जिसके पुट्ठे पर नम्बर का सरकारी चिह्न दाग दिया गया है?' रामरूप ने वर्मा से पूछा।

'नहीं तो। क्यों?' उसने उत्तर दिया।

'देखो, यह पशुमेला की सरकारी नौटंकी।' रामरूप ने उधर उंगली से संकेत किया जिधर कैम्प लगा था और फिर आगे कहने लगा—

'ऐसे ही एक मेले से वह भैंस खुबवा के नाम पर ब्लाक से निकली थी। असली कीमत अठारह सौ रुपये थी और कागज पर पचीस सौ। सात सौ रुपये ग्राम सेवक, डॉक्टर और बी० डी० ओ० आदि के पेट में गये। भैंस खुबवा को मुफ्त पड़ते-पड़ते बाबू साहब को पड़ गयी। यही योजना थी। सरकार गरीबों को दुधारू पशु बांट रही है कि उनकी दीनदशा फिरे। तो, गरीबों की दशा बदलते-बदलते कितने अमीरों की बदल जाती है। ब्लाक प्रमुख लोगों ने तो हद कर दी है।···अब सुना है, खुबवा ने बहककर जब केस किया था, उस दौरान डॉक्टर और ग्राम सेवक की रिपोर्ट पर भैंस चुपचाप मृत घोषित हो गयी। छूट के बाद वाली शेष किश्त जमा करने से भी मुक्ति मिली।···देख लो, इस विकास लीला को ज़रा नज़र भरकर देख लो वर्मा, मुहावरा गलत हो गया कि 'भैंस के आगे बीन बजावै···।' बीन बजाना तो क्या कितने-कितने प्रवीन लोग उसके आगे ताताथेई नाच रहे हैं। गांव वालों की नज़र में भैंस सरकारी पशु हो गयी। उसके समाजवादी दूध से गरीब जनता ही क्यों, 'गरीब' सरकारी अधिकारी-कर्मचारी अभिसिंचित होने लगे हैं।···देखा न, कैम्प के इर्द-गिर्द कैसी भीड़ थी? कैसे-कैसे कितने-कितने लोग मंडरा रहे थे? शायद बुद्धू हैं वे लोग जो इसे देख-देख जल-भुन रहे हैं। क्यों वर्मा? ठीक कहा न?'

'ठीक कहा', वर्मा ने उत्तर दिया, 'मगर इस प्रकार तो तुम स्वयं भी उन्हीं की कोटि में आ जाओगे।'

'यही यथार्थ है। आज इस देश का कौन व्यक्ति कह सकता है कि मैं भ्रष्टाचार से परे हूं? हम सब लोग किसी-न-किसी स्तर पर उससे जुड़े हैं और कैसे आश्चर्य की बात है कि उसे सामाजिक शिष्टाचार की भांति स्वीकार कर लिया जाता है।'

'क्या तुम्हें भी इस प्रकार एक भैंस मुफ्त में किसी गरीब के नाम पर मिलने लगे तो क्या ले लोगे?'

'सवाल कठिन है और कहा नहीं जा सकता कि आज के सामूहिक चरित्र की इस व्यापक गिरावट के दौरान कौन व्यक्ति, कब एक झटके से कितना गिर जायगा।···हां, व्यक्तिगत रूप से मेरा विचार पूछ रहे हो तो मैं क्या उत्तर दूं? तुमसे अधिक मेरे बारे में जानने वाला और कौन है? सो, तुम स्वयं से प्रश्न का उत्तर भी प्राप्त कर लो।'

'मेरा ख्याल है कि वैसी भैंस को छोड़ देना ही मूर्खता है। सोचो, गरीब कौन है? सारा देश तो गरीब ही गरीब है।'

वर्मा के इस दर्शन पर रामरूप को ज़ोरों की हंसी आ गयी।

४८

जीप से उतरते ही मिले बनारस के रिश्तेदार रामपाल सिंह। रामरूप की ओर देख ठठाकर हंसने लगे और बोले, 'इस इलाके में एक गीत बहुत मशहूर है कि 'लागल झुलनिया के धक्का बलमु कलकत्ता निकल गये।' सो क्या वही बात हुई कि आप जलुआ के धक्के से मेला में फेंका गये?'

बड़ी हंसी हुई। रामरूप सहज भाव से विनोदी झकोरों को झेलता रहा। वास्तव में वह उद्‌वेगरहित हो गया था। रास्ते में बरात का जो समाचार मिला और टेप रेकार्डर खुलने पर जो सुनने को मिला वह सब कुछ ऐसा विचित्र विनोद था कि उसकी मानसिक धारा में यहां के रात वाले विनोद की व्यथा बह गयी थी।

वर्मा ने बताया था, बहुत सावधानी बरतते-बरतते भी बरात बहुत बड़ी हो गयी। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और सनसनीदार समाचार यह था कि बाबू हनुमानप्रसाद की बरात का सारा प्रबन्ध उनके शत्रु नंबर एक अर्थात् चटाईटोला के नवीन बाबू ने अपने हाथों में ले लिया था। मुख्य रूप से नाच, बाजा, तम्बू, कनात, रावटी, रोशनी तथा हाथियों, घोड़ों आदि का सारा प्रबन्ध उन्हीं का था। द्वार-पूजा से लेकर विवाह-मंडप तक में नवीन सब से अधिक उत्तरदायित्व के साथ खटता देखा गया। बाहर बरात में, भीतर चौके पर और मंडप में खर्च के लिए पैसा भी उसी को सुपुर्द कर दिया गया था। नोटों की गड्डियों और फुटकर पैसों से भरा बैग लिये वह इस प्रकार फिरकी की तरह नाचता रहा कि अनजान आदमी उसी को बाबू हनुमानप्रसाद समझ लेता तो उसका क्या दोष? कई ऐसे मौकों पर दोनों एक-दूसरे को देख मुसकरा देते। ग्राम-राजनीति के घाघ पंडित करइल महाराज को राहत के साथ शायद भविष्य की आशंका भी थी क्योंकि कभी-कभी तुलसी की एक चौपाई को तोड़-मरोड़कर वे गुनगुना उठते, 'नवनि नवीन की अति दुखदायी।' तो क्या सचमुच अभी भी बाबू हनुमानप्रसाद की दृष्टि में नवीन बाबू 'नीच' हैं? क्या वह बैरी-बेटे के विधायक हो जाने पर समर्पणपूर्वक उचित अवसर की तलाश में जुट गया है? क्या आमने-सामने की लड़ाई में मुकदमों के खतम हो जाने पर दबकर वह अब विपक्ष में घुसकर घात करने की चाल में है? अथवा अपने पुत्र की राजनीति का प्रलोभन-प्रभाव है?…मिल-जुलकर उसका एक आवारा बेटा भी किसी किनारे लग जाय। दिये से दिया जल जाय। जो हो, विषय तो चर्चा का हो ही गया।

वर्मा ने रामरूप को एक किस्सा और बताया। द्वार-पूजा के लिए सज-धज-

कर जब बरात तैयार हुई तो भुवनेश्वर ने नवीन बाबू से कहा, 'चाचा जी, कार ही ठीक है। मैं पालकी पर नहीं बैठूंगा। यह सामन्तवादी सवारी मुझे पसन्द नहीं। यदि गांव के भीतर कार नहीं जा सकती तो मैं हाथी पर चलूंगा और सो भी उस हाथी पर जो सबसे बिगड़ैल होगा।'

बिगड़ैल भतीजे का मन रखने के लिए पांच हाथियों में से सबसे सीधा हाथी बिगड़ैल घोषित कर सामने हाजिर हो गया। डरते-डरते जीवन में पहली बार वर्मा को विधायक दुलहे के साथ हाथी पर बैठना पड़ा। 'गढ़ जीत ले' की मुद्रा में बैंड बाजा बजने लगा और घुड़दौड़ के लिए मैदान में बरात डट गयी तो वर्मा को बहुत अच्छा लगा। पूरब तरफ सज-धज के साथ घराती लोगों की उमड़ आयी लम्बी पंक्ति और पश्चिम ओर बराती गण। बीच में खाली खेतों का एक बड़ा मैदान जिसमें घोड़े दौड़ रहे हैं। कुल दस घोड़े हैं। दोनों पंक्तियों के बीच में चक्कर लगा रहे हैं। कुछ में बाज़ी लगी है, कौन आगे निकल जाता है। लोग अपने-अपने पक्ष के सवारों को शाबाशी दे-देकर हल्ला कर रहे हैं।

दुलहे वाला हाथी कतार के बीच में था। उसके इर्द-गिर्द हाथी, पालकी और बाजा और बरात का विशाल ठाट था। बन्दूक-धारी जन दनादन हवा में फायर कर रहे थे। भुवनेश्वर ने वर्मा से कहना शुरू किया, 'देखा यह सब ? शुद्ध सामन्तवादी परम्परा का यह गांव में अवशिष्ट सांस्कृतिक रूप है। तुम आश्चर्य करोगे, एक जानकार व्यक्ति लखनऊ में बता रहा था, रूस के फरगना प्रदेश में जहां से बाबर आया था, ठीक इसी प्रकार देहातों में बरात के दुमेला और अगवानी आदि के आयोजन होते हैं। इसी प्रकार घराती-बराती की कतारें क्रमशः आगे बढ़ती मिलती हैं। फिर द्वार पर जाते हैं। हाथी-घोड़ा का ऐसा ही ठाट होता है। जनवासे का रंग भी वैसा ही होता है। तो क्या इस तरह की परम्परा बाबर के साथ भारत आयी ? तुम्हें कुछ मालूम है ?'

मगर इस प्रश्न का उत्तर वर्मा को नहीं देना पड़ा। उस समय दोनों पक्षों के मिल जाने से गांव की ओर सम्मिलित जन-प्रवाह मुड़ गया तो सामने एक विराट उल्लसित और हरहराता जन-सागर जैसे भगा रहा था, खांवा-खूंटी-खेत धांगता, जिसे जिधर से मार्ग मिला। इसी भगदड़ में दुलहे का हाथी भी भगा तो एक बंसवारि में उलझकर भुवनेश्वर की गांधी टोपी ज़मीन पर गिर गयी और फिर भीड़ में कहां गयी, क्या हुई, पता नहीं चला।

कन्या-द्वार पर द्वार-पूजा का काम ठप। विधायक दुलहे ने घोषणा कर दी, 'जब तक नयी टोपी नहीं आ जाती है, किसी प्रोग्राम में सम्मिलित नहीं होऊंगा। किसी हित-मित्र की टोपी मंगनी नहीं लूंगा।'···समझाना-बुझाना बेकार हुआ। हां, उसने जलपान कर लिया और तब बरात के लोग भी फल, मिठाई, नमकीन और लस्सी आदि में डूबे गये। अनुमान था मुहम्मदाबाद गांधी आश्रम से लगभग

एक घंटे के भीतर जीप टोपी ले लौट आयेगी।

शायद औरतों को इस टोपी-कांड की खबर नहीं थी। उनके गीत-गारी का झनकता-खनकता जोरदार हल्ला गली-गली, थोक-थोक और फिर एक जगह इकट्ठे द्वार पर पूरे उत्साह से जारी था। वर्मा ने अनुभव किया था, इस गीत को सुनकर भुवनेश्वर खिल उठा था—

'आपन खोरिया बोहार हो अजीत बाबू,
आवत बाड़े एमेले दमाद।
बइठे के मांगे दुलहा लाल गलइचा,
लड़ने के मांगे मैदान।'

किन्तु गीतों का क्रम आगे बढ़ा और सुनाई पड़ा 'बरात मंगली सबेर त अइले अबेर···।' तो वह गम्भीर हो गया। बोला, 'ह्वाट ए नानसेंस।' तभी एक और गीत स्वरों के धक्के से उछला, 'हाथी हाथी शोर कइले, हाथी ना ले अइले रे! ए छिनार···।' 'एँ? हाथी-घोड़ा नहीं आया? वर्मा साहब, ह्वाट इज़ द मैटर?' वर्मा चुप। क्या कहे इस नासमझी पर? हाथी और टोपी कांड के बाद कहीं कोई तीसरी मूर्खता न करे। यह इन मंगलमयी गालियों को नहीं समझ रहा है। उधर औरतों की चहकती गाली एक कदम और आगे बढ़ गयी, 'आपन माई नचावत आयो रे बने-बने।' 'हाउ एबसर्ड!' फुसफुस बोलता भुवनेश्वर पास ही कुर्सी पर बैठे वर्मा को झकझोरकर जोर से बोला, 'ह्वाट ए शेम। मैं एसेम्बली में कोश्चन उठाऊंगा। यह सब बत्तमीजियां गांवों में बन्द होनी चाहिए। यह कैसा जंगली जैसा कल्चर है? स्वाधीन भारत में···।'

'यू शुड कीप मम', वर्मा ने कहा किन्तु भुवनेश्वर का भाषण नहीं रुका। वहां शामियाने में बैठे लोग चौंक उठे।

तब गालियां और गीत टेप करते-करते वर्मा ने उसके नाटक और उस भाषण को भी टेप कर लिया था और अब यहां सुनते-सुनते रामरूप हंसकर ढेर हो गया। मज़ा आ गया। मगर, मज़ा अधूरा रह गया। वर्मा को जल्दी ही जाना था।

वर्मा चला गया तो रामरूप ने बाहर जाने की इच्छा से लोटा उठाया। सुबह की खाई हुई मेले की पूड़ी ने कुछ गड़बड़ कर दिया था। उस समय दोपहरी की आंच में गठिया गांव जल रहा था। गलियां सूनी पड़ गयी थीं। घरों के दरवाज़े बन्द थे। एक तो बरात, दूसरे इस गर्मी की दोपहरी ने गांव को कितना जनशून्य कर दिया था। सन्नाटा सांय-सांय कर रहा था। हवा गुम थी। हाथ में लोटा लिये रामरूप पश्चिम ओर के बगीचे से होते छवर पर आ गया। उसने देखा, सरकारी नलकूप पर पन्द्रह-बीस अच्छे-भले जैसे लगते व्यक्ति बैठे हुए हैं।

उसने कुछ विशेष ध्यान नहीं दिया और झाड़ियों की ओर बढ़ गया। थोड़ी ही देर में रामरूप लौटा तो देखता क्या है कि वह दल इधर ही आ रहा है। आगे-आगे

एक आदमी है जिसके सिर पर पीले रंग में रंगे कपड़े में बंधा एक बहुत बड़ा परात (थाल) है। उसके पीछे छाता-छड़ी लिये काला धूपी चश्मा डटे बने-ठने जैसे लोग हैं। सबसे पीछे कुछ मजदूर हैं जो कांवर पर दो अटैचियों के साथ समान लिये हैं। सारा समां तिलकहरू लोगों का है। मांगलिक रंग में रंगे वस्त्र में बंधा परात वे ही लोग लेकर चलते हैं। तिलक-त्रिपुंड और माला में आगे पुरोहितजी भी हैं और कुछ खिदमतगार जैसे लोग भी हैं। दो खिदमतगारों के कन्धों में कवर में सुरक्षित बन्दूकें टंगी हैं। मलमल के कुर्ते-दुपट्टे में कुछ युवा रईसों जैसी अलमस्त चाल वाले पहचान में आ सकते हैं कि हो न हो बन्दूकों के मालिक ये ही सज्जन हैं। तिलक पर जब इतना सारा सामान जा रहा है तो सुरक्षा के लिए हथियार जाने चाहिए ही। कांवर पर अटैची में वस्त्र होगा और बाकी बर्तन और फल आदि के गट्ठर होंगे।···मगर इस दल में कोई छोटा-बड़ा लड़का नहीं है। तिलक चढ़ाने का कार्य तो प्रायः लड़के ही सम्पन्न करते हैं। सम्भव है, इस परिवार में कोई छोटा लड़का न हो अथवा वह पैदल चलने में थक जाता, यह सोचकर लोगों ने किसी सायकिल आदि सवारी से आगे भेज दिया।···मगर अब गांवों में सायकिलें इस प्रकार पट गयी हैं कि ऐसे मौकों पर लोग पैदल कहां जाते हैं? सो भी कड़ी दोपहरी में? विचित्र तिलकहरू हैं?

उसी समय गरम हवा का एक झोंका आया और तौलिये से आधा मुंह सहित अच्छी तरह सिर ढकता हुआ रामरूप रास्ते पर आम की छाया में खड़ा हो गया। दल पास आया तो पुरोहितजी जैसे लगते व्यक्ति ने रामरूप से कहा, 'बाबू, हम लोगों को साधोपुर तिलक चढ़ाने जाना है। नलकूप पर बैठकर सोचा कि कुछ खा-पी लें। पर वहां तो मारे धूप के जल रहा है। कहीं बैठने की जगह नहीं। क्या आगे कोई कुआं वाला दरवाजा मिलेगा?'

'हां, आगे रास्ते पर बाबू हनुमानप्रसाद का कुआं वाला बैठक-खाना है, चले जाएं।' उसने कहा और एक उड़ती नज़र उन लोगों पर फेंकी।

रामरूप के भीतर धक्-से हो गया यह देखकर कि इसमें वे सभी हैं जो मेले में सुबह करइल वालों को भुक्खड़ कहकर झगड़ते थे और स्वयं को पश्चिम से आए बैलों के व्यापारी बता रहे थे।···ये कहां तिलक चढ़ाने जा रहे हैं? फिर याद आया, कल दशहरे तक ही तो विवाहादि के लिए शुभ दिन था। आज से सब बन्द। तब कुसाइति के ये कैसे कुवक्तचारी तिलकहरू हैं?···अब कुछ अधिक सोचने के लिए रामरूप के पास वक्त नहीं था।

एक जल्दी का रास्ता बगीचे से तिरछे जाकर बाबू हनुमानप्रसाद की हवेली के पिछवाड़े पहुंचता था जहां उनका औरतों वाला खिड़की-द्वार था तथा जिससे पुरुष वर्ग का आना-जाना नहीं होता था। आज वह रास्ता काम कर गया। औरतों को खिड़की अच्छी तरह बन्द कर सजग-सावधान रहने के लिए कहता

रामरूप भागता हुआ बाहर बैठकखाने में गया और सबसे पहले उसने स्वयं अपने हाथ से बाहर हाते का जलता हुआ लौह-कपाट बन्द कर ताला जड़ दिया। किसुना उस बड़े ताले को खोलकर कुंजी सहित कहां रखता है, यह सुबह ही उसने सायकिल निकालते समय देख लिया था। फिर भीतर कमरों में चारों ओर से दरवाज़ें-खिड़कियां बन्द कर सोये लोगों को उसने जगाया··· 'उठिये, उठिये साहब, डाकू आ गये। बन्दूकें संभालिए' और तब तक उसी समय फाटक पर बाहर 'तिलकहरुओं' का मजमा जुट गया।

'बाबू साहब, खोलिये। हम लोग साधोपुर के तिलकहरू हैं। ज़रा कुए पर नीम की छाया में खाना-दाना करेंगे।' पुरोहितजी पुकराने लगे।

इधर बन्दूक वाले लोग उसे हाथों में लिये खम्हिया में आ गये। अन्य लोग, भी आ गये, मगर अभी निहत्थे। नौकरों और सहायकों में केवल किसुना उपस्थित था। लगा, वह पहले से ही मुस्तैद है। लोगों को इशारे से खम्हिया के कोने में एकत्र लाठियों और बर्छियों को दिखा वह भीतर अपनी ड्यूटी पर भगा।

'सुबह जलपान के बाद पुलिस वाले आखिर कहां चले गये?' एक रिश्तेदार ने झल्लाकर कहा।

'छोड़ो मियां, पुलिस वाले कहां डाकुओं से कभी रक्षा करते हैं?···ब्लाक पर कोई मन्त्री आज आ रहा है तो वे मन्त्री की सुरक्षा देखें कि विधायक की?··· बोल गये, रात में फिर आ जाएंगे।' दूसरे रिश्तेदार ने कहा।

'अरे भाई, यह तो सोचा भी नहीं जा सकता कि दिन-दोपहरी में डाका पड़ेगा।' एक ओर से किसी ने कहा।

'मगर, ये डाकू हैं, यह कैसे मान लिया जाय?'

'पहले स्थिति को संभालिये', रामरूप ने बेहद हड़बड़ी के साथ कहा, 'फिर मैं विस्तारपूर्वक बताऊंगा।'

ऐसा लगा कि फाटक को धक्का दिया जा रहा है। इसी समय खड़खड़ाहट के बीच एक ऊंची-सी आवाज़ सुनायी पड़ी, 'आप लोग कैसे आदमी हैं कि प्यासे लोगों को कुएं पर पानी भी नहीं पीने देते।'

'कहीं और जाकर पानी पीजिए' रामपाल सिंह ने उतनी ही तेज आवाज़ में कहा, 'यह फाटक नहीं खुलेगा।'

'इतने बड़े आदमी होकर क्यों यह पाप कर रहे हैं?'

'समय करा रहा है।'

'क्या हम लोग फाटक तोड़कर पी लें?' पीछे वाला एक रईसनुमा आदमी जिसके सिर पर लाल गमछा बंधा था आगे आकर पूरी उत्तेजना में बोल उठा और तभी उसका एक साथी उसे झट पीछे खींच कुछ बड़बड़ता हुआ फिर ज़ोर से बोला, 'अच्छा बड़े साहब, सिर्फ एक बाल्टी पानी और लोटा-गिलास भेज दें। हम

लोग फाटक के बाहर से ही पी लेंगे।'

अजीब दृश्य था। इधर फाटक पर बाहर जमे लोग, उधर दूर-खम्हिया में डटे लोग। बीच में धूप तपाया उजला शून्य। संवाद उच्च स्वर में हो रहा है। आश्चर्य, इतनी देर में कहीं से कोई गांव का व्यक्ति नहीं आया। कितना सूना है गांव ? एकदम दोपहरी के सन्नाटे में डूबा। बरात चला गया जैसे पूरा गांव।

'नहीं, यह नहीं होगा और तुम लोग अधिक नाटक करोगे तो कुछ और शुरू होगा।' रामपाल सिंह ने कहा।

'तो क्या हम लोग प्यासे चले जायं ?'

'खैरियत इसी में है।'

फाटक पर का मजमा कुछ क्षण तक वहां आपस में धीमे-धीमे बकझक करने के बाद रास्ते की ओर धीरे-धीरे खिसकने लगा। अजीब दृश्य था। खम्हिया में खड़े लोग जैसे के तैसे खड़े रहे। कोई नीचे नहीं उतर रहा है। जब बाहर वाले आंखों से ओझल हो गये तब भी लोग खड़े रहे, एकदम चुप। क्या दहशत गहरी थी ? स्वाभाविक था कि लोग आतंक का अनुभव अब करें। यदि रामरूप ने समय पर सावधानी नहीं बरती होती और उस समय जब कि बाहर-भीतर सब लोग सोये हैं बाबू साहब के नौकर भी बेखबर हैं, वे निर्बाध भीतर आकर बाहर से सब लोगों को बन्द कर चुपचाप बेरोक भीतर हवेली में घुस गये होते तो क्या होता··· कुछ भी हो सकता था। आये दिन रोज होता है और बहुत कुछ एकदम चकित-कारी होता है। लोग कितने साहसी हो गये हैं ? कोई विश्वास करेगा कि बला सामने उपस्थित होकर या इस प्रकार अप्रत्याशित रूप में घहरा कर टल गयी ? किन्तु जब यही हाल है तो यह कैसे मान लिया जाय कि वह टल ही गयी है ?

'देखना चाहिए कि दुष्ट कहीं पीछे से तो नहीं धमक गये। वास्तव में हम लोगों को उनका पीछा करना चाहिए था। ऐसे छोड़ देना गलती हो गयी।' रामपाल सिंह ने सन्नाटा भंग करते हुए कहा।

'मगर हमें अब भी नहीं लग रहा है कि वे डकैत थे।' एक अन्य रिश्तेदार ने कहा।

'रामरूप जी, अब पूरा किस्सा बताइये। मगर, हम लोग अभी बाहर खम्हिया में ही चारपाइयां निकलवाकर बैठें।'

'अच्छा, मैं पहले हाथ और लोटा साफ कर कुल्ला कर लूं, भीतर जाकर किसुना को बता दूं और पिछवाड़े की खिड़की की ओर देख लूं तो आकर बताऊं।' रामरूप ने कहा और कुछ चारपाइयां खम्हिया में डाल दीं।

घंटे-भर बाद जब बेर ढल गयी और लोगों के भीतर का ताप उतरा तो एक बार फिर रामरूप द्वारा बताया पूरा किस्सा सोचकर लोग सिहर उठे, कहीं चिट्ठी को सही करने के लिए रात में वे फिर न आ जाएं ?

'भाई मोहन बाबू' रामपाल सिंह ने बलिया वाले रिश्तेदार को सम्बोधित कर कहा, 'आपके पास मोटर सायकिल है। आप पहला काम तो यह करें कि थाने में जाकर सूचना दे दें और फोर्स भेजने के लिए कहें। दूसरा काम यह कि अजीत बाबू के गांव पर यानी हुसैनपुर बरात में पहुंचकर उन लोगों को खबर कर दें, ऐसा-ऐसा मामला है।···और रामरूप जी, ठंडे शर्बत से काम नहीं चल रहा है। उत्तेजना को काटने के लिए अब एक बार गरम चाय चाहिए।···और हां, जब बन्दूकों में गोलियां भर ली गयी हैं तो निवेदन है कि दुश्मनों के नाम पर एकाध फायर हमारे दोस्त हवा में उछाल दें।'

बन्दूक के धड़ाके सुन धीरे-धीरे कुछ गांव के लोग आ गये। किसी ओर से दौड़ा-दौड़ा सुग्रीव भी आया। पूरा हाल जानकर उसने जो बात बतायी उससे सारा सन्देह कट गया। वह दोपहर में घर चला गया था। उसका घर गठिया के एकदम दखिन छोर पर एक ऊंचे डीह परहै। डीह बाबा भी वहीं हैं। वहां से दखिन ओर खलिहान है और उसके आगे सपाट मैदान। खलिहान उठ जाने से अब पूरा बड़की पट्टी मौजा उसके द्वार पर से ही दिखायी पड़ता है। आज दोपहर में उसने देखा था, गठिया और बड़की पट्टी के बीच खुले मैदान की चमकती धूप में एक ट्रक दखिन की ओर से धूल उड़ाती आयी और फिर उधर ही घूमकर खड़ी हो गयी। क्यों घूम गयी? क्यों खड़ी रही? सुग्रीव ने कुछ खास नहीं सोचा था। सोच वह अब रहा है। योजना सटीक थी और इन्तजाम पक्का था पर 'तिलकहरू' बेचारे खाली हाथ, खाली ट्रक पर पामाल हो भाग गये। रामरूप बाबू नहीं होते तो आज क्या होता? कोई मुंह दिखाने लायक नहीं रह जाता। 'मालिक को खबर गयी है?' उसने पूछा।

हुसैनपुर बरात में जाकर मोहन बाबू ने देखा कि खुशियों के बिखरे वैभव की तरह तम्बू में, रावटियों में, पेड़ों के नीचे, चारपाइयों पर, ज़मीन पर, थोक-थोक लोग पड़े हैं। अलसायी सांझ की ठिठोलियां बेरोक ज़ारी हैं और नाना प्रकार के ठाट बुलबुलों की तरह उगे हैं। हनुमानप्रसाद की रावटी खोजने में कोई कठिनाई नहीं हुई। उन्होंने पूरे विस्तार से एक-एक बात मालिक को बतायी। अन्त में कहा, 'आज रामरूप ने धन-जन के साथ हम लोगों की इज्ज़त बचा दी।' घटना पर सन्देशवाहक के मुख से जैसे-जैसे रामरूप के बारे में प्रशंसात्मक टिप्पणियों का विस्तार होता जाता था वैसे-वैसे बाबू हनुमानप्रसाद के माथे पर बल पड़ता जाता था तथा मुंह भिचता जाता था। आखिर में ऊबभरी झुंझलाहट के साथ उन्होंने कहा—

'अच्छा, बस करो पंवारा। थके हो, आराम करो।' और फ़िर दीनदयाल की ओर घूमकर बोले, 'सुना आपने पूरा किस्सा हातिमताई का? ···दीनदयाल भाई, कहने वाले ने कितना अच्छा कहा कि 'पढ़े फारसी बेचे तेल।' और फिर

कुदरत का खेल देखिये कि इस बार फिर रामरूपजी ही सामने आ गये।...क्या मतलब इस नौटंकी का ?' क्षण-भर रुककर ज़ोर की हुंकड़ खोखी काढ़ते हुए बाबू साहब आगे बोले, 'अच्छा, अब समझो, दो घड़ी रात रहते मास्टरजी बैल खरीदने मेला गये मगर बैल नहीं खरीदा गया। वहीं उनकी भेंट डाकुओं से हुई। वे जीप पर चढ़कर फिर गठिया आ गये। गठिया में ठीक डाका पड़ने के समय कुछ सोच कर उनको पाखाना लग गया। भीतर के आरामदेह शौचालय को छोड़ वे जान-मार धूप में उतनी दूर बाहर गये। बाहर डाकू ठीक जगह पर मिल गये। फिर इधर से रामरूपजी और उधर से डाकू दोनों साथ पहुंचे। कुछ समझ में आया यह खेल ?'

कहते-कहते बाबू हनुमानप्रसाद एकदम चुप हो गये और एक बार अपनी उस पसली की ओर देखा जहां पिछली बार गोली लगी थी। उस समय दूसरे लोग एकदम खामोश थे। ऐसा लग रहा था कि स्थिति की गम्भीरता को वे कुछ और तरह से आंक रहे थे।

'अच्छा, अब खिचड़ी पर चलने की तैयारी हो।' दीनदयाल ने नवीन बाबू की ओर देखकर कहा।

४६

डाके के समाचार ने बरात को भीतर से उखाड़ दिया। लगा, उमंग बुझ गयी। किन्तु अजीत बाबू के आंगन में 'खिचड़ी' खाने की रस्म अदा करने दुलहा गाजे-बाजे और चुने हुए बरातियों के साथ जब पहुंचा तो उस असुखकर समाचार की सारी काली छाया भीतर से एक क्षण में ही पुंछ गयी। मंडप से पहले ही पड़ने वाले विशाल बरामदे में बर्तन, वस्त्र और घरेलू सुख-सुविधा वाले नाना प्रकार के आधुनिक मूल्यवान उपकरणों की उपहार-प्रदर्शनी देखकर लोगों की आंखें चौंधिया गयीं। इतना सामान ? एकदम अकल्पित। अब खिचड़ी खाने के लिए बैठने पर दुलहा किस वस्तु के लिए रूठेगा ? दहेज वाले गाय बैल-और स्कूटर भी तो वह अपनी पसन्द का पहले ही मंगा चुका है।

लेकिन भुवनेश्वर आखिर रूठ ही गया। सामने थाली में कितने-कितने रुचि-कर व्यंजन परसे पड़े हैं, चावल, दाल, रोटी, सब्जी, चटनी, अचार, कढ़ी, दही-बाड़ा, पापड़, कतरा, कलौंजी आदि-आदि और वह हाथ रोककर बैठा है। अब उसके साथ बैठे अरविन्दजी सहित चारों लड़के क्या करें ? उन्हें मात्र हाथों से मक्खियां उड़ाते देख नाई पंखी लेकर उन्हें उड़ाने लगा। मगर मंडप में मक्खियों की तरह भनभनाते, टूट पड़े और एक पर एक ढहे यहां-वहां के तमाशाई लोगों को कौन हांके ? गजब का सांस्कृतिक मज़ा है। विधायक दुलहा किस चीज़ के लिए

कैसे रूठा है ? घरातियों में से कुछ मालिक टाइप लोग बारम्बार आकर पूछते हैं, 'क्या लोगे बबुआ ? अब क्या कमी रह गयी है ? मुंह खोखकर कहो।' उधर भुवनेश्वर चुप। समय बीत रहा है। कुछ बात समझ में आ नहीं रही है। जब मंडप में पहुंचे वर्मा सहित प्रमुख बरातियों के कहने का भी कुछ असर नहीं हुआ तो लोग घबराये। अब या तो बारात से उठकर स्वयं बाबू हनुमानप्रसाद आयें या यहीं द्वार पर से अजीत बाबू आयें। निकट थे अजीत बाबू ही, जल्दी आ गये। हंसते हुए बोले, 'बोल बेटा, जो तुम्हारी इच्छा हो मैं पूरी कर दूंगा।'

भुवनेश्वर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला, 'और कुछ नहीं, सिर्फ यहां माइक आ जाय। उसी की कमी है।'

धत्तेरे की।...मंडप में हंसते-हंसते लोग दोहरे हो गये। बस, इसी कमी के लिए ऐसी ठकठेन ?...मंड़वे में भी नेतागिरी नहीं बिसरी ?

'मान्यवर, बहनो और भाइयो। थैंक्स फार दिस आनर। और इसके साथ मैं आप लोगों से इस मांगलिक मौके पर दो शब्द कहने की इजाज़त चाहूंगा। भारतवर्ष ऋषि-मुनियों का देश है। उन महापुरुषों ने जो विवाह-पद्धति बनायी है वह वर्ल्ड में बेमिसाल है। येस, दैट इज ट्रू। इसकी सुरक्षा होनी चाहिए। मैं लखनऊ जाकर यह प्रश्न विधान सभा में उठाऊंगा। यह हमारी ईमानदारी का तकाजा है। आनेस्टी इज द बेस्ट पॉलिसी। इसके साथ ही इस छठवें फाइव इयर प्लान में गांव के लोकगीतों की सुरक्षा के विषय में कोई क्लाज जुड़ना चाहिए। एक जांच कमीशन इस प्राबलम...।

'बरात में मिस कान्ता आकर आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।' वर्मा ने जाकर धीरे से कान में कहा। भुवनेश्वर ने घड़ी की ओर देखा। भाषण करते तीस मिनट बीत चुके थे। इतना काफी था। जल्दी-जल्दी भाषण का उपसंहार कर महिलाओं के झुंड की ओर नज़र फेंकते हुए पांच कौर किसी तरह परम्परा-पालन के रूप में चख साथ बैठे हुओं के साथ उठ गया और फिर जल्दी से गुडबाई कह हाथ जोड़ते बाहर निकल आया और इस प्रकार एक नाटक का जल्दी ही अन्त हो गया।

नाटक ? हां, कल से ही भुवनेश्वर नाटक ही तो कर रहा है। हुसेनपुर के लोग कहते हैं, ऐसा 'भंड़ुआ' दुलहा गांव में कभी नहीं आया। मगर, 'समरथ कहुं नहिं दोषु गोसाईं।' अरे, अपने में तो झाड़ू लगाने का शऊर नहीं, एम० एल० ए० कैसे बना ? बाप की धाक पर बाजी मार ले गया। अब 'वर' बन फुटानी कर रहा है। आलोचनायें निराधार नहीं थीं।

दूसरे दिन खिचड़ी पर ही क्यों ? पहले दिन बरात पहुंचते ही कुछ इसी प्रकार द्वार-पूजा पर जो हुआ, उसका हल्ला हो गया। बहुत अड़ियल दुलहा है। जब नयी टोपी आयी तभी उठा। द्वार-पूजा के बाद भीतर 'नहछू नहावन' और इसके बाद 'इमिली घोंटाने' का कार्यक्रम तथा फिर बरात में 'आज्ञा' मांगने का काम तो

निर्विघ्न सम्पन्न हुआ मगर 'डाल-पूजा' के समय फिर नयी बात हो गयी। परम्परा है कि डाल-पूजा के वक्त वर आंगन में नहीं जाता है। वह 'गुरहस्थ' के बाद बुलाया जाता है। इधर भुवनेश्वर अड़ गया, वह भी चलेगा।···चल राजा, आज लोग तेरी सारी मनमानी सह लेंगे। चौके पर नहीं, फिलहाल तू कुर्सी लगाकर बरामदे में बैठ। हां, तुम्हारे वर्मा साहब के लिए भी कुर्सी रख दी जाएगी।

'डाल' (आभूषण समुदाय) की सारी सामग्री ले लोग बैठ गये हैं, उधर लड़की मंडप में आ जाती है, ब्राह्मणियां मंगल-गीत कढ़ाती हैं—

ओरी तर ओरी तर बइठे बरनेतिया,
काढ़ न अजीत बाबा अपनी पुतरिया।

वर्मा, टेप रेकार्डर आन कर लो।···भुवनेश्वर आदेश कर सिगरेट जलाता है। मगर जाने क्या सोचकर तुरन्त बुझाकर फेंक देता है। गीत आगे बढ़ता है—

का हम काढों ए समधी अपनी पुतरिया,
हमरो कुमुद बेटी आंखि के पुतरिया।

'कुमुदजी को उधर लोग चादर में ढककर क्यों बैठाये हैं? उन्हें मुंह खोलकर आराम से बैठना चाहिए'···'आप चुपचाप बैठे रहें, यही मर्यादा है।'··· एक संवाद वर्मा और भुवनेश्वर के बीच।···फिर एक सवाल, 'दुलहे का बड़ा भाई कौन है जो डाल पूजा करायेगा और 'कन्या-पूजन' का कार्य सम्पन्न करायेगा? हां, कौन हैं?'—'ह्वाट इज़ ट्रबल? मेरा बड़ा भाई यह है।' भुवनेश्वर खुद उठकर नवीन बाबू की बांह पकड़कर उठा देता है। उधर मंगल-गीत कढ़ता है—

आइ गइले डाल दउरी आइ गइले सीर मउरी,
आइ गइले धिया के सोहाग कि धीआ ले चउक बइठे।

मन्त्रोच्चार, डाल-पूजा···सोने की चमक से आंगन जैसे जगर-मगर···लेकिन यह औरतें क्या गा रही हैं? 'पीतल का गहना चढ़ा दिया रे समधी बेईमान!' वर्मा साहब, देख रहे हैं यह गलतबयानी? यही क्यों, 'देखो, देखो, बाबा की बड़ाई, बाबा पनवन मंड़वा छवाई। बाबा मोतियन झालर लगाई। देखो, देखो भसुर की बड़ाई, भसुर पीतल का टीका ले आयी।'···कहो तो हल्ला करूं?···चुप, चुप। आप शान्त रहें। आनन्द लें।···क्या आनन्द लें, मिस कान्ता आयीं तो सिरदर्द का बहाना कर टेन्ट में सो रहीं। उन्हें यह सब देखना चाहिए।···तुम शहरी आदमी आनन्द लो। देखो, यह कोका कोला आ गया। देखो 'गुरहस्थ' का कार्यक्रम चल रहा है। भसुरजी अर्थात् नवीनजी मंत्रों की धुआंधार वर्षा के बीच अब कन्या के ललाट पर पान-दही का तिलक लगा रहे हैं और औरतें गीतों में उनकी खासी मरम्मत कर रही हैं।···ये आज की रात कन्या को छू रहे हैं। फिर कभी नहीं···इनको दही-गुड़ कन्या पर चढ़ाने के लिए दिया गया तो ये उसे चाट गये।

···ये लंगड़ी टांग वाले हैं, काने हैं, अरे इस महाशय के दांत तो टांगी जैसे हैं और उसी से ये विवाह के जलावन की सारी लकड़ी फाड़ डालते हैं। एकदम जोकर बनाकर छोड़ा फिर आ गए चपेट में गठिया के पुरोहितजी भी—

करइल देस के चक्का
अइसन पंडितजी उचक्का।···

बस, बोलना बन्द करें। अब मंडप में जाना है। वर्मा भुवनेश्वर से कहता है। वह मुस्करा रहा है। मैं 'लड़का' हूं? हां, पंडितजी ऐसा ही कह रहे हैं, 'लड़के' को मंडप में लाया जाय। और 'लड़का' भीड़ में बच-बचकर नाई के साथ उधर पहुंचता है। वह थोड़ी देर की खड़भड़। डाल पूजा के बाद बरात के अधिकांश लोग चले जा रहे हैं। रह जाते हैं कुछ लोग, लेनदेन का मोर्चा संभालने वाले, गाली खाते, पान-सुपारी खाते और 'लड़के' को संभालते।

मंडप में पश्चिम ओर रुख कर गौरी-गणेश के सम्मुख खड़ा 'लड़का' अड़ गया, 'उपानह त्याग' वह स्वयं करेगा और उसे करना भी क्या है? कहां फीता खोलना है? वह तो चप्पल पहने है। अतः वह इस सेवक से जूता खोलवाने जैसी सामन्तवादी मनोवृत्ति की क्रिया का प्रतीकात्मक बहिष्कार करेगा।···करो। नाई को क्या? उसे तो सिर्फ दक्षिणा चाहिए। पंडितजी के आदेश से लड़का दाहिने हाथ से गणेशजी पर अक्षत फेंकता है। तब उसके सामने खड़े ससुरजी, अजीत बाबू उसके दाहिने पैर पर अक्षत फेंकते हैं। इसी प्रकार बायें की क्रिया।

'पंडितजी, अकाल में इस प्रकार इधर-उधर चावल फेंकने से क्या फायदा? इस वर्ष देश में सूखे के चलते चावल का उत्पादन···।' भुवनेश्वर लेक्चर झाड़ने लगा।

वर्मा दौड़ा हुआ आया। 'यह क्या कर रहे हो? बी साइलेंट। बी सीरियस प्लीज। कितनी निन्दा होगी?'

'आई डोंट केअर फार दिस।' भुवनेश्वर कहता है किन्तु भाषण रुक जाता है। हाथ जोड़ उधर अजीत बाबू मुस्करा रहे हैं। पंडित वर्ग अवाक्। दर्शक चकित। खैर, एक मिनट में फिर गाड़ी लीक पर आ जाती है। मंगल-गीत चलने लगते हैं। मन्त्रोच्चार गूंजने लगते हैं।

हल्दी में रंगा पीढ़ा···उस पर पांच जगह अक्षत रखा···वर और दाता दोनों उसे पकड़कर पांच बार गौरी-गणेश से स्पर्श कराते हैं और दाता (अजीत बाबू) वर के दोनों हाथ पकड़ उसे पीढ़े पर बिठा रहा है।···'ऊं विष्टरो विष्टरो विष्टरः···' मन्त्र गूंजता है। विष्टर अर्थात् आसन। आम का पल्लव, कुश···दाहिने पैर के नीचे···फिर पाद्य। थाली के जल से वर पहले स्वयं दाहिने-बायें पैरों को··· फिर दाता के धोने की बारी। फिर तिलक···फिर द्वितीय विष्टर···एक विशेष क्रिया···फिर आचमनी। केशवाय नमः···मधुपर्क···कांस्य पात्र में दधि, मधु

और घी। दाता द्वारा वर को प्रदान। पहले निरीक्षण करो फिर पांचों उंगलियों द्वारा मुंह, कान, नाक, आंख, दोनों बांह, हृदय और पूरे शरीर से स्पर्श कराओ। ···शुद्धि के लिए आचमनी। ततः तृण त्याग। दाता-वर दोनों कुश को साथ ही पकड़ेंगे और मन्त्र समाप्त होने पर वर उसे एक ही हाथ से तोड़कर फेंक दे।··· संकल्पपूर्वक वर के द्वारा 'अग्नि स्थापन' की क्रिया के बाद कन्या पुनः मंडप में आती है और इस बार वह पूरब ओर अजीत बाबू के पास बैठाई जाती है। इसके बाद पिअरी धोती दाता द्वारा वर को धारण करने के लिए दी जाती है और तभी फिर तमाशा हो जाता है। औरतें गीत कढ़ाती हैं—

धोती पेन्हो ए वर धोती पेन्हो,
तोरे ससुर के बेसाहलि हो।
हड़र-हड़र करे ई तकुआ,
तोरी सासु सूत कातेली हो।

इसी के बीच पीढ़े पर खड़ा होकर भुवनेश्वर धोती उछाल-उछाल हल्ला कर रहा था, 'मैंने तो आज तक ज़िन्दगी में कभी धोती पहनी ही नहीं, सो आज कैसे पहनूं? ···नहीं, नाई के हाथों नहीं पहनूंगा।···हां, आप लोग पहना दें तो वेरी गुड्‌ड।' और दो-तीन लड़कियां खिलखिलाती हुई, अत्यन्त अल्हड़ता के साथ, कठिन परिहास के मूड में उसे सामने की भीड़भरी कोठरी में घसीट ले गयीं। मज़ाक सिर पर घहरा गया। उस समय तक धोती पहनने का शऊर न होने पर गीतों-गीतों में वह बेचारा कितनी गालियां सुन चुका था। क्या आवश्यक था धोती पहनना? मगर वह अपनी ही उछल-कूद के जाल में फंस गया। सारी नेतागिरी गुम हो गयी। कंधे पर पतलून रख धोती जो अटपटे लपेट निकला तो लोगों के चेहरों पर मुस्कराहट छूट पड़ी।···लेकिन, भुवनेश्वर स्वयं? पता नहीं क्यों चेहरे से हंसी गायब थी। उसे लग रहा था, वह सचमुच कितना मूर्ख है। धोती पहनने का ढंग नहीं। व्यंग्य-बाणों और परिहास के सटाकों से मार डाला उसे सालियों ने। ऐसा बेढंगा आदमी कैसे राज चला सकेगा?···उसे लग रहा था, धोती साधारण वस्त्र नहीं, वह गांव का प्रतीक है। वह छूटी तो गांव छूटा। उसे याद आया, मां का कहना न मानकर कितनी गलती की। बार-बार वह कहती रही, 'बच्चा जी, विवाह के दिन पियरी धोती पहनना पड़ेगा। सीख लो नहीं तो बहुत हंसी होगी।' सो वही हुआ। गांव में रहकर वह गांव से कितना दूर हो गया।···और क्या गांव की समूची नयी पीढ़ी इस प्रकार एकदम गांव से कट नहीं गयी है? कौन पहनता है धोती? कौन जी रहा है, गांव को? उसने महसूस किया, लगा, ज़िन्दगी में यह पहला मौका है कि भीतर इस तरह की कोई समस्या उठ रही है।···अरे, इसी तरह समस्यायें उठती गयीं तो वह एक दिन असली नेता हो जायेगा।

ब्राह्मण मण्डली ने वर पक्ष के तीन पुश्त के गोत्रोच्चार का कार्य सम्पन्न कर

लिया तो कन्यादान की बारी आयी—

बइठे अजीत बाबा खरई डसाई रे।
जंघिया कुमुद बेटी लट छिटकाई रे।

अजीत बाबू ने भुवनेश्वर के दाहिने हाथ के ऊपर बेटी के दाहिने हाथ को रख दोनों हाथों को अपने हाथ से पकड़ लिया। उनका लड़का उन हाथों पर मन्त्रो-च्चार के बीच धीरे-धीरे जल गिराने लगा। संकल्प समाप्ति के बाद अजीत बाबू ने कन्या का हाथ वर के हाथ में दे दिया। कन्या-दान सम्पन्न हुआ। गीत चल रहा था—

मंड़वा के वांस धइले रोवेले अजीत बाबू, हाथे रुमाल मुख पान।
ई धिया समधी केकरा के सउंपीं, केही करी प्रतिपाल ?

समूचा वातावरण आर्द्र और उत्फुल्ल है। एक सनातन सांस्कृतिक जादू के प्रभाव से विभोर आंखें कन्यादान के इस मांगलिक दृश्य को देखने में तल्लीन हैं। पर वास्तव में वे क्या देख रही हैं, देखने वालों को पता नहीं। सब कुछ शान्त है, सम-रस है, मुग्ध चैतन्य में डूबा है और ठहरे हुए समय के परम पवित्र टुकड़े पर जैसे कोई चित्रांकित दिव्य भाव-लोक है। इस भावलोक में तब थोड़ी सांसारिक हलचल महसूस हुई जब खचाक् जैसे शब्द के बीच धुप् कर तेज़ रोशनी पूरे कार्यक्रम पर चमक गयी।···अरे, मिस कान्ता कब आ गयीं। भुवनेश्वर की आंखें जो उधर उठीं तो फिर खचाक्। बन्द हो जाओ इस पूरे वैवाहिक परिधान-परिवेश के साथ मि० मगनचोला मिस कान्ता के कैमरे में, नीचे ऐसी धोती और ऊपर वैसा सिरमौर। भुवनेश्वर मुस्करा कर रह गया। वेलकम या थैंक्स जैसा कुछ कहते-कहते उसकी ज़बान बन्द हो गयी। वास्तव में उस पर अब वातावरण हावी हो चुका था। अक्खड़ता और बेलौस बकवास-वृत्ति दुबक गयी थी। पता नहीं कैसे इसके जैसा खड़बड़ मन वाला उत्पाती आदमी आज एक चल रहे गीत में डूब गया था—

बनवा में फूले ले बेइलिया,
त देखत सोहावन।

···इस जंगली बेइलि पर माली हाथ बढ़ाता है। बेइलि टोकती है, अभी नहीं। माली, धैर्य धारण करो। अभी फूल नहीं, मैं मात्र 'कोंढ़ी' हूं। बाद में जब गहागह फूलूंगी तब तुम लोढ़ लेना। और ठीक इसी प्रकार—

मंड़वा में फूलेलीं कुमुद धिया,
देखत सुहावन।

···दुलहा हाथ बढ़ा रहा है, अब मैं ब्याह करूंगा।···नहीं, धैर्य धारण करो। अभी ठीक समय नहीं आया। अभी तो मैं अपने बाबा की हूं। 'जब बाबा कुसवे संकलिपहें तब तुंहु बिअह।' और जब बाबा कन्या-दान कर देंगे तब तुम ब्याह करना। ···इसी प्रकार, अभी तो मैं अम्मा की हूं, अभी तो मैं भैया की हूं।···अरे, कैसा

मयार गीत है ?

लावा…लावा…। अगला कर्मट। हल्ला हुआ।

वर्मा इधर लावा की गठरी खोल ही रहा है कि उधर से अजीत बाबू के लड़के ने एक मुट्ठी लावा छर्र-से फेंका कि उसमें मिल गया।

'वेल डन।' भुवनेश्वर बोला। उसकी बात समझने वाले घराती लोग सुनकर हंस पड़े तो उसे चेत हुआ। अरे, यह तो अपनी ही हार पर शाबासी हो गयी। वह कुछ बोलने जा रहा था मगर होंठ फड़ककर रहे गये। 'मोर लावा तोर लावा या तोर लावा मोर लावा…' किसमें किसका मिलना होता है ? औरतों के गीतों से कुछ साफ नहीं हुआ। ये तो इधर-उधर के नाई-नाइन और ब्राह्मण-ब्राह्मणी आदि को लावा के साथ एक में मिला रही हैं।…मिलो तुम भी अब किसी से भुवनेश्वर…देखो, सप्तपदी का मन्त्रोच्चार शुरू है।…नहीं, अभी यह 'लाजा होम' है। कन्या के कन्धे पर रखे तुम्हारे आगे निकले हाथ पर उसका भाई गौरी-गणेश-स्पर्शपूर्वक लावा रखेगा और नीचे गिरे लावे का हवन हो जायगा।…तुम्हारा कोई वस्त्र मंडप के बाहर चारों ओर पांच बार घुमाया जायेगा। हां, सबका विधिवत् शास्त्रीय विश्लेषण है। समझना चाहो समझ लेना।…किन्तु, देखो, सप्तपदी का कार्यक्रम तो एकदम स्पष्ट है। आज कुमुद…तुम्हारी होने वाली धर्मपत्नी तुम से सात चीज़ें स्वीकार कराती है। कौन-कौन ? अनेक देवी-देवताओं की पूजा के फलस्वरूप तुम्हारे जैसे पूजनीय वर को प्राप्त किया तो तुम गृहस्थाश्रम में आती रहने वाली सुख-दुख की परिस्थितियों में सदा शान्त रहोगे। कुआं, तालाब आदि निर्माण या यज्ञादि उत्सव में पत्नी की अनुमति अनिवार्य होगी। पत्नी के व्रत और दान आदि में तुम हस्तक्षेप नहीं करोगे। तुम अपने पुरुषार्थ से बैल, अन्न और धन आदि जो लाओगे पत्नी को सौंप दोगे किसी भी छोटी बड़ी वस्तु की खरीद-बिक्री में पत्नी का परामर्श आवश्यक होगा। विवाह में सोना-चांदी, वस्त्र आदि जो चढ़ाया गया है उसे तुम उतारने के अधिकारी नहीं होगे और अन्तिम स्वीकारोक्ति कि तुम्हारी पत्नी बन्धु-बाधवों के घर मांगलिक कार्यों में अपनी इच्छा से जायेगी। तुम उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकते।

पुरुष अधिकार के लिए घबराइये मत विधायकजी। पांच प्रतिज्ञा आप भी संस्कृत भाषा में अपनी धर्मपत्नी से करा लीजिए।…जब तक मैं घर पर उपस्थित हूं तभी तक तुम शरीर का शौक-शृंगार, आमोद-प्रमोद, उत्सव, देव-दर्शन आदि कर सकती हो। मेरे परदेश रहने पर यह सब नहीं चलेगा। पातिव्रत के पालन के साथ मेरी सारी बातें अपने हृदय के भीतर रखोगी। वही कार्य करोगी जिससे मुझे सन्तोष होगा। हमारे भाई बन्धुओं का भी आदर करोगी। गृहस्थाश्रम में पत्नी की अनिवार्यता के कारण मेरा विश्वासपात्र बन सदा विष्णु, अग्नि, ब्राह्मण, ध्रुव और भाई-बन्धुओं के साक्ष्य में बामांगिनी बनी रहोगी।

किन्तु यह तो बड़ा भारी अन्याय है। पति पत्नी से पातिव्रत की प्रतिज्ञा कराता है तो पत्नी पति से एक-पत्नीव्रत की प्रतिज्ञा क्यों नहीं कराती है ? यह तो ठीक है कि वह सारे धन की स्वामिनी होगी और उसी का हुकम हर बात में चलेगा पर पत्नी की ही भांति पति की स्वेच्छाचारिता पर रोक लगाने वाली भी क्या कोई स्पष्ट प्रतिज्ञा नहीं होनी चाहिए ?···बात तो भुवनेश्वर तुम्हारे हक में है पर सवाल न्याय का तुम उठाओ।···समानाधिकार के सवाल पर पुरुष वर्ग द्वारा निर्मित दोनों ओर की प्रतिज्ञाओं में बहुत विरोधाभास है।···चलो, अच्छा हुआ तुम्हारी जिद् पर हिन्दी में इनका स्पष्टीकरण हो गया नहीं तो इधर-उधर के पंडित संस्कृत में बांचकर छुट्टी पा लेते हैं। लोगों को कहां मालूम होता है कि इसमें कितना-कितना कीमती रहस्य है और कैसे पैंतरे-पेंच बांधे गये हैं।···मगर, क्या अच्छा होता कि पति-पत्नी दोनों स्वयं रटकर ये संवाद यहां बोलते। मगर, यह तो गांव की कुमुदजी हैं कि बी० ए० पास होकर भी लाज में सिकुड़ी मुंह सीकर बैठी हैं।

भुवनेश्वर ने सामने बैठी मिस कान्ता की ओर देखा और याद आयी···यमुना ब्रिज के एक सुरक्षित अंधेरे कोने में एकात्म हो की गयी प्रतिज्ञा···हम लोग मैरेज जैसी सड़ी-चीज़ के चक्कर में नहीं फंसेंगे···परम्परायें आदमी को जीनियस नहीं रहने देतीं···और फिर यह सब देख वह क्या सोच रही होगी ?···अरे, वह इतनी गम्भीर क्यों है ? मुरझाई जैसी क्यों है ? जैसे उसकी कोई कीमती चीज़ कहीं खिसकती जा रही है।···ड्राउन योर ग्रीफ़ मिस के०, बस देखो, यहां क्या हो रहा है। यह मगनचोला तो इस नाटक ही नाटक में लगता है फंसा ।···क्या सचमुच मन्त्रों में बल होता है क्या ? या यह समारोह का दबाव है ? क्यों वह इतना दब-कर शान्त हो गया है ?···मिस कान्ता, मुझे बचाओ। मैं क्या करूं ? तुम्हीं तो बारम्बार कहती हो, सोसाइटी मोल्ड्ज मैन।···मेरी परवशता समझो और ज़रा मुसकरा दो···देखो अब सब समाप्त होने जा रहा है।···हां, यही उचित है। मिस कान्ता देखती चले, सुनती चले।···वर्मा के टेपरेकार्डर में सप्तपदी का पूरा गीत जो, 'पहिली भांवरि जब घूमेली, अबहीं हम बाबा के' से लेकर अम्मा, भइया, काका, दादी···अन्त में 'सातवीं भांवरि जब घूमेले, अब हम भइलीं तोहार 'तक कैद हो गया है। तो इस अन्तिम भांवरि में कौन किस का हो गया ? अरे हां, देखो न, यह सूरज की पहिली किरन जैसी सुरम्य-भोली कुमुदजी अब भुवनेश्वर की हो गयीं।···नहीं, अभी इन सब कार्रवाइयों के बाद भी सिन्दूरी मुहर शेष है।··· देखो मिस कान्ता, लड़की का भाई अब 'धार' दे रहा है। सावधान, धार कहीं टूटे न। धार टूटी कि बहन को हार जाओगे।···और अब पाणिग्रहण, 'सेन्दुर बान्हो सेन्दुर ए वर।' वर कौन ? यह तुम्हारा यूनिवर्सिटी का ब्वाय फ्रेंड गणेशजी को पांच बार स्पर्श कराने के बाद 'सनइली' द्वारा कन्या की मांग को सौभाग्य-सिन्दूर

से रंजित कर देता है।···खुश होकर बधाइयां दो। 'सुमंगली' हो गयी।' सिन्दूर बुहारी' के नेग के लिए देखो नेगी-जोगी हल्ला कर रहे हैं।···जीवन का एक अध्याय समाप्त।···लेकिन समाप्त कहां? अभी तो इधर शुरुआत है।···क्या करोगी? कहीं खुशी, कहीं गम। और कहीं खुशी कि गम, पता नहीं चल रहा है। बाहर से गम, भीतर से खुशी।···ज़रा गौर करो इस गीत की पंक्तियों पर—

बाबा हो बाबा पुकारीला, बाबा न बोले रे।
बाबा की बरिअइयें सेनुर बर डालेले रे।

बस, अब तुम चलो मिस, जनवासे में चल चाहो तो चाय पियो। अब यहां औरतों का अपना करमट शुरू होगा। या, देखना चाहो तो देखो चुमावन।···शायद तुम बाहर चलना पसन्द करोगी। गठबन्धन, कंकड़बन्धन, चुमावन, मौरखोलाई, चटावन और गुड़गुड़वावन आदि तक तो ठीक है पर कोहबर में वर-कन्या के पहुंचने के बाद सहेलियों द्वारा की गयी अपने इस प्रेमी की प्रेम-दुर्गति तुम क्या देख सकोगी? सो भी, उसकी धर्मपत्नी की उपस्थिति में? तुम्हारा आधुनिकता का गणित बैठेगा?

५०

हाय रे कवि खोरा। आखिर तुम भी सोटा ठकठकाते राशन की दुकान पर पहुंच ही गये। रामरूप को सख्त अफ़सोस यह सोचकर हुआ कि क्या सचमुच इस अन्नाभाव के दौर में इधर खोरा खाली-खाली जाता है? ओह, कविवर, तूने नाहक तकलीफ की। पास ही गंगाजल मिल जाता। राशन की दुकान तो सरकारी हाथी का दांत है। इस भ्रष्टाचार के सागर में बड़े-बड़े डूब गये तो मेमना पूछे कितना पानी? मुंह लटकाये, क्रोध से पागल और खीस का बारूद बनाये अब आप कथा का तोप लगाकर इस राशन की दुकान को उड़ा देना चाहते हैं। तो, उड़ाइये। लम्बे-चौड़े बोर्ड के नीचे फाटक, फाटक पर लटकता बड़ा ताला और उसके पास एक नोटिस, 'दुकान बन्द है।' क्यों भाई, क्यों? मौखिक सूत्र कहते हैं, दुकानदार तीन-चार दिन का निकासी पर गया है। कुछ और जानकार सूत्रों से समाचार मिलता है, सारा राशन निकासी के बाद तुरन्त वहीं ब्लेक हो गया। अब खोरा तुम क्या कहते हो? क्या यहीं दुकान के सामने अनशन करोगे? धरना दोगे? हां तुम यह भी कर सकते हो मगर फिलहाल राशन की आशा में जुटे नंगे-भूखे अभागे लोगों को बटोर कोई कथा सुनाने की घोषणा कर रहे हो। अरे हां, कौन तुम्हारी कथा सुनना पसन्द नहीं करेगा? घोर अभाव में कुछ भी तो मिले। राशन न सही, किस्सा-कहानी ही सही। वक्त तो कटे। यह वक्त कितना भारी हो गया है। पानी बरसा नहीं। आर्द्रा नक्षत्र आज उतर गयी। गांवों में

त्राहि-त्राहि मची है। खेती की शुरुआत वाले सारे उल्लास पर पानी फिर गया मगर प्यासी धरती प्यासी ही रह गयी।

रामरूप घर से यहां बबुनीबाजार ब्लाक पर डॉक्टर के यहां आया अपना ब्लड-प्रेशर पुनः चेक कराने। चलते-चलते मां ने कहा था, 'आजु अदरा (आर्द्रा) उतरि रहलि बा त खीर बनी। रात में कतहीं मति बेलमि जइह। अदरा के माई कहि गइलि हई कि ढेर ना जुरे त दोहनों में रीन्हि के खीर खा लीह स।' रामरूप को इस लघु त्यौहारी सूचना से खुशी नहीं हुई। पानी इसी तरह नहीं बरसा तो क्या होगा? सरकार उधर खेत-खेत में पानी पहुंचाने की घोषणा स्वराज्य हुआ तभी से दुहरा रही है और इधर हालत यह कि ऊंट के मुंह में जीरा जैसा एक बिगड़ा सरकारी नलकूप खड़ा है। लोगों के निजी नलकूप पर बिजली-डीज़ल के अभाव का वज्र गिरा है। सारा भरोसा अभी आसमान का है, सो वह तमतमाये क्रुद्ध चेहरे की तरह अभी कितना जल रहा है? शंकरजी का अरघा भरा जा रहा है, हरिकीर्तन हो रहा है और लड़कियां हरपरवरी गा रही हैं, मगर सब बेकार।

घर से निकल नगीना की गली में मुड़ा तो आगे रामरूप देखता क्या है कि छोटी-छोटी लड़कियां गोपी बनिया के चबूतरे पर पानी गिरा-गिराकर लौट रही हैं और गा रही हैं—

सुरुकहि धनवा के चिउरा ए बासुदेव,
गइया रे सुरहिया के दूध।
जेवन बइठेले बाबा बासुदेव बाबा,
बादरि घेरे ले गंभीर।
खात-पियत बाबा बादरि लागे ले,
अंचवे की बेरी छछकारि।
ओखरि अइसन बूनवा ए बासुदेव,
मूसर अइसन धारि।

रामरूप को गीत सुन रोमांच हो गया। इस रोमांच में अकाल की पीड़ा के साथ अचानक एक पीड़ा और मिल गयी।···याद आया वह रुपिया के आदमी को तार देना भूल गया। ओह, वह किस दुर्गति में होगी?···यहां लड़कियों के झुंड में दिखायी नहीं पड़ रही है। वह भला गीत क्या गायेगी? रामरूप अत्यधिक मर्माहत हो गया। उसकी आंखों में आंसू आ गये पर क्या वासुदेवजी भी द्रवित होंगे? कलेस कटेगा? किन्तु वासुदेवजी कितने-कितने का कलेस काटेंगे? यहां बबुनी बाजार राशन की दुकान पर जुटे खोरा सहित सैकड़ों निराश लोगों के कलेस का क्या होगा? खोरा की कथा भी क्या करेगी? किसी सूतजी के अठासी हजार ऋषियों की भांति क्या यह खोरा की कथा देश के कोटि-कोटि संत्रस्त जन सुनकर

चैतन्य होंगे ? कमाल है कि कवि खोरा भादों-क्वार वाले 'अनन्त देव' की कहानी को राशन की बन्द दुकान पर 'अन्न देव' की कहानी बनाकर सुना रहा है। शायद यही उचित है। अनन्त देव ने आज अन्नदेव के रूप में अपनी महिमा का विस्तार किया है। कथावाचक खोरा कवि इधर क्षण-भर के लिए मानो अन्नदेव की मार से सनसनाती अंतड़ियों की पीड़ा में पलकें बन्द कर डूब रहा है और इस प्रकार दुख-अभाव की नदी पार करने की चेष्टा करता है। उस समय उधर कथा में कौण्डिन्य मुनि अनन्त देव की खोज में दर-दर की खाक छान रहे हैं। कवि का अन्तस् इधर विक्षोभ में झनक रहा है और उधर कौण्डिय मुनि पशु-पक्षी, नदी-पहाड़ और जड़-जंगम सभी से अनन्त देव का पता पूछ रहे हैं। इधर कवि की आंखों के सामने ताला लटकते बन्द राशन की दुकान का दृश्य है जिसमें अदृश्य अन्नदेव की उपलब्धि की आशा रह नहीं गयी, उधर कथा में अनवरत खोज के बाद मुनिवर को उदधि-गर्भ में छिपे अनन्तदेव मिल जाते हैं। क्या विचित्रता है !

और फिर कथा अचानक उछाल ले कहां गयी ? खोरा स्वयं कौण्डिन्य मुनि की भूमिका में आ गया। असली कथा अब शुरू हुई। अभी तक की कथा शायद भूमिका थी। यह तो ग़जब की सनसनी उत्पन्न हो गयी। रामरूप का नाम भी उछला। '···आप लोग महुवारी के रामरूप मास्टर को जानते होंगे। मिलें तो खोरा की कथा का मरम उनसे पूछियेगा।'···बेचारे खोरा को क्या पता कि इसी भीड़ में रामरूप इधर एकान्त में बैठा है। हवा गरम हो गयी है। जब-तब उसके तेज झोंके आंच से बुरी तरह शरीर को सेंक देते हैं। यह तो दो-दो नीम के पेड़ों की माया है कि खोरा की कथा इस अकाल की तपती छाया में आराम से चल रही है। बगल की झोंपड़ी में रामरूप कुछ परिचित लोगों के साथ बैठा है जो उसे देख उसके नामोल्लेख के सन्दर्भ में मुसकरा रहे हैं। क्या कहे, खोरा के स्नेह को ! अब बैठे रहना मजबूरी थी। उसे डॉक्टर से मिलने के बाद सड़क के विषय में ब्लाक पर जाकर पता करना था। सुना कोई खाद्यान्न योजना इधर के लिए स्वीकृत हुई है। शायद स्टेशन-महुवारी रोड का सपना इस योजना में साकार हो सकेगा। सड़क के सन्दर्भ में उसका मन तो निराश होकर मर गया है। फिर भी आशा बनी है। वह कहां पिंड छोड़ रही है ? कथा के इस कथक नायक कौण्डिन्य मुनि को भी तो कोई आशा ही है जो भटका रही है। मुनि की कथा-यात्रा में यह कैसा दृश्य है ?

सामने एक महुवा का बड़ा-सा पेड़, जिसके नीचे ताड़ की पत्तियों की बनी एक टूटी-सी नन्हीं झोंपड़ी, लगभग दो-ढाई हाथ ऊंची। दरवाज़ा कहां-किधर है, पता नहीं। पास में एक और झोंपड़ी। यह झोंपड़ी मानो उस झोंपड़ी की बच्ची है जिसमें कुछ बड़बड़ाहट है, कुछ हां-हूं जैसी इन्सानी ध्वनि है। इन्सान में भी कौन ? वह एक मां है। बच्चे को सुलाने की कोशिश कर रही है। बच्चा सो

नहीं रहा है। वह कई दिनों का भूखा है। उसकी चीख से घबराकर एक सूअर उस झोंपड़ी से निकलकर भागा। मां की थपकियों और अस्फुट शब्दों के मन्त्र नाकाम सिद्ध हो रहे हैं। इधर झोंपडी से भगा सूअर बाहर आकर वहां खड़ा हुआ जहां दोनों झोंपड़ियों के बीच में एक सूअरी चारों पैर फैलाकर अपने बच्चों को दूध पिला रही है। वहीं एक-पर-एक करके रखे हुए कई औंधे मुंह अल्मूनियम के काले पिचके तसले पड़े हैं। तसलों के पास ज़मीन पर एक जीर्ण मानव की ज़िन्दा लाश खर्राटे भर रही है। ग़ज़ब की नींद है, एकदम सुखनींद। वैसी झोंपड़ी में ऐसा सुखी इन्सान! कौण्डिन्य मुनि को इसी आदमी से सर्वप्रथम अन्नदेव का पता-ठिकाना पूछना चाहिए।

'हे दुनिया के भाग्यशाली इन्सान। कितनी आराम की नींद ले रहे हो? मैं तुमसे पूछ रहा हूं कि क्या तुमने अन्नदेव को देखा है?' कौण्डिन्य मुनि पूछते हैं।

'मुझसे पूछ रहे हैं?' आदमी जागकर उत्तर देता है, 'मैं क्या बताऊं? उस दिन उस देवता की खोज में मैं गठिया गया था। वहां 'कक्कन, का भोज था। दुलहे एम० एल० ए० साहब ने खदेड़वा दिया।···मारो सालों को, ये सब डकैत हैं।···सो, हे मुनि जी, धरती छोड़ अब स्वर्ग में उनको जाकर खोजिये।'

अन्नदेव की खोज का प्रथम अध्याय समाप्त। अब कौण्डिन्य मुनि स्वर्ग में उनका अनुसन्धान करने चले।

लोगों ने बताया यही स्वर्ग है। व्यावहारिक जगत् में इसे विधान-सभा कहते हैं। देव, दनुज, गन्धर्व, किन्नर, यक्ष और नर-नाग की भारी भीड़ है। सब लोग धवल वस्त्र से सुशोभित जैसे अभी-अभी क्षीरसागर से निकलकर चले आ रहे हैं। वहां मोटी शान और मज़बूत कानून देख मुनि का दिल घबराया, दिमाग चकराया और बुद्धि को काठ मार गया। यहां पता नहीं क्यों रंग-बिरंग का हल्ला हो रहा है। हल्लों में एक हल्ला यह कि बाबू हनुमानप्रसाद का बेटा विधायक भुवनेश्वर प्रसाद इतना हल्ला करता है कि सरकार द्वारा मजबूर होकर खाद्यान्न योजना के अन्तर्गत गठिया से सड़क द्वारा रेलवे स्टेशन को जोड़ा जाना स्वीकृत हो जाता है। अरे देखो, अपने विधायक का कमाल, गया नहीं कि सड़क आ गयी।···जहां जनता अरक्षित है, जहां दिन में बारह बजे डाका पड़ता है, जहां बाढ़-बरसात में लंका का दृश्य हो जाता है, जहां अभी कोई विकास कार्य नहीं हुआ, जहां एक ओर बाढ़ से फसल मारी गयी और दूसरी ओर अवर्षण का वज्रपात हुआ तो भुखमरी की आशंका बढ़ी···ऐसे में बन जाने दो एक सड़क कि एक पंथ दो काज। ···वह 'दूसरा' काज कौन?

स्वर्ग की सभा में धरती की भुखमरी की गूंज। कौण्डिन्य मुनि धीरतापूर्वक आगे बढ़ो,···देखो, यहां अन्नदेव का असली पता मिलेगा।···फिर ज़रा महुवारी वाली सड़क के बारे में जान लो।··· हैं, हैं। महुवारी के नाम से विरोधी विस्फोट

कैसे हो गया? कितनी महंगी पड़ी महुवारी रोड की उछाल। कुर्सियां उछल-उछल आपस में लड़ रही हैं। मनवा-मनई कोई नहीं, स्वर्ग-सभा की कुर्सियां गुत्थमगुत्थ। आगे और भयानक कक्कुट कटौवल। जितनी कुर्सियां, उतनी लड़ाई। ओह, यह शहरी झगड़ा है? कोई धरहर करने वाला नहीं, मुनि, तू ही आगे बढ़ झगड़ा बरा दे।···मगर अर्र···र्र···र्र···र्र···यह क्या? भाग बे बेवकूफ मुनि कौण्डिन्य। यह लाठी चार्ज कहलाता है और फाटक पर लग गया दफा एक सौ चौवालीस।··· चलो चार-पांच लाख की कोठी में हवा खाने। वहां शायद कुछ और अन्नदेव के खोजी भाई मिलें।···उनके लाल-पीले सलाम से घबराना नहीं।···अरे, सोचो तो इस मुल्क में कितने करोड़ कौण्डिन्य मुनि हैं?···कोठी से उलटा-सीधा बोल निकले तो देहाती कुत्ते की भांति बिना पीछे देखे सरपट भगो मुने।···इति जनतन्त्र पुराणे, षष्ठ योजनाखण्डे, द्वितीय जनसेवकोऽध्यायः समाप्तः। बोलो अन्नदेव की जै।

अन्नदेव की जै। जै। जयकार गूंज उठी। नीम की पत्तियां मरमरा उठीं। खोरा ने हाथों को मुंह पर बांध शंख की ध्वनि निकाल दी।

रामरूप सन्न। उसे लगा, अच्छा होकर भी कहीं वह ब्लड-प्रेशर फिर न उभर जाय। उसका मस्तिष्क तनाव के मारे फटने लगा। यह खोरा क्या कह रहा है? क्या सचमुच सड़क महुवारी से उठकर गठिया चली गयी? सारे किये-कराये पर पानी फिर गया? ···या कि खोरा यह सब कल्पना की तरंग में बक रहा है। आगे वाली बातें तो कल्पना लगती हैं पर यह सूचना सही लगती है। खोरा के पास तो जैसे हर नयी सूचना के लिए बेतार का तार लगा है। इधर रामरूप लगभग एक-डेढ़ सप्ताह तक कहीं घर से बाहर हिलडुल नहीं सका। यही समय था कि घर का काम पूरा करा देता। ग्रीष्मावकाश के बाद विद्यालय खुल जाने पर कहां मौका मिलता? फिर यह तो अवर्षण है कि ठेल-ठालकर घर का काम पूरा हो गया नहीं तो आर्द्रा नक्षत्र की पनियारी में कितनी दिक्कत पड़ती।···तो मजदूर-मिस्त्रियों से घिरा और लोहे-लक्कड़ के साथ माटी-गारा में फंसा यह मास्टर कैसे जानता कि बाहर कैसी-कैसी ज़हरीली खिचड़ी पक रही है? पड़ोसी गांव के रिश्तेदार एम० एल० ए० को अपने ही परिवार ने विद्रोही हो जिता दिया और अच्छा इनाम पाया?···इनाम तो उस दरबार से विवाह हुआ तभी से मिल रहा है। अभी हाल में एक ताजा और ज़बरदस्त इनाम मिला। गले से बात को उतारो रामरूप कि डाका तुम्हारा ही कुचक्र था।···सांय-फुस की इशारे वाली बातों के भी पंख होते हैं। कैसे चुपचाप उड़ रही हैं।···खैर, रामरूप तुम ब्लड-प्रेशर के कीटाणुओं को करइल के आकाश में उड़ने दो। तुम खोरा की तीसरे अध्याय की कहानी सुनो।

···हाय अन्नदेव, हाय अन्नदेव। तुम्हारे बिना सूरज के आकाश में चमकने पर भी दिन में चारों ओर अन्धेरा प्रतीत हो रहा है। तुम्हारे बिना अपने ही हाथ-

पैर सूने पड़कर थरथरा रहे हैं। खेत में नहीं, तुम्हारे विना लगता है कलेजा में फावड़ा चल रहा है। कोई चीज़ छनछना रही है और मुंह से बोल नहीं फूट रहे हैं। कहां जाऊं? तुम्हें कहां खोजूं? चारों ओर हंगामा मचा है। बड़ी भीड़ है। भारी हल्ला है। अन्नदेव की सवारी ही तो नहीं आ गयी? नहीं, नहीं। यह तो कुछ और ही नज्ज़ारा है।···दो नौकर खड़े-खड़ा लड़ रहे हैं और मालिक खड़ा तमाशे का जायज़ा ले रहा है। तमाशे-तमाशे में मज़ा ले रहा है। नौकर मल्लयुद्ध के बीच वाग्युद्ध भी कर रहे हैं—

'तुम गदहे हो। तुम क्या मालिक की सेवा करोगे?'

'तुम पेट फूली हथिनी हो। तुम्हारे किये क्या होगा?'

'मैं तो सब ऊपर-झापर से ही कर लेता हूं। मालिक की कानी-कौड़ी नहीं लगती।'

'और यह क्यों भूल जाते हो कि मेरे पास जानवरों का कैसा सोर्स है? तुम जो काम तीस दिन में करोगे, उसे मैं एक घंटे में निपटा दूंगा।'

और इस रहस्यमय संवाद के बाद दांत चिआरकर मालिक बोलता है—

'हे मेरे शुभचिन्तको, ज़िन्दाबाद। ईमानदारों की भीड़ में भला सबसे बड़ा ईमानदार खोजना मूर्खता नहीं होगी?'

तभी अन्नदेव की खोज में वहां पहुंच मुनि कौण्डिन्य पूछते हैं, 'हे सज्जनो, आप लोगों ने क्या अन्नदेव को देखा है? मैं उस देवता की तलाश में तीन लोक चौदहों भुवन की खाक छान रहा हूं। मुझे उनका पता बताइए।'

'यह आफिस है मजूरे। अन्न सड़क पर काम करोगे तब मिलेगा।···चौदह भुवन नहीं तू बस एक भुवनेश्वर के बाप के पास जा।···श्री खूबरामजी ठेकेदार साकिन मौजा महुवारी उर्फ खुबवा से मिल।'

'यानी धरते झांपी बवण्डर?···सरकार, बस एक बात और।' लेकिन कौण्डिन्य मुनि की बात सुनने की वहां किसे फुरसत थी? सिगरेट पीते हुए, उसके धुएं से वैसी ही भाप की रेखायें बनाते हुए जैसी भात पकते समय निकली हुई भाप से बनती हैं, वे लोग आगे बढ़ गए। उस धुएं में मुनि को लगा, देहरादून वाले चावल की सुगन्ध निकल रही है। फिर लगा, साथ ही दोहरीघाट वाली दाल की सुबास भी है। फिर लगा, उन सज्जनों के धवल वस्त्रों से आटे की चमक निकल रही है और फिर अपने मन की सब्जी बनाते कौण्डिन्य मुनि आगे बढ़े।···अब तीन बार शंख बजेगी।

अथ चतुर्थोऽध्यायः। अन्नदेव का कोई सुराग नहीं मिला। खोरा कवि ने अपने पीतल के बाल्टीनुमा कमण्डलु से जल ग्रहण कर कथा को आगे बढ़ा दिया।— कौण्डिन्य मुनि को निर्जन में चलते-चलते काफी देर हो गयी थी और कहीं कोई मिल नहीं रहा था। बहुत हैरानी के बाद धीरे-धीरे गांव नज़र आया। आशा बंधी

भाई लोग मिलेंगे और वे ज़रूर मदद करेंगे।···आगे एक गांव में एक बैठकखाना जिसमें एक छोटी-सी सजी-सजायी, महात्मा गान्धी से लेकर इन्दिरा गान्धी तक के चित्रों से शोभित कोठरी तथा कोठरी में चारपाई पर एक लम्बा-चौड़ा बहुत रोबीला काला आदमी बैठा है। वह आदमी मारकीन की धोती-बंडी पहने हैं। सारे शरीर पर भालू की तरह मोटे-मोटे बाल हैं। बात-बात में हुंकड़कर खोंखता है। उसकी चारपाई के आगे रेंड़ी का ताज़ा तेल पिये चमरौधा पड़ा है और पाये से टिकी मिर्जापुरी पड़ी है। उसके सामने कुर्सी पर एक धप्धप् धवल खादी की पोशाक में एक गोरा-गदकारा अति प्रशान्त जैन्टिलमैन जिसके बाल खिजाब में रंगे हैं, बैठा है। उसकी रतन-जड़ित अंगूठियों वाली उंगलियों में जलती सिगरेट इस प्रकार शोभा दे रही है जैसे सरकार के हाथ में जनता। उस व्यक्ति के आगे दो बड़े-बड़े एअरबैग रखे हैं। मुनि अपनी अन्तर्दृष्टि से जान जाते हैं, बैग में क्या है ? बावजूद अति हैरानी के उनकी जीभ पर पानी आ जाता है।···मगर, यहां आग-चिलम वगैरह कहां मिलेगी ? खैर, भोले बाबा, जैसी तेरी मरज़ी।···फिलहाल बूटी नहीं कौण्डिन्य मुनि को अन्नदेव के दर्शन चाहिए।···मगर ये लोग तो कुछ मोल-तोल कर रहे हैं। अरे, ये नेताजी सीधे आसाम से आ रहे हैं ?···हें हें हें हें··· कितने महीने बाद तो जाकर सरकार ने याद किया है।···अब कोई गड़बड़ नहीं होगी।

ओह, मुनि। ये तो प्राइवेट किस्म की बातें कर रहे हैं। उचित नहीं है सुनना। उधर कुएं पर चलकर बैठो।

'भीतर चारपाई पर बैठे सज्जन कौन हैं ?' मुनिजी एक सेवक से पूछते हैं।

'अरे, तुम यह भी नहीं जानते हो ? ये होपजी के बाप पोपजी हैं।' सेवक उत्तर देता है।

'ये क्या करते हैं ?'

'ये अन्नदेवजी के पास जाने का टिकट देते हैं।'

यह सुनना था कि मारे खुशी के मुनिजी बेहोश होकर गिर पड़े। होश हुआ तो आकाशवाणी हो रही थी—नागरिको और ग्रामीणो, अपना मनोबल बढ़ाओ। अन्नदेव के नाम टेलीग्राम कर दिया गया है। करइल क्षेत्र के लोगों को स्वयं दर्शन देने के लिए आतुर हैं। बबुनी बाजार में राशन की दुकान के रास्ते पहुंचने में पता नहीं कितनी देर लगती। सो वे बहुक्म पावरफुल पोपजी के तहसील से यहीं रातों-रात बैलगाड़ियों पर लदे चले आये और कोठरी में समाधिस्थ हैं। बबुनी बाजार की जगह अब काले बाजार में लाइन लगाओ। पोपजी से टिकट लो। इति चतुर्थोऽध्यायः।

सुनो···रामरूप सुनो। सब अद्भुत, सब अकल्पित। बुद्धि चौंधिया गयी है। असलियत है कि जादू ?···अब आखिरी अध्याय।

अन्नदेव के दर्शनार्थ टिकट मिल रहा है। चलो अभागे, चलो भूखे-भिखमंगे; चलो अकाल-अवर्षण से आतंकित दईमारे। चलो साक्षात् प्रेतो, बिलबिलाते कंकालो, चलो···लाइन लगाकर चलो, फावड़ा-खांची लेकर चलो। अन्नदेव की आभा स्टेशन-गठिया रोड पर उतरी है।···वहां गदहे नाच रहे हैं। हाथी उछल रहा है। जानवरों का सोर्स रंग ला रहा है। कौण्डिन्य मुनि अपना टिकट ऊंचा करते हैं। मेरे पास टिकट है। फाटक खुलने दो। बिना अन्नदेव के दर्शन के यह दस्तखत कैसा?···अरे भाइयो, ये कौन देवता हैं? ये तो दो-दो के नोट देवता हैं, कागज के। और ठोस अन्नदेव क्या हुए?···क्या कहा, वे गठिया में सुग्रीवजी साहु की दुकान पर बिक रहे हैं?···यह चक्कर तो तुम्हारी समझ के बाहर है मुनि। देखो, तुम खुद कहीं चक्कर खाकर गिर न पड़ो।···

तो हे सज्जन श्रोताओ, खोरा ने कथा के पांचवें अध्याय का अन्त करते हुए कहा कि कौण्डिन्य मुनि जब बेहोश होकर गिर पड़े तो उस बेहोशी के समुद्र में उनको अन्नदेव का दर्शन मिला। ब्लेक-सागर में ब्लकवेशी अन्नदेव तब कलियुग के अखबार वालों पर बहुत नाराज़ थे कि उन्होंने खाद्यान्न योजना की मजदूरी में धांधली और मजदूरों को मजदूरी के रूप में मिलने वाले अन्न के ब्लेक का बहुत साहस के साथ पर्दाफाश क्यों कर दिया? क्यों होप सहित पोप के प्रभाव को चुनौती दी?

५१

सचमुच अखबार वाले ने हलचल मचा दिया था। बाबू हनुमानप्रसाद भीतर से बहुत बेचैने थे। याद आया, यही 'प्रकाश' का संवाददाता और नवीन का दोस्त क्रान्तिचरण उस दिन महुवारी रोड वाले बम-काण्ड में बी० डी० ओ० के साथ था और उनके वहां उपस्थित न रहने पर भी अखबार में सारा दोष उन्हीं के ऊपर घहरा दिया था। उसने उन्हें नक्सली आतंक का सूत्रधार कह कितना कीचड़ उछाला था? पता नहीं पीछे क्यों पड़ा है। क्या सचमुच विरोधी पार्टी का पेपर है? अरे नहीं। सारा विरोध 'घास' का है। लगता है इसके आगे 'डालनी' होगी। यह आदमी तो बहुत छोटा है परन्तु इसकी कलम से बदनामी बहुत बड़ी हो गयी।··· लेकिन इससे होता क्या है? अब शहरी रोग जैसे अखबारों में छपने से सचमुच कुछ नहीं होता है। ज़माने की फसल काटने वालों के साथ सरकार और उसकी व्यवस्था का हाथी अपनी चाल से चलता रहता है और अखबार वाले भूंकते रहते हैं।···वे भी इसे जानते हैं, पर क्या करें? यह उनकी सेवा नहीं व्यवसाय है। कीचड़ उछालने से व्यवसाय ज़रा तगड़े में चलता है।···जीने-खाने की समस्या तो सबके सामने है। ऐसे उसकी ओर कोई नहीं देखता है तो यह साधनहीन जिले का फटीचर पत्रकार

आंखों में कलम घुसेड़ देता है।···जनाब, हम भी हैं। कुछ हमें भी, कुछ हमारे 'पत्र' का पेट भरने के लिए मिले।···तो, मिल गया मसाला कि विधायक बेटे के शपथ लेते-लेते जालिम जमींदार बाप स्मगलिंग, ब्लेक मार्केट और भ्रष्टाचार में जोर-शोर से जुटकर क्षेत्र की जनता की छाती पर कोदो दलने लगा। ···मोटी हेड लाइन लगाता है, 'सैंया भइले कोतवाल !'···

विवाह के सिलसिले में पिछले मास से जो हंसी-खुशी चहल-पहल चली आ रही थी अचानक उसके शान्त हो जाने पर जो एक जड़ सन्नाटे-सा अनुभव होने लगा था उसे तोड़कर अखबारी खबर ने बाबू हनुमानप्रसाद को सचमुच पनपना दिया था। पानी नहीं बरसा तो खेती का मनसायन भी शुरू होने से रह गया था। उधर से भी गहरी चिन्ता और उदासी थी। चुनाव और विवाह में बझे रहने के कारण बीज की बेहन भी सन्तोषजनक रूप में नहीं डाली जा सकी। खेती के नरम होने की आशंका से घबराहट स्वाभाविक थी। घबराहट अपने ही घर के छिपे दुश्मनों से भी क्या कम है ? उधर गोली लगी, इधर डाका लगभग पड़ ही गया। अब आगे पता नहीं क्या होगा ? बाहर से सब ठीक है। भीतर पता नहीं कहां क्या मथ रहा है कि रह-रह विस्फोट हो जाता है।···इस डाके की घटना ने तो इज्ज़त धूल में मिला दी। कलक्टर डिप्टी आदि साहब सूबा जन समाचार सुन दौड़े-दौड़े आते हैं तो क्या हुआ ? अपनी पीड़ा तो बस अपनी है। पता नहीं क्यों बबुआ इसे कुछ नहीं गुन रहा है।···वह सरकार न है ? फिर विवाह का ताजा रंग है। विवाह के बाद वापस आने पर भी भोज-भात और तरह-तरह की खुशी भरी हल-चलों का सिलसिला काफी दिन तक चलता रहा। उसमें डूबकर सारी चिन्ता भूली रही। सचमुच वह आनन्द-मंगल का प्रवाह कितना ज़बरदस्त था। मलिकाइन महारानी खुशी में इतना अगरा गयीं कि उसकी चपेट में आ गयीं। सो, अभी तक पूरी तरह नीरोग नहीं हुईं। और अब क्या नीरोग होंगी ? सुना है एक दिन मारे दुलार के बहू को स्वयं अपने हाथ से खिलाने लगी हैं तो उसने कुछ अंड-बंड कह दिया है।—मुझे यह सब 'बुचिया' और 'बबुनी' का गंवारू दुलार नहीं सुहाता है।···आपके हाथ गंदे हैं। नाखूनों में मैल भरी है। साड़ी में पसीने की बदबू है।

मलिकाइन दुलहिन की तबीयत तो उसी दिन अनमनी हो गयी जिस दिन कनिया उतरी थी। मगर धूम-धाम में किसी को कुछ पता नहीं चला। 'कक्कन छूटने' के दिन भी गाजे-बाजे और औरतों के जुलूस के साथ सारे डिहवारों की पुजइया में चक्कर लगा आयीं। बस, हवेली में घुसते-घुसते चक्कर खाकर गिर पड़ीं। हलचल मच गयी। हनुमानप्रसाद स्वयं दौड़े-दौड़े आए। देखा, औरतों ने उठा-उठाकर भीतर घर में सुला दिया है। चेत तो थोड़ी ही देर में हो गया पर बुखार से देह तप रही थी। सांय-सांय बोल रही थीं कि हमें कुछ नहीं हुआ है। बस दौड़धूप की हरारत है। जल्दी ही ठीक हो जाऊंगी। लेकिन कहां जल्दी ठीक हुईं ?

गांव के हेल्थ सेन्टर वाले डॉक्टर की पकड़ में रोग न आता देख दूसरे दिन जीप लेकर भुवनेश्वर बबुनी बाजार गया और एक प्राइवेट डॉक्टर आया तो आशा बंधी। डॉक्टर ने बताया शारीरिक श्रम इतना अधिक हो गया है कि बुढ़ापा संभाल नहीं सका है।

बात सही थी। दुलहिन के आने की उमंग में पैर जैसे ज़मीन पर पड़ते ही नहीं थे। कितने-कितने देवी-देवताओं की मनौती के बाद तो रामजी ने यह दिन दिखाया। एक ही आंख की तरई जैसा बबुआ, सो, उनका विवाह ऐसा पहाड़ हो गया था कि लगता था मलिकाइन के मन की साध मन में ही रह जाएगी और बिना बहू का मुंह देखे ही आंख मुंद जाएगी। दिन-रात एक ही अहक, कब बबुआ के माथे मौर चढ़ेगा? कब दुलहिन के आने से घर में अंजोर होगा और कब चिर-संचित अभिलाषाओं का भरापूरा जगर-मगर संसार लिये वही दुलहिन, साक्षात् गृह-लक्ष्मी और समूचे खानदान की एकमात्र दुलार की देवी डोली से उतर रही है तो फिर मलिकाइन के हर्षोल्लास और उछाह की कहां कोई सीमा है? आयु की सीमा को पीछे लांघ वे जैसे स्वयं के भीतर वाली नयी-नवेली दुलहिन को खींच-जगाकर फुदकती-चहकती सारा काम करती हैं, गीत गाती हैं, बिटियों से ठिठोली करती हैं और नतुहा लोगों को चुन-चुनकर गालियां देती हैं। उनकी इस खुशियाली का रंग छिटक-छिटककर सारे घर के प्राणियों को रंग रहा है। क्या आश्चर्य घर के भीतर कदम रखते ही पुरुष वर्ग का व्यक्ति भी इस रंग में डूब जाता है। पुरुष वर्ग की व्यवस्था-जटिल तनी मानसिकता तब कितनी ढीली पड़ जाती है और समरसता का तन्तुलन आता है। सच, ऐसे मांगलिक अवसरों पर हार्दिक उल्लास की पूर्ण अभिव्यक्ति तो स्त्रियों में ही होती है। रस की सच्ची प्यास भी उन्हीं में होती है और उसका स्रोत भी वहीं छलकता है। वास्तविक आनन्द घर के भीतर होता है, बाहर तो उसकी छाया मात्र।

कनिया अर्थात् नयी दुलहिन को लेकर टेक्सी के बाबू हनुमानप्रसाद के द्वार पर पहुंचते ही बैठक-खाने का सन्नाटा अचानक उत्सवी कोलाहल में डूब गया। रिश्तेदार लोग आंखें फाड़-फाड़कर देखने लगे। अरे, ये औरतें कैसे इतनी जल्दी इतनी तैयारी के साथ गाती-बजाती जुट गयीं। पालकी अब कहां चलती है? गयी डोली-कहांर की संस्कृति। अब क्या टेक्सी के आगे ही 'छाक' दिया जाएगा? मातादायी का गीत तो शुरू है, 'माता जे उतरेली बाग में···।' और परिछावन की तैयारी भी हो रही है। इन खुशियालियों के हड़कम्प में कितना आसान है पहचान लेना कि किसका नाम है मलिकाइन दुलहिन। अर्थात् भुवनेश्वर की मां, कुमुदजी की सास। उल्लास जैसे शरीर में अंट नहीं रहा है। और उसी समय तगड़े-तगड़े कहांरों के कंधे पर एक पालकी सुग्रीव के साथ आ गयी। भला इस धूप में इतनी लम्बी द्वार की दूरी लांघ और दो खंडों की दरखोल पैदल धांग नववधू हवेली के

द्वार पर जाएगी ? नहीं, लो पालकी हाजिर है। अब परम्परा के अनुसार एक ही पालकी में दोनों को, वर-वधू को टेक्सी से उतारकर बैठा दो। फिर गोद में एक छोटा-सा बच्चा डाल दो। कोहबर तक चलो। वहां कहार पालकी को लिये खड़े रहें। उसी पर खड़े-खड़ा परिछावन हो। छूटने दो मारे भार के कहांरों को पसीना। यह दिन क्या रोज़-रोज़ आता है ? फिर पांच सुहागिनें चलें। बहू का मांग 'बहोरने' के लिए। इसी मांग बहोरने में अर्थात् मांग में सिन्दूर चढ़ाने में ताक-झांक कर देख लें, क्या पाया है वहां से ? कैसी अंगूठी है ? कैसा शऊर है ? कैसे बैठी हैं ? और तब गाते-बजाते बहू को उतारने की तैयारी हो। मलिकाइन दुलहिन का हल्ला सबसे ऊपर।···आरे जल्दी करो बहिनी, हमारी फूल जैसी रानी टेक्सी में भूख-प्यास और घाम के मारे कुम्हला गयी होगी।···आज हमारी बेटी रामकली नहीं !···जितना ही हाथ-पैर फटाफट चल रहा है, उसी प्रकार मुंह···गीत कढ़ा देती हैं, 'हंसत खेलत मोरे बाबुल गइले, काहे मन धूमिल अइले ?' फिर बेटे की उस 'हरहंगी' सासु को गीतों-गीतों में दस हज़ार गाली।···नाइन उधर चौका पूरने के लिए गोबर और पानी आदि लिये हल्ला कर रही है। हां, आज तो सास-जी मलिकाइन को अपने हाथों से चौक पूरना होगा। खेलवाड़ नहीं है भरघर की दुलहिन रानी उतार लेना।···गान्धी आश्रम की रंगीन सिल्क वाली साड़ी, छलक-छलक जाती है, जल्दी-जल्दी में बढ़ा हाथ भी कांपकर इधर-उधर बहक जाता है। हरदेव-बो हल्ला करती है, 'सरकार जी चौक पूर रही हैं कि खलिहान छील रही हैं ?' फिर हंसी की बाढ़। एक ओर से निकल आती है सुनरी और मलिकाइन का हाथ पकड़कर चला देती है कि छन-भर में आटे की चटक लकीरों को। धवल धप्-धप् चौक तैयार। अब बहू को उतारो···अरे टूट मत पड़ो। दउरी-डाली कहां है ? वह फुलिया लेकर हाजिर है···रंगीन डाली, एकदम नयी, संख्या में दो। वर-वधू इसी दउरी में पैर डालते उतरेंगे, आगे-पीछे, क्रम से, पहले वर का पैर, फिर वधू का, पांच बार, पीछे की दउरी आगे करते···अरे देखो, देखो, बी० ए० पास कनिया कैसे दउरी में गोड़ डाल रही है ! काफी सावधान है। इसे संभालना नहीं पड़ रहा है।···अरे, दुनिया देखी है। यूनिवर्सिटी में पढ़ी है मामूली देहाती मत समझो। लजाना नहीं चाहती है पर लजा रही है। उधर सनातन गाना जारी है—

'हलबल हलबल कनिअवा चले
हरजोता के जामलि रे।
धीरे-धीरे मोरे बाबुल चले
पतिसाह के जामल रे।'

और कोहबर घर के द्वार पर पहुंचते-पहुंचते में मलिकाइन दुलहिन फिर एक बार छाती पर हाथ रख पछताती हैं—आज हमार बेटी रामकली यहां नहीं !···अरे,

कवनो है रे? चलो, द्वार छेंको। और किसी पट्टीदार की पुत्री आकर बहन वाले नेग के लिए खड़ी हो, इसके पूर्व झपटकर विद्या आकर खड़ी हो गयी। —'मैं भइया का द्वार छेंकूंगी।'

विद्या की अभी परीक्षा चल रही थी और उसके समाप्त होते ही भागी-भागी आयी। वर के प्रस्थान वाली परिछावन में नहीं तो आगमन की परिछावन में तो सम्मिलित हो ले। हां, वह सम्मिलित हुई, प्रसन्न भी हुई परन्तु औरतों के गला फाड़-फाड़कर गाने में वह सहयोग नहीं कर सकी। उसे लग रहा था, भूल जाय यहां वह यूनिवर्सिटी की पढ़ाई तो अच्छा। मगर यह सम्भव नहीं हो सका। वह नयी उतरती दुलहिन को देख-देख कितना कुछ सोच रही थी। यह शिक्षिता कैसे परम्परा पालन में जुटी है और उसके साथ उसका वैसा वाचाल विधायक भाई कैसे गाय की तरह सीधा हो चुपचाप सारा करमट झेल रहा है? वह कैसे इतना दब गया? उसे बारम्बार आशंका हो रही थी, यह अब डाली-दउरी पर ठोकर मार चल देगा। मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ और यहां तक कि द्वार पर पहुंच वह अपने को 'छेंकवाने' के लिए खड़ा हो गया। तब विद्या दूर खड़ी हो तमाशा क्या देखे? चलकर छेंक दे।

'हलो, विद्या? तुम?···वेरी गुड्ड।···बोल, क्या प्रजेन्ट लोगी?' भुवनेश्वर अचानक उसे देख खुल गया।

'प्रजेन्ट नहीं, भाई साहब, द्वार छेंकायी का नेग।' विद्या ने हंसकर कहा'

'कम ह्वाट मे···हरी अप प्लीज़। बोलो, क्या चाहिए?'

'विधान सभा का टिकट।'

और उसकी मांग सुनकर भुवनेश्वर ने ऐसा ज़बरदस्त ठहाका लगाया कि औरतें चौंक गयीं। और बोला—

'यानी तुमने मुझे विधायक से मुख्यमन्त्री बना दिया। शुक्रिया···आने दो अगला चुनाव।' कहते हुए दस-दस के पांच कड़कते पत्ते विद्या की मुट्ठी में चरमरा कर वह आगे बढ़ गया।

विद्या खिलखिलाती हुई इधर मुड़ी तो देखा, मिस कान्ता हैं, औरतों के दल से कटी अकेली बरामदे में खड़ी हैं। टेक्सी में साथ ही बरात से लौटी है। करइल की धूल का पाउडर चेहरे को थकान जैसा चिह्न उभरने के बावजूद आकर्षक बना रहा है। उस भरे घर में शायद कठिन कौतूहल की भांति अंट नहीं रही हैं। आने-जाने वाली औरतें एक बार देख लेती हैं। ये पैंट-कमीज़ वाली कौन है? लड़कियां मुंह में आंचल दबा मुसकराना प्रकट नहीं होने देती हैं। एक फुसफुसाती है, यह बेटवों की तरह झबर-झबर बाल और ऐसी फुसफुसाहटों में सारा घर जान गया कि भुवनेश्वर के साथ यूनिवर्सिटी में पढ़ने वाली उसकी दोस्त हैं। न्योते पर आयी हैं। बरात में भी गयी थीं और अब यहां 'तमाशा' देख रही हैं।···तो, देखो।

'आप कब आयीं ?' विद्या ने हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए पूछा ।

'बरात के साथ ही लौटी हूं ।···मैं तुमसे एक बात अभी पूछना चाहती हूं विद्या, पूछूं ?'

'हां, हां, खुशी से ।'

'विवाह के बाद आदमी कुछ और हो जाता है ?'

'हां, क्यों नहीं ? पहले एकहरा रहता है और विवाह के बाद दोहरा हो जाता है ।'

'दोहरा ?···क्या मतलब ?···खैर ।' मिस कान्ता चुप हो गयीं और कुछ आड़ी-तिरछी रेखायें चेहरे पर उग गयीं । फिर क्षण-भर बाद कोहबर घर की ओर इशारा कर बोलीं—

'उस घर में इतने गुलगपाड़े में जहां लड़कियां हाहा-हीही करती ढही जा रही हैं मगन क्या कर रहा होगा ?'

'कुछ नहीं दही-गुड़ चाट रहा होगा ।···शायद अपनी मिसेज का जूठा ।··· और बेचारा खुशियालियों के झकोरों को झेल रहा होगा ।···अरे देखो, वह निकल आया···बधाई भैया ।'

'अब चलो, बाहर चलकर चाय पियें ।' भुवनेश्वर ने विस्तृत मुस्कान फेंकते हुए कहा ।

'मैं तुम्हारी मिसेज से मिलना चाहती हूं ।' मिस कान्ता ने कहा ।

'अरे, टेक्सी में साथ-साथ आईं, मिल नहीं लिया ?' विद्या ने कहा ।

'कहां मिल पायी ? घूंघट किए मौनी बनी बैठी थीं ।'

'तब तो आज यहां मुश्किल है । आज तो पहिले-पहल उसकी सासजी यानी मगन की मां उसका 'मुंह देखेंगी' और जानती हैं मिस, क्या देना पड़ेगा ? ढेर सारे गहने, चिह्न, रुपया । और वह बेचारी उनका पैर पकड़ेगी । तो देखेंगी आप भी बहू का मुंह ?'

'अच्छा भई, तुम लोग देखो-दिखाओ, मैं तो बाहर चला ।' भुवनेश्वर कहता हुआ निकल गया ।

'मुंह तो देख लिया है···चलो, ज़रा भीतर देखें क्या तमाशा हो रहा है ? शायद सब तमाशा ही तमाशा है । इसी को कहते हैं विवाह ? आदमी को तमाशा बना दो ? टेक्सी से उतरने के बाद से ही तो देख रही हूं । अब यह लास्ट शो देख लें ।' मिस कान्ता ने कहा ।

'नहीं,···मैं यहीं से बता देती हूं वहां क्या हो रहा है ? वहां लड़कियों और बहुओं आदि का आज़ाद जमघट लगा है ।···'दाहाबरा' नामक एक देहाती करमट होगा । सात कोरे-कोरे पुरवों में सात चीज़ें···दही, भतुआ, चीनी, तेल, नमक, बारा और भात रखा होगा । कनिया बारी-बारी से सब को छू देगी । फिर उसका पूरा

इम्तहान होगा, कितनी 'बुद्धिमान' है।···उसके आगे सात दालपूड़ियां खीर के साथ रखी जायेंगी। कहा जायगा, 'कोहबर में ही भोजन करना होगा।' कनिया ने यदि डटकर खा लिया तो फेल और यदि नखों से मात्र टूंगकर छोड़ दिया तो पास। बैठेंगी आप भी ऐसे इम्तहान में ?'

'ओह ऐसा ?···मैं तो होती तो भई फेल ही हो जाना पसन्द करती। तुम्हारे गांवों में अभी बहुत पिछड़ापन है।···कैसे तुम्हारा वह प्यारा भाई यहां रहेगा ?'

'यहां कहां रहेगा ? वह तो कक्कन छूटते-छूटते भगेगा राजधानी की ओर।'

'हां ठीक ही है।···सब लोग भाग ही रहे हैं। मुझे भी जल्दी ही देश छोड़ देना है।'

'तो, कहां जायेंगी ?'

'संयुक्त अरब अमीरात में एक जगह है शारजा जो दुबई का एक अंग है··· तेल की अथाह सम्पत्ति वाला स्थान। वहीं मेरे एक फ्रेंड डॉक्टर हैं जो मुझे रिसेप्शनिस्ट के रूप में अपने दवाखाने में नियुक्त कर लेंगे। मुझे भारतीय मुद्रा के छत्तीस सौ रुपये प्रतिमास वेतन मिलेंगे।···आश्चर्य क्यों प्रकट कर रही हो ? इस समय दुबई लन्दन से सुन्दर और यूरोप-अमरीका तथा रूस के किसी भी महानगर से सम्पन्न और सुविधाजनक शहर है।···डॉक्टर अपने ऑफिस और निवास स्थान का किराया देता है डेढ़ लाख सालाना।···एक मरीज देखने पर कोई शेख उसे बिना मांगे फीस में हज़ार-डेढ-हज़ार थमा देता है। कार है, टेलीविज़न है, बीडियो है···यहां इंडिया में क्या है ? 'दाहाबारा' की दमघोंट भद्दगी में पड़े अपने लोगों से कोई उम्मीद भी तो नहीं।'

इसी समय दोनों हाथों में फूल के दो बड़े-बड़े चमकते कटोरों में खूब मोटी साढ़ीवाला भर पूर सजाव दही, ऊपर चीनी और बीच में चम्मच धंसा हुआ, लिये मलिकाइन दुलहिन आ गयीं। भुवनेश्वर ने बाहर से खबर करा दिया था।

'बिटिया बरात से लौट कब से खड़ी है और कोई इधर नहीं देख रहा है। सब···(एक भद्दी गाली) यहां अपने-अपने जोम में उतराई हुई हैं। बैठकर मुंह मीठा करो बिटिया।'

और उनके इतना कहते-कहते में बरामदे में दो कुर्सियां पड़ गयीं, उसके आगे कढ़ावदार नयी मेजपोश सहित एक छोटी टेबुल। कांपते हाथों से कटोरों को टेबुल पर रख अपने हाथ से पकड़कर उन्होंने मिस कान्ता को बैठा दिया। साथ विद्या को भी देना पड़ा। किंतु मिस कान्ता के साथ कुर्सी पर बैठ मुंह मीठा करते हुए उसे प्रतिक्षण लग रहा था कि वह इन भरे लोगों में एक प्रश्नचिह्न-सा बन गयी है। लड़कियां उसे देख-देख मुसकरा रही हैं। यह देखो···। वह स्वयं अनुभव करती है, उसे उन गांव की लड़कियों, बहुओं के साथ खुशी-खुशी 'कनिया उतारने' में हर तरह का सहयोग क्यों नहीं करना चाहिए ? क्यों उसे इस प्रकार कट जाना

चाहिए ? क्या पढ़ाई-लिखाई के कारण ? क्या उपयोग इस पढ़ाई का जो मुक्त खुशियों को छीन एक तनाव-अलगाव बन गयी ?

मिस कान्ता ने मलिकाइन की ओर देखा तो देखती ही रह गयीं। हाथ अभी भी कांप रहे थे। अंग-अंग से ऐसी निढाल थकावट प्रकट हो रही थी जो उल्लास की गहरी पर्तों में जोर से ढक दी गयी थी। सनकुट जैसे बाल बिखरे थे जिनके बीच मोटी सिन्दूर रेखा तट तोड़कर इधर-उधर बहती नदी की भांति फैल गयी थी। गला फट गया था और रह-रहकर खांसी आ रही थी। पैरों की महावर नयी नहीं थी। रात-दिन की दौड़-धूप में बूढ़ा पैर खूब घिसा था परन्तु अभी महावर की चटक वनी थी। पैरों में चप्पल नहीं था। साड़ी जितनी कीमती थी उस हिसाब से उसे न तो बांधने में सावधानी बरती गयी थी और न उसे संभालने-बचाने में। उल्लास भी लोगों को कितना अस्त-व्यस्त कर देता है! वह चेहरे की झुर्रियों को गाढ़ा करके भी आंखों की चमक उसमें ढाल देता है तो सुखी परिवार की मलिकाइन जैसी पुराने ख्यालों की बूढ़ी नारी को देखकर मिस कान्ता का अज्ञात आकर्षण स्वाभाविक था। किसी बुलाहट पर कुछ लड़खड़ाते कुछ खांसते-कराहते हुए जब मलिकाइन उधर चली गयीं तो मिस कान्ता ने पूछा—

'ये कौन थीं ?'

'ये विधायकजी की मां हैं।···घर की मालकिन। देख रही हैं, सबसे अधिक दौड़-धूप कर रही हैं, हल्ला-हड़कम्प कर रही हैं और लगता है, मारे खुशी के मर जायेंगी।'

···मगर, मलिकाइन दुलहिन मरीं नहीं। वह बाबू हनुमानप्रसाद की एक चिन्ता बन जीवित हैं। वे आजकल नित्य उन्हें देखने के लिए हवेली में जाते हैं। उनकी समझ में नहीं आता है कि धर्मपत्नी के चेहरे की सारी खुशी बुझ क्यों गयी है? क्या पढ़ी-लिखी बहू का आना ही जुलुम हो गया ?···ये पुराने ज़माने की बूढ़ी सास लोग नये ज़माने की बहुओं से अपने परम सम्मान अथवा समर्पित सेवा की आशा ही क्यों करती हैं ?···बहू के उतरते ही धक्का लग गया। मगर उस एक दिन की घटना के बाद की कोई चीज़ अब यह बताती क्यों नहीं ?···नहीं बतायेगी घर की इज्ज़त का मामला है। खैर, सब का अंडस शीघ्र दूर होने वाला है। सुना है, मगन उसका लखनऊ यूनिवर्सिटी में एम० ए० में एडमिशन कराने वाला है। ···अब कहां रहेगा परिवार का पुराना ढांचा ? बूढ़े-बूढ़ी लोग अपनी गृहस्थी अपने भरोसे ढो ले चलें।···हां, शान से ढो ले चलें। अब दुनिया में अपनी-अपनी ज़िन्दगी को चलाना है। वह चलेगी। अभी तो हनुमानप्रसाद पूरा-पूरा समर्थ है। अभी उसको कोई क्या सहारा देगा ? वह सबको सहारा देकर खड़ा कर देगा।··· लेकिन पत्नी को देखने के लिए हनुमानप्रसाद के पहुंचते ही यह चटाईटोला की सुनरी वहां से मुंह पर आंचल सरका चुपचाप खिसक क्यों जाती है ?

एक दिन वह इसी प्रकार जाने लगी तो हनुमानप्रसाद ने उसे रोका और वह जड़वत् खड़ी हो गयी तो कहा, 'शादी के पूरे धूमधड़ाके में तुमको हमने कहीं नहीं देखा।···कितनी खुशी हुई, खर्च हुआ और तुम ऐसी ही साड़ी पहने हो? कल से यह तुम्हारे शरीर पर नहीं दिखायी देगी, जाओ।'

साड़ी!

अपनी कोठरी में आकर कुंडी लगा वह फफककर चारपाई पर ढह गयी। अब वह कहां जायेगी? कितना सहेगी? ये मर्द उसका रहा-सहा मांस भी नोचकर खा जायेंगे। साड़ी! साड़ी!! साड़ी!!! उसके भीतर धौंकनी की तरह चलने लगी।···'वह' मरकीलौना यहां विवाह में मलिकाई के बहाने बरात से लौटने पर कक्कन छूटने के दिन तक टिका रहा और घर-द्वार सर्वत्र घूर-घूरकर जैसे उसे ही ढूंढ़ता रहा। बहाने बना बबुआ के साथ चक्कर काटता रहा। क्या उस चक्कर को सुनरी नहीं समझती थी? मगर बचते-बचते भी एक दिन मैं पकड़ आ ही गयी। ओह, कितनी ढिठाई से वह बैलों वाले घर में खींच ले गया।···सुनरी, चल फिर हमारे चटाईटोला। अब कोई तकलीफ नहीं होगी। तुमको नयी-नयी साड़ी देंगे। ···किसी तरह जान बचा भगी। फिर-फिर क्या सियार तरकुल के पेड़ के नीचे जायेगा?···मगर, फिर यह साड़ी का तरकुल यहां भी कपार पर गिरा तो?··· जैसी यह साड़ी, ठीक वैसी ही तो रही वह बैरिन बाली?

उसे याद आ गया, सब कुछ एक क्षण में याद आ गया। वह बाली···रंग-बिरंगी साड़ियां···चहकता दिन···महकता प्यार···फिर पैर भारी···तिकड़म··· हास्पीटल···मेरा लाल···वह गेहूं का खेत···कलेजा कढ़ गया···पावलपांड़े की वापसी···विवाह···युवा-मोर्चा···बाप-बेटा आमने-समाने···वह आखिरी दुर्गति··· पलायन···स्टेशन···गठिया···सुग्रीव···बाबू साहेब की हवेली···वह अभयदान, 'मैं नवीन नहीं, जाओ चैन से रहो।' फिर वही खुबवा, वही सुनरी, कहां गया वह विवाह?···और अभयदान की छांह में अब यह नया बूढ़ा नवीन फिर उसी लस-लसदार शब्दों में बोलता है, साड़ी!···तो अब मर जा सुनरी। जैसी वह बाली वैसी ही क्यों? उससे भी ज़ालिम यह साड़ी। बस अब मर जा। कोई रास्ता नहीं।···अथवा अब तू ज़िन्दा है ही कहां?···चल उठ, साड़ी वाला बजाज चला गया होगा। तू अपनी सेवा में जुट।

५२

चाहे अपने हाथ से खिलाये जाएं चाहे भगेलुआ द्वारा यह कार्य सम्पन्न हो परन्तु बैलों के खिला-फिलाकर हटा दिये जाने के बाद रामरूप को गहरी तृप्ति का अनुभव होता है। ऐसे में कभी-कभी शाम को वह अकेले में चारपाई पर ढरकता

है तो वैसे ही पड़ा रह जाता है। फिर उस दिन और कहां जाता ? कीर्तन में दो घंटा बैठकर लौट आया है और अब निगाह आसमान की ओर है। बादल छा गये हैं। उत्तर की ओर क्षितिज पर जिधर से सघन घन के सचल-अचल उमड़ते चले आ रहे हैं, रह-रहकर दूध-सी मुसकराहट लिये बिजली कौंधती है। उधर मठिया के पास भगवती-मन्दिर की कीर्तन-ध्वनि और तेज़ हो गयी, 'हे कृष्ण, हे माधव, हे मुरारे···।' बादलों ने गरजकर ढोल के ताल में ताल मिला दिया। कौन इतने जोश में ढोल पर चांटी दे रहा है ? अरे हां, दीनदयाल चाचा हैं न ? सीरी भाई और रामरूप जैसों पर पानी नहीं पड़ा तो कैसे बिजली गिरायेंगे ? शायद बरसने वाले बादल नहीं, ये झगड़े हैं जो सिर पर मंडरा रहे हैं। इधर एक मामला एक सौ बीस लट्ठा लम्बा और डेढ़ लट्ठा चौड़ा वाला और उधर एक तीन बीघे का पूरा चक। उस ज़ालिम के हाथों पता नहीं और कितने नये मामलों का इस नये असाढ़-वर्ष में उद्‌घाटन हो !···बरसो, बरसो हे मेघगण कि मज़लूम जन डूब मरें। ऐसों को डुबाने के लिए ही कीर्तन में डूब गया है चचवा। कीर्तन की विजय वैजयन्ती के समान आसमान में पनीले बादल लहरा उठे हैं। उत्तेजित उत्साहित लोग और ज़ोर लगा रहे हैं। हे कृष्ण, हे माधव, हे मुरारे !

धन्य हो भगवतीजी, किम्वदन्ती सत्य होने जा रही है कि जिस संकल्प के साथ इस स्थान पर हवन-पूजन और कीर्तन होता है वह पूरा होता है। अलबत्त सत्त है। ···तो क्या रामरूप भी सड़क के लिए अनुष्ठान करे ? क्या पूरा गांव सहयोग करेगा ? नहीं, यह अवर्षण-अकाल तो सामूहिक विपत्ति है इसलिए डरकर सभी जुट गये हैं। सड़क कहां सामूहिक समस्या बन पाएगी ? कितनी विडम्बना है कि इस देश की जनता सामूहिक हित के प्रति पूर्णतः उदासीन है। संकुचित स्वार्थ और गोलगिरोह के आगे जनहित हवा हो जाता है। यहां सड़क का नाम आते ही दीनदयाल की सरकारी पार्टी वाला आधा गांव चट विरोध में खड़ा हो जायगा। और इधर ब्लड-प्रेशर के बढ़ने का बन्दोबस्त हो जायगा। गुनाह बेलज़्ज़त। नहीं···रामरूप अब ब्लड-प्रेशर और नहीं बढ़ायेगा। अच्छा-सा मंत्र दिया सीरीभाई ने, बस देखते चलो। यह 'देखते चलो' का दर्शन ब्लड-प्रेशर की बहुत कारगर दवा है। डॉक्टर कहता है रोग है नहीं, तुम उसे बुला लेते हो। ठीक कहता है।···सोच-सोचकर मरें क्यों ? भीतर से उखड़कर आहत क्यों हों ? और भागें भी क्यों ? जो कुछ है खेल है, कुछ अपने बूते का, जिसके लिए डटे रहें और कुछ भाग्य का, जिसे 'देखते' चलें। यह भी कैसा नियति का ज़ालिम खेल है कि पानी ही नहीं बरस रहा है। बरसाने के लिए अपने बूते वाला कीर्तन किया जा रहा है, पूरी लगन से किया जा रहा है। शायद गांवों से उठे, पानी-पानी की रट लगाते, सूखे अकाल की पीड़ा से जर्जर समवेत स्वरों की पुकार से इन्द्र का आसन डोल उठा है।

रामरूप देखता है, खुदाई हुक्म के तलबगार मेघ काजल की पांखें खोले

उमड़ते-घुमड़ते चले आ रहे हैं। आसन्न सूखे से संत्रस्त किसानों की मुसकान के समान, ये धरती को उनके फटे दरारों के मुंह से पानी पिलाकर तृप्त करने वाले महादानी के समान और पशु-प्राणी के मुंह के अतिप्रिय आहार के समान तथा अकाल-दैत्य के विकराल अन्तक महादेव के समान ये बादल कितने वन्दनीय हैं। यह इनकी ही महिमा है कि अभिनन्दन में पता नहीं कितने दिन बाद अभी-अभी किसी ओर से, शायद हरि-कीर्तन से ही लौटकर उसके पिता बिलास बाबा ने भी हारमोनियम को झाड़ पोंछकर निकाला है और उधर अकेले-अकेले चौकी पर बैठकर चल रहा था, सा नी ध प म ग रे सा। सभापति तूलप्रसाद के घूमते-फिरते आ जाने पर कहां-कहां के सुरफाख्ता, करालमंज और बीरपंज जैसे तालों के नाम बातों-बातों में एकतरफा उछल रहे हैं। सभापतिजी तो बस मज़ा लेने के लिए हां-हूं करते चल रहे हैं। फिर पिताजी हारमोनियम खींच सुर भरकर कबीर का एक पद कढ़ाते हैं, 'कौन रंगरेजवा रंगे मोरी चुनरी' और गाना रोककर समझाने लगते हैं, यह खेमटा है, छः मात्रा की बन्दिश वाला, संगीत की समाप्ति पर चलता है···ताक धिना धिन् ताक धिना धिन्। और गाना पूरा करते हैं—

'पांच तत्त्व की बनी चुनरिया,
चुनरी पहिरि के लगी बड़ि सुनरी।
ताक धिना धिन्, ताक धिना धिन्।

···और गाना खतम होने पर सभापतिजी के प्रस्ताव पर उनके साथ जब पिताजी दुबारा कीर्तन पर चले जाते हैं तो रामरूप फिर अपने आज के एकान्त आनन्द में लौट आता है। उसे अजीब जैसा लगता है कि उसके बूढ़े और आजीवन गृहस्थी से निरपेक्ष रहने वाले पिता अपने बनाए धान के खेत के प्रति आजकल कितनी आसक्ति से भर गए हैं। खुद रामरूप से कैसे कुछ कहें? अपनी सफलता की सूचनायें भगेलुआ को देते हैं, ज़ोर-ज़ोर से बोलकर कि रामरूप सुने। कहते हैं—किसी तरह नलकूप के पानी से जिला रखा है मगर पौधे आसमान का पानी और बादलों की ठंडी छांव मांगते हैं। तीखी धूप से बेचारे मुरझा-मुरझा जाते हैं···चलकर देखो, कितनी अच्छी रोपाई हुई है। भरे खेत से हरा-हरा सरगम निकल रहा है। मन करता है मेंड़ पर रात-दिन बैठे रहें।···मगर यह सूखा मार गिराता है। अच्छा, भगवान की जैसी दया हो!

···और उन लोगों के जाते ही लेटे-लेटे रामरूप को भगवान की प्रत्यक्ष दया का अनुभव होने लगा। सोने का फ़ुहार जैसी बूंदों से भरपूर हवा का एक शीतल झोंका आया। झोंके में जैसे स्वर्ग-सुख का सौरभ-सन्देश भरा था।···लेकिन अरे···रे···रे···रे···। सब उड़ गया। अब फ़ुहारों का झोंका बरखा का झकोर कब बनेगा? बनेगा, रामरूप इसी प्रकार बाहर चारपाई पर डटे रहो। भींगने से मत डरो। सुनो, पूरब-उत्तर के कोने से ठीकेदार साहब का ट्रांजिस्टर कजरी उड़ा रहा

है, 'बदरिया घेरि आई ननदी।···अरे हां, ननदजी सावन की कजली के उल्लास में कैसे सम्मिलित होने जायेंगी ? बादल घिर आए हैं। घनान्धकार हो गया है। बिजली चमक रही है। मगर वर्षा ?···रामरूप को ऐसा लग रहा है कि यह गाना उसके कानों को नोच रहा है। गांव में सूखे का हाहाकार और रेडियो पर वर्षा-बहार। वहां न अकाल, न सूखा,। वहां बारह महीना वसन्त, जहां रहते नगरों के सन्त। कलकत्ता, बम्बई और दिल्ली की शृंखला···गगनचुम्बी अट्टालिकायें, धवल प्रकाश में नहाते नागरिक, अमरावती की अप्सराओं का वह लोक, घुंघरु की छमक और पायल की झनकार···बदरिया घेरि आई ननदी।···और तू अकालग्रस्त, दुर्भिक्ष पीड़ित, मरियल, मैले, फटेहाल गांव-गंवई का गंवार मास्टर, बस उसकी व्याख्या कर रह जा। क्या अर्थ है 'बदरिया घेरि आई ननदी' का ?···कि हृदय-हारी वाद्ययन्त्रों का अलौकिक आकर्षण, पारिजात का सौरभ, कुबेर का कोष, देवांगनाओं का लास-नृत्य, चेहरे पर चढ़ी आकाश गंगा के जल की धवलता और बिना वन का नन्दन-वन। कोई देवलोक की साम्राज्ञी···हां कौन ? कौन ? ज़रा ज़ोर लगाकर सोच रामरूप, कौन ? क्या उर्वशी ? या तुम्हारी रुपिया ? गोपी की अभागी बेटी ?

धत्तेरे की। रामरूप चारपाई पर उठ बैठा। लगा सारे शरीर पर छुन्न-छुन्न बीन्हने वाली लाल-लाल चींटियां चल रही हैं।···दुनिया में पापी वैषम्य जहां अन्तिम सीमा पर है वहीं है वह रेशमी रोवें वाली ताज़े फूल-सी रुपिया, रामरूप की प्रेमिका। याद आ ही जाते हैं वह प्रथम स्पर्श के नशीले किशोर क्षण, जैसे कल की ही बात है। ताज्जुब ! कल और आज में कितना अन्तर है !···एक युग के बाद उसे चुनाव के समय देखा और जो देखा, लगा, कहां है इसमें वह स्मृतियों की रुपिया जो सामने है घोर गरीबी का घिनौना कूड़ा है। क्या हम कूड़े से प्रेम कर सकेंगे ? परिवार, जाति, शिक्षा परम्परा, स्तर और स्वार्थ जैसी कितनी खाइयां हैं कि लोग कितनी-कितनी दूर कहां-कहां फेंका जाते हैं। फेंका गयी रुपिया कि अब रामरूप बात करते झिझकता है। वोट मांगने गया तो झूठी मुसकान चेहरे पर टांग, झूठे शब्दों को फेंकता रहा। इसके बदले क्या अच्छा होता कि उसके लेंहड़े-भर छोटे-छोटे लड़के-लड़कियों में से किसी को गोद में उठा लेता। मगर वह तो उन्हें आंखों से छूने में भी घिनाने लगा। अरे, ये आदमी के बच्चे हैं ? इतने हीन ? हां, हीन क्यों न हों ? इतने सारे अभागों को जनमाकर उसका पति भाग गया आसाम।···उस दिन रो रहा था गोपी, बाबू, वोट में धोखा हो गया। हमारा परिवार बहक गया। मगर छौंडी ने बक्से के पास पहुंचकर आपके कहनाम का निबाहा किया था। मैंने खुद देखा।···बाप रे बाप कितना दबाव था। और अब कोई बात नहीं सुनता एक घोड़े की पूंजी है। बाजार से सौदा लाया, बेचा ; तो सुर्ती-तमाखू, भेली-भंटा और नून-तेल की बिक्री से कितना क्या होगा ? अपने परिवार का पालन दूलभ है।

फिर यह रुपिया आ गयी। और कहां जाय? मैं भी कहां भगा दूं?···बनिया का जी कमिनिया भर। और फिर इस महंगी में टुटपुंजिया की कमीनी कितना आड़ेगी? ···ज़रा इस अभागी के आदमी को तार दे दीजिए। जनमा-जनमाकर इतने सारे को छोड़ भगा।···और रामरूप, अपनी बाल-प्रेमिका के पति का पतावाला कागज लेकर तू भूल गया कि महीने भर बाद गोपी से मुलाकात होने पर झूठ बोलना पड़ा।···अब तू शायद जोर लगा रहा है कि सब कुछ भूल जाय और सामने भी न पड़े कभी रुपिया।···सारा प्रेम और उसकी लीलायें, बड़ी-बड़ी कहानियां झूठी हैं। सच्चा है अपना-अपना स्वार्थ।···रुपिया कसौटी है रामरूप। वह स्थायी अकाल और अवर्षण है, सूखा है। उस अकाल को कौन काटेगा? तुम्हरा वोट? प्रजातन्त्र? प्रतिनिधि? नहीं, अब कोई उम्मीद नहीं। रुपिया ऐसे ही राम भरोसे मरेगी और मर-मरकर जीवित रहेगी।···फिर, 'बदरिया घेरि आयी ननदी!' बचपन से ही भीतर बैठी नेह की साम्राज्ञी जा, ये ऊंचे बादल, ये ऊंचे कजरी के स्वर, ये अभिजात सभ्यता के तामझाम पहुंच के बाहर हैं। क्या आसमान के बादलों ने भी यही सब सीख लिया है? ओह, नहीं लगता है कि बरसेंगे। एक झोंका आया उड़ गया।···हे नाथ नारायण वासुदेव!

ठीक इन्हीं ऊंचे बादलों के देश में हमारे भाग्य-विधाता लोग रहते हैं और वहीं से रेत पर नाव चलाने की भांति सूखे में खरीफ अभियान चला रहे हैं। अना-वृष्टि से तड़पते देश के नक्शे पर नहरों का जाल बिछा रहे हैं। बिछे जाल में आश्वासनों की राजनीतिक मछलियां फंसा रहे हैं।···हमारा विधायक कहता है, 'एक भी आदमी को भूखों नहीं मरने देंगे।' वह 'पूर्वांचल विकास मंच' का अधि-वेशन करा रहा है। वही स्वागताध्यक्ष है। कोई तिथि भी तय हो गयी है। तैयारी हो रही है। वर्मा संयोजक है। सिंचाई-मंत्री उद्घाटन करेंगे और रामरूप?··· अरे, यह कपार में सन-सन-सन-सन जैसा क्या होने लगा? छाती धड़धड़ाने क्यों लगी? शरीर में पसीना क्यों छूटने लगा?···रामरूप रुको। फालतू बातों में मत पड़ो। मत सोचो अपनी घोर उपेक्षा की बात। ब्लड-प्रेशर उमड़ जायेगा, क्या हुआ जो पैम्फलेट में तुम्हारा कहीं नाम तक नहीं।···और वर्मा? तुम्हारा मित्र छिन गया। अब वह तुम्हारे घर नहीं आयेगा। कहां आया चुनाव के बाद? विद्यालय पर मिलता है तो उसी चहक के साथ मगर बातें ऊपर-ऊपर टंगी रह जाती हैं। महुवारी की ज़मीन पर उतरती ही नहीं। वह सहज भाव से सायकिल उठा गठिया दरबार की राह लग जाता है जैसे सब दिन से वहीं रहता आया है। सप्ताह में तीन दिन विद्यालय पर बाकी जिले पर या लखनऊ।···पूरा नेता हो गया।··· लेकिन क्यों? कुछ समझ में नहीं आता, आदमी इतना कैसे बदल गया?···अरे सचमुच, इतना कैसे बदल गया?···इस हद तक कैसे बदल गया?·· सब चीज़ें बदल रही हैं। समय बदल रहा है। आदमी बदल रहा है। प्रकृति बदल रही है।

ये बादल भी कैसे बदल गए ? तनिक नहीं पिघल रहे हैं। औरतें नंगी होकर इन्द्र भगवान् से पानी मांगने के लिए सूखे खेतों में हल चला रही हैं। लड़कियां लोट-लोटकर हर परवरी गा रही हैं। भोले ग्रामीण गदहों के कान में तेल डाल रहे हैं। विश्वासी लोग हवन-पूजन और कीर्तन कर रहे हैं, हे कृष्ण, हे माधव हे, मुरारे !

महुवारी के लोगों ने निर्जल-निराहार व्रत कर और गंगा-जल ला शंकर भगवान् का अभिषेक किया। भगवती की पूजा की। डिहवारों को गुहराया। देवताओं को जगाया। देवताओं ने बादल भेजा, पानी भेजा···लेकिन वह पानी आसमान में ही रह गया। तो क्या धरती के देवताओं की तरह आसमान के देवता भी भुलावा देने लगे ? लगता तो ऐसा ही है।

रामरूप चारपाई ले उठकर टहलने लगा। आंखें आसमान पर हैं। बादल उसी प्रकार जमे हैं। हवा गुम है। कभी भी धुआंधार मूसलाधार बह सकती है। बहेगी ही और बहेगी तो क्या थोड़ी ? नाक में दम हो जाएगा। मार पानी, मार पानी, पानी-पानी ! लोग त्राहि-त्राहि कर उठेंगे। अरे भगवान्, कुछ हल-फाल चलने दो, कुछ बीआ-सीआ छींटने दो। लोगों को डाहो मत। घर-दुआर ढाहो मत। लोग केवल वर्षा चाहते हैं, बाढ़ नहीं···ज़रा यह सावन में सूखे का लक्षण देख ठना 'पूर्वांचल विकास मंच' का अधिवेशन हो जाने दो। ज़रा गठिया-स्टेशन रोड का उद्घाटन हो जाने दो।···देखा, फर्र-फर्र जीपें दौड़ रही हैं। माटी से फाइल का पेट भर रहा है। अनाज के ब्लेक की सफेदी टिनोपाल बन गठिया के सुग्रीव और खूबराम जैसे नये-नये खादी पहनने वालों के चेहरों पर चढ़कर चमक रही है। बरखा बरसे चाहे मत बरसे। विधायक का गांव सदाबहार गांव। गठिया नशे में चूर है। क्या करे महुवारी ? बित्ते भर का पुराना टूटा हल, मरियल बैल, भग्न घर, रोती धरती, मनहूस चेहरे, उदासी में डूबा गांव, सूखे से त्रस्त, गरीबी की मार से निर्जीव, जिनका सूखे से रहा-सहा पौरुख भी बिथक गया वे क्या करें ?··· बेबस यही कीर्तन भर तो कर सकते हैं, हे कृष्ण, हे माधव, हे मुरारे !

पानी की एक बूद टप् से ज़मीन पर पड़ी। बूंद बहुत बड़ी थी। इसलिए उसकी ध्वनि सुनायी पड़ गयी। तब तक दूसरी रामरूप के सिर पर पड़ी। उसने देखा, मेघ अच्छी तरह झुक आए हैं। अब धरती नहा उठने वाली है। जल्दी ही पानी का टीप-टाप वाला सरगम हवा के झोंकों में मिलकर कोलाहल बन जाएगा। जड़ अन्धेरी रात को पानी का प्राण चैतन्य कर देगा। अनन्त हृदयों की तृप्ति का समवेत हर्षोल्लास···हां, हां, वही हर्षोल्लास कीर्तन बन और तेज़ हो जायगा।··· हे कृष्ण, हे माधव, हे मुरारे !

बूंदें बड़ी-बड़ी से छोटी-छोटी हुई और छोटी होने के साथ सघन हुई। रामरूप उसी प्रकार सहन में टहलता रहा। उत्तर-पश्चिम वाले पीपल के पेड़ पर बूंदों का

संगीत कुछ अधिक आकर्षक था। अरे, पावस के पहले पानी में क्या ऐसा कोमल कान्त संगीत होना चाहिए ? उसमें झंझा झकोर गर्जन के साथ उपद्रवकारी तोड़-फोड़ का हाहाकार होना चाहिए। मगर कहां है ऐसा उपद्रव ? शायद असाढ़ के बादल होते तो ऐसा होता मगर ये तो सावन के बादल हैं, रिमझिम-रिमझिम फुहार वाले।···या कि एकदम निस्तेज, ठण्डे बादल, बेदम। इतनी देर से रामरूप पानी में टहल रहा है अब तक उसका गमछा भी भींगकर कचारने लायक नहीं हुआ। क्या इसी पानी से करइल के विकराल दरार भरेंगे ? क्या इसी फुहार से सूखकर लोहे की तरह ठन्-ठन् बनी धरती जुड़ायेगी ? ऐसा पानी तो घंटों बरसता रहे और खेत के ढेले नहीं गलें। क्या हो गया इस वर्षा को ? लगता है, जैसे आसमान रो रहा है। पानी नहीं, आंसू की बूंदें हैं। किस बात पर आसमान आंसू बहा रहा है ? क्या धरती के भ्रष्टाचार पर ? तो, उसके पास तो अमोघ शक्तिशाली वज्र है, क्यों नहीं गिरा देता है भ्रष्टाचारियों पर ? क्या इस प्रकार आंसू बहाकर भ्रष्टाचार को और तेज कर रहा है ? सूखे में अन्न का भाव चढ़ गया और सरकारी लोगों के ब्लेक का बाजार और गरम हो गया। क्या कर लेगा कोई खोरा कथा सुनकर ? कथान्त में खीझकर रामरूप से कहता है, 'मैं बबुनी बाजार की इस राशन की दुकान पर धरना दूंगा, अनशन करूंगा, सत्याग्रह करूंगा !'

खोरा ! पागलपन की बात छोड़ो। यह गांधी का युग नहीं है। वह तो विदेशी अंग्रेज थे जो गान्धी और उनके अनुयायियों के अनशन से, सत्याग्रह आन्दोलन से दबते थे, झुकते थे, उसे झेलते थे। शायद इस अर्थ में वे सभ्य थे। अब स्थिति बदल गयी है। ये गांधीवादी हथियार पूरी तरह नाकाम हो गये हैं। आज के देशी शासक अंग्रेजों से बहुत अधिक जटिल हैं। इनकी खाल बहुत मोटी है। विरोध और निन्दा को ये स्वयं के फलने-फूलने के लिए संजीवनी मान मस्त हैं। क्या करोगे सत्याग्रह के गाजर का आन्दोलनी शंख बजाकर ? कौन परवा करेगा ? कहां कोई पत्ता खड़केगा ? विरोध की परिचित आचारसंहिता बदल गयी। नयी को अपनाने का रास्ता बहुत लम्बा है और वह रास्ता है राजनीतिक दलबन्दी का, राजनीतिक संगठन का अथवा किसी ऐसे संगठन से जुड़ने का। तो तुम अब किस राजनीतिक दल से जुड़ोगे ? कितनी धुंधग्रस्त हो गयी हैं राजनीतिक कराहें ! कदम आगे बढ़ाते डर लगता है, अब गिरे, तब गिरे किसी धोखे की खंदक में। स्वार्थियों के गिरोह ने कैसे-कैसे खंदक आज ज़िन्दगी के चारों ओर तान रखे हैं ?···अरे, फुहार भी कब बन्द हो गयी ? हे मेघगण, बेचारे गरीब किसानों ने कौन-सा पाप किया कि उन्हें ऐसे ललचा-ललचाकर जिरह कर रहे हो ?

तड़्-तड़्-तड़्-तड़्-तड़ाक्। बादलों की किचराई जैसी आंखों के प्रकाश से एक क्षण के लिए दुनिया अंजोर हो गयी। रामरूप को लगा, मेघगण उससे कुछ

कह रहे हैं।···हम लोग आते हैं ज़रूर बरसने के लिए परन्तु कभी धरती के पीड़ित जनों की पीड़ा की आंच से, उनकी आह की आंधियों से उड़ जाते हैं और कभी यहां के काले हृदय काले सफेदपोश डाकुओं के पाप की ज्वाला में सूख जाते हैं।

धरती के सफेदपोश डाकू ?

कौन है डाकू ? डाकू रामरूप स्वयं है ! 'राजधानी' तो यही कहती है। उसका सम्बन्ध नक्सलवादियों से है। वह आस्तीन का सांप है।

तड़्-तड़्-तड़्-तड़्-तड़ाक्। रामरूप को याद आया, वह जब कीर्तन में था तभी गठिया से बाबू हनुमानप्रसाद का दूत आया था। कल किसी समय उसकी बुलाहट है। क्यों? शायद पूछा जाय कि जब बरात गयी थी तो तू रिश्तेदार होकर क्यों लुटवाने के लिए डाकुओं को न्योत लाया ? बोल !

···हे कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे !

बादल फटने लगे और कीर्तन जारी था।

५३

सुबह जल्दी तैयार होकर रामरूप गठिया की ओर चला तो उसके पैर जैसे आगे बढ़ने से इनकार कर रहे थे। मन में आता, लौट चलें। क्या कर लेंगे उसका वे ? खुश होकर गरदन काटें, चाहे नाराज़ होकर, क्या फरक पड़ा ? नहीं, बहुत हो चुकी ज़माने के अघ के आगे सिरझुकाई। गलत हाथ गरदन दबा रहे हैं तो रामरूप अब उन्हें झटक देगा।···मगर वह लौटा नहीं। बावजूद कुंठा और क्षोभ के भारी-भारी पत्थरों के बंधे होने-से उसके पैर घसिटते गए। घसिट रही थी अभी सायकिल भी। नाला पार कर सायकिल पर बैठा तो लगा, सायकिल के सारे पार्ट-पुरजे घंटी का काम कर रहे हैं। साली जिनगी की भांति यह सायकिल भी खड़-खड़िया हो गयी। आग जैसे जलते सावन में बेरोक दौड़ रही है। सुख-सन्तोष की नरम ज़मीन और खुशियों की हरियाली सपना हो गयी। लेकिन आदमी है कि जीता चल रहा है। क्या इसी का नाम जीवन-संघर्ष है ? नहीं, इसे और कुछ भी कहा जाय, संघर्ष नहीं कहा जा सकता। प्रतिक्षण हम गलत मूल्यों के समझौते में जी रहे हैं। हम भयभीत हैं। क्या यह वह एकमात्र भय नहीं है जो न चाहते हुए भी रामरूप को घसीटकर गठिया की ओर लिये जा रहा है ?

नहीं, केवल भय नहीं, भीतर कहीं-न-कहीं लोभ भी है। ऐसे लोभ की ऐसी-तैसी और सब कुछ खतम हो जाने के बाद भी अन्तस्तल में पड़े रहने वाले ऐसे लालच पर लानत है ! जिसने मुझे बड़ा मान और पांव पखारकर अपनी कन्या सौंप दी, उसे बड़ा मान, कुछ देने वाला मान जिन्दगी भर मनस्ताप में जलता रहना, कितनी बड़ी विडम्बना है ! वह रामरूप को क्या दे सकता है ?···आग लगे

उस पांच बिगहे की सत्यानाशी गांठ में। एक युग हुआ कि वह दहेज दफन हो गया और रामरूप उसकी कब्र में पड़ी सड़ी हड्डियों को भीतर ढो रहा है। ठीक कहता है ससुर करइलवा, पढ़े फारसी बेचे तेल।···पूछना चाहिए,···तो महाराज, ऐसे मूर्ख तेली को आपने दामाद क्यों बनाया? जान-बूझकर कन्या को भठ क्यों दिया? उसके साथ छल क्यों किया? सच, एक बार हिम्मत कर क्यों नहीं वह मन की सारी बातें उनके सामने उगल देता है? शायद इससे वह गांठ खुल जाती।···है हिम्मत? सायकिल पर सोचते-चलते में मन घबरा रहा है तो उतरकर आगे गठिया गांव के बाहर नीम के नीचे छांह में कालीमाई के चौरे पर बैठकर भीतर टटोलो, सचमुच है हिम्मत?

नहीं, कहां है इतनी हिम्मत? और यदि हिम्मत नहीं है तो क्या है? कायरता है, आत्मछल है, आत्मदोहन है, पलायन और भय है। यह जी-हुजूरी जैसी, यह दुम हिलाने जैसी सम्मोहन की स्थिति कब तक रहेगी? कब तक बोलती रहेगी यह ससुरजी की बकरी में···एं···एं···में···एं···एं? क्या-क्या नहीं किया ससुरजी ने उसे उखाड़ने के लिए? क्या गलती है उसकी?···उस बूढ़े कामी की कोई काम्या भागती है तो इसमें रामरूप की क्या गलती है? फिर यह घटना तो हर साल की है। पिछले एक युग तक छलावे के पीछे उसे क्यों भटकना पड़ा?—नहीं, आज सारी भटकन का अन्त है। हे, कालीमाई तू मुझे बल दे। आज रामरूप मुंहचोर नहीं बनेगा। आज हर बात का मुंह-तोड़ उत्तर देगा।···कह देगा, डकैत तो आप··· नहीं, तुम हो। खेत के डकैत, को-ऑपरेटिव के डकैत, बैल के डकैत, कच्ची फसल के डकैत, कच्ची उमर के डकैत, ब्लाक के डकैत, सरकारी गल्ले की दुकान के डकैत, सड़क-निर्माण के डकैत, और न जाने कैसी-कैसी छिपी डकैतियों के डकैत।···नहीं, आज रामरूप हर्गिज दबेगा नहीं। दबने वालों को ही दुनिया दबाती है। बेचारे और मुंहचोर लोगों का हक-पद रोता है।

कालीजी के स्थान से चला तो रामरूप काफी स्फूर्ति का अनुभव करने लगा था। यह स्फूर्ति उस समय दुगुनी हो गयी जब बाबू हनुमानप्रसाद के द्वार पर पहुंच कर अहाते के भीतर घुसते ही सबसे पहले नज़र पड़ी खोरा पर। अरे, कवि यहां कहां? बरामदे में चौकी पर कम्बल बिछा है जिस पर भस्मांकित ललाट वाले खोराजी माला जप रहे हैं। रुद्राक्ष की यह बड़े-बड़े दाने वाली माला इधर हाल में उनके पास दिखायी पड़ने लगी है। खोरा की चौकी के बगल में बाबू साहब का पलंग बदस्तूर लगा है मगर खाली है। उनकी गान्धी-आश्रमी धवल चादर पलंग पर पड़ी है। नीचे जूता भी है और मिर्जापुरी दीवार से टिकी है। इससे सिद्ध है कि वे उपस्थित हैं। पलंग के एक ओर चार कुर्सियां पड़ी हैं। एक पर एक अपरिचित व्यक्ति बैठा है। टहल कोठरी से एक टेबुल निकालकर ला रहा है। किसुना रामरूप को आते देख भीतर चला गया, शायद मालिक को खबर देने। एक स्टेनलेस स्टील की

तश्तरी में गाय का थोड़ा-सा गोबर, शायद पूजार्थ कहीं लीपने के लिए ले जाती फुलिया से बतीसा उधर बैलों की ओर कुछ घुल-घुलकर बात कर रहा है और निगाह उठा-उठा सदर दरवाज़े की ओर देखता जाता है। बैल अभी चरन पर डटे हैं मगर नाद से मुंह हटा उदासी में इधर-उधर कर रहे हैं। सूखा-सूखा भूसा फांकते बनता है? हरा चारा मुहाल हो गया। बैलों के खूटे पर खड़े रहने, बैठे रहने का यह आराम जैसे उनके लिए हराम हो गया है। कुल मिलाकर द्वार की चहक जगी तो है मगर सूखे की मंडराती उदासी छिप नहीं रही है।

खोरा ने रामरूप को देख माला फेरना बन्द कर उसे समेट एक झोली में रख दिया और अत्यन्त आह्लाद से भर उसे अपने पास चौकी पर बिठा लिया। कुशल समाचार के बाद रामरूप ने अपना कौतूहल प्रकट किया, यहां कैसे? तो उत्तर देने के पूर्व खोरा ने एक बार इधर-उधर देखा और यह देखकर कि उधर कुर्सी पर बैठा आदमी डाक से आए कल के अखबार में डूब गया है, रामरूप के कानों के पास मुंह ले जाकर बताया, 'कोइली की खोज वाले मामले में कल शाम को ट्रैक्टर भेजकर बुलाया है। वह भूली नहीं है। करइलजी की सिर्फ एक बार उससे मुलाकात हो जाती। खोरा कोई 'उतजोग' करे। इसके लिए रात से ही वह खातिरदारी, वह···'

खड़ाऊं की चट्ट-चट्ट ध्वनि सुन बात बन्द हो गयी और चौखट लांघ बाबू हनुमानप्रसाद के अवतरित होते ही रामरूप खड़ा हो गया तथा चरण स्पर्श के बाद वह एक कुर्सी पर बैठ गया।

'एक ज़माने से ही वह काम छूटा रह गया'—पलंग पर बैठते-बैठते वे कहने लगे, 'अब उस पंचबिगहिया की रजिस्ट्री हो जाय। बीस जुलाई को मुहम्मदाबाद कचहरी में आ जाइये। मैं वहीं रहूंगा। दिन भर में सब काम हो जायगा। हाशिया के गवाह ले लीजिएगा। उस दिन कहीं कोई बझाव तो नहीं है न?'

'नही, बझाव कोई नहीं है'—रामरूप बोला, 'और यदि होगा भी तो आपके हुक्म के आगे वह क्या होगा?' रामरूप ने उत्तर दिया। वह एकदम आश्चर्य-चकित था। पूरी हवा ही बदली-बदली महसूस हो रही थी। अचानक हाथ लगी इस खुशियाली को जैसे वह संभाल नहीं पा रहा था।

'तो ठीक है। सोचा हुआ काम हो जाना चाहिए। ज़िन्दगी का क्या ठिकाना? क्यों कवी जी?'

और अपना सम्बोधन सुन खोरा ने नाशमान क्षणों के दर्शन से शुरू कर चक्रवर्ती रावण द्वारा मन में सोची गयी स्वर्ग तक सीढ़ी बनवा देने की अधूरी योजना को ज्यों ही उठाया त्यों ही एक ट्रे में रखे मोहनभोग से भरे पांच कटोरों को लिये किसुना हाज़िर हो गया। ट्रे को टेबुल पर रखने के बाद उसने एक-एक कटोरा जब तक सब को थमाया तब तक चाय और जल भी हाजिर। लगा,

रावण की अधूरी योजना की तरह केशरिया चाय में डूबकर खोरा की बात अधूरी रह जायेगी मगर खोरा ने ज़ोर लगाकर किसी-किसी तरह चाय के साथ उसे पूरा किया। जाहिर था कि करइलजी इस कथा से कटे रहे गये। वे बतीसा को बुलाकर ट्रेक्टर की किसी खराबी के बारे में कुछ पूछ रहे थे और पूछते-पूछते खुद उसे देखने के लिए खड़े हो गए। रामरूप की ओर देखकर बोले—

'मैं अभी आया। तब तक आप भीतर से लौट आइये।' फिर खोरा की तरफ देखकर कहा, 'सेवक को दो मिनट की इजाजत है न?'

खोराजी दांत चिआरकर हंसने लगे। बाबू हनुमानप्रसाद के जाने के बाद रामरूप उठकर खोरा के पास चौकी पर आ गया। पूर्ववत् कुर्सी पर बैठे और जलपान के बाद भी अखबार में डूबे उस विचित्र आदमी पर एक नजर फेंक वह धीमे-धीमे खोरा से कहने लगा, 'कोइली का पता पूछा जा रहा है तो बता न दीजिए कि वह बड़ारपुर के सुमेरसिंह से विवाह कर विधिवत् उसकी पत्नी की तरह रह रही है और उसके बारे में सोचना बेकार है।···इस तन्त्र-मन्त्र के चमत्कार के बल पर एकदम चेला बनाकर छोड़िये करइलजी को। मगर, कहीं कुछ गड़बड़ न करें? हड़का दीजिए कि कोइली की ओर कुदृष्टि करने पर अनिष्ट होगा।'

कवि खोरा को सिद्ध-पुरुष के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए रामरूप ने कोइली का रहस्य बता तो दिया। मगर बाद में उसे लगा, काम अच्छा नहीं हुआ। कामी आदमी का कोई भरोसा नहीं। मन में आया, खोरा को रोक दे, मगर ऐसा नहीं कर सका। दो के भेद की बात जब तीसरे के कान में चली गयी तो चौथे-पांचवें के बाद फैलने से उसे अब कौन रोक सकता है? तो, फैल जाने दो। खोरा को जम जाने दो। आगे के लिए अच्छी बात हो सकती है। एक ही चंट है यह साधू। पवित्र पाखंड का कोई जाल फैलाएगा। कह सकता है, ला भक्त अपने हाथ से पांच लौंग या ऐसी ही कोई चीज़। फिर आंखें बन्द कर पद्मासन में वह चीज़ कान के पास ले जा बेतार के तार से सारी खबर पा सकता है। सारा हाल कानों में सनसना सकता है। क्या पूछते हो कि कोइली कहां है?···और बता सकता है। बात फैल सकती है। देखो क्या होता है? किन्तु यदि कोइली का कुछ भी अनिष्ट हुआ तो रामरूप स्वयं को कैसे क्षमा करेगा? फिर एक बार पछतावे की लहर आयी और उद्विग्न होकर वह खोरा के पास से उठकर भीतर चला। उसकी सास अर्थात् मलिकाइन दुलहिन कितना मानती हैं उसे? कहेगा, लड़के की शादी हुई, घर में बहू आयी तो उसका दहेज मिले।···दहेज की बात पर फिर एक बार भीतर धक्-से हो गया। उसके अपने विवाह का दहेज अठारह-बीस बरस पर मिलने जा रहा है तो विधायक साले के विवाह के दहेज का पहाड़ा बैठा लो।··· मगर अचानक इतना बड़ा विचार-परिवर्तन कैसे हो गया? इसमें कोई गहरी चाल

या धोखा तो नहीं है ?

किन्तु कोई धोखा नहीं, यह बात अपनी सास मांजी के पास एक घंटा बैठ कर रामरूप ने जान लिया। बाबू हनुमानप्रसाद के विचार-परिवर्तन का कारण भी ज्ञात हो गया। पता नहीं, आज का दिन कितना अच्छा है। उसके कौन से शुभ ग्रह उदित होकर भाग्योदय के उल्लसित क्षणों को उपलब्ध करा रहे हैं। आज ससुरजी की हवेली में घुसते ही लगा, स्वागतार्थ आखें बिछी हैं। 'आ गये पाहुन !' जैसे हलचल मच गयी। बूढ़ी फूआ दौड़ी मलिकाइन को खबर करने। दायी पियरिया पलंग बिछाने लगी। उसकी लड़की फुलिया भीतर से नयी चादर और तकिया लेकर दौड़ी। नौकर चाकर विशेष दृष्टि से देख-देख अपनी प्रसन्नता ज़ाहिर कर रहे हैं। क्या बात है ? गौने के बाद इतना सम्मान तो उसका कभी नहीं हुआ। आज अचानक वह विशेष व्यक्ति कैसे हो गया ? बहू के आने से सम्बन्धित यह स्वागत तो हो नहीं सकता। फिर बहू है कहां ? आते ही रामरूप की दृष्टि उस दक्षिण-पश्चिम के कोने वाले कक्ष पर गयी जिसे बहू के लिए सजाया गया था और जिस पर आज ताला लटका था। तो, फिर आज क्या है जो नया, विचित्र और रहस्यमय है ?

रहस्य की बात बताया कुछ मांजी ने।—'कितना पाप हो रहा था बेटा ! लड़का और लड़की दो चीज़ नहीं होती हैं। लड़की को बाप का राजपाट नहीं चाहिए। उसे हाथ उठाकर जो दिया सो उसने ले लिया। हमारी धिया कितने दिन से सबुर बांधकर चुप रही। एक ज़बान कुछ नहीं कहा। उसके साथ अन्याय…।' फिर बहुत कुछ बताया फूआ ने कि मलिकाइन ने अन्न-जल छोड़ दिया था कि विवाह के दहेज वाला वह पांच बिगहा हमारी बेटी को नहीं दिया जायगा तो वे परान त्याग देंगी।…अब क्या हो ? बखरी में हलचल मच गयी। समझाना-बुझाना बेकार हुआ तो फिर महुवारी खबर गयी, बुलाने के लिए।

रामरूप ने देखा, उसके सामने मचिया पर बैठी हुई मलिकाइन दुलहिन काफी रुग्ण और दुर्बल हो गयी हैं। चेहरे पर लकीरों की संख्या बढ़ गयी है। आंखों की वेदना अथाह हो गयी है। आवाज़ लड़खड़ाने लगी है। भरापूरा और भभकता रहता-सा व्यक्तित्व बुझ गया है। कोई चोट है जिसे वे कह नहीं सकती हैं। रामरूप उसका कुछ अनुमान कर सकता है। इस मां के भीतर जनम-जनम की प्यासी एक सास अभिलषित मौके पर छनछनाकर रह गयी। बेटा पहले ही बेहाथ और उड़ता पंछी हो गया था। बहू की एक डोर थी, वह भी हाथ लगते छूट गयी। वह अब कौन-सी पढ़ाई पढ़ेगी ? मलिकाइन की समझ के बाहर है। उसकी समझ में शायद यही आ रहा है कि अकेले बोझ ढोना पड़ेगा और शायद बेटे-बहू से उचटा मन बेटी की ओर लौटा तो वह घिसी-पिटी पुरानी बात नया घाव बन ऊपर आ गयी। रामरूप ने हाथ जोड़कर कहा—

'मांजी इतनी तकलीफ आपने क्यों किया ? क्या आपने हमको पराया समझ लिया । आप का जो इतना छोह रहता है वही बहुत है ।'

'छूंछा छोह हतियारी के बराबर होता है बेटा,' मलिकाइन कहने लगीं, 'इतने शोर-हंकार के साथ बेटे का विवाह हुआ, लछाहुति लुटाई गयी, हमारी धिया को क्या मिला ?···विवाह में उसके लिए जो संकल्प कर दिया उसे खुद खाने में कितना नरक होगा ? क्या कहा है सरकार ने ?'

'कहा है कि २० तारीख को रजिस्ट्री होगी ।'

'झूठ कहा है कि साच ?'

रामरूप कहने जा रहा था कि 'पता नहीं' परन्तु कुछ सोचकर बोला, 'एक-दम साच, इसमें अब कोई झूठ नहीं है मांजी ।···आप अब मेरे साथ भोजन कीजिए । मुझे स्कूल जाना है ।'

रामरूप के साथ मलिकाइन ने भोजन तो नहीं किया क्योंकि स्नान-पूजा आदि कार्य अभी बाकी था परन्तु अब वैसी कोई बात नहीं रही । चलते-चलते रामरूप से बोलीं—

'कुछ दिन के लिए बड़की नतिनी के साथ बेटी को पठा दो बेटा, ज़रा मन बहल कर आनमान हो जाय । छोटी नतिनी को भी देख लूं ।'

'कमली की तीज दो-चार दिन में आने वाली है । उसके बाद ज़रूर वे सब आपका दर्शन करेंगी ।' उसने चरण छूकर कहा ।

रामरूप बाहर आया तो उसे बेहद आश्चर्य हुआ कि वह कुर्सी पर वाला आदमी ज्यों-का-त्यों अखबार में डूबा बैठा हुआ है । बाबू हनुमानप्रसाद श्रीमद्-भागवत गीता की पुस्तक लेकर बैठे हैं और सोये हुए खोरा के एक पैर को सुग्रीव और दूसरे को खुववा दबा रहा है । उसके मन में आया···

···तो, खोरा ने इतनी जल्दी रहस्य खोल दिया क्या ? यह सेवा का समां तो यही बता रहा है । अच्छा है, यह शैतान इस तरह मुट्ठी में रहे ।

'अच्छा, अब कबीजी की सेवा रात में होगी, बाबू हनुमानप्रसाद पोथी बन्द करते हुए तथा सुबवा-सुग्रीव से उधर कुर्सी पर बैठे व्यक्ति की ओर संकेत करते हुए बोले, 'तुम दोनों लोग आप को लेकर जल्दी से चले जाओ ।'

फिर उस व्यक्ति की ओर घूमकर बोले, 'आप तनिक भी चिन्तित मत होइयेगा । ये दोनों अपने परम विश्वसनीय आदमी हैं । हां, सावधानी हर हालत में ज़रूर है और माल सुरक्षित चला आये ।'

रामरूप चौंक उठा ? क्या 'माल' हो सकता है ? सरकारी गल्ला, गांजा, चरस या आगे बढ़कर अफीम तक हाथ पहुंच गया है ? उसने सुग्रीव की ओर देखा और लगा, सुग्रीव पहले से ही उसकी ओर देख रहा है । क्या है इसकी आंखों में ? कोइली से जुड़ी कोई उत्सुकता-भरी जिज्ञासा है क्या ? जो हो, कुछ ज़रूर है ।

उसने आंखें फेरकर खोरा की ओर देखा, और देखा, आंखों-आंखों में वह कैसे मुस्करा रहा है? ज़रूर अपनी विद्या का चमत्कार प्रदर्शन कर चुका है। अच्छा, मदारी खेलो खेल। मगर, ज़रा सावधानी से। जाते-जाते खुबवा ने सलाम ठोका तो रामरूप को याद आया, क्या यह वही खुबवा है जिसे उस दिन उसके महुवारी वाले अपने खेत से बाबू हनुमानप्रसाद बोझों के साथ बांधकर ट्रेक्टर पर गठिया ले जा रहे थे? नहीं, यह वह नहीं रहा। खद्दर की पोशाक आदमी को क्या से क्या बना देती है? और उस पोशाक की धवल पृष्ठभूमि में कितनी कालिमा छिपी होती है? खाद्यान्न योजना में जो स्टेशन से गठिया तक सड़क बन रही है उसमें बीस मजदूरों पर एक मेठ होता है और खुबवा तथा सुग्रीव दोनों मेठ के रूप में ठीकेदार होकर नोटों की फसल काट रहे हैं। प्रति मजदूर प्रतिदिन छह रुपये का गेहूं देना है परन्तु धांधली में रोजदारी अन्ततः ठेकेदारी का रूप ले लेती है तो वह आधे से भी कम पड़ रही है। मजदूर जानते हैं कि उनका पेट काटा जा रहा है पर करें क्या? योजना का पैसा और गेहूं सब बड़े पेट में चला जाता है। इससे भी पेट नहीं भरता तो सस्ते गल्ले वाले कोटे का कोटा खिंचकर आ जाता है। सुग्रीव दिन-भर मेठजी है और रात को गेहूं की दूकान का सेठजी।···फिर रामरूप को याद आया कि खुबवा की वह चटाईटोला वाली 'विवाहिता' भी तो यहीं होगी? और तभी याद आया, मांजी कह रही थीं, बहू के साथ वह भी लखनऊ गयी। कितनी लगन से मांजी की सेवा में जुटी रहती थी। उसके जाने से जैसे उनका हाथ-पैर चला गया। ले डूबेगी राजधानी अब बूढ़े गांव को।'

'अब मैं भी चलूं। विद्यालय से छुट्टी नहीं ली है।' रामरूप ने करबद्ध खड़े होकर कहा।

'अच्छा दो मिनट रुकिये।' बाबू हनुमानप्रसाद ने कहा और किसी पहले चलते हुए प्रसंग में जुड़ा एक सवाल खोरा की ओर देखकर उछाला···

'गीता पढ़ने से क्या मोह-माया से छुट्टी मिल जायेगी और मुक्ति मिल जायेगी?'

'हरगिज़ नहीं, खोरा ने बैठकर उत्तर दिया, 'आप उसे बांचकर मोह से मुक्त होने का सवाल ठाढ़ कर रहे हैं और ओह ओर नहीं देख रहे हैं कि अर्जुनजी का क्या हाल है? उनको तो खुद भगवान् ने गीता का गियान दिया और उसको पोढ़ करने हेतु विश्व-रूप में दरशन भी दिया पर अखीर में क्या हुआ? महाभारथ खतम हुआ तो अपने कुल-खान्दान का नाश देख वही मोह-माया ने फिर से ऐसे गरेस दिया कि दुखी होकर सब लोग हेवाल सीझने हेतु चले गये। कवनी ओर गया गीता का गियान?'

'तब मुक्ति कैसे होगी?'

उसके वास्ते रास्ता है। खोरा ने बहुत गम्भीरता से उत्तर दिया।

बाबू हनुमानप्रसाद ने देखा रामरूप उसी प्रकार द्रव्य गठियाई हुई पिअरी

धोती की 'कन्हावर' हाथ में लिये खड़ा है। हड़बड़ाकर बोले—

'अरे बैठो भाई, अपने गुरुजी से कुछ ज्ञान की चर्चा आप भी करो। क्या जल्दी है ? अभी क्या बज रहा है ? खाना-पीना हो गया है ?'

'सब ठीक है बाबू जी, विद्यालय का समय हो गया है। अब आज्ञा दीजिए। गुरुजी हम को तो कुछ बताते नहीं हैं···।'

'अरे हम को ही कहां बताते हैं ? इस बार तो बड़ी मुश्किल से पकड़ में आये हैं।···तो, २० तारीख भूले नहीं। अब काम हो जाय। ज़िन्दगी का क्या भरोसा ? फिर खेती-बारी का भी क्या भरोसा ? सीलिंग अब और नीचे आने जा रही है। साढ़े बारह एकड़ पर नकशे तैयार हो रहे हैं। हमारे पीछे तुम्हीं लोग हो न।··· और कोई काम हो तो कहो।'

'सब ठीक ही है, बस आपकी कृपा चाहिए।'

'नहीं, नहीं। आप संकोच करते हो। जो भी कुछ हो बेहिचक हमसे कहो।' कहते-कहते बाबू हनुमानप्रसाद ने हुंकड़कर खोंख दिया।

इस हुंकड़-खोखी से रामरूप का उत्साह बढ़ा। उधर खोरा ने भी ज़ोर लगाया, 'कहिये रामरूप जी, कहिए।'

'इतनी कृपा है तो दीनदयाल चाचा से कह दें कि डांड़ पर हमें क्यों नाहक सता रहे हैं।'

रामरूप का कथन सुनकर अचानक बाबू साहब का रंग बदल गया और लगा, यह एक मिनट पहले वाला वह आदमी नहीं है। एक क्षण के गम्भीर मौन के बाद वे जैसे वहां लौटे तो खोरा की ओर देखकर मुसकराते हुए बोले—

'अच्छा, निश्चिन्त रहो। अब दीनदयाल डांड़ पर परेशान नहीं करने पायेगा। बस ?···और कोई काम ?'

'मालिक मेहरबान हैं तो गफलत में पड़ने का दरकार नहीं रामरूपजी। फाट-कर कहिए कि का काम है ?' खोरा ने फिर ललकार बांधकर कहा और रामरूप की आंखों में आखें डाल दीं।

'अच्छा तो एक अर्ज़ और है', रामरूप ने सकुचाते-सकुचाते कहा, 'मेरी ही तरह बेचारे सीरी भाई को दीनदयाल चाचा ···।'

'मैं समझ गया' बात काटकर चट बाबू हनुमानप्रसाद बोले, 'यदि उस झंझट का निपटारा चाहते हैं तो एक ही रास्ता है। हमने सोच लिया है। फिर सीरी से भी पूछ लीजिए। यदि वे चाहें तो मामला आधा-आधा पर फरियाकर तय हो सकता है। हालांकि दयलुआ इस पर भी कूद-फांद मचायेगा। कहेगा, उसका सोलह आने के लिए बना-बनाया नकशा हर सूरत में ठीक है तो वह आठ आने पर क्यों उतरे ? परन्तु उसे दबाया जायेगा। कहां जायगा भागकर ? मगर, हां, आधे से कम पर किसी तरह मामला नहीं बैठेगा। आप पूछ लें और फिर हमें खबर कर

दें। मैं खुद आकर बटोर करूंगा। मैं चाहता हूं कि किसी गरीब का हक कोई न लूटे। क्षेत्र में शान्ति रहे। क्यों कबीजी ? ठीक कह रहा हूं न ? बुढ़ौती में अब कुछ धर्म-कर्म और जन-सेवा करते हुए परलोक का भी तो ख्याल रखना है ?'

५४

कुरूपता और भयंकरता में भी कोई सौन्दर्य होता है क्या ? या देखने वाला मात्र अपने को ही सर्वत्र देखता है ? बाह्य प्रकृति और मनुष्य की अन्त:प्रकृति का रहस्य कितना गहन है ! कल्पना के सुख-दुख सम्भवतः खिलौनों से भी अधिक अवास्तविक हैं और हम बच्चों की तरह उन्हीं से खेलते कभी हंसते हैं तो कभी रोते हैं।

रामरूप गठिया से चला तो उसे लगा, पानी नहीं बरसा तो क्या सावन की नंगी धरती हवा से मुलायम तो हो गयी है ! सायकिल कैसे सर्र-सर्र भागती है। साढ़े नौ बजे धूप ऐसी तेज़ी हो गयी कि जेठ की तरह सीवान में दुपहरिया नाचने लगी है परन्तु पुरवा की गरम अठखेलियों में कहीं-न-कहीं से सावन की नरम नखरेबाजी खुल जाती है। सावन और सूखे की लड़ाई में शायद सावन बीस पड़ रहा है। उसके ऊष्म स्पर्श में भी कोई अज्ञात जादू है और इस मनोवैज्ञानिक जादू में डूबा रामरूप गठिया से चलकर विद्यालय पर आया तो देखता है कि अरविन्दजी बाहर वाले गेट पर उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। पास जाते ही एक सांस में सारा समाचार सुना डालते हैं कि बड़ारपुर से 'तीज' लेकर दस-बारह आदमी आए हैं।

रामरूप ने वहीं खड़े-खड़े एक क्षण में निर्णय लिया, वह भीतर नहीं प्रवेश करेगा। यहीं से अरविन्दजी को पीछे बैठाकर सीधे घर। अवकाश की अर्जी घर से आएगी। कल जो होगा देखा जायगा। आज मन कौन खराब करे। सामने जाने पर पता नहीं क्या हो ? जुलाई में विद्यालय खुलते ही कितना तनाव बढ़ गया। लोग जल रहे हैं, लोग ऐंठ रहे हैं और लोग लगने नहीं दे रहे हैं कि यह विद्यालय है। कहां ले जाएगी यह द्रुतगामी पतनशीलता ? खैर, फिलहाल तो यह सायकिल रामरूप को घर ले जायगी। खुशी मनाने का मौका देगी। कभी-कभी क्या होता है कि इकट्ठे ढेर सारी खुशियां आ जाती हैं।

बेशक, यह आज का दिन खुशियालियों का दिन है। दस-बारह आदमियों में कम-से-कम आठ तो मिठाई आदि की कांवर लाने वाले कहांर होंगे ही। घर-भर जाएगा। कल सारे गांव में बांटा जाएगा। एक कांवर तो सीधे ससुरजी के यहां पहुंचेगी। मिठाई, फल, गहने और कपड़े आदि सब मिलाकर बाबू रघुनाथ सिंह ने दिल खोलकर खर्च किया है। रामरूप की गांव में इज्ज़त रह गयी। तो ठीक है, वह भी उनकी इज्ज़त करेगा। कह देगा, दो में से बीछकर एक बैल ले लो। असाढ़ की खेती तो गयी। अब किसी में मिलाकर भी, पानी बरसा तो इधर हल का काम

चल सकता है। इधर फिर कातिक में चलकर एक बैल खरीद लेंगे। रिश्तेदार ने जब इतना खर्च अपनी ओर से किया तो उसी के मुताबिक उसे सन्तुष्ट भी तो करना है। करेगा, रामरूप उन्हें सन्तुष्ट करेगा। साथ में आये पुरोहित-हजाम तक के लिए वह धोतियों की व्यवस्था करेगा। नेग-जोग में कसर नहीं रहने देगा। कन्या का भाई जो आया होगा उसके लिए सूट के उम्दा पीस मंगाएगा। मगर उसके लिए जल्दी क्या होगी? वह तो कुछ दिन रहेगा ही। अरे हां, चलते ही चीनी, सब्जी और डालडा आदि मंगा लेना होगा। बल्कि इधर से चलते में ही इन सब चीज़ों की व्यवस्था करते चलना है।

रामरूप दिन-भर मगन रहा। त्यौहार की भांति भीतर खाने-पीने की विशाल तैयारी हुई। बाहर तीज देखने वालों का ताता लगा रहा। स्वागत-सत्कार, प्रशंसा प्रशस्ति, खान-पान और विविध व्यवस्था से लेकर कहारों आदि की दिल खोल विदाई में कितनी जल्दी दिन बीत गया, पता नहीं चला। उधर के पुरोहित ने स्वयं बाबू रघुनाथ सिंह का प्रतिनिधि बन एक बैल पसन्द कर लिया और नये रंगीन पगहे में बांध सौ-सौ के पांच नोट के साथ उनके साथ रवाना कर दिया गया। विवाह के समय तो एक मामूली कारण से बरात रूठकर चली गयी थी और फिर रूठे लोगों को मनाने के लिए 'कलेवा' में खर्च ज़रा तगड़ा पड़ा। इस बार रिश्तेदार खुद उल्लास प्रदर्शित कर रहा है तो रामरूप काहे हाथ सिकोड़कर मनहूस बने?

शाम को रामरूप थककर चूर हो गया। दौड़-धूप से थकावट तो आएगी ही, चाहे वह दौड़-धूप खुशी-खुशी की चाहे वह विवशतावश हो। कभी-कभी यह थकावट बहुत प्रिय लगती है और ऐसी स्थिति में एकान्त में लेटे-लेटे तन के साथ मन भी ऐसा निष्क्रिय हो जाता है कि चेतना का निरीक्षक द्वार खुल जाता है। रामरूप की भी यही स्थिति थी। सुबह से लेकर अब तक की घटनाओं पर निरीक्षक चेतना का ऐसा इकट्ठा प्रकाश पड़ा कि रामरूप चौंक उठा। चेतना की निरीक्षक सक्रियता जैसे-जैसे बढ़ती गयी वैसे-वैसे उसका आश्चर्य बढ़ता गया और अन्त में सारी प्रसन्नता नाना प्रकार की प्रश्नाकुल खिन्नता में परिवर्तित हो गयी। उसे लगा, गठिया के उस बूढ़े घाघ ने उल्टे उस्तरे से मूंड लिया। उसके बनाये नक्शे में वह फंस गया। खोरा की उपस्थिति में लोभ का ऐसा चारा फेंका कि खतरनाक गोपनीय तत्त्व खुल गया। उस चारे की खुशियाली की लहर में यहां घर आकर लुट गया। तीज के सम्मोहन में बेरोक फिजूलखर्ची हो गयी। एक दूसरे घाघ अर्थात् विवाह-व्यवसायी ससुर के चक्कर में फंस गया। दुर्बल भावुकता ने घोर मूर्ख बनाकर सत्यानाश कर दिया। वेतन के पैसे उड़ गए और जेब खाली हो गयी कि कल अरविन्दजी के लिए फीस का प्रबन्ध नहीं हो सकेगा। नागपंचमी के त्यौहार और सावन के विविध पूजा कैसे पार घाट लगेगा? रामरूप, आज की भूलों के लिए तू क्या अपने को माफ करेगा? आज तूने भ्रष्टाचार के आगे समर्पण किया है, तूने

गलत से समझौता किया है, तूने मूल्यहीनता की आरती उतारी है और मरी हुई आदर्शवादी भद्रता के आगे ताताथेई करके नाच किया है।

इसके बाद उसके आगे प्रश्न पर प्रश्न खड़े होते गये। डाका के सन्दर्भ में या पूर्वांचल विकास मंच के बारे में वहां क्यों कोई चर्चा नहीं हुई? क्यों ठीक उसी दिन बुलवाया जिस दिन खोरा को भी बुलवाया था? दयालू के डांड़ वाले मामले को सुन अचानक उतने गम्भीर क्यों हो गए? क्या इसी जालिम की लगाई वह आग थी? ओह, रामरूप, तुम्हारी समझ पर पत्थर क्यों पड़ गया? सोचना चाहिए, क्यों वे इतने कृपालु हो गए? और तू भी स्वयं क्या 'हाथी से हाथी बझाने वाली नीति के अनुसार करइल को खोरा के माध्यम से फंसाने की बात नहीं सोच रहा था? पर वास्तव में कौन किसके माध्यम से किसको बझा रहा था, अब ज़रा ठण्डे दिल से सोच तो। और फिर सोच कि तू इतने नीचे क्यों गिरा? क्यों मदद मांगी? क्यों सिद्धि के पाखंड-जाल में योग दिया? क्यों कोइली का रहस्योद्घाटन किया? क्या हुआ तुम्हारा वह काली थान वाला साहसिक निश्चय? क्यों सामने पड़ते ही पूर्ववत् सम्मोहित हो गया? क्या चिरवांछित खेत मिलने की खुशी ऐसी जबरदस्त थी कि तू अपने को भूल गया?···और ज़रा सोचो तो, दुलहिन मलिकाइन ने यदि उस तरह अन्न-जल त्याग का अड़ंगा नहीं लगाया होता तो क्या होता? और यदि सीलिंग का दबाव नहीं होता तो? और ऐसे भी क्या भ्रष्टाचार से भ्रष्टाचार कटेगा? कोइली जैसी अपनी प्रेमिका के पाने की खुशी में कोई हनुमानप्रसाद खुश होकर यदि अपने ललकारे हुए कटहे कुत्ते को डांडू पर से खींच नहीं लेता है तो? और अभी तो सिर्फ बात ही बात है, दीनदयाल नहीं माने तो? अथवा ससुर रजिस्ट्री न करें, फिर धोखा दें तो? अरे हां, रजिस्ट्री के लिए तो कहा परन्तु एक बार भी यह क्यों नहीं कहा कि पानी बरसे तो उसे जोत लेना। वैसे इस वर्ष उसे जोतना है क्या? दीनदयाल की सिफारिश पर बाबू हनुमानप्रसाद ने झगड़ुआ को उसे बटइया पर दे दिया है और उसने सभापति के नलकूप से पानी लेकर ईख बो दिया है। तब भी, वे कहते तो! मौखिक रूप में स्वामित्व सौंप तो देते! झगड़ुआ उनका न होकर रामरूप का ही इस साल बटाईदार रहता। पर कहां एक शब्द भी मुंह से निकला? अदालत की रजिस्ट्री तो दूर है, उनके मुंह की रजिस्ट्री क्यों नहीं हुई? ज़रूर धोखा है।

लेकिन करइल महाराज अबकी धोखा नहीं कर सकते। गड़बड़ होने पर भीतर से मलिकइनिया चांप देगी। अभी मजाल नहीं है उसका कहा टाल जायं। जो हो, 'देखते चलो' रामरूप, क्या होता है! हां, कहता है सीरी भाई न, 'देखते चलो' अब एक दिन रामरूप चलकर करइल सरदार का फैसला उन्हें सुनाएगा। क्या सीरी भाई आधा-आधा पर मान जाएंगे? कार्तिक में ही सभापतिजी ने कहा था, कम-से-कम दो बीघा तो ले ही लेगा। मुकदमेबाज़ दयानाथ ने बीड़ी का धुआं

खींचकर कहा था, सुलह होगी भी तो फिफ्टी-फिफ्टी पर। और देखो, वह नकशा सामने आ गया। पिछले चैत में हंगामा हुआ। सीरीभाई के रिश्तेदार जमुनाप्रसाद मूर्ख बन गए। तमाम पंच लोग हवा हो गए। ऐसा लगा कि बाघ के आगे बकरी ने खुद आत्मसमर्पण कर दिया, लो खाओ। यानी उसकी नैतिकता को चुनौती दिया। तो, क्रूर लुटेरा भला नैतिक होता है?…अब सीरी दर्शन छांट रहा है, 'देखते चलो।'

देखेगा, रामरूप देखेगा। देखेगा कि कितनी जल्दी-जल्दी चीजें बदल रही हैं। इधर की दुनिया उधर हो रही है। कुल पांच-छह दिन ही तो रह गया है वह वर्मा का गोपन सम्मेलन और उसने एक बार भी उससे कुछ नहीं पूछा है। जैसे लगता है, मंच को उसके हाथों से एकाधिकार के लिए बलात् उसने छीन लिया है। यह सम्मेलन का संकुचित पूर्वाभास वर्मा के किसी नये और चालू लोकतान्त्रिक मूल्य से जुड़ने का सूचक है। क्या आश्चर्य रामरूप को निमन्त्रण भी न मिले। और निमन्त्रण मिले भी तो उससे क्या फरक पड़ा? स्थिति जैसी है, स्पष्ट है। तो अच्छा यही है कि कुछ सोच मत, रामरूप बस देखते चलो।

थकावट दूसरे दिन भी बनी रही। विद्यालय में रामरूप वर्मा को ढूंढ़ता रहा मगर वह आया नहीं। वास्तव में अब वह बहुत कम आता है। उसके लिए अवकाश की शायद कोई सीमा नहीं रह गयी। शाम को विद्यालय से लौटते समय रामरूप दुबरी देवता की ओर से होता आया और घर आने पर उसकी जेब में चार सौ रुपये थे। देवताजी इस साल कहीं से उसका एक बीघा खेत बतौर सिकमी जोत-बोकर पैसा भर पाई कर लेंगे। बड़ी कृपा हुई। खुशी गाड़ी सरकने की थी। फिर उस रात आसमान में बादलों के जमने से भी मन का मौसम कुछ बदला था। सुबह पानी बरसना शुरू हुआ तो ऐसा धुआंधार कि रामरूप विद्यालय नहीं जा सका। गलियों में नाले की तरह पानी उमड़ पड़ा। दुर्दिन दूसरे दिन दोपहर तक बना रहा। किन्तु शाम तक चलने-फिरने लायक हो गया। एक तो पहला पानी था, दूसरे लगातार ज़ोरों से बरसा था, प्यासी धरती ने अधिकांश को सोख लिया, शेष बह गया। अन्धेरा होते-होते गठिया से पिअरिया आ धमकी। सुबह बबुनी (रामकली) को लिवा जाएगी। मलिकाइन दुलहिनजी का हुक्म है कि वह इस साल पंचइयां की पूजा में वहीं रहेगी।

रामकली के साथ गठिया कमली नहीं जा सकी तो अरविन्दजी चले गए। पंचइयां (नागपंचमी) की पूजा सम्पन्न कराने का भार अब रामरूप पर आ गया। पानी बरस जाने से गांव के मुरझाये चेहरे पर कुछ चमक आ गयी थी परन्तु नाग-पंचमी का वह बीता उल्लास अब कहां रहा? अखाड़े टूट गये। 'धूल लगाने' वाले लोग गृहधन्धों में सिकुड़ गये। अब किसानों के परिवार से कोई कुश्तियों के लिए समर्पित पहलवान निकलकर नहीं उछल रहा है। लुंगीछाप झबरैले गंवई युवा

छात्रों और बच्चों में चीका, ऊंढ़ा और बरगत्ता (कबड्डी) आदि असाढ़ से शुरू होने वाले तथा विशेष रूप से नागपंचिमी के दिन प्रदर्शित होने वाले गंवई खेलों की रुचि जाती रही। हां, दर्शक बन तमाशा देखने की अलबत्ते भूख तेज़ दिखाई पड़ती है। परम्परागत मन्दिर प्रांगण में जहां शनिवार को बाजार लगती है, सवेरे से ही बजरंगवली की जय बोलती भीड़ जुटने लगती है। परम्परावश कुछ कूद-फांद के खेल और डालडा छाप कुश्तियों के जोड़ भी निकल आते हैं पर सब ठण्डा-ठण्डा, मात्र परम्परा पालन के लिए। फिर जल्दी ही जय बोलकर लोग भागते हैं दानीका-पूरा की ओर जहां कुश्तियों की पुरानी परम्परा अभी ज़िन्दा है।

क्यों दानीकापूरा जैसे आठ-दस घरों को छोटे सर्वहारा लोगों की बस्ती में सांस्कृतिक कुश्ती का रोमांच जीवित है और गठिया-महुवारी जैसे बड़े बाबू लोगों के गांवों में मर गया? रामरूप सोचता है, मामला संस्कृति और सभ्यता के टकराव का है। संस्कृति अपढ़, गंवार और गरीबों के टोले में अभी अटूट रूप में विराज रही है और सभ्य-समृद्ध गांव में टूट गयी। ऐसे गांवों ने नगरों से प्रभावित होकर उनकी तर्कशील बुराइयों को तो ओढ़ लिया है मगर उनकी अच्छाइयां उनमें नहीं आयीं। पुराने मुखिया साहब कहते हैं, 'यह कुश्ती-फुश्ती मूर्खता और लंठई है। बस नाग बाबा को दूध-लावा छिड़ककर घर पर पूड़ी-खीर खाओ, यही त्यौहार है। हाथ पैर तोड़वाने वाले धन्धे का जंगलीपन अब खत्म हो गया।' और देखते-देखते सचमुच सब खत्म हो गया। क्या रह गया जिसे 'देखा' जाय? और देखने के लिए किसी और गांव में चलें ऐसी मानसिकता औरों की भांति रामरूप में कहां रही? मारे व्यथा के अब तो वह इस दिन मन्दिर-प्रांगण में जाता ही नहीं है। हां, इस वर्ष दूध-लावा चढ़ाने अनिवार्य रूप से जाना पड़ेगा। मजबूरी है। कुछ वर्षों से यह कार्य सम्पन्न करने वाले अरविन्दजी ननिहाल जो चले गये।

नागपंचिमी के सन्दर्भ में पूजा के वातावरण से जुड़ते ही ऐसा लगा कि रामरूप का बचपन लौट आया और वह सीधे मां के अनुशासन में आ गया। उसे आश्चर्य इस बात का था कि पिछले कुछ ही वर्षों में वह लगभग सब भूल गया कि कब कहां किस देवता को क्या चढ़ता है? एक-एक बात मां को बतानी पड़ी। घर की पूजा में जब ग्यारह स्थान पर गिनकर दूध-लावा चढ़ाने का आदेश हुआ तो चढ़ाने के बाद वहीं बैठे-बैठे रामरूप ने पूछ दिया—

'ग्यारह स्थान पर क्यों चढ़ाया जाता है?'

'पूजा-पाठ में बहस ना करे के चाही,' मां ने उत्तर दिया, 'देवता लोग अनराज होला। एगारह गो नाग बाबा लोग होला, यही से एगारह जगह चढ़ेला। अउर काहें?'

'और इसके बाद परई में आटा रखकर दीपक जलाया जायगा न?'

रामरूप के इस कथन पर कमली खिलखिलाकर हंस पड़ी। बोली, 'पिताजी

को तो सब भूल गया।'

अरे, क्या ग़लती हो गयी ? रामरूप ने चौंककर पुत्री की ओर देखा। तीज-त्यौहार का हार्दिक उल्लास चेहरे पर छाया है। कितनी जल्दी ऐसी भरी-भरी सयानी हो गयी। अल्हड़ पांखों में पुरखिन-सी जानकारी की गुरुता नाच रही है। पवित्र भावोद्रेक की मानस-लहरें बिखेरती उसकी यह बच्ची अब बच्ची नहीं रही। रामरूप उसकी ओर भोलेपन के साथ देखने लगा जैसे पूछ रहा हो, क्या भूल गया ?

'महावीरजी की पूजा वाली बात पिताजी पंचइयां के दिन कह रहे हैं।' कमली बोली।

'अरे हां, मैं सचमुच भूल गया', रामरूप बोला, 'कहां इतना याद रहता है ? यह पूजा-पाठ तो अब औरत जाति के चलाये ही चल रहा है। कब पड़ेगी यह महावीरजी की पूजा ?'

'इहो भुला गइल ? जोरि के देखि ल। आज पंचइयां ह। आजु का बाद जवन सोमार परी ओह दिन रज्जे बाबा के छोटका पूजा होई आ ओकरा बिहान भइला महावीरजी के बड़का पूजा।' मां ने जवाब दिया।

'रज्जे बाबा कहा जाता है कि राजा बाबा ?'

'राजा बाबा ना, 'रज्जे बाबा' कहल जाला। कतहीं-कतहीं एह दिन 'कुंवर बाबा' के पूजा होले। हमन केहें परई में पांच जोड़ी पूरी धराले आ एगो हथ-रोटिया, जवना के तोशक कहल जाला। थोरे-चाउरो धराला आ दीआ बारि दीहल जाला। इहे रज्जे बाबा के पूजा कहाले। कुछ लोग एहके पांच पिरहा पूजा कहेलन।'

'रज्जे बाबा मुसलमान थे पिताजी।' कमली ने बीच में अपनी जानकारी प्रकट की।

'और ये पांचों पीर कौन थे ?' उसकी ओर घूमकर रामरूप ने पूछा।

'सुन, हम बतावत बानी।' मां ने बीच में छेड़कर कहा और उसके बाद अहेर खेलने गये किसी पांचों पीर की कहानी बतायी कि किस प्रकार उन प्यासे पीरों को किसी हिन्दू घर की 'सती' ने जल पिलाया और इस अपराध में उसके लांछित होकर जल भरने पर पीरों के साथ उसकी भी पूजा होती है। कहानी सुनकर रामरूप को बहुत आश्चर्य हुआ कि परम्परा से हम लोगों के घरों में कैसी-कैसी पूजायें होती आयी हैं और किस प्रकार विस्मृति के गर्द-गुवार के भीतर भी उनका जातिगत एकता और धार्मिक सहिष्णुता वाला रूप बना हुआ है। उसे यह भी आश्चर्य हुआ कि इस बात पर अब तक उसका ध्यान क्यों नहीं गया था ? उसने अब मनोरंजन के लिए हंसकर पूछा—

'अच्छा मां, भला हिन्दू के घर में ऐसी मुसलमानी पूजा क्यों होनी चाहिए ?'

'काहे नाहीं होई ? आदो से होति चलि आइलि बा त काहे नाहीं होई ?...

हमन का त अब बस जोग-छेम कइ देत बानी जा। असली रज्जे बाबा के पंचपिरहा पूजा तोहार आजी करवले रहलीं। राति भर मिआं डफाली गवलन स। सबेरे बकरा कटाइल आ 'चढावल' गइल। सभ खाइल-पिअल आ हाड़-गोड़ घरे में गाड़ि दीहल गइल। भगवान का दुअरा हिन्दू आ मुसलमान बराबर ह। तू न तजिया में 'बन्हुआ' आ 'पायक' बनल हव ? भुला गइल ?'

हां, रामरूप को याद आया।···लेकिन पता नहीं क्यों अब उसकी चर्चा-मात्र से उसे शर्म लगती है। शायद 'समझदार' होने के कारण। माताओं की पुरानी पीढ़ी में यह 'समझ' नहीं है। कैसे तन्मय होकर ताजिया को 'दाहा बाबा' के रूप में स्मरण किया जा रहा है। किन्तु यह सब कब तक चलेगा ? नयी पीढ़ी के कन्धे से परम्परा का यह सब बोझ झड़ता जा रहा है। अरे यह बोझ क्या थोड़ा है ? मां तमाम-तमाम पूजाओं का एक कतार से उचार करती जा रही है···कि रज्जे बाबा की पूजा के दूसरे दिन मंगलवार को 'सतिमी' की पूजा या महावीरजी की पूजा होती है। पांच या ढाई या सवा सेर (किलो) शुद्ध घी का रोट कोरी हंड़िया में रखकर चढ़ेगा। हंडिया के आगे दीपक जलाया जायेगा। उसके आगे दो परई में पिसान, एक में आधा-आधा पर निशान, पिसान पर गुलउरा, सामने 'बन्नी-दाई' का पीढ़ा, पीढ़ा पर पांच पूआ, सामने दीपक, हां, पिसान वाली परइयों के आगे आधा-आधा पूआ, एक किसी 'शकर कूतिया' को भी। फिर घर पर होम, 'नाथ' बाबा के यहां होम, प्रसाद। कौन हैं ये 'बन्नीदाई ?' बन्दी खाने की बेड़ी काटती है इसलिए 'बन्नीदाई'। यही शीतला है। शीतल करती हैं। जब-जब घर में लड़का पैदा होगा, उसके नाम पर एक-एक 'ठोसा' बनता जायेगा। 'बन्नीदाई का ठोसा' देख पता लग जायेगा, खानदान में कितने लड़के हुए। इसी प्रकार 'माता दाई' का सिरजना बनता जाता है। सबकी पूजा···पंचइयां से लेकर पूर्णिमा तक। पूर्णिमा यानी 'पनढकउआ'। पीपल के पेड़ पर, डीह बाबा पर जल ढरकाते हैं न ? माता दाई की पूजा, सात जगह सोहारी, सात जगह सेनुर का टीका, 'छाक।' ···सोहारी और जाय काली स्थान पर, गाजा-बाजा, धूमधाम। गांव भर की पूजा और भारी पूजा···कराह, बकरा, झंडी, खटोला, पचरा, सोखा, 'खेलना' और 'भाखना'···अरे, उस मंगलवार को ही तो उन्नीस तारीख पड़ेगी ?

'ठीक महावीरजी की पूजा के दिन गठिया में एक 'सड़क बाबा' की पूजा होगी मां।' रामरूप ने कहा।

'जा पूता, देवी-देवता के हंसी ना कइल जाला।···जल उछरंग के नाग बाबा लोग के गोड़ लागि के ले जा, बाहर का देवतन पर चढ़ा आवा।···महावीर जी का पूजा का दीने परसाद खाये खातिन अपना संघी बरमाजी का बोला लीह। आज-कल पता नइखे लागत।' मां ने कहा।

पूजा की शेष क्रिया सम्पन्न करने में रामरूप ने मां के आदेश का पालन

किया किन्तु वर्मा का जिक्र आते ही उसका मन बेहद कसैला हो गया। एक धक्का उसे यह सोचकर लगा कि सम्मेलन का उसे निमंत्रण तक नहीं मिला। उसने कहा—

'वर्मा को उस दिन कहां फुरसत होगी? आधुनिक युग के विधायक वीर की राजधानी में वह 'सड़क बाबा' आ 'सत्तामाई' की पूजा में उस दिन लगा रहेगा।'

'ई कवनो बरमाजी का कपार पर नावा देवता उपटल बाड़न?…देख कमली नातिन, छाक आ अगिआरी ले के हमरो के ओह दिन उहां उपरी बेरा लिया चलिहे।' मां ने अत्यन्त भोलेपन से कहा।

कमली अपनी बुढ़िया आजी की सिधाई पर आंचल से मुंह ढककर धीमे-धीमे हंसने लगी। तभी रामरूप ने उससे पूछा—

'क्यों रे, वोट के बाद तुम्हारा वह वर्मा चाचा क्या कभी आया था यहां?'

सवाल सुन कमली की हंसी रुक गयी और गम्भीर होकर धीरे से बोली—'अब क्या यहां आ…यें…।' अन्तिम शब्द उच्चारण में रह गया। ऐसा लगा कि कहते-कहते वह कुछ मर्माहत और संकुचित हो गयी।

रामरूप दूध-लावा की थाली उठाकर बाहर निकल गया।

५५

'पूर्वी उत्तर प्रदेश का पिछड़ापन शुरू से ही है। शिक्षा-दीक्षा से लेकर उद्योग-व्यवस्था आदि तक में इस क्षेत्र की पश्चिमी उत्तर प्रदेश की तुलना में जो हीनता है, वह परम्परागत है। कारण यह है कि यहां के लोग शुरू से ही शासन-सत्ता के विरुद्ध संघर्षरत रहे हैं। फलतः उनका कोपभाजन होकर उपेक्षा नीति का शिकार होना पड़ा। डाक्टर राम मनोहर लोहिया इस क्षेत्र को 'मार्च-लैण्ड' कहा करते थे। सेनायें यहां से होकर पूरब से पश्चिम और पश्चिम से पूरब जाया करती थीं। हलचल-हड़कम्प और आतंक के वातावरण में लोग क्या उकसते? बाहर से तो साधनहीन थे और इस हीनता को आन्तरिक अभिजात भाव से अर्थात् आध्यात्मिकता से लोग ढकते आये हैं। यहां के लोग पुराणवादी, परम्पावादी और रूढ़िवादी के रूप में मशहूर हैं। इस क्षेत्र की सनातन धर्मिता की प्रवृत्ति के मुकाबले में पश्चिमी उत्तर प्रदेश का आर्यसमाजी प्रभाव जो प्रगतिशील प्रभावों वाला था, बीस पड़ गया।'

रामरूप महावीरजी की पूजा के कारण कुछ देर से पहुंचा तो उस समय भाषण चल रहा था। भाषण कर रहे थे वयोवृद्ध समाजवादी नेता श्री दलसिंगार दुबे। उसे आश्चर्य हुआ कि इस कांग्रेसी मंच पर लोगों ने समाजवादी नेता को भाषण के लिए आमन्त्रित किया है। शायद 'मंच' को अराजनीतिक रूप देने के

लिए ऐसा किया गया है। मंच पर क्षेत्रीय कांग्रेसी एम० पी० श्री संतशरणजी और भूतपूर्व जनता विधायक पं० बालेश्वर उपाध्याय एक साथ दिखाई पड़ रहे थे। बाबू हनुमानप्रसाद मालाओं से लदे फूले-फूले सभापति के आसन पर विराजमान थे। उनकी बगल में नवीन बाबू, मैनेजर विश्वनाथ पाण्डेय और दीनदयाल आदि बैठे थे। एक पृथक् माइक के सामने बैठ संचालन स्वयं वर्मा कर रहा था और विधायक भुवनेश्वर मंच के पीछे किसी व्यवस्था में खड़ा है। दिलीप, अच्छे, विजय और बनारसी की चांडाल चौकड़ी उसके पीछे स्वयं-सेवक के रूप में खड़ी थी। मन्त्रीजी का उद्घाटन भाषण हो चुका था। रामरूप उसे नहीं सुन सका। सुनता कैसे? वह काफी देर से पहुंचा है। घंटों इस ऊहापोह में बीत गया कि चलें या न चलें। स्पष्ट था कि जान-बूझकर उसकी उपेक्षा हुई है। दो दिन पहले झटके में वर्मा विद्यालय पर मिला तो अजीब नाटकीय ढंग से चौंककर पाकिट टटोलते हुए कहने लगा, 'अरे यार, यह देखो मेरी भूल, विद्यालय पर प्रिंसिपल सहित सारे अध्यापकों को सामूहिक निमन्त्रण देने के बाद तुम्हारा विशेष निमन्त्रण कार्ड तो मेरे पाकिट में ही रह गया। खैर, यह लो···।' फिर बहुत टटोलने पर भी नहीं मिलने पर परेशानी जैसी चेहरे पर टांगकर कहता है, 'मैं घंटे-भर के भीतर तुम्हारे पास यहीं विद्यालय में भेजवा रहा हूं। उस दिन आना अवश्य है। तुमसे मुलाकात नहीं हुई और अकेले खटते-खटते मर गया। विकास हो तुम्हारे क्षेत्र का और मरे यह बनारसी ऊपरफट्टू। इसी भाग-दौड़ में 'तीज' वाली मिठाई छूट गयी।'

'तुम्हारी मिठाई रखी है। बल्कि मां की ओर से बुलाहट तो उसी दिन महावीरजी का प्रसाद ग्रहण करने के लिए है पर तुम कहां आ पाओगे?'

'ज़रूर आऊंगा। क्यों नहीं आऊंगा? मां का आदेश हो और मैं न आऊं?'

'कमली भी कह रही थी कि चाचा अब आते नहीं।'

'कमली?' एक विचित्र ढंग से वर्मा चौंक गया। जैसे कहीं कोई फोड़ा छू गया और घबराये जैसे स्वर में बोला, 'अरे यार, यह तो डबल वेट हो गया।···अच्छा आऊंगा, श्योर।···और सब ठीक है न?' और हाथ जोड़ फीका नमस्ते फेंक जब वह साइकिल पर बैठ गया तो रामरूप ने मन-ही-मन कहा, अब नेता बन जाने की सही-सही कसर भी पूरी हो गयी। झुट्ठा कहीं का। इसके क्लास के लड़के इधर मटरगश्ती कर रहे हैं और यह भगा जा रहा है गठिया की ओर। कौन टोकने वाला है? और वर्मा उस दिन के बाद विद्यालय आया नहीं। आज धवल खादी के दहकते रूपक में मंच के आगे बगल में सफल सूत्रधार की मुद्रा में बैठा है। लेकिन सूत्रधार यह कहां है? वह तो नोई और है जिसने पहले 'पूर्वांचल विकास मंच' की पुरानी नींव को एकदम उखाड़कर और उसकी स्मृति तक को धो-पोंछकर जैसे साफ कर दिया। तो क्या वह वर्मा मात्र किसी के विरुद्ध इस्तेमाल हो रहा है? किन्तु इस समस्त प्रतिक्रियावादी रंग में विरोधी या विपक्षी कौन है?

क्या रामरूप ? क्या खोरा ? और क्या इसलिए कि उस बार बाबू हनुमानप्रसाद सभापति नहीं बन सके ? तो, फिर पांच-छह दिन पहले वाला वह बुलावा और आत्मीय भाव-प्रदर्शन क्या था ? क्या उसका कोई राजनीतिक अर्थ था ? धत्तेरे की, कितना सावधान रहे आज का मामूली मध्यवर्गीय व्यक्ति राजनीति से ? वह कहीं से भी उठाकर पटक सकती है। जवड़ों में दबोचकर हड्डी-पसली चरमरा सकती है।

हनुमान मन्दिर के प्रांगण में बने विशाल पंडाल के सामने बाहर जहां बरगद का पेड़ है, जहां मन्दिर के लिए आयी पत्थर की पटियाओं का ढेर लगा है और जहां से मंच की सारी कार्यवाही साफ-साफ दिखाई पड़ती है, रामरूप जाकर पहले से बैठे दर्शकों के साथ एक पटिया पर बैठ गया। तभी सुनाई पड़ा, 'अरे मास्टर साहब, आप यहां कहां ? स्टेज पर आपको कुछ देर पहले माइक से बुलाया गया। कोई खोराजी आये हैं।'

देखा उधर बीरबहादुरजी हैं। रामरूप उठकर उनके पास चला गया। बोला, 'मैं अनिमंत्रित अवांछित श्रोता हूं। मेरे लिए यहीं ठीक है। खोराजी से अन्त में मिल लूंगा।···मगर, मंच पर उनकी शक्ल दिखाई नहीं पड़ रही है। खैर, बाकी बात यह भाषण सुन लिया जाय तो बताऊंगा।'

दुबेजी का भाषण चल रहा था—

'···पश्चिमी उत्तर प्रदेश में द्विजातियों में भी श्रम की प्रतिष्ठा शुरू से है। इधर पूर्वी उत्तर प्रदेश में आध्यात्मिकता और थोथी वर्ण-उच्चता के कारण कर्मठता में घुन लग गया। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में रूढ़िग्रस्तता छंटी तो बराबर समय अनुकूल पड़ता गया। प्रकृति भी उनकी सहायक रही। पूरब में अधिकांश ज़मीन या तो बंजर है या बाढ़ में डूबी है। वहां ऐसी बात नहीं। वहां गंगा-जमुना की नहरें, नहर हिंडन जैसे साधन शुरू से हैं। सन् १९३७ से १९४६ तक प्रादेशिक मंत्रि-मण्डल में श्री हाफिज इब्राहीम विद्युत् मन्त्री थे और जितना विद्युतीकरण पूर्वी उत्तर प्रदेश में स्वराज्य के बीस-पचीस वर्षों में हुआ उतना स्वराज्य के पूर्व वहां हो गया। जिस समय पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिले-जिले पर एक-एक हाई स्कूल और ले-देकर इस पूरे क्षेत्र में उच्च शिक्षा के लिए मात्र काशी हिन्दू-विश्वविद्यालय था तभी पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अलीगढ़ मुसलिम यूनिवर्सिटी, आगरा यूनिवर्सिटी, रुड़की इंजीनियरिंग कॉलेज, देहरादून सैनिक कॉलेज, डी० ए० वी० कॉलेज मेरठ, ज्वालापुर महाविद्यालय और प्रेम महाविद्यालय वृन्दावन आदि थे। इस प्रकार यह असमानता शुरू से रही और कांग्रेसी सरकार की पक्षपातपूर्ण नीति बनाम 'समान विकास सुविधा' के नीचे बढ़ती-बढ़ती अब तो महा-भयंकर हो गयी है। कैसे दूर होगी यह असमानता ? कैसे टूटेगी पिछड़ेपन की यह बंजर परती ? गठिया से स्टेशन तक के लिए एक सड़क का उद्घाटन होकर क्या होगा ? क्या बनेगी

भी ? बाढ़ आयेगी, सारी मिट्टी बह जायेगी। फिर सालों तक कोई पूछने वाला नहीं रहेगा। सरकारें रोज़ बदल रही हैं और कागज पर खिंची पुरानी सड़क की लकीरें एक ओर रोज-धो-पोंछकर साफ होती हैं और दूसरी ओर नयी-नयी लकीरें बनती जा रही हैं। बस कागजी सड़क की लकीरों का जाल लेकर यह मूर्ख पूर्वी उत्तर प्रदेश चाटता रहे। इसकी तकदीर···।'

इसी समय 'इनकलाब ज़िन्दाबाद' करते प्रदर्शनकारी लोगों की एक टोली दाहिनी ओर से प्रकट हो गयी। आगे-आगे हंसिया-हथौड़ा वाला लाल झंडा लिये हीराराम और उनके पीछे गला फाड़ते जैसे फटे-हाल लोगों का एक समूह नारा उछाल रहा था···

मजदूरों का पेट काटकर···
सड़क बनाना बन्द करो !

एक क्षण के लिए सभा की कार्यवाही रुक गयी, भाषण रुक गया और विधायक भुवनेश्वर सहित अनेक लोग झपट पड़े इन भ्रष्टाचार के खिलाफ चिल्लाते लोगों को दबोच कर शान्त करने के लिए। पुलिस वाले भी असाधारण तत्परता प्रदर्शित करने लगे और तब वह शोषित-पीड़ित लोगों का प्रदर्शन और कितना चलता ?

'इस बार सुखुआ-सिटहला नहीं दिखायी पड़ रहे हैं ?' रामरूप ने बीरबहादुर से पूछा।

'तुम्हें यह भी पता नहीं', बीरबहादुर ने उत्तर दिया, 'वे तो आज चार-पांच दिन हुए गुंडा एक्ट में गिरफ्तार कर लिये गए।'

'अच्छा! हमें पता नहीं। लगता है डरकर लोगों ने उन कांटों को हटा दिया।'

'यही बात है।···मगर, एक खबर और बतायें ? कल तुम्हारे ससुरजी की भ्रष्टाचार वाली बगिया के दो फूल भी सरकारी मेहमान हो गये हैं। समझे या नहीं ?'

'नहीं, ज़रा खोलकर कहो।'

बीरबहादुर ने रामरूप के कानों में मुंह डालकर कहा, 'सुग्रीव और खुबवा दोनों मार्फिया की तस्करी में मुगलसराय की रेलवे पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिए गये हैं।···ढाई लाख का माल रहा है।···जानते हो, सड़क के उद्घाटन में दो घंटे का विलम्ब हो गया। क्योंकि मन्त्रीजी को बिना पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के फोन की सुविधा के लिए बबुनी बाजार ब्लाक पर ले जाया गया। उन्होंने किसी डी० आई० जी० को फोन किया कि यहां के ब्लाक कांग्रेस कमेटी के दो सक्रिय सदस्य पुलिस की भूल से पकड़ लिये गये हैं···।'

'बस, बस। समझ गया, तुम्हारे कहने से अधिक।' रामरूप ने कहा और उसकी आंखों के आगे उस दिन का बाबू हनुमानप्रसाद के दरवाज़े वाला दृश्य झलक उठा। उसने बीरबहादुर से कहा, 'और यही मन्त्री यहां उद्घाटन के बाद

मंचीय भाषण में सत्य, अहिंसा और न्याय का ढिंढोरा पीट रहा होगा।'

'मत पूछो, मार आंकड़ा, तमाम देश से गरीबी दूर हो गयी। रामराज्य आ गया। दूध-घी की नदियां बह चलीं। खेत-खेत में पानी पहुंच गया और गांव-गांव में सड़क।···कहा कि अभी तो यह सड़क सिर्फ स्टेशन से गठिया तक आ रही है, इस आपके नौजवान विधायक के रहते वह दिन दूर नहीं जब गठिया में पक्की सड़कों का चौराहा बन जायगा।···खूब ताली पिटी।'

'क्या हम लोगों के पिछले सम्मेलन की कहीं कोई चर्चा हुई ?'

'बहुत मामूली ढंग से। अपने स्वागत भाषण में एम० एल० ए० साहब ने मात्र यही कहा कि नौजवान और कर्मठ बुद्धिजीवी भारतेन्दु वर्मा और करइल के कबीर कवि खोरा ने इस मंच की परिकल्पना की थी और आज इसे ठोस रूप दिया जा रहा है।'

'तो क्या ठोस रूप दिया गया ?'

'पता नहीं। शायद आगे कुछ खुले।'

'आगे तो भाषण चल रहा है···दुबेजी के वैसे सारगर्भित भाषण के समापन के बाद यह उपाध्याय क्या फालतू बकवास कर रहा है ?'

'वही मान-पत्र वाली बातों को दुहरा रहा है।'

'क्या मान-पत्र भी दिया गया है ?'

'हां, तुम्हें मिला नहीं ?···यह देखो।'

बीरबहादुर ने अपने पाकेट से मान-पत्र निकालकर रामरूप को थमा दिया और वह खोलकर उसमें डूब गया। सिंचाई-मन्त्री को महान् अतिथि से लेकर नरपुंगव और राष्ट्रदेवता आदि उपाधियों से विभूषित कर अपनी बात कही गयी है···नदी-नाले और ताल-तलैया से चतुर्दिक् अवरुद्ध करइल के इस बीहड़ क्षेत्र में आपका पदार्पण एक ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। यह वह अभागा क्षेत्र है जो अब तक तिमिराच्छादित गहन गर्त में डूबा रहा है। यहां की सोनामाटी अभिशप्त हो गयी है। यहां के साधनहीन उर्वर मरुस्थल के समस्त भाव उमड़ने के साथ ही अभाव के कुटिल कुचक्र में पिस जाते हैं।

रामरूप मान-पत्र पढ़ता जाता है और उसके होंठों पर मुस्कराहट थिरकती जाती है। सोचता है, वर्मा ने मान-पत्र लिखने में अपनी कलम तोड़ दी है। राजनीतिक घोंघे जैसे मन्त्री पर खूब उछाली गयी ऐसी रोमानी पंक्तियां···गहन अन्धेरे में 'मंच' की यह जो ज्योति शिखा प्रज्ज्वलित हुई है, प्रबल झंझावात में कहीं बुझ न जाये। इसीलिए आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा है अक्षय-स्नेह दान का जिसके पूत प्रकाश में करइल के नीरव-नीड़ से प्रसुप्त कृषक-शावकों के सम्मोहक कलरव मुखरित होते रहें। सोनामाटी के सुगन्धित फूल समाज में अपनी सुगन्धि बिखेरते रहें। समाज की गतिशून्य शिराओं में नव-जीवन संचरण

होता रहे और आज हम सब महानुभाव के इसी स्नेह-दान के आकांक्षी हैं।

'तो ऐसे स्तवन के बाद भक्तों को क्या कुछ वरदान भी मिला है?' पूरा मान-पत्र पढ़कर रामरूप ने बीरबहादुर से पूछा।

'एक ट्यूबवेल गठिया को मिला है और नहर तथा बांध के लिए आश्वासन मिला है।'

'सत्यानाश ! करइल में बांध बनकर क्या होगा? डूबते गांवों को क्या डुबाना है? उलटी खोपड़ी हो गयी इन राजपुरुषों की।'

इसी समय मंच से विधायकजी ने घोषणा की कि सभापति के भाषण और संयोजक के धन्यवाद प्रकाश के बाद सभा की कार्यवाही समाप्त हो, इसके पूर्व, 'पूर्वांचल विकास मंच' के संगठन की एक रूपरेखा सामने रखी जा रही है। इस घोषणा के बाद विधायकजी द्वारा बाबू हनुमानप्रसाद की अध्यक्षता में गठित जिस नयी परामर्शदात्री समिति के सदस्यों का नाम पढ़ा गया उसमें सिर्फ रामरूप को छोड़ शेष सभी वे ही पुराने नाम थे जो पिछली समिति में थे। यहां तक कि खोरा का भी नाम था। इसका अर्थ कि दामाद को निकाल ससुर को प्रतिष्ठित किया गया। वाह वर्मा साहब, क्या कहना है! भीतर से झनककर बाहर से रामरूप हंसने लगा। अब ऐसी जटिल राजनीतिबाजी के बीच कैसे जिया जा सकता है? किसे प्रसन्न करने के लिए यह कपटपूर्ण जोड़-तोड़ हुआ है? विधायक को या उसके बाप को या दोनों को? शायद वे इस प्रकार अपने इस 'विरोधी' को अपमान-उपेक्षा की मानसिक यन्त्रणा में पीसकर चूर कर देना चाहते हैं। एक समय का जिगरी दोस्त और दाहिना हाथ आज दुश्मन बन उनका हथियार बना है। हां, बना नहीं है, बना लिया गया है।

'सूची के नाम सुन क्यों तुम्हारा चेहरा तनकर इस प्रकार तमतमा गया?' बीरबहादुर ने पूछा, 'क्या इसलिए कि तुम्हारा नाम नहीं है?'

'नहीं···हां···नहीं···कुछ और बातें हैं।' सहज होने का प्रयत्न करते हुए रामरूप बोला।

'तो लो, तुम्हारा नाम भी आ गया।'

सचमुच, इस संक्षिप्त भूमिका के साथ कि उस पार बिहार से कथित नक्सल-वाद के नाम पर अराजकता के चरण बढ़ते चले आ रहे हैं, करइल की शान्ति भंग होने का खतरा है और इसकी रोकथाम के लिए 'सुयोग्य' व्यक्ति के संयोजन में एक समिति का गठन किया जायेगा। कौन सुयोग्य? रामरूप ने सुना 'गुंडा-बदमाश विरोधी अभियान दल' के नेता के रूप में उसका नाम उछल रहा है। सुनकर उसके भीतर ऐसा उबाल आया कि चीखकर एक नारा लगाने के लिए झटके से खड़ा हो गया, 'राजनीति : जिन्दाबाद !' पर कुछ सोचकर उबाल को पी गया। क्या अर्थ इस कुचक्र का? क्या सचमुच वे उसे 'वही' समझते हैं? असह्य ! शेष नामों

को कौन सुनाता है ?

बीरबहादुर 'कहां, कहां ?' कहता रहा और रामरूप ने दांत पीसकर पंडाल छोड़ दिया।

कुछ दूर जाकर याद पड़ा, खोरा !

पंडाल के पीछे खोराजी एक कुर्सी पर बैठे हैं। कुछ क्लान्त लग रहे हैं। मारकीन की जगह खादी की चादर गले में लटक रही है। यह परिवर्तन क्यों ? कैसे ?

'चलिये यहां से' पास जाकर रामरूप ने कहा, 'यह जगह हमारे-आप जैसों के ठहरने योग्य नहीं है।'

'के रामरूप जी ?' खोराजी ने चौंककर देखा और कहा, 'आपको खोजने में हम विछिपित हो गया। लोग बोले, कि अपने का मित्र सभा में बुलाया है और हम आया तो मित्र अतरिच्छ।···कहां चलना होगा ? अब तो सब खतम है···।'

'क्या आपको यहां की चालबाजियां अच्छी लगती हैं ?'

'कौन चालबाजी ?' भगवन् की दया से सब अच्छा है रामरूप जी !'

'तब बैठिये। मैं चला।···किसी दिन आऊंगा तो बात होगी।'

'जरूर से आइये। बहुत भेद की बात है। मन कहने को अफना रहा है। अपनी तबीयत एह बीच बराबर नरम रह रही है। कुछ दवा का जोगाड़ सरकार ने किया है···।'

रामरूप आगे कुछ नहीं सुन सका। कौन 'सरकार' आजकल खोरा की दवा का प्रबन्ध कर रही है ? भारत सरकार या गठिया के छोटे-बड़े सरकार में से कोई ? ···गया खोरा भी।

५६

एक बार बरसकर फिर आसमान तड़क गया। ऊमस भरा माहुर घाम उगने लगा। खेत को नमी फिर बहुत नीचे खिसक गयी। फिर भी किसान हैं कि बीज छींटते ही जा रहे हैं। उस दिन सुबह बिना बीज की गठरी लिये बैलों के साथ हल उठाकर जालिमा आगे बढ़ा तो रामरूप ने पूछा, 'क्या कहीं कुछ छींटना नहीं है ?'

'नहीं मालिक', बायें कन्धे पर का हल दाहिने पर बदल रामरूप की ओर देखते हुए हलवाह ने उत्तर दिया, 'क्या होगा बीआ बरबाद कर ? सब ततहर जायेगा।'

'अरे, तुम्हारी आंख में क्या हुआ है ?' रामरूप ने पूछा और देखा कि उसकी बायीं आंख एकदम सुर्ख होकर फूल गयी है और उसमें पानी तैर रहा है। फिर

तत्काल उसे लगा कि गलती हो गयी। 'देखना' नहीं चाहिए था।

'आंख की नयी बीमारी 'जयबंगला' है मालिक ! मत देखिये इधर। मुंह देखना पाप हो जायेगा। नज़र लड़ने पर मुहब्बत की तरह यह रोग लग जाता है।'

दूसरे दिन शाम को रामरूप की दाहिनी आंख जलने लगी। शीशा देखकर वह चौंक गया। आशंका तो थी परन्तु इतनी जल्दी ? अच्छा अब यह पाप किसी और को न लगे। धूपी चश्मे की खोज में वह भीतर गया तो देखता है कि एक और पाप ग्रह खड़ा है। पत्नी, पुत्री और पुत्र की कान्फ्रेंस में मां घोषणा कर रही है—

'हम काल्हि गाड़ी नधवा के गंगाजी चलबि। अरे बाप रे बाप, पुरनवांसी बीति जाई त कपार पर सीलि धइके पैदल चले के परी।'

रामरूप ने जाना, मामला गंगा मइया को चुनरी चढ़ाने का है। जो तूफानी संक्रामक रोग की भांति पूर्वी उत्तर प्रदेश में फैला है। बक्सर रामरेखा घाट पर नित्य चुनरी चढ़ाने वाली औरतों की भारी भीड़ लगी रहती है। खिचड़ी-अमावस का मेला और ग्रहण का नहान फीका पड़ गया है। ट्रेन और बस में लगन के दिनों से अधिक भीड़ बढ़ गयी है। रिक्शों का भाड़ा दुगुना-तिगुना हो गया। दुकानों पर चुनरी और साड़ियों का स्टाक समाप्त हो गया। बताशा, अगरबत्ती, मिठाई और फूलमाला आदि बेचने वाले बन गये। मूर्खजन सलामत रहें। चालाक तो माला-माल हो ही जायेगा।

रामरूप की आंख देखकर मां ने कहा, 'तोहरो आंखि के लागल छुति का ?··· अरे भइया, कतहीं एगो पांच किलो के बेंग (मेढ़क) बा। ऊ फेड़ पर बइठि के अदिमी के बोली में भाखत बा कि हम आंखि के रोग ले के आइल बानी आ हमार भाई हैजा ले के आ रहल बा।'

कहते-कहते मां सिहर गयी और आगे का किस्सा बताया कि कैसे रक्षा होगी ? इसके लिए कहीं किसी गांव की महिला को गंगाजी ने स्वप्न में आदेश किया है कि अपने भाई से चुनरी लेकर चढ़ाओ तो भाई का कल्याण होगा। उस औरत ने नैहर जाकर भाई से कहा है तो उसने 'पाखंड' कहकर उसे खाली हाथ वापस कर दिया है। दूसरे दिन भाई अचानक मर गया है तो फिर गंगाजी ने उस औरत को स्वप्न में बताया है कि उसका कफन आधा फाड़कर ओढ़ लो तो वह जी जायेगा···धन्य हो गंगाजी, मरे को जिला दिया। अब उनका हुक्म कौन टाले ? हर औरत भाई से चुनरी लेकर पिठार के साथ गंगाजी को चढ़ायेगी। सगा भाई नहीं होगा तो दूर-दराज का खोजा जायेगा। पड़ती रहे मार भाई लोगों पर, भाई लोगों का चढ़ावा पूरा होना चाहिए। हल्ला, अफवाह, हलचल, हड़कम्प, भीड़, पूजा चढ़ावा का जोर शोर···आ गयी है चुनरी रामरूप के ननिहाल से भी और गठिया से भी। अब ले चलो रामरूप अंधविश्वासों की बैलगाड़ी खुद हांककर गंगाघाट तक। क्या कोई विकास-मंच इस घाट की भीड़ को छू पायेगा ? लोगों के भीतर की

कठिन बंजर-परती तोड़ने में अभी कितने युग लगेंगे ?

दूसरे दिन सुबह कौवा बोलने के पूर्व ही बैलगाड़ी नाधकर तैयार हुई। मां अपने पूजन के सामान के साथ कमली की मां की चुनरी आदि लेकर कमली और अरविन्दजी के साथ बैठ गयी। भगेलुआ को पिताजी के धान वाले खेत में पानी चलाना था। अत: बैलगाड़ी को ले चलना रामरूप के जिम्मे था। पहले वह इसे शौक से हांका करता था। अब लाज लगती है। किन्तु इस समय वह किसी आन्तरिक प्रतिक्रियात्मक उद्वेग के कारण पूरी तरह अपने 'अध्यापक' को तोड़ने में लगा था। यह एक मौका अनायास मिल गया। पुराना हाथ अभी भूला कहां होगा? वह पगड़ी बांधकर गाड़ी हांकेगा। 'आव बेटा' अथवा 'जिओ राजा।' जैसे लच्छेदार शब्दों की चाबुक फेंक बैलों को 'मका' देगा। आज रविवार के अवकाश का इससे बढ़कर सार्थक उपयोग और क्या होगा ? फिर देखो खुदा की उलटी कुदरत कि सावन में बैलगाड़ी पूरे करइल को हेलती गंगाघाट तक जायेगी।

लेकिन बैलगाड़ी आगे बढ़ी तो रामरूप को कठिनाई महसूस होने लगी। बैल बढ़ नहीं रहे थे। एक ने जुआ छटका दिया तो वह सोचने लगा, क्या ये भी जान गये हैं कि कोई अनाड़ी हांकने बैठा है ? क्या चूक है उसके कासन देने में या हांकने में ? उसे लगा, पीछे बैठे कमली और अरविन्द आपस में सांय-फुस कर धीमे-धीमे हंस रहे हैं। काफी मशक्कत के बाद गाड़ी बाग के बाहर हुई तो कमली ने हंसते-हंसते कहा, 'बाबूजी को गाड़ी हांकने नहीं आ रहा है।'

'बाबूजी क्या कोई गाड़ीवान हैं ?' रामरूप ने तनिक झुंझलाहट के साथ कहा और उसका अध्यापक अनजाने अकड़ उठा और फिर तुरन्त ही चेत होने पर भीतर का यह खेल देख वह ठठाकर हंस पड़ा। उसकी हंसी से लड़कों का उत्साह बढ़ गया।

'बबुआ (अरविन्द) कह रहा है कि बाबूजी कहें तो मैं गाड़ी को हांक ले चलूं।' कमली ने फिर कहा।

बात सही थी। इस साल खलिहान से जो अनाज-भूसा ढोया गया है, उसमें उसने गाड़ी हांकना अच्छी तरह सीख लिया है। वह अक्सर भगेलुआ को पीछे बिठाकर पगहा हाथ में ले लेता और 'मोहड़ा' के पास बैठ बोलता, 'आव !' और पगहा ढीला कर पीठ पर ढब से पटक देता कि बैल पनपनाकर भागने लगते। फिर कुछ लोगों के हाथों में, शब्दों में वह क्या कुछ होता है कि अबोल बैल उससे जुड़ जाते हैं। बच्चा हुआ तो क्या हुआ ? वह कठिन ग्रामीण कार का ढीठ ड्राइवर है।

और आश्चर्य ! बित्ते भर के उस लड़के के हाथों में पगहा आते ही गरियार जैसे कठुआये बैल पलीता हो चौकड़ी भरने लगे।···हड़हड़-हड़हड़-भड़भड़-भड़भड़···संभालो मां लोटा-डोलची, पकड़ लो बल्ली, ठांय-ठांय···खड़खड़-

खड़खड़···अरे यह गाड़ी चल रही है कि सवारी को पटक-पटक घायल कर रही है ?···बबुआ धीरे-धीरे···अरे, बचाके···देखो खांवा है···ठांय-ठांय···ठक्··· ठांय···कुछ टूटे-फूटे न···बस करो···बस···धीरे···और धीरे···देखो रामरूप नन्हे हाथों की करामात ! बैलों की पीठ पर उठते-गिरते पगहे में, बालक की भाषा में कैसे संकेत हैं ! तू किसान नहीं रहा पर तेरा बेटा अभी किसान का बेटा है।··· हां, कितने दिन यह शिक्षा इसे ऐसे रहने देगी ?···बैलगाड़ी पर बेटे ने बाप को बेकार कर दिया। बबुनी बाजार के सामने पहुंचकर रामरूप बोला, 'गाड़ी रोको, रोको। मुझे खोराजी के यहां जाना है। अब मैं घाट पर चलकर क्या करूंगा ? तुम लोग चढ़ावा और पूजा-पाठ सम्पन्न कर जल्दी लौट आना।···हां, गाड़ी आस्ते-आस्ते आराम से ले जाओ। क्या जल्दी है ? अभी तो सूरज भी नहीं उगा।'

खोरा-बाग का अन्धेरा एकदम छंट गया था। गोला उगने वाला था। चिड़ियां बोल रही थीं। इनमें वह प्रसिद्ध पपीहा भी था जिसकी बोली पता नहीं क्यों आज रामरूप को नहीं सुहा रही थी। आज का मनोरंजक पराजयबोध भी कारण हो सकता है और पिछले दिनों का समारोह-सन्दर्भ भी उसके भीतर यहां आने पर कसक सकता है। पता नहीं कौन-सी रहस्यमय बात खोरा को कहनी है। शायद अब वह स्वयं बहुत बड़ा रहस्य होता जा रहा है। रहस्यमय पहले भी तो था। लोग हैरानी में पड़े रहते हैं कि रामरूप इस मामूली आदमी के पीछे इस प्रकार क्यों पड़ा रहता है ? वह कैसे बताये कि यह आदमी क्यों उसे बराबर बहुत खींचता हैं। रामरूप जब भी उससे मिलता है कल्पना करता है कि किसी महान् आदमी से मिल रहा है और विपरीत इसके खोरा में सामान्य व्यक्ति के व्यवहार की भी कमी देख उसका मन झुंझला उठता है। अजीब है यह स्थितियों की टकराहट ! खोरा को रामरूप ख्यालों में जैसा देखता है, सामने पड़ने पर वह वैसा नहीं दीखता है। तो कौन खोरा यथार्थ है ? रामरूप आज भी अपने ख्यालों से बुरी तरह टकरा गया।

उसने देखा, लगभग ढाई फीट चौड़ी, चार फीट लम्बी और एक फीट ऊंची बंसखट पर जो आकार में पूरी तरह 'नसकट' थी, खोराजी सावनी सुबह में कम्बल बिछाकर सोये हैं। एक कम्बल ऊपर पड़ा है। उन्हें बुखार है। चारपाई आधी झोंपड़ी में है और आधी बाहर। झोंपड़ी का आकार चारपाई के ही अनुरूप है। पिछली बार भी ऐसी ही झोंपड़ी की नन्हीं-मुन्नी देखने में आयी थी जिसमें कोई नन्हा-मुन्ना ही खड़े होकर प्रवेश कर सकता था। नीचे फर्श नामक कोई चीज़ नहीं है। ऊबड़-खाबड़ माटी में फटे दरार हैं। मानो दरार वाले जीवों के लिए ही झोंपड़ी खड़ी है। सवाल उठता है कि इसमें क्या आदमी रह सकता है ? नहीं, आदमी नहीं रह सकता। इसमें आदमी रहता कहां है ? इसमें तो खोराजी रहते हैं। तीन लोक से न्यारे। तितलौकी की एक तुमडी पड़ी है। एक बांस की

सुपेली में कोई काली चीज़ रखी है। कहते हैं खोराजी, यह आंव की दवा है। एक हेंगा भी वहां पड़ा है। कागज पर महुआ के कुछ दाने हैं। ज़मीन पर महुआ की गुद्दी पड़ी है। कहते हैं, इस साल तीन रुपया किलो तक के भाव से महुआ बिक गया। एक घड़ा है, ईंट से ढका। एक सोटा है। चारों ओर सब खुला है। चोर ले क्या जायेगा ? गांव से दूर बगीचे में 'कुछ नहीं' का खोरा अखण्ड पहरेदार है। पास ही खेत है। सूखे में फसल क्या होगी ? हां, जोतकर अब शायद कुछ छींट दिया गया है। फसल नहीं तो क्या हुआ ? पेड़-पौधों जैसे दोस्त तो हैं। खोरा अकेले पड़ा रहेगा। दोस्ती निभायेगा। गीत गाता रहेगा।

पास पहुंचते ही रामरूप को खोरा ने पहचान लिया। वह उसकी चारपाई के पास खड़ा हो गया। साहब-सलाम के बाद कुशल समाचार हुआ। रामरूप को आंखों पर पड़े काले चश्मे की कैफियत देनी पड़ी मगर कुल मिलाकर क्षण-भर में ही उसे बहुत अंडस जैसा लगने लगा था। यह आदमी बैठने के लिए भी नहीं कह रहा है। वह इतनी दूर से आया और राहगीर की तरह खड़ा है। खोरा का जंगली-पन छूटने वाला नहीं। किन्तु बैठने के लिए कहे भी तो कहां ? क्या है बैठने के लिए ? आधी चारपाई पर जो झोंपड़ी से बाहर निकली है, खोरा स्वयं अब उठकर बैठ गया है। उतनी जगह, वास्तव में उसी के लिए कम है, तिस पर भी बीमार आदमी, अब कहां खिसके कि रामरूप भी उस पर बैठे ? अथवा क्या उसे वह झोंपड़ी के भीतर शवासन मुद्रा में स्थापित होने के लिए कहे ? ना, यहां सबसे उपयुक्त आसन यह खड़ासन है। थक जाओ तो रास्ते पर बैठ जाओ। बाग की ऊबड़-खाबड़ धरती के बीच यह रास्ता है जो अति चिकना और साफ है। ठीक खोरा की चारपाई से होकर यह रास्ता निकलता है। अर्थात् कवि सदा रास्ते पर रहता है। वह हर राहगीर का दोस्त है। यह पतली-सी घिसी चमकती पगडंडी इस पूरे परिवेश में नागरिकता का प्रतिनिधित्व करती है। यही कुर्सी-टेबुल है, यही सोफासेट है और यह पलंग-गलीचा के साथ-साथ यही यहां रोशनी है; सुरक्षित प्रकोष्ठ है, सुविधा है और यही साधन है। तब रामरूप क्या करता ? बैठ गया रास्ते पर और लगा, कितने निर्द्वन्द्व भाव से ठीक रास्ते पर खोरा की चारपाई के पास वह बैठा है। एकदम सुनसान है। सुबह-सुबह कोई राहगीर भी नहीं आ रहा। आने वाला यदि परिचित निकला तो क्या सोचेगा ? कुछ भी सोचे, क्या फर्क पड़ता है ?

रामरूप को प्रतीक्षा थी किसी रहस्य के उद्घाटित होने की परन्तु खोरा ने ऐसा कुछ न कह बताना शुरू किया कि वह अब काव्य को छोड़ संगीत पर उतर आया है।...'आवत हैं रघुनाथजी बन ते।' राग गौरी बन गयी। इसे किरन फूटने से पहले गायें। किरन डूब गयी तो साम कल्याण। खोरा ने फिर बताया कि एक दिन कोटवा बाजार से अपने आदर्श-धान की खेती के लिए खाद लिवा जाते समय यहां बिलास बाबू रुके थे और काफी देर तक संगीत की चर्चा हुई। खोरा के पूछने

पर सबसे कठिन और अठारह मात्रा के लक्ष्मी ताल के बोल उन्होंने बता दिया था···धा आ धेत् धेत् धा आ, तेरकेट धेत् धा आ धेत धा, तेरकेट धा धे धे तान ता।···खोरा इस ताल का कई दिन तक अभ्यास करता रहा। रामरूप के यह पूछने पर कि क्या ऐसा हुआ कि काव्य से रुचि फिर गयी, खोरा ने बताया कि उनकी कविता को लेकर ही खलल पैदा हो गया। काव्य-रचना करने और उसे गाने पर कुछ गांव वाले इधर चिढ़ाने लगे हैं। कुछ उसकी नकल करने लगे हैं। बस, खोरा ने पैंतरा बदल दिया। अब करो नकल। आ···आ···आ···आ···प्रभु तेरी महिमा परम प्रबल है। इसे साम-कल्याण में खींच दिया। कभी आधी रात में 'अड़ाना' छेड़ दिया। गौरी, धनाश्री, ईमन, बागेश्वरी, देश और केदारा की चर्चा खोरा करता है। मगर, रामरूप को इस समय अपनी सुबह वाली नियमित प्यास लगी होती है।

कहां मिले पानी ? घड़े के आधे भाग पर छायी नमी बताती है कि उसमें पानी है मगर पात्र ? रामरूप को हंसी छूट गयी। पात्र तो स्वयं खोरा है ? खोरा अर्थात् बिना गोड़ का कटोरा ? अब खोजो, कहां है खोरा ? खोरा तो चारपाई पर विराजमान है। उसका काव्यामृत या संगीत रस तुम्हारी प्यास बुझाने में सहायक नहीं हो रहा है। तब क्या पूरा घड़ा उठाकर उसी से पानी पीना पड़ेगा ? यहां क्या आश्चर्य ? सूरज की चमचमाती किरणों में राग पायी खोरा ने तो प्रेत की तरह बैठा है। सूखे चेहरे पर रूखी-रूखी दाढ़ी अजीब उदासी छिटका रही है। किसी उत्तेजना में आ···आ···आ···किये चला जा रहा है। वह वहीं है जहां है। रामरूप अवश्य वहां नहीं है। सोच रहा है, कमली रामकली भिगोया हुआ अंकुरित चना और चाय अब तक दे गयी होतीं।

'बुखार में गाना हानिकारक होगा।' रामरूप ने छेड़ा।

'अब क्या हानिकारक होगा, जियादे दिन नहीं जीना है।' खोरा ने कहा।

'यह कैसे आपने जान लिया ?'

'अपनी बिद्दा से। सन् १९१६ में जब फों-फों करती बड़की बाढ़ आयी थी तो छह बरिस का था। तब हिसाब से सन् १० का जनम हुआ। गनना से अब अन्त समय नजदीक है। हौसिला था मन में कि सस्ती देखता।'

'तो क्या आपको अभी सस्ती आने की उम्मीद है ? आप कैसे कहते हैं कि सस्ती देखता ?'

'मेरी बिद्दा कहती है। आठ बरिस बाद पुरानी सस्ती आ जाएगी। मगर ओह घरी तक खोरा बगान छोड़ दिया रहेगा। उसको 'शहर' में चले जाने होगा। ओह शहर में अहो दिन, अहो रात बिजुरी जरती रहती है। वहां सुपनेखिया (शूर्पणखा) नहीं आती। वैसे ऊ एक रोज इहां आयी। हम बोला···'कौन है अबाटी जिसने नाक-कान काटी ?' तो वह ही-ही हंसने लगी। फिर हम गाने लगा, 'बनके तू अइलू

बड़ी सुन्दरी ?' और वह ताल देने लगी। फिर हमने अइसा झपताल में खींचा कि···।'

रामरूप को डर लगने लगा सन्निपात तो नहीं हो गया ? उसने उठकर नाड़ी देखी, ललाट पर हाथ रखकर देखा। नहीं, बुखार सामान्य है। तब क्यों यह ऐसे बक रहा है ? चमचमाते प्रभात में यहां ऐसा निचाट सन्नाटा है तो एकान्त अंधेरी रातों में कैसा लगता होगा ? बगीचे में प्रेत जैसे रेंगते रहते होंगे। पत्तियों की खड़क जैसी रोमांचक अबूझ भाषायें मंडराती होंगी। हवा चलने पर बंसवारियां कटकटाती होंगी और खोरा तब क्या हनुमान चालीसा का पाठ करता होगा ? रामरूप ने पूछा, 'आपको यहां भूतों से डर नहीं लगता ?'

'नहीं, डर आदमियों से लगता है।' खोरा ने अपना भाषण रोककर जवाब दिया।

'बाबू हनुमानप्रसाद जैसे···?'

'नहीं, ऊ तो अब चेला मुंड़ा गया है।···आपको जनाया नहीं न ? कोइली रानी का पास बेटी का बोल-बोल सौगात गया है, साड़ी, चूड़ी, मिठाई, नगदी आ अगड़म-बगड़म।'···धन्य हो प्रभुजी ! खोरा का वह नजूम तो आफत हो गया।

···तो, यही वह रहस्य है क्या ? रामरूप ने सोचा और कुछ कहने जा रहा था कि देखा गांव की ओर से एक लम्बे कद का लड़का लाठी में एक लोटा बांध-कर लटकाये आ गया। लोटे में गरम-गरम दाल थी, बीमार का पथ्य। मगर इतने सवेरे ?

खोरा ने दाल पीकर लोटा खाली कर दिया तो लड़के ने उसे धोकर तथा उसमें पानी भरकर चारपाई के नीचे रख दिया।···अब जाकर रामरूप के जल-ग्रहण करने का जोगाड़ बैठा। मगर उस ईंट से ढके गन्दे घड़े का पानी पीने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। यह अटपटा औघड़ी परिवेश खोरा के लिए क्या कोई मजबूरी है ? ऐसा लग तो नहीं रहा है। उस गांव में रहने वाले इनके परिवार वालों ने इतने सवेरे-सवेरे गरम दाल भेज दी। घर पर सामान्य रूप से भी खोरा रह सकता था।···मगर तब रामरूप आकर कैसे ऐसे बैठता ? असामान्यता भी मान्यता के लिए ज़रूरी है। उसने हंसकर पूछा—'आप शेर पर सवारी करने वाले के बारे में क्या कुछ जानते हैं ?'

'शेर के सवार के बारे में तो नहीं परन्तु उस जीप पर सवार होकर आने वाले के बारे में जरूर जानता हूं।' खोरा ने कहा और बाग के पश्चिमोत्तर कोने की ओर इशारा किया।

गिद्धहिं दृष्टि अपार ! या खोरा के ज्योतिष का चमत्कार !

रामरूप ने देखा, सचमुच एक जीप चली आ रही है, खोरा सहित बगीचे के अस्तित्व को नया अर्थ देती हुई।

जीप रुकी। खादी की पैंट-बुशर्ट, पैरों में चप्पल, आंखों पर काला चश्मा,

वर्मा उछल कर नीचे आ गया।

अरे, यह वही वर्मा है ? नहीं, यह दूसरा, लगभग पूर्णतः पूर्व सन्दर्भों से कटा नया अप्रतिबद्ध वर्मा है।

'हल्लो।' वह अदा के साथ रामरूप की ओर झुक फुर्ती से खोरा के पैर छू हाथ जोड़ बोला—

'सरकार को बाबूजी ने बुलाया है। भैयाजी भी लखनऊ से आ गये हैं। आज उसका बाइलाज बन जाय।' फिर उसने रामरूप की ओर घूमकर कहा, 'एक खोरा रिसर्च इंस्टीच्यूट' की विशाल योजना है। मुख्य मन्त्री की मौखिक स्वीकृति मिल गयी है। सब कुछ जल्दी ही आन पेपर आ जायेगा।'

५७

खोराबाग में भारतेन्दु वर्मा से रामरूप की जो संक्षिप्त मुलाकात हुई उसने दो मास पूर्व के कुछ सन्दर्भों में उसे नये-सिरे से पुनः मथना शुरू कर दिया। प्रतिक्षण वर्मा के भीतर रह-रहकर वह एक वाक्य चुभ जाता है,—चाचा अब आते नहीं। पूर्वांचल विकास मंच के समारोह के बाद वैसे तो ऐसा कोई दिन नहीं बीता कि इस चुभन ने उसे बख्श दिया हो। उसका सन्ताप तब और सघन हो जाता है जब उलझन का रूप स्पष्ट नहीं होता है। उस दिन रामरूप ने जो बताया था कि कमली कहती है 'चाचा अब आते नहीं।' उसका क्या मतलब ? वह प्रेममूलक उलाहना थी या घृणा-प्रेरित व्यंग्य ? निश्चित रूप से इन शब्दों में उलाहना नहीं हो सकता और प्रेम रहा भी कहां ? वर्मा, तूने उसे अपने ही हाथों दफना दिया था। तुम्हारा ओढ़ा हुआ परम्परावादी पवित्र पिता भाव उस दिन कैसे एक झोंक-भरे झटके में खिसक गया था और तुमने अपने हाथों जैसे अपनी हत्या कर दी थी। चुनाव जीतकर अपनी ही निहित वासना के हाथों तू पराजित होकर चूर हो गया था। अपने उस कृत्य पर प्रतिक्रिया में तुम्हारा मन सफाई चाहे जितनी दे ले पर वास्तव में अब तुम वह वर्मा न रहा। निश्चित रूप से तू अब उस वर्मा का प्रेत है, पतित प्रेत। क्षुद्र स्वार्थों के पीछे कुत्तों की तरह दुम हिलाता अथवा राजनीति के गोबर में गुबरैले की तरह अवश धिक्जीवन जीता। तुम्हारा शील, मैत्री-भाव और सौजन्य खिसककर रसातल चला गया, इसका पता भी क्या तुझे चला ? और उस एक वाक्य की चोट से जब तब कहीं कुछ पनपनाकर उमड़ता भी है तो सब अकारथ। अब पीछे लौटने का कोई रास्ता नहीं। अभी उस दिन तक एक अस्पष्ट-सी पगडंडी शेष बची थी जिस दिन तीज की मिठाई और महावीरजी का प्रसाद ग्रहण करने के लिए रामरूप ने आग्रह किया था। ओह वर्मा, तू कितना नीच है कि मित्र के सहज सामाजिक निमन्त्रण को जटिल राजनीतिक शब्दावली

में स्वीकारकर रहा था। कैसे वायदों के कपट जाल धड़ाधड़ फेंकता जाता था ? 'ज़रूर आऊंगा, क्यों नहीं आऊंगा ? मां का आदेश हो और मैं न आऊं ?' क्या मतलब इन शब्दों का ? क्या राजनीतिकर्मियों की भाषा में चरम झूठ ही अंतिम सत्य होता है ? क्या अत्यन्त उल्लासपूर्वक उन महुवारी 'जाने' से सम्बन्धित शब्दों को उछालते तुम्हारे भीतर ठीक उल्टा यानी 'न जाने' का विचार नहीं चल रहा था ? ओह वर्मा, शायद तू लाचार था और झुठाइयों का पहाड़ खड़ा कर अपने को छिपाने का प्रयत्न कर रहा था। दो मास पूर्व अचानक जो तू आत्मिक तृप्ति के आकाश से देहभूख की ज़मीन पर उतर आया था उसे देखते आखिर कौन-सा मुंह लेकर तुम कमली के सामने खड़ा होता ?

वर्मा को इस बीच बेहद परेशानी शायद इस बात को लेकर है कि क्यों सोते-जगते और उठते-बैठते अथवा कोई भी काम करते में पिछले नवम्बर से लेकर मई तक के सात महीनों की महुवारी वाली रहाइसि का कोई भी विस्मृत कर दिया गया चित्र-बिम्ब कभी याद आकर अचानक टीस जाता है और फिर वह देर तक अनमना बना रहता है ? कभी-कभी अपने को वह समझाने का प्रयत्न करता है कि महुवारी से अब क्या लेना-देना है ? कि परदेशी आदमी वहां नहीं, यहां गठिया में ही कहीं रहेगा, कि यहां सुविधा है, सेवा का विस्तृत क्षेत्र है, भविष्य है और अपने को पूरा-पूरा व्यस्त रख सकने की स्थितियां हैं, कि रोटियां तोड़कर मात्र सोने के लिए वह दुनिया में नहीं पैदा हुआ है और यह कि उस एकदम अनखुली गंवार कन्या से नाहक कुछ भावनात्मक रिश्ता जोड़ वह क्यों अपनी मिट्टी पलीद करे ?

किन्तु ऐसा सोचते-सोचते लगता है कि वर्मा अपराध स्वीकार कर स्वयं कटघरे में खड़ा हो जाता है। उसे एक-एक पुरानी घटनायें याद आने लगती हैं। मित्र के घर डेरा डालते वह अपने भीतरवाले लम्पट के प्रति चिन्तित हुआ था किन्तु कुछ ही महीनों के उस अपूर्व चिन्तित सहज गंवई-पारिवारिकता के नये रस में डूब उसके भीतर वाला लम्पट कहां खो गया, इसका उसे पता भी नहीं चला था। याद आता और वह सोचता, मांड़ो के दिन सरकंडा लेकर कमली के हाथ की नाप लेने एकान्त कोठरी में उसके पास गया था तो कहां कहीं अता-पता था उस लम्पट का ? ओह, उमड़ती आंखों वाली वह पुत्री थरथराते हाथों उसका पैर छान लेने के लिए बढ़ी थी तो दुस्सह वेदना के झोंक में वह कैसे भागकर बाहर की दौड़-धूप में झोंककर अपने को भुलाने लगा था। उसकी विदाई के सन्दर्भ जिस प्रकार उसके अन्तस् को द्रवित कर झकझोर देते थे, उसे देखते कहां होता था तब किसी लम्पट का अस्तित्व ? उस दिन होली के अवसर पर सारा सिर अबीर से भठवाकर सुबह लौटा था तो कमली ने किस कुशलता से अपने हाथों सारा रंग धोकर सिर साफ कर दिया था और तब, ज़रा गहराई से सोच वर्मा, उस स्पर्श या निकट सम्पर्क में तुम्हारे अन्तस्थ लम्पट की कहीं कोई सुगबुगाहट भी मिली थी ? आरंभ

में तो महीनों तक उसी परिवार के साथ रहकर तुमने उसकी सूरत तक नहीं देखी थी। और बहुत दिनों तक बात करने या बोलने का कोई मौका नहीं आया था परन्तु तीन-चार महीने बाद उस परिवार में घुल-मिल जाने के बाद वह तुम्हें चाय और भोजन भी एकान्त कोठरी में दे जाने लगी थी और तब तुम्हें स्वयं पर क्या आश्चर्य नहीं होता था कि गांव ने कितना रूपान्तरित कर कैसे उसे ऐसा निर्द्वन्द्व कर दिया था ? हां, कभी-कभी तुम्हें एक हलकी शंका ज़रूर होती थी, कहीं यह कोई मनोवैज्ञानिक केस तो नहीं ? मात्र प्रक्षेपण तो नहीं ? पर शीघ्र ही तुम्हारी यह शंका क्या निर्मूल नहीं हो जाती थी ? और क्या अपने भीतर उगे सर्वथा अकल्पित इस पवित्र पिता-भाव के प्रति तू स्वयं गौरव का अनुभव नहीं करता था ? और ऐसी स्थिति में कहां से इतने ज़ोर-शोर से कूद पड़ा उस एक दिन तुम्हारा वह पुराना लम्पट ? छः महीने बाद वह क्या कुछ नया तूफ़ान आ गया कि उसने उस भाव-जगत् को जड़ से हिलाकर मटियामेट कर दिया था ? दिन-रात साथ रहनेवाला और उसके घर का प्राणी बना तू दोस्त रामरूप से कट गया। बहुत दिनों तक तो तुझे शर्म लगती रही कि लोग क्या कहेंगे ? वैसी दांतकाटी रोटी खाने के बाद ऐसा विलगाव क्यों ? क्या मात्र राजनीतिक मतभेद के कारण ? ···लोग घुमा-फिराकर कहते भी, मगर वर्मा किसी से क्या कहे ? दिखा देता है खोल-खोलकर अपनी व्यस्तता। उसे गहरी राहत है कि कमली ने उसके दुर्व्यवहार को पचा डाला है। किसी पर शायद व्यक्त नहीं किया है। रामरूप से भेंट होने पर वर्मा उसकी आंखों को सशंक निहारता पर एक गहन शून्य के अतिरिक्त वहां कुछ नहीं मिलता। उस शून्य को देख उसे चोट तो लगती है पर अब क्या हो सकता है ? कितना लाचार है वर्मा ? कभी-कभी इस समूचे परिवर्तन के आदि स्रोत पर उसका ध्यान जाता है तो बहुत विचित्र लगता है।

वोट आया, चुनाव आया, राजनीति आयी और पार्टीबन्दी आयी, एक तेज़ आन्धी की तरह, अति प्रभावी हल्ला की भांति और दुर्निवार सम्मोहन की भांति। खिंच गया तब वर्मा कि ठहरकर कुछ सोचने का मौका भी कहां था ? और अब मित्र गया, 'पुत्री' गयी और गांव चला गया। सामने थी सुख-सुविधाओं की जग-मगाती दिल्ली। भुवनेश्वर ने क्षेत्रीय उम्मीदवार के रूप में जिस दिन पहले-पहल वर्मा से हाथ मिलाया उस दिन उसे लगा, जैसे वह भारत के प्रधानमन्त्री से हाथ मिला रहा है। उसे लगा, उसमें अकस्मात् असीम उत्साह आ गया और उस सारे उत्साह को लेकर वह उससे एकदम चिपक गया। भुवनेश्वर की जीप के चक्कों से अधिक चुनाव-व्यूह को लेकर वर्मा का मन दौड़ने लगा। रात-दिन अनवरत श्रम, अटूट परिश्रम, दौड़-धूप, तिकड़म, प्रपंच, गोटी, प्रचार, उठा-पटक, काट-छांट, चारा, लासा-फंदा, चाल, तोड़-फोड़, हवा और बाहर-भीतर की ऐसी ऐंठन, ऐसा तनाव कि क्यों न उपद्रव हो जाय।

मगर, वैसे उपद्रव की कल्पना वर्मा को नहीं थी। अच्छी तरह याद है वह सत्यानाशी घड़ी कि घोर प्रचार में चकनाचूर वापस वर्मा के सामने रात में कमली जब चाय लेकर आयी थी तो पता नहीं कैसे दूसरी बार फिर अंधड़ की तरह वह विचार उठा था कि उसे बांहों में कसकर चूम ले। वह एकान्त में जब भी चाय ले कर आती है, उसे बारम्बार यह क्या हो जाने लगता है ? ओह, वर्मा तू क्षण-भर बाद फिर पहली बार की तरह कितना पछताया था पर विस्फोट जबरदस्त हो चुका था। दुर्निवार ज़हरीला धुआं भीतर भरता ही गया था। रात-भर वोटर-लिस्ट से लड़ने के बाद तुम्हारे मन में चाय की इच्छा उठी नहीं कि हाजिर। अलौकिक इच्छा फल की भांति भोर में चाय लेकर वह उपस्थित हुई थी तो तुम्हारे भीतर फिर वही डगमगाहट। कैसे उसे अनावश्यक रूप में देर तक रोक रखा था, कैसे लौटते में उसके लहराते गदराये अंगों से तुम्हारी आंखें खेलती रही थीं ?···तुम सोचने लगे थे, अब तक क्यों नहीं देखा था कभी इस स्वर्ग की अप्सरा को ? अरे, यह अमृतफल जो हाथों में आ गया है तोड़कर नहीं खा लिया गया तो कितनी भारी मूर्खता होगी ? हां, तुमने कहा था, 'आज की चाय तो अविस्मणीय बन गयी कमल।' और इस नये सम्बोधन को सुन वह क्या चौंकी नहीं थी ? और फिर क्या हुआ ? दूसरे दिन तू एक अज्ञात नशे में विकट योद्धा की तरह चुनाव-क्षेत्र में लड़ता रहा था। लड़ाई के हर पैंतरे पर गोरे हाथों में सुनहरी चाय समर्पित करती तुम्हें एक लड़की दिख जाती थी। तुम सोचते मध्यकाल के वीर इसी प्रकार अपनी प्रेमिका को आंखों में, मन में बसाये क्या कठिन-से-कठिन संग्राम जीत नहीं डालते रहे ? और उस दिन वोट पड़ने के अन्तिम क्षणों तक में, उसके बाद जिले पर वोटों की गिनती से लेकर विजय घोषित होने तक में तथा विविध जुलूसों और विजयोल्लास की जयकारी हड़कम्पी स्थितियों तक में क्या उत्तरोत्तर मन में उभरा वह गोरे हाथों की सुनहरी चाय वाला चित्र-बिम्ब सघन अधिकाधिक प्रगाढ़ आसक्तियों में चटक विकास नहीं पाता गया था ? तुझे लगा था, अकेले तूने ही वोट की लड़ाई जीती है किन्तु इस जीत का श्रेय उस एक हृदय-कमल को है। बल्कि सारा श्रेय उसको, अतः सारी बधाई उसको। और कैसी बधाई ? ओह, बधाई की रूप-रेखा और उसका प्रकार स्थिर करने में तुम किस प्रकार पसीने-पसीने हो गया था। बार-बार सोचता था कि सड़ी वर्जनाओं को झटकारकर इस बार वर्मा मानेगा नहीं। कस-कर गले मिलेगा और चुम्बनों की वर्षा कर हार्दिक बधाइयों के पारिजात पुष्पों से उसे ढक देगा। खिलवाड़ नहीं है, उसका खास मामा विजयी हुआ है। उसने खुद इस लड़ाई में कितनी बहादुरी की है, अपने पिता के खिलाफ मामा का पक्ष मजबूत किया है। उसके मामा का पक्ष वर्मा का पक्ष है। ओह, जनम-जनम आभारी रहेगा यह वर्मा उस प्रेम के प्रति कमल।

वर्मा छटपटा उठा था। प्रेम को प्रदर्शित करने का मौका मिलना चाहिए।

विजय के बाद मगन के साथ वह आशीर्वाद मांगने गया था तो रामरूप ने किस तरह डांडकर खदेड़ दिया था। 'मुझे यह सब भड़ैंती पसन्द नहीं। चले जाओ यहां से।' ओह, कांटों की तरह चुभ गया था दूसरा वाक्य ? क्या समझता है यह मुंहदुब्बर मास्टर अपने को ? वर्मा अब एक क्षण भी यहां नहीं टिकेगा।···मगर, कमली ? धक् से लगा था भीतर। अच्छा, मित्र है, झुंझलाहट में कह दिया तो क्या हुआ ? माफी मांग लूंगा और महुवारी नहीं छोड़ूंगा, कमल···बस तुम्हारे लिए। महुवारी एक नशा है, गहरा नशा। नशा गहरा, और गहरा होता जाता है। अब क्या होगा कमल ? मारा कि तन-मन को तोड़ दिया इस चुनाव ने। बेहद थकान है, तनाव है और असीम टूटन है। बस, यहां अपनी इस कोठरी में एक-दो दिन आराम मिले। बस, एक बार वैसी ही चाय पिला दो कमल। ···अरे, चाय लाते में तुम्हारे हाथ, तुम्हारे होंठ और इनके साथ तुम्हारा शरीर थरथरा क्यों रहा है ? दोनों ओर प्रेम पलता है न ? झूठी और फालतू पवित्रतावादी बातों को सोच-सोच अब तक तुम्हारे साथ कितना अन्याय किया इस वर्मा ने। क्षमा करो देवि ! आओ, मनुष्य जन्म की चरम कृतार्थता को क्षण-भर जीकर अपने मामा के विजयोल्लास को अमर कर दें ?···वर्मा की छाती धड़कने लगी थी, आवेश में कंठावरोध होने लगा था। शरीर में जलन के साथ कंपकंपी बढ़ी थी कि चाय हाथ से ली नहीं जा रही थी। 'चा···य···टे···बु···ल···प···र···।' पूरा कह भी कहां पाया था वर्मा ? अन्त में ऐसा लगा कि शब्द भक् से निकल कहीं भाग गए। अरे, ऐसे मौकों पर सुन्दरियों के सामने इतना भीत-भीरु तो वह कभी नहीं हुआ। इस बार क्या हो गया है उसे ? कमली चाय टेबल पर रख लौटी थी तो हड़बड़ाकर वह खड़ा हो गया था। लड़खड़ाते जैसे दो कदम आगे बढ़ उसने आविष्ट-जैसी विक्षिप्त स्थिति में उसका हाथ पकड़ना चाहा था, 'बेटी, बस एक मिनट···।' पर ऐसा लगा था कि कमली सुन नहीं रही है। अरे, यह बाहर चली जायगी तो क्या हो सकेगा ? अब उसने पीछे से उसे झपटकर पकड़ना चाहा था···तभी चींटी की तरह चुपचाप जाती कमली झटके से मुड़कर बिच्छी की तरह तनकर कैसे खड़ी हो गयी थी और तड़पकर बोली थी—

'यह क्या है चाचाजी ?···पीछे लौटिये और आदमी की तरह चाय पीकर आराम कीजिए।'

···गहन चकाचौंध छोड़ बिजली तड़तड़ाकर अन्तर्धान हो गयी थी तो कटे पेड़ की भांति कांपकर वर्मा चारपाई पर गिर पड़ा था। बड़ी देर तक कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि यह क्या हो गया ? उधर भीतर अबूझ ढंग की ऐंठन पर ऐंठन प्रतिक्षण बढ़ती जा रही थी। घायल मन निरन्तर छटपटा रहा था। जान ले लिया इस लौंडिया ने। अब जीकर क्या होगा ? क्या सोचा था क्या हुआ ? क्षण-भर रुककर उसकी प्रेम बधाई स्वीकार ही कर लेती तो कौन-सा पहाड़

टूट जाता ? क्या प्रेम पाप है ? प्रेम नहीं तो दुनिया में फिर क्या है ? प्रेम ही तो दो व्यक्तियों को एक में जोड़ता है। सद्भाव और अपनाव का वही तो मूल स्रोत है किन्तु यहां तो जैसे समूचे अपनाव पर एक बारगी ठोकर मार दी। 'आदमी की तरह चाय पीकर···।' क्या मतलब ? उस समय मैं आदमी नहीं था ? क्या अर्थ होता है आदमी का ? मूर्ख लड़की, जब मैं शत-प्रतिशत आदमी बन सामने आया तो नखरा करने लगी।···हां, सम्भव है वह नखरा ही रहा हो। लड़कियां ज़रा देर में मानते-मानते अपने को औरत मानती हैं। तो वर्मा इस नखरे को झेलेगा। वह अपना सम्पूर्ण जीवन न्यौछावर कर देगा। गंवईं की धूल में पड़े हीरे को बेश-कीमती निखार दे चमका देगा। कितनी परीक्षायें पास कर तुम किस ऊंचाई पर पहुंचना चाहती हो। वर्मा जान लड़ा देगा। इस समय वह साधारण अध्यापक नहीं है। वह सत्ता के साथ है। विरोधी है तो क्या तुम्हारे नाते यह रामरूप भी क्या से क्या हो सकता है ? कहीं कोई अध्यक्ष-वध्यक्ष होकर ठीका-वीका ले चांदी काट सकता है। क्या पड़ा है एक सड़क के चक्कर में, वर्मा की दोस्ती सलामत रहे, वह महुवारी में तुम्हें देख-देख पड़ा रहे। बस, देखो यहां सड़कों का जाल बिछ जाता है। बस, वर्मा को जीने दो कमल बेटी।···अरे हां, बेटी क्या है वह एक शब्द है। जैसे किसी का नाम कमल या कमल कुमारी है तो वह वास्तव में कमल का फूल या उसमें रहने वाली भौंरी थोड़े है ? यह शब्द तो बस कामचलाऊ है। कुछ भी कह लो। उसमें आपने-आप में थोड़े कुछ अर्थ है। अर्थ तो हमने दिया है। अर्थ तो हमारे भीतर है। तो, हमारे भीतर के अर्थ को तुम क्यों नहीं समझती हो ? अथवा समझकर भी वैसी अनर्थपूर्ण नखरेबाजी क्यों करती हो ? ऐसे ही नखरों में लोगों के प्राण चले जाते हैं। किन्तु वर्मा तुम्हारे सारे नखरों को धैर्यपूर्वक सहेगा।···वर्मा सोचता है, सोचता है, सोचने का अन्त नहीं। फिर क्या-क्या अगड़म-बगड़म विचार-प्रवाह में आ रहा है, उसे पता नहीं। भगेलुआ के आने की आहट नहीं मिली होती तो पता नहीं कितनी देर तक यह अनियन्त्रित सोच प्रवाह चलता।

भगेलुआ कोठरी में ही आता हुआ दिखाई पड़ा था। उसके हाथों में भोजन की थाली थी। फिर तो वर्मा सन्न हो गया था, ऐसा तो कभी नहीं हुआ ? जैसे नित्य सूरज पूरब में उगता है और पश्चिम में डूबता है उसी तरह पिछले तीन-चार महीनों से जबसे वह बाहर कोठरी में खाने लगा है नित्य सुबह-शाम का भोजन कमली के ही हाथों आया करता था। आज भगेलुआ को क्यों लाना पड़ा था ? वर्मा ने सोचा, अवश्य ही इस घटना का कोई गम्भीर अर्थ है और कुछ क्षण पहले घटी घटना से सम्बद्ध अर्थ है। कहीं ऐसा तो नहीं कि उसने भीतर जाकर कुछ उलटा-सीधा कह दिया है ? यदि ऐसा है तब तो भारी अनर्थ हुआ। अब क्या करे वर्मा ?···और क्या करे, अपने कर्मों का फल भोगे, मार खा, अपमानित हो, लांछित हो मुंह

कालिख पोत ग्राम बहिष्कृत हो! उसने सोचा था भगेलुआ से कुछ पूछे किन्तु हिम्मत नहीं पड़ी थी। वास्तव में वह बहुत सन्त्रस्त हो गया था। फिर उसने सोचा था, भगेलुआ के चेहरे को ही देखकर कुछ अनुमान करे, कोई गड़बड़ी तो नहीं, परन्तु वह इतना साहस भी नहीं जुटा सका था। पता नहीं क्या दिख जाय? घृणा, व्यंग्य, क्रोध··· कुछ भी उस पर टंगा हो सकता है।

भगेलुआ चला गया तो वर्मा चारपाई पर उठकर बैठ गया था। एक क्षीण आशा जगी थी कि कमली शायद कुछ लेकर आये। उसका नियम था कि पहले जल रख जाती थी तब भोजन लाती थी। उसके बाद तीसरी बार 'खरिका' और चौथी बार अन्त में पान। किन्तु थोड़ी देर बाद जल रख जाने के उपरान्त भगेलुआ चला गया था और सन्नाटा छा गया था तथा यह सन्नाटा उत्तरोत्तर सघन होता चला गया था तो वर्मा का होश उड़ गया था, नशा उतर गया था और उसे यथार्थ की ज़मीन दिखाई पड़ने लगी थी।···अभी रामरूप शहर से लौटा नहीं है। उसके आने पर पता नहीं क्या हो? वर्मा को सब याद है, उस दिन हड़बड़ाकर उसने विचार किया था। भाग बे वर्मा के बच्चे जल्दी यहां से। हां, सदा के लिए यहां से भाग जा। फिर कभी नहीं आना है। ठीक कहा कमली ने, तू आदमी नहीं रह गया। तुम्हारे भीतर आदमी की जगह एक राजनीतिक जानवर बैठ गया था। जिसके लिए दुनिया में नैतिकता नाम की वस्तु का अस्तित्व नहीं, जिसके लिए कुछ पाप नहीं, कुछ पुण्य नहीं। बस, छोड़ अब मोह महुवारी गांव का। भाग चल चुपके-चुपके अपने नगर की ओर। नगर दूर नहीं, निकट ही है, वह आजकल गठिया में ढका हुआ है, जहां सोना वरस रहा है। छोड़ इस माटी के गांव को।

५८

वर्मा उस दिन झटके से महुवारी गांव के बाहर हुआ था और उच्चाटन जैसी स्थिति में काफी दूर आ गया तो याद आया था कि एक तो असाढ़ का महीना और दूसरे अन्हरिया रात। लोकमत मना करता है चौमासे की ऐसी कुसमय की यात्रा के लिए। किन्तु यह मना ही सामान्य स्थिति के लिए है। असामान्य स्थिति में कुछ भी मना नहीं। वर्मा उस समय साक्षात् असामान्य स्थिति में था। फिर कहां था फिलहाल दुनिया में उतरा हुआ असाढ़? कहीं एक बूंद पानी नहीं। करन्ट नाला में जूता पहनकर लोग निकल जाते थे। अब दुनिया में सब कुछ असाधारण होगा। वर्मा का इस प्रकार अन्धेरे में मुंह छिपा भागना भी तो साधारण नहीं, टपाटप पैर उठ रहे हैं। ये कहां उसे उड़ा ले जायेंगे? आश्चर्य, मन से अधिक सचेत ये पैर हैं। स्वतः गठिया के रास्ते लग गये हैं। अरे, कितनी जल्दी चटाई-टोला आ गया? नहीं, पहचान में कोई भूल नहीं। ऊंचे टीले पर बसा हुआ गांव

अन्धेरे में विशाल धब्बे की भांति उठा हुआ है। बीच में बरगद का ऊंचा पेड़ कम्बल ओढ़े दैत्य की भांति खड़ा है। कुछ छोटे-मोटे पेड़ झबर-झबर बाल खोले प्रेत की भांति झूम रहे हैं। पुरवा हवा हाय-हाय कर बह रही है। पूरी बस्ती अचेत पड़ी हुई है। वर्मा सिहर उठा। भीतर से आवाज़ उठी, क्या डर रहे हो ? नहीं, अब डर कहां। डर पीछे छूट गया। सामने गठिया गांव के दो ताड़ के पेड़ अभयमुद्रा में खड़े दिखायी पड़ रहे हैं। मुश्किल भरा संकट बस इतना है कि वहां लोग चिहा कर पूछेंगे, आधीरात को कैसे ? वह क्या जवाब देगा ?

लेकिन बाबू हनुमानप्रसाद के द्वार पर पहुंचने के साथ इस संकट से उसे अपने आप मुक्ति मिल गयी थी। देखा, कुछ बात है कि लोग जगे हैं और उस बात की भनक मिलने के साथ ही उत्तर उछल आया था, 'सुना कि बाबूजी के साथ ऐसा हादसा हो गया और भगा-भगा आ रहा हूं।' भरपूर वफादार बन गया था वर्मा। मगर उसके बाबूजी तो हास्पीटल जा चुके थे। रह गयी थी एक अव्यक्त हवा जिसमें गोली की गूंज के साथ सांय-फुस उभरते कुछ बदनाम नामों की कड़ी में एक नेक नाम अस्फुट रूप में उभर जाता उसके लायक दोस्त का।···ओह, यह नाम तब वर्मा के भीतर कितना कसैलापन भर देता और उस कसैलेपन में मिली वह ताज़ी कड़वाहट कितनी बेभाव पड़ी थी ? अच्छा हुआ, ऐसे दोस्त से मुक्ति मिली।

तब से कितना समय बदल गया। वह असाढ़ बीता, सावन बीता और अब यह भादों भयानक घहरा गया। जैसे-जैसे बाहर का सूखा जटिल होता गया वैसे-वैसे मित्र रामरूप के सन्दर्भ में भारतेन्दु वर्मा के मन की ज़मीन उत्तरोत्तर कठिन होती गयी। बदलती घटनायें उसे बराबर कहां से कहां फेंकती गयीं ? भुवनेश्वर का विवाह, विवाह के दिन वाला डाकू आतंक, खाद्यान्न, योजना में गठिया-स्टेशन रोड की मंजूरी, दैनिक 'प्रकाश' अखबार द्वारा कीचड़ उछाला जाना, रामरूप के पक्ष में मलिकाइन दुलहिन का अनशन और बाबूजी के पैंतरे, पूर्वांचल विकास मंच का सम्मेलन, सड़क का उद्घाटन और खोरा के साथ बाबूजी की निकटता।···शनैः-शनैः पर पक्ष बनता गया रामरूप। तब क्या करे वर्मा ? उसकी लाइन साफ है। कहीं किसी सुविधाजनक स्थान पर एकनिष्ठ भाव से समर्पित हुए बिना जीने का कोई अर्थ नहीं। फिर आज के जीने का अर्थ है राजनीति में जीना। स्वयं को उसमें झोंककर पूरी तरह धंस गया वर्मा। दिन-रात भाग-दौड़, प्रतिक्षण की व्यस्तता। एक विराट् संगठन और एक अति तेज़ रफ्तार की राजनीतिक ज़िन्दगी से जुड़कर वह सन्तुष्ट है कि भूल गया महुवारी गांव, बार-बार याद आकर भी भूल गयी कोई कमल। मगर भूलने की इस समस्त क्रिया की प्रतिक्रिया में विकर्षण के स्तर पर प्रतिक्षण क्यों याद आता रहता है दोस्त रामरूप ? क्यों बराबर ऐसा लगने लगा है कि इस व्यक्ति का अहं चूर-चूर हो

जाना चाहिए ? सोच वर्मा, सोच नयी-नयी युक्तियां। अब छिपाने से भी क्या लाभ ? लोग देखें, दोस्ती की राजनीतिक कुश्ती। गठिया से स्टेशन तक सड़क हो जाय, उस पर सरकारी बस दौड़ने लगे, 'खोरा रिसर्च इंस्टीट्यूट' का अनुदान आ जाय, इंस्टीट्यूट का कार्यालय बनने लगे, खोरा की सारी मौखिक कविताएं टेप हो जाएं, उसका ज्योतिष चमक जाय और वह घसगढ़ा कवि तिरंगे की छाया में फर्र-फर्र उड़ने लगे, बस देखो, कैसे मुंह छिपाकर कहीं कोने में दुबक जाता है रामरूप, बेपहचान और गलित गुमान।

और उधर रामरूप ?

बीड़ी का कश जोर से खींच बैठे-बैठे सोचता है, उस दिन खेत पर गजिन्दर की ज़ोरदार लाठी ठरक नहीं गयी होती और सीधे अपने सटीक निशान पर यानी रामरूप के सिर पर बैठ गयी होती तो क्या होता ? क्या रामरूप मर गया होता तो उसके वे जीवन-मूल्य जिनके लिए वह जीने की बात सोचता है, जी गये होते ? बाद में कौन होता इसका साक्षी ? थाने की पुलिस ? स्मगलर ससुरजी ? विधायक मगन ? युवा कांग्रेस का अध्यक्ष अच्छे लाल ? सरकारी कवि खोरा ? सुविधा-जीवी दोस्त वर्मा ?···हा-हा-हा-हा···खूब ज़ोर से हंसता है रामरूप और एक बीड़ी फिर दगाता है। (हां, आजकल खूब खींचने लगा है।)···अरे, ऐसी हंसी उसे पहले कभी क्यों नहीं आया करती थी ? क्यों वह चारों ओर के तमाम-तमाम विसंगतियों की भड़ैतीभरे जीवन को देख-देखकर रोता-कुढ़ता रहता था ? क्या समकालीन जीवन के रंगमंच पर अनवरत चलती प्रहसनी भद्दगी-नंगई ऐसी है जिसकी चिन्ता के कीड़ों को समर्पित कर हम अपना तन-मन गलाते चलें ? क्यों ? क्या किसी मूल्य-सोच के लिए ? या मूल्यहीनता की चिन्ता के लिए ?···रामरूप, फिलहाल तुम दोनों से उबरकर बस देखो और हंसो। जितने ज़ोर से ठहाका लगा सको, लगाओ। ठहाकों की भारी आवश्यकता है। भीतर की सिकुड़न तो मिटे, परत-दर-परत की गांठें तो खुलें। क्या वह सब कुछ ऐसा नहीं है जिसकी चकितकारी राजनीतिक कलाकारी को झेलकर अगम्भीर ठहाके लगाये जा सकते हैं ? क्यों अब तुम सोचोगे परिणामों को ? क्यों सोचोगे कार्य-कारण अथवा कर्म-फल श्रृंखला को ?···कल का शोहदा साला और लूटपाट पार्टी का सरदार जिसमें कौन-कौन गुन नहीं देखे गये तथा जिसके मारे गांव त्राहि-त्राहि कर उठा था, आज हमारा विधायक हो गया। घाट का दादा, सायकिल-घड़ी तिड़ी करने का एक्सपर्ट और रात चमटोल के नचनियों के बीच बिता, दिन में मार खाता अच्छे लाल क्षेत्रीय युवक कांग्रेस का अध्यक्ष हो गया।···सुखुआ और सिटहला जेल से छूटकर आते हैं तो सीधे रामरूप के पास पहुंचकर पूछते हैं, 'क्यों बाबू, बहुत हल्ला है, लोग कहते हैं कि आपने ही हम लोगों को फांसा है ? शायद आप किसी सुरक्षा-समिति के चेयरमैन हो गये हैं। बड़ी कुरसी पर बैठ यही सब छोटा

काम आप भी करने लगे ?'···जिस दिन वह अध्यक्ष वाला गुल खिला उससे तो बहुत पहले के तुम लोग बन्द थे ? तब ऐसी अफवाह क्यों किसने उड़ाई ? अरे हां, उस दिन थानेदार कैसे तुम-तड़ाम के साथ कड़ककर पूछ रहा था, 'तू क्या नक्सलवादी है ?' उसे किसने भेजा था रामरूप के पास ? राजनीतिक नौटंकी जिन्दाबाद। उसका एक सीन गत बीस तारीख को। तहसील की कचहरी में एक काला दैत्य मिठाई-पूड़ी वाली दुकान के आगे पूरे आराम ठाट में बंसखट पर मिर्जापुरी टिकाये पसरा है। रामरूप को देखते ही उठ बैठता है और कहता है—

'अरे, भाई बुलाओ मीता मुहर्रिर को। कहां गया ? अभी तो यहीं था। मास्टर साहब आ गये। अब काम हो जाय।'

···और चारों ओर बैठे उसके विविध गांवों के परिचित कचहरी-सेवी गणों में से एक आदमी एक ओर देखकर उतने ही ज़ोर से हल्ला करता है—

'ओ हनुमान, ओ हनुमान···देखो यहां मालिक साहब याद कर रहे हैं।'

हाथ में लम्बे-लम्बे तहाये कागजों का बण्डल थामे तभी एक चूहे जैसा आदमी प्रकट होता है जिसे देखकर रामरूप अनुमान करता है कि इसका नाम हनुमान होना चाहिए और एक मिनट में सारा काम खतम हो जाता है। हनुमान मुहर्रिर फरमाता है—

'मालिक, मैंने बताया न, इनकम टैक्स ऑफिस से परमिशन लेना पड़ेगा। बिना इसके काम नहीं होगा।'

'अरे नहीं भाई, कोई जोगाड़ बांधो। देखो, ये मास्टर साहब स्कूल से छुट्टी लेकर आये हैं। किसी तरह काम हो जाय।' कहते हैं बाबू हनुमानप्रसाद।

'कहना-सुनना और जोगाड़ बांधना तो इनकम टैक्स ऑफिस में होगा कि जल्दी से परमिशन मिल जाय। रही बात बिना परमिशन आज रजिस्ट्री होने की वह तो एकदम असम्भव है। मैं अभी लौटकर आता हूं तो उसके लिए दरखवास्त बनाता हूं।' कहकर हनुमान एक ओर चला जाता है।

बाबू हनुमानप्रसाद इस प्रकार बेचारे जैसे बन रामरूप की ओर टुकुर-टुकुर ताकने लगते हैं कि उसे उनकी विवशता पर दया आ जाती है और कहता है, 'जाने दीजिए बाबूजी, मेरे लिए क्या अफसोस कर रहे हैं। फिर किसी दिन आ जाऊंगा। बस, आपकी कृपा चाहिए। नियम-कानून के आगे किसका वश चलता है ?'

ससुरजी द्वारा साग्रह मंगाए गये कुछ रसगुल्लों को गले से उतार रामरूप स्टेशन की ओर बढ़ता है। जैसे-जैसे रसगुल्ले का रस भीतर भीनता है वैसे-वैसे उसे लगता है कि कोई जादुई असर कट रहा है और अन्त में वह यथार्थ के निष्कर्ष पर पहुंच जाता है। आज वह मूर्ख बन गया। उस दिन कहा था ससुरजी ने, सारे कागज-पत्तर तैयार रहेंगे, सो क्या हुई वह तैयारी ? कोई आगे डेट देंगे तो उस

दिन सम्भव है चकबन्दी का अड़ंगा लग जाय और फिर आगे कभी ऐसा हो कि स्टाम्प ही न मिले। या कुछ और रोड़ा अटक जाय। रोड़ों की क्या कमी है?··· अब कभी नहीं आयेगा इस कार्य के लिए कचहरी में रामरूप। बिना रजिस्ट्री के ही जब वे खेत छोड़ सकते हैं तो क्यों नहीं यह पहला नजदीक वाला आसान काम करते हैं? क्यों दूर के चांद-सितारों को समझाते हैं? यह रजिस्ट्री एक क्रूर नाटक सिद्ध हुई। इस नाटक का धीर राजनीतिज्ञ ग्रामनायक क्यों हर बार देर से समझ में आता है?···अरे रामरूप, गनीमत मान कि समझ में आ जाता है, देर से ही सही। महुवारी से लेकर राजधानी तक ऐसे ही सुविधाशील सम्पन्न राजनीतिज्ञों का छद्म जाल बिछा है। लोग कहां कितना फंसे हैं, समझना मुश्किल है। समझ कर भी निस्तार कठिन। तब पहले सारा सोच छोड़ जोर से हंसो तो और सच-मुच एक बार जोर से हंसी आ गयी थी रामरूप को।

एक बीड़ी फिर जलाते-जलाते रामरूप का ध्यान बलेसर काका की झोंपड़ी की ओर गया जहां बहुत देर से उल्लास भरा हल्ला-गुल्ला और ललकार भरी रंग-बिरंगी बोलियों का मेला लगा हुआ है। स्वयं काका भी हैं। जब-तब भगेलुआ की आवाज़ आ रही है। पूरी दोपहरी तास के खेल में कट गयी। लोग कितने खुश-खुश शुद्ध वर्तमान को चिन्ताहीन हो जी रहे हैं। चहक रहे हैं और पिहक रहे हैं। अकड़ रहे हैं और बहक रहे हैं। तास की लड़ाई के शोर में उड़ गयी है भादों के सूखे की चिन्ता। सूखे ने खेती का काम ठप कर बेकार कर दिया तो इन गंवारों ने एक ऐसा 'कार' खड़ा कर झोंपड़ी में बेकारी को चुनौती दे दिया। जब अपने गांव-घर की इन्हें इस समय चिन्ता नहीं तो देश-दुनिया की क्या बात है? झूठ नहीं लिखा तुलसी ने कि 'सबसे भले हैं मूढ़, जिन्हें न व्यापे जगत गति।' फिर रामरूप की दृष्टि में अच्छे ही क्यों, वे बहुत अच्छे हैं जो इकट्ठे बैठ इतने खुश हैं। कितनी दुर्लभ हैं रामरूप के लिए ऐसी खुशियां! हाय, वह इस तासपार्टी में भी बैठने से रहा। उसका जनम अकेले नाना प्रकार के चिन्ता-जाल बुनने और उसमें फंस छटपटाने के लिए हुआ है। एक मुहावरा है न, 'मियां दुबले क्यों? शहर के अन्देशे से।' तो, तमाम-तमाम शहर के अन्देशे उसे खा रहे हैं। अच्छा, मान लो, ये अन्देशे शहर के नहीं, खास अपने हैं तो भी वे इस समय कहां हैं? जरा अपने सिर पर, कन्धे पर, हाथ रखकर, टोकर देखो तो वे कहां हैं कि उनके भार से पिस रहे हो, कराह रहे हो? वे गंवार तो झोंपड़ी में सिर्फ अपने खेल के साथ हैं और तू कहां-कहां लड़ रहा है? कहीं गठिया में तो कहीं खोरा-बाग में। हनुमानप्रसाद से लेकर वर्मा साहब तक के मोर्चों में भटक रहा है। गांव की राजनीति, देश की राजनीति और अगड़म-बगड़म कितने लोग, कितने विचार और कितनी वस्तुओं की भीड़ में तू बेचारा बना पिस रहा है।···जरा आंखें खोल देख रामरूप, यहां तो तुम हो, तुम्हारे हाथ में जलती बीड़ी है, चारपाई है,

खिड़की से आकर फैला धूप का एक टुकड़ा है, जब-तब आते पुरवा के गरम झोंके हैं और सामने की बंसवारि में चहकते इक्के-दुक्के पक्षी हैं। कहां हैं हनुमान-प्रसाद ? कहां है खोरा ? कहां है यहां रजिस्ट्री ? कहां हैं नक्सली ? अब सोचो, बाहर दुनिया के लोग ही क्यों, तेरा यह व्यक्ति भी भीतर से क्या कम नौटंकी है ? ज़रा ज़ोर से हंसो रामरूप अपने ऊपर तो !

रामरूप की हंसी सुनकर भीतर से मां आ गयी।

'कवनी बाति पर हंसत बाड़े बचवा ?'

हाथ की जलती बीड़ी फेंक रामरूप ने पलटकर देखा और सचेत होकर जवाब ढूंढ़ने लगा। क्षण-भर बाद बोला—

'कुछ नहीं मां, देख रहा था कि पैरों से मिट्टी खखोर-खखोर कर और फरफराई पांखों से उसे छींट-छींटकर भादों में गौरैया लोट रही हैं।'

'ई लच्छनि ह बरखा के।···हे भगवान्, बरिस द कि दुनिया जी जाउ।··· आजु का खइब जा ? हम त तीज भूखल बानी, दुलहिल नइहरे बाड़ी।' मां ने कहा।

'हम लोग बाहर भगेलुआ सहित बाटी ठोक लेंगे।···तीज को क्या कुछ बढ़िया-बढ़िया फलाहार नहीं बनता है ?'

'राम राम। नांव मति ल। खइला के के कहो, पानियो ना पीअल जाला। जे ब्रत वाली तिरिया पानी पी लीही ओकर मछरी के जनम होई। एही तरे अनाज खाये वाली मेहरारू सूअरि के, दूध पीये वाली नागिन के आ एह दिन मीठा खाये वाली चिउंटी के जनम पाई। एकदम निखंड ब्रत के महातिम ह। सास्तर में साफ-साफ लिखल बा।'

'तुम लोग तो झूठ-मूठ जान देती हो मां। भला कहो तो, इस तीज का वर्णन किस शास्त्र में है ? कहां है वह शास्त्र ?' कुछ छेड़ने के लिए ही रामरूप ने कहा।

'अच्छा त सुन,' मां मचिया खींचकर बैठ गयी और बोली, 'सास्तर पंडितजी का पास बा। ओमें तीज के कहनी बा। पूजा का बाद हम कई बेर सुनले बानी। कैलास परबत पर सिवजी पार्वतीजी से एह गुप्त ब्रत के कहनी कहले हउअन। भादों सुदी तीज के···।'

···और मां ने धीरे-धीरे पुलकित हो-हो व्रत कथा के साथ विस्तारपूर्वक उनका महात्म्य भी श्रवण करा दिया। फिर उसने भादों में पड़ने वाले बहुरा, हरछठि, बावन द्वादसी, गनेस चउथ (ढेला चउथ), रिसि पंचिमी, सन्तान सतिमी, महा लछिमी और अनन्त की उसी उत्साह से चर्चा की। रामरूप सुनता गया, सुनता गया। सुनकर उसके थके और आहत मन को बहुत आराम मिल रहा था। उनके भीतर कोई नया अज्ञात आयाम खुल रहा था। बाहर के तनाव और द्वन्द्व-भरे जीवन के भीतर यह कैसा एक भोले विश्वासों वाला भूला-बिसरा सनातन

जीवन है ? पुरुष जाति तो बह गयी, धन्य हैं ये माता जाति की औरतें जिन्होंने उसे अभी सहेज रखा है। अपने समूचे ज्ञान और तर्क को ताक पर रख नन्हे बालक की भांति मां की व्रत-कथाओं को सुनते-सुनते रामरूप को नींद लग गयी।

सोकर उठा तो अन्धेरा हो गया था। आसमान में बादल लगे थे किन्तु 'ये बरसेंगे नहीं' ऐसा सोचकर अरविन्दजी और भगेलुआ ने मिलकर बाहर-सहन में ही बाटी का जोगाड़ बांधना शुरू कर दिया था। स्थान झाड़-बुहार कर और पानी छिड़क सबसे पहले लाकर रखे गए खांचीभर उपले। फिर जल, आटा, बर्तन और आलू वगैरह। पिताजी का कहना था कि भगेलुआ सारा कार्य कर दे, यहां तक कि पहली बार बाटियों को आग पर रख दे। बस उसके बाद और लोग उसे सेंककर सिद्ध कर लेंगे।

रामरूप अलसित-उत्फुल्ल कुतूहल के साथ बाटी लगता देख रहा था। उसका मन बहुत हल्का हो गया था। वह भीतर बहुत शान्ति का अनुभव कर रहा था। कई महीनों की खोयी वह शान्ति पलक झपकते कहां से आ गयी ? एक विचार आया, क्या वह पलायन कर रहा है ? कठिन संघर्षों, राजनीतिक पराजयों और कड़वे अनुभवों से भागकर ही तो वह नहीं व्रतों और उनकी श्रद्धा-विश्वास-मूलक कहानियों में अपने को डुबोकर छिपाना चाहता है ? अथवा भूले-बिसरे महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक आयामों के नाम पर इस बीते युग की भोली-भावुक गलियों में रमना चाहता है ? भादों वाले औरतों के इन निराहार व्रतों में अपने लिए वह सावन के त्यौहारों की भांति खाने-पीने वाला अवसर खोज रहा है और ऋषि पंचिमी वाले मात्र जंगली तिन्नी के चावल से बिदककर भादों के अन्तिम त्यौहार अनन्त पर आकर्षित होता है ? वह कई बार मन-ही-मन दुहरा चुका, 'की पेट भारे राम नउमिया की रे अनतवा भाई।' यह सब क्या है ? परम्पराओं में सिर छिपाकर शान्ति का अनुभव करना ही तो पलायन है।

नहीं, यह पलायन नहीं आत्मान्वेषण है, उसने फिर बहुत गहराई से सोचकर दृढ़तापूर्वक बात को मन-ही-मन दुहराया। व्रतों में जातीय जीवन का उल्लास है। उसमें वैयक्तिक और पारिवारिक जीवन की समरसता है। इस प्रकार ऋतुओं की इस विविध राग-भीनी रंगीनी में डूबना हमारा जातीय स्वभाव है। अपने स्वभाव की विस्मृति और उससे बाहर जाना तनाव है।

भगेलुआ और अरविन्दजी को कठिनाई में पड़ा देख बिलास बाबा को हाथ लगाना पड़ा और आग का अहरा जलते-जलते में बाटियां गढ़कर तैयार हो गयीं।

और समय होता तो रामरूप कितनी दिलचस्पी से इस कार्य में सहयोग करता परन्तु आज तो वह जैसे स्थितप्रज्ञ हो गया था। अपने ही घर में पाहुन की तरह आज उसे बस बैठे-बैठे निर्भार जायजा लेना था। सब कुछ तो अपने आप हो

रहा है, उसे आखिर करना क्या है ? हां, करना तो सिर्फ एक काम है, भोजन पर खेद। क्या इतने प्रेस से लगती बाटियों को रामरूप तब खा सका ?

५६

कहा जाता है कि दाने-दाने पर लिखा होता है खाने वालों का नाम। सो, उस दिन जो बाटी लग रही थी उस पर शायद रामरूप का नाम नहीं लिखा था। क्योंकि वह खाने जा ही रहा था कि उधर वह सब हो गया और गज़ब हो गया।

जब शाम को आप भोजन करने जा रहे हों, रात अन्धेरी हो, पास में लालटेन रखी हो, समय बरसाती सूखे का हो जिससे गांव में आधी रात का सन्नाटा छा गया हो और तभी पड़ोस में अचानक कहीं हल्ला-गुल्ला और औरतों की चिल्ला-हट के साथ धर-पकड़ की आवाज़ आती हो तब आप क्या करेंगे ? पहले तो आप डाकुओं की आशंका से डरेंगे फिर तत्काल अगर यह मालूम हो जाय कि कट्टा-बम से रहित ये नये तरह के निरामिष डाकू हैं तब रामरूप की भांति अवश्य ही आप लालटेन लेकर मौके पर पहुंच जायेंगे। यह और बात है कि उसी की तरह चश्मदीद गवाह बनते-बनते मुजरिम नम्बर एक तक नहीं पहुंच जायेंगे।

हल्ला सोनारटोला की ओर कहीं पूरब ओर हो रहा था। वहां पहुंचते कितनी देर लगती ? रामरूप की हस्तरेखा देखकर किसी सामुद्रिक ने बताया था कि जेल जाने का योग है और शायद उस योग के घटित होने की घड़ी आ गयी थी। ऐसी घड़ियों को कोई बुलाने थोड़े जाता है, वे आ जाती हैं। गजब दृश्य था। सीरी भाई को कुछ लोग बाहर खींच रहे थे और दीपन सहित उसके घर की औरतें उन्हें अन्दर खींच रही थीं। बीच दरवाज़े में ही यह रस्साकशी चल रही थी। बेचारे सीरी भाई इस खींचतान में मरे जा रहे थे।

'तुम लोग कौन हो और यह कैसा अन्धेर मचा रखा है। छोड़ो और दूर हटो।' रामरूप ने वहां पहुंच लालटेन को उचकाकर जोर से कहा।

सबसे आगे जो खींच रहा था वह एक सिपाही था। बहुत रोब के साथ घूम कर बोला—

'आपसे मतलब ? हम लोग अपने आसामी को पकड़ रहे हैं।'

'कैसा आसामी ?'

'वारन्ट है, खिलवाड़ नहीं।'

'और कुर्की भी है।···सारा गांव छानते-छानते तो यह यहां इस सोनार के घर में छिपा मिला है।' सिपाही के साथ वाला बोला। मगर ऐसा लगा कि दल कुछ सहम गया है और पकड़ ढीली हो गयी है।

'मुझे ज़रा दिखाओ वारन्ट वाला कागज़ तो।'

एक ने चट पाकिट से अखबार का एक फटा हुआ टुकड़ा निकाला और हाथ ऊपर कर हवा में हिलाता हुआ बोला, 'देखिये, यह है।'

'अरे रख वारन्ट को पाकिट में। मत दिखा। देखें क्या कर लेते हैं।···यह देखो, आसामी साला भीतर घुसा जा रहा है। घसीट लो बाहर।' दूसरा सिपाही बोला और देखते-देखते वे सब फिर सीरी भाई पर टूट पड़े। अबकी बार किवाड़ का पल्ला उन्होंने पकड़ लिया था। पुरानी किवाड़ थी। चरचराकर उसकी बेनी उखड़ गयी। सिपाही ने अब गले में हाथ लगाना चाहा। हाथ का झटका मुंह पर लगा और मुंह से नकली लगवाया हुआ दांत छटककर दूर जा गिरा। सीरी भाई अपने दांतों का नाम लेकर बिफर पड़े। रामरूप ने लालटेन की रोशनी में नीचे नज़र डाली तो देखा, वह दांत पड़ा ह। घिन जैसी लगी मगर उसने उसे उठा लिया और दीपन की छोटी लड़की को थमा दिया जो अपने काका के लिए खड़े-खड़ा रो रही थी और कांप रही थी। लड़की की बूढ़ी दादी अलग छाती पीट रही थी। मोर्चे पर डटी थी दीपन की स्त्री और बड़ी लड़की। स्वयं दीपन नहीं था। सीरीभाई का उसके घर से बहुत गहरा सम्बन्ध है और उससे कुछ परामर्श के लिए प्रतीक्षा में सायंकाल से ही बैठे थे। अब वे चलना ही चाहते थे कि ये न जाने कहां ले जाने वाले आ गये। पता नहीं किस बैरी ने इन यमदूतों को सुराग दिया था कि वे यहां हैं। नायब तहसीलदार कानूनगो और अमीन सहित सिपाहियों की यह पार्टी आयी तो थी सूखा-सहायता वाला गेहूं बांटने पर क्या गज़ब हुआ कि लगे माल-गुजारी वसूल करने। सो भी इस प्रकार!

ऐसा लगा कि अब एक झटके में सिपाही उन्हें खींचकर बाहर निकाल लेंगे और घसीट देंगे। औरतें कमज़ोर पड़ रही थीं और दूसरा कोई था नहीं। पड़ोस में चारों ओर सन्नाटा था। सोनारटोली में अब रहता भी कौन है? सोने-चांदी का कारबार चौपट होने के बाद यह जाति जैसे उजड़ गयी। पेट जिलाने के लिए भगे इधर-उधर। दीपन, कुछ खेत-बारी होने के कारण डीह पर आबाद है। आदमी इज्ज़तदार है। तभी तो उसकी बुढ़िया मां अलग बैठी बस रोती जा रही है कि बबुआजी हमारे घर से पकड़ कर चले जायेंगे तो हम लोग कौन-सा मुंह दिखायेंगे? दीपन की औरत गरज रही है, 'ये बाबू साहब अपने घर जायं तो तुम लोग जो चाहो करो। यहां कुछ हुआ तो मुंह नोच लूंगी।'

मगर, बेचारी कहां तक उन दरिन्दों के आगे प्रतिरोध में डटती। वह अजीब क्षण था। क्या यह अन्धेरगर्दी खड़े-खड़ा देखी जा सकती है? रामरूप आगे बढ़ा और लालटेन को एक ओर रख उसने सीरी भाई को पकड़ लिया और सिपाहियों से बोला, 'बस अब हद हो गयी। हट जाओ तुम लोग। मैं हरगिज यह सब नहीं देख सकता।'

'तो क्या आप बलवा करेंगे?' एक सिपाही गरज उठा।

'नहीं। मैं समझना चाहता हूं कि मामला क्या है ?'

उसी समय गांव के कुछ लोग और आ गये। सिपाही सीरी भाई को छोड़कर हट गया और बोला, 'इनके यहां मालगुजारी बाकी है। देते नहीं हैं और बुलाने पर लाट साहब बने छिपते फिरते हैं।'

अब रामरूप ने जाना, यह अमीनों की फौज है। आज के इस आक्रमण का नेता यह सिपाही है। शेष चपरासीगण इसके सहायक हैं। गंवारों के जंगल में ये शेर-से दहाड़ रहे हैं। इन्हें अधिकारियों ने पूरी तरह बाघ की पोशाक पहना दी है। ऊपर से पैने-पैने नाखून लगा दिये हैं। ये पहचान-पहचानकर कमज़ोर किसानों को नोच रहे हैं। इन बर्बर भेड़ियों जैसे इन्सानों के बीच एक व्यक्ति था जो पोशाक से कुछ भद्र लग रहा था और प्रायः चुप था, शायद वही अमीन था। रामरूप ने उसकी ओर घूमकर पूछा—

'क्यों साहब, बता सकते हैं कि मालगुजारी वसूली का इससे बेहतर वक्त क्या आपके पास नहीं होता है ? देख रहे हैं कि असाढ़ से एक बूंद पानी नहीं बरसा और आसमान से आग बरस रही है। किसानों के मुंह में धान का लावा फूट रहा है। किसी के पास फूटी कौड़ी नहीं और फसल का आसरा रहा नहीं। तिस पर ऊपर से वसूली की यह नादिरशाही क्या उचित है ?'

'अजी मालगुजारी कौन मांगता है ? हम लोग तो इन्हें सिर्फ बुला रहे हैं।' उस व्यक्ति के बोलने के पहले लाल पगड़ी वाले ने आगे बढ़कर कहा।

'किसलिए ?' रामरूप ने पूछा।

'नायब तहसीलदार साहब आये हैं और उन्होंने इन्हें बुलाया है।'

'किसलिए बुलाया है ?'

'यह तो हम लोगों को भी नहीं मालूम है।'

'इसीलिए इतने आदर के साथ ले जा रहे थे ? क्या तनिक भी मनुष्यता आप लोगों में है ?' रामरूप ने कहा और उसकी दृष्टि सीरी भाई की ओर घूम गयी।

उस समय सीरी भाई अपने घुटने में लगी खरोंच और बहते हुए खून को एक कपड़े के टुकड़े से सहलाते-सुखाते हुए बाहर आये और कहने लगे —

'देखिये मास्टर बाबू, ये लोग यमदूत हैं और मुझे शायद विष्णु भगवान बनाकर घसीट रहे हैं। कहते हैं, नायब साहब ने दर्शन के लिए तलब किया है। ···आप तो दिन-भर स्कूल पर रहे और ये लोग गांव में अहेर खेलते रहे। लोगों को डांट और गाली के मुंह से, पकड़ ले जाते रहे और दीनदयाल के द्वार पर साहब के सामने हाजिर कर देते। फिर साहब का हुक्म होता कि माल-मवेशी गहना-गुरिया, कपड़े-लत्ते और बर्तन-भांड़े बेचकर भी मालगुजारी वेबाक करो अथवा यहीं बैठे रहो। ···दरवाज़े के मवेशियों को खोल-खोलकर ले जाते हैं, कहते हैं कि कुर्की है। औरतों पर रोब जमाते हैं। दहाड़-दहाड़कर आतंक

फैलाते हैं। लोग घर-बार छोड़कर भाग खड़े हुए हैं। मैं भी डर के मारे दिन-भर भागा-भागा फिरा। ···यहां मिल गया तो कहते हैं, देखो बदमाश भगने न पाये। इसे तहसीलदार साहब के सामने ले चलो। ···गरीब हूं तो क्या? एक इज्ज़त-दार आदमी हूं। इस प्रकार आबरू को उघिया देना किस सरकारी रूल में लिखा हुआ है?'

'बात रूल की नहीं श्रीमान्', अब तक मौन उस भद्र से लगने वाले व्यक्ति ने कहा, 'आर्डर की है। जैसा ऊपर के लोग कहते हैं, वैसा हम लोग करते हैं। यह मजबूरी है। आर्डर होता है, जैसे भी हो लगान वसूल करो।'

'जैसे भी हो का क्या मतलब? क्या इस प्रकार खुली गुंडई करने का भी आर्डर है?' रामरूप बोला।

'और क्या? हम लोग प्राइवेट नहीं, सरकारी गुंडे हैं। क्या आप जानते नहीं हैं? आप हम लोगों की शिकायत अखबार में भेजिये। हमारी क्रूरता और कठोरता की निन्दा ऊपर के अधिकारियों से कीजिये। हम लोगों की फौरन तरक्की हो जायेगी। इस काम में जो जितना ही सख्त है, वह उतना ही कामयाब है। गरीब किसान की टेंट से पैसा काढ़ना हंसी-खेल नहीं है। गुंडई करनी ही पड़ती है। अत्याचार और जुर्म ढाना पड़ता है। ···यह देखिए, कुर्की और वारन्ट के सादे फार्म। बड़े साहब ने हस्ताक्षर कर दे दिया है। हम जहां चाहें इसका इस्तेमाल करें। जिसको चाहें गिरफ्तार करें। जिसकी चाहें गाय-भैंस अथवा बैल वगैरह को खड़े-खड़ा कुर्क कर दें।'

'ओह, यह तो हद है। क्या वसूली विभाग में मानवता नाम की वस्तु को एकदम तिलांजलि दे दी जाती है?'

'अर्ज़ किया न श्रीमान्‌जी, यह हमारी मजबूरी है।···हमारे यहां एक नायब तहसीलदार आये। पूजा-पाठ प्रेमी थे। बिना स्नान-ध्यान के अन्न-जल नहीं ग्रहण करते थे। मालगुजारी वसूली में सख्ती तो क्या, वे कड़ा पड़कर बोलते भी नहीं थे। मोम-सा दिल था। हम लोग आसामी पकड़-पकड़ कर लायें और वे छोड़ दें। नतीजा हुआ कि मालगुजारी वसूली का कोटा बाकी पड़ा रह गया। वसूली पिछड़ गयी। झख मारकर उन्हें वसूली विभाग से हटाना पड़ा और साथ ही उनकी बहुत शिकायत हुई। ···आप ही बताइये, हम लोग क्या करें?'

अब कुछ और लोगों के जुट जाने और इस सूखे-अकाल की वसूली के प्रति कांव-कांव करने के कारण बहस ठण्डेपन के उतार पर आ गयी। सभापतिजी भी आ गये। उन्होंने कहा कि इस समय सीरी भाई को छोड़ दें और सुबह यदि ये मालगुजारी नहीं अदा करेंगे तो मैं अपने पास से इनका सारा बकाया दे दूंगा। इस वार्ता के साथ अमीन और चपरासियों की उस टुकड़ी ने कूच मार्च किया। हां, कुछ बात थी कि वह एक सिपाही जाते-जाते रामरूप को विशेष अर्थभरी

दृष्टि से देखता जाता था। उसकी दृष्टि में क्या था, यह तो भगवान् जाने परन्तु इतना तो रामरूप भी जान गया कि खत्म होकर भी मामला अभी शायद खत्म नहीं हुआ। कल की सुबह शायद कुछ और जुल्म ढाये। सभापति ने नाहक वैसा वादा किया। कहां से सीरी भाई के घर रातों-रात ख़जाना बरस जायेगा?

रामरूप ने दीपन की पत्नी से लेकर एक बीड़ी जलाया और अभी वहीं चुपचाप बैठे सीरी भाई की ओर देखा। वह कुछ कहना चाहता था पर कह नहीं सका और चुपचाप लालटेन उठाकर चला आया। किसी प्रकार कुछ गले से उतारकर सोने का उपक्रम करने लगा। पर नींद थी कि जैसे रूठ गयी थी। बारम्बार मन में आता, कोई कैसे अपने को सिकोड़कर भीतर के राग के साथ जिये? कैसे बाहर की हवा से असम्बद्ध हो भीतर की सौन्दर्य-शिखा निष्कम्प बनी रहे।

सुबह जरा देर से नींद खुली तो रामरूप देखता है कि गांव में कुहराम मचा हुआ है। लोग भाग रहे हैं। कोई सीधे मुंह बात नहीं कर रहा है। पूछने पर कई लोगों की भिन्न-भिन्न तरह की बातों के भीतर से निष्कर्ष निकला कि इस महुवारी गांव में कल साढ़े सात बजे शाम को कुछ लोगों ने नायब तहसीलदार को मालगुजारी वसूली में बाधा देने के साथ पीट दिया है और नतीजा हुआ है कि गांव के गुंडों को सजा देने के लिए फोर्स आ गयी है। कल शाम को ही 'घायल' नायब को यहीं छोड़ एक सिपाही रातों-रात बड़े तहसीलदार के यहां पहुंचा है। सारी दास्तान सुन बड़े तहसीलदार ने कलक्टर को फोन किया है। कलक्टर ने कप्तान साहब से कहा है। फिर जिले से एक लारी गारद चली है। थाना भी उलट आया है। किसी ने कह दिया है कि बलवाइयों के पास बन्दूकें भी हैं इसीलिए पूरी तैयारी के साथ लोग आ रहे हैं। तहसीलदार को मारना खेल नहीं है। मारने वाला तोप लगाकर उड़ा दिया जायेगा।

घड़ी-पहर दिन चढ़ते-चढ़ते गांव में संगीनें भांजते जवान मार्च करने लगे। घरों के फाटक बन्द हो गए। सीरी भाई के घर के चारों ओर घेरा पड़ गया। गली-गली सिपाहियों का पहरा हो गया। घर की चहारदीवारी फांद सीरी भाई का लड़का अविनाश किसी प्रकार डरते-डरते रामरूप के पास पहुंचा। बोला, 'बाबूजी को हाजिर करने के लिए हम लोगों पर बहुत दबाव दिया जा रहा है। दरोगा दरवाज़े पर खड़ा है, कहता है कि मुजरिम नम्बर दो को हाजिर करो वर्ना घर फूंक दिया जायेगा।'

'कौन है मुजरिम नम्बर दो?' रामरूप ने पूछा।

'हमारे बाबूजी।'

'और नम्बर एक?'

'यह तो हमें मालूम नहीं है।'

'चलो मैं चल रहा हूं।'

रामरूप पहुंचा तो देखता क्या है कि दरोगा पार्टी द्वार पर डटी हुई है। चौकीदार ने दरोगा के कान के पास कुछ कहा और वह उठकर मुसकराते हुए रामरूप से हाथ मिलाने के लिए बढ़ा। बोला, 'आइये साहब, बहुत मौके से आप भी आ गए। ज़रा भीतर जाकर···।'

'मगर भीतर तो मुजरिम नम्बर दो है। आप लोग पहले नम्बर एक को क्यों नही पकड़ते हैं। कौन है यह मुजरिम नम्बर एक ?' हाथ मिलाकर तमतमाये हुए तेवर में रामरूप ने कहा।

'ओह सर, माफ करेंगे' दरोगा बोला, 'बड़ी भारी बेवकूफी कर दी आपका नाम लेकर उस एक सिपाही ने। हम लोग शर्मिन्दा हैं कि विधायकजी सुनेंगे तो क्या कहेंगे ?'

'इसका मतलब यह कि विधायकजी के भय से शायद आप लोग उनके मुजरिम नम्बर एक बने बहनोई को बख्श दे रहे हैं ?'

'हम लोग तो आपके सेवक हैं सर, फिर बख्शने और न बख्शने का तो सवाल ही नहीं।'

'तो ठीक है दरोगा जी, मैं भी एक बात कहूं। आप लोग विधायकजी के बिना कहे ही, सिर्फ रिश्ता सुनकर मुजरिम नम्बर एक की सेवा करते हैं कि उसे बख्श देते हैं तो अब यह उसी विधायकजी का रिश्तेदार सिफारिश कर रहा है कि मुजरिम नम्बर दो को भी बख्श दें और गांव को भादों के इस अकाल में जीने दें।'

'आपका हुक्म सिर आंखों पर सर, बस एक अर्ज है, गल्ती माफ करेंगे। आप मेहरबानी करके सभापतिजी के दरवाज़े पर चलकर हमारे तहसीलदार साहब से मिल लें।' दरोगा बोला।

इसी समय एक सिपाही दौड़ा हुआ आया और सलाम ठोक रामरूप की ओर देखकर अत्यन्त अदब के साथ बोला, 'हुजूर से मिलने के लिए तहसीलदार साहब दरवाज़े पर गए हैं।'

६०

तहसीलदार की धूल उड़ाती जीप पर भादों में करइल क्षेत्र के बीच से फर-फर-फर-फर उड़ते जाना रामरूप के लिए एक ऐसा छोटा सुख था जिसके चारों ओर अकाल का भीषण दुख लिपटा था। आसमान पर बादल सघन होते जाते थे और शायद इसीलिए ड्राइवर गाड़ी को तेज़ी से भगा रहा था। यदि थोड़ा भी पानी पड़ गया और जीप फंस गयी तो फिर करइल की मयार माटी से उसका

निस्तार कठिन होगा। लेकिन रामरूप का मन ऊंचे आसमान में उमड़ते इन बादलों से टूट चुका था। फिर हालत यह थी कि 'का बरखा जब कृषी सुखानी?' समय चूक चुका था और बेकार होने पर भी भीतर पछताना-पछताना ही शेष था। कितने-कितने तरह के पछतावे? कोई हिसाब नहीं। सबसे ताज़ा पछतावा यह कि जो तहसीलदार मुजरिम नम्बर एक बना उसे गिरफ्तार करने के लिए आया उसका निमन्त्रण रामरूप ने क्यों शिरोधार्य कर लिया? बबुनी बाजार ब्लाक में आज योजित सभा में, जिसका सभापति जिला अधिकारी है और मुख्य अतिथि मगन एम० एल० ए०, सम्मिलित होने का प्रस्ताव उसने क्यों स्वीकार कर लिया?

किन्तु इस प्रकार का पछतावा एक क्षण से अधिक नहीं टिकता। इसे काटने वाला एक अकल्पित गर्व रह-रह कर भीतर लहरा जाता। जीवन में रामरूप को पहली बार ऐसा सरकारी सम्मान मिला और वह उसके रिश्तेदार विधायक के कारण मिला। उसे पहली बार अहसास हुआ कि यदि सत्तारूढ़ दल का है तो विधायक कितनी शक्ति और कितने प्रभाव वाला प्राणी है। इसके साथ ही रामरूप को अपनी मूर्खता पर खेद भी हुआ कि उसने घासभूसा जैसा समझ उसकी उपेक्षा की। समझदार वर्मा है। ज़माने की बदली स्थितियों की पहचान उसे है। अलगाव और तनाव से आज कुछ नहीं होने का है। मिल-जुलकर ही काम निकलेगा। लोकतन्त्र में राजधानी से लेकर ब्लाक तक की कार्य-पद्धति बदल गयी और निर्माण-विकास के अर्थ बदल गये। इस नये अर्थ में क्षेत्रीय समस्याओं से निपटने के लिए विधायक ही सरकारी आंख-कान और हाथ-पैर है। आज उसके 'नाम' पर ऐसा हो गया तो वह स्वयं खड़ा हो जाय तो कैसा चमत्कार हो सकता है? कितना अच्छा यह समय है कि रामरूप का खास साला विधायक है।

अचानक आगे जाती हुई ब्लाक वाली नयी जीप जिस पर तहसीलदार बैठा था, रुकी तो पीछे रामरूप वाली जीप भी रुक गयी। ज्ञात हुआ तहसीलदार का पनडब्बा इस पीछे वाली उसकी अपनी गाड़ी में बैठे उसके अर्दली के पास रह गया था। गाड़ी से उतरकर एक पान का बीड़ा रामरूप की ओर बढ़ाकर दूसरे को चबाते हुए तहसीलदार ने पूछा, 'कोई कष्ट तो नहीं?' उत्तर में रामरूप ने हाथ जोड़ दिए। थाने की जीप सहित कुल तीन जीपों का काफिला फिर चल पड़ा। अपनी जीप में बैठे सशस्त्र सिपाहियों को देख रामरूप फिर पुराने सन्दर्भ में फिंक गया। आज इसी दिन जीप में वह गिरफ्तार होकर चलता होता तो कैसा लगता? यह यात्रा-कष्ट पूछता तहसीलदार कैसा लगता? तब क्या यह देवता जैसा दीखने वाला तहसीलदार राक्षस जैसा नहीं लगता? तब क्या सही है? वह वास्तव में क्या है? मूलतः वह और उसके साथ मुजरिम नम्बर एक और दो को कुचलने के लिए धावा बोलने वाले सिपाहियों सहित अन्धी व्यवस्था के सारे छोटे-

बड़े पाये क्या राक्षस नहीं हैं? निश्चित रूप से ये राक्षस हैं। ये किसी सूक्ष्म भय-वश देवता बन गये हैं। यह भय विधायक का है। विधायक भी ऐसा-वैसा नहीं। मुख्य मन्त्री की नाक का बाल हो गया है। इतना तेज़-तर्रार कि पता नहीं कब कोई मन्त्री बन जाय और यहां हालत यह रही कि वह अव्वल मुजरिम का रिश्तेदार है। सचमुच रिश्तेदारी एक बड़ी चीज़ है। वह आज कानून और व्यवस्था को प्रभावित करती है। विधायक के रिश्तेदार को गिरफ्तार करने में कांप गयी अधिकारियों की सेना। ज्ञात हुआ, दीनदयाल कहता रहा कि मुजरिम रामरूप विधायक का विरोधी और स्वयं बाबू हनुमानप्रसाद का शत्रु जैसा है पर उस पर हाथ लगाने की हिम्मत अब किसमें थी? तहसीलदार कहने लगा, विरोधी है तो क्या, हंसुआ जब भी खींचेगा, अपनी ओर ही खींचेगा। प्रकट रूप में न कहें तो भी विधायकजी मन में क्या सोचेंगे? उन लोगों के आपस के सम्बन्ध चाहे जैसे हों, दुनिया क्या कहेगी? विधायकजी के खास बहनोई को हथकड़ी लग गयी? फिर ऊपर से भी डांट पड़ सकती है। आज इस समारोह में ही भला वह एम० एल० ए० और जिला अधिकारी के आगे कौन-सा मुंह लेकर खड़ा होगा? तहसीलदार को क्या अपनी नौकरी, अपने प्रोमोशन और स्थानान्तरण आदि की चिन्ता नहीं है? जल में रहकर भला कौन मूर्ख मगर से बैर मोल लेगा? तहसीलदार मुजरिम को रिहा ही नहीं कर देगा, विधायक के प्रति अपनी वफा-दारी दिखाने के लिए उसको इज्ज़त के साथ अपने समारोह में ले चलेगा। मुजरिम के लिए नहीं अपने बॉस के लिए वह यह सब करेगा।

सोच के इस बिन्दु पर पहुंचकर ऐसा लगा कि रामरूप के भीतर आग लग गयी। धिक्कार है ऐसे सम्मान को! यदि यह सम्मान है तो फिर भ्रष्टाचार किसका नाम है? कितना विकट तन्त्र चक्र है कि एक भ्रष्टाचार के सिलसिले में रामरूप का इस्तेमाल हो गया और इस बात पर उसे गर्व भी हुआ। गर्व ही क्यों स्वयं रामरूप भी उसमें लिप्त हुआ। उसे गिरफ्तार करने के लिए ऐसी मोर्चाबंदी कर पहुंचना यदि सामान्य भ्रष्टाचार था तो उसे मात्र एम० एल० ए० का रिश्ते-दार होने के कारण छोड़ देना असामान्य भ्रष्टाचार था। सबसे बढ़कर, रामरूप के द्वारा उसी भ्रष्टाचार को ओढ़कर सीरी को छुड़ाया जाना तो जघन्य भ्रष्टा-चार है, साथ ही उसका स्वागत करना है और उसे समर्पित हो जाना है। ऐसे समर्पण का इससे बड़ा प्रमाण क्या होगा कि भ्रष्टाचारियों की जीप पर बैठकर उनके जश्न में शिरकत के लिए रामरूप उड़ता चला जा रहा है। कौन होता है यह तहसीलदार उसका? उसको उस समारोह में क्यों जाना है? क्या यह उसका कोई निजी वैशिष्ट्य है कि आमन्त्रित किया गया? अथवा उसका कोई अपना प्रभाव था कि जुर्म से बरी हो गया? और यदि ऐसा कुछ नहीं तो उसे क्यों इस सुख-सुविधा और सम्मान को स्वीकार करना चाहिए? यदि विधायक रिश्तेदार

नहीं होता तो उसका क्या होता? सीरी का क्या होता? जाहिर है कि दोनों भ्रष्ट व्यवस्था के शिकार होते। कितनी साफ अन्धेरगर्दी है कि जन-साधारण को अन्धी और भ्रष्ट नौकरशाही एक ओर दबोचकर चरमरा रही है और दूसरी ओर जन-प्रतिनिधियों की नेताशाही की छाया में उस भ्रष्ट नौकरशाही के साथ नातेदारों-रिश्तेदारों की भ्रष्ट जमात पनप रही है, सम्मानित हो रही है और सीना तानकर चल रही है।

ब्लाक कार्यालय लगभग तीन किलोमीटर रह गया तो बूंदाबांदी शुरू हो गयी। फिर पछिमा के झोकों के साथ एक बौछार आयी। दोनों ओर सूखे खेतों में बूंदों के धक्के से धूल जैसी उठी और साथ ही उठी माटी के सोंधेपन की मीठी सुगन्ध-झकोर जो नाक के रास्ते भीतर उतरकर एक नशा-सा पैदा करने लगी। मगर रामरूप ने अनुभव किया, इस नशे में आषाढ़ जैसा ज़ोर नहीं है। भादों के अन्त के दंवगरा का नशा नाकाम! उसमें न फसली सपनों का सुनहरा संसार है, न त्यौहारी वर्षा-मंगल का खुलता द्वार है और न ही ऋतु रंगीनी के उल्लास का उभार है। हां, अगली फसल यानी रबी की बोआई की आशा बंध सकती है। किन्तु अभी तो पूर्वा नक्षत्र है। बोआई का समय एक महीने से ऊपर है। अभी उत्तरा नक्षत्र चढ़ेगी। वर्षा उत्तरायण होगी। उसके बाद हथिया नक्षत्र का पहरा होगा। घाघ के कथनानुसार यदि हथिया में पानी नहीं पड़ा तो फिर किसान धूल चाटने लगेगा। उस हथिया के बाद चित्रा और तब कार्तिक की बोआई। तब इतनी दूर की चीज़ की कैसी आशा? इस छलिया पानी का कैसा नशा? इस पानी का दैवी दान क्या वैसा ही नहीं जैसा रामरूप को आज का सरकारी सम्मान? कैसा एक झूठा नशा हुआ और प्रभुत्व का जबरदस्त जादू काम कर गया कि उखड़कर हें-हें-हें-हें कर दांत चिआरता वह गाड़ी पर लद गया। कुछ इसी प्रकार कबाड़ी का माल बन बेदाम बिका और सरकारी गाड़ी पर लदा आज का हतप्रभ बुद्धि-जीवी वर्ग उलझ गया है। उसकी तेजस्विता और स्वतन्त्र निर्णय-शक्ति कुंठित हो गयी है। सुविधा, सम्मान और रोजी में अपनी अस्मिता खोजते हुए वह इस मूल्य-हीनता के जटिल राजनीति-पीड़ित युग में भटक गया है। आस्था और सिद्धान्त की भुजायें कट गयी हैं। विरोध की लड़ाई भी बेमानी लगने लगी है। फल होता है कि आदमी अनजाने डगमगा जाता है। वह कितना और कहां-कहां सजग रहे? कदम-कदम पर चंपा तो है कि कूच पर निकल रही है। रामरूप भी क्या डगमगा नहीं गया? अपनी ही नज़र में उपहासास्पद बना अब वह क्या करे? क्या इस धारसार पड़ते पानी में गाड़ी से कूद पड़े? नहीं, इसकी ज़रूरत नहीं। अब तो इसे छोड़ना ही है।

ब्लाक कार्यालय पर अद्‌भुत दृश्य बन गया था। शामियाना हवा के झोंके में उलट गया था। नंगी कुर्सियां बौछारों में कठुआ रही थीं। कुछ के ऊपर शामियाने

के चोभे वाले बांस पड़े थे और उसके धक्के से कुछ उलट गयी थीं। कुछ के ऊपर टेंट औंधे मुंह पड़ा था। स्टेज पानी-पानी हो गया था। कुछ दरियां जल्दी-जल्दी में उठाई नहीं जा सकी थीं। उनकी गति बन गयी थी। कागज की झंडियां जो गल-फटकर उड़ीं तो जगह-जगह दरियों पर पानी में चिपकी थीं। 'स्वागतम्' सहित अशोक की पत्तियों से बना गेट धराशायी हो गया था। बगीचे की पत्तियों और खर-पात से उजड़े-भींगते पंडाल की ज़मीन एकदम बेआबरू हो गयी थी। इस खड़भड़ उदास परिदृश्य को अनवरत पड़ता पानी और अधिक निचोड़ रहा था। चिर-प्रतीक्षित पानी से अधिक रामरूप को इस खड़मंडल और समारोह-विध्वंस से प्रसन्नता हुई और औरों के पीछे वह भी जीप से कूदकर ब्लाक कार्यालय की गैलरी की ओर उछलता-लपकता बढ़ा।

कार्यालय के द्वार पर ही भेंट हो गयी भुवनेश्वर से। उसने लपककर पैर छूते हुए हाथ जोड़कर कहा—'बहुत मेहरबानी हुई कि तकलीफ उठा आप आ गये। फंक्शन तो अब क्या होगा, हां गोष्ठी ज़रूर होगी। उसमें आपको रहना है। मेरा परसनल रिक्वेस्ट है। चले मत जाइएगा। ···और घर पर सब आनन्द-मंगल है न?'

'सब ठीक है। बस पानी बिना त्राहि-त्राहि मची थी, सो आपका समारोह सह गया।' रामरूप ने उत्तर दिया।

भुवनेश्वर ने इस कथन पर एक ठहाका लगाया और बोला—'यानी हम लोग आज की इस निराशा और विफलता को अब हर्षोल्लास में चेंज कर लें। आई एग्री।···ज़रा डी० एम० की गाड़ी उधर कहीं फंस गयी। मैं अभी आया।'

बरसते पानी में एक जीप लेकर चार-छह लोगों के साथ भुवनेश्वर चला गया तो रामरूप ने सोचा, विधायक होकर कितना व्यवहार-कुशल हो गया है। यह नहीं प्रकट होने दिया कि वह कैसे इस सरकारी जैसे समारोह में टपक पड़ा। उलटे ऐसा लगा कि वह अनिवार्य रूप से पूर्व निमन्त्रित रहा और यहां उसकी प्रतीक्षा रही। ऊंचे कामों में लगे रहने पर बुद्धि-विचार में ऊंचाई आ ही जाती है। रामरूप ने फिर सोचा, वह नाहक इस व्यक्ति से खिंचा-खिंचा रहता है। इसने उसकी कभी कोई बुराई तो की नहीं, हां, आज इसके नाम ने एक जबरदस्त भलाई अवश्य कर दी है। एक सोच-सूत्र को उसने फिर मन-ही-मन दुहराया, अनजाने नाम, इतना असरदार हो जाता है तो जान-बूझकर यह स्वयं कहीं खड़ा हो जाय तो कितना वज़नदान हो जायगा? नहीं, व्यक्तिगत स्तर पर ही सही, रामरूप अब इसका कभी विरोध नहीं करेगा। बावजूद प्रकट विरोध के इतना-इतना सब अनायास हो गया तो यदि विरोध नहीं होता तब क्या होता? तब तो शायद बिना बनाये तहसीलदार उसके सामने मुर्गा बन उपस्थित हुआ होता।

अपने इस विचार पर रामरूप को वहां खड़े-खड़ा हंसी आ गयी। उसकी हंसी

सुनकर तूलप्रसाद सभापति पास आ गए। बोले—

'किस बात पर मास्टर साहब को हंसी आ रही है? ···आप भी हमारे खिलाफ बयान देने तो नहीं आए हैं?'

'ओह, सभापतिजी।' रामरूप बोला, 'मैं तो ऐसे ही हंस रहा था। यह आपके खिलाफ क्या मामला है?'

सभापति ने रामरूप का हाथ पकड़ लिया। दोनों व्यक्ति बरामदे के कोने में वहां पहुंचे जहां पानी की बौछार नहीं जा रही थी और एक खाली बेंच पड़ी थी। बातचीत के बाद रामरूप ने जाना कि जो तीस बोरी सीमेंट स्कूल के निर्माण के लिए ब्लाक से मिला था उसे सभापतिजी ने ब्लेक कर दिया है। कुछ लोग उस मामले को जिला अधिकारी के सामने आज उठाना चाहते हैं। सभापतिजी अपने लोगों में नाना प्रकार के तर्कों से सिद्ध कर रहे हैं कि यह ब्लेक भविष्य के लिए सुखद होगा और जितना होना था उससे ड्यौढ़ा निर्माण हो जाएगा। फिर एक मार्मिक बात इस रूप में कहकर वे लोगों का मुंह बन्द करना चाहते हैं कि 'मान लो, मैं खा ही गया। तो क्या जान ले लोगे? तुम्हारा भाई हूं। मान लो कि गरीबी में यह पाप हो गया तो एक बार माफी दो।' और अन्त में कहते हैं, 'मेरी इस विनती के बाद भी कोई नहीं मानता है तो जाय मेरी शिकायत करे। देखें कोई क्या कर लेता है? लोग तो हैं कि पहाड़ पचा डालते हैं और अरबों-खरबों गप्प हो जाते हैं। कुछ रुपये के इस सीमेंट में क्या रखा है?'

रामरूप कोई कड़ा उत्तर देने जा रहा था कि तब तक वहां नवीन बाबू धमक गये। बोले—

'आप भी इस मुर्गा-मुर्गी और बकरी-सुअर वाले सरकारी छप्परफाड़ समारोह में आ गये श्रीमान् जी।'

'क्या करता? जहां माथ पहले से मौजूद है वहां हाथ को तो आना ही है। रामरूप ने जवाब दिया।

'माथ मैं कहां? माथ तो आपके ससुर बाबू हनुमानप्रसाद उर्फ करइल महाराज हैं और अब माथ के ऊपर नया नाथ उनका बेटा हो गया। सो मौके का लाभ लेने के लिए आपका विरोध छोड़ शरणागत होना उचित ही है।' कहते हुए अत्यन्त भद्दे ढंग से हो-हो-हो-हो कर नवीन बाबू हंसने लगे। हंसते समय जो मुंह लाल हो गया तो उसका ताल-मेल चढ़ी आंखों से बिठाते रामरूप को बेहद घृणा हुई। उसने कहा—

'आप जैसा पराया आदमी जब खानदानी बैर बिसार पूरी तरह समर्पित हो गया और लाभों में डूब गया तो मैं तो उनका अपना हूं। शरणागत होने न होने का सवाल ही नहीं।'

'आपने यह कैसे समझ लिया कि मैंने उस बूढ़े भैंसे के आगे आत्मसमर्पण

कर दिया है। हमारी जाति तो बावन वर्ष बाद तक भी बदला लेती है। मैं तो सिर्फ ग्रहों के फेर से चुप था। अब देखिए अगले पांच नवम्बर से शनि-मंगल पांचवें और सूर्य-राहु तीसरे चलने लगते हैं तो लंगी लगा पटकनिया देता हूं। मैं सुखुआ और सिटहला नहीं हूं।'

अब रामरूप इस गड़बड़ व्यक्ति से अधिक उलझना नहीं चाहता था। बी० डी० ओ० के कमरे से खुबवा को गिलास लिये निकलते देख वह उधर लपका, 'अरे खूबराम जी, सुनिये तो, एक काम है।' धोती-कुर्ता और चप्पल की वैसी गांधीवादी पोशाक देख रामरूप की हिम्मत नहीं हुई कि वह उसे खुबवा कह पुकारे।

'पालागीं सरकार' खुबवा हाथ जोड़कर बोला, 'हुकुम हो, मैं आप की कौन-सी खिदमत करूं?' और झुककर पैर छू लिया। पैर छूते समय उसके मुंह से एक जो हलकी गंध निकली उसने फिर एक बार रामरूप को झकझोर दिया तो, यह रोग गांवों में इस सीमा तक फैल गया है? दो कदम पीछे हटकर उसने पूछा—

'अरे भाई यह बताओ कि कोई गोष्ठी यहां आयोजित है। सो, उसका स्थान कहां है? कब से प्रारम्भ है?'

'पिता जी, गलती माफ हो। इतने ऊंचे ज्ञान वाली बात हमसे मत पूछिए। कोई सेवा हो तो हुकुम दीजिए या तो फिर कोई इस तरह का मामूली हालचाल पूछिए कि आपके इस खिदमतगार के दिन कैसे कट रहे हैं?'

'ओ हो, यह बात है?' रामरूप हंसने लगा और बोला, 'अच्छा यही बताओ, कैसे दिन कट रहे हैं। तुम तो सुना कि नेता हो गए हो।'

'सब तख़्त दिल्ली वाली दुर्गा महारानी की दया है कि गठिया के अकबाली पुरुष का तेज़ दमदमा रहा है और उसकी छत्रछाया में पुराना सब भूलकर सुख से रहता हुआ हमारे जैसा जाहिल आदमी जंगली घास-फूस को भी छू देता है तो सोना हो जाता है।'

'अच्छा, यह बताओ कि तुम्हारी औरत सेवा करती है? सुना, गठिया में अब तुम्हारे साथ ही है।'

औरत का नाम सुन खुबवा के चेहरे पर चमक आ गयी। सूने बरामदे के बाहर धुआंधार वर्षा की छहर-छहर क्रीड़ा पर उसने एक नज़र डाली और भीतर से उठी रहस्यमय गहरी मुस्कान को होंठों से चबाकर बोला—

'साथ कहां, वह तो लखनऊ गयी। हमारा उसका साथ नहीं लिखा है।' और कहते-कहते लगा, रो देगा।

'साथ कहां नहीं लिखा है? यह किसने कहा?'

'अच्छा सुनिये, मैं बताता हूं। एक दिन वे आपके गुरु ज्योतिषीजी आये

थे···।'

'कौन गुरु ज्योतिषी?' रामरूप ने चकित होकर पूछा परन्तु तत्काल उसे कुछ याद आ गया। बोला, 'अच्छा हां ठीक, तो उस खोरा ज्योतिषी ने तुम्हारे बारे में क्या बताया?'

'बाबूजी ने मेरा हाथ उनसे दिखलवाया। हाथ देखकर ज्योतिषीजी ठक् हो गए और बाबूजी की ओर देखने लगे। तब उन्होंने मुझसे वहां से हट जाने के लिए कहा। मैं चला गया। बाद में बाबूजी से पूछा तो उन्होंने बताया कि ज्योतिषीजी ने कहा है कि खुबवा की औरत पिछले सात जनम की उसकी बहन है। आठवें में जबरदस्ती पत्नी बना दी गयी है। सो यदि खुबवा उसे पत्नी मानता है तो कोढ़ी हो जायगा।

कहते-कहते खुबवा की आंखों से टप्-टप् आंसू गिरने लगे। फिर उसने फफक-कर एक जंतर दिखाते हुए कहा—

'बस, अब उस परान प्यारी की यह एक चिट्ठी सहारा है। गले में पड़ी रहती है और सरकार किसी तरह माटी ढो रहा हूं।'

६१

थोड़ी देर के लिए रुककर पानी फिर बरसने लगा। उसका वेग इतना प्रबल था और पछिमा के झकोरों के साथ छहर-छहर उड़ती बौछारों का धुआं इतना सघन था कि अपराह्न में ही सांझ-सा अंधेरा घिर आया। यह तो कलाइयों में पड़ी घड़ियां थीं जो बता रही थीं कि अगले कार्यक्रम के लिए पर्याप्त समय है। विकास-गोष्ठी पानी में डूब गयी तो क्या हुआ, साहित्य गोष्ठी का कर्णधार तो सलामत है! एक कमरे में ही आधुनिकता बोध के सवालों से लदी नाव खेकर पार लगाई जा सकती है।

पहले ऐसा लगा कि गोष्ठी अनौपचारिक रूप लेगी परन्तु बी० डी० ओ० ने डी० एम० को पिन्हाई जानेवाली और खास गाजीपुर से मंगाई गयी ताजे गुलाबों की माला, इस भूमिका के साथ कि इस गोष्ठी के पूर्व निर्धारित सभापति, प्रमुख वक्ता और मुख्य अतिथि माननीय विधायकजी के माल्यार्पण से आज के इस कार्यक्रम का शुभारम्भ हो रहा है, भुवनेश्वर के गले में डाल दिया और करतल ध्वनि से कमरा गूंज उठा तो गोष्ठी ने प्रारम्भ में ही औपचारिक रूप ले लिया तथा अचानक गम्भीर शान्ति छा गयी।

इसी समय रामरूप ने देखा कुछ भींगे-अधभींगे कपड़ों में भारतेन्दु वर्मा बाहर से आया और सभापतिजी की बगल में बैठकर कागज का एक टुकड़ा उन्हें थमा दिया। अरे, यह अब तक कहां था? कहीं दिखाई नहीं पड़ रहा था। यह कैसा कागज

था ? मगर, इस जिज्ञासा के समाधान के लिए अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। विधायकजी ने सभापति का आसन ग्रहण करने के साथ अपने संक्षिप्त भाषण में आभार प्रदर्शन करते हुए कहा कि आज की इस गोष्ठी के मुख्य अतिथि का आसन तो कविवर खोराजी ग्रहण करनेवाले थे परन्तु वे आ न सके। वर्माजी जीप लेकर गए थे लेकिन वर्षा के कारण जीप बाग तक नहीं जा सकती थी और कुछ रुग्ण होने के कारण खोराजी बाग से सड़क तक नहीं आ सकते थे। खोराजी ने अपनी शुभकामना चार पंक्तियों की एक कविता में भेजी है।

इसके बाद विधायकजी ने खोरा की उन चार पंक्तियों को स्वयं पढ़कर सुनाया—

गोंइठी सुनुगाईं सभे, धूआं उठाईं सभे,
आगि लागो, भागि जागो, भागे मछरई।
हम त बेराम बानीं इहवें से चाहत बानी,
गांव जानो साहित कवन होला चिरई ?

कविता की पंक्तियां सुनकर रामरूप फड़क उठा। किन्तु यह जानकर कि खोराजी बीमार हैं, उसे धक्का लगा। कहीं चल न बसें ? चलकर भेंट करना चाहिए। उसने तत्काल निश्चय किया, कल जाकर ज़रूर भेंट करूंगा। इधर उसे लग रहा था कि उसके और कवि के बीच में अलगाव की एक बहुत हलकी-सी दरार उभर आयी थी। क्यों ? रामरूप इस पर सोचता है तो उसे लगता है खोरा किसी षड्यन्त्र का शिकार होकर उसकी ओर से खींच लिया गया है। शायद वह किसी राजकाजी लूटपाट और चालू भ्रष्टाचार के निमित्त इस्तेमाल हो गया है। फिर भी रामरूप के भीतर उस निश्छल कवि के लिए दुर्भाव क्यों पैदा होगा ? अपवित्र लोगों की डुबकियों से क्या गंगा अपवित्र होंगी ?···रिसर्च इंस्टीच्यूट की डुबकियों मे अघा जाएं कुछ लोग। रामरूप, फिलहाल सबका साक्षी बन। देख, भ्रष्टाचार के सहस्रफण कैसे दिशा-दिशा के सम्पूर्ण परिवेश को अपने गुंजलक में लपेट निचोड़ रहे हैं। ज़रा ठीक से देख, इनके खिलाफ अन्ततः खड्गहस्त लुकाड़ जलाना ही पड़ेगा। गोष्ठी जैसी इन आरतियों से गहन अन्धेरा कटने का नहीं। अभिजात किस्म की ये भड़ैतियां जन-प्रतिनिधियों के साथ जनता के गांवों तक पहुंचीं। पर क्या किसी स्तर पर ये जनता को छू रही हैं ? इस कमरे में इकट्ठी यह कैसी जनता है ? इन्हीं गांववालों के लिए खोरा कहता है कि वे जानें साहित्य किस चिड़िये का नाम है ?

रामरूप ने इस अन्तस्थ विचार-प्रवाह के साथ एक बार कमरे में उपस्थित गोष्ठी वाले लोगों को ध्यान से देखा। बी० डी० ओ० शब्दों का भूसा उड़ाकर धुआंधार स्वागत भाषण कर रहा है। सभापति भुवनेश्वर अपनी प्रशस्ति से निर-पेक्ष दिखता हुआ प्रिंसिपल राममनोहर सिंह से खुसुर-फुसुर कुछ बातें कर रहा

है। प्रिंसिपल साहब बातों के बीच रह-रहकर अपने धराशायी पुत्र पर उड़ती नज़र फेंक लेते हैं। नवीन बाबू 'प्रकाश' के प्रतिनिधि पत्रकार क्रान्तिचरण को कमरे के एक कोने में ले जाकर धीमे-धीमे कुछ समझा रहे हैं। वास्तव में वे कई काम एक साथ कर रहे हैं। भाषण सुन रहे हैं, उसपर टिप्पणी कर रहे हैं, मुसकरा रहे हैं, पत्रकार को पटा रहे हैं और सिगरेट-पर-सिगरेट फूंकने की होड़ में पत्रकार से बाजी मार ले जाना चाह रहे हैं। इन्हीं लोगों के पास प्रिंसिपल-पुत्र दिलीप बेहोश हो मुर्दे-जैसा लेटा है। कहते हैं, वह अभी-अभी अफीम की भूसी में मेनडेक्स की गोली मिलाकर चिलम पर पी गया है। कहीं दूसरे कमरे में ले जाकर सुलाने के सवाल सर उसके साथी बिगड़ उठें। बोले, 'यह यहीं रहेगा। जगकर नहीं तो सोकर सुनेगा। इसके अनकांसस माइंड में साहित्य के अगणित पुर्जे हैं जो अचेत होने पर सक्रिय होते हैं।' इस प्रकार बनारसी की जांघ पर सिर रख वह अचेत पड़ा है जिससे बनारसी की पीठ सभापति की ओर हो गयी है। अच्छेलाल सुर्ती मल रहा है और विजय उस बनती सुर्ती की ओर देख-देखकर बी० डी० ओ० के भाषण पर जब-तब ताली बजाने की शुरुआत करता है। किन्तु इस करतल ध्वनि में निष्ठापूर्वक केवल आदर्श विद्यालय के दो प्राध्यापक जयप्रकाश और राममंगल मिश्र योगदान करते हैं। वास्तव में ये ही लोग गोष्ठी के पूर्ण प्रामाणिक श्रोता जैसे बैठे दृष्टिगोचर होते हैं। लगता है, ये लोग पूरी फुरसत में हैं। विद्यालय अनिश्चित काल के लिए बन्द है। छात्रों के दो दलों में मारपीट हो गयी है और गोली चल गयी है। कोई मरा नहीं है और न गम्भीर रूप से घायल है फिर भी आतंक तो है। यह आतंक तब और बढ़ जाता है जब लगता है गोली चलने के पीछे किसी अध्यापक का हाथ है। तनाव महीनों से चल रहा था। अब तनाव के आयामों की कोई सीमा भी नहीं रही। अब लगता नहीं, कॉलेज में फिर शैक्षणिक वातावरण बन सकेगा। नौकरी बोझ हो गयी। शिक्षा का सत्यानाश हो गया। प्रिंसिपल को मौज है। अध्यापक भी गोष्ठी संभालें, मगर किस कीमत पर? किस विषय के नशे में?

गोष्ठी के प्रारम्भ में आज के पूर्व निर्धारित विषय 'आधुनिक साहित्य की प्रासंगिकता' पर खोरा ने अपनी कविता में ऐसा जबरदस्त और सरल शिगूफा छोड़ा कि मुख्य जटिल विषय छूट गया और वही उछलकर सामने आ गया। 'गांव जाने कि साहित्य किस चिड़िये का नाम है', इस वाक्य को बीसों बार बी०डी०ओ० ने अपने स्वागत भाषण में नाना प्रकार के प्रसंगों में दुहराया। उसने कहा, यह एक ऐतिहासिक मौका है कि एक विधायक गांव में साहित्य को लेकर आया है। देखो यह क्या है? विषय प्रवर्त्तन के लिए वर्मा खड़ा हुआ तो वह भी खोरा के शब्दों को ले उड़ा। खोरा को मां भारती के विशाल आकाश का जाज्वल्यमान नक्षत्र बताते हुए वास्तव में वह विषय की प्रस्तावना की जगह उनकी कविता की व्याख्या में भटक गया। कवि के श्लेषालंकार पर लहालोट होते-होते उसने कहा,

जिस प्रकार उपले (गोंइठी) सुलगा देने पर उसके धुएं से मच्छर (मछरई) भाग जाते हैं उसी प्रकार इस साहित्य गोष्ठी (गोंइठी) के आयोजन से गावों में सौभाग्य का प्रकाश होगा और मत्सर जैसे मच्छर नहीं रह जाएंगे। साहित्य के प्रभाव से शान्ति आयेगी।

इसके बाद अपने प्रवर्त्तन में वर्मा ने बहुत प्रभावशाली ढंग से इस बात को विस्तारपूर्वक उपस्थित किया कि समाज की समूची दुर्गति का मूल कारण यह है कि वह राजनीति की गिरफ्त में आकर साहित्य से कट गया है। गांवों में अधपढ़ लोगों ने पोथी-रामायन को बिसार दिया और पढ़े-लिखे लोगों ने विद्यालय के साथ पुस्तकें छोड़ दीं। यह स्थिति बहुत भयावह है। गांव में साहित्य के प्रचार की स्थितियों और समस्याओं पर हमें गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर इस पुनीत कार्य में सरकार से भी सहायता लेनी चाहिए।

वर्मा के प्रवर्त्तन के अन्तिम अश से रामरूप को लगा, यह गोष्ठी निश्चित रूप से 'खोरा रिसर्च इंस्टीच्यूट' की प्रस्तावना है। मगर जिला अधिकारी तो चला गया? उसके साथ ही तहसीलदार आदि की पल्टन भी। विधायक उसकी फंसी गाड़ी ठेलवाकर आ गया।···खैर, कार्यवाही यहां-वहां और पेपर में सर्वत्र चली जाएगी और इंस्टीच्यूट के सन्दर्भ में अब विधायक की फंसी गाड़ी को डी० एम० की आवश्यकता पड़ी तो ठेलठाल कर निकाल देगा। जल्दी ही चलकर रामरूप भी देखेगा, बिल्डिंग कितनी ऊंचाई तक पहुंची।

वर्मा के प्रवर्त्तन के बाद अंग्रेजी के प्राध्यापक जयप्रकाशजी ने कहा, 'आप लोग किस साहित्य का प्रचार गांवों में करना चाहते हैं? पुराने साहित्य को नाना प्रकार की समस्याओं और बाहरी-भीतरी जीने के दबाओं से ऊभ-चूभ होकर गांव वालों ने खुद छोड़ दिया। नया साहित्य अन्धे के द्वारा बांटी जानेवाली रेवड़ी बना है। यह सामान्य लोगों के लिए लिखा जाने पर भी उनके पल्ले पड़ने का नहीं। समूचा आधुनिक लेखन सभ्य शहरियों की नयी सुविधाजीवी पीढ़ी के आक्रोश का या दिशाहीनता का दस्तावेज है। गांव के अर्थ में उसका कोई औचित्य नहीं। वह एकदम खोखला है। इसीलिए लिखा चाहे जितना जा रहा है, उससे कहीं कोई एक पत्ता भी नहीं खड़कता है। पुराने ज़माने में तो सुनते हैं कि साहित्य से क्रांति हो जाती रही है। अब कहां कुछ हो रहा है?'

'अंग्रेजी साहित्य जिन्दाबाद!' अचानक बहुत भद्दे ढंग से नवीन बाबू ने हल्ला किया, 'अब हिन्दी वाले महाशय इसका जवाब दें।' और साथ ही दिलीप तथा बनारसी ने हो-हो-हो-हो करते हुए थपरी पीटना शुरू किया। शान्ति कराने के लिए सभापति ने हाथ उठाया तो उंगलियों में फंसे जलते सिगरेट की राख पास बैठे वर्मा के सिर पर गिर गयी।

ऐसे सतही, हीनरुचि वाले और असाहित्यिक लोगों के बीच क्या बोला

जाय, रामरूप ने सोचा किन्तु उसे लगा, सब लोगों की निगाहें उसी पर जम गयी हैं। उसने कहा, 'जयप्रकाश बाबू का कहना सही है। किसी युग में साहित्य का इस्तेमाल असरदार हथियार के रूप में होता था, उससे क्रान्तियां होती थीं परन्तु आज के युग में इतने भयंकर-भयंकर हथियार बन गये हैं कि साहित्य का हथियार कुंठित हो गया है। साहित्यकारों की युवा पीढ़ी उफान लेती है लेकिन राजनीतिक प्रचार की आंधी और विस्फोट के आगे उनकी आवाज़ क्षीण हो जाती है। काश कि हमारे युवा साहित्यकारों के शब्दों में हथियारों जैसी चमक आ जाती! वे लोहा भांज रहे हैं, लेकिन गौं नहीं बैठ रहा है। उनमें आक्रोश है, जिसका आलम्बन हमारी अमूर्त्त समस्यायें हैं। उस आक्रोश से पुराने लोग चिन्तित हैं। उन्हें लगता है, उनका कुछ खिसक रहा है। अतः आक्रोश उनके भीतर भी है। मगर यह रुलाई से आगे नहीं बढ़ पाता। वे नयी पीढ़ी को दिशाहीन कहते हैं। क्या कोई साहित्यिक पीढ़ी दिशाहीन भी हो सकती है? कोई-न-कोई दिशा तो होगी ही। ऐसी स्थिति में बहुत कठिन है औचित्य का सवाल। अनौचित्य के बारे में हमारे यहां साहित्य में कभी सोचा जाता था और तब सोचा जाता था जब साहित्य का एक शास्त्र बना हुआ था। आज इस तरह का कोई शास्त्र नहीं। शास्त्र की मध्यस्थता टूट गयी। अब तो जीवन और साहित्य दोनों आमने-सामने हैं। जब कहीं कोई कसौटी नहीं तो औचित्य-अनौचित्य का प्रश्न ही कहां उठता है? मैं समझता हूं, लोकमंगल जैसी परम्परित नहीं तो सार्थकता जैसी किसी प्रगतिशील कसौटी को ही मान्यता मिलनी चाहिए।'

'सार्थकता की बात एकदम फालतू और दकियानूसी भरी है।' क्रान्तिचरण झटके से खड़ा होकर कहने लगा, 'अब कहां क्या है दुनिया में कहीं कुछ सार्थक? सब कुछ निरर्थक है। किसी चीज़ की कोई सार्थकता नहीं। आज के आदमी की पूरी ज़िन्दगी निरर्थक है, तब साहित्य में आप क्या खाकर सार्थकता खोजने चले हैं। आज की घटिया राजनीति, भ्रष्ट लोकतन्त्र और निकम्मे प्रशासन में जीते आदमी के चारों ओर जो कुछ दिखाई पड़ रहा है, यह चुनाव, लोकसभा, विधानसभा, विधायक, विकास, सभा, भाषण और ऐसी-ऐसी साहित्य-गोष्ठियां, सब निरर्थक हैं।'

'फारगिव मी फार इन्ट्राप्टिंग सर', सभापतिजी ने कहा, 'सब निरर्थक है, एब्सर्ड है, तो भी किसी-न-किसी एण्ड पर तो आप रुकेंगे? तमाम-तमाम अर्थ-हीनताओं के बीच से किसी को तो कुछ यूजफुल समझ आप चूज़ करेंगे? तो वह क्या चीज है? आप फरमाएंगे?'

'ह्वाई नाट? मगर आप सरकारी आदमी सुनेंगे? साहस है? कम्युनिस्ट कन्ट्रीज की बात छोड़िये। अमरीका के बीटनिक कवियों के बाद 'ग्रेजेनरेशन' का प्रमुख चिन्तक डैन जार्जकस कहता है, 'वी सीक क्रियेटिव वैंडेटिज़्म' अब हम

लोगों को कुछ रचनात्मक गुंडई करनी चाहिए। यदि शान्ति के नाम पर राजनैतिक नेता हत्या कर सकते हैं तो हम लोग भी क्यों नहीं अपनी बन्दूकों में रंग भर डालें ? षड्यन्त्र और तोड़-फोड़ का युग है। हम लोग भी प्रचलित शब्दों को तोड़ डालें। अतीत के तर्कों को नष्ट कर डालें और···।'

'ओह, क्रान्तिचरणजी', सभापति विधायकजी अब सामने खड़े क्रान्तिचरण की तरह खड़े हो गये। बोले, 'आप कम-से-कम बीस-पचीस वर्ष ओल्ड और अब लगभग डेड ग्रेजेनरेशन की बात कर रहे हैं। डोंट यू टेक इट इल। रचनात्मक गुंडई का मूवमेंट फेल हो गया है।'

'मगर आप लोग तो यहां हम गंवारों के बीच घंटे-भर से वही अंग्रेजी गुंडई का काम कर रहे हैं। क्या इसी तरह गांवों में साहित्य का प्रकाश होगा ?' नवीन बाबू ने खड़े होकर कहा। रामरूप आश्चर्य-चकित होकर उनका मुंह देखने लगा। इसकी ज़बान पर तो एकदम जैसे लगाम ही नहीं। जिसके आगे अभी कल तक दुम हिलाता था उसके आगे ऐसी भद्दगी क्या इसकी किसी पैदायशी मूर्खता को व्यक्त करती है ? किन्तु स्थिति तो टिप्पणी लायक हो ही गयी थी।

'आये थे हरिभजन को ओटन लगे कपास' राममंगल मिश्र ने बैठे-बैठे टिप्पणी की।

'इससे अच्छा तो हुआ होता कि लोग किसी बिरहा गाने वाले को बुलाये ते।' एक गांव के आदमी ने कहा। उसके हाथ में एक कागज का टुकड़ा था। शायद कोई प्रार्थना-पत्र था और जिसे विधायकजी को देने के लिए लाया था और यहां फंस गया। वास्तव में गोष्ठी में दस-बारह आदमियों को छोड़कर ऐसे फंसे हुए लोगों की संख्या ही अधिक थी। ये लोग कुढ़ रहे थे, भीतर-ही-भीतर कसमसा रहे थे मगर लाचार थे। बाहर पानी अभी भी बन्द नहीं हुआ था।

विधायक मगन ने फिर उठकर कुछ कहना चाहा पर वर्मा ने उसे रोक दिया और उठकर गोष्ठी के सभापति की हैसियत से उससे अपने विचार व्यक्त करने के लिए औपचारिक निवेदन वह करने ही जा रहा था कि एक घटना घट गयी। अचानक तीनों ओर के बरामदों को नाना प्रकार के नारों से गुंजित करते सैंकड़ों लाल झंडे वाले लोग उपट आये और उनमें से एक ने बहुत फुर्ती से गोष्ठी-कक्ष के फाटक को बन्दकर बाहर से ताला लगा दिया। इसके बाद वे लोग अपने भींगे कपड़ों और डंडों में लगे सूखे झंडों के साथ तीनों ओर की खुली खिड़कियों पर कुछ इस प्रकार चिल्लाते हुए छा गये—

इनकलाब ज़िन्दाबाद !
जिला क्यों इतना शोषित हो,
सूखा-ग्रस्त घोषित हो !
खोरा के नाम पर लूट पाट,

बन्द करो, बन्द करो !
सभा और गोष्ठी की गुंडई,
बन्द करो, बन्द करो !

'यह क्या बत्तमीजी है।' कहते हुए विधायकजी झपटकर तमतमाये हुए उस खिड़की पर आ गये जिसके लोहे के छड़ों के पीछे सुखुआ और सिटहला खड़े थे और बोले, 'तुम लोग होश में हो या नहीं ? और जानते हो यह क्या कर रहे हो ?'

'हां सरकार, हम लोगों ने आपका घेराव किया है। अब आप हमारी कैद में हैं। होश में खुद आइये और भूंकिये मत। ये हमारी मांगें हैं। जब तक पूरी नहीं हो जातीं, घेरा नहीं उठेगा।' कहते हुए सुखुआ ने छड़ों की फांक से एक कागज एम० एल० ए० साहब के हाथों में थमा दिया।

'मुझे घेराव से धमका रहे हो ?' मगन ने अब मुसकरा कर कहा, 'ऐसे-ऐसे घेराव हमने खुद न जाने कितने-कितने अरेंज किये हैं। मुझे तो खुशी है कि तुम लोगों ने मुझे इस कटेगरी का आदमी समझा। मगर सवाल है कि गुनहगार मैं हूं। यहां बैठी पूवर पब्लिक क्यों मारी जाय ?'

'पब्लिक आप पर दबाव डाले कि हम लोगों की मांगें झटपट मान ली जायं। बिना इसके ताला नहीं खुलेगा।' सिटहला बोला।

'खोलो, मान लिया।'

'बिना पढ़े ही ? जरा उसे खुद पढ़िये। फिर अपने सेक्रेटरी वर्मा साहब को दीजिए कि वे पढ़कर सबको सुनायें।'

विधायक ने कागज खोलकर देखा। जिले को सूखाग्रस्त घोषित करना, लगान माफी, सस्ते गल्ले की चोर बाजारी, तस्करी वगैरह-वगैरह…और अन्त में यह क्या ?

'खोरा रिसर्च इंस्टीच्यूट को आप लोग क्यों इस प्रकार डर्टी पालिटिक्स में घसीट रहे हैं ? ग्रांट रिलीज कहां हुई कि उस पर हिसाब का कोश्चन उठा ?' कहते हुए विधायकजी ने रामरूप की ओर देखा।

रामरूप के भीतर धक्-से हो गया। लगा सम्भवतः एक ओर जबरदस्त कलंक ! ससुरजी इस काण्ड के विवरण को सुनकर पता नहीं कितने अर्थ लगायेंगे। जा रामरूप, परम निरर्थक हुआ यहां आना। अब सार्थकता को क्या सुखुआ-सिटहला में खोजें ?

६२

जिउतिया के तीसरे दिन गहने-कपड़े आदि के अतिरिक्त दूध देने वाली बढ़िया गाय के दहेज के साथ सायंकाल किसी तरह पानी से बचते रामकली अपनी

दो महीने की बच्ची को लिये गठिया से घर आयी। सावन बीत गया तथा आधा भादों भी निकल गया और रामकली नहीं आयी थी तो मां बहुत घबरा रही थी। अब क्या कुसाइति में आयेगी? भादों में भला लड़की आती-जाती हैं? रामरूप मां को समझाता, 'वह महाशक्तिशाली बाबू हनुमानप्रसाद की बेटी है, उसे भादों नहीं लगेगा।' फिर व्यंग्य करता, 'देखना कितना-कितना लेकर आती है।' किन्तु सचमुच ही अकल्पित सम्पदा के रूप में गाय आ गयी तो सबका मुंह बन्द हो गया। भूल गया भादों। गाय को बतीसा पहुंचा गया। पहुंचा क्या गया, वह आगे-आगे बछड़े को लियें चलता आया और पीछे-पीछे थलबल-थलबल थन वाली छुट्टा गाय खुद बां-बां करती दौड़ती चली आयी। द्वार पर खड़ी हुई तो मांजी ने अनाज ओइंछ कर उस लक्ष्मी की पूजा की। खूंटे पर बांधी गयी तो चारों ओर अंजोर हो गया। देखने वाले जुटे। दाम का अनुमान शुरू हुआ। कोई ढाई हज़ार कहता तो कोई तीन हज़ार। गांव में ऐसी गाय किसी के पास नहीं। रामरूप के भीतर गर्व की एक हलकी सिहरन उठी किन्तु वह तत्क्षण दब गयी। साले के विवाह के इस कीमती दहेज में प्रेम है या कृपा? या कूटनीतिक चोट? अगम है, अबूझ है ससुरजी का चरित्र। उनका न तो प्रेम समझ में आता है और न ही उनकी घृणा। रामरूप सांस रोककर प्रतीक्षा कर रहा था कि अब कोई आफत आयी, अब मानसिक यन्त्रणा का कोई नया गुल खिला और अब कोई ब्लाक पर घटी घटना की प्रतिक्रिया में कड़वाहट की लहर फैली। किन्तु ऐसा कुछ न होकर सद्भाव के चमचमाते सर्टिफिकेट की भांति गाय द्वार पर खड़ी हो गयी तो वह चकित हो गया।

कहीं ऐसा तो नहीं कि इस दहेज के मूल में उसकी सास मलिकाइन दुलहिनजी हैं। सम्भव है खेत की रजिस्ट्री की भांति अड़ गयी हों, गाय जायेगी ही। तब क्या चारा था? रजिस्ट्री तो दूर कचहरी में होनी है, उसके लाखों बहाने-व्यवधान हैं, यहां द्वार पर की गाय तो कितनी आसान है, ले जा रे बतिसवा खोलकर पहुंचा आ। ओह, काश कि कुछ ऐसा ही आदेश रजिस्ट्री पर घट जाता। मगर, अब क्या घटेगा? रामरूप के अन्तर्मन से भी उसकी चाह निकल गयी है। दो बार निर्धारित तिथियों पर जाने और भिन्न-भिन्न बहानों से टकराकर फिंक आने के बाद अब तीसरी-चौथी बार रामरूप नहीं जायेगा। कहां गया पिछली बार? कभी भेंट होने पर पूछेंगे ससुरजी तो कह देगा, आपका और हमारा क्या बंटा हुआ है? जब आपका है तो उसे मैं अपना ही समझ रहा हूं। क्या होगा रजिस्ट्री होकर? और कभी सासजी ने पूछा तो कह देगा, हां रजिस्ट्री हो गयी। खेत मिल गया। बहुत नेह-छोह है बाबूजी का। मामला खतम। और खतम नहीं तो फिर क्या होने-जाने का है? करइल ससुर की जाति का ज़मीन-जिन्न जैसा आदमी भला जान रहते ज़मीन देगा? तिस पर भी इस नयी कलंक-कथा की कड़ी जुड़ने के बाद?

बेशक, उस बात को बाबू हनुमानप्रसाद के समझदार गणों ने नाना प्रकार से नमक-मिर्च लगाकर उनके कानों तक पहुंचा दिया होगा और उनके सोच-विचार का नया द्वार खुल गया होगा। मन में क्षोभ की तरंगें उठती होंगी। सुखुआ-सिटहला खोरा के नाम पर लूटपाट का नारा आखिर क्यों लगाते हैं? खोरा रिसर्च इंस्टीच्यूट का हिसाब-किताब मांगने का मन्त्र किसने दिया? खोरा ठहरा रामरूप का दोस्त और सुखुआ-सिटहला उसके चेले! बात बैठ रही होगी न? फिर सबसे बड़ा सबूत तो यह कि जनाब बिना बुलाए गोष्ठी में हाजिर। कहते हैं, तहसीलदार पकड़ ले गया। पकड़ क्या ले गया, जा बच्चू बच गए, साले एम० एल० ए० का नाम बेचकर, ससुर बाबू हनुमानप्रसाद के नाम की दुहाई देकर, नहीं तो जेल की रोटियां तोड़नी पड़ी होतीं। मुजाहमत करना खेलवाड़ नहीं है। फिर जिसके नाम की आड़ लेकर बच गए, उसी की जड़ खोदने पर तुल गए। इसी को कहते हैं, जिस पत्तल में खाना, उसी में छेद करना। वह डकैती होते-होते बची और यह नाम-यश की डकैती नये सिरे से शुरू हुई। चोर, डाकू, अपराधी और नक्सलियों जैसों का सग-साथ अभी क्या-क्या रंग नहीं लायेगा? कैसा पवित्र कर्म है पढ़ाने-लिखाने का और कैसा अधम कर्म है छिपे-छिपे घात करने का! पढ़े फारसी बेचे तेल, देख भाई कुदरत का खेल।

हां, यह कुदरत का खेल ही है कि हनुमानप्रसाद को कोइली की खबर मिल गयी। अब बन की गीदड़ी जाएगी कहां? बेईमानों को सब मालूम था। मगर पहले न तो रामरूप ने बताया और न सुग्रीव ने। यह तो खोराजी का ज्योतिष भिड़ गया नहीं तो जीवन की यह अहक बनी ही रह जाती। आगे कितनी रहस्यमय है वह कोइली-कथा। अब सुग्रीव के मुंह से भी सुनकर विश्वास नहीं होता है। जा सुग्रीव, मतलब की बात है, हनुमानप्रसाद तुझे सह रहा है, नहीं तो तुम्हारे जैसे पिस्सुओं को तो वह पीसकर खतम कर देता है। बचा यह दूसरा कोइली का प्रेमी, तो···बाबू हनुमानप्रसाद ऐसा सोचते-सोचते एक बार ज़ोर से हुंकड़कर खोंख देंगे।

ऐसा लगा कि अपने ससुरजी की वह ख्यालों वाली खोंखी सुनकर रामरूप चौंक उठा, पर बात कुछ और थी। गाय को मच्छर लग रहे थे और इसीलिए वह एक बार खूंटे पर छटपटाकर उछड़ गयी थी। खूंटा ओसारी में गाड़ा गया था। एक खांची भूसे की डांटी रखकर मच्छरों से बचाने के लिए धुआं किया गया था। और कोई कहां जगह है गाय बांधने की? अचानक गाय आ गयी तो यह विकट समस्या सामने आ गयी। मवेशी बांधने वाले घर में पहले से ही मौजूद दो बैल, एक ठांट गाय और उसका बाछा किसी-किसी प्रकार अंटते हैं। पानी नहीं बरसता तो सबको बाहर ही बांधा जाता। मगर यह पानी है कि बस बरसता जाता है। कल १३ दिसम्बर को उत्तरा नक्षत्र का पहरा हो गया। लोगों ने कहा, वर्षा अब

उत्तरायण हो गयी। यह शरद ऋतु के आरम्भ का पहला नक्षत्र है। कहते हैं, 'उतरा में चबूतरा बांधो।' किन्तु कहां चबूतरा बंधता है? कहां वर्षा उत्तरायण हो रही है? कहां शरद का निरभ्र नभ उभरता है? रात-दिन पानी नधा है। सूखे के बाद की इस धुआंधार पनियारी ने नाकों दम कर दिया। एक पखवारे में ही ताल-खाल पानी से भर गए। बाढ़ आ गयी। उधर गंगा का दबाव निरन्तर बढ़ रहा है। रेडियो बराबर बोलता है, पानी खतरे का बिन्दु पार कर गया। बरखा के दुर्दिन के मारे घर से निकलना कठिन है और अब बाढ़ के मारे गांव से निकलना असम्भव हो जायगा क्या? बीमार कवि खोरा के यहां जाने में भी तो यह रोज-रोज की पनियारी भरी बाढ़ बाधक बनी है। अब कहीं और भीषण बाढ़ ने चांप दिया तो कैसे पहुंचा जा सकेगा? ओह, खोरा तू कैसे है?

रात-भर रामरूप को नींद नहीं आयी। नींद आती तो कैसे? खम्हिया वाली ओसारी में गाय बांधी गयी तो समस्या उसके बछड़े को बांधने की भी सामने आयी। पास-पास एक जगह बांधे नहीं जा सकते। बछड़ा सारा दूध पी डालेगा। ओसारी इतनी बड़ी है नहीं कि दूर-दूर बांधे जायं। फिर उसी में एक ओर रामरूप की भी चारपाई है। मजबूर होकर बछड़े को वर्मा वाली कोठरी में धुआं करके बांधना पड़ा। एक तो नयी जगह, दूसरे गाय-बछड़े इतनी दूर हो गए कि वे एक-दूसरे को देख नहीं पा रहे थे, परिणाम यह हुआ कि खटर-पटर के साथ रात-भर दोनों बायं-बायं करते रहे। नींद आती तो कैसे? फिर इस प्रकार दोनों ओर के धुआंधुकुन के बीच सोने की आदत नहीं थी। मच्छरदानी धुआं रोकने में असमर्थ थी।

बाहर सघन काली अन्धेरी रात की हाय-हाय हू-हू के साथ पानी की बौछारों का उपद्रव जारी था और भीतर नवागन्तुक पशुधन की बायं-बायं वाली वत्सल-मार के बीच जब धरहर करने वाली बीड़ी खतम हो गयी तो रामरूप चारपाई पर उठ बैठा। अन्धेरे में बाहर कुछ देखने की कोशिश की। कुछ दिखायी नहीं पड़ा तो बहुत विचित्र लगा। अरे, अन्धेरा इतना सघन सुन्दर होता है? काश, मनुष्य के भीतर भी ऐसा ही अन्धेरा होता! लेकिन वहां तो माया का ऐसा प्रकाश है कि रात-दिन और सोते-जगते सर्वदा जैसे सिनेमा की रील खरखर-खरखर चल रही है।

अन्धेरे में बैठे-बैठे रामरूप के सामने चित्र उभरता है पिछले दिन के घेराव का। उसे आश्चर्य हो रहा था कि दरवाजा छोड़कर बहुत कम हिलने-डुलते वाले रामपुर के काली बाबू भी इस डी० एम० वाली मीटिंग में दिखायी पड़ रहे थे। विधायकजी और नवीन के बहुत आग्रह करने पर वे गोष्ठी में भी रुक गये। पास ही बैठे भी। गोष्ठी शुरू हुई तो उन्हें ध्यानमग्न जैसी स्थिति में बैठे देखा परन्तु कुछ देर बाद रामरूप की निगाह इधर गयी तो देखा कि जगह खाली है। वे कब

चले गये, पता नहीं चला। एक अफवाह धीमे-धीमे यह उड़ती हुई सुनायी पड़ती है कि वे अपराधियों, डकैतों, चारों ओर वामपंथी आन्दोलनकारियों को संरक्षण देते हैं। शायद उनकी मंशा यह होती है कि ऐसा कर वे वैसे लोगों के भय से मुक्त रहेंगे और नन्हे से टोले में अपार धन लिये गढ़ी जैसे आवास में सुख की नींद सो सकेंगे। किन्तु रामरूप को इन बातों पर विश्वास नहीं होता है। हां, उस गोष्ठी से घेराव के ठीक कुछ पहले उनका लुप्त हो जाना उसे ज़रूर चकितकारी लगा। दूसरे उसे इस बात पर आश्चर्य हो रहा था कि इन्दिरा कांग्रेस का विधायक घिर-कर अकेले लड़ रहा है, युवक कांग्रेस वाले उसी के चमचे-चेले बैठे तमाशा देख रहे हैं। दिलीप का नशा लगता है उतर गया है पर वह पूर्ववत् बनारसी की जांघ पर सिर रखे सोया है। बनारसी एकदम चुप है। सुना है विद्या को लखनऊ सचिवालय में कोई टेलीफोन ड्यूटी वाली सर्विस मिल गयी है और तभी से बनारसी और मगन विधायक की बोलचाल बन्द है। जूनियर छात्र नेता विजय का प्रोमोशन तो हो गया है पर आज इस घेराव की स्थिति ने उसे एकदम ठण्डा कर दिया है। शायद कोयले की एजेंसी, बावजूद बहुत दौड़धूप के नहीं हाथ लगने की प्रतिक्रिया भी है। विधायक चाहता तो भला इतना छोटा काम नहीं हो जाता? उसकी दृष्टि बराबर अच्छेलाल की हथेली पर मली जाती सुर्ती पर लगी होती है। अच्छेलाल जब-तब सुर्ती मलना बन्द कर खिड़की के पार खड़े सुखुआ-सिटहला की ओर देख कर बोलता है, 'अरे अब जाओ, जाओ। बहुत हो गया।' शेष बैठे लोगों में कोई कुछ नहीं बोल रहा है। लगता है, लोग कोई तमाशा देख रहे हैं। वर्मा आरम्भ में कुछ गरजता-तरजता है पर सुखुआ की एक कड़ी और भद्दी डांट—'तू विधायक का कुत्ता क्या भूंकता है, चुप रह'—सुन जैसे एकदम बुझ जाता है और वास्तव में बुझ तो कुछ ही देर बाद स्वयं मगन विधायक भी जाता है। शान्त स्वर में कायदे-कानून की बात करने लगता है। आज से पहले उसे कभी इतने दयनीय रूप में रामरूप ने नहीं देखा था और न ही ऐसी कल्पना कर सकता था। दिन का उजाला समाप्त होने और कक्ष में रात का अन्धेरा घिर आने पर तो स्थिति और भद्दी हो जाती है। अब सिर्फ आवाज़ें सुनायी पड़ती हैं। अन्त में उन आवाज़ों में से एक आवाज़ सुनायी पड़ती है नवीन बाबू की, खड़े होकर बोल रहे हैं, 'अच्छा कामरेड सुक्खू जी, मेरे कहने से आप लोग घेराव उठा लें। मैं जिम्मा लेता हूं कि आप लोगों की सारी मांगें पूरी हो जायेंगी।'

'आप जिम्मा लेते हैं?' सुखुआ अट्टहास करता है और बाहर ताली बजा-कर हो-हो-हो-हो कर हल्ला होता है। हल्ले के बीच फिर सुनाई पड़ता है, 'मांगें क्या जिम्मे से पूरी होती हैं? खैर, यह घेराव आपके अनुरोध पर उठा लिया जाता है लेकिन उन मांगों के लिए तो शायद कुछ और उठाना पड़े।'

बैठे-बैठे रामरूप को झपकी आने लगी तो वह ढरक गया और नींद आ गयी।

किन्तु समय कहां था सोने का ? थोड़ी ही देर में भगेलुआ बैलों को नाद पर लगाने के बाद गाय-बाछा को ले जाने के लिए ओसारी में आया तो आहट से उसकी नींद खुल गयी। देखा, सुबह का उजाला फैल गया है। पानी बन्द हो गया है। बेहद आलस की अनुभूति के साथ उसे याद आया, अनिश्चितकालीन बन्दी के बाद आज विद्यालय खुलने की सूचना है और इस याद के साथ आलस अब कहां रह गया ?

विद्यालय पहुंचकर रामरूप को अजीब सुनसान का अनुभव हुआ। कोई भीषण तूफान बाहर से नहीं घहराया था पर लगा, भीतर से विद्यालय एकदम उजड़ गया। वही इमारत, वही मैदान, वे ही बालक और वे ही अध्यापक थे, पर वह क्या था जो गोली-काण्ड और अनिश्चितकालीन बन्दी के बाद नहीं रह गया था ? उसने मन-ही-मन सोचा, सब कुछ खत्म हो गया। एक दिन आकर अध्यापकीय आदर्शों के प्रति निष्ठावान होने का भाव चला गया, एक दिन आकर जीवन के उदात्त मूल्यों के प्रति समर्पित होकर जीने का भाव चला गया, एक दिन आकर त्यौहारी उल्लास के सांस्कृतिक रोमांच को जीने का संकल्प चला गया और एक दिन आकर सीरी भाई के 'देखते चलो' के दर्शन की मस्ती चली गयी। फिर क्या रह गया ? नितान्त घेरे में बन्द घरेलू जीवन, उद्देश्यहीन, ठण्डा और यन्त्रवत् संवेदना शून्य। सुबह स्कूल की ओर दौड़ो तो वहां बजते हुए घंटे, इधर-उधर कक्षाओं में आते-जाते हुए अध्यापक, पढ़ते हुए या घूमते हुए विद्यार्थी, सब कुछ वही यन्त्रवत्, जीवनहीन, बिखरा-बिखरा, खोखला···क्या है भविष्य इस पढ़ाई-लिखाई का ? अध्यापक पढ़ाने से भाग रहा है, विद्यार्थी पढ़ने से भाग रहा है तथा वह कुछ और ही पढ़ रहा है और विद्यालय जैसे मुर्दे की तरह उजाड़ पड़ा है। व्यवस्था की चीलों के साथ अराजकता के गिद्ध लगातार मंडरा रहे हैं। अब रामरूप को क्या विद्यादान की जगह कोई श्मशान-साधना करनी पड़ेगी ?

मध्यावकाश में एक पीरियड की छुट्टी मिलाकर प्रिंसिपल साहब के कमरे में मीटिंग हुई। मीटिंग में कोई खास बात नहीं हुई, वही अनुशासन बनाये रखने की बात, गुंडों पर नज़र रखने की बात, अपनी ड्यूटी के प्रति सजग रहने की बात और विद्यालय की प्रतिष्ठा बचाने की बात आदि। खास बात यह हुई कि वर्मा आज तीन-चार महीने बाद रामरूप के पास बैठा और उसने हंस-हंसकर बातें कीं। रामरूप को बराबर लग रहा था, वर्मा बेहद कोशिश कर रहा है कि ऊपर से सही, पुराना वर्मा लौट आये परन्तु पिछले कुछ महीनों से उसका चेहरा नये तनावों से इतना घिस गया है कि पुराना रंग उस पर से बराबर फिसल-फिसल जाता है।

चाय पीते-पीते वर्मा ने वह कागज का टुकड़ा उठा लिया जिसमें बांधकर दुकान से नमकीन आया था। वास्तव में वह किसी छात्र की उत्तर-पुस्तिका का एक पृष्ठ था। उसे पूरा पढ़कर वर्मा का चेहरा खिल उठा। चाय खत्म करने के साथ टेबुल पर हाथ पीटकर उसने एक बार रामरूप की ओर देखा और फिर कागज

को हाथ में लेकर उड़ाते हुए कहा, 'सज्जनो, इस दुखमय संसार में जो सुख के थोड़ से क्षण हैं उन्हीं में से एक क्षण आज इस टेबुल पर पड़ा है। आप लोग इसका उपयोग करें और सुनें। सुमित्रानन्दन पंत की प्रसिद्ध कविता 'प्रथम रश्मि' की व्याख्या एक मेधावी स्नातक छात्र हिपिक्कड़ी हिन्दी में प्रस्तुत कर रहा है। पूरा सुनकर आप चाहें तो ठहाका लगा सकते हैं। शायद हिन्दी भाषा में अब कोई कास्मिक पावर आने लगा है। ऐसी सशक्त भाषा भांजकर छात्र जो संवादी भाषा की कुंडली गढ़ रहा है उससे भाषाई क्रान्ति के नये दौर का आभास मिल रहा है। तो, आप जायज़ा लें।'

वर्मा ने कागज हाथ में लेकर धीरे-धीरे पढ़ना शुरू किया—

'प्रथम रश्मि (नश्तब्धता) के समाप्त होने पर सुबह की प्रथम रेखा (थोड़ा-थोड़ा लालिमा) परतन्त्र देश में थोड़ा समय मिला। स्वतन्त्रता की रेखा। हे चेतने भारत वर्ष जिस समय की परतन्त्रता में थोड़ी-सी रेखा गढ़ी थी स्वतन्त्रता के लिए तूने कैसे जान लिया। परतन्त्रता की वेणी। अब सुबह का बाल पंछी गाना। सुबह का पंछी महात्मा गान्धी। स्वप्न के गम्भीर वातावरण में...।'

कागज को टेबुल पर पटक कर वर्मा ने ज़ोर से ठहाका लगाया पर रामरूप को लगा, बम मामूली पटाखे की तरह फ़िस करके रह गया। कुछ मामूली चालू टिप्पणी के साथ सब लोग खड़बड़ हो सरकने लगे। कुछ लोगों को जल्दी है भी क्योंकि बाढ़-सुरक्षा में आयी सरकारी नावों से वे अपने गांव जाएगे। यदि पानी कुछ और बढ़ेगा और विद्यालय के पास आ धमकेगा तब जाकर कहीं बाढ़ के लिए विद्यालय बन्द होगा। अभी तो आज एक बन्दी के बाद पहली बार खुला है। रामरूप ने भी कुर्सी छोड़ दी तो वर्मा भी खड़ा हो गया। उसने रामरूप का हाथ अपने हाथों में लेकर कहा, 'अरे यार, तुम्हारे यहां तो मैं जाता ही रह गया। जीवन पता नहीं किस प्रपंच में फंस गया हे।...सुना है, कल या आज तुम्हारे गांव से झिरिहिरी का कोई नौका-जुलूस निकलेगा? सोचता हूं, तुम्हारे यहां से यह निकले तो सम्मिलित होकर देख लूं और इसी क्रम में मांजी आदि के दर्शन भी हो जायेंगे।'

'बहुत मेहरबानी होगी। पता करके कल बताऊंगा।' रामरूप ने कहा। उसे लगा, वर्मा से यह कोई और रामरूप बोल रहा है। अरे हां, वह रामरूप अब कहां से लौटे? फिर वर्मा भी कहां रहा? घेराव वाली घटना के बाद तो जैसे एकदम उतर गया। रामरूप अब अपने ऊपर, अपने मित्र क ऊपर और बदली स्थिति के ऊपर सिर्फ करुणा-भाव की भूमिका में अफसोस भर कर सकता है और कुछ नहीं। सचमुच, सब कुछ खत्म हो गया।

रामरूप बाहर निकला तो देखता है कि बड़ारपुर के बीरबहादुर राय उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। पास आने पर बिना किसी भूमिका के चुपचाप एक लिफाफा

उन्होंने रामरूप की ओर बढ़ा दिया। किसका पत्र है ? रामरूप की जिज्ञासा स्वाभाविक थी। बहुत गम्भीर भाव से बीरबहादुर ने कहा, 'तुम्हारी प्रेमिका का।' और मुस्कराकर नमस्ते करते हुए अपना रास्ता लिया।

अच्छा लगा और खिल गया रामरूप। वर्मा से हुई बात के कारण धुंधुआये-कड़वाये मन का मौसम अचानक बदल गया। किन्तु तत्क्षण, वहीं खड़े-खड़ा एक सांस में चिट्ठी पढ़ने के बाद रामरूप कांप गया फिर सन्न होकर और अधिक कड़वाहट में डूब गया। उसे अफसोस हुआ, बीरबहादुर को रोककर और कुछ क्यों नहीं पूछ लिया। अब तो वह कहां चला गया ? शायद उसे कोई जल्दी थी।

पत्र संक्षिप्त था। कोइली ने लिखा था, 'मास्टरजी को मालूम कि साड़ी-चूड़ी और मिठाई वगैरह की सौगात का लासा लगाकर हमारे एक प्रेमी करइलजी चिरई को फंसाना चाहते थे। कई-कई बार, कई-कई तरह का संदेश लेकर आदमी आया-गया मगर वह नहीं फंसी तो हमारे बुढ़ऊ पतीजी को फांस दिया। एक दिन घर में एक किलो गांजा फेंककर उसके साथ उन्हें पुलिस पकड़ ले गयी। अब ज़मानत मैं करा लूंगी। मुकदमा मैं लड़ लूंगी। आप सिर्फ मेरा एक काम कर दें। कोई खोराजी नाम के मशहूर तान्त्रिक हैं। उन्होंने ही मेरे बारे में बाबू साहब को बताया है। सुना है खोराजी मेरी मति फेरने के लिए जाप कर रहे हैं। तो, आप उनको नेवारिये। काहे को एक गरीब औरत का धर्म बिगाड़ेंगे ? मुझे करइल महाराज से तनिक डर नहीं है। उनकी ताकत मैं जानती हूं। मुझे डर इस खोरा से है। पता नहीं कहां का कौन साधू है कि एक कामी कुत्ते का पायक बना है। तो मास्टरजी, यह मेरी विनती है। आपका बहुत भरोसा है। अपनी इस करमजली को जैसे आपने उस बिपति से उबार दिया उसी तरह इस आफत से भी बचा दीजिए। आप हमारे लिए ईश्वर तुल्य हैं। एक बार दर्शन हुआ, तब से रात-दिन नाम जपती रहती हूं। मैं आप को कैसे बुलाऊं, यह समझ में नहीं आ रहा है लेकिन यदि कभी दर्शन देंगे तो मेरी ज़िन्दगी सफल हो जायेगी। अधिक क्या लिखूं ? आपकी वही कोइली।

'हौं ही सब अनरथ कर हेतू' दुबारा पत्र पढ़कर बेतहाशा रामरूप के मुंह से निकला और वह रास्ता चलते ठोकर खाकर गिरते-गिरते बचा भी तो पैर बगल में जमे कीचड़ में धंस गये। ओह, आज से पहले विद्यालय से घर जाते समय रास्ते में उसे इतना कष्ट कभी नहीं हुआ था। बरसात का मारा रास्ता साक्षात् नरक-कुंड बन गया है, सारा गांव बजबजा रहा है।...और बजबजा रहा है रामरूप का मन। हाय कोइली, तुम इतने संटक के साथ कितनी गलतफहमियों में हो ? तुमको बाबू हनुमानप्रसाद से ही डरना है, खोरा से नहीं। खोरा को सिर्फ मैं ही जानता हूं कि वह क्या है। इधर उसमें थोड़ा बदलाव आया है परन्तु उसके सन्दर्भों को भी मैं ही जानता हूं। एक छोटे क्षण की बड़ी भारी वह भूल मेरी ही है। भूल

क्या, वह एक पाप हो गया कि तुम्हारा पता खोल दिया। प्रायश्चित्त मैं करूंगा। अब तुम्हारा पत्र पाने के बाद बाढ़ मुझे खोरा के यहां जाने से नहीं रोक सकती है। मैं कल जैसे भी होगा, जाऊंगा, कोई जाप रोकवाने के लिए नहीं, ज़ालिम चेले का कान ऐंठवाने के लिए। बस, तुम यह मनाओ कि खोरा ज़िंदा हो। बेचारा बीमार था। अफसोस, मैं अब तक नहीं पहुंचा। बुरा हो इस सरकार का जो एक युग से गांवों को ऊंचा कर रही है, गांव-गांव में सड़क बना रही है। ओह, यह घिरे होने की पीड़ा क्या वे दिल्ली वाले जानेंगे ?···वे जानें चाहे न जानें, कोइली तुम जानो, रामरूप अब घिरा नहीं रहेगा। बहुत हो गया। अब वह घेरा तोड़ेगा।

६३

झिरिहिरी का नौका-जलूस आगे बढ़ा। 'दुलहा' वाली बाढ़-सहायतार्थ मिली बड़ी सरकारी नाव सबसे आगे कर दी गयी। इस पर चार पेट्रोमेक्स जल रहे थे। उनके प्रकाश में साफा बांध समधी बने वृद्ध बिलास बाबा का चेहरा किसी ओर से छिपता नहीं था। बहुत आकर्षक था वह दृश्य।

महुवारी गांव में झिरिहिरी का शौक तो खूब है और बाढ़ आने पर प्रायः इसके आयोजन भी होते रहते हैं परन्तु रामरूप कभी नहीं जाता। इधर कुछ साल से गांव की हालत खराब हुई है तो झिरिहिरी का उल्लास भी ठंडा पड़ता दिखायी देने लगा है। ऐसा लगता है कि यह रिवाज ही टूट जायगा। लोगों के भीतर उत्साह उमंग का अभाव हो गया तो और क्या होगा ? ऐसी स्थिति में इस वर्ष यह आयोजन हो गया तो लोग जैसे सोते-सोते जग गये। चलो, लूटो मज़ा। बहुत पहले रामरूप भी झिरिहिरी का आनन्द लिया करता था परन्तु अध्यापक हो जाने के बाद उसे लाज लगती है, लोग क्या कहेंगे ? मन को दबा देता है। परन्तु इस साल के आयोजन से, जब एक ज़बरदस्त प्रयोजन सधता नज़र आने लगा तो मन ऊंचा हो गया। झिरिहिरी का जलूस रात में रामपुर तक जायेगा। रामरूप वापस न होकर वहीं रुक जायेगा। सुबह वहां से नित्य एक नाव डाक ले जाने और ले आने के लिए कोरंटाडीह जाती है। रामरूप उसी नाव से जाकर सड़क पकड़ खोराबाग तक पहुंच जायेगा। एक छोटी समस्या यह पैदा हुई कि किस नाव पर वह बैठेगा परन्तु इसका समाधान जल्दी ही मन ने सोच लिया। नाच-बिरहा वालों की नाव पर न बैठकर वह सीरी भाई के साथ रामायन गाने वाले बूढ़ों की मंडली के साथ चलेगा। अब एक बड़ी समस्या यह सामने थी कि झिरिहिरी के लिए गांव में हुमाच तो कई दिन से बांधा जा रहा है परन्तु उसके पिताजी के उदासीन रहने के कारण जोगाड़ बैठता नज़र नहीं आ रहा था। किन्तु किसी प्रकार उस दिन साफ मौसम देखकर जोगाड़ बैठ गया तो रामरूप खिल

उठा। धन्य हो खोरा कवि, तुमसे मिलने के बहाने ही बचपन का भूला बिसरा दुर्लभ आनन्द तो मिला। रामरूप ने वर्मा को खबर कर दी। गांव के इस दम तोड़ते दुर्लभ सांस्कृतिक दुर्गति-विहार 'झिरिहिरी' का आनन्द उठा ले।

ऐसे दिन की कल्पना महुवारी में क्या कोई कर सकता था? कैसे इस गांव का यह भूला-बिसरा और मरा जैसा परम्परागत आयोजन इस साल की सत्यानाशी बाढ़ में जीकर खड़ा हो गया, इसकी भी एक दिलचस्प कहानी है। सबसे भारी कठिनाई बिलास बाबा को राज़ी करने की थी। उनके अतिरिक्त महुवारी गांव में और कौन है जो झिरिहिरी का ठाट ठट सकता है? फिर कौन है जो समधी बनता? कौन सिवान के पड़ोसी गांव रामपुर में इस बाढ़ की बेहाली में इस प्रकार 'बरात' लेकर जाता तथा वहां के सीनियर किसान काली बाबू के द्वार के आगे नावें लगाकर फटही-फटही गालियां देता? जल्दी लड़की निकालने के लिए हल्ला करना? कहते हैं जवान थे तब से ही बिलास बाबा झिरिहिरी में समधी बनते आ रहे हैं। यद्यपि दोनों गांव के किसान दो भिन्न-भिन्न कुल वाले होने के साथ परस्पर रिश्तेदार हैं और यह सब मज़ाक चलता है तो भी इस प्रकार हंगामा बांधकर मुंह खोलने की हिम्मत भला और कौन करता? लोग ठीक कहते हैं कि झिरिहिरी का जलसा माने बिलास बाबा। फिर यही तो एक मौका होता है कि वे खुलकर मुखर होते हैं नहीं तो गाना छोड़कर उनका कलात्मक एकान्त मौन भला कहां टूटता है?

मगर इस बाढ़ से चंपकर बिलास बाबा एकदम सुन्न हो गये। अकेले गुमसुम बंसखट डाल ढहे रहे हैं। लगता है, भीतर से हीर बुझ गया है। कोई कुछ कहता है तो कहते हैं, 'क्या करें? सारा काम खत्म हो गया' और चुप हो जाते हैं। उस चुप की गहराई में और सब बातें डूब जाती हैं। डूब जाते हैं, घर, खेत, सिवान और लोग-बाग, उनकी लाख-लाख आशायें-आकांक्षायें। सचमुच किसान का कलेजा बहुत पोढ़ होता है। सरबस गंवाकर जी रहा है। उधर सूखे से गया और जो कुछ बचा था वह बाढ़ में डूब गया। बाढ़ की यही आदत है। वह सामने परसी थाली छीन लेती है। गोटायी बालें, किसी तरह बची अगहनिया के फूटते रेंड़े, सब क्या हो जाते हैं? बसता हुआ जहान, जगता हुआ परजा-परानी का भाग, सबका नाश। फिर यह शरद की बाढ़ तो और सत्यानाशी। रामलीला की परती में बजरंग बली की जैकार के साथ उठती चौपाइयों और उछलते बानर-भालू के चेहरों की जगह लहरें अट्टहास कर रही हैं। सीवान की अनजही बखरी कफन ओढ़कर सो गयी है। नलकूपों के इर्द-गिर्द की सारी हरियाली घोंट लिया गंगा ने। पद्मा, जया और साकेत आदि धान के ऊपर मरद भर बढ़ियाया हुआ पानी। अब तो खेत-पात खाकर यह पानी घुसा गांव में कि पहले ही धक्के में पीट दिया ढेर जने के घोंसलों को, घरों को।

रामरूप के पिता बिलास बाबा इस मामले में थोड़ा भाग्यवान हैं। वे ही क्यों, उनकी पूरी पट्टी मालिकान की बखरी ऊंचे डीह पर है। उत्तर-पश्चिम से नाले के रास्ते बाढ़ का पानी आ तो जाता है उनके दरवाज़े के पास और हवा चलने पर उसकी उफनती धार उनके पुश्ते पर टक्कर मारने भी लगती है परन्तु बहुत हुमचकर बाढ़ आती है तब भी एक-डेढ़ लट्ठा नीचे ही रह जाती है। बाढ़ की इस मार ने नहीं, बिलास बाबा को गिरा दिया है उनकी फसली नागहानी ने। गांव के इतिहास में यह भी एक आश्चर्य है कि उन्हें दुख व्याप गया। क्योंकि गांव वालों की नज़रों में वे दुखरे-धन्धे से न्यारे पुरानी पीढ़ी के शुद्ध हुस्नी जीव हैं। जोते हुए खेत में कभी लात नहीं डाला। माघ में एकाध बोझ मटर उखाड़कर लाने का शौक जगा तो पूरे बराती जोम में निकले। दामी अंगरेजी जूता, टटके पालिस किया गया, अपने वक्त की मशहूर और कीमती सेनगुप्ता की महीन धोती, सब अव्वल नम्बर। कभी जवानी में भागकर कलकत्ते गए थे। तब का सिलवाया एक बहुत खूबसूरत वास्केट है। सरेहि में निकले तो उसे ज़रूर पहन लिया। कितने अड्डों पर, कितने डांड़-मेंड़ पर सुर्ती ठोंकते, कितने नंगों-निहंगों को बीड़ी बांटते, सायकिल के कैरियर पर तिजहरिया ढलते मुट्ठी भर मटर के गदराये थान गलाबन्द में लपेटे लिये लौटते तब तक गांव में यह चर्चा लायक घटना हो गयी रहती। तब महुवारी में एकमात्र सायकिल थी जो बिलास बाबा के पास थी और वास्तव में जिसका नाम 'शौक' है उससे सम्बन्धित वह क्या था जो उनके पास नहीं था? कातिक और चैत की भीर में भी आधी रात तक द्वार पर तबला ठनकता रहता था। आलाप लेते थे कि आवाज़ सनसनाकर कोस भर तक बेध जाय। सालोंसाल गाना-बजाना, कीर्तन, डोल, होली और जन्माष्टमी आदि के मौकों पर पागल। एक से एक सनकी गवैये और संगीतज्ञ द्वार पर हिरे रहते।···गाना जमा है, द्वार हंस रहा है। बस, कोई रो रहा है तो चरन पर खड़ा मूक बैल। अच्छे-अच्छे दमकस बैल आए और चरवाह पर छोड़ दिये गए। एक पानी चलकर खंगड़ हो गए। मोआर को उनकी कोई सुधि नहीं। असाढ़ में ही भुसहुल खाली हो गया। सावन-भादों में मची आफत। चरवाह गली-गली घूम-कर मंगनी भूसा का जोगाड़ बांध रहा है। मालिक साहब उधर झिरिहिरी का जोगाड़ बांध रहे हैं। आसपास मशहूर है कि—

महुवारी सनकी गावे भादों में फगुआ।
बाढ़ की झिरिहिरी में बिलास बाबा अगुआ॥

इधर बड़े होकर रामरूप ने जब से घर का कारबार संभाला है तब से हालत सुधरी है परन्तु बाढ़ के आते ही बिलास बाबा अभी हाल साल तक सनके जाते-से देखे गए। जिस साल बड़की बाढ़ ने तबाह कर दिया उस साल भी कसमसाते और सिर पर हाथ रख झंखते गांव के लोगों से झिड़की देते हुए बिलास बाबा ने कहा

था, 'धत् मरदवा की नाहीं ! किसान जाति कहीं मन छोटा करती है ? फसल गयी तो क्या हुआ ? खेत तो नहीं गया ? फसल फिर आएगी, सूद-मूर जोड़कर आएगी। देखो, रेखा खींचकर कह रहा हूं। चलो झिरिहिरी के लिए नाव जुटाओ। धन्य भाग की गंगिया आयी।'

रामरूप उस साल बी० एड० कर रहा था। अनन्त चतुर्दशी के अवकाश में घर आया था। सीरी भाई का 'पंचम लगाना' देखने के लिए झिरिहिरी में वह उसी नाव पर बैठ गया जिस पर उसके पिताजी सहित बूढ़े लोग झाल-ढोल के साथ बैठे थे। ये लोग पुरानी बानी को पुराने शास्त्रीय ढंग से उतार-चढ़ाव के साथ और 'रामचरित मानस' की चौपाइयों-दोहों के साथ गाते थे। 'आरी वारी हां···आं···हां···' के साथ एक स्थान पर जब सीरी भाई पंचम तान को सुर बांधकर चढ़ाते तो उसके साथ श्रोताओं की चेतना भी एकोन्मुख होकर कितनी ऊंचाई पर पहुंच जाती। झिरिहिरी की अगली नाव जिस पर पुराने लोगों का रामायन-गायन हो रहा था उस साल जब नाले से चलकर नदी की धार में आयी तो पिछली नाव के मल्लाह ने सावधान किया, धार जरा तीखर है। सावधानी से आगे बढ़ना चाहिए। उस समय सीरी भाई खुद एक बानी उठा रहे थे—'ओ रे मेघ मथुरा में बरिसहु जाई।' वे घुटने के बल बैठ आंख मूंदकर बानी उठाने में इतने तल्लीन हो गए कि लोगों के हां-हां···बचो-बचो···करते-करते भी उनकी गरदन एक पेड़ के दोकने में फंस गयी। वास्तव में नदी की तेज़ धारा ने नाव को एक जगह से ऐसा फेंका कि वह संभालते-संभालते भी नहीं संभली और टूटकर गिरे एक आम के पेड़ में फंस गयी। पेड़ में नाव तेजी से घुसी तो और लोगों ने तो नाव में सपटकर अपने को बचा लिया, पर सीरी भाई की सीधी बानी-लीन बैठकी ने धोखा दिया। हाथों से झाल छूटकर गिर गयी और वे पेड़ के तने को हाथों से पकड़कर चिल्लाए थे, 'जान गइल रे !' खैरियत हुई कि नाव रुक गयी और लोगों ने किसी तरह उसे पीछे ठेल सीरी भाई को मुक्त किया। उस साल झिरिहिरी का मज़ा बिगड़ गया क्योंकि बूढ़ों की गायकी फिर जमी नहीं। रामरूप ने कान पकड़ लिया, अब बूढ़ों की अगली नाव पर कभी नहीं बैठेगा। किन्तु इस वर्ष तो उनके साथ बैठना जैसे एक मजबूरी थी। उसे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि बूढ़ों की नाव अब आगे-आगे नहीं चलती है। वह सबसे पीछे होती है। पर खेद इस स्थिति से होता है कि उस पर अब गाना-बजाना नहीं होता है। वह बानी वाली रामायन-गायन की गायकी गांव से विदा हो गयी है।

समय कितना बदल गया। संगी-साथी गुज़र गए तो बूढ़े सीरी भाई ने लगभग गाना छोड़ दिया। अब किसके साथ बैठकर गाएं ? बिलास बाबा में भी कितना परिवर्तन हो गया। सबसे बड़ा परिवर्तन तो इस साल हुआ। कोई सोच भी नहीं सकता था कि सारी ज़िन्दगी मौज-मस्ती में काटकर बेटा जब कमासुत हुआ तो

चौथेपन में इस प्रकार वे खेती की माया में फंस जाएंगे। ग़ज़ब रहा उनका आदर्श खेती का नशा। रात-दिन हाय धान, हाय धान। अब द्वार पर रहते थे भी कहां? या तो बनकटा मौजे में भैरो बाबा की पाकड़ के नीचे सुस्ताते हुए या उसके उत्तर थोड़ी दूर पर तैयार किये गए और इस साल के सूखे में भी खाद-पानी की पूरी सावधानी बरतकर बचा लिये गए अपने धान के खेत में। लोग कहते, ऐसा धान गांव में किसी के पास नहीं। कभी एक दिन भी ऐसा नहीं हुआ कि यह बूढ़ी, सतेज और सुकुमार काया उस खेत में डोलती न दिखायी पड़ी हो। खुरपी हाथ से कभी नहीं छूटती। हारमोनियम की रीड पर नाचती और सरगम निकालने वाली उंगलियां तथा तबले से टांकी काढ़ने वाली उंगलियां खेत से घास निकालने में उलझी रहतीं। नयी खेती से पैदा नये संगीत में डूबे बिलास बाबा को भूले-भटके कभी पुरानी सुधि आयी तो बाजा पर से गर्द-गुबार झाड़-पोंछ दिया, बस। इस प्रकार पट्टी का मनसायन-गायन एकदम खामोश हो गया। फिर पूरे महुवारी में कहां रहा अब गाने-बजाने का सावकाश उल्लास? पैसा बढ़ा तो पता नहीं कहां की आपाधापी भरी उदासी आकर जम गयी। ज़ोर पर है तनाव और मनमुटाव। ऐसे में सांझ की गवनई वाली चौपालें क्यों न सन्नाटे में डूब जाएं। लगता है, लोग भूल गए कि बिलास बाबा अभी ज़िन्दा हैं। हां, यह भीषण बाढ़ आयी और गांव की पहचान पानी में खो गयी तो जरूर बिलास बाबा याद आए।

क्या है फिलहाल महुवारी की पहचान? चारों ओर लहराते समुद्र जैसे बाढ़ के पानी के बीच छत्ते की भांति वह उतराया है। फिर महुवारी ही क्यों, रामपुर, मेहपुर, चटाईटोला, जलतराशी, गठिया, बीरपुर और दानी का पूरा आदि करइल क्षेत्र के इन मध्य के गांवों में से सबका तो अब यही हाल है। इन सारे टापुओं के बीच एक टापू इस महुवारी की तब कौन-सी पृथक् पहचान शेष बची है? अब तो शेष सिर्फ एक ही पहचान है और वह यह कि किसी दिन रात में झिरिहिरी लेकर चढ़ चलें रामपुर में। नावों के जगर-मगर जमघट और गाने की गूंज से चिहुंक उठें सिवनइत गांव। कहने लगें, अरे, यह देखो, फिर इस साल महुवारी वाले सनक उठे। लेकिन यहां तो हालत यह है कि इस सांस्कृतिक सनक का सेनानी धान के घाव से ढह गया है, उठाए कौन? चकबन्दी के समय जिस दिन बनकटा मौजे का चक कट रहा था उस दिन रामरूप मौजूद नहीं था। दीनदयाल ने धकिया कर पाकड़ के उत्तर टांड और कमज़ोर ज़मीन पर बिलास बाबा को बैठा दिया। गवैया किसान की जाति कुछ अधिक क्या विचार करती? बाबा बोले, पैदावार माटी पर नहीं, लिलार पर होती है और चक को स्वीकृति दे दी। रामरूप लौटा तो उसे बहुत अफसोस हुआ। अपील भी की पर कुछ नहीं हुआ। कोई कुछ कभी कहता नहीं है तब भी एक हलका कलंक बिलास बाबा पर तो लगा रह ही गया कि एक मौजे में चक उनके कारण बिगड़ गया। शायद उसकी

भी भीतर कोई प्रतिक्रिया थी कि दिखा दिया, देखो, खेती इसे कहते हैं। नखरूस खेत की ज़मीन में भी जिसकी मालियत आठ आना बीघा कहोगे सोलह आने वाले जैसी, बल्कि उससे भी उम्दा पैदावार हो सकती है। यह ग़लत नहीं है कि पैदावार लिलार पर होती है और उसे खेत नहीं, हाथ गढ़ते हैं। अब देखो न बनकटा के इस बदनाम चक को? खेत में हून बरस रहा है। अपने हाथों की पसेवा कहीं जाती नहीं। नाना प्रकार की दवाइयों से धान की फसल का जतन किया। एक-एक क्यारी तो क्या, एक-एक पौधे की दास्तान सुन लीजिए। पर सब अकारथ गया। तब कोई क्या कहकर उन्हें झिरिहिरी के लिए उकसावे? उमर में सबसे बड़े हैं। 'धत् मरदवा' की भाषा में उन्हें ललकारने वाला भी कोई नहीं।

एक दिन कुछ लोग राय-बात कर शाम को जुटे कि बिलास बाबा को छेड़ा जाय। रामरूप जान-बूझकर दरवाज़े से हट गया। वह बलराम काका के दरवाज़े पर चला गया जहां से बाढ़ का दृश्य साफ-साफ दिखायी पड़ता था। उसने सीढ़ी पर जाकर देखा, पानी बढ़ा नही था। लेकिन वह घटा भी नहीं था। बस, स्थिर रूप में जमा हुआ था। वर्षा बन्द हो गयी थी। इससे घरों के चरमरा कर बैठने, खपरैलों के हड़हड़ाने और दुखियारे लोगों के छाती पीटने की भयावनी ध्वनियां थम गयी थीं। बांध बनाकर बाढ़ के पानी को गलियों के भीतर जाने से रोकने, फिर इधर वर्षा के पानी को उलीचने जैसा युद्ध-स्तर का कार्य भी रुक गया था। दो दिन से माहुर घाम उगने लगा था। रात अंजोरिया थी और करइल के कोसों फैले धवल जलीय प्रसार पर उसके सुनहरे चरण असाधारण सौन्दर्य राग के साथ थिरक रहे थे मगर कुल मिलाकर दृश्य सुहावना नहीं लग रहा था। शायद भक-सावन का भाव खुद रामरूप के मन में था जिसका प्रक्षेपण बाढ़ की इस सुन्दरता पर हो गया था। यदि इस बाढ़ ने खेती-गृहस्थी के साथ गांव-घर को चारों ओर से घुसकर इतना परेशान न किया होता तो चांदनी और हलकी पुरवा के रहते बलराम काका के इस द्वार पर बैठकर उसे देखना कितना बड़ा सुख होता! मगर अति के कारण उस झिलमिल सौन्दर्य पर किसी का ध्यान ही नहीं जा रहा है। बजाय दुख को सह लेने के लोगों के चेहरे अभी बहुत सूखे हैं। पानी में डूब-डूबकर चारे के लिए कच्ची फसल छानने में बेढंगे घाम-पानी खाकर जो देह सड़कर झांवर हो गयी, सो उसका पानी अभी नहीं लौटा। मुंह से हंसकर निकलने वाले शब्दों में भी संकट की स्थिति में चारों ओर से अथाह जल से घिरे होने की अज्ञात व्यथा अनजाने-अनचाहे थरथरा जाती। ऐसी स्थिति में लोग चाहकर भी बिलास बाबा को कैसे छेड़ते? बातों में दम कहां रहा?

बिलास बाबा ने उसी तरह निश्चेष्ट, निःशब्द, गमछा ओढ़े लेटे-लेटे सुर्ती-चूने का बटुआ बढ़ा दिया तो उन्हें छेड़ने की ललक में वहां एकत्र लोगों का मन मुट्ठी-भर हो गया। अब कौन-सी बात कर वह बात उठाई जाय? संवाद का कोई

गौं बैठता नहीं नजर आ रहा था। उखड़ी-पुखड़ी बातें आपस में जैसे घसिट-घसिट कर चल रही थीं। अरे हां, लोग और क्या बतियाते ? बतिया तो रहे हैं।

…बाप-बेटे में लाठी चलने लगी। दीहल ने दरवाजे पर आए बाढ़ के पानी को छूकर कहा, 'जै हो गंगामाई, दरशन मिलल बड़ी भाग से।' तब तक घर के भीतर से उसका लड़का घूरा निकला और हल्ला करने लगा, 'यह देखो, साला बुढ़ौती में सनक गया है कि वर्षा-बाढ़ के नासकेतु पानी को गंगिया माई कहता है !'

…बाढ़ ने सबसे बेशी तबाह किया है किरपलवा को। मगर जब कोई कहता है कि उसके पट्टीदार द्वारका का जो धान गल गया सो उसकी कमर का डोरा ही टूट गया है तब देखो उसकी खुशियाली। छरक कर बमकने लगता है कि मैं तो भइया ऐसी-ऐसी दस बाढ़ आए तो भी छाती फुलाकर चलूंगा।

…खरची का दाब लगा है, भगवान पांडे ने बखार खोलकर अपना बीआ बेच दिया है, गाजर-मूली के भाव। गरजमन्द बावला। बाढ़ की इस तेजी के बाजार में भाव कौन पूछता है ? गांव का बनिया जो कहे, वही भाव है।

…जनिहे भइयो, कल सुगम जानकर कोनिली गांछी तक शाम को गया तो देखता क्या हूं कि बहकर आया एक सांप फों-फों कर रहा है। फिर लाठी तानता हूं तो क्या देखता हूं कि पतई-पतई पर बिच्छू लदे हैं। रोआं गनगना गया और चुपचाप बिना निपटे लौट आया।

…बड़ा तमाशा हुआ है कि दीनदयाल के यहां एक बांगर का रिश्तेदार बाढ़ शुरू होते-होते आया तब तक रातों-रात बहुत पानी बढ़ गया। दूसरे दिन गजिन्दर उसे पहुंचाने चला। आदर्श विद्यालय तक कमर भर पानी हेल कर जाना था। वहां से स्टेशन जाने के लिए नाव मिलती। हेलते समय उस रिश्तेदार ने देखा कि एक कुर्ता धोती पहने हुए आदमी बाढ़ में डूब जाने से मरकर बहता आ रहा है। बस, देखकर वह गांव में भाग आया। बोला, मैं नहीं जाऊंगा। सो, आज-कल बाप-बेटे में खूब लड़ाई होती है। दीनदयाल कहता है बाढ़ में बैठाकर खिलाने की इस बलाय को क्यों नहीं उधर ही कहीं पानी में ठेल दिया ?

अन्तिम बात पर खूब हंसी होती है। लोगों को उम्मीद होती है कि बिलास बाबा भी कुछ बोलेंगे और तब उसी के सहारे झिरिहिरी की चर्चा होती मगर बाबा जब उसी प्रकार मुर्दे की तरह ढहे खामोश रह जाते हैं तब कुछ देर तक इसी प्रकार ढीली-ढाली गांव-गाथा चरच कर और एकाध बार और सुर्ती ठोंक-कर लोग बिखर जाते हैं तथा खटाई में पड़ जाती है झिरिहिरी।

ऐसी स्थिति में सचमुच यह आश्चर्यजनक और अकल्पित दृश्य है न कि महुवारी से न केवल पूरे जोम के साथ झिरिहिरी का जुलूस निकला है बल्कि अपनी पूरी परम्परा के साथ निकला है। बिलास बाबा समधी बने हैं और 'दुलहा'

वाली नाव बजते बैंड और जलती बत्ती के बीच आगे-आगे बढ़ी है। कैसे यह सब हुआ ? दास्तान बहुत दिलचस्प है।

६४

रामरूप का आकर्षण झिरिहिरी के नौका जुलूस के आगे बढ़ने के साथ बढ़ता जा रहा है। नावें मन्द-मन्द बढ़ रही हैं। दोनों ओर से छप्प्-छप्प् करके हलके-हलके खेया जा रहा है। सीरी भाई की बुढ़वा-पार्टी काफी दिन बाद जमी है। ताल उठ रहा है, गिर रहा है। अच्छा लग रहा है। वह रह-रहकर सोचता है, वर्मा क्यों नहीं आया ? कहां अटक गया ? खबर तो उसे मिल ही गयी है। आज कॉलेज भी नहीं आया। क्या बात है ? वह फिर सोचता है, सम्भव है आगे वाली नावों में से किसी पर बैठा हो। उसे मेरे साथ बैठने पर अब अंडस महसूस हो सकता है। मगर, यहां वह और किसके साथ बैठेगा ? नहीं, वह इतना नादान नहीं है। तो फिर आया क्यों नहीं ? रामरूप ने पीछे की ओर देखा। तीन-चार नावें अभी और आ रही थीं। सोचा, निश्चित रूप से वह उन्हीं में से किसी पर होगा। बाढ़ में किसी गांव से किसी गांव में जाना भी तो कठिन समस्या है। अथाह जलराशि जमी है। बीच-बीच में छत्ते की तरह गांव उतराये जैसे पड़े हैं। बाहर की दुनिया से सम्पर्क कहां रह गया ? सहारा बस नावों का है। माल-मवेशी, फसल, घर-द्वार और सुख-चैन घोंटकर और समस्त राह-घाट छेंककर पड़े पानी को अभागा गांव कैसे कहां ठेल दे ? उन्होंने आफत को ओढ़ लिया, पीड़ा को पूरी तरह अंगेज लिया और अब अपने स्तर पर इस प्रकार काल के गाल में झिरिहिरी का ताल बजाते स्थिति को चुनौती देने निकले हैं।

यह झिरिहिरी बदलते समय की मार से खटाई में पड़ गयी थी कि इस साल उमड़े शौकीनों की अकिल काम नहीं कर रही थी। यह तो मात्र संयोग की बात थी कि दूसरे दिन की बैठकी में अनायास काम सध गया और गोइयों ने ढहे हुए झिरिहिरी के सेनानी को पनपनाकर खड़ा कर दिया। उस दिन पता नहीं क्या था कि सांझ लगते ही रामपुर में रेकार्डिंग होने लगी और बढ़ियाये पानी की छाती पर मुकेश और लता मंगेशकर आदि दूर-दूर तक अपनी स्वर-सम्पदा लेकर जब थिरकने लगे तो ऊबे-डूबे गांव के, विशेषकर झिरिहिरी के नशे में छटपटाते महुवारी गांव के कान सनसनाकर खड़े हो गए। ऐं ? रामपुर वाले झिरिहिरी का जुलूस तो नहीं सजा-बजाकर इधर चढ़ते आ रहे हैं ? क्या फिर वे उस साल की तरह इस साल भी बाजी मार ले जाएंगे ? पिरथीनारायन ने बिलास बाबा को सुनाकर जोर से कहा, 'देख रहे हैं आप लोग ? ये रामपुर वाले बहुत बदमाश हो गए हैं और इनका मन बहुत बढ़ गया है ?'

फिर कुछ रुककर पिरथी ने कहा, 'उस साल रामपुर वाले लोग पहले बाजी मार ले गए। गुरुबकसा सुना कि आठ दिन तक पिअरी धोती और लाल कुर्ता पहने, कजरौटा लिये गांव में गली-गली घूमता रहा। '···सलाम भइया, सलाम चाचा, कक्कन अभी नहीं छूटा है।'

किस्सा यह हुआ कि उस साल जो बड़ी बाढ़ आयी थी उसमें झिरिहिरी का जनून पहले रामपुर वालों के ही सिर पर चढ़ा था और वे एक दिन महुवारी में 'बरात' लेकर चढ़ आए थे। इस बरात में उन्होंने गांव के एक गरीब, बूढ़े और अधमत बनिये को जिसका नाम गुरुबकसा है, 'दुलहा' बना दिया था। इस प्रकार तीस-चालीस नावों का एक नाचता-गाता हुआ जमघट महुवारी में आकर बिलास बाबा के दरवाज़े के सामने रुका था और एक नाव पर से एक गारी गायी गयी थी—

'ओरी तर, ओरी तर, बइठे बरनेतिया,
काढ़ो हो बिलास बाबा अपनी पुतरिया।'

फिर जुलूस ने गांव का चक्कर लगाया था। उसमें अगली नाव पर माथ पर मौर रख गुरुबकसा को प्रकाश के सामने कुर्सी पर बैठाया गया था। वह भरपूर काजल लगी अपनी आंखों को मटकाता और रंगी हुई दाढ़ी को हिलाता पूरा मनोरंजन बना इतना अगरा गया था कि···इतना कि बाद में एक दिन महुवारी में वह पिटते-पिटते बचा। उस साल जवाबी झिरिहिरी का जुलूस रामपुर में जाय, इसकी तैयारी हो ही रही थी कि बाढ़ उतर गयी और दूसरी बात यह थी कि बिलास बाबा को मलेरिया की बेजारी ने तोड़ दिया था। महुवारी के मन में कसक बनी ही रह गयी।

बाढ़ के समय की उस दिन वाली बैठे-ठाले की बैठकी में सभापतिजी भी उपस्थित थे। पिरथीनारायन की बात पर एक और जबरदस्त तथा वजनदार लोंदा रखते हुए व्यंग्य किया, 'आ भला देखो हो, ऊ बुढ़वा साला गुरुबकसा इतने दिन बाद आज भी अपने को ऐसा लगाता है जैसे वह महुवारी का दमाद है।'

सभापति का तीर काम कर गया।

'वहां पर गदहे का दुलहा बनाकर झिरिहिरी चले तब बने !' बिलास बाबा बंसखट पर सोये-सोये बोल गए और बैठे लोग एकदम खिल गए।

'तब तो बस हुकुम भर की देर रही।' पिरथी बोला।

'आपके नाम पर झिरिहिरी की नावों का जुटाव तो सांझ-बिहान में हो जायगा।' सभापतिजी बोले।

'गांव तो बस आपका मुंह जोह रहा है। बाढ़ से बरबादी हुई तो क्या हुआ ? उत्साह कम नहीं है।' बलेसर ने कहा।

मगर, बिलास बाबा चुप। एक वाक्य बोलकर एकदम चुप। एक क्षण के

मौन के बाद पिरथीनारायन ने बहुत गम्भीर भाव से कहा—

'घर का सवांग मर जाता है तो रोते-धोते हैं और आखिर फिर क्रिया-कर्म का समारोह सहेजते ही हैं। वैसे ही महुवारी में बाढ़ की बरबादी विनाशलीला का क्रिया-कर्म झिरिहिरी के रूप में जब सब दिन से होता आया है तो इस साल काहे नहीं होगा ?'

'अरे हां पिरथी भइया, अपने-अपने पहरे की लाज रखनी होती है। बस, इस बंसखट पर लेटी हुई ठट्ठी की जिनिगी मनाओ कि यह जलसा हो जाता है। नहीं तो फिर अब किसमें हुब रह गया है।' सभापतिजी ने कहा और गोपी की ओर देखने लगे। गोपी बोला, 'ठीक कहा सभापतिजी ने। हमारा मलिकार जिमदार नक्षत्री है। नहीं रहेगा तो गांव तरसकर रह जायगा···।'

इस प्रकार लोग बोल रहे हैं और आंखें तथा कान उधर लगे हैं। मगर बिलास बाबा एकदम चुप। एक बात कहकर चुप। इसे क्या समझा जाय ?

'···तो हुकुम हो रहा है न ?'

'···।' बाबा चुप। मौन टूट नहीं रहा है।

अचानक लोगों ने देखा कि वे चुपचाप उठकर खड़ाऊं चटचटाते हुए धीरे-धीरे अपनी कोठरी में जा रहे हैं और लौटते हैं तो उनके हाथों में तबले की जोड़ी होती है। फिर वैसे ही चुपचाप उन्हें लेकर चौकी पर बैठ जाते हैं। चौकी पर बैठे लोग उठकर उनकी बंसखट पर चले आते हैं। तबला ठीक कर धीरे-धीरे टिन्न-फिन्न शुरू हो जाता है। बैठे लोग कुतूहल में डूबकर देख रहे हैं। यह क्या होने लगा ?

धागे धागे धिन् तागे तागे तिन्।

तबले के बोल फूटे तो सभापति ने हाथ भांजकर हल्ला किया, 'रामपुर के लोग बहुत फिलमी उड़ा रहे हैं तो देखें यह शास्त्रीय बैठकी। अब वे भी समझेंगे कि महुवारी के लोगों पर बाढ़ का दबाव नहीं है और न यहां के लोग मर गए हैं।···हां, उठे मलिकार तनिक सधी हुई तान कि पानी पर सनसनाकर रामपुर वालों का कलेजा बेध दे !'

सुर-तान ठीककर बिलास बाबा ने एक झपताल उठाया, टनकते गले से, दम साध कर।

'आनन्दमयि आज गोकुल विराजति,
प्रभु अवतरेउ आज कोशलधनी रे।'
धागे धागे धिन् तागे तागे तिन्।

हवा थरथरा उठी। गहराई से जमी मन की काई-सी उदासी के तार-तार कांप उठे चांदनी में झलमलाती पश्चिम ओर वाले पीपल की पत्तियां नये सिरे से चैतन्य हो उठीं। बूढ़े हाथ और बूढ़े स्वर की जवान कला ने बुझते क्षणों को जीवंत

बना दिया। तब एक पूरे घिरे गांव की अमूर्त भावना जलमय सीवान के प्रशस्त अवकाश में गूंजने लगी। वास्तव में बहुत दिनों बाद एक खोया हुआ आदमी और एक भूला हुआ बहुत कीमती समय किंचित् सन्दिग्धावस्था में लौटा था। उसने रिक्त वर्तमान को भर तो दिया फिर भी वह भविष्य की आशंकाओं और अस्तंगत पीढ़ी की पीड़ाओं के घनीभूत अनसोचे-अनकहे आयामों से मुक्त नहीं था।

एक-दो गीत और चले, वैसे ही अकेले, कुछ ठण्डे-ठण्डे, कुछ ऊंघते-से, थर-थराते और कांपते से। लोगों को बारबार ऐसा लग रहा था कि यह कोई और बिलास बाबा हैं जिनके गाने में पता नहीं क्या है कि वैसी पहले वाली छुवन देते-देते भी छटक कर दूर पड़ जाता है।

'अब क्या गायकी होगी' तबला परे कर बिलास बाबा बोल उठे, 'सब खत्म हो गया, बाढ़ में नहीं, समय में डूब कर।' और बैठकी समाप्त हो गयी। मगर झिरिहिरी की बात फिर उस दिन दुबारा नहीं उठी।

दूसरे दिन सुबह-सुबह ही सगरे महुवारी में पता नहीं कैसे बात फैल गयी कि बिलास बाबा ने झिरिहिरी के लिए बोल दिया है और इस साल दुलरुआ दुलहा रामपुर में चलेगा। तैयारी में हुकुम बजा लाने के लिए छींट छाप लुंगी वाले युवक रामरूप के दरवाज़े पर जुटने लगे तो मामला पेचीदा हो गया। बिलास बाबा कितनी चुप्पी साधते ? कितनों को क्या कहते ? दिन चढ़ते-चढ़ते झख मार फाट-कर कह दिया, 'जा सारे, कर तैयारी। मगर झिरिहिरी ऐसी-तैसी नहीं होनी चाहिए।' फिर क्या था ? तीसरे दिन घरी-भर रात जाते-जाते पूरे जोम के साथ झिरिहिरी का जुलूस महुवारी से रामपुर की ओर पानी पर रेंगता हुआ बढ़ चला।

रामरूप ने एक बार फिर छटपटाकर चारों ओर देखा। किस नाव पर वर्मा है ? पीछे वाली नावें तो आ गयीं। वे सभी सीरी भाई की गवनई वाली नाव के इर्द-गिर्द पड़ी हैं। शायद इन नावों पर सवार श्रोताओं को यह पुराने तर्ज का गाना प्रिय लग रहा है। प्रिय लगना भी चाहिए। सीरी भाई अपने संपूर्ण अस्तित्व के साथ प्राणधारा को बानियों में ढालकर जो आकर्षण पैदा कर रहे हैं वह सामान्य नहीं है। 'आरे बरखा ऋतु बीतलि जाई' जैसी लचीली बानी वाले पद के अन्तरा 'श्यामसुन्दर अजहू नहिं आये…'को पूरे प्राणवेग से झनकते गले से चढ़ाते हैं तो ढोल-झाल की झमक के साथ श्रोताओं के रोंवे भी खड़े हो जाते हैं। गाने वालों के गोल के बीच में जलती लालटेन के सामने रेहल पर खुली 'रामचरित मानस' की पोथी में से देखकर चौपाई उठाने का काम पिरथी नारायण करते हैं। दूसरी ओर दीनदयाल आज पूरी मस्ती में ढोल बजा रहा है। वह स्वर चढ़ाने में सीरी भाई का साथ भी देता है और उतार पर ढोल की चांटी के साथ मगन होकर झूम जाता है। अपनी आदत के मुताबिक कभी-कभी बीच में उसकी ओर देखकर सीरी भाई बोल देते हैं, 'वाह मिरदंगी।' इस परिदृश्य को देख कौन कह सकता है

कि कल तक यह ज़ालिम मिरदंगिया सीरी भाई को उजाड़कर उनके प्राणों का गाहक बना था और इस पानी के उतर जाने पर कार्तिक में फिर वही ज़ुल्म दुहरायेगा ? दीनदयाल बीच की पीढ़ी का है अतः उसमें पुरानी पीढ़ी के प्रति कुछ सटाव शेष है। साथ में उठ-बैठ लेता है। मगर स्वार्थ के मौकों पर उसमें नयी लाजहीन नंगी पीढ़ी का क्रूर पठान फुफुकारने लगता है। पहचान में नहीं आता है कि गाने-बजाने के मौकों वाला यह वही अलमस्त दीनदयाल है। रामरूप के भीतर उसके दोनों रूप अद्‌भुत विचार-विस्मय बन उभर रहे हैं। उसे सचमुच इस समय वर्मा का अभाव बेहद खटक रहा है। झीनी चांदनी में झिलमिल जल पर छल-छलाती नावों के जमघट का इस प्रकार ससमारोह एक ओर बढ़ते जाना क्या साधारण घटना है ? धन्यवाद कोइली को, धन्यवाद खोरा को कि वे निमित्त बने और रामरूप इस आकर्षक स्वप्नीले समा का साक्षी बना। कोइली की याद आते ही वह क्षण-भर के लिए एक कड़वे प्रसंग से जुड़ गया परंतु इस नाव की एक नयी स्थिति ने शीघ्र ही ध्यान बंटा दिया। झिरिहिरी के इस सांस्कृतिक मंच पर सीरी भाई और दीनदयाल साथ बैठकर गा-बजा रहे हैं तो कम-से-कम वह भी तो अपने उस भटके दोस्त के साथ सब कुछ भूल खुलकर बातें करता। मगर, वह मूर्ख रह कहां गया ? अकेल रामरूप कितना देखे ? इतना-इतना यह सब क्या अकेल देखने लायक है ? खेतों पर जल और जल पर ऐसा-ऐसा जलसा ?

गांव-गांव से जुटाई, बुलावे पर आयीं पचास से अधिक नावें, झंडियों और रंगीन गुब्बारों से कुछ सजायी गयीं, झालरदार चांदनियां कुछ पर तनीं, विविध प्रकार के मनसायन-गायन वाली, बड़ी-बड़ी पटहुआ नावों पर चार गिरोह नाच, एक पर गोंडनचवा जिसका हुड़क बाजा पहमक्-पहमक् ! चार दोहा रामायन गाने के बाद रामरूप वाली नाव के बूढ़े गवैये इसी नाव से अपनी नाव सटाकर अब सुस्ता रहे हैं तथा नाच-गाने का मजा लेते चल रहे हैं। रामरूप मौका देख-कर सीरी भाई से कहता है, 'आज तो पठान बहुत सटकर गवनई में साथ दे रहा है, क्या बात है ?' इस पर सीरी भाई हंसकर कहते हैं, 'तुम लड़के हो, क्या जानो गांव में जीने का परम। तुझे बताया न, बस देखते चलो। घबराना नहीं चाहिए। देखो, बैल पगहे में उलझता है तो छटपटा-छटपटाकर घायल हो जाता है और घोड़ा उलझता है तो बस चुपचाप पटाकर जैसे का तैसे रह जाता है। कोई छुड़ायेगा न आकर उलझन। बहुत छटपटाने, हाथ-पैर पीटने से कुछ नहीं होता है।'

'तो क्या आपकी वह डांड वाली उलझन कुछ सुलझ रही है ?'

'कुछ दबाव पहुंचा है दयालुआ पर।...मेरी बड़ी लड़की, जो बनारस में ब्याही गयी सो वहां का उसका देवर है जो इस थाने पर हेड थानेदार बनकर आया है। सो, आजकल दोनों जून आकर दीनदयाल मेरा समाचार पूछता है।'

सीरी भाई की बाकी बात बगल की एक नाव के हल्ले में डूब गयी।

उसके साथ ही रामरूप भी किसी गहरे सोच में डूब गया। उसके भीतर से एक सवाल उठा, 'यदि कोई थानेदार जैसा अधिकारी सीरी भाई का रिश्तेदार नहीं हो तो?' इस सवाल में वह और गहराई से डूबता गया और अन्त में ऊबकर बगल के हल्ले को देखने लगा। गठिया की इस नाव पर गजिन्दर की बिरहा-पार्टी है। करताल खनक रहा है और बीच-बीच में गजिन्दर 'जिओ राजा' जैसे फिकरे उछाल खूब हल्ला करता है। सबसे अधिक 'रामायन' की नवकी गवनई वाली नावें हैं जिन पर छपरहिया से लेकर फिल्मी तर्जों का 'रामायन' (महज नाम भर के लिए।) चल रहा है। एक नाव पर चमटोल के लोगों का दल, बहुत मीठी धुन में 'सिनरयनी' गाता हुआ, फिर सबसे बड़ा तमाशा भी इसी नाव पर, कैसा तमाशा?

उसी नाव पर धड़िया-धड़ंग बिसुना हरिजन को आगे दरी बिछी चौकी पर खड़ा कर दिया, भसमी पोतकर शंकर का रूप बनाये। वही डमरू, त्रिशूल, मृग-छाला, रामलीला वाली जटा, गले में सांप लपेटा, जै हो शंकर भोले। पट्ठा क्या शान से मूर्ति की तरह तनकर खड़ा है, एक हाथ अभय मुद्रा में ऊपर किये, सामने पड़ने पर लोग मुसकरा कर झुक जाते हैं तो आशीर्वाद में उसका हाथ भी बहुत अदा के साथ हिल उठता है। बगल से काट-काटकर नावें ले लोग पहुंचते हैं देखने के लिए कि हल्ले में यह कैसा नया हल्ला···बोले, शंकर भगवान की जै। फिर हंसी, विराट कोलाहल।···अरे, उधर किसी की नाव में पानी भरने लगा। इधर-उधर की नावों पर लोगों को चढ़ाकर उसे खाली करो और सुनो अगली नाव पर से जिस पर 'दुलहा' है कोई एनाउन्सर···अरे नहीं, खुद बिलास बाबा कुछ बोल रहे हैं। घोषणा होती है, ऐ रामपुर की नारियों, सुनो···जो है सो कि तुम्हारी नगरी में महुवारी की बारात के साथ खुद अवढर दानी शंकर भगवान पधार रहे हैं। मांग लो अपना-अपना मनभावन,···पुत्र-पुत्री।'

किन्तु इस नाव से सबसे महत्त्वपूर्ण घोषणा तब हुई जब झिरिहिरी का जुलूस रामपुर गांव के बहुत पास पहुंच गया और काली बाबू का दरवाजा साफ-साफ दिखायी पड़ने लगा। घोषणा में कहा गया—

'काली बाबू हो, सुन लीजियो···'

मगर ऐसा लगा कि बिलास बाबा की आवाज़ लड़खड़ा गयी। फिर खोंख-खंखारकर उन्होंने अपने को संभाल लिया और कहना शुरू किया—

'सुनो, सुनो हो काली बाबू, हरि कृपा से बरात चोंहप गयी। लगन कम है। जल्दी लड़की को निकालो। जनवासे का इन्तजाम करो। सुर्ती-बीड़ी भेजो।'

घोषणा होते-होते में लोग बहुत सजग हो गये। अगली नाव का पेट्रोमेक्स वाला आदमी हवा देकर और पिन मारकर बत्ती को तेज़ कर देता है। 'दुलहे'

को सुहुरा-चुचुकारकर संभाला जाता है। कहीं ऐसा न हो कि किनारा देखते कूदने लगें। उसके रंगीन झूल और मौर को बांधकर दुरुस्त कर दिया जाता है। छान को भी चेक कर लिया जाता है। बैंड-बाजा वाले द्वार-पूजा पर चलने वाली धुन बजाने लगते हैं। सिंगा बाजा अर्थात् धुधुका गरज उठता है, 'गढ़ जीत लो, गढ़ जीत लो।' कुछ लोग छाता तानकर शुद्ध बराती की तरह खड़े हो जाते हैं। रामबिलास बाबा अपनी पगड़ी दुरुस्त करने लगते हैं। कौवाली वाली नाव पर चलती कौवाली बन्द हो जाती है। उस नाव पर से द्वार-पूजा का गीत शुरू हो जाता है—

'आपन खोरिया बहोर हो काली बाबू,
आवत बाड़े दुलरू दमाद।
बइठें के मांगे दुलहा लाल गलइचा,
लड़ने के मांगे मैदान।।'

और रोमांचक कोलाहल का वह मुक्त मार्मिक क्षण। होड़ लग जाती है उस अगली नाव की बगल में या उसके आसपास नावें रखने के लिए। वह जलसा आंखों और कानों में समा नहीं रहा है। अलबत्त झिरिहिरी है। टाप गयी। अब क्या होगी कभी ऐसी झिरिहिरी। रामबिलास बाबा के चारों ओर दिन जैसा अंजोर हो गया था।

मगर, इस रोशनी के इन्तजाम ने गड़बड़ कर दिया। कुछ भी तो छिप नहीं रहा था। सब साफ-साफ दिखाई पड़ रहा था। फिर उसे देखकर कोई कुछ कहता तो नहीं है पर भीतर से कैसा-कैसा लगता है। लोग महसूस करते हैं कि रामबिलास बाबा के चेहरे में वे स्वयं नहीं हैं, कहीं खो गये हैं। झिरिहिरी तो जोर लगाकर ला दिया पर वह पहले वाला उल्लास कहां से लावें ?

झिरिहिरी वाली नावें रामपुर गांव की जल पर तिरती जैसी बस्ती से दस-बीस गज दूर स्थिर भाव से फैलकर खड़ी हो गयीं। कुछ नावें अगली नाव के साथ काली बाबू के द्वार पर लगने के लिए आगे बढ़ीं। रामरूप नहीं चाहता था कि अभी उसकी नाव आगे जाय पर दीनदयाल भला क्यों मानता ? नाव किनारे की ओर बढ़ी तो रामरूप ने देखा, हुक्का हाथ में लिये काली बाबू दरवाज़े से उतर-कर अगली नाव की ओर बढ़ते चले आ रहे हैं। बहुत खुशदिल और मशहूर मज़ाकिया व्यक्ति हैं। हंसकर कहते हैं—

'का हो रामबिलास, तो खूब करवाया। बढ़ौती में भी आदत नहीं छूटी ? और सगरे महुवारी का यह कइसा दुलरुआ दमाद है जिसको अड़ोस-पड़ोस के गांवों में गाने-बजाने के साथ घुमाते फिर रहे हो ?'

जवाब देने के लिए दीनदयाल बहुत उतावली के साथ खड़ा हुआ परन्तु इसी समय ऐसा लगा कि एक ढेला उसके सिर पर गिरा। सिर सहलाता हुआ वह

इधर-उधर चौंककर देखने लगा तब तक फिर ऐसे ही ढेले और नावों पर भी। अरे, अरे, यह क्या? सर्वत्र उत्तेजना की जबरदस्त खड़बड़ाहट हुई पर एक क्षण बाद ही भारी हंसी हुई यह जानकर कि नावों पर ढेले नहीं, बीड़ियों के बण्डल और दियासलाइयां स्वागत में बरस रही हैं। और किनारे पर खड़े रामपुर के तमाशबीन हंस रहे हैं।···और इस प्रकार दीनदयाल का उत्तर उस मनोरंजक ढेलेबाजी में पिट गया।

जिस समय अगली नाव पर चढ़कर काली बाबू चुपचाप मुसकराते बिलास बाबा के हाथों में भरा हुआ हुक्का थमाने लगे उसी समय ऊंचे चबूतरे पर 'खच्च' जैसा शब्द हुआ और तेज़ रोशनी की कौंध में पूरा परिदृश्य झमक गया। और इसी के साथ रामरूप का मन भी अचानक खिल उठा। निश्चित रूप से यह वर्मा है। किसी नाव से उतरकर ऊपर चला गया है और इस दुर्लभ दृश्य को कैमरे में कैद कर रहा है। हाय ज़ालिम, तू मिला भी तो इस प्रकार अन्त में? अत्यन्त उल्लास के साथ वह नाव से कूदकर किनारे पर पहुंचा और लपककर ऊपर चढ़ने लगा। आज वर्मा साहब को वह खूब फटकार बतायेगा। क्यों इस मौके पर इतनी दूर-दूर रहा?

मगर चबूतरे पर वर्मा कहां था? वह तो गठिया का युवा नेता विजय था। खच्च्-खच्च् रोशनी दाग रहा था। रामरूप ने पूछा—

'अरे विजय जी, वर्मा साहब इस झिरिहिरी में आने वाले थे। कहां अटक गये?'

'वे तो कल सुबह चले गये।' विजय ने उत्तर दिया और कैमरे का मुंह नचनियों की ओर कर दिया।

६५

जिस कारण से रामरूप काली बाबू के सामने जाने में संकोच कर रहा था उसका प्रसंग अन्ततः सामने आ ही गया। उसे देखते ही उन्होंने आह्लादमिश्रित अट्टहास के साथ कहा, 'कौन? मास्टर साहब? झिरिहिरी के जलसे में बाप-बेटा साथ-साथ? तुम भी दुलरुआ दुलहा के बराती बने हो?'

लजाकर गड़ गया रामरूप। पैर छूकर बोला—

'नहीं चाचा जी, मैं तो दूसरे प्रयोजन से आया और आज यहीं रुकना है। बात यह है कि···।'

'अच्छा, अच्छा जब रुकना है तो भीतर चलो। प्रयोजन सुबह सुनूंगा। खूब खुश रहो।'

झिरिहिरी का जुलूस जैसे आया था वैसे ही वापस हो गया। रामरूप काली

बाबू के यहां रुक गया। रुकना ही था। सुबह नींद खुली तो एक बार चौंक गया, मैं कहां हूं? सामने जहां तक दृष्टि जा रही है करइल क्षेत्र की सोनामाटी और फसलों के इन्द्रधनुषी प्रसार-क्षेत्र के ऊपर दूर-दूर तक अथाह जलराशि दृष्टि-गोचर हो रही है। उस जलराशि पर काले रंगों की चित्रकारी की भांति उगे उस बहुत-बहुत दूर के पेड़ों के घेरे के ऊपर जो सूरज का लाल गोला उग रहा है वह यहां से वहां तक ठीक सीध में प्रशान्त जल-तल पर एक झिलमिल अरुणिम सेतु सदृश बना रहा है तथा यह दृश्य कितना अच्छा लग रहा है! किन्तु एक क्षण बाद ही यह रमणीयता इस सोच से कि यह वह बाढ़ का सत्यानाशी पानी है जिसने यमदाढ़ बन चारों ओर से घेरकर लाचार कर दिया है, काफूर हो गयी तथा उसके स्थान पर एक अज्ञात आशंका और त्रास ने रामरूप के मन को सिकोड़ दिया।

यह आशंका गलत नहीं थी। हुआ यह कि कल शाम को डाक ले आनेवाली नाव किसी कारणवश आयी ही नहीं। जब आयी ही नहीं तब आज सुबह जाने का प्रश्न ही नहीं पैदा होता। काली बाबू ने कहा, 'बाजार वाली नावें शायद इधर से गुज़रें तो उनके द्वारा जाया जा सकता है।' परंतु यह मात्र संयोग की बात थी। वास्तव में संयोग खराब था। काली बाबू की अपनी नाव जो ईंट लादकर आ रही थी, दो दिन हुआ कि ताल में पुरवा की ऊंची लहरों में डूब गयी। अब वह पानी उतरने पर ही निकल सकेगी। वह नाव होती तब भी कुछ सोचा जाता। इस गांव को सरकारी नाव अलग से नहीं मिली है। आबादी कम होने के कारण इसको पास की ग्राम सभा मेहपुर में मिला दिया गया है। चूंकि नये चुनाव में सभापति वहीं के बाबू जमुना प्रसाद चुन दिए गये अतः सरकारी नाव प्रायः वहीं रहती है। अब रामरूप की छटपटाहट देख काली बाबू भी छटपटाते और पछताते हैं कि रात में वह जो मेहपुर वाली अपनी ग्रामसभा की नाव झिरिहिरी में आयी थी, उसे सुबह मंगा लिया होता तो समस्या हल हो जाती। मगर वह अवसर भी चूक गया था। फिर किसी को क्या पता था कि रोज-रोज आने वाली डाक की नाव आज नहीं आयेगी। फिर रामरूप ही क्यों, रामपुर के अनेक लोग उसी नाव के सहारे आज बाहर निकलने का कार्यक्रम बनाकर बिथक गये थे।

अवश पड़े रामरूप के भीतर बेहद खीझ इस बात को लेकर हो रही थी कि कोइली के काम में अप्रत्याशित विलम्ब हो रहा है। महुवारी से खोराबाग पहुंचना ही पहाड़ हो गया। पता नहीं इस बीच कोइली का क्या हुआ? इसके पति अर्थात् उस बूढ़े सुमेरवा की जमानत हुई या नहीं? कहीं ऐसा न हो कि कोई जाल उसके ससुर करइल महाराज ने फेंका हो और वह बेचारी उसमें पड़ी छटपटा रही हो। कुछ समझकर ही तो यह काम उसने सौंपा और यदि समय पर उसका कार्य नहीं हुआ तो क्या फायदा? खोरा को समझाना होगा कि उसका अता-पता बताने की

अपनी ही भूल के कारण उस पर यह बज्रपात हुआ है। तो नैतिकता का तकाजा है कि चाहे जैसे हो ज़ोर लगाकर कलुष-घाती हाथ को रोकना है। प्रश्न एक नारी की रक्षा का है। अपने पीछे लगी पुरुष जाति की अनेकमुखी लोलुप प्रवंचनाओं के जाल को बहुत साहस से काटकर बेचारी जब एक किनारे लगी तब तक इस जालिम मछेरे के टाप में उलझी। अब हे मेरे मित्र कवि खोरा, इस आर्त्त द्रौपदी की लाज बचाने के लिए तुम्हीं कृष्ण भगवान् बन जाओ।···सोचते-सोचते रामरूप की आंखों में आंसू आ गये। उसका ध्यान काली बाबू की ओर गया। उस समय वे स्नानादि से निवृत्त होकर चौकी पर मृगछाला डाल रुद्राक्ष की माला फेर रहे थे। पद्मासन में भस्मी रमाये उनकी पूर्वाभिमुख जप-मुद्रा बहुत आकर्षक लग रही थी। रामरूप ने सोचा, यह आदमी वामपंथियों का समर्थक और संरक्षक कैसे हो सकता है? फिर उसके मन में आया, इस निचाट गांव में सिद्धांत कहां पहुंचते हैं? यहां तो इधर-उधर दोनों ओर स्थानीय स्वार्थ और अधकचरी स्थानीय राजनीति का बोलबाला है। उसने देखा जप के बाद जलती अगरबत्ती के सामने कोई पोथी खोलकर पाठ शुरू हुआ।

इसी समय एक हेलीकाप्टर गड़गड़ाता हुआ पूरब के आसमान में उगा और पांखें नचाता काली बाबू की हवेली के ऊपर से निकल गया। कोई मंत्री होगा, बाढ़ का जायजा ले रहा है। रामरूप का मन कड़वाहट से भर गया। ये जलती झोंपड़ियों पर हाथ सेंकने वाले और सैर-सपाटा के रूप में हवाई सर्वेक्षण करने वाले तथा राहत कार्य के नाम पर मनमानी लूट मचाने वाले तान्त्रिक इस बाढ़ से कितने आह्लादित होंगे! बाढ़ उतरने पर शायद वे नमक, दियासलाई, आटा और मिट्टी का तेल आदि छिड़कते यहां पहुंचें। उसने भीतर से छटपटाकर सोचा जल्दी कोई राहत वाली नाव भी आती तो शायद कुछ काम बनता।

'तहसीलदार और लेखपाल आदि की राशन-राहत वाली नाव क्या आकर गुज़र चुकी है?' पूजा पर से काली बाबू के उठने के बाद रामरूप ने पूछा।

'आने की खबर तो है। सुना, गठिया में इधर के चार-पांच गांवों की 'राहत' रखकर चले गये हैं। बड़े लोगों के गांवों के आगे छोटे पूरा-पाटी को कौन खतियाना है और फिर चोरकटों से बचे तब तो इधर आये।' काली बाबू ने उत्तर दिया।

'तो उधर से कोई उम्मीद नहीं?'

'कोई उम्मीद नहीं। आप सरकार से क्या कोई उम्मीद अब कर सकते हैं?··· हां, अब बताइये कि आपको कहां जाना है? अभी तक तो बात करने का मौका ही नहीं मिला।' कहते हुए काली बाबू जलपान लाने के लिए बोलकर रामरूप के पास बैठ गये।

'चाचा जी, मुझे खोरा से मिलना है और काम ज़रा जल्दी का है। सुना, वे

बीमार भी थे।'

'नहीं तो। अभी दो दिन हुआ उसे कोटवां बाज़ार में देखा था। पांच-सात लोगों ने घेर रखा था। सुना कि बड़ा भारी तान्त्रिक हो गया है। अदृष्ट भाखने के साथ उसको वाक्‌सिद्धि हो गयी है। विधायक और उसके बाप, दोनों को चेला मूंड़ लिया है। दिल्ली तक बुलाहट हो रही है। आप का भी कोई मामला है ?'

'बहुत भारी मामला है चाचा जी। मगर बताने लायक नहीं।' कहकर रामरूप हंसने लगा। इतने समय बाद जाकर अब उसका मन कुछ हलका हुआ। भीतर खुशियाली की एक हलकी गुदगुदी उठी। इसका एक कारण तो यह था कि खोरा के मौजूद होने और स्वस्थ होने का समाचार मिला और दूसरा यह कि उसकी यह ज्योतिषी वाली ख्याति भी खूब रही। ऐसे ख्याति वाले सभी लोगों की ख्याति ऐसी ही खोखली होती है क्या ? अब घास की जगह काट गहरी चांदी कविया।

नौकर ने जलपान हाजिर कर दिया। जलपान और कुछ नहीं दहीमिश्रित गुड़ का शर्बत था जो देखने में तो नहीं पर गले से उतारने पर बहुत रुचिकर लग रहा था। एक गिलास के बाद रामरूप ने हाथ खींच लिया तो काली बाबू लगभग जबरदस्ती एक गिलास और भर दिया और शेष बाल्टी का सारा शर्बत स्वयं चढ़ा गये। बहुत ठस किस्म का किसान है। रामरूप ने जैसा सुना था वैसा ही पाया। नये ज़माने की टीमटाम का कहीं नाम नहीं। मोटा-मारकीन पहनकर रात-दिन बनिहारों के साथ खुद खटकर खूब पैसा बटोर लिया है। लड़के इलाहाबाद में पढ़ रहे हैं। खुद बस्ती के छोटे लोगों के बीच राजा बना हुआ हुक्का गुड़गुड़ा रहा है। शर्बत के बाद तत्काल नौकर ने तम्बाकू भरकर दे दिया था। काली बाबू ने हुक्का रामरूप की ओर बढ़ाया तो उसने मुस्कराकर हाथ जोड़ दिये।

'तुम हुक्का नहीं पीते हो तो कैसे भयवद्दी करोगे ? यही तो उसकी निशानी है।' काली बाबू ने कहा।

'अब यहां भयवद्दी बाकी है ? सब कुछ को राजनीति ने तोड़ दिया चाचा जी।' रामरूप बोला।

'इसीलिए मैं राजनीति से दूर रहता हूं।' काली बाबू ने चहककर कहा, 'किसान की राजनीति बस यही बाप-दादे की खेती है। इसी से गुज़ारा होगा। कोई दिल्ली-लखनऊ से आकर हमको खाना नहीं देगा। सभी तो अपने-अपने घात में हैं।···देखो तो वह एक बनारस वाला मास्टग्त्रा है न, क्या नाम है, तुम्हारे यहां ही रहता-खाता था। चुनाव आया और उधर से कुछ टुकड़े फेंक दिये गये कि सुना, अब तुम्हारे यहां झांकने भी नहीं आता।···यही तो राजनीति है। राजनीति माने गुंडई और नष्टम्-भ्रष्टम्। क्यों ठीक कह रहा हूं न ?'

रामरूप अवाक्। क्या कहे ? सिर हिला दिया।···तो, भारतेन्दु वर्मा वाली

बात गांव-गांव में इस रूप में फैली है ? भीतर से वह बहुत आहत हुआ। सम्भव है विपक्षी इस सन्दर्भ में उसके खिलाफ भी कुछ उलूल-जुलूल गढ़कर वर्मा की वकालत करते हों। वह बेचारा मेरा एक दोस्त, जा।

गांव में बाढ़ के पानी से भरी किसी गली के विवाद में पंचायत थी। काली बाबू चले गए तो रामरूप बाहर आकर बाढ़ लहराते पुश्ते पर खड़ा हुआ।

पुश्ता ठोस ईंट-सीमेंट से बना है। लगता रहे इस पर लहरों का धक्का। पानी अभी दो-ढाई हाथ नीचे है। किसी बाढ़ में वह चबूतरे पर नहीं चढ़ सका। बड़े और मज़बूत लोगों से संकट भी डरता है। यहां संकट सिर्फ एक ही है और वह यह कि अथाह जल से घिरे हैं। बाहर जाने के लिए तो बस सिर पटककर रह जाएं।

हाय, यही तो रामरूप की पीड़ा है। पुश्ते पर से खड़े होकर पूरब ओर लहराते जल में दूर-दूर इधर-उधर जाती नावों को वह हसरत भरी निगाहों से देख रहा है। अरे, कोई नाव इधर भूल-भटककर भी तो चली आवे।···उसके भीतर यह सोचकर धक् से होकर रह गया कि कहीं ऐसा न हो कि आज शाम को भी डाक वाली नाव न आवे। तब क्या होगा ? मगर, तत्क्षण एक ज़बरदस्त विचार आया कि सरकारी डाक है, ज़रूर आएगी। वह एक दिन रुक गयी, यही बहुत हुआ। इसी के लिए नाव वाला रोज मोटी रकम पाता है। फिर इधर से लोगों को ले जाने में अतिरिक्त आय है। आज तो हर सूरत में नाव का प्रबन्ध होना ही है।

निरुद्देश्य चबूतरे पर चक्कर काटते अथवा पुश्ते पर खड़े हो बाढ़ के अनन्त प्रसारी रोमांच में डूबते-उतराते थककर भीतर आ रामरूप सो गया। बेकारी में लहराती पुरवा का नशा काम कर गया। दोपहर में भोजन के लिए काली बाबू ने उसे जगाया। भोजन के बाद फिर वही शयन। लेकिन आंखों में नींद कहां ? उसमें तो कहीं कोई नाव तैर रही थी तो कहीं कोइली अथवा खोरा। डाक वाली नाव के आज आने के विषय में वह काली बाबू से कुछ पूछने के लिए घूमा तो देखता है कि वे गहरी नींद में सो गए हैं। रामरूप ने भी तब चादर तान ली।

डाक वाली नाव आज भी अन्धेरा घिर आने तक नहीं आयी। हां, आसमान पर बादल नये सिरे से घिर आये और पुरवा का जोर बढ़ जाने के साथ बौछारें भी पड़ने लगीं। बौछारें धीरे-धीरे गाढ़ी होती गयीं। उनके साथ ही अन्धेरा भी बहुत गाढ़ा हो गया। काली बाबू बड़बड़ाने लगे, 'अब गांव नहीं बचेगा।' इसी समय हवा के झोंके से लालटेन बुझ गयी। रोशनी खत्म होते-होते ऐसा लगा कि अब संसार में सिर्फ मूसलाधार गिरते जल और हवा की हाहाकारी ध्वनियों का ही अस्तित्व रह गया है। अज्ञात भय का दबाव क्षणों को निरन्तर बोझिल करने लगा। प्रबल पनीली बौछारों के धक्के से लोग बरामदे से भीतर वाले कमरे में

भगे और वहां भी दबाव बढ़ा तो दरवाज़ों को बन्दकर लेना पड़ा। अब भीतर सांस सिकोड़कर केवल कान से प्रतीक्षा की जा सकती थी। एकमात्र वही इन्द्रिय सक्रिय भी तो थी। किंतु बिजली की तेज़ तड़तड़ाहट के साथ खून को सर्द कर देने वाली एक ज़बरदस्त 'ठांय' ने उसे भी सख्त हाथों से बंद कर देने के लिए मजबूर कर दिया। लगा, सिर पर ही यह वज्रपात हुआ परन्तु क्षण सकुशल बीत गया तो सांस लौटी। किन्तु लौटी कहां? ठीक इसी समय खपरैलों सहित किसी के मकान के धंस जाने की महा कर्कश हड़हड़-भड़भड़ ध्वनि कानों से टकराई। 'बिजली मकान पर गिरी क्या?' रामरूप ने कहा।

'बिजली की नहीं, बाढ़-वर्षा की ढाही है' काली बाबू बोले, 'गली के बाढ़ वाले पानी को मकान बचाने के लिए इधर मज़बूती से बांध दिया गया था और इधर से वर्षा के पानी का रेला पहुंचा कि गरीब का माटी का पुराना मकान पानी से भरकर बैठ गया।···यह वर्षा है कि आफत है। दो घंटे से ऊपर हो गया।··· भोजन करने कैसे चला जायगा?'

'अभी तो मैं शौच के लिए भी नहीं जा सका।' रामरूप ने कहा और उसके रोवें खड़े हो गये। ऐसे तूफानी अन्धेरे में यह कार्य कैसे सम्पन्न होगा? उत्तर के पुश्ते पर करोंदे की झाड़ की आड़ में दो लम्बे पत्थर आगे की ओर निकले हैं। नीचे फों-फों करते जल के ऊपर पत्थरों पर पैर रखकर बैठना है। मगर तूफान में पैर बिचला तो? इस 'तो' के धक्के से रामरूप फिर एक बार कांप गया। उसे याद आये वे सांप-बिच्छुओं के झुंड जो बाढ़ में बहकर आते हैं और जिनसे लड़ते-बचते गांव वाले इस कार्य के लिए किसी जल-बूड़े पेड़ अथवा बंसवारी आदि जैसे स्थानों को खोजते हैं। उसे याद आया अपना गांव, अपने गांव के लोगों का दुख। फिर याद आया अपना घर। बाढ़ से तो नहीं पर ऐसी बीहड़ वर्षा से उनका कोनिला घर कहीं बैठ न गया हो! आफत-काल में कुछ भी हो सकता है। कंगाली में ही आटा गीला होता है। उसे अपने गांव से बाहर रहना अब अखरने लगा। विचार आया, कोई सुलभ साधन मिला तो कल वह महुवारी ही लौट जायगा। किन्तु वह कोइली वाला काम? उसका मन ऐंठ गया। इस तरह यहां फंसकर वह कितना दीन बन गया। इसी समय काली बाबू की आवाज़ सुनाई पड़ी।

'छाता तो अड़ेगा नहीं। आप एक बोरे की घोघी बनाकर और टार्च लेकर अपने काम को निपटा आवें और मैं जाकर स्वयं भोजन कर आपके लिए लेता आऊं।

एक बार थोड़ा थमकर वर्षा ने फिर रफ्तार पकड़ लिया। लालटेन का तेल चुक जाने के बाद बाहर के अन्धेरे और कमरे के भीतर के अन्धेरे में कोई अन्तर नहीं रह गया था। खा-पीकर बिस्तर पर पड़ने के बाद अच्छा लगा मगर यह बाहर हू-हूकर मंडराता कोई भीषण दैत्य? उसकी भीषणता के मानसिक

दबाव के कारण उस समय बातचीत के अपने शब्द भी अपरिचित जैसे लगने लगे। काली बाबू बार-बार अब अगली बरबादी का रोना रो रहे थे। बीस ही दिन रह गये कातिक की बोआई के और पानी है कि बाढ़ पर ही है, तिस पर भी यह ऊपर का पानी। घटने भी लगा तो कितने दिन में निकलेगा? कब खेत खाली होंगे? अन्त में उन्होंने बहुत दुख के साथ कहा, 'देखो मास्टर, प्रकृति की लीला! यह शरद् ऋतु है। अब दुनिया में ऐसी ही उलटन होगी। उधर सूखा, इधर बाढ़।' फिर उन्होंने चारपाई पर बैठते हुए कहा, 'क्या ख्याल है? अभी पौने नव तो नहीं बजा होगा?'

आकाशवाणी से बाढ़ का समाचार आ रहा था—'उत्तर प्रदेश के अट्ठाईस जिलों में बाढ़ से व्यापक तबाही हो रही है। गंगा, यमुना, घाघरा, केन, बेतवा तथा उनकी सहायक नदियों ने एक साथ ही उफान ले लिया है।···बांदा-हमीरपुर में उद्धार कार्य के लिए सेना और पी० ए० सी० की सहायता ली जा रही है।··· गाज़ीपुर के दो सौ अस्सी गांवों की डेढ़ लाख आबादी इस विभीषिका की चपेट में आ गयी है।···इलाहाबाद से बलिया तक गंगा में बढ़ाव जारी है।···घिरे हुए गांवों में राहत कार्य तत्परता से जारी है।···श्रीमती गांधी ने दिल्ली में एक विशाल जनसमूह को···।'

काली बाबू ने ट्रांजिस्टर का कान ऐंठ चटाक्-से चुप करा दिया। अब और क्या सुनना है? रामरूप को भी अच्छा लगा। हां, समाचार सुनकर दो बातों से उसे खुशी हुई। एक तो इस अनुभूति से कि वह दुनिया से पूर्णतः कटकर अलग नहीं हो गया है। दूसरे यह कि इस प्रकार वह अकेले नहीं घिरा है। उसके मन में आया कि समाचार के बाद कोई गाना आता हो तो सुना जाय परंतु पता नहीं क्यों उस भयंकर तूफानी सन्नाटे के अन्धेरे में ट्रांजिस्टर की टें-टें जैसी आवाज़ बेहद कर्णकटु और बेधक लगी थी। अब तो नींद अपनी गोद में उठा ले तो कुछ घंटे चैन से कटें। कितनी पवित्र है वह दुख शोकहारी गोद! वहां न बाढ़ है, न वर्षा और न घिरे होने का संत्रास। यही नहीं, यदि कोई सपने का सुख है तो भी उसी नींद में। सुबह से पहले रामरूप ने भी एक सपना देखा, बहुत विचित्र विपर्यस्त। सुबह उठने के बाद आंखें फाड़-फाड़कर चारों ओर चौंक-चौंककर सत्य को देखता है और फिर सपने को याद करता है।

अरे, अभी-अभी तो वह कोइली के साथ नदी के किनारे बैठा था। नदी का पानी पेट में चला गया था। मछलियों को फंसाने के लिए मछेरों ने जाल लगाया था। पानी के तेज़ प्रवाह में जाल का अवरोध पाकर मछलियां छप्-छप् उछलती और फिर चांदी जैसी चमक छोड़ फंस जाती थीं। कोइली पूछ रही थी, मछलियों को जाल में छोड़ पानी इतनी तेज़ी से क्यों भगा जा रहा है? रामरूप उत्तर देने के लिए उसकी ओर निगाह करता है तब तक दिख जाते हैं काला कम्बल ओढ़े

बीज बोने वाली पुरानी डोकी और फटा बंसा लिये चले आते बाबू हनुमानप्रसाद। कोइली की भी निगाह उधर घूमती है और 'भूत! भूत!!' चिल्लाते हुए रामरूप का हाथ पकड़ एक ओर भागती है। अरे भागती क्या है, यह तो उड़ी जा रही है कि रामरूप को भी उड़ाये लिये जा रही है। कहां? आगे कोई सुनसान मैदान है। एक ठूंठ पेड़ के पास कवि खोरा खड़ा है। देखकर कहता है, 'आइये आप लोगों को मैं खंडरिच्ची (खंजन) दिखाऊं।'···तभी सपना टूट गया।

बाहर हलके-हलके पानी का बरसना अभी भी जारी था। पुरवाई थम नहीं रही थी। काली बाबू का एक नौकर चिल्लाकर कह रहा था, रात में खड़ा एक बित्ता पानी बढ़ गया। भीतर उधर रामरूप सपने में उलझा था। क्या मतलब सपने का? क्या सपनों का कुछ मतलब होता है? खंजन पक्षी क्या नाव का प्रतीक है? लगता है, आज नाव मिल जायेगी।

किन्तु कहां मिली उस दिन भी नाव? वह आयी ही नहीं। रामरूप एकदम उखड़ गया। मन में आया, काली बाबू के दरवाजे पर लगी यह डाकखाने के लटकते हुए साइनबोर्ड की काली तख्ती और लाल लेटर बक्स को नोचकर बाढ़ के अथाह जल में फेंक दे। कितना धोखा हुआ सरकारी डाक-व्यवस्था के नाम पर। दो ही दिन तो हुए पर उसे ऐसा लग रहा था कि अपने परिवार से बिछुड़े महीनों हो गये। कैसे होंगे वे लोग? अरविन्द को बाढ़ के पानी में नहाने से कौन रोकता होगा? भगेलुआ कहीं डूबी फसल को चारा के लिए छानकर लाने में फंस न जाय? इस क्रूर जल ने ऐसी बेरहमी से गांव को घेर लिया है और वह यहां किस चक्कर में फंसा है?

'अब क्या होगा चाचा जी? नाव तो नहीं आयी।' रामरूप की आंखों में जो अत्यधिक बेबसी और स्वर में आकुलता थी वह काली बाबू से इस प्रकार पूछते हुए छिप न सकी।

'तुम मेरे दोस्त के लड़के हो', काली बाबू बोले, 'यहां जंगल में नहीं हो। अपने घर में भला इस प्रकार घबराया जाता है?'

'क्या करें? यही समझ में नहीं आ रहा है।'

'बाढ़ ने सारा काम बन्द कर दिया है। अब कुछ नहीं करना है। सिर्फ खाना है, सोना है और नाव की प्रतीक्षा करनी है। जाओ, विश्राम करो।' कहते हुए काली बाबू बैलों की ओर जाने लगे।

'···मोहिं कहां विश्राम?' रामरूप ने कहा और झटके से जिस सन्दर्भ से जुड़कर चौपाई उछल आयी थी उसे काली बाबू कैसे समझ सकते थे? कहा न हनुमान ने लंका जाते समय मैनाक से, 'राम काज कीन्हे बिना, मोहिं कहां विश्राम।' सो, सोचकर रामरूप के भीतर एक गुदगुदी उठी। क्या यहां वह स्वयं हनुमान बन गया है? कोइली रूपी सीता को हनुमानप्रसाद रूपी रावण के त्रास-

बंधन से मुक्त कराना है। तब यहां राम कौन है ? उसे यह सोचकर बेहद आनन्द आया कि यहां खोरा रामचन्द्र स्वरूप है। तब हे, प्रभु ! देखो, यह बाढ़रूपी सुरसा क्या मुझे उदरसात् कर अटका ही देगी ? समुद्र के बीच यह मैनाक-सा उठा रामपुर गांव एक चुनौती हो गया है। दुर्भाग्य की लंकिनी एकदम पीछे पड़ गयी है।···झिरिहिरी का सारा मज़ा निकल गया। कहा गया है सो ठीक ही कि बहुत मत हंसो नहीं तो रोना पड़ेगा। बहुत अधिक खुशी मत मनाओ नहीं तो उसी अनुपात में ग़मगीन होना पड़ेगा। समरसता और सुख-दुख का संतुलन बना रहना चाहिए। सो, वही दशा हुई रामरूप की एक रात के अति हर्षोल्लास का सन्तुलन शायद तीन रात के संत्रास की मांग करता है।

वर्षा रुक गयी थी। नींद नहीं आयी तो रामरूप पुश्ते पर आ गया। लहरें छप्प्-छप्प् पुश्ते से टकरा रही थीं। पानी में बन जाते लहरदार गढ़ों के ऊपर पहाड़ की चोटी-सी लहरें···लहरें और लहरें रामरूप के भीतर अब प्रश्नाकुल दहशत पैदा करने लगीं। यदि नाव मिल भी गयी तो क्या करइल क्षेत्र के ऊपर फैले इस खौलते जैसे जल के खड़भड़ खूनी जंगल के बीच से गुज़रा जा सकेगा ? अरे, यह पानी कितना बलशाली है। तभी उसने देखा, कुछ गांव वाले पानी से जूझते हुए एक लकड़ी की भारी सिल्ली को तैराते-तैराते और ठेलते बगल से गांव की गली की ओर लिये जा रहे हैं। जब तक वे आंखों से ओझल नहीं हो गये उनके संघर्ष को वह देखता रहा। इसी समय उसकी दृष्टि पड़ी एक फूली हुई बहती लाश पर, पैंट-बुशर्ट पहने जैसा कोई बेचारा। दो-तीन कौवे उस पर बैठे हैं और कुछ गिद्ध आसमान में मंडरा रहे हैं। नीचे मटमैले प्रसार का फूला हुआ खौलता पानी ऊपर बिना धूल-धुआं का धुआंसा मनहूस आसमान, किसी अज्ञात सनसनी से भरा। रामरूप का मन मुरझा गया। अब जान बचना कठिन है। थोड़ा पानी और फूलकर उठ जाय बस, सारा गांव इस क्रूर उजली आग में स्वाहा। प्रलय-आखिर ऐसे ही तो होता होगा ? कितना अवश है प्रकृति की शक्तियों के आगे यह क्षुद्र मानव ?

निराशा की किसी गहरी अंध खोह में खोये रामरूप का ध्यान बंटाया एक नये दृश्य ने। वह लहरों के साथ उठता-गिरता एक हलके काले रंग का गोला था, गेंद जैसा चिकना न होकर रोवेंदार जैसा। काले डोरे का बड़ा गोला वैसा हो सकता है मगर इतने हलकेपन के साथ बिना तनिक भींगे लहरों के ऊपर कैसे नाचेगा ? गोला निकट आ गया तो रामरूप चौंक उठा। अरे, यह चींटियों का गोला है। संकटमुक्ति के लिए लाखों चींटियों ने थक्का बांध प्रलय को चुनौती दे दिया है। कहीं तो किनारा मिलेगा। परस्पर चिपटी हुई बह रही हैं। ओह, छोटी चींटियो, तुमने बड़े साहस का पाठ पढ़ाया। व्यर्थ ही रामरूप अस्तित्व चिन्ता और उद्देश्य बाधा में सिकुड़कर सूख रहा है। कल नाव नहीं मिली तो वह कूद पड़ेगा

इस पानी में और लांघ जायगा वह समुद्र।

इस विचार से उसे गहरी सान्त्वना मिली। काली बाबू से कहकर शाम को चाय बनवायी। भोजन भी डट कर किया और चारपाई पर पड़ते-पड़ते वह जय शंकर प्रसाद की 'कामायनी' की प्रारम्भिक पंक्तियां गुनगुना उठा। सोते समय भीतर एक सवाल उठाकर कि आखिर कोइली उसकी कौन है जिसके लिए वह इतना बेचैन है, उसके नाना प्रकार के अनुत्तरित उत्तर-परतों को उधेड़ता रहा। पता नहीं क्यों काली बाबू के सो जाने के बाद भी आज अकेले अन्धेरे में देर तक इस प्रकार जागते रहना उसे अप्रिय उदास नहीं लग रहा था। मगर आखिर कब तक जगता रहता? धीरे-धीरे झपकी आने लगी।

वह अभी पूरी तरह नींद में डूब नहीं पाया था कि दाहिने हाथ की तर्जनी को किसी ने मुंह में दबाकर काट लिया। वह चौंककर उठ बैठा और टार्च खोजने लगा। टार्च काली बाबू के पास थी और वे सो रहे थे। किसी तरह धीरे-धीरे सिरहाने से उसे उठाकर देखा तो कहीं कुछ नहीं। भाग गया। अधिक नहीं, उंगली से ज़रा-सा खून निकला था।···अरे, इतना तो काफी है। ज़हर ज़रा से में कितना तेज़ फैलता है। क्या काली बाबू को जगायें? मगर जागकर वे क्या करेंगे? इस देहात के तो सारे सांप काटे रोगी महुवारी में बरम बाबा के यहां जाते हैं और कहते हैं, समर्पित होकर अच्छे हो जाते हैं। वे ही इस देहात के झाड़-फूंक करने वाले और गुनी-वैद हैं। वहां के बाद तो कुछ लोग बक्सर हास्पीटल में जाते हैं। फिर क्या प्रबन्ध हो सकता है महुवारी जाने का या बक्सर जाने का? कुछ नहीं, कुछ नहीं। झूठमूठ तमाशा खड़ा होगा। अब मरना है तो यहीं चुपचाप मरें। सम्भव है कोई मेढ़क या चूहा आदि कुछ रहा हो। अब थोड़ी देर में स्थिति साफ हो जायगी।···मगर यह तो चक्कर जैसा आ रहा है। हे भगवान्, क्या मौत आ ही गयी? उसे लगा, शरीर से पसीना भी छूट रहा है। अब तो काली बाबू को जगाना ही पड़ेगा। कितनी गाढ़ी नींद में हैं। उठकर क्या सोचेंगे कि कैसी विपत्ति में फंसा। बाढ़ घिरा गांव एकदम जहां सन्नाटे में डूबा है वहां यह एक फालतू हलचल खड़ी होगी और कुल मिलाकर एक तमाशे से अधिक क्या हो सकता है?

संकल्प-विकल्प, तेज ऊहापोह, बाहर-भीतर के चक्कर, खट्टे-मीठे अतीत, विचारों के उखड़े बवण्डर, चिन्ता, भय और मोहासक्तियों के रेल-ठेल के बीच रामरूप ने सोचा, बाहर टहल कर जांच करें कि सचमुच विष चढ़ा चक्कर है या भय-भ्रम है? चारपाई पर से उठते-उठते लगा, वह लड़खड़ा जायेगा। अरे, वह कांप रहा है क्या?···तब जो होना हो, इसी मरण-शैया पर चुपचाप हो। अब इस एकान्त अन्धेरे में राम ही उसका रक्षक है। उसने तेज़ी से राम-राम, राम-राम का मानसिक जाप शुरू किया, जितनी रफ्तार में जाप उससे चौगुनी रफ्तार में

चिन्ता-चिन्तन।···हे मेरी सती साध्वी रामकली, क्षमा करना, परनारी से ममता जोड़ जो पाप किया, उसका फल मुझे मिल गया। पुत्र अरविन्द,···मां···पिताजी अरे बाप रे बाप, मैं मर जाऊंगा क्या? जाप को और तेज़ कर रामरूप अपना मुंह हाथों से रगड़ने लगा। फिर शुरू हुई शरीर के और भागों की रगड़ाई। एक बार सन्देह हुआ वह गंगा दशहरा के दिन वाला ब्लड-प्रेशर तो नहीं फिर उमड़ा। थोड़ी देर में उसे लगा, यह सब भ्रम है। उसे कुछ नहीं हुआ है।···अरे फिर सिर में सनसन···सनसन···रामराम-रामराम···कोइली, अब अन्त में किन शब्दों में तुम्हें स्मरण करूं, सूझ नहीं रहा है। कवि खोरा···रामराम-रामराम···।'

उस रात रामरूप सोया नहीं। डर था कि कहीं सोने पर विष न चढ़ जाय। यद्यपि घंटों के बाद कुछ खास नहीं हुआ तो उसे विश्वास हो गया, वह सब भ्रम था तथापि भय बना रहा। जाप चलता रहा सम्भव है, रामा नाम की दवा हो गयी हो। जो भी हो, उसने पुनर्जन्म की एकदम नयी-नयी आनन्दानुभूतियां तो दीं!

रात बीत चली थी और बाहर अभी अन्धेरा था कि किसी ने आकर काली बाबू को जगाया। वे उठकर बाहर गए और लौटे नहीं। बाहर से कुछ सांय-फुस और खटर-पटर की ध्वनि आ रही थी परन्तु कुछ पता नहीं चलता था कि क्या बात है। काफी देर बाद काली बाबू कमरे में आए और कहने लगे, 'आप जगे हैं? तो फटाक् से तैयार हो जाइए। सीधे कोटवां जाने के लिए नाव तैयार है।'

रामरूप बाहर आया। देखा, पुश्ते पर पड़ी एक चारपाई पर पांच अज्ञात व्यक्ति अन्धेरे में भूत की तरह बैठे हैं। पास ही मल्लाह सचमुच लग्गी उठाकर एक नाव पर खड़ा है। अजब रहस्य है। एक बार काली बाबू से पूछा तो बोले, 'आम खाने से मतलब है कि पेड़ गिनने से? बस, यही समझिए कि संयोगवश आपको नाव मिल गयी।' हां, बात ठीक ही थी। नाव मिल गयी। अन्धेरे में बढ़ियाये जल की यात्रा शुरू हुई। मगर वैसे संत्रास से अभी-अभी गुज़रे इस आदमी पर ऐसे संत्रास का क्या असर पड़ता? हां, मल्लाह का अति मौन रामरूप को खल रहा था। उसने कहा, 'कुछ बोलते बात करते चलो भइया।' लेकिन, उधर वही मौन?

कुछ देर बाद खोंखकर मल्लाह बोला, बोला क्या, लगा जैसे कोई विस्फोट हो गया, 'सरकार, बोलना मना है। गोली मार दी जाएगी।···मगर मैं बोलूंगा। डकइत कहीं के!···राशन लादकर गठिया जा रहा था कि छुरा-कट्टा दिखाकर लूट लिया।···इस बाढ़ वाले राशन की नाव पर वे कोटवां से रईस यात्री बन चढ़े कि गठिया उनको भी चलना है, कितनी चिरौरी कर और बीच ताल में आते-आते, बाप रे बाप···वह पैंतरा! वह धांय-धांय!!'

'तो नाव पर वाले लेखपाल-अमीन वगैरह क्या हुए?' रामरूप ने चकित

होकर पूछा।

'बाढ़ के पानी के बीच खड़े एक बड़े-से बबूल के पेड़ पर कट्टा दिखाकर उन सबको चढ़ा दिया...।'

'और तुम्हें छोड़ दिया ?'

'छोड़ कहां दिया। मैं भी कांटों से बिंधता एक डाल पर चढ़ गया था। यह तो हुआ कि उनमें से नाव खेने किसी को आता नहीं था। वह घूम-घूम जाती थी। तो झख मारकर ले लिया, खूब डरा धमकाकर। फजिर भी तो हो रहा था। जल्दी थी भागने की।'

कैसी बीहड़ सिद्ध हुई यह आज की रात ! और फिर यह प्रभात ? हां, खोरा-बाग में पहुंचते-पहुंचते प्रभात हो तो गया परन्तु यह क्या ? सारा बाग पानी में डूबा है। न तो झोंपड़ी का पता है और न इंस्टीच्यूट के किंचित् आरम्भिक निर्माण का। डूब गया वह भी !

नाव मोड़कर गांव में आयी और एक गली में घुसकर जहां लगी, संयोगवश वहीं खोरा के परिवार के लोग थे। पूछने पर एक लड़के ने कहा, 'वे तो लखनऊ गए।'

□□